रामायण काकावीन

चन्द्रदत्त पालीवाल

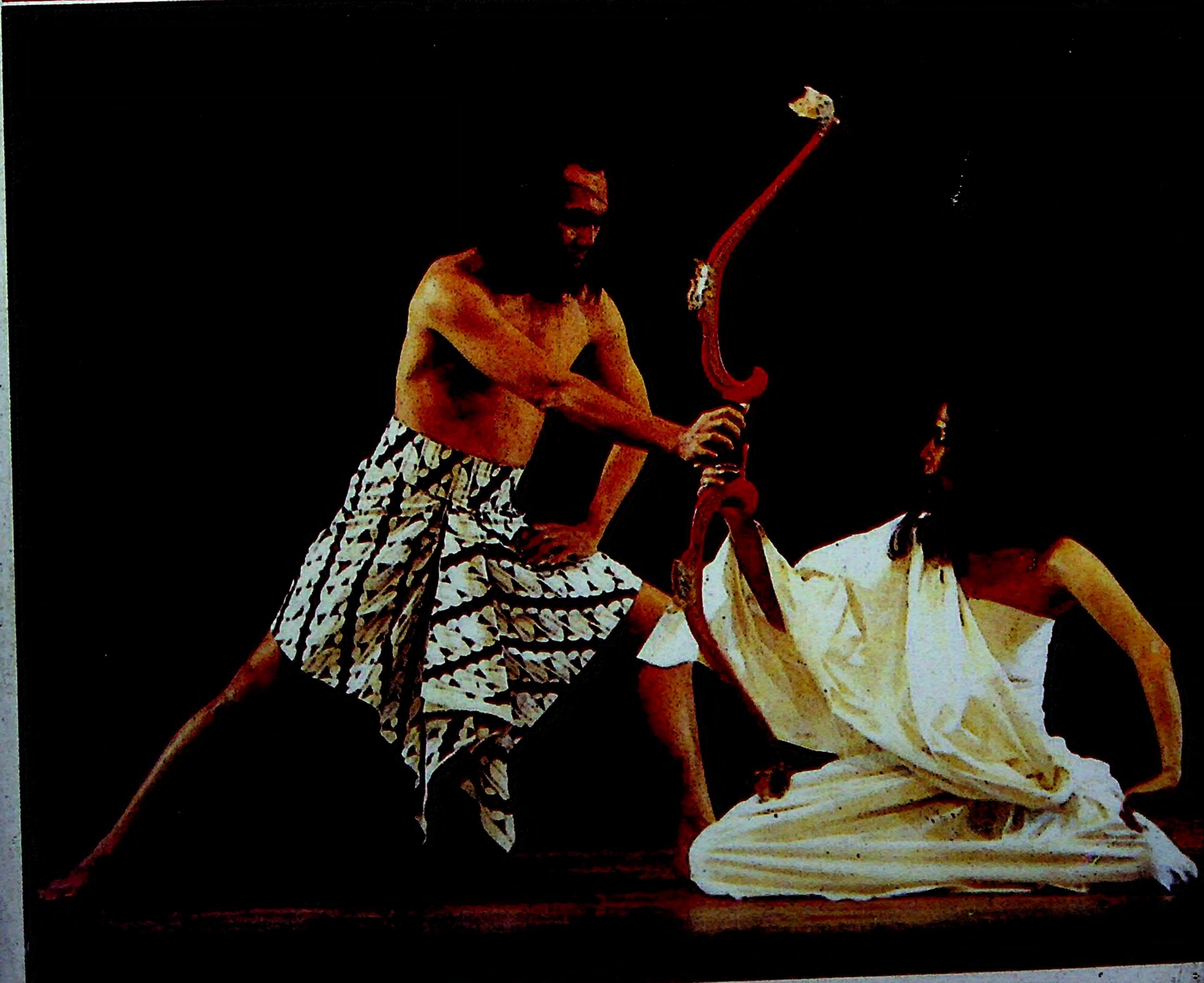

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान लखनऊ

हिन्दी समिति ग्रन्थमाला – २७०

रामायण काकावीन

(इंडोनेशिया की रामकथा)

अनुवादक
डा. चन्द्रदत्त पालीवाल

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
(हिन्दी समिति प्रभाग)
राजर्षि पुरुषोत्तमदास टण्डन हिन्दी भवन
महात्मा गाँधी मार्ग, लखनऊ

प्रकाशक

विनोद चन्द्र पाण्डेय
निदेशक
उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान
लखनऊ

© उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान

प्रथम संस्करण १९९१

मूल्य : रुपये १६५.००

प्रतियाँ : २०००

मुद्रक :
स्वास्तिक प्रिन्टिंग प्रेस
२७, माई की बगिया,
बड़ा चाँद गंज, लखनऊ

प्रकाशकीय

इंडोनेशिया (द्वीपान्तर) में ईसा की नवीं शताब्दी में वहाँ की प्राचीन कावी भाषा में लिखित "रामायण काकावीन" का हिन्दी अनुवाद प्रकाशित करते हुए हमें गर्व हो रहा है। इस शताब्दी के प्रारंभिक दशकों तक हम भारतवासी समुद्र को पार करना बुरा समझते थे और यदि कोई भारतीय विदेश जाकर लौटता था तो समाज उसका बहिष्कार करता था और कदाचित निर्धारित कर्मकांड के द्वारा शुद्धि प्राप्त करनी होती थी। इसके विपरीत हमारे पराक्रमी पूर्वजों ने न केवल समुद्र की उत्ताल तरंगों को अपने वश में किया, बल्कि सुदूर देशों में जाकर वहां सांस्कृतिक-विनिमय और पारस्परिक-सम्बन्ध प्रतिष्ठित किए। वह युग भारतीय इतिहास के उत्कर्ष का युग था। रामायण काकावीन के हिन्दी में प्रकाशन द्वारा हम उस स्वर्णिम युग को और अपने साहसी महान पुरखों को श्रद्धा सुमन अर्पित करते हैं।

ईसा से अनेक शताब्दियों पूर्व वाल्मीकि ने रामायण महाकाव्य की रचना की। कदाचित इस महाकाव्य की रचना के पूर्व भी रामकथा लोकप्रिय थी। किन्तु वाल्मीकि के रचना कौशल ने इस कथा को अमर कर दिया। राम का चरित्र इतना उदात्त, इतना प्रेरणादायक और इतना अभिराम है कि इसीलिए स्वयं महर्षि वाल्मीकि का विश्वास था कि "जब तक पृथ्वी पर पहाड़ रहेंगें, नदियाँ रहेंगी तब तक रामकथा लोगों में प्रचलित रहेगी।" उन्होंने लिखा हैः-

यावत स्थास्यन्ति गिरयः सरितश्चहीतले
तावदरामायणीकथा लोकेषु प्रचरिष्यति।

महाकवि का यह विश्वास समयसिद्ध भी हुआ। कालांतर में संस्कृत भाषा का वह महत्त्व नहीं रहा जो पहले था। भारतवर्ष के विभिन्न प्रदेशों और क्षेत्रों में आधुनिक भारतीय भाषायें विकसित होकर प्रतिष्ठित हुई। संस्कृत भाषा के महत्त्व के क्षीण होने के साथ रामकथा की लोकप्रियता क्षीण नहीं हुई। अपितु वह नये परिवेश में नये रूप में, नवीन अलंकरणों से विभूषित होकर आधुनिक भारतीय भाषाओं में प्रकट हुई। इन लोक भाषाओं के माध्यम से रामकथा राजमहलों, मंदिरों और विद्वानों की पोथियों से निकल कर सामान्य जन की कुटिया तक गयी। ईसा की ११वीं शताब्दी से १७वीं शताब्दी तक तमिलनाडु में कम्ब रामायण, केरल में रामवर्मा रचित रामचरितम, तेलुगु भाषा में रंगनाथ-रामायण, कर्नाटक में नागचन्द पम्प की पम्प-रामायण, गुजरात में गिरधरदास की गिरधर-रामायण, उड़ीसा में बलराम दास कृत रामायण, असम में माधव कंदली की रामायण, अवधी में तुलसीकृत रामचरित मानस आदि लिखी गयीं, जिनका मूल स्रोत वाल्मीकि की रामायण ही है। यह जानकर बड़ा आश्चर्य होता है कि भारत में अपभ्रंश और प्राकृतिक भाषाओं में रचित जैन रामायणों के अतिरिक्त, प्रायः सभी भारतीय लोक भाषाओं की रामकथाओं की रचना के पूर्व, भारत से हजारों मील दूर, इंडोनेशिया में वहाँ की रामायण की रचना की जा चुकी थी। उत्तर भारत में सर्वाधिक प्रचलित तुलसीकृत रामचरित मानस से लगभग ७०० वर्ष पूर्व इंडोनेशिया का यह महाकाव्य लिखा जा चुका था। और

यह सुखद आश्चर्य है कि जब नवीं शताब्दी में महाकवि योगीश्वर ने रामायण काकावीन की रचना की लगभग उसी काल में इंडोनेशिया के मध्य जावा क्षेत्र में प्राम्बानन स्थित हिन्दू मंदिरत्रयी–ब्रह्मा, विष्णु और शंकर के एक–एक मंदिरों का निर्माण हुआ और शंकर और ब्रह्मा के मंदिरों की बाह्य भित्तियों पर सम्पूर्ण रामायण की कथा मूर्तियों के माध्यम से प्रस्तुत की गयी, जो कि रामायण काकावीन पर ही आधारित हैं भारत के बाहर रामायण संस्कृति के प्रचार में महाकवि योगीश्वर के कालातीत योगदान को यह प्रकाशन एक विनम्र अर्चना है।

जिस प्रकार सोलहवीं शताब्दी में महाकवि तुलसीदास ने असी घाट पर रामचरित मानस पर आधारित रामलीला प्रारम्भ की थी, उसी प्रकार प्राम्बानन के शिव मंदिर के पीछे रामायण काकावीन पर आधारित रामकथा का मंचन पूर्णिमा की रातों में खुले मंच पर नवीं शताब्दी से ही प्रारम्भ हुआ था, जिसका मंचन आज भी हो रहा है। महाकवि योगीश्वर की रामायण संस्कृति के दक्षिण पूर्व एशिया में प्रचार–प्रसार में जो कालजयी निर्णायक भूमिका रही है, इससे हम भारतवासी प्रायः अनभिज्ञ हैं। डा. पालीवाल ने इस वृहद ग्रंथ का मूल कावी भाषा से हिन्दी में अनुवाद करके भारत और इंडोनेशिया को शताब्दियों पुरानी सांस्कृतिक एकता में बांधने वाले सूत्र को भारत में उद्भासित किया है। हम सब उनके प्रति सदा आभारी रहेंगे। भारत में इंडोनेशिया के राजदूत महामहिम डा. ईडाबागूस मंत्र के प्रति कृतज्ञता ज्ञापित करता हूं, जिन्होंने भारत और इंडोनेशिया की मित्रता की प्रतीक रामायण काकावीन के लिए कृपापूर्वक पुरोवाक लिखा

विनोद चन्द्र पाण्डेय

निदेशक

निवेदन

भगवान राम के देश भारत में लगभग ३०० प्रकार की रामायण हैं यानी रामचरित लिखे गये हैं। "प्रकार" से हमारा तात्पर्य विभिन्न दृष्टिकोण से है। पर, वास्तविक आधार वाल्मीकि का रामायण माना जाता है जिसकी रचना काल के विषय में कई मत हैं। एक मत कहता है कि वाल्मीकि रामायण महाभारत की रचना के बाद का है जो संस्कृत भाषा के मर्मज्ञों के अनुसार सिद्ध नहीं होता। रामायण का वाड.मय महाभारत से पुराना है। वाल्मीकि राम के समकालीन थे, यह भी मतान्तर का विषय है। आर्य समाज के अनुसार राम का अविर्भाव ईसा से कई लाख वर्ष पहले का है। पर वाल्मीकि की भाषा उतनी पुरानी नहीं हो सकती। पश्चिमीय मत के अनुसार महाभारत का युद्ध ईसा से ५०० वर्ष पहले हुआ था। अतः राम का युग इससे भी पहले का होगा। अधिकांश इतिहास शास्त्री यह मान गये हैं कि वाल्मीकि रामायण ईसा से २००-२५० वर्ष पहले रचा गया तथा महाभारत डेढ़ सौ वर्ष पहले। एक मत यह भी है कि सतयुग से लेकर राम नाम से अनेक महापुरुष हो गये थे जिनमें परशुराम, बलराम आदि भी हैं, इन सबके चरित्रों को मिलाकर एक आदर्श राम की रचना वाल्मीकि ने कर दी। पर राम की अलग सत्ता, राम-रावण युद्ध आदि ऐतिहासिक दृष्टि से सिद्ध हो चुके हैं। अतएव वाल्मीकि रामायण एक कल्पित महाकाव्य नहीं है। संस्कृत के दो महाकाव्य बहुत लोकप्रिय हो गये थे और वे हैं वाल्मीकि का रामायण तथा कालिदास का रघुवंश। कालिदास गुप्त काल के स्वर्णयुग में - चंद्रगुप्त विक्रमादित्य के समय के महाकवि थे, यह इससे भी सिद्ध होता है कि उसी युग में लगभग ईसवीय तीसरी शताब्दि में वर्तमान कम्बोडिया, सुमात्रा, जावा, थाईलैण्ड आदि में संस्कृत भाषा काफी प्रचलित हो गयी थी और इसी कारण रघुवंश तथा वाल्मीकि के राम भी वहां पहुंचे और उन देशों की स्थानीय रुचि के अनुसार संशोधन परिवर्धन होते रहे। उन देशों में रामायण को जो रूप मिला वह केवल दो रचनाओं के आधार पर प्रकट है- वही वाल्मीकि तथा कालिदास का रघुवंश। यद्यपि यह भी प्रकट है कि कालिदास का मेघदूत तथा कुमारसम्भव भी वहां पहुंच गया था। भाटिटकाव्य से भी बहुत कुछ लिया गया है। वाल्मीकि का प्रभाव तो इतना पड़ा कि चम्पा में, जिसे आज **वियतनाम** कहते हैं, ७वीं ईस्वीं में इनका एक मंदिर बनाया गया जिस पर संस्कृत में शिलालेख हैं। एशिया क्या संसार में वाल्मीकि का यह एकमात्र मंदिर है।

यह तो सिद्ध है कि ईसा के १००-२०० वर्ष पहले ही भारतीय सुदूर पूर्व एशिया के देशों तथा द्वीपों में पहुंच गये थे। जैन तथा बौद्ध साधु इनमें अग्रणी थे। यह भी सिद्ध है कि पहले वैदिक सभ्यता के हिन्दू ही उधर पहुंचे थे। भारत में मूर्तिपूजा, यानी देवता की प्रतिमा बनाकर मंदिर में स्थापना की प्रथा बौद्धकाल में, महायान सम्प्रदाय के बौद्धों की देन है। इसके पहले प्रतिमा रचना की प्रथा ही नहीं थी। प्रतीक के रूप में पत्थरों पर, ताम्रपत्र पर, पहाडों पर, देव या प्रकृति या स्थानीय सभ्यता के चिह्न बना दिये, खोद दिये जाते थे।

दक्षिण पूर्वी एशिया की सम्यता तथा संस्कृति भारतीय सम्यता की देन है - प्राचीन भारत की। लेखक 'रेजिनाल्ड ला में' ने अपनी पुस्तक "दक्षिण पूर्वी एशिया की संस्कृति" में स्पष्ट लिखा है कि आज जिस

भाग को हम हिन्दोशिया कहते हैं (मलाया प्रायद्वीप, थाईलैण्ड तथा पहले फ्रैंच इण्डों-चाइना कहा जाता था) वे सब संस्कृति तथा सभ्यता के लिये भारत के अत्यधिक ऋणी हैं। यह भी सिद्ध है कि ईसा से सैकड़ों वर्ष पूर्व भारतीय इन स्थानों में पहुंच गये थे। इन्हें 'स्वर्ण भूमि' की संज्ञा दी गयी थी तथा स्वर्णद्वीप "सुमात्रा" तथा यवद्वीप (जावा) में भारतीयों ने अपना उपनिवेश बसा लिया था। कौटिल्य के अर्थशास्त्र में भी स्वर्णद्वीप का नाम आया।

हिन्दू सभ्यता के विस्तार की जानकारी वाल्मीकि को भी थी तभी तो उनके रामायण में यवद्वीप (जावा) का उल्लेख है। इसी द्वीप और आसपास के द्वीपों में ८वीं से ११वीं सदी तक यहां शैलेन्द्र साम्राज्य था। इसकी राजधानी यजपाहित थी जो "अयोध्या" से मिलता जुलता है। इसी साम्राज्य काल में बोरबदूर का प्रसिद्ध हिन्दू मंदिर बना था। इस साम्राज्य में ही बालपुत्र देव नामक एक नरेश ने मगध में नालन्दा में एक विहार बौद्धों के लिये बनवाया था। मगध के उस समय के राजा देवपाल के पास दूत भेजकर उनसे अनुरोध किया था कि उनके बनवाये विहार के लिये पाँच ग्राम दे दें। देवपाल का समय ईस्वी सन ८३९-७८ तक माना जाता है।

इसी शैलेन्द्र साम्राज्य के विषय में जावा में संजय के एक शिलालेख से पता चलता है कि ई. सन ९ में वे शैलेन्द्र राजा के रतु यानी प्रान्तीय सूबेदार थे। उस समय सुमात्रा का नाम श्रीविजय था। सन् ६८८ के कोटा काटर (बैंकाक) में एक आलेख से पता चलता है कि उन्होंने शैलेन्द्र के लिये अनेक द्वीपों पर विजय प्राप्त की थी। केन्द्रीय जावा तक उन्होंने शैलेन्द्र साम्राज्य का विस्तार किया था। सन ९०७ के एक आलेख से भी इसकी पुष्टि होती है। मलय के पेंकालोंकन के शिलालेख से भी इसकी पुष्टि होती है। यह लेख शंकर भगवान की स्तुति से प्रारम्भ होता है। इससे प्रकट है कि संजय तथा उनके शासक पहले शैव मतावलम्बी थे, बाद में बौद्ध। संजय की विजय की कालिदास के रघुवंश के राघव से तुलना की गयी है। इन आलेखों से पता चलता है कि रावण का नाम ८२५ ई. में, लंका (लंगव) का ८६२ में, ८७९ में अयोध्या नामक व्यक्ति का, ८८० में हनुमान के पिता पवन, ८८० में राघव, ९०७ में लक्ष्मण, ८८० में राम, ९१० में सीता, ८७९ में भरत, ९८२ में वाली तथा सन ९२८ में लक्ष्मण का नाम, स्थानीय अपभ्रंश में उत्कीर्ण है। कम्बोज (कम्बोडिया) में तो राजधानी का नाम अजुध्या तथा नरेश अपने नाम के आगे 'राम' लगाते थे। शैलेन्द्र नरेश भी यही करते थे। शैलेन्द्र साम्राजय का अंत ९वीं सदी में हुआ। तब दूसरा पूर्ण हिन्दू राज्य कायम हुआ। यह १५वीं सदी तक चला। इसके अन्तिम नरेश ने मुस्लिम धर्म स्वीकार कर लिया अतएव हिन्दू साम्राज्य समाप्त हुआ। फिर ब्रिटेन का तथा सनं १६२३ से डच शासन, १८११ में अंग्रेज, फिर १९१५ की संधि के बाद डच वापस आ गये। भारतीय सभ्यता तथा भाषा को तभी आघात लगा। मुसलिम ईसाई धर्म बढ़ा। हिन्दू संख्या बहुत घट गयी।

सन् ८८९ से ९०७ तक कम्बोज में राजा यशोवर्मन का राज्य था। उनके समय में प्रवरसेन ने प्राकृत भाषा में "सेतुबंध" की रचना की थी तथा रावणवध भी प्राकृत भाषा में है। ९वीं सदी में ये ग्रंथ बहुत लोकप्रिय

थे पर यह भी स्पष्ट है कि वाल्मीकि यहां बहुत पहले पहुंच गये थे– केवल संस्कृत के प्रचार के साथ रामायण की गाथा ९वीं सदी से लोकप्रिय हो गयी थी। जावा के नरेश भी रामायण के प्रेमी हो गये थे।

कम्बोज (कम्बोडिया–वर्तमान कम्पूचिया) में खमेर यानी क्षत्रिय वंश का राज्य था। ये नरेश बुद्ध के धर्म को भी प्रश्रय देते थे और शैव भी थे। यहां भगवान त्रिभुवनेश्वर के मंदिर में नित्य रामायण तथा महाभारत, दोनों का पाठ होता था पर रामायण अधिक लोकप्रिय थी। त्रिभुवनेश्वर के मंदिर तथा पूजन का आलेख प्राप्त है। विदेशी तथा देशी लेखकों ने इन खुदे लेखों का वर्णन किया है। ऐसा लगता है कि यहीं से वाल्मीकि रामायण चम्पा देश (वर्तमान वियतनाम) पहुंची थी और इसकी लोकप्रियता के कारण ही यहां वाल्मीकि का मंदिर बनाया गया था – एशिया या संसार में एकमात्र बाल्मीकि का मंदिर है। कम्बोज में रामायण के राम इतने प्रिय थे कि अपने नरेश की तुलना वे राम से करते थे। वहीं रामकेत्ति ग्रंथ छठीं–सातवीं शताब्दि में रचा गया जिसमें ५०३४ पद हैं। रामकेत्ति द्वितीय की रचना ८वीं सदी की है जिसमें १७७४ पद हैं। इसमें ही अपने नरेश की तुलना राम से की गयी है। राम की कथा तो हर दक्षिण पूर्वी एशिया में उनकी संस्कृति के अनुसार बदलती गयी। रामकेत्ति द्वितीय में लिखा है कि सीता अपने पति से रुष्ट होकर नागदेश में रहने लगीं। नाग देश से तात्पर्य पाताल लोक का होगा। कम्बोज में रामायण की लोकप्रियता का एक प्रकट उदाहरण है वहां का प्राचीन "लखोन खोल" नामक आदि ढंग का हल्का नाटक नृत्य। लखोन से लक्ष्मण का तात्पर्य प्रकट है।

ऐसा लगता है कि रामायण दक्षिण पूर्वी एशिया में सबसे पहले कम्बोज पहुंचा। वहां भी स्यात उत्तरी वर्मा से आया। कम्बोज के द्वारा ही थाईलैण्ड पहुंचा। कम्बोज तथा थाईलैण्ड से (स्याम देश) यह मलेशिया पहुंचा। यहां चमड़े की कठपुतली बनाकर दलांग नामक तमाशा होता था जिसे यंगकुलित करते थे तथा कथा–कहने वालों को पेरलीपुरलर लोंग कहते थे। मलेशिया पहुंचते पहुंचते रामायण का रूप ही बदल गया था। हनुमान सीता–राम के पुत्र हो गये। हनुमान ने राजकुमारी रेनक जिंतन से विवाह किया तथा श्वसुर के राज्य तहविल के शासक हुए। रेनक रेणुका का अप्रभ्रंश हो सकता है। माता के स्थान पर पत्नी का नाम हो गया– सम्भव है।

दक्षिण पूर्वी एशिया में बौद्धों ने भी धर्म तथा संस्कृति का प्रचार किया था और १५–१६वीं शताब्दि तक हिन्दू तथा बौद्धधर्म साथ साथ चलते रहे पर मुस्लिम आक्रमण और भी ईसाई देशों के आक्रमण से हिन्दू या बौद्ध धर्म को बड़ा आघात पहुंचा। शैलेन्द्र साम्राज्य की ९वीं या १०वीं सदी में समाप्ति के बाद फिर पुग्ना हिन्दू गौरवकाल उतना नहीं रहा हो पर सौभाग्य से बाली द्वीप ही एक मात्र बचा है जहां हिन्दू धर्मावलम्बियों की संख्या का बहुमत है। वहाँ हिन्दू सभ्यता तथा संस्कृति भी अभी तक जीवित है। यद्यपि देश–काल के अनुसार उसके रूप में परिवर्तन हुआ है पर मूल आधार वर्तमान है। बाली में प्राप्त तथा प्रचलित रामायण संस्कृत भाषा में है, इसका नाम है (चरित्र रामायण) इसमें रामकथा संक्षेप में दी गयी है। हमने ऊपर कम्बुज

देश (कम्बोडिया) में संस्कृत भाषा तथा रामायण की कथा के प्रवेश का उल्लेख किया है। इतिहासकार मजुमदार की एक पुस्तक काम्बोज के आलेखों–शिलालेख आदि पर है। उसके अनुसार पीतल पर लिखा प्रथम लेख प्रम्वनम में ९वीं शताब्दि के मध्य का तथा दूसरा पीतल पर लेख पनतरन में १३१९–१४५४ के बीच का है। इनसे यह पता नहीं चलता कि रामायण वहां कैसे पहुंचा पर यह पता चलता है कि सन ९०७ में "जलुम" राम गाथा पढ़ते सुने गये थे। पर १०वीं सदी में रामायण का परिवर्तित रूप वहां प्रचलित था। यहीं से रामायण लाओस में पहुंचा; कम्बोज तथा स्याम देश से होता हुआ यहां पहुंचा था। भारत के हिन्दू इस क्षेत्र में तथा मलेशिया तक बस गये थे इसका प्रमाण तो मलेशिया के तकनैया स्थान के निकट पश्चिमी समुद्र तट पर बसे लोगों की सूरत शक्ल से मालूम हो जायगा कि वे प्राचीन भारत के हिन्दू हैं।

यह तो सिद्ध है कि ईसा से २००–४०० वर्ष पूर्व संस्कृत भाषा तथा हिन्दू सभ्यता तथा संस्कृति दक्षिण पूर्वी एशिया में फैल गयी थी। राम कथा फैलते फैलते अपना रूप तथा उच्चारण भी बदलती गयी। नाम भी बदल गये–उच्चारण भी बदलते गये। दशरथ जातक (बौद्ध) ईसा से ४०० वर्ष तक पुराना माना जाता है। इसका अनुवाद चीनी भाषा में भी है। भारतीय ग्रन्थों का अनुवाद एक सोगोदी के भिक्षु ने ई.पू. २००– २८० में किया था। उसमें राम बनवास, सीता हरण, जटायु युद्ध, लंका का युद्ध, सुग्रीव बाली की लड़ाई, यहां तक कि सीता का अग्नि प्रवेश भी है। ये जातक कथायें हैं। एक जातक में सीता को दशरथ की पुत्री भी लिखा है। वारी के नाम का अपभ्रंश ही बाली द्वीप का नाम पड़ा। बाली में प्राप्त रामायण मातृकाक्षर लिपि में है।५ पद में आरम्भ में संस्कृत स्वर व्यंजन से प्रारम्भ होता है– "अयोध्याधिपति" आचार्य विनय इष्टकम्प। अन्तिम पद में "हत शत्रतु"–इत्यादि। बाली में प्राप्त सात ताड़पत्र पर पूरी राम कथा दे दी गयी है। यह ताड़पत्र लीडन विश्वविद्यालय के पुस्तकालय में सुरक्षित है। इसमें राम की माता का नाम सुमित्रा लिखा है तथा लिखा है कि श्रीराम ने एक लाख वर्ष राज्य किया था। ५१ छन्दों में, पदों में, पूरा रामायण आ गया है। सुमित्रा राम की माता थीं– इसी भ्रम के कारण क्या सुमात्रा द्वीप नाम पड़ा – ऐसी शंका कुछ इतिहासकारों को होती है।

यवद्वीप – जावा

जावा में रामायण कब पहुंचा, इस विषय में केवल ऐतिहासिक ऊहापोह के अलावा निश्चित लिखना कठिन है। संस्कृत भाषा तो यहां ईसा से तीसरी चौथी शताब्दि पहले पहुंच चुकी थी, यह तो विदित है। उस द्वीप में तथा समस्त दक्षिण पूर्वी एशिया में किसी भटिटकवि द्वारा लिखित–संस्कृत भाषा में भटिटकाव्य का प्रचार अवश्य था। अतः उसी के आधार पर प्राचीन जावा की भाषा में जो उत्कीर्ण अंश मिलता है उसमें बालकाण्ड के शुरू के अध्याय नहीं हैं। १ से ९ फलक या पट्टी में बालकाण्ड के कुछ महत्तत्पूर्ण अंश तथा उत्तर काण्ड के भी कुछ दृश्य प्राप्त हैं। मनतरन में प्राप्त फलक में केवल हनुमान की कथा है तथा कुम्भकर्ण वध तक है। जावा की असली भाषा ७ करोड़ जनसंख्या की भाषा है। संस्कृत का उसी प्रकार प्रचार था जैसे आज हमारे बीच है। यहां के इतिहास से प्रकट है कि हिन्दू–बौद्ध संस्कृति ९वीं शताब्दि तक पूरे क्षेत्र में फैल गयी थी। भटिटनामक संस्कृत के किसी विद्वान ने संस्कृत भाषा में भटिटकाव्य लिखा था जिसमें रामायण की कथा है।

जावा के रामायण से प्रकट है कि उसका दो तिहाई अंश वाल्मीकि रामायण से नहीं अपितु भटिटकाव्य से लिया गया है। जावा का रामायण तथा योगेश्वर नामक कवि ने (उनका समय सन ८५६ प्रमाणित है) लिखा है ! वाली में जिस भाषा में रामायण है उसे काकावीन रामायण कहते हैं। वाली में रामायण कभी भूला नहीं गया पर राजनैतिक तथा धार्मिक परिवर्तनों के झंझावात में जावा में रामायण तथा उसकी कथा लुप्त हो गयी थी। जावा की कलुद पहाड़ी या चण्डीतरन–पंजापहित के बिहार या देवालयों में उत्कीर्ण लेखों से प्रकट है कि १७–१८ वीं सदी में राजा कर्तसुर तथा राजा सुरकर्त के शासनकाल में रामायण को सम्भवतः पुनः जीवित किया गया था। १८वीं सदी की रचना है "सरातरामा" जिसके रचयिता कवि की आयी जासाडापूरो थे। इस "सरातराया कावी" इसकी पंक्तियां वामाड.ग नृत्य के प्रदर्शन में गायी जाती थीं पर वास्तविक रामायण तो भूल गया था। वाली से होकर जो रामायण जावा को प्राप्त हुआ था वह वास्तव में मलय देश से मलयभाषा में प्राप्त रामायण "हीकायात श्रीरामा" था जिसने वाली को प्रेरित किया था और आज भी बाली में वाल्मीकि और तुलसी बड़े लोकप्रिय हैं। यह ध्यान रखना होगा कि मलय भाषा का प्रभाव समूचे सुदूरपूर्व दक्षिण एशिया के साथ ही मडागास्कर द्वीप तक अब भी है तथा संस्कृत भाषा का आधार समूचे क्षेत्र में व्याप्त है चाहे श्री लंका के जयवर्धन हों, हिन्दएशिया के सुकर्णों या सुहार्तों। वास्तव में हिन्द से ही 'हिन्द एशिया' जुड़ा हुआ है।

जावा की भाषा कों कावी कहते हैं। यह विदित है कि शैलेन्द्र साम्राज्य में अधिकांश नरेश बौद्ध थे। उनके बाद ९वीं सदी से हिन्दू साम्राज्य में सभी नरेश शैव मतावलम्बी थे। उन्हीं के समय ९वीं शताब्दी का "पानातारान" नामक मंदिर की भित्तियों पर राम कथा उत्कीर्ण है वह प्रकटतः १८वीं शताब्दी का है और जावा के कावी भाषा में लिखित काकावीन रामायण पर आधारित है। प्रकट है कि काकावीन इस समय तक पर्याप्त लोकप्रिय रहा होगा– पर काकावीन का रचना काल, बहुत छानबीन करने पर इसकी रचना अधिक से अधिक ९००–९०८ ईसवीय सन की है। इसके रचयिता का नाम नहीं पता चलता है–प्राचीन भारतीय संस्कृति परम्परा के अनुसार नाम न दिया होगा। अनुमान लगता है वही कवि योगेश्वर जिन्हें "वृहस्पतित्व" प्राप्त हुआ था, इसके रचयिता थे। यह भी प्रकट है कि वे संस्कृत के प्रकाण्ड पंडित थे क्योंकि उन्होनें अपनी रचना में मेघदूत, रघुवंश, कठिन संस्कृत ग्रंथ "रावण वध", 'भारत युद्ध', श्रीमद्भगवद्गीता, किंचित वाल्मीकि तथा संस्कृत में लिखे भटिटकाव्य का भी बड़ा सहारा लिया है। वाल्मीकि का तो सहारा नाममात्र का है। पूरे महाकाव्य में शंकर भगवान भरे पड़े हैं, शैव मत के रचयिता रहे हैं, चाहे योगेश्वर नाम उनका भी हो, जैसा कि अनेक विद्वानों का मत है। ऐसा ही मत इस काव्य के हिन्दी अनुवादक श्री पालीवाल का भी प्रतीत होता है। इनकी रचना जो कावी भाषा में हैं, वाल्मीकि से कथा तथा शैली दोनों में भिन्न है। प्राकृतिक सौन्दर्य का वर्णन, सीता जी के सौन्दर्य का वर्णन तो कमाल का है। इसका अन्त रावण वध के बाद, सीता की अग्नि परीक्षा के बाद राम के साथ सानन्द जीवन व्यतीत करने तक है। उत्तरकाण्ड की सीता वनवास की दुःखान्त कथा नहीं है जैसे तुलसी कृत रामायण में भी। इस ग्रंथ के लेखक पालीवाल से हम सहमत नहीं हैं कि वाल्मीकि रामायण में उत्तर काण्ड मूल ग्रंथ में है। वह ऋषि जो स्वयं निम्नजाति तथा पेशा के थे तपस्वी शूद्रक के वध की कथा न देते

तथा अनैतिहासिक सीता की दन्तकथा न देते। वह क्षेपक बाद का जोड़ा गया है। उत्तर रामचरित में यह कथा है जो क्षेपक लिखने वाले की प्रवृत्ति के समान है।

अस्तु, सन १९०० में प्रो. केरन ने कावी भाषा से हिन्देशिया की "आमफलक" भाषा में अनुवाद किया था। बाद के डा. स्तूतरहे ने भी इसका अध्ययन किया। पर असली कार्य प्रो. पूर्वीचारोको ने किया। डच् विद्वान प्रो. केरन ने इस काव्य को रोमन लिपि में लिखवा डाला। प्रो. पूर्वीचारोक ने इसका अनुवाद कराया, लैटिन भाषा में भी इसका अनुवाद हो गया और यह कार्य १९५० में ही पूरा हुआ था। पर दस वर्ष तक यह अनुवाद लुप्त था। १९६० में इसकी प्रति मिली। उसी का यह सरल अनुवाद हम उपलब्ध करा रहे हैं।

काकावीन पर शैव सम्प्रदाय की छाप तो है ही। इसका प्रमाण कि वह शैव युग था प्राम्वानन के शिव मंदिर से मिलता है जिसके बाहरी हिस्से पर दीवालों पर राम कथा उत्कीर्ण है। इसी काल में काकावीन की रचना मानी जाती है। अतः रामायण की कथा जावा को ज्ञात थी यह प्रकट है पर उत्कीर्ण लेख काकावीन के आधार पर है, यह नहीं कहा जा सकता क्योंकि उन्हीं दिनों उस महाकाव्य की रचना हो रही थी।

कुछ विद्वानों की राय है कि इस ग्रंथ की रचना सन १६११ के अन्त में हुई थी। कुछ का मत है कि इसके रचनाकार योगेश्वर नहीं, राजकुसुम यानी राजकुसुम नामक कवि थे। हमने ऊपर लिखा है कि जावा के अनेक उत्कीर्ण कुमार सम्भव तथा रघुवंश पर आधारित हैं। कथा बदल गयी है। सुमन सान्त (सुमन से अन्त) की कथा में ऋषि ऋणविन्दु की तपस्या भंग करने के लिये इन्द्र ने हरिणी नामक अप्सरा को भेजा। ऋषि ने उसे पहचान लिया- षडयंत्र समझ गये कि वह क्रचकोसिक की पुत्री के रूप में पैदा होगी तथा पुष्प प्रहार से मरेगी। इस प्रकार वह विदर्भ नरेश की पुत्री के रूप में पैदा हुई- वहीं इन्दुमती थी जिसके स्वयंवर में इक्ष्वाकु वंश के अज ने वरण कर शत्रुओं को परास्त किया था। वही इन्दुमती पुष्पप्रहार से मरी थी। लोरों जोगरंग में जो उत्कीर्ण है उसमें पहला अध्याय कालिदास से है। एक उत्कीर्ण में गंधर्व राज का नाम कालिदास के प्रियदर्शन से बदल कर चित्ररथ है। इसी ने मोहक अस्त्र इक्ष्वाकु नरेश अज को दिया था।

राजा वलितुंग के समय महाभारत भी लोकप्रिय हो गया था। उत्कीर्णो में भीमकुमार, कीचक, भीमजकुमार (घटोत्कच) का उल्लेख है। ९९६ ई. की रचना में भीम द्वारा कीचक का वध की कथा है। इस समय शासक थे धर्मवंश तुगुह अनन्तविकम। इन्हीं के शासन काल में महाभारत के विराट पर्व की रचना नाटक के रूप में, अभिनय के लिये हुई थी।

दक्षिण पूर्वी एशिया में राम की कथा सबसे पहले कब पहुंची इसके विषय में अनेक मत हैं। पुष्ट प्रमाण मिलता है कि बौद्ध जातक दशरथ जातक ईसा से ४०० वर्ष पूर्व से सन २०० वर्ष के भीतर लिखा गया और वही पहले इधर पहुंचा। जातक कथाओं में भिन्न प्रकार से राम गाथा है। इस प्रकार संस्कृत के ग्रंथ तथा जातकों ने मिलकर रामायण की सूरत बदली, बदलती गयी और फिर स्थानीय सभ्यता की रुचि के अनुकूल परिवर्तन होता गया। एक कथा के अनुसार ननकसिर जादिता नामक बारी (वाली) की बहन से ही बाली का

विवाह हुआ था। वह सुगीय (सुग्रीव) की भी बहन थी। वारी और सुगीव सगे भाई थे। बौद्ध ग्रंथ की सुजाता जिसने बुद्ध को खीर खिलाकर समाधि के बाद व्रत समाप्त कराया था की अवतार सीता थी। रावण के दस सिर नहीं हैं। वह बड़ा विद्वान तथा सुन्दर व्यक्ति था। एक बार सीता जी इसके प्रति आकृष्ट हो गयी थीं। एक स्थान पर रावण की पुत्री सीता थी। काकवीन रामायण में सीता राम की पत्नी है जिनका रावण ने सूर्पणखा का बदला लेने के लिये अपहरण किया। हनुमान की माता का नाम नानकासी मिलता है। भारत में प्राप्त रामायण में भी भिन्न कथायें हैं। एक जैन तथा बंगला के संस्करण के अनुसार बनवास से लौटने के बाद सीता की दासियों ने सीता से कहा कि रावण कैसा था उसका चित्र बनाकर दिखलाइये। सीता ने चित्र बना दिया। वह चित्र राम के सिंहासन पर किसी प्रकार पहुंच गया। राम बिना देखे उस पर बैठ गये तो रावण चीख उठा कि मेरे सर पर क्यों बैठे हो। रावण की बात सुनकर राम चौंक उठे। चित्र देखा। बनाने वाले का पता चला तो लक्ष्मण को आदेश दिया कि सीता की हत्या कर दो। लक्ष्मण सीता को बहका कर ले गये पर उनके गर्भवती होने तथा करुणा के कारण जंगल में छोड़ दिया और एक कुत्ते को मार कर उसका रक्त राम को दिखा दिया। सीता की रक्षा के लिये इन्द्र ने ही कुत्ते का रूप धारण किया था। बंगलाग्रंथ में एक कथा है कि कैकयी ने स्वयं रावण का चित्र बनाकर उसे सीता की खाट पर रख दिया था जिसे राम ने देख लिया। इसी से कैकयी की पुत्री का नाम ककू (काकुआ) दिया है। उलट पलट कर सीता बनवास की कथा अनेक भारतीय रामायण में है। लेखक जैकोवी के अनुसार भारत में राम कथा सबसे पहले कोसल देश में दूसरी सदी में शुरू हुई थी। उसके बाद सीता-राम जनता के सामने आये पर इस मत से वाल्मीकि रामायण की प्राचीनता समाप्त हो जाती है। दक्षिण पूर्वी एशिया के अनेक देशों का नाम हमारे पुराने ग्रंथों में आया है। अथर्ववेद के परिशिष्ट में, जिसका समय ईस्वीपूर्व ८ या ९ शती कहा जाता है ताम्रलिपि के अंतर्राष्ट्रीय बन्दरगाह का उल्लेख है। अशोक के "महानिदेश"- ईसवी पूर्व २४७ का समय तीन स्थानों का उल्लेख करता है- स्वर्णभूमि, तक्कोला तथा यवद्वीप।

इन देशों में रामायण की ध्वनि, उच्चारण बदलता गया। मलय प्रदीप ने अपने शासन काल में राजभव गुप्त के सन २१५ में चीन के नरेश को जो पत्र लिखा था उससे पता चलता है कि वहां संस्कृत भाषा का प्रचलन था तथा गंधमादन पर्वत से भी उंची अट्टालिकायें उनके राज्य में थीं। इन्हीं के शासन काल तथा चीनी रेकर्ड में लंका को लांगका मिलता है तथा यह लंगक शुक (लंकापुरी) पतानी नामक स्थान के निकट था। काकाविन अथवा कमवानी रामायण में लंका के स्थान का पता नहीं दिया है। मलय रामायण के अनुसार सीता हरण के बाद रावण को पता चला कि सीता उसकी पुत्री है। उसी के अनुसार हनुमान सीता-राम के पुत्र थे।

राम को चतुर्दिक फैलाने, रामकथा को लोकप्रिय बनाने का श्रेय केवल वाल्मीकि या. रघुवंश को ही नहीं है। राम को विष्णु के अवतार की मान्यता वाल्मीकि ने नहीं दी है। वे उन्हें "मर्यादापुरुषोत्तम" सिद्ध करते हैं- आदर्श चरित्र वाला। पर रघुवंश से अनुमान होता है कि ईसा की आरम्भिक शताब्दि में उन्हें विष्णु के अवतार की मान्यता मिल चुकी थी। आठवीं शताब्दि के भवभूति के दो नाटकों में राम के चरित्र को देव तुल्य

रूप में दर्शित किया गया है। सन १०१४ के जैन विद्वान अमितगति ने राम को सर्वज्ञ, सर्वव्यापक तथा लोक रक्षक माना है। भगवान के रूप में राम की आराधना ११वीं सदी में रामसम्प्रदाय की स्थापना से सिद्ध है। तेरहवीं सदी में मध्वाचार्य ने अपने शिष्य नरहरि को जगन्नाथ पुरी से श्रीराम की आदि मूर्ति को लाने के लिये भेजा था- सन १२६४ में। इसी सदी के उत्तरार्ध में हेमाद्रि की रचना में राम का जन्मोत्सव चैत्र शुक्ल नवमी लिखा है जो आज तक मान्य है। इसी के आस पास की अवधि की सात्वक संहिता में राम को भगवान के समान पूजन का उल्लेख है। प्राचीन वायुपुराण में राम के दैविक गुणों का वर्णन है। पन्द्रहवीं सदी का अध्यात्म रामायण अद्वैत रूप से राम तथा जीवात्मा का सम्बन्ध मानता है। इसके १५वें प्रकरण में राम गीता भी है। महाराष्ट्र के सन्त एकनाथ ने १६वीं सदी में भावार्थ रामायण की रचना की थी। मद्रास से प्रकाशित राम गीता में १०८ उपनिषदों की सामग्री का निचोड़ भी है और मुख्य पात्र राम तथा हनुमान हैं। वक्ता राम हें। इसके पहले ही रामानुजाचार्य की परम्परा में उसी सम्प्रदाय के स्वामी रामानन्द ने जो कबीर के गुरु थे, "रामावत" सम्प्रदाय बना डाला था। राम का महत्तत उपनिषदों में भी था। तापनीयोपनिषद में "रां रामाय नमः" वन्दना है। ११वीं सदी का तमिल भाषा का कम्वम रामायण है जो वाल्मीकि के आधार पर है। तमिल प्रदेश में रामभक्त सम्प्रदाय उन्हीं दिनों में स्थापित हुआ था। वह सम्प्रदाय तो अब नहीं है पर राम भक्तों की बहुत अधिक संख्या है। महाराष्ट्र सन्त श्रीधर ने (सन १६७९-१७२८) "राम विजय" मराठी ग्रंथ रचा था। इसके बहुत पहले, ११वीं सदी में बौद्ध तांत्रिक रामाई पंडित ने "शून्यवाद" ग्रंथ की रचना की थी। गोस्वामी तुलसीदास जी की रामायण तो लगभग सन १५८४ में पूरी हुई थी। इसके बहुत पहले राम को उजागर किया वाल्मीकि ने, उनसे लेकर कालिदास रघुवंश के द्वारा राम को मैदान में ले आये और फिर तो वह इतने लोकप्रिय हो गये कि तुलसी के बहुत पहले बड़े बड़े हिन्दू मुसलिम सन्त राम को ही भगवान का सम्बोधन मानने लगे, चाहे गुरु नानक हों, कबीर हों या १४६३ के सन्त रज्जब हों। ऐसे राम यदि लोकप्रिय होकर सूदूर दक्षिण पूर्वी एशिया में विराजमान हो गये, जनमानस पर राज्य करने लगे तो आश्चर्य नहीं हो सकता।

काकावीन के विद्वान अनुवादक ने बड़ी संयत तथा शुद्ध भाषा में जो अनुवाद प्रस्तुत किया है, वह न केवल पठनीय तथा मननीय है, राम के चरित्र को एक नया रूप देता है बल्कि अनुवादक डा. पालीवाल की हिन्देशिया की भाषा पर पांडित्य प्राप्त करने का भी बोध कराता है।

ऊपर हमने विस्तार के साथ जो टिप्पणी दी है- जिसमें विभिन्न मतों के कारण कहीं पुनरूक्ति, कहीं असंगत उद्धरण आ जाना अनिवार्य था, वह इसलिये धृष्टता की गयी है कि डा. पालीवाल की विद्वत्तापूर्ण भूमिका का आधार तथा विषय प्रवेश अधिक स्पष्ट तथा बोधगम्य हो जायगा। हमें विश्वास है कि हमारे पाठक इस रचना से मुग्ध हो जायेंगे।

परिपूर्णानन्द वर्म्मा

भूमिका

इंडोनेशिया की काकावीन रामायण के हिन्दी अनुवाद के प्रकाशन का स्वागत करते हुए मैं हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव कर रहा हूं। इंडोनेशिया की पूल रामायण, 'कावी' भाषा में लिखी गई थी, जो कि इण्डोनेशिया के जावा क्षेत्र की प्राचीन भाषा थी। यह इण्डोनेशिया की प्राचीन शास्त्रीय भाषा है, जिस पर संस्कृत का सघन प्रभाव था। मैं इस पुस्तक के लेखक (अनुवादक) द्वारा इसके प्रकाशन के सद्विचार की सराहना करता हूं, क्योंकि यह ग्रन्थ ईसा की प्रारम्भिक शताब्दियों से पल्लवित, भारत और इंडोनेशिया के अंतरंग सम्बन्धों की एक झलक भारतीय समाज के सम्मुख प्रस्तुत करने में सफल होगा। भारत और इंडोनेशिया के गत्यात्मक और रचनात्मक पारस्परिक मैत्री सम्बन्धों के कारण इंडोनेशिया में अनेक सांस्कृतिक केन्द्र विकसित हो सके।

इंडोनेशिया में विशेष कर जावा और बाली में महाकाव्य रामायण और महाभारत अत्यधिक लोकप्रिय है। ये वहां के सामान्य जन की सांस्कृतिक अभिव्यक्ति के अंग बन चुके हैं इनके प्रभावों की अभिव्यक्ति कला की विभित्र विधाओं जैसे नृत्य नाटक, चित्रकला, मूर्तिकला, साहित्य और विशेष रूप से कठपुतली छाया – नाटिका के माध्यम से हुई। जिनके द्वारा लोकजीवन के सौन्दर्यबोध तथा नैतिक एवं आदर्श मूल्य समाहित होते हैं। एक महाकाव्य के रूप में रामायण की कथा समाज में लोकप्रिय है और जनरंजन करती है और इसी कारण वह समाज द्वारा संरक्षित है और सामाजिक जीवन में समाहित हो गई है। आधुनिक इण्डोनेशिया समाज के निर्माण की चुनौतियों के संदर्भ में इस कथा के प्रचार और महत्व की कालान्तर में वृद्धि हुई है। यह पारस्परिक सम्मान, गत्यात्मक और रचनात्मक सांस्कृतिक सम्बन्ध, अनेक ऐतिहासिक अवशेषों में, जैसे मन्दिरों–बोरोबुदुर एवं प्रबंनन के मन्दिर विशेष रूप से बोरोबदूर के मंदिर जो कि विश्व के एक चमत्कार के रूप में स्वीकार किये जाते हैं, परिलक्षित होती है।

ईसा की नवीं शताब्दी में निर्मित प्रबंनन मंदिर इस युग की अत्यंत उत्कृष्ट कलाकृति है। उसकी दीवारों पर–प्रारम्भ से लेकर अंत तक संपूर्ण रामायण की कथा की, जो वास्तव में रामायण का इंडोनेशियाई संस्करण है, अंकित है।

इस रचनात्मक, सांस्कृतिक मैत्री संबंध का अनुसरण कराते हुए मैं इंडोनेशियाई रामायण के हिंदी रूपांतरण के प्रकाशन का स्वागत करता हू और अतीव प्रसत्रता व्यक्त करता हू। मैं प्रो. डॉ. सी. डी. पालीवाल को बधाई देता हू कि उनके सतत् प्रयासों से 'कावी' भाषा की रामायण काकावीन का हिंदी रूपांतरण का कार्य संभव हुआ है।

मैं आशा करता हू कि यह प्रकाशन भारत और इंडोनेशिया के मध्य विद्यमान मधुर संबंधों को भविष्य में और भी समृद्ध करने की दिशा में यथाशक्ति योगदान कर सकेगा।

प्रो. डॉ. इडा बागूस मंत्र
इंडोनेशिया गणतंत्र के राजदूत
नई दिल्ली।

FOREWORD

I am delighted to welcome the publication of the Ramayana Kakawin of Indonesia, which is transliterated into Hindi language. The original Indonesian Ramayana is written in Kawi language or Old Javanese, i.e. an Indonesian classical Language developing much upon Sanskrt influences.

I highly appreciate the author s idea of publishing this book which also deserves a praise due to his success in presenting to the Indian society a classical piece of work as a result of a very close relationship between India and Indonesia in ancient time at the beginning of Christian era. Such dynamic and creative relationship which was mutually enriching each other has been able to develop numerous cultural centres in various places in Indonesia through its history.

The great epics of Ramayana and Mahabharata are very popular in Indonesia especially in Java and Bali, and have become an integral part of cultural expression of the Indonesian people. This deep perception is demonstrated in its reference which takes its form in various artistic fields such as : dances, drama, painting, sculpture, literature and particularly in shadow puppetry which delivers to the people its various life aspects of aesthetics as well as ethics including the high moral and ideal teachings. As an epic, the Ramayana story is beloved and enjoyed by the society at large and with its functions in the living society makes it well preserved and thoroughly absorbed in the life of the society, and it develops even more and more owing to the existence of various challenges in the frame efforts of building a modern Indonesian society.

The dynamic and creative cultural relationship, which is mutually respecting and enriching one another is reflected in numerous historical remains such as temples, among which the most prominent are the Borodubur and Prambanan temples, where Borodudur has been acknowledged as one of the wonders of the world.

At the Prambanan temple which was built in the 9th century A.D., the entire Ramayana story, from the beginning to the end, is elegantly carved around its walls as a master piece of the era, which is actually the Indonesian–version of Ramayana itself.

Following. the course of this very creative cultural relationship, I am extremely happy to welcome the publication of this book on Indonesian Ramayana in Hindi language. An ideal relationship was established in which the Ramayana epic flourished and developed in accordance with the genius of Indonesian people.

I congratulate Prof. Dr. C.D.Paliwal who with great perseverence has been able to transliterate the Ramayana Kakawin from Kawi language into Hindi.

I sincerely hope that this publication can offer Its utmost contribution in the efforts of further enhancing the existing good relationship between India and Indonesia.

Prof. Dr. Ida Bagus Mantra
Ambassador of the Republic of Indonesia
New Delhi (India)

आभार

ईसा की ९वीं शताब्दी से १३वीं शताब्दी तक जावा द्वीप (यवद्वीप) की प्राचीन कवि भाषा (कावी भाषा) में काव्य एवं महाकाव्य साहित्य (काकावीन साहित्य) की सर्जना की गई थी, प्राचीन जावा भाषा (कावी भाषा) के साहित्य का प्रेरणास्रोत प्राचीन भारतीय साहित्य-संस्कृत साहित्य ही है। इस साहित्यिक सर्जना के प्रारम्भिक युग में संस्कृत महाकाव्यों के अनुवाद प्राचीन जावा भाषा में प्रस्तुत किये गये, तत्पश्चात स्वतंत्र रूप से भी महाकाव्यों की सर्जना की गई। इन काव्यों एवं महाकाव्यों को प्राचीन जावा भाषा में काव्य (काकावीन) की संज्ञा दी गई है।

इन महाकाव्यों की श्रृंखला में रामायण महाकाव्य का सदैव ही सर्वोपरि स्थान रहा है तथा अन्य महाकाव्यों की अपेक्षा यह ग्रन्थ द्वीपान्तर के जन जीवन में सबसे अधिक लोकप्रिय हुआ है जो जन रुचि का परिचायक होने के साथ ही इस काव्य की गरिमा का भी द्योतक है। जावाद्वीप के हिन्दू जावा साहित्य के युग के सम्पूर्ण साहित्य में रामायण महाकाव्य कविभाषा (कावी भाषा) के साहित्यिक चरमोत्कर्ष का प्रतीक है। इस महाकाव्य का कलेवर भी सबसे अधिक बड़ा है। द्वीपान्तर (इंडोनेशिया) के इस महाकाव्य रामायण पर देश एवं विदेश के विशेषतया डच विद्वानों ने विशेष अन्वेषण कार्य किया है। इसका सर्वप्रथम संकलन वहाँ की कवि भाषा में एक मूर्द्धन्य डच विद्वान प्रो. डॉ. केरन ने प्रकाशित किया था। उन्होंने इसके विषय में एक विस्तृत भूमिका भी लिखी थी तथा रामायण के कुछ अध्यायों का कविभाषा से डच भाषा में अनुवाद भी प्रस्तुत किया था, शेष अनुवाद कार्य उनकी मृत्यु के पश्चात डॉ यॉयनबॉल ने सन् १९३५ में पूरा किया। इस प्रकार उन्होंने रामायण काकावीन ग्रन्थ रत्न की गरिमा को पुनः प्रतिष्ठित किया।

राम कथा के अनेक रुपान्तरों एवं भाषान्तरों में उसका एक सुन्दर रूप रामायण काकावीन भी है। बालीद्वीप में यह सर्वमान्य है कि इस काव्य के रचयिता योगीश्वर नामक एक महाकवि थे। परन्तु इसके मूलाधार दो भारतीय महाकाव्य-वाल्मीकि रामायण एवं भट्टिकाव्य रावणवध ही हैं। यद्यपि महाकवि कालिदास के रघुवंश एवं मेघदूत का भी प्रभाव यत्र तत्र इसमें परिलक्षित होता है, फिर भी, यह एक मौलिक रचना है। भारत में भी राम कथा सर्वाधिक लोकप्रिय रही है। यह कथा भारतीयों के दक्षिण पूर्व एशिया के क्षेत्र से सम्पर्क में आते ही वहाँ भी प्रतिष्ठित हुई।

द्वीपान्तर (इंडोनेशिया) के प्राचीन साहित्य में भी इस महाकाव्य का सर्वोच्च स्थान है। यही कारण है कि जावाद्वीप के हिन्दू राजाओं के युग में ९वीं शताब्दी में प्राम्बानान क्षेत्र के शिव, ब्रह्मा एवं विष्णु मन्दिरों पर यह कथा उत्कीर्ण की गई है। इसके पश्चात पूर्वी जावा में १३वीं शताब्दी में पानातारान मन्दिर पर भी इसको स्थानीय वायांग शैली में उत्कीर्ण किया गया है, जो इस कथा के जनमानस में व्यापक प्रभाव का स्पष्ट प्रमाण है. क्योंकि मूल भारत में रामकथा को इतने व्यापक रूप से किसी भी देवगृह की भित्तियों पर उत्कीर्ण नहीं किया

गया परन्तु यह कार्य भारत की सीमाओं से बाहर द्वीपान्तर के क्षेत्र में जावाद्वीप में पूर्ण रूपेण सम्पन्न हुआ।

इंडोनेशिया विश्वविद्यालय जाकार्त्ता में मेरे गुरुवर स्व. प्रो. डॉ. सूचीप्तो वीर्यो सूपारतो ने सर्वप्रथम मुझे रामायण काकावीन की महिमा से अवगत किया था। उन्हीं की कक्षाओं में मैंने इस ग्रन्थ के काव्य सौष्ठव एवं भाषा सौंदर्य पर पूरी दृष्टि डाली थी और रसास्वाद किया था, मेरे मन में भी इस महाकाव्य से भारतीयों को परिचित कराने की गहरी अभिलाषा रही है।

प्राचीन जावा भाषा से द्वीपान्तर की आधुनिक भाषा इंडोनेशिया में इस ग्रन्थ का अनुवाद सर्वप्रथम एक महान इंडोनेशियाई विद्वान स्व. प्रो. डॉ. पूर्बोचारोको ने किया था। वे कवि भाषा के निष्णात पंडित थे। उन्होंने अपने अनुवाद की पाण्डुलिपि की एक प्रति स्व. आचार्य डॉ रघुबीर जी को भेंट की थी। मुझे वही पाण्डुलिपि प्रो. डॉ. लोकेशचन्द्र जी से प्राप्त हुई। हिन्दी में इसके अनुवाद की सतत् प्रेरणा भी मुझे उन्हीं से मिली है अतएव प्रो. डॉ. लोकशेचन्द्र जी के प्रति अपना हार्दिक आभार प्रकट करना मैं अपना कर्त्तव्य समझता हूं।

जवाहरलाल नेहरू वि.वि. क प्रसिद्ध विद्वान प्रो. नामवर सिंह जी ने रामायण काकावीन के अनुवाद की पाण्डुलिपि देखी एवं मुझे इसके प्रकाशन के लिये प्रोत्साहित किया। नेहरु वि.वि. में एशिया अफ्रीका भाषा कन्द्रे के अध्यक्ष प्रो. अज़हर साहब की प्रेरणा तो मेरे सभी कार्यों के साथ जुड़ी रही है, उन्होंने स्वयं ईरान की रामकथा पर अपना शोध प्रबन्ध लिखा है अतएव ऐसे विद्वान मित्रों के प्रति मैं अनुग्रहीत हूं।

इंदिरा गांधी राष्ट्रीय कला केन्द्र संस्थान के प्रो. सच्चिदानंद सहाय जी की सहायता एवं प्रेरणा से ही यह ग्रन्थ उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान को प्रकाशनार्थ प्रस्तुत किया गया था और हिन्दी संस्थान लखनऊ ने इसे स्वीकार भी किया अतएव डॉ. सहाय जी के प्रति मैं कृतज्ञ हूं।

उत्तर प्रदेश हिन्दी संस्थान के निदेशक जी का मैं विशेष आभारी हू उन्होंने केवल इस ग्रन्थ के सुरुचिपूर्ण प्रकाशन की ही पूर्ण व्यवस्था नहीं की, वरन् अपनी कलात्मक एवं साहित्यिक अभिरुचियों से इसे एक सुन्दर स्वरूप भी प्रदान किया। उनके मार्ग दर्शन एवं पूर्ण सहयोग के बिना इस ग्रन्थ का प्रकाशन एक कठिन कार्य था। मैं संस्थान के कार्यकारी उपाध्यक्ष श्री परिपूर्णानन्द वर्म्मा के प्रति भी आभार व्यक्त करना चाहूंगा, जिन्होंने न केवल इसके प्रकाशन हेतु स्वीकृति प्रदान की, अपितु दक्षिण–पूर्व एशिया में रामायण संस्कृति के विस्तार पर एक विशद भूमिका भी लिखी है।

आशा है इस ग्रन्थ का प्रकाशन हिन्दी जगत में राम कथा का एक नवीन सांस्कृतिक सूत्र द्वीपान्तर एवं भारत को प्रदान कर सकेगा। वन्दना के इन स्वरों में मेरा भी एक स्वर मुखर होगा और यही मेरी अर्चना का एक पुष्प भी।

चन्द्रदत्त पालीवाल

अध्याय – 1

1

प्राचीन युग में एक महान प्रतापी राजा थे। वे सम्पूर्ण विश्व में विख्यात थे। वे एक महान विजेता थे तथा सभी प्रकार के ज्ञान विज्ञान में पारंगत थे। उनका नाम महाराज दशरथ था। उनके शत्रु उनके समक्ष नतमस्तक रहते थे। कोई भी दूसरा राजा उनके समकक्ष नहीं था।

2

राजा दशरथ त्रिविक्रम-पिता थे। पृथ्वी पर जब देवता विष्णु ने राम का अवतार लिया, वे उनके पिता बने। विष्णु के भूतल पर अवतार से सम्पूर्ण जगत में आनंद और उल्लास छा गया। यह उचित ही था, क्योंकि दैव विष्णु ने अब मानव रुप धारण कर लिया था।

3

राजा दशरथ बड़े ही चरित्रवान थे। वे सभी शास्त्रों के पूर्ण ज्ञाता थे। देवों के प्रति उनके मन में अपार भक्ति-भाव था। वे सदैव ही अपने पूर्वजों की उपासना एवं आराधना में लीन रहते थे।

4

अपनी प्रजा से उनका अपार प्रेम था। अनेक विषयों में उनकी रुचि थी। अपने विकट शत्रु के प्रति भी उनके हृदय में द्वेष नहीं रहता था। वे एक पराक्रमी योद्धा एवं कुशल राजनीतिज्ञ थे।

5

जिस प्रकार वर्षा ऋतु के मेघ सभी पर वर्षा करते हैं, उसी प्रकार वे भी सबको प्रतिदिन दान देते रहते थे। उनके यहां दीन-दुखी, पीड़ित जन, अन्धे एवं अपंग मनुष्य पूरा प्रश्रय पाते थे। ऋषि-मुनियों तथा गुरुजनों के प्रति उनके हृदय में अपार श्रद्धा की भावना थी।

6

राजा दशरथ अपने वचनों का सदैव ही पालन करते थे। स्त्रियों से भी उन्होंने कभी अनुचित वचन नहीं कहे। अपरिचित तथा अन्य सभी लोंगों के प्रति भी उनकी वाणी अत्यन्त मित्रतापूर्ण एवं मधुर होती थी। वे सभी जनों से अपने संबंधों को दृढ़ बनाये रहते थे।

7

अपने महान पुण्य प्रताप के कारण ही वे इस संसार के संरक्षक बने। देवराज इन्द्र से उनकी गहरी मित्रता थी। राजा इन्द्र भी उनके प्रति बड़ा आदर-भाव रखते थे। राजा दशरथ शैव धर्म के अनुयायी थे। वे भगवान शंकर के भक्त थे। वे शिव के महत्व को प्रतिष्ठित करते हुए तथा शैव-मत की वृद्धि में निरंतर रत रहे।

8

सभी वीर धनुर्धर एक साथ ही उनके प्रति अपनी श्रद्धा एवं स्वामिभक्ति का परिचय देते थे। वे सभी उनका आधिपत्य भी स्वीकार करते थे तथा उनका सम्मान करते थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वे सभी वीर उनके गुण एवं गौरव की गाथा प्रस्तुत करने में अपना ही गौरव मानते हों। इस प्रकार दिक् दिगन्त में उनका यश व्याप्त था।

9

उनके विचार शशि-किरणों की भांति उज्ज्वल एवं पवित्र थे। दूसरे लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति करना वे अपना कर्तव्य समझते थे। इस प्रकार राजा दशरथ विश्व-रंजन की संज्ञा से विभूषित थे। ऐसा प्रतीत होता था मानो कि पृथ्वी पर वे देवराज इन्द्र थे।

10

राजा दशरथ के तेज प्रताप एंव शक्ति की किरणें निरन्तर प्रज्वलित होकर पृथ्वी पर अनुपम प्रकाश बिखेर रहीं थीं। उन्होंने इस जगत को आनंद एवं उल्लास से आलोकित कर दिया था। जिस प्रकार पूजा में अग्नि से किरणें बिखरती हैं, उसी प्रकार अपनी शक्ति एवं दीप्ति से उन्होंने सम्पूर्ण भूमंडल पर अपनी आभा की किरणें बिखेर दी थीं।

11

उनका राजमहल पृथ्वी पर इन्द्रलोक की भाँति शोभित था। शीलवान एवं स्वतंत्र व्यक्तित्व के महापुरुष उनके चारों ओर उपस्थित रहते थे। उनका राजमहल संसार की सबसे सौभाग्यशाली आनंद नगरी अयोध्या में स्थित था।

12

अयोध्यापुरी अमरावती से भी अधिक सुन्दर नगरी थी। अमरलोक की गरिमा उसके समक्ष गौण थी। प्रत्येक क्षण वहाँ आनंद एवं उल्लास का वातावरण रहता था। वहाँ सभी ऋतुएं आनंददायक होती थीं। चाहे वर्षा ऋतु हो अथवा ग्रीष्म ऋतु हो, अयोध्या नगरी में पूर्ण शान्ति एवं सुख था।

13

धन, वैभव एवं अनुपम ऐश्वर्य की प्रतीक सभी अमूल्य वस्तुएँ –स्वर्ण, रजत तथा मणि–माणिक्य वहाँ पर प्रचुर रुप में उपलब्ध थीं। श्वेत मणि–मुक्ता आदि मणियाँ स्वच्छ स्वेत दन्त पंक्ति की भाँति सुशोभित हो रही थीं। इन्हें देख कर लगता था मानो वे देवलोक के ऐश्वर्य का उपहास कर रही हों।

14

वहाँ पर स्वर्ण एवं माणिक्य से निर्मित एक विशाल राजभवन था, जो सुन्दर उद्यानों से चारों ओर से घिरा हुआ था। सुन्दरियां वहां सदैव ही आनंद–विहार किया करती थीं। ऐसा प्रतीत होता था मानो स्वर्ग की अप्सराएँ एवं देवांगनाएँ पृथ्वी पर विहार कर रही हों।

15

वह राजभवन स्फटिक एवं अन्य मणियों से परिपूर्ण था। सम्पूर्ण राजमहल सदैव ही मणियों की प्रकाश–किरणों से जगमगाता रहता था। सम्पूर्ण वातावरण में ऐसा आलोक फैला रहता था मानो श्वेत किरणें बिखेरती हुई देव नदी गंगा हिमालय पर्वत से नीचे उतर रही हो। उसकी आभा श्वेत कान्ति पूर्ण एवं सुन्दर थी।

16

महाराज दशरथ उल्लासपूर्ण एवं आनंदमय जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे विभिन्न प्रकार के रसमय व्यंजनों का प्रयोग करते थे। उनके राज्य में भय को कोई स्थान नहीं था, सभी निर्भय थे। वहाँ ऐसा कोई भी नहीं था, जो उन लोगों को भयभीत कर सकता था। उनके सभी पड़ोसी राजागण उनसे निकट का और मैत्रीपूर्ण संबंध रखते थे तथा उनका आधिपत्य स्वीकार करते थे।

17

कैकेयी, सुमित्रा तथा कौशल्या राजा दशरथ की तीन राजपत्नियां थीं। दुर्गा, गंगा एवं गौरी को राजा ने पूर्ण रुपेण सन्तुष्ट कर रखा था। उनका चरित्र महान एवं आदर्श था।

18

अपनी राजपत्नियों के बीच राजा दशरथ आनंन्दपूर्ण सुखमय जीवन बिता रहे थे। उनकी सभी राजपत्नियाँ उन्हें प्रसन्न रखतीं और सदैव ही उनकी सेवा में रत रहती थीं। इन राजपत्नियों का पारस्परिक संबंध अत्यन्त प्रेमभावपूर्ण था। किसी में भी किसी के प्रति किसी प्रकार की घृणा अथवा द्वेष का भाव नहीं था। इस प्रकार ये तीनों राजपत्नियां शान्तिपूर्ण सुखी जीवन का विधिवत रस ले रहीं थीं।

19

महान विद्वान पंडितगण उनके यहाँ ऋग्वेद, सामवेद एवं यजुर्वेद का निरन्तर पाठ करते रहते थे। पंडितों की भाँति ही राजा दशरथ को भी वेदों में अपूर्व रुचि थी। इस प्रकार राजपत्नियों सहित राजा दशरथ के राज्य में पूर्ण सुख, समृद्धि एवं शान्ति का सुन्दर वातावरण था।

20

बहुत समय तक राजा दशरथ अपनी राजपत्नियों के साथ आनंदपूर्वक जीवन बिताते रहे। अपनी पत्नियों से उन्हें अपार प्रेम था। राजपत्नियाँ भी राजा की ही भाँति उनसे बहुत प्रेम करती थीं। प्रेम-केलि का उन्होंने बहुत समय तक अपूर्व आनंद लिया। वे एक दूसरे का आलिंगन एवं चुम्बन प्रेमोन्मत्त होकर करते रहते थे। इस प्रकार भाँति-भाँति से वे प्रेम-क्रीड़ा में डूबकर आनंद ले रहे थे।

21

तत्पश्चात राजा दशरथ के मन में पुत्र-प्राप्ति की उत्कट अभिलाषा उत्पन्न हुई। वास्तव में पुत्र-प्राप्ति की इच्छा की पूर्ति के लिए ही वे आनंद, प्रेम-केलि तथा रस-रंग का आश्रय ले रहे थे परन्तु बहुत समय तक उनको कोई सन्तान न हो सकी। इस इच्छा की पूर्ति के लिए ही उन्होंने यज्ञादि धार्मिक कृत्य भी प्रारम्भ किये।

22

अश्रृंग (श्रृंगी ऋषि) नामक एक परम पूज्य महर्षि थे। वे सभी ज्ञान विज्ञानों में पूर्णरुपेण पारंगत थे। सभी प्रकार के यज्ञादि धार्मिक कृत्यों एवं अनुष्ठानों की विधि के विषय में उनसे अधिक ज्ञानी कोई भी नहीं था। वे हीं पुत्रकाम-शुभ-यज्ञ के प्रतिष्ठाता थे। इस यज्ञ से पुत्र प्राप्ति की कामना पूर्ण हो सकती थी।

23

राजा दशरथ ने उन्हीं महर्षि को अयोध्या में आने के लिए निमंत्रित किया, जिससे वे पुत्रकाम यज्ञ में राज पुरोहित के रुप में विधिवत् यज्ञादि कार्यों को सम्पन्न करा सकें। राजा ने जब विनम्रतापूर्वक ऋषि अश्रृंग को अयोध्या आने का आमंत्रण दिया तो उन्हें किसी प्रकार की आपत्ति नहीं हुई। ऋषि से यह भी प्रार्थना की गई थी कि वे अयोध्या आकर पुत्र-काम-यज्ञ कराने की कृपा करें।

24

राजाज्ञा से यज्ञादि धार्मिक कृत्यों के लिए सभी सामग्री विधिवत् प्रस्तुत की गई। चन्दन की सूखी लकड़ी, पुष्प राशियाँ, सुगन्धित इत्र, सुवासित वस्तुएँ, विभिन्न प्रकार के फल, दधि, जल, तरल मक्खन, काले तिलादि, मधु बड़ा घट, पूर्वादल, कुश तथा भाँति-भाँति के सुन्दर चित्र आदि सामग्री को विधिवत् सजाया गया।

25

राजा दशरथ ने देवों को प्रसन्न करने के लिए विधिवत् पूजा-अर्चना आरम्भ की। उन्होंने दुष्ट मृतात्माओं को भी सन्तुष्ट करने के लिए उनकी पूजा की। राक्षसों तथा पिशाचों को मंत्रों से प्रसन्न करके सभी भूत-प्रेतों सहित उनको अपने वश में कर लिया गया। उनका विधिवत निवारण भी किया गया। धार्मिक कृत्यों के लिए देवों की अर्चना की गयी और उनका आवाहन किया गया।

26

देवों के आवाहन के लिए सभी संभव धार्मिक कृत्य किये गये, जिससे प्रसन्न होकर वे वरदान देने के लिए उपस्थित हो सकें। पूजा तथा अर्चना की पूरी व्यवस्था की गई। देवों की आराधना में सदैव ही भगवान शंकर का ध्यान सर्वप्रथम किया जाता था। जो पंडितगण देवों का आवाहन कर रहे थे, वे नित्य जीवन में भी पूजा में ही रत रहा करते थे। अग्नि में निरंतर धूप एवं नैवेद्य आदि सामग्री डालने से उनके मुख-मंडल पर आभा झलक रही थी। इनके द्वारा निरन्तर यज्ञ होता रहता था।

27

देवी देवताओं की प्रतिष्ठा के पश्चात उनके ऊपर तैल तथा अन्य ओषधियों के तत्व छिड़के जाते थे। साथ हीं साथ काले-काले बीज आदि भी प्रस्तुत किये गये। मधु, मिष्ठान्न तथा चन्दन की लकड़ी यज्ञ के लिए लायी गयी।

28

पवित्र यज्ञ–वेदिका बनाकर उसकी पूजा की गयी। यज्ञ के लिए सभी प्रकार की सामग्री तैयार की गयी जिसमें मछली, मांस, दधि आदि प्रधान वस्तुएं थी। देवों को भात भी समर्पित किया गया, उसमें भाँति–भाँति के अन्य स्वादिष्ट व्यजन· मिलाये गये।

29

जब अग्नि अपने पूर्ण रुप में प्रज्वलित हो गयी, तो यज्ञ के लिए सम्पूर्ण हव्य सामग्री प्रस्तुत की गयी। ओषधियां एवं फल आदि सामग्री अग्नि को समर्पित की गयी। उसके साथ ही साथ कन्दमूल, भाँति–भाँति के पुष्प, सुगंधित पदार्थ, धूप आदि भी समर्पित किये गये।

30

देवों की पूजा का कार्य विधिवत संपन्न हो जाने के पश्चात् महर्षि को भोजन प्रदान किया गया, जिसमें पूर्ण रुप से केवल चावल का ही प्रयोग किया गया था। अन्य पंडितगण जो वहां पर उपस्थित थे, वे भी पूजा में सम्मिलित थे। एक प्रकार से वे सभी यज्ञ कर्म–विधि के साक्षी भी थे। उनको सम्मानित कर उन्हें विधिवत् दक्षिणा प्रदान की गयी।

31

महर्षि ने स्वयं ही पूजा का शेष कार्य पूरा किया। वहीं पर भली–भाँति एक सुन्दर भोज का आयोजन किया गया, जो स्वादिष्ट एवं सुगन्धियुक्त व्यंजनों से परिपूर्ण था। राजा दशरथ की तीनों राजपत्नियों ने भी उस स्वादिष्ट भोजन को प्राप्त किया।

32

तत्पश्चात गर्भवती होकर समयानुसार राजा दशरथ की तीनों राजपत्नियों ने पुत्र–रत्नों को जन्म दिया। उनमें राम उनके सबसे बड़े बालक थे। उनको देवी कौशल्या ने जन्म दिया था।

33

राजपत्नी कैकेयी ने भरत को जन्म दिया। वे महान शक्ति–सम्पन्न तथा चरित्रवान थे। देवी सुमित्रा के

लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न नामक पुत्र रत्न उत्पन्न हुए।

34

इन राजपुत्रों के जन्म के अवसर पर पूज्य गुरुजनों को एकत्रित किया गया। उनके पूरे सम्मान की व्यवस्था की गयी। राजा ने उन सभी सम्मानित व्यक्तियों को भोजन कराया और दान–दक्षिणा प्रदान की।

35

जब राजा दशरथ के राजपुत्र वयस्क हो गये, उनको अस्त्र–शस्त्र की पूर्ण शिक्षा दी गई। भगवान वशिष्ठ ने यह उत्तरदायित्व स्वयं ही संभाला। वे स्वयं धनुर्विद्या में पारंगत थे। उन्होंने राजपुत्रों को विविध शस्त्रास्त्र सिखाये।

36

ऋषि वशिष्ठ ने यद्यपि अल्पकाल तक ही राम को शस्त्र विद्या का अभ्यास कराया परन्तु राम ने शीघ्र ही उसमें निपुणता प्राप्त कर ली। राम के साथ ही उनके अन्य छोटे भाइयों ने भी विधिवत शिक्षा पाई। इस प्रकार राजा दशरथ के चारों राजकुमार शस्त्र–विद्या में पूर्णतः निपुण हो गये।

37

महर्षि वशिष्ठ ने राजकुमारों की सम्पूर्ण शिक्षा दीक्षा अल्पकाल में ही पूरी कर दी। निपुण राजपुत्रों को और अधिक सिखाने के लिए कुछ शेष नहीं रह गया। सभी राजकुमार अस्त्र शस्त्र विद्या में कुशल हो गये। जन साधारण में राजपुत्रों के शस्त्र कौशल की चर्चा होने लगी। राजा दशरथ के चारो राजकुमार यद्यपि अल्पवय हैं परन्तु फिर भी वे बड़े ही शक्तिशाली धनुर्धर एवं चरित्रवान योद्धा हैं, यह जानकर सभी प्रसन्न थे।

38

गाधि कुल में एक ऋषि थे। वे एक महान योगी भी थे तथा सदैव ही तपश्चर्या में मग्न रहते थे। यद्यपि वे स्वयं एक राजा थे परन्तु ऋषि जीवन उन्हें अधिक रुचिकर लगा। उन्होंने इसे ही अपना लिया। उनका नाम ऋषि विश्वामित्र था। उन्होंने शक्ति एवं शौर्य के संबंध में राम की प्रशंसा सुनी।

39

ऋषि विश्वामित्र को तपस्या का स्थल एवं आश्रम क्रूर राक्षसों ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया था। इन अधम नरपिशाचों ने अन्य ऋषियों के आश्रमों को भी उजाड़ दिया था। ऋषि विश्वामित्र के मन में यह विचार आया कि ऋषियों के आश्रमों की सुरक्षा का कार्यभार श्रीराम को ही सौंप देना उचित होगा।

40

महर्षि विश्वामित्र ने राजा दशरथ से भेंट की। राजा दशरथ ने ऋषि को पूर्ण सम्मान दिया। ऋषि विश्वामित्र का आदर करते हुए राजा दशरथ ने त्रषि का अभिनंदन किया तथा प्रार्थना करते हुए उनसे विनयपूर्वक कुछ निवेदन भी किया।

41

राजा दशरथ ने ऋषि विश्वामित्र से यह भी पूछा कि हे महर्षि ! आपको किस वस्तु की आवश्यकता हो सकती है ? क्योंकि आपके पास तो मंत्रों की महान शक्ति है। आप स्वयं अपनी किसी भी अभिलाषा की पूर्ति करने मे पूर्ण समर्थ हैं। मुझे यह भी पूरी तरह स्पष्ट है कि आप जीवन की यर्थाथताओं तथा अपने कर्तव्यों के प्रति सदैव ही जागरुक हैं। आप पूर्ण समर्थ हैं। वे सभी महान गुण भी आप में हैं जो एक महर्षि के लिए अपेक्षित हैं।

42

महर्षि विश्वामित्र ने उत्तर दिया, हे राजन ! आप का कथन सत्य है, परन्तु हम सब तपस्वी हैं तथा सदैव ही आध्यात्मिक चिंतन एवं जटिल दार्शनिक प्रश्नों को हल करने में लगे रहते हैं।

43

हे राजन ! शान्ति पूर्वक तप एवं साधना के लिए हमें आपकी सहायता की बहुत बड़ी आवश्यकता है। जब हम लोग यज्ञादि धार्मिक कृत्यों में संलग्न हो जाते हैं, तो अधम राक्षसगण हमारे यज्ञों को ध्वंस करने लगते है तथा तपश्चर्या में बाधाएं उत्पन्न करते हैं।

44

मेरा आपसे विनम्र अनुरोध है कि सभी तपस्यास्थलों तथा आश्रमों की सुरक्षा का कार्य भार श्रीराम को सौंप दिया जाय। वे हम सबकी सतत रक्षा करें। यदि राम इस कठिन उत्तत्दायित्व को अपने ऊपर ले

लें, तो राक्षसों के भय से हमें मुक्ति मिल सकती है क्योंकि राम ही इन उपद्रवी राक्षसों का वध करने में समर्थ हो सकते हैं।

45

जब महर्षि विश्वामित्र ने राजा दशरथ से यह आग्रह किया तो राजा दशरथ ने इसका कोई उत्तर नहीं दिया। वे केवल मौन और नतमस्तक हो गये। राम से उनको अपार प्रेम था। इसीलिए इस संबंध में उन्होंने मौन धारणा करना ही उचित समझा। महर्षि विश्वामित्र ने राजा दशरथ से फिर अनुरोध किया कि वे श्रीराम को भेजकर उन्हें ऋषियों की रक्षा का कार्य भार सौंपने की कृपा करें।

46

उन्होंने बलपूर्वक कहा कि हे राजन ! आप मेरे शब्दों पर अवश्य ही ध्यान दीजिए तथा उन पर पूरा विचार कर उनका पालन करने की कृपा कीजिए। यदि मेरे आग्रह में आप को कुछ बातें अनुचित लगें, तो उसके लिए मैं क्षमाप्रार्थी हूं क्योंकि किसी की सहायता प्राप्त करने वाले व्यक्ति को इस प्रकार की अभ्यर्थना करने के लिए विवश होना ही पड़ता है।

47

हे राजन ! आपका यह कर्तव्य है कि आप अवश्य ही तपस्वी जनों की रक्षा करके उनकी आवश्यक सहायता करें। आजकल सभी तपस्वी बहुत ही भयभीत हो रहे हैं इसलिए आप उनकी विपत्तियों को दूर कीजिए तथा उनकी सुरक्षा की पूरी व्यवस्था करने की कृपा कीजिए।

48

हम सब ऋषि-मुनियों का यह कर्तव्य है कि हम आपके उत्तरदायित्वों के प्रति पूरी तरह से आपको जागरूक और सचेत करते रहें। हम सबकी रक्षा का भार भी अब आप पर ही है। धनी तथा निर्धन सभी की सुरक्षा आपका कर्तव्य है। अतएव वास्तविक परिस्थितियों एवं अन्य गतिविधियों से आपको पूरी तरह अवगत कराना भी हम सबका कर्तव्य है।

49

ब्राह्मण वर्ग तथा क्षत्रियवर्ग के लोग पारस्परिक निकट संबंधों के कारण एक दूसरे से भलीभाँति जुड़े

हुए हैं क्योंकि उनका मूलाधार भी एक दूसरे के बहुत निकट है। अतएव ब्राम्हण जन कभी भी राजा के मार्ग में बाधक बनकर उसे हानि नहीं पहुंचा सकते। इसी प्रकार क्षत्रियगण भी पंडितों एवं विद्वानों को कभी भी क्षति पहुंचाने की कल्पना नहीं कर सकते।

50

श्रीराम के लिए ऋषियों की सुरक्षा का कार्य कठिन नहीं है क्योंकि वे युद्ध में पूर्ण रुपेण निपुण है। उनके पास शक्ति संपत्र अस्त्र शस्त्र भी है। कोई योद्धा शक्ति एवं शौर्य में उनके समक्ष टिक नहीं सकता।

51

हे राजन ! इसीलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि आप राम के विषय में तनिक भी चिन्तित न हो क्योंकि श्री राम की ही सदैव विजय होगी। राम के हाथों दानवों का संहार अवश्यंभावी है, राम की अलौकिक शक्तियां एवं उनकी महान गरिमा ही इसका कारण है।

52

जब महर्षि विश्वामित्र ने इस प्रकार आग्रहपूर्वक निवेदन किया तो राजा दशरथ कुछ क्षणों के लिए मौन होकर उनके शब्दों पर विचार करने लगे। बहुत सी बातें सोच-सोच कर उनके मन में कई प्रकार के भ्रम भी उत्पत्र होने लगे। वे ऋषि विश्वामित्र के कथन का कोई उचित उत्तर नहीं दे सके।

53

वास्तव में राजा दशरथ का राम के प्रति बहुत मोह था। वे सोच रहे थे कि यदि राम ऋषियों के आश्रमों की सुरक्षा के लिए राक्षसों से युद्ध करने जाते हैं, तो राम की मृत्यु भी संभावित हो सकती है, क्योंकि उनकी अवस्था अभी बहुत ही कम है और युद्ध की भीषण विभीषिका से वे पूरी तरह अभी तक परिचित भी नही हो पाये हैं।

54

यह सत्य है कि उन्होंने अस्त्र शस्त्र आदि विद्याओं का पूरा ज्ञान प्राप्त कर लिया है, परन्तु अब तक उन्होंने किसी भी युद्ध में ऐसे भीषण शत्रुओं से संघर्ष नहीं किया है। नीच राक्षस केवल छल कपट से ही युद्ध करते हैं तथा बड़े-वड़े छल-प्रपंच रचकर धोखा देते हैं।

55

राजा दशरथ ने सोचा कि यदि वे ऋषि विश्वामित्र का आग्रह स्वीकार नहीं करते हैं तथा उनके वचनों के प्रति उदासीन हो जाते हैं, तो निश्चय ही ऋषि विश्वामित्र क्रुद्ध हो जायेंगे। इस परिस्थिति में ऋषि को गहरी निराशा भी हो सकती है। उन्होंने सोचा, ऋषि को निराश करना अनुचित होगा। यदि उनके वचनों का पूरी तरह पालन न किया गया, तो वे इन परिस्थितियों में हम सबको शाप भी दे सकते हैं।

56

इस प्रकार असमंजस में पड़े हुए राजा दशरथ ने ऋषि विश्वामित्र से कहा कि हे महर्षि ! मुझे आपका आग्रह स्वीकार है। आप की सदैव ही मुझ पर कृपा दृष्टि रही है। यदि आप यही उचित समझते हैं तो राम को अपने साथ ले जा सकते हैं और उनकी सहायता ले सकते हैं।

57

यद्यपि राम अभी अल्पवय के हैं, युद्ध - कला में पूरे प्रवीण भी नहीं माने जा सकते क्योंकि युद्ध क्षेत्र में जाकर उन्होंने अभी तक कभी युद्ध भी नहीं किया है। तथापि यदि ऐसे बालक को आप युद्ध के योग्य मानते हैं और अपनी सहायता के योग्य समझते हैं, तो निश्चय ही आप अपनी सुरक्षा और सहायता के लिए राम को साथ ले जाने की कृपा करें। आपके आग्रह को कभी भी अस्वीकार नहीं किया जा सकता।

58

राजा दशरथ के शब्द सुन कर महर्षि विश्वामित्र अत्यन्त प्रसन्न हो उठे। वे राजा से आज्ञा लेकर उठ खड़े हुये। उसी उवसर पर शीघ्र ही राम भी ऋषि के पास आ गये। तत्पश्चात् वे भी ऋषि के साथ ही तपस्या-स्थल की ओर जाने के लिए तैयार हो गये।

59

राम के छोटे भाई लक्ष्मण प्रत्येक कठिन परिस्थिति में सदैव ही राम के साथ रहते के लिए उद्यत रहते थे। वे राम के आदर्शों से अत्यधिक जुड़े हुए थे। इसीलिए उन्होने भी राम के साथ तपस्यास्थल की ओर जाने तथा राम का अनुसरण करने का दृढ़ निश्चय कर लिया।

60

इस प्रकार लक्ष्मण ने जन साधारण के लिए एक अभूतपूर्व उदाहरण प्रस्तुत किया। सभी के लिए यह अनुकरणीय है। उनका कर्तव्यपालन एवं सेवाभाव मानव मात्र के लिए एक महान आदर्श है। लक्ष्मण ने मार्ग में भी राम की आज्ञा का सदैव ही पालन किया। राम का जो भी आदेश होता, लक्ष्मण तत्काल उसे शिरोधार्य करते थे।

61

वन में प्रस्थान के लिए उद्यत होने पर उन्होंने रम्य वन-प्रदेश के दृश्यों को देखने की भी कल्पना की। तपस्या-स्थल एक बहुत ही सुन्दर प्रदेश में था। राम लक्ष्मण ने माता-पिता से आज्ञा लेकर महर्षि विश्वामित्र का अनुसरण किया। उन्होंने अपने साथ धनुष-बाण एवं बहुत से अस्त्र-शस्त्र भी लिए, जो किसी भी भीषण शत्रु का पूर्ण संहार कर सकते थे। जब राम तथा लक्ष्मण के जाने समाचार नगर की वनिताओं को मिला तो वन प्रदेश की कठोर परिस्थिति का अनुमान कर वे द्रवीभूत हो गयीं।

62

जब राम और लक्ष्मण के वन प्रदेश में प्रस्थान का समय हुआ, तो अश्टसेन ने उनके प्रति मंगल कामना करते हुए उन्हें आशीर्वाद दिया। राजा दशरथ के राजमहल में गामलान वाद्ययंत्र बज उठे, जिनका स्वर यात्रा के शुभारम्भ पर मंगल कामना का शुभ संकेत कर रहा था। राम की दाहिनी भुजा भी फड़कने लगी। यह इस बात की सूचक थी कि शत्रु निश्चय की उनसे युद्ध क्षेत्र में पराजित होंगे और कोई भी शत्रु युद्ध से जीवित बचकर नहीं जा सकेगा।

अध्याय – 2

1

संयोग से उस समय मधुऋतु थी। जब वे ऋषियों के तपस्यास्थल पर गये तो मार्ग में जाते हुए उन्हें सुन्दर-सुन्दर दृश्य दिखाई दिये। कई बड़ी-बड़ी नदियाँ मार्ग में उन्हें पार करनी पड़ीं। मार्ग में कई तीर्थस्थान भी मिले। सुन्दर उद्यान तथा झीलें भी बन में शोभा पा रही थीं। वहाँ का जल स्वच्छ और सुन्दर था।

2

चारों ओर श्वेत कमल पुष्प खिल रहे थे। खिलते हुए लाल कमल बहुत ही मनोहारी थे। कमल पुष्पों की सुन्दर सुगन्धि सम्पूर्ण वातावरण में बिखर रही थी। भंवरे उन पर गुनगुन गुंजार कर रहे थे। भाँति-भाँति के पुष्प वन में खिले हुए थे। मन्द-मन्द बहती हुई वायु सुगन्धि को सम्पूर्ण वातावरण में बिखेर रही थी। इस मधुर वातावरण में राम और लक्ष्मण आनंदमग्न हो रहे थे।

3

उनके सम्पूर्ण मार्ग के दोनों ओर सुरभित पुष्प खिले हुए थे। पैदल पथ पुष्प राशियों के सौंदर्य से और भी अधिक आकर्षक हो गया था। श्रीराम ने भी एक पुष्प हाथ में लिया। बाद में राम ने सरिता के शीतल जल में स्नान किया और अपने शरीर को पवित्र किया। वहीं पर वे एक शिला पर कुछ समय के लिए बैठे रहे और प्राकृतिक वातावरण का सौंदर्य देखते रहे।

4

जलाशयों में कुमुद के पुष्प खिलने लगे थे। उनके वर्ण लाल-लाल थे। जलाशयों में लहरें नर्तन कर रही थीं। इस सौंदर्य ने श्रीराम का मन मोह लिया। उनका हृदय इन प्राकृतिक दृश्यों के सौंदर्य से बहुत ही प्रभावित हुआ। उनको चारों ओर अग्निज्वाल की भाँति लाल-लाल पुष्प राशि दिखाई दे रही थी। गुंजार करते हुए भौंरे पुष्पों का मधुपान कर रहे थे।

5

वन-प्रदेश बहुत ही मनमोहक था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे स्वयं ही वह अपना सौंदर्य प्रदर्शित कर रहा हो। वृक्ष राजियों का प्रतिबिम्ब जल में स्पष्ट दिखाई देता था। तालाबों में भांति-भांति की मछलियाँ तीव्रगति से तैर रही थीं। जल के प्रतिबिम्ब को मछलियों ने अपनी चल गति से अस्पष्ट-सा कर दिया था।

6

जब दूसरे दिन प्रातः काल सूर्योदय हुआ तो स्वाभाविक रुप से कुमुद पुष्प सूर्य की किरणों से कुम्हलाने लगे। सभी वृक्ष भी उनके साथ जैसे दुःख का अनुभव करने लगे। पक्षी–वृन्द आनंद से कलरव कर रहे थे, पर उस समय उनका रव भी करुण–क्रदन की पुकार–सा ही लगने लगा।

7

ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे वृक्षों की पत्तियां तथा तालाबों में पड़ा हुआ उनका प्रतिबिम्ब एक दूसरे को आनन्दमग्न होकर देख रहे हों। दोनों पक्षों में आनंदोल्लास की लहर दौड़ गयी थी। श्वेत कमल पुष्प अपनी पंखुड़ियाँ खोलकर जैसे हंस रहे हों। भौंरे उनमें गुंजार कर रहे थे। वायु के तीव्र झोकों से तूजूंग पुष्प आनंदमग्न होकर हिल रहे थे। हिलते हुए वे ऐसे लग रहे थे मानो अपने प्रेमी भौंरे के प्रेम को अस्वीकार कर रहे हों। भौंरे श्वेत कुमुद पुष्पों के पास बारबार जा रहे थे। संभवतः तूजूंग पुष्पों से उन्हें प्रेम–रस प्राप्त नहीं हो सका था। यह ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे प्रेमिका अपने प्रेमी को अपना प्यार नहीं दे रही थी, इसी लिए निराश होकर वह अन्य स्थलों पर जा रहा था।

8

वहाँ के वनों में रसज्ञ भ्रमर मधुर स्वर में गुंजार कर रहे थे। हिरन नींद में सो गये थे, क्योंकि भौरों के मधुर स्वरों ने उनको भी आनंदमग्न कर दिया था। शिकारी व्याध अपने विचारों में मग्न थे, अतएव हिरनों को पकड़ने में वे समर्थ नहीं थे। शिकारियों के कर्णकुहरों में कलहंसों के स्वर मधुरता घोल रहे थे। व्याध सदैव ही हिरनों का वध करते हैं, परन्तु अब वे शान्त और आनंदमग्न होकर भौंरों का गीत सुनने में डूबे हुए थे। सोते हुए हिरनों की ओर उन्होने ध्यान ही नहीं दिया। यद्यपि उस समय व्याध बड़ी सरलता से हिरनों को मार सकते थे, परन्तु वे उस समय सब कुछ भूल गये थे। इसका कारण एक मात्र यही था कि मदोन्मत्त करने वाले कलहंसों का स्वर सुन कर वे झूम रहे थे और स्वयं मदमस्त हो गये थे।

9

स्वच्छ निर्मल पवित्र सरोवर अब और अधिक सुन्दर दिखाई दे रहा था क्योंकि सूर्य की पवित्र किरणों ने अब उसके स्वच्छ जल का स्पर्श कर लिया था और किरणें सरोवर के जल पर बिखरी हुई थीं। सिंदूरी वर्ण लाल लाल लाक्षा की भाँति सुशोभित हो रहा था। ऐसा प्रतीत होता था मानों सूर्य की किरणें पिघल–पिघल कर स्वच्छ सरोवर के जल में परविर्तित हो गयी हों।

10

इस प्रकार श्री राम तथा लक्ष्मण ने रम्य वन प्रदेश की शोभा का आनंद लिया। उन्होंने धान के हरे भरे खेतों को देखा। धान के खेतों में मोटी-मोटी सुन्दर बालें हिलती हुई दिखाई दे रही थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि सम्पूर्ण हरीतिमा का सौंदर्य चारों ओर बिखर गया हों। श्रीराम और लक्ष्मण ने प्रसन्नन पूर्वक उस अपार सौंदर्य का आनंद लिया। उस वातावरण में उनका मन अपार हर्ष का अनुभव करने लगा।

11

पर्वतीय प्रदेश की पहाड़ियों में स्थित छोटे-छोटे ग्रामों में बहुत सी गायें चरायी जा रही थीं। वहाँ के निवासियों के व्यवसाय अथवा आजीविका का प्रधान साधन पशु पालन एवं भेंड़ें चराना था। अपने मार्ग में जाते हुए स्थान-स्थान उन्हें गोशालाएँ भी दिखायी दीं। गौओं के पालक लोग दिन में गायों का दुग्ध दोहन करते हुये दिखायी दिए। दुग्ध से मक्खन एवं घृत तैयार करके अपने कार्य व्यापार के लिए ये लोग अयोध्या नगरी की ओर जाते हुए दृष्टिगोचर हो रहे थे।

12

ग्रामवासियों की पत्नियाँ गायों एवं बैलों के रहने के स्थानों की देखभाल करती थी। पर्वतीय क्षेत्र की युवतियाँ सरल और सीधे स्वभाव की थी। वे कभी-कभी शिष्टता के पूरे नियमों का पालन भी नहीं करती थीं। अतएव कभी-कभी वे पूरी ग्रामीण-सी ही दिखायी पड़ती थीं। जब राम और लक्ष्मण उन गाँवों से होकर निकले, वे सभी युवतियाँ अपने-अपने दैनिक कार्यों में लगी हुई दिखायी दे रही थीं। अठखेलियाँ करती हुई इन युवतियों ने आकर्षित होकर उन दोनों क्षत्रिय राजकुमारों को प्रेमभरी दृष्टि से देखा। वे दोनों भाई गाय एवं बैलों की ओर आनंदपूर्वक देख रहे थे। उस समय युवतियाँ उन दोनों राजकुमारों की सुन्दरता पर मुग्ध थीं।

13

वास्तव में युवती का शील एवं सौंदर्य निश्चय ही उसके आभूषण की भाँति उसकी गरिमा को और भी अधिक बढ़ा सकता है। यह तभी होता है जब उस युवती का शिष्टाचार और व्यवहार मृदु हो और उसमें कहीं भी अशिष्टता का लेशमात्र न हो। ऐसी युवतियाँ देखने में भी शीलवती और आकर्षक दिखायी देती हैं। युवती की सुन्दरता से मन को मधु रस प्राप्त होता है, विशेषतया उस समय जब उसके व्यवहार मृदु और मनोहारी होते हैं तथा उसकी ओर से किसी प्रकार का अनुचित व्यवहार दिखाई नहीं दे। उसका सारल्य मानव मन में उसके प्रति एक प्रकार की सहानुभूति एवं प्रेम जागृत कर देता है। वास्तव में गाय एवं बैलों की देखभाल करने वाली उन वनिताओं का चरित्र कुछ ऐसा ही सरल एवं मृदुतापूर्ण दिखायी दिया क्योंकि दोनों क्षत्रिय राजकुमारों ने

उन युवतियों को बड़ी प्रेमपूर्ण दृष्टि से देखा और उनके सौंदर्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की।

14

दधि से मक्खन बनाते समय मथानी फेरते हुए उन युवतियों के जो स्वर सुनायी दे रहे थे, वे बड़े ही मधुर एवं कर्णप्रिय थे। उनको सुनने में एक अनुपम मिठास का अनुभव होता था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे गामलान वाद्य यंत्रों के स्वर निकट से ही उनके कर्णकुहरों में मधुर रव गुंजित कर रहे हों। वे सभी लोग जो गो-दोहन कर रहे थे, आनंद और उल्लास से नृत्य भी कर रहे थे। जब उन पर पूरी तरह दृष्टिपात किया जाता था तो ऐसा प्रतीत होता था कि वे जीवन के मधुर रस में आकंठ डुबे हुए हैं। युवतियाँ अपनी दोनों बाहों को हिला-हिला कर क्रम से मोहक नृत्य कर रही थीं।

15

वन में तीव्र गति से दौड़ते हुए हिरन उछल-उछल कर आगे बढ़ते चले जा रहे थे, क्योंकि पतझड़ का मौसम आ गया था और हिरन अपनी पूरी शक्ति से आनंदमग्न होकर खेल रहे थे। बड़े-बड़े धान के खेतों में हिरन आनंदमग्न होकर पौधों को निरन्तर खा रहे थे। जब राम और लक्ष्मण ने मृगों को क्रीडा करते हुए तथा उल्लास से उछलते देखा उन्हें बड़ी प्रसन्नन हुई। उन्हें उस वातावरण में एक विचित्र आनंद एवं अनुपम उल्लास का अनुभव स्वतः ही हो रहा था।

16

आकाश पर स्वच्छ निर्मल घने-घने मेघों छाये हुए थे। उनके नीचे पर्वततीय क्षेत्र के विस्तृत मैदान बिखरे हुऐ थे। तीव्र वायु के झोकों ने मेघों को बिखेर दिया था। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे मेघ पर्वतराज हिमालय की चोटियाँ हों और अपने विशाल रुप में दिखाई दे रही हों।

17

पर्वत की विशाल घाटियों में सिंह विश्राम कर रहे थे। उनकी भीषण गर्जना से आकाश कम्पायमान हो रहा था। उस समय सिंहों की दहाड़ बहुत ही कर्कश प्रतीत हो रही थी। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे सिंह क्रुद्ध होकर आक्रमण के लिए प्रस्तुत हो रहे हों। सिंह वास्तव में आकाश में मेघों के स्वरों को सुख भ्रम में पड़ गये थे क्योंकि जब वे ऊपर की ओर देखते थे, तो मेघों की गुरु गंभीर गर्जना उन्हें सुनाई पड़ती थी। दोनों राजकुमारों ने इसे देखकर कहा - "कि कितना अद्‌भुत दृष्य है ! मूर्ख सिंह मेघों के गर्जन को अपने शत्रु के गर्जन के रुप में समझ रहे हैं।"

18

एक अन्य पर्वत की घाटी में दोनों राजकुमारों ने एक सुन्दर सरोवर देखा। श्वेत तूजूंग पुष्प ही उसमें खिले हुए दिखायी दे रहे थे। परन्तु उस सरोवर में कोई भी पुष्प रक्तवर्ण का नहीं दिखायी दिया। उस सरोवर में श्वेत हंस भी तैरते हुए दिखायी नहीं दे रहे थे। केवल उनका मधुर स्वर ही सुनाई दे रहा था। उनका मीठा स्व्र धीरे-धीरे कलकल रव में गूंज रहा था।

19

परन्तु कोई भी सरोवर ऐसा नहीं था कि जिसमें तूजूगं पुष्प न खिले हों। कुछ सरोवरों में उन पुष्पों की लड़ियां-सी बिखरी हुई प्रतीत हो रही थीं। कुछ जलाशयों में तो तूजूंग पुष्प बहुत अधिक दिखायी दे रहे थे तथा उन सभी में भौंरे कोषगत थे। भौंरे भी मधुर स्वर में निरन्तर गुंजार कर रहे थे। उनमें एक भी भौरा ऐसा नहीं था जो मधुर स्वर में न गुनगुना रहा हो। उनका गुनगुनाना भी बहुत ही कर्णप्रिय था। वहाँ ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं था, जो इस मधुरता के वातावरण से आनंदमग्न होकर आकर्षित न हो पाता।

20

जब दोनों राजकुमार राम और लक्ष्मण महर्षियों के आश्रम में पहुंचे, तो सभी ऋषियों और मुनियों ने उनको नमस्कार किया तथा विधिवत सम्मान करते हुए स्वागत किया। पवित्र जल, पुष्प, फल, कन्द मूल, सुगन्धित तेल, धूप, सुपारी, ताम्बूल, मीठा पीने का पानी आदि महर्षियों के आदर सत्कार और अतिथ्य का पूरा परिचय दे रहे थे। सभी वस्तुएँ प्रेमपूर्वक राजकुमारों के आतिथ्य के लिए उनके समक्ष प्रस्तुत की गयीं।

21

दोनों राजकुमारों ने पूर्ण आनंद एवं तृप्ति से भोजन किया। यही नहीं, भोजन के उपरान्त उन्होंने महर्षियों के आश्रमों की परि क्रमा करते हुए उनकी स्थिति का निरीक्षण भी किया। धैर्य और शान्ति भाव से सभी तपस्वियों ने राम के प्रति अपना पूर्ण सम्मान प्रकट करते हुए उनका सत्कार किया तथा उनसे आदर पूर्ण वचन कहे। कुछ काल तक उस तपोभूमि में और वहां के आश्रमों में ठहरने के बाद श्री राम को अपार आनंद एवं प्रसन्नता की प्राप्ति हुई। उन्हें तपोभूमि में रहना बहुत रुचिकर प्रतीत हुआ।

22

ऋषियों ने राजकुमारों के प्रति अपना गहरा प्रेम प्रकट किया। उन्होंने राम तथा लक्ष्मण को महान

शक्तिशाली अस्त्र–शस्त्र प्रदान किये। श्रीराम तथा लक्ष्मण ने कठिन से कठिन विषयों का अध्ययन भी प्रारम्भ कर दिया। ऋषियों ने उन्हें विविध ज्ञान–विज्ञान के विषयों में शिक्षा भी दी, जिससे कि वे युद्धक्षेत्र में पूर्ण विजय–श्री प्राप्त कर सकें और उनकी विजय–श्री पूर्ण रुप से प्रतिष्ठित हो सके। वास्तव में ऋषियों ने श्री राम को अपार शक्तिशाली शस्त्रों से सुसज्जित किया। श्रीराम के लिए यही उनका विशेष उपहार भी था। ऋषियों ने राम को महान शक्तियां प्रदान कीं। अब उनकी असफलता की कोई संभावना ही नहीं रह गयी।

23

जब राम सभी अस्त्र–शस्त्र विद्याओं में पूर्ण पारंगत हो गये और ज्ञान–विज्ञान के सभी क्षेत्रों में उनकी पूरी गति हो गयी, उन्होंने रम्य वन–प्रदेश में एक बार फिर ऋषियों के आश्रमों मे जाकर परि क्रमा की और उस क्षेत्र का विधिवत पूरा निरीक्षण किया। उसी समय उन्होंने एक राक्षसी को उसी क्षेत्र में आते हुए देखा, जो ऋषियों का वध करने आयी थी। अतएव उसका वध करना भी राम के लिए आवश्यक हो गया। वह अन्य कोई नहीं वरन राजा दशमुख रावण की ही प्रजा थी। उसका नाम ताराका ताड़का था।

24

राम ने उसे देखकर शनैः शनैः अपने धनुष पर बाण वढ़ाया। उन्होंने धनुष पर तीक्ष्ण बाण साध लिया। ताड़का की गर्दन को उन्होंने अपना लक्ष्य बनाया। उन्होंने अपना लक्ष्य साधकर केवल एक ही बाण मारा। उसके लगते ही ताड़का धराशायी हो गयी। वह गिरकर मूर्च्छित हो गयी। अन्त में उसकी मृत्यु हो गयी।

25

इस प्रकार राम ने ताड़का का संहार कर दिया। इसे देखकर महर्षियों को बहुत आनंद एवं सन्तोष हुआ, क्योंकि ताड़का के नाश से तपोभूमि में किसी प्रकार का भय अब शेष नहीं रह गया था। सभी प्रकार की सुख–समृद्धि वहाँ आ गयी थी। अब पक्षीगण वहाँ पर घोर शब्द करते हुए शोर नहीं मचा रहे थे। अब निडर होकर विद्वान पंडितों के बालक तपोभूमि में स्वच्छन्द विचरण कर रहे थे। पहले उन पक्षियों को सदैव ही यह डर लगा रहता था कि ऋषियों के बालक भी उन पर आक्रमण करेंगे। अब वे पक्षी भी शान्त होकर चहचहा रहेथे।

26

इससे पहले जब राक्षसी ताड़का तपोभूमि की ओर ऋषियों के तप में बाधा डालने आती थी, तो पक्षी उसके डर से अपना कलरव भूल जाते थे। चीते चुपचाप अपने शरीर को समेट कर गुफा में लेटे रहते थे। इस प्रकार गुप्त रुप से वे छिपे–छिपे ही रहते थे। सिंहों को भी उन विकट परिस्थितियों में सहायता की

आवश्यकता होती थी। वे भूखे, शक्तिहीन तथा घबराये रहते थे। केवल गैंडा ही ऐसा पशु था जो आनंदपूर्वक तृप्ति से काँटों को खोद-खोद कर खाता रहता था। केवल वही वहाँ पर पूर्ण सन्तुष्ट था अन्यथा अन्य सभी पशु दुःखमयी परिस्थितियों का अनुभव कर रहे थे।

27

ताड़का की मृत्यु के पश्चात भी उसका भय बना हुआ था और तपोभूमि में ऋषियों को त्रस्त कर रहा था। सभी उसके नाम से डरते थे। ताड़का का नाम अपने आप में ही एक भयानक शब्द था। वन्य चीता अब उपवास नहीं कर रहा था वरन भली भाँति अपना शिकार कर लेता था। अन्य वन्य पशु भी भूखे नहीं रहते थे यद्यपि हिरणों की संख्या बहुत अधिक बढ़ चुकी थी। सिंह जंगल में अपना शिकार स्थान ढूढंने में लगे हुए थे। वन में एक हाथी उन्मत्त होकर घूम रहा था। शेर ने उस पर आक्रमण कर उसका मांस भक्षण किया और इस प्रकार अपना उपवास समाप्त किया।

28

महर्षियों ने अपने आश्रमों में अनेक प्रकार की जड़ी-बूटियों के पौधे भी उगाये थे। वहाँ इन पौधों को उजाड़ने वाला अब कोई भी नहीं था। उनके फल सुरक्षित थे। सभी वृक्ष भलीभांति फल-फूल रहे थे। आम्रफल तथा भाँति-भाँति के अन्य फल वृक्षों पर लदे हुए थे। फलों से लदे होने के कारण उन वृक्षों की शोभा और भी अधिक बढ़ रही थी।

29

जब राम ने आनंदपूर्वक आश्रम में प्रवेश किया, तो उन्हें महर्षि का आश्रम सभी प्रकार की वस्तुओं से परिपूर्ण दिखायी दिया। महर्षि ने राम और लक्ष्मण का आदर सत्कार किया। बाद में राम तथा लक्ष्मण ने ऋषि के संकेत से स्नान किया। सम्मानपूर्वक महर्षि ने उनको उचित स्थान पर आसन भी दिया। ऋषि ने उन दोनों राजकुमारों से कहा कि इस भूमि पर आप अवतार स्वरुप हैं क्योंकि आपका जन्म पृथ्वी पर इस संसार का उद्धार करने के लिए ही हुआ है।

30

हे मेरे पुत्रों राम एवं लक्ष्मण ! आप मेरे शब्दों पर पूरी तरह ध्यान देने की कृपा कीजिए। आप में भगवान नारायण का अंश है, और इस पृथ्वी पर आप उन्हीं के अवतार हैं। आपका भौतिक शरीर विष्णु के अवतार का ही स्वरुप है। सम्पूर्ण संसार के कल्याण का पूरा भार एवं उत्तरदायित्व आप ही अपने ऊपर लिये हुये हैं। आप

हम सब ऋषि मुनियों की भी सुरक्षा का भार अपने कंधों पर लेने की कृपा कीजिये। प्रेमपूर्वक हम सब अब आनंदोत्सव के लिए आपको निमंत्रण देते हैं।

31

राम से जब ऋषियों ने इस प्रकार मधुर वचन कहे तो श्रीराम ने उनके प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हुए और ऋषियों को पूरा विश्वास दिलाते हुए आश्वस्त किया। हे ऋषिगण ! मुझे सदैव ही आपकी कृपा दृष्टि चाहिए। आप लोगों को किसी प्रकार की सन्देहपूर्ण परिस्थिति में नहीं रहना चाहिए क्योंकि आपकी साधना एवं आपका महान तप सदैव ही आपकी सबसे बड़ी शक्ति है। कोई भी व्यक्ति उस शक्ति से संघर्ष नहीं कर सकता। इसीलिए यह निश्चित है कि महर्षि के शत्रुओं पर निश्चय ही हम सबको पूर्ण विजय प्राप्त होगी और ऐसा ही होना भी चाहिए।

32

राजपुत्र श्रीराम ने इस प्रकार के साहसपूर्ण वचनों से महर्षि को पूरी तरह आश्वस्त किया। राम का व्यक्तित्व भी आकर्षक एवं महान था। महापुरुषों के सभी लक्षणों से वे संपन्न थे। उन्होंने युद्ध के सभी अस्त्र शस्त्रों धनुष और बाणों – को धारण किया तथा बड़ी सावधानी से ऋषियों के आश्रमों के चारों ओर परि क्रमा की। उनके साथ ही साथ लक्ष्मण भी धनुष–बाण लेकर उन के साथ चल दिये। इस प्रकार दोनों भाइयों ने ऋषियों के आश्रमों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भली भाँति संभाला, जिससे ऋषियों को अपार सन्तोष हुआ।

33

राम ने सभी ऋषियों को निर्विघ्न तपस्या का अवसर देते हुए निर्भय होकर साधना करने के लिए कहा। उन्होंने कहा कि अब नीच राक्षस, ऋषियों को डराने के लिए तपोभूमि में नहीं आ सकेंगे। उस समय मेघ ए`से लग रहे थे जैसे आकाश में लटक कर नीचे झुके जा रहे हों। अतएव वातावरण भी बहुत ही सुखदायी हो गया था। मेघमाला के बीच बिजली की चमक श्वेत दन्त पंक्ति की भाँति शोभा पा रही थी।

34

श्री लक्ष्मण ने उसी अवसर पर शीघ्र ही ऊपर आकाश की ओर दृष्टि डाली तथा अपने घनुष को फैलाया। वे बड़े ही वीर धनुर्धर थे। उन्होंने बाण सन्धान का आसन लेते हुए, अर्द्धचन्द्र की भाँति खिंचे धनुष से लक्ष्य को साध कर सर–संधान कर दिया, जिससे सभी शत्रुओं का संहार हो गया। उनमें से कोई भी जीवित नहीं बच पाया। यह कार्य लक्ष्मण के रण कौशल की सबसे बड़ी सफलता का परिचायक था।

35

राक्षसों के मस्तक राहु की भाँति भयावने थे। प्रत्येक के हृदय में वे भय उत्पन्न करते थे। जब राक्षस भीषण गर्जना करते थे, उनका स्वर सम्पूर्ण वातावरण एवं आकाश को प्रकम्पित कर देता था। परन्तु अब कबन्ध की भाँति मस्तकों से अलग उन राक्षसों के धड़ पृथ्वी पर गिर-गिर कर धराशायी होते हुए लुढ़क रहे थे। जितने भी तपस्वी उस समय वहाँ पर उपस्थित थे, उनके हृदय इस भीषण एवं भयानक दृश्य को देखकर विदीर्ण हुए जा रहे थे।

36

राक्षसों के सेनापति के रुप में मारीचि मारीचा क्रुद्ध होकर राम और लक्ष्मण के समक्ष आया और आक्रमण के लिए आगे बढ़ा। उसने राजपुत्रों को परास्त करने के लिए जादूगरी की विद्या का प्रपंचमय जाल फैलाया तथा युद्ध में संघर्ष के लिए वह आगे आया। राम भी एक महान युद्धवीर थे, अतएव मारीचि का मायाजाल उनको परास्त नहीं कर सका। राम ने वीरता से आक्रमण करके मारीचि को परास्त किया और उसे पीछे ढकेल दिया। राजपुत्र राम ने कहा कि नीच मारीचि उनकी शक्ति की परीक्षा लेने के लिए जिस प्रकार आगे आया था, उसी प्रकार उसको पीछे ढकेल कर उसका आक्रमण भी असफल कर दिया गया है।

37

राम ने कहा कि मूर्ख मारीचि ! तुझे ऋषियों के आश्रमों में आने की तथा उन्हें सताने की क्या आवश्यकता है ? तू तो मांसाहारी है। भिक्षुओं एवं ऋषियों के पास से तुझे भोजन अर्थात मांस कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता। यदि तू महर्षियों के आश्रमों से सुवर्ण प्राप्त करने की अभिलाषा रखता है, तो वह स्वर्ण राशि भी उनके पास नहीं है। क्या वास्तव में यह सभी तपस्वी नितान्त निर्धन नहीं हैं ? इन परिस्थितियों में तू इन तपस्वियों से क्या अपेक्षा रखता है।

38

हे नर श्रेष्ठ राम ! आप भी नितान्त मूर्ख ही हैं, मुझे सुवर्ण की आवश्यकता नहीं है और न ही इस उद्देश्य से मैं यहाँ आया हूं। मुझे मांस की भी आवश्यकता नहीं है। सच तो यह है कि मैं यहाँ से कुछ भी नहीं चाहता। मैं केवल तपस्वियों की तपस्या भंग करने के लिए तथा यहॉ की सभी वस्तुओं को नष्ट करने के लिए आया हूं। केवल यही मेरा एकमात्र लक्ष्य है। हम राक्षसों का यही चरित्र है और यही स्वभाव भी है। हम इस संसार में तपस्वी लोगों के शत्रु हैं, यही हमारे जीवन का मूलाधार है।

39

जो लोग शान्तिपूर्ण जीवन व्यतीत करते हैं, उनको बहकाकर सन्मार्ग से हटाना, निरपराध ऋषि मुनियों की हत्या करना, यही असुर राक्षसों का जन्मजात कर्तव्य है।. जन्म से ही दूसरों को कष्ट पहुंचाना हमारा स्वभाव है। राक्षसों का स्वभाव क्रूर होता है। वे इसीलिए दूसरों को कष्ट पहुंचाने में आनंद का अनुभव करते हैं। दूसरों के हित की हानि ही हमारा लाभ है। हम संसार के सभी लोगो को दुःख पहुंचाकर प्रसन्नता ओर उल्लास मनाते हैं। इस प्रकार हमारा स्वभाव हमें सन्मार्ग की ओर न जाने के लिए विवश करता है। नीच कर्म ही हमारे स्वभाव का प्रधान अंग है। इसीलिए उन्हीं में हमारी रुचि है।

40

इस संसार में जो कुछ भी दिखायी देता है, उसका विध्वंस करने में हमें बहुत आनंद आता है। यदि कोई वस्तु विनाश से शेष बच जाय, तो यह भी हमें रुचिकर प्रतीत नहीं होता, हम सब इस जगत को उजाड़ कर सूने बियावान जंगल के रुप में परिवर्तित करना चाहते हैं। इस प्रकार हम राक्षसों की रुचि संसार को बाधा और हानि पहुंचाकर उजाड़ स्थान बनाने में ही है। इस प्रकार के वचन राक्षस मारीचि ने राम से कहे। राजकुमार श्री राम ने शीघ्रता से उसके इस कथन का दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया।

41

यदि राक्षसों के जीवन का मूलाधार ही नीचता है और वे उसको संसार के कष्ट का कारण ही बनाना चाहते हैं तो इस जगत में चारों ओर अशान्ति ही रहेगी। परन्तु मेरे इस पृथ्वी पर जन्म लेने का एक विशेष उद्देश्य है। उसी के फलस्वरुप सम्पूर्ण वन प्रदेश एवं राज्य को मैं राक्षसों के भय से मुक्त करना चाहता हूं। मैं भी अपने मूल कर्तव्यों का पालन जीवन-पर्यन्त करता रहूंगा, क्योंकि इस जगत में शान्ति की प्रतिष्ठा मेरा कर्तव्य है। नीच वृत्तियों के पोषक तथा दुष्ट चरित्र वाले राक्षस जो संसार में उपद्रव मचाकर शान्ति भंग कर रहे हैं तथा जन-साधारण को कष्ट पहुंचा रहे हैं, उनके इस दुर्व्यवहार को अब मैं सहन नहीं कर सकता। मैं अब उनका सर्वनाश करने के लिए पूरी तरह कटिबद्ध हूं। यही मेरी अभिलाषा है और यही मेरा कर्तव्य भी है।

42

हे राक्षस मारीचि ! तुम दुष्ट एवं मूर्ख हो। तुमने अपने कुकर्मो पर कभी भी विचार नहीं किया अथवा अपने संवन्ध में कभी भी नहीं सोचा। तपोभूमि में महर्षियों को अपार कष्ट पहुंचाने में ही तुमने आनंद का अनुभव किया है। तुम अपनी शक्तियों को पूर्णतया खोकर अब शक्तिहीन हो गये हो। तुम्हारा अस्तित्व अब वृक्ष के एक पत्ते की भाँति है तथा तुम पृथ्वी की घास की तरह मुलायम हो। आज मुझे बडी लज्जा का भी अनुभव हो

रहा है जो मैं तुमसे संघर्ष के लिए प्रस्तुत हो रहा हूं। अतएव तुम इस स्थान को छोड़कर यहाँ से चले जाओं।

43

यह कहते हुए श्रीराम ने धनुष को चौड़ा करके उस पर एक तीक्ष्ण बाण चढ़ाया। यह बाण उन्होंने स्वयं ही बनाया था। उस बाण के छूटते ही तीव्र गति से वायु चलने लगी। मारीचि राक्षस टूटे वृक्ष की भॉति अब शक्तिहीन हो चला था। राम ने बाण के तीव्र प्रहार से उसे बहुत दूर फेंक दिया। वह वायु के वेग में बहुत दूर उड़कर जा गिरा। अब फिर दूसरी बार राम से युद्ध करने का साहस उसे नहीं हो सका। अन्त में वह हारकर लौट गया।

44

इस प्रकार अस्त्र-शस्त्रों के घोर रव को सुनकर कई देवता भी सचेत हो गये। इन्द्र आदि देवताओं ने इस महान विजय के लिए श्रीराम की भूरि-भूरि प्रशंसा की और उनकी बन्दना की। हे राम ! हे राजा दशरथ के पुत्र ! तुम महान शक्तिशाली एवं एक महान युद्धवीर हो। यह कहने के पश्चात देवों ने गगनमंडल से श्रीराम पर पुष्प-वृष्टि की। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि आकाश से फूलों की वर्षा हो रही हो।

45

अब सभी महामुनि राम के आश्रय में पूर्ण सुरक्षित होकर शान्ति पूर्वक तपस्या एवं साधना का जीवन व्यतीत कर रहे थे। तपोभूमि में अब किसी प्रकार की अशान्ति नहीं थी। सभी ऋषि-मुनि पूजा-अर्चना में अहर्निशि लगे रहते थे। इस प्रकार उनकी साधना में अब किसी प्रकार की कोई कमी नहीं थी। उनका पूरा समय शान्तिपूर्वक उपासना में ही व्यतीत हो रहा था। उनकी उपासना की गतिविधियों में अब कोई परिवर्तन भी नहीं होता था। बाद में पूर्ण सन्तुष्टि से यज्ञादि कर्म और पूजा करने के पश्चात महर्षि ने राम से कहा।

46

हे भद्र पुरुष राम ! आपका हम सब पर अपार अनुग्रह है। आप सम्पूर्ण जगत के आश्रयदाता हैं। मेरा तो यह मत है कि आपके इस पृथ्वी पर अवतरित होने से जैसे यह संसार भी स्वर्गलोक की भाँति सम्पूर्ण गरिमा संपन्न हो गया है। यह मेरा अटल विश्वास भी है कि आप के पृथ्वी पर भौतिक शरीर धारण करने से इस संसार एवं स्वर्गलोक में अब कोई अन्तर ही नहीं रह गया है। केवल यही भेद दिखायी देता है कि स्वर्ग में राजा इन्द्र का निवास है और भूमि की शोभा आप बढ़ा रहे हैं।

47

आज आप के व्यक्तित्व एवं सुन्दर शरीर को देखकर मुझे क़ई बातों का स्मरण हो रहा है। आप विष्णु के अंश रुप में उन्हीं के अवतार हैं। इस प्रकार आप भी एक देवता ही हैं। हे मेरे प्रिय बालक राम ! आप पूर्ण शक्तिवान हैं। प्राचीन काल में आप ने ही राजा बलि का वध किया था तथा क्षीर सागर का मंथन भी आपने ही किया था। ये सभी महान कृत्य प्राचीन युग में आपके द्वारा ही संपन्न किये गये थे।

48

प्राचीन युग में अपने चक्र से आपने ही राहु की गर्दन धड़ से अलग कर दी थी। अनेक राक्षसों एवं दानवों को परास्त करके आपने उन पर अपना पूरा आधिपत्य स्थापित किया था। प्राचीन काल में ही आपने वन में वराह का रुप धारण किया था तथा इन अवतारों के माध्यम से ही अनेक महान कृत्य इस पृथ्वी पर किये थे। यह पवित्र भूमि एक बार एक महान जल-प्लावन में डूब गयी थी। बाद में आपने ही इसका उद्धार किया था तथा इसकी रक्षा का पूरा भार वहन किया था।

49

आप कृपया मेरे वचनों को ध्यानपूर्वक सुनिए क्योंकि मैं अब आपके समक्ष महाराज जनक की गौरव-गाथा का वर्णन करना चाहता हूं। वे भी अपनी एक अभिलाषा की पूर्ति करना चाहते हैं तथा इस संसार में शान्ति के इच्छुक हैं। शान्ति का वह मार्ग उन्होंने स्वयं ही अपने अनुसार निश्चित किया है। उनकी राजपुत्री का नाम सीता है। वे सीता को वधू के रुप में देखना चाहते हैं तथा वे किसी योग्य वर से सीता का विवाह करना चाहते हैं।

50

परन्तु उनको किसी प्रकार के धन-वैभव और ऐश्वर्य से प्रभावित नहीं किया जा सकता। यहां तक कि अमूल्य वस्तुएँ तथा राज्य भी उनको अपने निर्णय से विचलित नहीं कर सकते। तीनों लोकों के राज्य एवं शक्ति की भी उन्हें किंचित मात्र अभिलाषा नहीं है। इस प्रकार इस जगत में कोई व्यक्ति धन और शक्ति से उन पर विजय नहीं पा सकता। केवल कोई विशेषतापूर्ण महान व्यक्तित्व का पुरुष ही उनकी इच्छा के अनुरुप हो सकता है। उनकी अभिलाषा यही है कि किसी ऐसे ही व्यक्तित्व के पुरुष को वे अपना जामातृ बनायें, जो सर्व शक्तियों से संपन्न हो तथा अलौकिक गरिमा का स्वामी हो। वह चरित्रवान हो तथा किसी उच्च वंश से अपना संबंध रखता हो।

51

देवी सीता का जिस समय जन्म हुआ था, उस समय पहले से ही उनके साथ एक धनुष था। यह धनुष एक महान शक्तिशाली अस्त्र था, जो जन्म के पश्चात भी सदैव उनके साथ ही रहा। जो वीर इस धनुष को फैला सकता है अर्थात चढ़ा सकता है, उससे शर-संधान कर सकता है, उसे ही पूर्ण शक्तिशाली एवं दैवी शक्ति संपन्न माना जायेगा। वही वीर युवक सीता का वरण कर सकेगा। दूसरे अन्य किसी व्यक्ति पर इस विषय में कोई विचार नहीं किया जा सकता है।

52

मेरा आप से यह अनुरोध है कि आपको राजा जनक के यहाँ अवश्य ही जाना चाहिए और शक्ति-परीक्षण में भाग लेना चाहिए। केवल आप ही मेरी दृष्टि में ऐसे वीर युवक हैं जो उस धनुष को चढ़ा सकते हैं। यद्यपि वह धनुष बहुत ही कठोर एवं भारी है परन्तु निश्चय ही उस धनुष को भंग करने में आप पूर्ण समर्थ हैं और आपको ही देवी सीता को प्राप्त करने की आशा एवं अभिलाषा करनी चाहिए।

53

महर्षि विश्वामित्र ने इस प्रकार के वचन दोनों राजकुमारों से कहे। राम और लक्ष्मण ने महर्षि के साथ साधना एवं पूजा में बड़े ही उत्साह से भाग लिया। इस प्रकार साथ-साथ पूजा-अर्चना करने के पश्चात महर्षि के साथ राम और लक्ष्मण ने मिथिला नगरी की ओर प्रस्थान किया। यह नगरी एक बहुत ही प्रसिद्ध नगरी थी और उस प्रदेश में सबसे अधिक महत्वपूर्ण मानी जाती थी।

54

जब श्री राम तथा लक्ष्मण सभा-मंडप में पहुंचे तो वहाँ की साज-सज्जा देखकर वे आश्चर्यचकित रह गये। वास्तव में वहाँ का सौंदर्य मनोहारी था। जो लोग उस उत्सव को देखने मिथिला नगरी में आये हुए थे, उनसे सभा-मंडप खचाखच भरा हुआ था। भीड़ के कारण लोग एक दूसरे से सटकर बैठे हुए थे। इस प्रकार एक अपार जन-समूह वहाँ पर उमड़ पड़ा था। राम तथा लक्ष्मण दोनों राजपुत्रों के सुन्दर रुप को देखकर सभी आश्चर्य में पड़ गये। वे उनकी सुन्दरता की भूरि-भूरि प्रशंसा करने लगे। बाद में अपनी हार्दिक प्रसन्नता व्यक्त करते हुए उन्होंने यह कहा।

55

क्या देवता अश्विनीकुमार चलते–चलते यहाँ आ गये हैं। राम और लक्ष्मण को मिथिला–निवासियों नें अश्विनी कुमार की भाँति ही माना। बसन्त ऋतु के साथ क्या देव कामजय आकर उपस्थित हो गये हैं। उनका व्यक्तित्व, उनकी गतिविधियाँ तथा विशेषताएँ बहुत ही आकर्षक थीं। उनका रुप सम्पूर्णतः अनूप था। लगता है जैसे भगवान स्वयं ही जानबूझ कर दर्शन देने के लिए इस सभा–मंडप में आ विराजे हैं। इनके आने से यहाँ की शोभा इतनी बढ़ गयी है।

56–57

इस प्रकार के वचन मिथिला के उन नगर–निवासियों के मुख से निकले, जो वहाँ उपस्थित थे और जिन्हें राम–लक्ष्मण को देखने का अवसर प्राप्त हुआ था। वे सभी अत्यन्त प्रसन्न दिखायी दे रहे थे। सभी राम के रुप की भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे, क्योंकि उनका रुप अपार सुन्दर था। जब राजा जनक ने दोनों राजपुत्रों राम तथा लक्ष्मण को देखा तो आनंद विभोर होकर उन्होने कहा कि श्री राम को धनुष के परीक्षण का अवसर दिया जाना चाहिए। यह महान धनुष त्रिपुर राक्षस को भी हराने वाला है। इसी से उसका संहार भी किया गया था। यह भगवान शंकर का धनुष है। अन्य राजागण जो वहाँ पर उपस्थित थे, उनमें कोई भी इतना बलशाली नहीं था कि शंकर के धनुष को खींच कर उस पर बाण चढ़ा सकता, परन्तु श्री राम ने उस धनुष को उठाकर तोड़ दिया और उसके दो भाग कर दिये।

58

धनुष–भंग होने के पश्चात सभा में आनंद–उल्लास छा गया। राजा जनक को अपार हर्ष हुआ। वे बहुत सन्तुष्ट हुए। उनका हृदय गदगद हो गया। वास्तव में राजा जनक एक बड़े प्रतापी राजा थे। जब उन्होंने राम को एक महान बलशाली राजपुत्र के रुप में देखा, तो उनके उल्लास की सीमा न रही। उन्होंने उसी समय अपने सबसे महत्वपूर्ण महामंत्री को बुलाकर यह आदेश दिया।

59

वास्तव में देवी सीता को श्री राम की पत्नी के रुप में ही होना चाहिए। राम एक उच्च कुल से संबंध रखते हैं। वे एक शक्तिशाली युवक भी हैं। राजा दशरथ को मिथिला आने का निमंत्रण दीजिए तथा शीघ्र ही अयोध्यापुरी में जाने की कृपा कीजिए। श्री राम को वर के रुप में शीघ्र ही विवाह के लिए तैयार किया जाना चाहिए अतएव इस संबंध में आप शीघ्र ही राजा दशरथ के पास जाकर उन्हें सूचित कीजिए।

60

राम विवाह के विषय में राजा दशरथ को सूचना देने के लिए जिस वरिष्ठ मंत्री को अयोध्यापुरी जाने के लिए कहा गया था, उनको राजा जनक ने ही आदेश दिया था। उनको अपने पास बुलाकर राजा जनक ने विधिवत यह आदेश दिया था। उसके पश्चात वे राजमहल में चले गये। वहाँ इसके विषय में उन्होंने बार–बार सभी से चर्चा की। जब राजा दशरथ को राजा जनक के निमंत्रण की सूचना प्राप्त हुई, तो वे आश्चर्यचकित रह गये। इस सूचना से वे प्रसन्न हुए और शीघ्र ही मिथिलापुरी के लिए उन्होंने प्रस्थान कर दिया।

61–62

जब महाराज दशरथ ने महान नगर मिथिलापुरी में प्रवेश किया, तो सूचना पाते ही उनका स्वागत–सम्मान करने के लिए राजा जनक उपस्थित हो गये। उन्होंने राजा दशरथ को विभिन्न प्रकार की वस्तुएँ उपहार स्वरुप भेंट कीं। वहाँ लायी गयी सभी आवश्यक वस्तुएँ अवसर के अनुकूल ही थीं। राजा जनक बहुत प्रसन्न थे। उन्होंने हर्षातिरेक से राजा दशरथ से सुन्दर वचन कहे तथा उनकी ओर प्रेम पूर्ण दृष्टि से देखकर एक निवेदन किया – "हे महान प्रतापी राजा दशरथ ! आप एक शक्तिशाली योद्धा हैं। आपने अपने बाहुबल से धर्म, धन, वैभव, आनंद की वृद्धि करने में अनुपम कौशल दिखाया है। आप राजा इन्द्र के मित्र हैं। अतएव आप भी एक प्रकार से देवता ही हैं। हम सबका यह परम सौभाग्य है कि आपने स्वयं मिथिला में आकर हमें अपने दर्शन देकर कृतार्थ किया है।

63

आपके दोनों राजपुत्र गुणवन्त, सुशील एवं शक्ति–सम्पन्न हैं। राम के समान तो अब तक इस जगत में कोई हुआ ही नहीं है। मेरी राजपुत्री सीता राम की सेवा में अपने आपको अर्पित करना चाहती है। श्री राम आपके राजपुत्र हैं, इसीलिए मैंने आपको यहाँ तक आने का कष्ट दिया है।

64

राजा जनक राजा दशरथ से यह वचन कह ही रहे थे कि राजपुत्री सीता राजमहल से बाहर आकर वहाँ उपस्थति हो गयीं। उनका शरीर सुन्दर वस्त्राभूषणों से सुसज्जित था। केश राशि में सुगन्धित पुष्प शोभा पा रहे थे। उन्होंने आगे बढ़ कर राजा दशरथ एवं राजा जनक; दोनों ही राजाओं का अभिवादन किया। उन्होंने श्री राम को भी आदर सहित प्रणाम किया।

65

सभी को अभिवादन करने के पश्चात श्रीराम तथा सीता पूर्ण प्रसन्नता सहित वर–वधू के ठहरने के स्थान

पर आए। उनकी शोभा दर्शनीय थी। अपना स्थान उन्होने ग्रहण कर लिया। सीता इस परिस्थिति में कुछ संकोच से लज्जा-सी अनुभव कर रही थीं, फिर भी आनंदपूर्वक और प्रसन्नता सहित वे राम के काफी निकट आ गयीं। निकट आने की इस स्थिति के संबंध में यदि कोई कुछ कहे तो बहुत अधिक उपयुक्त एवं उचित नहीं होगा।

66

रात्रि व्यतीत हुई। प्रातः काल का समय आ गया। सूर्यदेव का उदय हुआ। उसके पश्चात राजा दशरथ ने राजा जनक से अयोध्या लौटने के लिए आज्ञा मांगी। उन्होंने राजा जनक से कहा कि दोनों राजपुत्रों राम तथा लक्ष्मण सहित वे अयोध्या लौटने के इच्छुक हैं। देवी सीता भी राजा दशरथ के परिवार के साथ ही साथ अयोध्या नगरी के लिए प्रस्थान करने हेतु वहाँ उपस्थित हो गयीं।

67

अपने महांमत्री के साथ उन सभी लोगों ने यात्रा प्रारम्भ की। वे सभी रम्य बन-प्रदेशों के मध्य में होते हुए अयोध्या की ओर बढ़ रहे थे। अचानक ही मार्ग में उनकी भेंट एक साधु वेशधारी वीर पुरुष से हो गयी। इन साधु का रुप भय उत्पन्न करने वाला था। ताल वृक्ष की भाँति उनका शरीर लम्बा था तथा उनके कंधों पर धनुष-वाण सुशोभित था।

68

उनकी लम्बी दाढ़ी बिखरी हुई सी प्रतीत होती थी। वे लम्बी मूंछ ऐंठे हुए थे, जो उनके वीर योद्धा होने की परिचायिका भी थी। उनके बाल विधिवत बंधे हुए थे, जो जटा के रुप में शोभा पा रहे थे। उनकी जटाएँ लाल एवं पीले रंग की थीं। उनका नाम राम भार्गव था। उनसे बढ़कर इस पृथ्वी पर अन्य कोई दूसरा योद्धा नहीं था। वे सदैव ही युद्ध-क्षेत्र में जाने को सन्नद्ध रहते थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वे नृत्य कर रहे हों तथा युद्ध भूमि में आगे बढ़ रहे हों। उन के शब्द बहुत ही कठोर थे। वे मृदुल भाषा में कभी नहीं बोलते थे। किसी से भी वे बहुत सम्मान या प्रेम पूर्वक नहीं बोलते थे। इस प्रकार की शिष्टता उनके स्वभाव में ही नहीं थी।

69

उन्होंने राम को सम्बोधित करते हुए कहा – हे राम देव ! मेरा नाम भी राम ही है और यह जगत प्रसिद्ध है। यदि तुममें अलौकिक शक्तियाँ है तो मेरे समक्ष आकर मुझसे लोहा लो। यदि तुम मुझसे युद्ध करोगे, तो निश्चय ही युद्ध में मैं तुम्हारा वध कर दूंगा। यदि तुम वास्तव में दैवी शक्ति संपन्न हो तो मेरा धनुष चौड़ा

करके चढ़ा दो।

70

जब परशुराम ने इस प्रकार के वचन राम से कहे और नृत्य सा करते हुए उन्होंने राम को युद्ध के लिए ललकारा, तो इस भीषण संघर्षमय परिस्थिति को देखकर देवी सीता बहुत ही दुःखी हुईं। उस भयानक वीर वेषधारी मुनि को देखकर उनका शरीर काँपने लगा। उस समय राजा दशरथ ने परशुराम जी से बहुत विनम्रतापूर्वक प्रार्थना करते हुए निवेदन किया। राजा दशरथ को अपने पुत्रों से अपार प्रेम था तथा पुत्रवधू देवी सीता के प्रति भी उनके मन में बहुत मोह था। अतएव परशुराम से वे किसी भी संघर्ष को उचित नहीं समझते थे। वे संघर्ष को बचाना चाहते थे। उन्होने विनम्र स्वर में कहा।

71

हे जामदग्नि ! आप सम्पूर्ण संसार में सबसे अधिक शक्तिशाली माने जाते हैं। आपने बहुत से राजाओं की शक्ति को चूर-चूर कर दिया है। बहुत से राजाओं का आपने वध भी कर दिया है। क्या आप मेरे राजपुत्र राम से युद्ध करना चाहते हैं ? यह युद्ध उचित नहीं है, अतएव आप युद्ध के विषय में मत सोचिए। राम आपके समक्ष एक बालक है और आप सर्वशक्ति संपन्न हैं। एक शक्तिहीन बालक से युद्ध करना आपको शोभा नहीं देता है।

72

राजा दशरथ ने मुनि परशुराम जी से ये वचन कहे तथा प्रार्थना करते हुए उनसे यह भी कहा कि युद्ध उचित नहीं है। राम को भी सुझाव देते हुए उन्होंने कहा कि हे पुत्र राम ! मुनि परशुराम की बातों पर तुम्हें ध्यान नहीं देना चाहिए क्योंकि वे एक अभिमानी व्यक्ति हैं। वे बहुत ही समर्थ एवं गतिशील योद्धा भी हैं, इसी लिए बहुत से लोग उनकी दर्पपूर्ण बातों पर विशेष ध्यान नहीं देते हैं। अपनी शक्ति के कारण ही मुनि परशुराम दूसरे लोगों की शक्ति की ओर ध्यान भी नहीं देते हैं। उनका दृढ़ विश्वास है कि उनसे शक्तिशाली दूसरा योद्धा इस भूमंडल पर नहीं है। केवल एक वे ही सर्वशक्ति संपन्न हैं तथा विश्व-विजयी हैं।

73

उनका धनुष बहुत ही पूज्य है। उसकी महिमा भी महान है। यह धनुष बहुत बड़ा और लम्बा है। परशुराम जी ने राजपुत्र श्री राम को उसका वाण समर्पित किया और कहा हे राम ! तुम मुझसे अधिक बलशाली तभी सिद्ध हो सकते हो, युद्ध क्षेत्र में मुझे तभी परास्त कर सकते हो, मैं तुम्हारे प्रति अपना पूर्ण विश्वास तभी व्यक्त कर सकता हूं, जब मेरे धनुष पर तुम बाण चढ़ा दो। इन शब्दों को उन्होंने जान बूझकर कहा था। वे राम की शक्ति

की परीक्षा ले रहे थे।

74

हे राम देव !-तुम एक महान योद्धा हो। तुम युद्धवीर हो और अस्त्र–शस्त्र के प्रयोग में पूर्ण कुशल हो। यह मेरा विशाल धनुष अपने हाथों में लो। इसके साथ ही साथ में इस पर चढ़ाने के लिए तुम्हें बाण भी दे रहा हूं। धनुष राम के हाथ में आते ही एक विचित्र घटना सी हुई! शीघ्र ही राम ने उस विशाल धनुष पर बाण चढ़ा दिया। यह देखकर जामदग्नि की शक्ति क्षीण–सी हो गयी। उनका रंग पीला पड़ गया। वे यह देखकर मौन हो गये और आश्चर्यचकित–से रह गये।

75

हे राम भार्गव (परशुराम) ! क्या मैं आपको ही इस धनुष पर चढ़े हुए बाण का लक्ष्य बनाऊं आप कहें तो मैं यह भी कर सकता हूं। क्या आपकी गरदन मेरे बाण का लक्ष्य हो सकती है ? क्या आपके हृदय के भाग पर मैं बाण चला दूं ? यदि मेरी परीक्षा इसी प्रकार आप पूरी करना चाहते हों कि मैं अपने हाथों से आपका वध करु तो मैं अभी शर–संधान करने को उद्यत हूं। यदि आपकी अभिलाषा इस जगत में बहुत समय तक जीवित रहने की है तथा आप एक लम्बी अवस्था की कामना करते हैं, तो आपको मेरे समक्ष नत मस्तक होना चाहिए तथा मेरे प्रति अपनी श्रद्धा एवं भक्ति का परिचय देना चाहिए।

76

मुनि परशुराम राम की अलौकिक शक्ति को देखकर लज्जित हो गये। उनका मन व्याकुल हो उठा। वे किंकर्तव्यविमूढ़–से हो गये। वे अपने जीवन से बड़ा प्रेम करते थे। अपने इस प्रेम को राम के प्रति व्यक्त करते हुए उन्होंने कहा – मेरा पवित्र स्थान स्वर्ग भविष्य में मुझे अवश्य ही प्राप्त होगा। यह राजा इन्द्र के अधिकार में है क्योंकि वे ही स्वर्ग के अधिपति हैं। अतएव निश्चय ही आप बाण का संधान कीजिए तथा मुझे दृष्टि से ओझल कर दीजिये। ऐसा होने पर ही भविष्य में मैं इस स्थान पर न आ सकुंगा और भव–बन्धन से मुक्त हो सकूंगा।

77

यह कहकर मुनि परशुराम वहाँ से चले गये। वे अब राजपुत्र राम की ओर घूमकर देखने में भी लज्जा का अनुभव कर रहे थे। सम्पूर्ण सेना आनंद से झूम उठी। प्रसन्नता सूचक रव गूंज उठा। देवी सीता भी प्रसन्न दिखाई देने लगीं। अब उनके लिए भय एवं दुःख की परिस्थति पूर्णतः समाप्त हो चुकी थी।

78

इस प्रकार श्री भार्गव (परशुराम) राम से आश्वस्त एवं परास्त होने के पश्चात तपस्या के लिए वन में चले गये। राजा दशरथ इस स्थिति से बहुत प्रसन्न हुए। उन्होने अपने राजपुत्र राम को प्रेमालिंगन में बाँध लिया और अपने नगर की ओर आनंदपूर्वक प्रस्थान किया। तीव्रगति से उनके वाहन मार्ग में आगे बढ़ने लगे। जब दशरथ राजपुत्र राम, लक्ष्मण और पुत्र वधू सीता सहित अयोध्या नगरी में पहुंचे, तो अयोध्या नगरवासियों ने आनंद और उल्लास मनाते हुए उन सबका हार्दिक अभिनंदन किया तथा सभी ने उनकी अगवानी की।

अध्याय – 3

अध्याय - 3

1

जब महाराज दशरथ मिथिला से अयोध्या नगरी वापस लौट कर आ गये तो अयोध्या के सभी नर-नारियों-नागरिकों ने राजपुत्र श्री राम का हार्दिक अभिनंदन किया। इसका विशेष कारण यह भी था कि राम ने ऋषि-मुनियों एवं महर्षियों के तपस्या-स्थल से उनके शत्रु राक्षसों का संहार करके तपस्वियों को अभयदान दिया था तथा मुनि परशुराम जी, जो विश्व में सर्वश्रेष्ठ शक्ति संपन्न एवं पराक्रमी योद्धा माने जाते थे, को भी परास्त कर दिया था। अतएव नागरिकों के हृदय अपने राजपुत्र राम के इस अदम्य साहस और शौर्य के प्रति प्रशंसा से खिल उठे।

2

ऐसा कोई व्यक्ति इस जगत में नहीं हो सकता जिसके सभी प्रशंसक हों, परन्तु राम के सभी प्रशंसक थे। अयोध्या के सभी नगर निवासियों ने राजपुत्र राम की भूरि-भूरि प्रशंसा की। राम से अधिक शक्ति संपन्न उनकी दृष्टि में अन्य कोई राजा नहीं हो सकता था। राजा दशरथ के महामंत्री राम की गौरव-गाथा से आनंदमग्न होकर प्रसन्न हो गये। उन्होंने भी अत्यंत प्रसन्न होकर राम की गरिमा की प्रशंसा की। राम की शक्ति के प्रति जन साधारण में अब दृढ़ विश्वास उत्पन्न हो गया। सभी आशा करने लगे थे कि श्रीराम ही अयोध्या नगरी के सच्चे उत्तराधिकारी हैं। वे ही राज कार्य-भार भी संभालेंगे।

3

महाराज दशरथ को भी राम के इन महान कृत्यों से अपार प्रसन्नता हुई। अपना हर्षातिरेक राम के प्रति व्यक्त करते हुए उन्होंने अपने विचारों को भी स्पष्ट किया कि राम को ही अयोध्या नगरी का राजा होना चाहिए, भरत को नहीं। राजा के बार-बार यह कहने पर लोगों ने उनकी बात पर विशेष ध्यान दिया। बाद में सभी नागरिकों को इस संबंध में सूचित भी कर दिया गया। खबर फैल गयी कि शीघ्र ही राम को अयोध्या का राजा घोषित किया जायेगा।

4

भांति-भांति के उपहार एवं साज सज्जा की सम्पूर्ण सामग्री राम के राज्याभिषेक के लिए प्रस्तुत की गयी। वर्ण-वर्ण के अनेक साज-सामान बड़े मनोहारी थे। राम के राज्याभिषेक की तैयारियाँ भी लगभग पूरी हो चुकी थीं। राम के राज्याभिषेक के लिए एक विशेष रत्न जटित राज्य सिंहासन बनाया गया, ज़ो बहुमूल्य मणि और माणिक्यों से सुसज्जित किया गया। अभिषेक काल के लिए स्वर्ण घट भी तैयार किया गया और उसमें अभिषेक के लिए पवित्र जल भरा गया। गौओं के गोबर से पृथ्वी को लीप दिया गया, उसके पश्चात्

उसको सुगन्ध युक्त करने के लिए विभित्र प्रकार की सुगन्धित वस्तुयें बिखेर दी गई। यह कार्य बार-बार किया जाता रहा।

5

सुगन्धियुक्त धूप का धुआँ उठने लगा। यह सुगन्धियुक्त धूम्र वातावरण में चारों ओर आनंद बिखेर रहा था। सभी स्थानों को सुवासित किया गया। यह कार्य बड़े ही सुव्यवस्थित ढंग से किया गया। सुगन्धित धुआँ ऊपर वातावरण में उठने लगा। धूप दीप का इन्द्रधनुष चारों ओर सुगन्धि बिखेरने लगा। सुगन्धित पुष्प चम्पक आदि भी अपनी सुगन्ध से चारों ओर एक प्रकार का आन्नद-उल्लास बिखेर रहे थे। वायु के मन्द-मन्द झोकों से बड़ी-बड़ी तथा छोटी-छोटी सुन्दर पताकायें चारों ओर फहरा रही थीं।

6

श्री राम को राजा बनाने का अन्तिम निर्णय ले लिया गया और उनके राज्याभिषेक का समय निकट आ गया। यह उत्सव देखकर राजा की एक राजपत्नी को गहरी निराशा हुई। वे देवी कैकेयी थीं। उनकी यह अभिलाषा थी कि उनका पुत्र भरत ही राज्य का उत्तराधिकारी घोषित किया जाय। इसका कारण यह था कि जब कैकेयी राजा दशरथ की प्रार्थना पर ही दशरथ की राजपत्नी बनने को तैयार हुई थीं, उस समय राजा दशरथ ने कैकेयी को एक वचन दिया था। जन-साधारण को भी इस घटना की पूरी सूचना थी।

7

राम के राज्याभिषेक के अवसर पर भरत अयोध्या नगरी में उपस्थित नहीं थे। वे अपने नाना के यहां गये हुए थे। भरत अपनी माता कैकेयी के विचारों से अवगत नहीं थे। वास्तव में राजपत्नी कैकेयी राम के राज्याभिषेक की घोषणा को सुनकर विद्वेष की अग्नि में अचानक ही जलने लगी थी। कैकेयी को यह दृढ़ विश्वास था कि राजा दशरथ अवश्य ही दिये गये अपने वचनों का पालन करेंगे। अपनी राजपत्नी बनाने से पहले राजा दशरथ ने रानी कैकेयी से प्रार्थना करते हुए अपने वचनों को पूरा करने का उन्हें पूरा विश्वास दिलाया था, यह कैकेयी को स्मरण था।

8

शीघ्र ही अपने उद्देश्य की पूर्ति के लिए रानी कैकेयी राजा दशरथ के पास गयी। इससे राजा के कार्य में विघ्न उपस्थित हो गया। यह कार्य कैकेयी ने जानबूझ कर बाधा डालने के लिए ही किया भी था। कैकेयी ने राजा दशरथ से यह वचन मांगा कि राजपुत्र राम को वनवास दे दिया जाय और उनके पुत्र भरत को राजगद्दी पर

सुशोभित किया जाय। कैकेयी ने राजा के समक्ष अपनी यही इच्छा प्रकट की। राजा दशरथ कैकेयी के इन वचनों को सुनकर बहुत निराश हुए। अब वे एक बड़ी उलझन में पड़ गये।

9

राजा दशरथ अपने वचन के बहुत पक्के थे। अतएव कैकेयी को दिये गये अपने वचनों को पूरा करना उन्होंने अपना कर्तव्य समझा। उन्होंने श्री राम को वन-गमन की आज्ञा दे दी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे राम के प्रति राजा का प्रेम समाप्त हो गया था, क्योंकि राजा का यह व्यवहार राम के प्रति उचित नहीं कहा जा सकता। इस विषय में जन-साधारण का भी यही अनुमान था। वे सभी राजा के इस व्यवहार से बहुत निराश हुए। उनको इस व्यवहार से अपार कष्ट हुआ। अयोध्या के नागरिक होकर दुःखी होकर अत्यंत गहरी निराशा में डूब गये तथा दुखी हुए। सब लोग एकत्रित होकर साथ-साथ ही श्रीराम के पास गये।

10

उन्होंने राम से निवेदन किया कि हे राम ! बड़े ही आश्चर्य की बात है कि स्वयं महाराज दशरथ ने इस समय अपनी सहृदयता का परिचय नहीं दिया। उन्होंने आपके अच्छे चरित्र की ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। नगर निवासियों को इस संबंध में भरत के प्रति भी सन्देह उत्पन्न हो गया था। वे भरत को भी बहुत अच्छा नहीं समझते थे। राजपत्नी कैकेयी बहुत ही अस्थिर विचारों वाली राजपत्नी हैं, यह सभी बातें अयोध्यावासियों ने राम से जाकर कहीं। यहाँ तक कि वे सभी राम के साथ वन जाने के लिए भी तैयार हो गये। उन लोगों ने अब यही निर्णय कर लिया था कि वे राम का ही अनुगमन करेंगे। अयोध्या में रहने के लिए अब वे उत्सुक नहीं थे।

11

परन्तु राजपुत्र श्री राम अपने विचारों में अटल रहे। उन्होंने अपने पिता की आज्ञा शिरोधार्य कर ली थी। उसके बाद उन्होंने सभी नागरिकों से यह कहा कि हे मेरे भाइयों ! आप सब मेरे लिए दुःखी न हों। मैं तो निश्चय ही वन के लिए प्रस्थान करुगा और मेरे लिए यही महाराज दशरथ की आज्ञा भी है। महाराज दशरथ के इस आग्रह को मैं अपने ऊपर उनका अनुग्रह ही मानता हूं। प्रत्येक पुत्र का यह कर्तव्य है कि वह अपने पिता की आज्ञा का पूरी तरह पालन करे।

12

अब महाराज दशरथ ने मेरे वन-गमन के संबंध में घोषणा कर दी है। उन्होंने उत्तर, दक्षिण आदि सभी दिशाओं में सूचना भी भेज दी है। महाराज दशरथ सभी की रक्षा करने वाले हैं। वे आप सभी का पालन-पोषण

करना भी अपना कर्तव्य समझते हैं। उन्होंने अपने सभी राजपुत्रों की अनेक भयावह परिस्थितयों में सहायता की है। इस प्रकार महाराज दशरथ सभी के पोषक हैं। उनकी किसी भी आज्ञा से मैं कभी पीछे नहीं हट सकता। मैं उनकी अवज्ञा की अपेक्षा मृत्यु का वरण करना अधिक श्रेयस्कर मानता हूं। मैं अपने पिता की आज्ञा का कभी भी उल्लंघन नहीं क़र सकता।

13

आप सभी नागरिकगण अयोध्या नगरी वापस लौटने की कृपा करें। आप मेरे कारण किसी प्रकार का भी कष्ट न उठायें। अब मेरा छोटा भाई भरत राज्य का कार्य भार संभालेगा। वह आपकी सेवा में सदैव प्रस्तुत रहेगा। आप लोग किसी प्रकार के भ्रम में मत पड़ें। चाहे मैं अयोध्या नगरी का राजा बनूं अथवा मेरा छोटा भाई यहाँ का राजा बनकर राज्यभार संभाले, आप लोगों को कोई कष्ट न होने पायेगा। आप लोग महाराज दशरथ के पास जाकर उन्हें पूरी सान्त्वना दीजिए। उनके ह्रदय को भी इस परिस्थिति से अपार कष्ट हो रहा है।

14

श्री राम नागरिकों से इस प्रकार प्रेमपूर्वक निवेदन भी कर रहे थे और स्वयं वन–गमन के लिए भी तैयार हो रहे थे। वन में उनके साथ प्रस्थान करने के लिए उनके छोटे भाई लक्ष्मण भी प्रस्तुत थे। देवी सीता भी राम का अनुगमन करना चाहती थी। उनके राज्य के महामंत्री तथा अन्य मन्त्रियों ने वन में जाने से उन्हें रोकने का प्रयास किया। यह सव प्रयत्न इसलिए किए जा रहे थे कि राम अयोध्या के राजा बनें। यही उन सबका उद्देश्य भी था। बाद में प्रेमवश उन्होंने राम के साथ उनके अनुगमन का निश्चय किया।

15

तत्पश्चात राम अयोध्या छोड़कर तमसा नदी के तटवर्ती वन–प्रदेश में पहुंच गये। यह प्रदेश भी बहुत ही सुन्दर था। दिन समाप्त होने पर रात्रि में वे उसी भयानक जंगल में पृथ्वी पर लेट कर विश्राम करने लगे। उस समय उनके साथ उनकी सेना भी थी। उनके साथ के सभी लोग वहाँ सो गये। दूसरे दिन प्रातःकाल सबसे छिपकर चुपचाप राम ने शीघ्र ही वहाँ से दूसरे स्थान के लिए प्रस्थान कर दिया और वे आगे बढ़ गये।

16

इस समय केवल राजपुत्र श्री लक्ष्मण और सीता ही राम के साथ थे। उस समय कोई भी व्यक्ति उनके इस प्रस्थान के विपय में कुछ भी नहीं जानता था। वे चुपके–चुपके ही छिप कर आगे बढ़े और दृष्टि से ओझल हो गये। जव उनके सेवक प्रातःकाल सोकर उठे तो उन सेवकों के दुःख और आश्चर्य की सीमा न रही। मंत्रीगण भी

इस घटना से बड़ी उलझन में पड़ गये। राम बिना किसी को सूचित किये हुए ही, सभी को सोता छोड़कर, चले गये थे। राम किस ओर गये थे, इस विषय में भी किसी को कोई जानकारी न थी।

17

ऊंचे स्वरों में रुदन करते हुए वे सभी उस वन में इधर-उधर राम को ढूंढने लगे। वे एक दूसरे से सहायता की प्रार्थना करते हुए अपना दुःख प्रकट करने लगे। उनकी समझ में ही नहीं आ रहा था कि राम को कहाँ ढूंढा जाय। राम तो बिना किसी सूचना के ही उन्हें सोता छोड़कर कहीं अरगत दिशा की ओर चले गये थे। अन्त में निराश होकर वे सभी लौटकर अयोध्या नगरी वापस आ गये। उनके साथ उनकी भावनाऐं एवं कल्पनायें ही नहीं लौट सकीं। वे तो सदैव ही श्रीराम के साथ थीं। अयोध्यावासियों के भौतिक शरीर ही अयोध्या नगरी में वापस आ चुके थे, उनका ह्रदय तो राम के ही साथ था।

18

बाद में राजा दशरथ के महामंत्री ने बहती हुई नदी के जल से अपना मुख धोया। उन्होंने हर प्रकार से अपने मन को बहलाने की पूरी चेष्टा की, परन्तु उनके ह्रदय को किसी उपाय से भी शान्ति नहीं मिली। उनका दुःख और अधिक दारुण होता जा रहा था। वे पूरे मार्ग केवल राम के विषय में ही सोचते - सोचते अयोध्या नगरी वापस लौट आये। अयोध्या नगरी लौटने के पश्चात उन्होंने देखा, जैसे सारा संसार सूनेपन के वातावरण में डूब गया है! उनको ऐसा भी अनुभव हुआ कि उनका भी ह्रदय सूनेपन से परिपूर्ण है।

19

तत्पश्चात महामंत्री राजमहल में अन्दर गये। वे राजा दशरथ के पास गये और उनसे मिले। जब राजा दशरथ ने महामंत्री को अकेला ही अपने पास देखा, तो वे भ्रम में पड़कर मूर्छित हो गये। महामंत्री भी वन से बिना राम को साथ लाये ही वापस अयोध्या आ गये थे। श्री राम को वापस लौटाने में वे पूर्णतः असफल रहे। राजा दशरथ का हृदय यह दृश्य देखकर विदीर्ण हो गया। बार-बार वे राम के वियोग में दुःखी हो-होकर उनका स्मरण करते थे। इस प्रकार उनको अपार कष्ट का अनुभव हो रहा था।

20

पहले राजा दशरथ एक बहुत ही सम्माननीय राजा के रुप में प्रसिद्ध थे। चारों ओर उनके गुणों के कारण उनकी प्रशंसा हो रही थी। वे कभी भी भ्रम में नहीं पड़ते थे। उनका मन एवं स्वभाव शान्त था। उनके हृदय मे चाहे जितना भी कष्ट क्यों न हो, उसको छिपाने में वे पूर्ण समर्थ थे। बड़े संयम से वे उसको सहन कर सकते

थे। वही राजा दशरथ राम के वियोग में इतने कातर और दुःखी हो गये थे कि अब उनके पास सन्तोष नाम की कोई वस्तु ही न थी। अब वे शक्तिहीन से हो गये थे। उनकी स्मरणशक्ति भी क्षीण हो गयी थी। उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व ही लड़खड़ा गया था। वे एक साधारण पुरुष की भाँति राम के वियोग में दुःखी हो रहे थे।

21–22

भोजन करने की भी अब कोई अभिलाषा नहीं रह गयी थी। जो वस्त्राभूषण राजा के रुप में वे अपने शरीर पर धारण किये हुए थे, उन्हें भी उन्होंने उतार दिया था। अब कोमल वस्त्र उनके शरीर पर सुशोभित नहीं थे। सभी प्रकार के आभूषण उन्होंने शरीर से उतार कर अलग रख दिये थे। कहाँ–कहाँ उनके विचार जा रहे थे और किन–किन क्षेत्रों में उनकी कल्पनायें विचरण कर रही थीं, इसका भी उनको अब पूरा बोध नहीं था। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे वे अब कारावास का जीवन व्यतीत कर रहे हों। कभी–कभी वे घबराकर उद्यान की ओर जाते। वहाँ अनेक प्रकार से वे अपने हृदय को सन्तोष देने व बहलाने की चेष्टा करते थे। ज्यों–ज्यों उनका दुःखमय जीवन व्यतीत होता गया, उनके हृदय का अपार कष्ट और भी बढ़ता गया। वे राम की विरहाग्नि में अत्यंत दुःखी होकर जलने लगे। उनके जीवन में पूर्ण निराशा छा गयी थी। अब रम्य उद्यान के प्रफुल्लित पुष्प उनके हृदय को किसी भी प्रकार से प्रसन्न करने में असमर्थ थे। राजा को कोमल पुष्पों में भी अब कोई आकर्षण नहीं रह गया था। वे फूल सचमुच इतने आकर्षक थे कि राम के वियोग में संतप्त उनके हृदय के लिए औषधि की भाँति उपचार स्वरुप हो सकते थे तथा हृदय को शान्त कर सकते थे। पर राजा के लिए वे भी व्यर्थ ही रहे। राजा दशरथ पुष्प के उद्यान से वापस लौट आये। वे अब गहरी रुग्णावस्था में थे। वे शक्तिहीन होने के कारण पृथ्वी पर गिर कर मूर्च्छित हो गये।

23

एक समय था जब राजा दशरथ केवल कोमल शय्या पर ही विश्राम करते थे। बह शय्या बहुत ही सुखदायक एवं शीतलता प्रदान करने वाली होती थी। उनके सुन्दर शरीर पर विभिन्न जड़ी–बूटियों के सुगंधित लेप तथा चन्दन के लेप आदि शोभा पाते थे। वही सुगंधित लेप अब उन्हें रुचिकर नहीं थे। वे लेप आदि अब उनके शरीर को शीतलता प्रदान नही कर पा रहे थे वरन् ये सभी वस्तुएँ अब शीतल होने पर भी उन्हें उष्णता का आभास देती थीं। सभी अनुकूल वस्तुएँ प्रतिकूल सी प्रतीत होती थीं। इस प्रकार अत्यन्त विरह कातर होकर राजा दशरथ ने राम के वियोग में अपना पार्थिव शरीर छोड़ दिया।

24

चिल्ला–चिल्लाकर घोर रुदन करती हुई घबराई हुई राजपत्नियां शोकाकुल होकर विलाप करने लगीं। उनकी केशराशि बिखर गयी थी। दुःख के कारण शोकातुर अवस्था में उनके बाल सन्तुलित न रहकर बिखर

गये थे। राजा के वियोग में उनको अपने शरीर की सुध–बुध भी नहीं थी। मणि माणिक्य, अन्य स्वर्ण आभूषण अंगूठी आदि सभी सज्जा एवं श्रृंगार के आभूषण पृथ्वी पर गिर गये थे। सभी राज पत्नियाँ राजा दशरथ के मृत शरीर का बार–बार आलिंगन करती रहीं और पृथ्वी पर गिर–गिर कर लोट रही थीं। शोकाकुल होकर वे राजा का निरन्तर गुणानुवाद करती हुई विलाप कर रही थीं।

25

राजा के निधन का समाचार पाकर राज्य के उच्च राज्याधिकारी, महामंत्री तथा अन्य सभी लोग राजमहल में एकत्रित हो गये। राजपुत्र भरत भी राजा दशरथ की मृत्यु का समाचार सुनकर शीघ्र ही अयोध्या वापस लौट आये। उनको वहाँ बुलाया गया था। आने पर उन्होंने राजमहल को सूना–सूना देखा। सभी वस्तुएँ जैसे कांतिहीन सी लगीं। उन्हें सभी लोग निष्प्राण से दिखायी दिये। सर्वत्र शून्य सा प्रतीत होने लगा। उन्हें कुछ ऐसा आभास हो रहा था, जैसे किसी मालवाहक जलयान का लंगर टूट गया हो। इसीलिए व्यापार की वस्तु ए उससे बाहर ले जाने की संभावना समाप्त हो गयी थी। जलयान जलमग्न हो रहा था।

26

धड़कते हृदय से राजकुमार भरत ने राजमहल में प्रवेश किया। शोकाकुल परिवार के लोग तीव्र स्वर से रुदन कर रहे थे। वे विलाप करते हुए राजा दशरथ के गुणों का वर्णन भी कर रहे थे। उन्होंने आते ही आते पूरी परिस्थिति का पता लगाते हुए राजा दशरथ की रुग्णावस्था से लेकर मृत्यु तक का पूरा हाल पूछा। उनकी माता ने अपने पुत्र को आदि से अन्त तक का वृतान्त संकेतात्मक रुप में बता दिया। इसको सुनकर भरत का ह्रदय विदीर्ण हो गया।

27

जब राजपुत्र भरत को राजा दशरथ की मृत्यु के विषय में पूरा समाचार ज्ञात हो गया, तो वे अपनी माता राजपत्नी कैकेयी से बहुत ही अप्रसन्न हो गये। उन्होंने कैकेयी के समक्ष आकर यह कहा "हे माता तुम बहुत ही क्रूर एवं कठोर हो। तुम्हारे हृदय में करुणा एवं दया का कोई स्थान नहीं है। तुम्हारा हृदय बुराइयों से परिपूर्ण है। तुमने राजा दशरथ के मार्ग में अनेक बाधाएँ उपस्थित कीं। उनके सभी कार्यों को तुमने असफल कर दिया। तुम मौन एवं शान्त होकर उनके कार्यों को सहन न कर सकीं, जिसका स्पष्ट परिणाम यह हुआ कि मेरे पिता राजा दशरथ का शरीरान्त हो गया।

28

राम, लक्ष्मण और सीता तीनों के भयानक जंगलों में भटकने से मुझे क्या लाभ होगा ? वन प्रदेश बड़ा ही भयावह भी है। यदि तुम अयोध्या में ही शान्तिपूर्वक बनी रहतीं, तो क्या तुम्हारी प्रसन्नता में किसी प्रकार की कमी आ सकती थी ? आज तुमने स्वयं इतनी भीषण परिस्थिति उत्पन्न कर दी है कि तुम्हारे कारण हम सबकी मृत्यु भी हो सकती है। हम आज एक विकट और दुःखमय स्थिति में हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि तुम तो इस संसार का संहार करने के लिए ही प्रस्तुत हो। तुम्हारे हृदय में किसी के लिए भी करुणा का भाव नहीं है।

29

मुझसे तुमने राजा बनने के लिए कहा है। क्या इस प्रकार राज्य प्राप्त करना उचित है ? जिस कार्य से इतनी संघर्षमय परिस्थिति उत्पन्न हो जाय और जो सम्पूर्ण मानव समाज को अवनति की ओर ले जाने वाला तथा हम सबके नाम को कलंकित करने वाला हो वह कार्य निन्दनीय है। मुझे ऐसा लगता है कि तुमने मेरा पूर्ण अधःपतन कर दिया है। मैं राजपुत्र लक्ष्मण से बहुत पीछे छूट गया हूं। उन्होंने श्री राम का अनुगमन किया है। राम के प्रति उनका भक्तिभाव अटल है। उन्होंने राम के मार्ग में कोई भी बाधा प्रस्तुत नहीं की वरन सदैव उनका पथ प्रशस्त किया।"

30

भरत यह सब बातें कैकेयी से कह रहे थे। उन्होंने अपनी माता कैकेयी को दशरथ की मृत्यु का कारण मानकर उन्हें बहुत भला-बुरा कहा। उन्होंने यह भी स्पष्ट कर दिया कि राम के रहते वे कभी भी अयोध्या का राज्य पाने की अभिलाषा नहीं रखते हैं। उन्होंने कहा कि अपने बड़े भाई के प्रति पूरी तरह स्वामिभक्त रहना मेरा परम कर्तव्य है। उस समय उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। वे बहुत निराश एवं दुःखी थे। तत्पश्चात उन्होंने राजा की मृत्यु के कष्ट को सहन करते हुए स्वयं को पूर्णतः सन्तुलित करने की चेष्टा की।

31

अयोध्या के सभी नागरिकों तथा अन्य राजपत्नियों ने उनको सुझाव देते हुए आग्रह किया कि राजपुत्र भरत अब बहुत दुःखी न हों। वे पवित्र और निर्मल हृदय से परिस्थिति का सामना करें। अपने पवित्र विचारों के आधार से सभी को सन्तोष प्रदान करें। इस सम्पूर्ण सृष्टि का आधार ही यही है कि प्रत्येक जीवधारी की मृत्यु निश्चित है। मानव शरीर इस जगत में नश्वर है। इस सत्य की ओर भरत का ध्यान सभी ने बार-बार दिलाया। अन्त में उनका कष्ट कुछ कम हुआ और वे शान्त हो गये।

32

उन्होंने अपने राज्य के नागरिकों एवं पूज्य गुरुजनों को बुलाकर कहा कि राजा दशरथ के शव का विधिवत दाह–संस्कार किया जाय। अपने आपको पवित्र कर राजा का श्राद्ध–संस्कार चन्द्रोदय से पूर्व ही किया जाना चाहिए। यह सभी संस्कार पूरी तरह पूर्ण करने के पश्चात भरत ने राम के पास जाकर उनसे मिलने का दृढ़ निश्चय किया। अपने बड़े भाई राम के प्रति उन्हें प्रगाढ़ प्रेम था तथा वे उनके पूरे अनुयायी थे। राम के प्रति वे इतने वफादार थे कि उनकी आज्ञा का पालन करना अपना कर्तव्य समझते थे। वास्तव में भरत का यह आदर्श सभी लोगों के लिए अनुकरणीय था।

33

गज, अश्व, रथ आदि सेना साथ चली। भरत के साथ चलने के लिए भी नागरिक व राजपुत्र तैयार किये गये। भरत शीघ्र ही चलने के लिए उद्यत हो गये। जब सभी लोग वन प्रदेश में पहुंच गये तो गज, अश्व तथा रथों को एक स्थान पर खड़ा कर दिया गया। उन्होंने श्री राम को वन–प्रदेश में स्थान–स्थान पर ढूंढना प्रारम्भ किया।

34

तमसा नदी के किनारे स्थित तटवर्ती वन–प्रदेश का मार्ग बहुत ही कठिन था। वहाँ पर मार्ग ढूंढकर रास्ता चलना कोई साधारण काम नहीं था। वहाँ पर एक घना जंगल भी था, जिसमें सदैव ही गहरा अंधकार रहता था। वहाँ पहुंचना बहुत ही कठिन था। उन जंगलों में गहरी–गहरी गुफाएँ भी थीं। वहाँ की नदियाँ एवं उनकी घाटियाँ बहुत गहरी थीं और बहुत ही भयावह भी थीं। वहाँ का वातावरण बहुत ही डरावना था। मार्ग में स्थान–स्थान पर बड़ी–बड़ी बाधाएँ उपस्थित हो रही थीं परन्तु राजपुत्र भरत के मन में किसी प्रकार का कोई डर नहीं था। वे अपने बड़े भाई राम को निरन्तर बन–प्रदेश में ढूंढते हुए आगे बढ़ते चले जा रहे थे।

35

परन्तु जिन राम की खोज निरन्तर की जा रही थी उनको वन में पाना बहुत ही कठिन था। भरत राम की खोज में आगे बढ़ते ही गये। अन्त में उन्हें देव नदी गंगा का तट दिखायी दिया। यह नदी पवित्रता की प्रतीक मानी जाती थी। गंगा नदी जगत प्रसिद्ध देव सरिता है। इसका जल नव उज्ज्वल हीरकहार की भाँति श्वेत वर्ण का था। चन्द्रकान्त मणि की भाँति गंगा का जल निर्मल, स्वच्छ एवं श्वेत था। उसी प्रकार राजपुत्र भरत का हृदय भी निर्मल, स्वच्छ एवं पवित्र था, जो अपने बड़े भाई राम के प्रति पूरी तरह समर्पित था।

36

जहाँ पर पड़ाव डाला गया था वहाँ भी एक बड़ी नदी बह रही थी। वह भी बहुत ही प्रसिद्ध थी। उस नदी का नाम यमुना था। उसका जल हरा था तथा बहुत साफ था। बाद में दोनों नदियों–गंगा तथा यमुना का संगम मिला। नदियों का संगम पवित्र मिलन का ही प्रतीक़ था। गंगा का जल स्वच्छ और श्वेत वर्ण का था और यमुना का जल हरीतिमा बिखेर रहा था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे देव विष्णु तथा शिव का मिलन हो गया हो।

37

वहाँ संगम पर पड़ाव डालने के पश्चात उन्हें कई अन्य ऋषि–मुनियों के आश्रम दिखायी दिये। वहाँ ऋषियों का तपस्या स्थल भी था। वह स्थान आनंददायक तथा हृदय को लुभानेवाला था। पता चला कि वह स्थान ऋषि भरद्वाज का आश्रम था।

संध्या हो रही थी। दिवस का अवसान हो चुका था। सन्ध्याकाल वातावरण में छा गया था। उस समय महर्षि भरद्वाज तथा उनके शिष्यगण राजपुत्र भरत का स्वागत करने के लिए उनके समक्ष आकर उपस्थित हो गये।

38

अपनी दैवी शक्तियों से भरत का स्वागत करने के लिए ऋषि भरद्वाज ने भाँति भाँति की वस्तुएँ उपहार के रुप में प्रस्तुत कीं। अचानक ही वहाँ पर पारिजात वृक्ष सामने दिखायी दिया। यह वृक्ष अत्यन्त सुन्दर एवं दैवी शक्तियों से संपन्न था। वे सभी वस्तुएँ वहाँ प्रस्तुत की गयीं, जिनकी सदैव ही इच्छा की जाती थी। वह सभी उपहार देखने में बड़े ही लुभावने थे। इस प्रकार यह उपहार भरत के प्रति विद्वान पंडितों की एक भेंट थी। आश्चर्य की बात तो यह है कि दैवी शक्ति का गौरव भी तपस्या का ही फल था, जो सभी प्रकार के आनंद, सुख एवं प्रसन्नता को प्रदान करने की सामर्थ्य रखता था।

39

देवांगनाएं अप्सराओं के साथ स्वर्ग लोक से उतर कर पृथ्वी तल पर आ गयीं। उन्होंने राजपुत्र भरत आदि सभी अतिथियों का मन बहलाया, जिससे उन्हें अपार आनंद प्राप्त हुआ। उन्हें देखकर सभी अतिथि आश्चर्यचकित से रह गये। वे अप्सराएँ बाँसुरी बजा रहीं थीं। गीत और नृत्य, बॉसुरी–वादन तथा वीणा के स्वर वातावरण में गूंज उठे। सभी अतिथि इन्हें सुनकर आनंदमग्न हो गये। इसीलिए उन्होंने उस आनन्दस्थल पर रात्रि व्यतीत करने का निश्चय किया।

40

दूसरे दिन प्रातः काल शीघ्र ही भरत राम को ढूंढने के लिए वहाँ से चल पड़े। अपनी सेना के साथ वे एक पवित्र सरोवर के तट पर आये, जिसका नाम मन्दाकिनी था। इसके बाद तुरन्त ही उनकी दृष्टि वहाँ एक तपस्वी पर पड़ी, जो नग्न था। उसके शरीर पर कोई वस्त्र नहीं था। वह वन में तपस्वी का जीवन व्यतीत कर रहा था। उस तपस्वी से भरत की भेटं हुई। उन्होंने ही भरत को राम के निवास–स्थल की पूरी जानकारी दी।

41

एक बहुत ही सुन्दर पर्वतीय स्थान है, जिसका नाम चित्रकूट है। यह क्षेत्र भयावना है। इसका विस्तार बहुत अधिक है परन्तु यह स्थल हृदय को आकर्षित करने वाला है। वहीं पर पर्णकुटी बनाकर राम निवास करते हैं। श्री भरत इन शब्दों को सुनकर बहुत प्रसन्न हुए। जैसे ही भरत को राम के विषय में पूरी सूचना मिली, शीघ्र ही वे उस दिशा की ओर चल पड़े। अपनी सम्पूर्ण सेना के साथ वे उस भयानक पर्वतमाला पर चढ़कर वहाँ जा पहुंचे।

42

अब वे लगभग उस स्थान तक पहुंच ही गये थे, जहाँ राम ने अपनी पर्णकुटी बनायी थी। जब लक्ष्मण ने भरत को उस स्थान पर सेना सहित आते देखा तो उनके मन में अनिष्ट की आशंका उत्पन्न हो गयी। उन्होंने सोचा कि कोई शत्रु सदलबल उन पर आक्रमण करने के लिए आ रहा है। उन्होंने शीघ्र ही अपना धनुष संभाला तथा युद्ध के लिए प्रस्तुत होकर युद्ध के वस्त्र धारण कर लिये। वे बड़ी कुशलता से युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये। उनकी भौंहें कुटिल हो गयीं। कुटिल भौंहों से उनके क्रोध का संकेत मिलने लगा। उनके मस्तक पर रेखायें उभर आयीं जो उनके क्रोध को व्यक्त कर रही थीं।

43

तत्पश्चात उन्होंने देखा कि शत्रु के हाथ मे कोई अस्त्र–शस्त्र नहीं हैं, न तो कोई रणवाद्य ही है, न ही कोई ऐसा अन्य संकेत है, जो युद्ध का परिचायक हो। केवल गज, अश्व और रथ ही बड़ी संख्या में शब्द करते हुए आगे बढ़ रहे थे। जैसे–जैसे वह सेना उनके निकट आती गयी, उन्हें परिस्थिति स्पष्ट होती गयी। बाद में उन्होंने अपना धनुष–बाण रख दिया। वे शीघ्र ही अपने बड़े भाई राघव राम को सूचना देने के लिए आगे बढ़े।

44

भरत भी शीघ्र ही वहाँ आकर उपस्थित हो गये। आगे बढ़कर उन्होंने राम को प्रणाम किया। उनकी

सेना ने भी राम का अभिवादन किया। भरत ने राम को राजा दशरथ की मृत्यु की सूचना दी। दुःखी होकर वे सभी एक साथ रुदन करने लगे। सभी को इस घटना से अपार कष्ट हो रहा था। कुछ समय के पश्चात सभी ने धैर्य धारण किया और इस दुःख को सहन कर लिया। अपने-अपने मुख धोने के पश्चात सब ने स्नान किया और मन को शान्त किया।

45

जब राजपुत्र श्री राम ने अपना मुंह धो लिया तो उन्होंने कहा "हे मेरे छोटे भाई भरत ! तुम अयोध्यापुरी वापस लौट जाओं। हे भरत ! तुम्हें अयोध्या में ही रहना चाहिए, यही हमारे पिता राजा दशरथ की आज्ञा भी थी। पिता के ही वचनों का पालन करने के लिए में वनवास कर रहा हूं। अन्य किसी बात की संभावना करना अब उचित नहीं है। अब तुम्हें ही राजा दशरथ के उत्तराधिकारी के रुप में राज्य का कार्यभार संभालना चाहिए। अतएव इस संबंध में तुम्हें बिना किसी भ्रम के राज्य ग्रहण कर लेना चाहिए तथा प्रजा का पालन करना चाहिए।

46

इसके साथ ही एक शुभ लक्षण भी है तुम एक महान चरित्रवान व्यक्ति हो। तुम्हारे कार्य एवं विचार भी उत्तम हैं। यदि तुम्हारे गुणों की प्रशंसा करते हुए उनकी गणना की जाय, तो उनकी गणना कभी भी समाप्त नहीं हो सकती है। तुम एक प्रवीर हो। तुम्हें शास्त्रों का बहुत अच्छा ज्ञान भी है और तुम राज्य की सभी गतिविधियों को भलीभाँति समझते हो इसी लिए तुम राजा बनने के सर्वथा योग्य हो। यदि तुम राज्य की सुरक्षा का भार अपने ऊपर लेकर उसकी सेवा करोगे, तो सभी को बहुत आनंद एवं लाभ होगा। तुम्हारा चरित्र आदर्श है। इन सभी गुणों के होते हुए भी यदि तुम अपनी गरिमा से कुशल शासक एवं राजा बनकर प्रजा को समृद्ध और वैभवशाली नहीं बनाते, तो तुम्हारे इन अपार गुणों से क्या लाभ है ?

47

तपस्वी ने भरत से कहा कि तुम राज्य प्राप्त करके राजा होने के लिए सर्वथा योग्य हो तथापि तुम राजा बनने से संकोच कर रहे हो और इसके लिए प्रस्तुत नहीं हो रहे हो। यद्यपि मैं वनवासी हूं परन्तु सभी परिस्थितियों पर विचार करते हुए मैं आपसे कुछ निवेदन करना चाहता हूं, आप मेरे शब्दों पर अवश्य ही ध्यान देने की कृपा कीजिए। मैं आपसे यह आशा करता हूं कि आप सदैव ही अपने बड़े भाई राम के प्रति स्वामिभक्ति का पूरा परिचय देते रहेंगे। आपके लिए यह बहुत आवश्यक है कि आप शीघ्र ही अयोध्यापुरी लौटने की कृपा करें। मेरा आपसे अनुरोध भी है कि अब आप और अधिक दुःखी न हों। राजमहल की रक्षा करना आपका प्रथम कर्तव्य है। आप मेरे शब्दों पर ध्यान देकर अयोध्या वापस लौट जाइए।

48

श्री राम ने भरत से प्रेमपूर्वक सभी बातें स्पष्ट रुप में कह दीं। उनका हृदय निर्मल एवं पवित्र था। राम ने भी अपने पिता के वचनों का पालन कर उनके प्रति अपनी स्वामिभक्ति एवं श्रद्धा का पूरा परिचय दिया था और राजा दशरथ के वचनों की रक्षा की थी। भरत से भी वही आशा करते हुए राम ने आग्रह किया कि वे अयोध्या शीघ्र ही लौट जायें और वहाँ के राजा बनें। उन्हें कभी भी भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। श्री भरत को भी अपने बड़े भाई राम से अपार श्रद्धा और प्रेम था। उनके वचनों को सुनकर भरत ने उनसे कहा –

49

मैं राजमहल में रहकर आनंद और वैभव का जीवन व्यतीत करु और आप वनों में रहकर अथाह कष्ट झेलते हुए अपना जीवन व्यतीत करें। यह ठीक है क्या ? इसे स्वीकार करना संभव नहीं है। इससे मेरे हृदय में गहरी करुणा एवं पीड़ा उत्पन्न होती है। आप ही राजा बनने के सर्वथा योग्य हैं। आप इस सम्पूर्ण जगत के संरक्षक वन सकते हैं। आप बहुत ही योग्य एवं अनुभवी तथा शक्ति संपन्न हैं। आपका चरित्र भी महान है। आप युद्धवीर के रुप में जगत प्रसिद्ध हैं।

50

हे भाई भरत ! तुम इस बात पर पूरी तरह विचार करो कि अश्व, गज, सुवर्ण और मणि माणिक्य तुम्हीं को शोभा देते हैं। यह सभी वस्तुएँ राजाओं के लिए ही हैं। तुम राजा हो। क्या हम सब वनवासियों के लिए ऐसी वस्तुओं का प्रयोग करना उचित होगा ? बड़े–बड़े उच्च राज्याधिकारी, मंत्री आदि का साथ रहना तभी संभव होता है जब कोई व्यक्ति राजा के पद पर आसीन हो। इसलिए मैं आशा करता हूं कि तुम मेरी उचित राय मानकर अयोध्या लौट जाओगे। प्रसन्नतापूर्वक अयोध्या नगरी के राज्य का कार्य संभाल कर वहाँ के राजा बनो।

51

वन प्रदेश में वनवास करते हुए हम सबको कोई विशेष काम भी नहीं है। तुम्हारा जीवन गंगा की भाँति पवित्र, सूर्य की भाँति तेजपूर्ण, सुमेरु पर्वत की भाँति उच्च, हिमालय की भाँति महान तथा सागर की भाँति विशाल एवं गंभीर है। हम सब तुम्हारी शक्ति के प्रशंसक हैं। तुम्हारा जीवन बहुत ही महत्वपूर्ण है। यह सभी बातें भले ही तुम्हें विधिवत स्पष्ट न हों पर हैं सत्य ही। तुम कहते हो कि वापस जाना असंभव है। सभी बातों को तुम अस्वीकार कर रहे हो और सारे प्रयत्नों को भी व्यर्थ कर रहे हो, इस प्रकार जानबूझ कर भी कष्ट उठा रहे हो।

52

इस प्रकार जब भरत ने बहुत आग्रह पूर्वक सभी बातें कहीं, तो राम ने भी उनको स्पष्ट उत्तर देते हुए समझाया। यह भी कहा जा सकता है कि राम को उत्तर देने के लिए विवश होना पड़ा। राम ने कहा, हे भाई भरत ! तुम शीघ्र ही अयोध्या पुरी वापस लौट जाओ। वहीं जाकर राज्य करो। यदि तुमको राजा बनने में भी किसी प्रकार का संकोच है, तो मेरे स्थान पर मेरे प्रतिनिधि के रुप में मेरी चरण – पादुकाओं को प्रतिष्ठित कर दो।

53

इस प्रकार तुम सम्पूर्ण प्रजा की रक्षा करने के लिए पूर्ण शक्तिशाली बन कर शक्ति के प्रतीक बनो। सभी क्षत्रियों के लिए पूर्ण अनुशासन की व्यवस्था करो। इन सबकी सुरक्षा का उत्तरदायित्व तुम्हीं को वहन करना चाहिए। अच्छे-अच्छे विचारों एवं सदुपदेशों को ग्रहण करना चाहिए। तुम सदैव ही शास्त्रों का विधिवत अध्ययन करते रहो, पवित्र एवं उत्तम ग्रंथों के सभी शब्दों पर पूरी तरह विचार करना चाहिए, उन्हें ग्रहण करना चाहिए। इसी से अंततः सुख-समृद्धि की प्राप्ति होती है।

54

हे भरत ! तुम्हें देवगृहों, औषधालयों तथा अन्य पवित्र स्थानों को जनहित के लिए निर्मित करवाना चाहिए तथा उनकी पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। सुवर्ण अर्थात राज्य में धन वैभव की वृद्धि करनी चाहिए। राज्य की सुरक्षा के लिए भलीभाँति धनसंचय करना भी बहुत ही आवश्यक है। तुम अपनी इच्छाओं एवं आकांक्षाओं के आधार से आनंद तथा सुख-समृद्धि का भोग करो। जन साधारण को भी सुख पहुंचाना तुम्हारा कर्तव्य है। इसी को वास्तव में धर्म का आचरण करना कहा जाता है। धन का प्रयोग सदैव ही उचित प्रकार से किया जाना चाहिए जिससे जन जीवन भी प्रसन्नन एवं आनंद का अनुभव कर सके। जन समूह भी आनंदपूर्वक अपना जीवन व्यतीत करते हुए जीवन के लक्ष्य को साकार कर सकें।

55

पवित्र एवं चरित्रवान व्यक्तियों की सदैव ही रक्षा करनी चाहिए। प्रसन्नपूर्वक घृणा का त्याग कर देना चाहिए। द्वेष पर विजय पाना आवश्यक है। विद्वेष तथा घृणा से दूर रहना चाहिए जिससे तुम्हारे विचार शांत एवं उच्च बन सकें। जीवन में अनुशासन का पूरा पालन करना चाहिए। जीवन की सभी गतिविधियों में सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाना चाहिए। जो लोग अभिमानी हैं, निश्चय ही उनकी शक्ति कम होती जाती है इसलिए हे भाई भरत ! तुम जीवन में शक्ति और सन्तुलन प्राप्त करने के सभी संभव प्रयास करो।

56

यदि वास्तव में तुम जीवन की सभी आवश्यक बातों के प्रति जागरुक हो, तो तुम कुशल और चतुर माने जाओगे क्योंकि इसी को कुशलता एवं चतुरता की संज्ञा दी जाती है। युद्ध क्षेत्र में तुम्हें शक्तिशाली योद्धा के रुप में आचरण करना चाहिए। वीरों के वचन ही मूल्यवान होते हैं। उन्हीं का सम्मान भी किया जाता है। तुम्हें ब्राम्हणों तथा विद्वानों को दान के रुप में धन देना चाहिए। उनका आदर करना भी तुम्हारा परम कर्तव्य है। राज्य की सर्वांगीण उन्नति के लिए विभिन्न योजनायें तैयार करनी चाहिए। जनसाधारण की सुरक्षा के लिए प्रबन्ध भी तुम्हारे शासन–काल में सुदृढ किये जाने चाहिए।

57

जो लोग इन सद्‌गुणों का जीवन में पालन करते हैं, वे ही जनता के द्वारा पूज्य होते हैं। जन मानस उनसे अपार प्रेम करता है। सेना की उन्नति की ओर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। सैनिकों को उचित ढंग से शिक्षित करना चाहिए। सेना की गतिविधियों पर पूरा नियंत्रण रखते हुए उसका पूर्ण विकास करना चाहिए। यही नहीं, इससे भी अधिक आवश्यक यह है कि सैनिकों की सुविधाओं तथा कल्याण की ओर विशेष ध्यान दिया जाय। जहाँ कोई भी अभाव हो, उसको दूर करके उसे पूरा करने के सभी सम्भव प्रयास करना राजा का परम कर्तव्य है।

58

विशेष ध्यान देकर हे भरत ! तुम्हें इन सभी गुणों को प्राप्त करना चाहिए। यह सभी विशेषताएँ राजा के कर्तव्यों के अन्तर्गत ही आती हैं। अच्छे बुरे के अन्तर को स्पष्ट करने का विवेक भी अपेक्षित है। सभी नागरिकों के कष्ट अथवा दुःखों के विषय में ध्यान देना चाहिए। उनकी बातों को सुनना चाहिये तथा उन्हें शीघ्र ही सन्तोष देकर उनका निराकरण करना चाहिए। राजा की योग्यता एवं शक्ति की गरिमा इसी बात में है कि प्रजा के सभी कष्टों का निवारण करते हुए उसका प्रेमपूर्वक पालन करे।

59

प्रत्येक प्रयास को तुम्हें बलपूर्वक सफल बनाना चाहिए तथा हर काम में अपना नेतृत्व देना चाहिए। इससे प्रजा को सफलता प्राप्त हो सकेगी। प्रजा के किसी भी अच्छे कार्य को बढ़ावा देकर उसमें उसकी सहायता करनी चाहिए। कर्मशीलों में दृढ़ता उत्पन्न करनी चाहिए। किसी का भी कभी अपमान नहीं करना चाहिए। यहाँ तक कि मनुष्य अथवा पशु जो कभी–कभी निम्नकोटि के भी हो सकते हैं, का भी अपमान नहीं करना चाहिए। प्रजा की रक्षा करते हुए उसे विकासोन्मुख करना प्रत्येक कुशल राजा का पवित्र कर्तव्य है।

60

वास्तव में सिंह में अथाह शक्ति होती है, जो किसी भी वीर को डरा कर उसके मन में भय उत्पन्न कर सकती है, विश्वास किया जाता है कि आक्रमण में उसके समान अपार तीव्रता किसी भी अन्य प्राणी में नहीं होती है। इन्ही महान शक्तियों एवं गुणों का अनुसरण एवं अनुकरण करना चाहिए।

61

मानव को अभियान में विजय प्राप्त करनी चाहिए। झूठे दर्प का निषेध करने से मानव मानवीय गुणों से विभूषित होता है। दोषों एवं बुराइयों को जीवन में कभी भी कोई स्थान नहीं देना चाहिए। यदि किसी का जन्म उच्चकुल में हुआ हो तो इसके लिए अभिमान करने की भी कोई आवश्यकता नहीं है। जंन्म के आधार से उंच्च–नीच का भेद अनुचित है। यह सभी वे मानवीय गुण हैं, जो मानव–मन का रंजन करते हैं तथा उसे मानवीयता के धरातल पर प्रतिष्ठित करते हैं।

62

इन सभी गरिमाओं के संबंध में पूरी जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। श्रेष्ठ एवं मानव जीवन के उच्च् आदर्शों का पूरा पालन करना चाहिए। उच्च शिक्षाओं को सदैव हो प्राप्त करना चाहिए। जो लोग तुम्हारी सहायता के आकांक्षी हैं, कभी भी उनका निरादर नहीं करना चाहिए। सबसे पवित्र वस्तु यह है कि शास्त्रों का अध्ययन निरंतर करते रहना चाहिये। उसका सदैव ही अभ्यास करना चाहिए। यदि इन कार्यों में कुछ कठिनाई का अनुभव भी करना पड़े तो कर्तव्य समझकर उनको करना चाहिए।

63

ज्ञान एवं विवेक को प्राप्त करना पवित्र पुस्तकों से भी संभव है। उन्हीं के आधार पर जीवन के आदर्श भी प्राप्त करने चाहिए। उनके गंभीर अध्ययन से राजनीति कुशलता एवं अमूल्य मानवीय गुण प्राप्त होते हैं अतएव अध्ययन का परिणाम सदैव ही लाभप्रद होता है। विद्वानों, गुरुजनों एवं ब्राहमणों की सदैव ही सेवा एवं सहायता करनी चाहिए। निरंतर उनके प्रति प्रेम और श्रद्धा बढ़ानी चाहिए।

64

जो क्रूर स्वभाव के व्यक्ति हैं, उनकी कुसंगति से सदैव ही बचना चाहिए। वे लोग दूसरों की निन्दा करके ही प्रसत्रन का अनुभव करते हैं। बुराइयों के वर्णन में ही उन्हें रस आता है। कभी–कभी तो वे अपने देश

और जाति की भी दुर्बलताओं को प्रकाश में लाने की चेष्टा करते हैं जिसका परिणाम यह होता है कि प्रजा को कई विकट परिस्थितियों का सामना करते हुए अपार कष्ट उठाना पड़ता है। इस प्रकार मित्रगण दूर हो जाते हैं। शत्रुओं को निकट आने का पूरा अवसर प्राप्त होता जाता है।

65

विवेकपूर्ण बुद्धि एवं पवित्र प्रेम का ही सदैव जीवन में अभ्यास करना चाहिए। जो लोग कुप्रवृत्तियों वाले एवं भय उत्पन्न करने वाले हैं, उनके समक्ष कोमलता नहीं वरन दृढ़ता से काम लेना चाहिए। सदैव ही दोषों से बचना चाहिए। यदि कोई व्यक्ति अपने कर्तव्यों का विधिवत पालन नहीं करता है तथा दूसरों का सम्मान करना नहीं जानता है तो वह अधम व्यक्ति की ही संज्ञा पाता है।

66

उदाहरण के लिए बकरे को लिया जा सकता है। वह डर के कारण ही दूसरों का सम्मान करता है। जो वृक्ष खड़ा है, उसी को वह महत्व देता है। यदि वह वृक्ष नीचे की ओर झुक जाता है, तो बकरा उस पर प्रसन्नतापूर्वक चढ़ने लगता है। वह मनमाना आचरण करते हुए बिना किसी भ्रम के झुके वृक्ष की शाखाओं पर दौड़ने लगता है।

67

जो लोग मदिरापान करके उसके परिणामों पर नियंत्रण नहीं पा सकते, तथा मदिरा में मतवाले हो जाते हैं, उनकी विचारशक्ति क्षीण हो जाती है। मदिरा के नशे में उन्हें स्मृति–विभ्रम हो जाता है। वे सभी के प्रति अशोभनीय व्यवहार करते हैं। वे व्यर्थ की अतिशयोक्ति पूर्ण बातें करते रहते हैं। वे क्रूर भी होते हैं। वे किसी रहस्य को गुप्त नहीं रख सकते हैं। उनके सभी भेद प्रकट हो जाते हैं।

68

कभी भी मिथ्या भाषण करते हुए झूठ नहीं बोलना चाहिए। झूठ बोलने के बहुत ही भयंकर दुष्परिणाम होते हैं। निश्चय ही तुम मिथ्यावादी बनकर अपमानित होगे। लोग तुम्हारे संबंध में तुम्हारी झूठी बातों के प्रति तुम पर आरोप लगायेंगे। यदि तुम्हारा कोई सेवक भी तुम्हें नीच प्रवृत्ति का प्रतीत हो और उससे किसी भी प्रकार के धोखे की संभावना हो तो उस पर कभी भी विश्वास मत करो और उसे शीघ्र ही सेवा कार्य से मुक्त कर दो।

69

किसी व्यक्ति के दोष देखना तथा उस पर दोषारोपण करना कभी भी उचित नहीं है। इससे मित्रता की भावना में कमी होती जाती है। कभी भी आकर्षक वस्तुओं के मोह में अधिक नहीं पड़ना चाहिए। न ही उनमें अनावश्यक रुचि दिखाकर उनसे आनंद मनाने की इच्छा ही रखनी चाहिए। द्यूत आदि सभी कृत्य किसी भी परिस्थिति में अनुचित एवं वर्जित हैं। इनको न करना ही चरित्रवान व्यक्ति का कर्तव्य है।

70

इन्हीं बातों पर ध्यान देते हुए तुम्हें सदैव ही अपने कर्तव्यों का पालन करना चाहिए। प्रजा वर्ग की सदैव ही सुरक्षा करनी चाहिए। पूजा करने वालों का हित एवं नियमों का विधिवत पालन करना राजा का कर्तव्य है। मन्दिरों एवं विहारों का जीर्णोद्धार कराना चाहिए। देवगृहों आदि पवित्र स्थानों की व्यवस्था करते हुए उनके धर्म-कार्यो को विधिवत चलाना चाहिए। मार्ग, उद्यान, जल की व्यवस्था, सरोवर, जल के बाँधों की योजना, मछलियें के तालाब, उद्यान, बाजार, सेतु अथवा वे अन्य सभी वस्तुएँ एवं उपकरण जो जनहित में होते हैं, प्रजा की सुख - समृद्धि जिन पर निर्भर करती है, उन सबका निर्माण तुम्हें अवश्य ही करना चाहिए।

71

अश्व, गज, रथ तथा अन्य वाहनों का निरन्तर अभ्यास किया जाना चाहिए, जिससे युद्ध की सभी गतिविधियों में वे पूर्ण सफलतपूर्वक प्रयोग में आ सकें। प्रत्येक मास ऋषि मुनियों के लिए दान के रुप में भोजनार्थ अन्ननन करना चाहिए। इससे ऋषियों को विधिवत भोजन प्राप्त हो सकेगा। जीवन के सभी क्षेत्रों में स्वस्थ दृष्टिकोण अपनाते हुए जन-जीवन के साधनों का सर्वांगीण विकास करना भी तुम्हारा परम कर्तव्य है। अपनी सम्पूर्ण शक्ति से तुम्हें जनहित में जुट जाना चाहिए जिसंसे प्रजा में तुम्हारे प्रति गहरी आस्था एवं विश्वास उत्पन्न हो सके। वे यह भी अनुभव करने लगें कि तुम्हें अपनी प्रजा से अपार प्रेम है।

72

तुम्हारे जितने भी सेवक हैं, उन सभी के हित की रक्षा भी तुम्हें करनी चाहिए। राज्य के अन्य सभी कर्मचारियों पर भी तुम्हें पूरा ध्यान देना चाहिए। इन सभी के प्रति सहानुभूति रखना तुम्हारा कर्तव्य है। यदि कोई कर्मचारी अपनी कुशलता का परिचय दे, वह चरित्रवान हो तथा अपने कार्य में चतुर एवं निपुण हो, पूरी स्वामिभक्ति का परिचय दे रहा हो, तो चाहे वह व्यक्ति उच्च् कुलीन न भी हो, योग्यतानुसार उसकी पदोन्नति अवश्य ही की जानी चाहिए। यदि वह व्यक्ति उच्च् वंश परम्परा का है, तो उसका भी सदैव ही हित चिन्तन करना चाहिए।

73

इन सब राज्य कर्मचारियों को प्रसन्न करने में शीघ्रता दिखाने की आवश्यकता नहीं है। यह अत्यावश्यक है कि इनके परीक्षण के लिए इन्हें किसी कार्य की आज्ञा दी जानी चाहिए। यदि वे कार्य को कुशलतापूर्वक सफलता से पूरा करते हैं, तो निश्चय ही उनका सम्मान उचित भेंट देकर करना चाहिए। यह भी आवश्यक है कि वे राजा के प्रति पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय दें। उनके हृदय राजा की सेवा में रत हों। ऐसा होने पर ही राज्य कर्मचारी तुमसे प्रेम करेंगे और तुम्हें पूरा सम्मान देते हुए रत्न की भाँति मूल्यवान समझेंगे।

74

इसी प्रकार यदि कोई सेवक अपने व्यवहार में बहुत लोभी सिद्ध हो, अपनी चालाकी से विचित्र परिस्थितियां उत्पन्न कर रहा हो। वह कहता हो कि वह स्वयं एक कठिन परिस्थिति में उलझ गया है या फिर उसकी सुरक्षा का प्रश्न उठ खड़ा हुआ हो तो उसकी बात सुननी चाहिए। चाहे इन सब बातों से वह व्यक्ति अपने हृदय की नीचता को ही क्यों न व्यक्त कर रहा हो, फिर भी इन सभी बातों को शान्त होकर समझना चाहिए। यही वह अस्त्र है, जिसके आधार से बुरी प्रवृत्तियों वाले सेवकों को पहचाना जा सकता है। उनसे सावधान रहकर राज्य की गतिविधियों को विधिवत आगे बढ़ाया जा सकता है। यदि कोई व्यक्ति ईमानदार एवं चरित्रवान दिखायी दे तो उस पर राजा को विशेष ध्यान देना चाहिए। ऐसे ही व्यक्ति राज्य की रक्षा करते हैं।

75

यदि यह स्पष्ट हो जाय कि सेवक क्रूर और कपटी व्यक्ति है, तो उसको अवश्य ही दण्डित किया जाना चाहिए। ऐसा उसी परिस्थिति में करना चाहिए जब कि वह कोई विशेष अनुचित व्यवहार करे। यदि मृत्युदण्ड के योग्य उसका अपराध सिद्ध हो जाय तो उसको यही दण्ड देना उचित होगा। यह दण्ड भी पूरी तरह परीक्षण के पश्चात अथवा उस पर विचार-विमर्श के बाद ही दिया जा सकता है। अपराधी को ही दण्ड दिया जाना चाहिए, निर्दोष को कभी महीं। उसी प्रकार यदि कोई राज्य कर्मचारी कठिन परिश्रम करता है, तो उसको अवश्य ही अनुग्रह देकर सम्मानित किया जाना चाहिए। उसको पूरी तरह प्रसन्न करना चाहिए। इसी को वास्तव में स्वामिभक्ति के प्रति अनुग्रह कहते हैं। किसी को दण्डित करना भी अपने स्थान पर उचित होता है।

76

जिस प्रकार प्रखर सूर्य की किरणें सम्पूर्ण जगत में उष्णता का वातावरण उत्पन्न करती हैं तथा अथक प्रयत्नों से निरन्तर इस गतिविधि को अपना कर अन्धकार का नाश तथा विश्व में प्रकाश भरती हैं, उसी प्रकार राजा अपने राज्य-क्षेत्र से नीचों का सर्वनाश करता है। उनको वह समूल नष्ट कर देता है। चन्द्रमा भी अपनी शीतल किरणें बिखेर कर विश्व में अपना प्रेम बिखेरता है। उसके प्यार की किरणें पृथ्वी को शीतलता प्रदान करती हैं। इससे स्पष्ट है कि तुम्हारी गतिविधियां सूर्य एवं चन्द्र की भांति ही होनी चाहिए। हे भाई, यदि वास्तव में

तुम अपनी प्रजा से हृदय से प्रेम करते हो तो प्रजा के प्रति तुम्हारा व्यवहार विवेकपूर्ण होना चाहिए।

77

एक राजा की उपमा बड़ी सरलता से एक पर्वतमाला से दी जा सकती है। उसकी पूजा विभिन्न वनस्पतियों की भांति होती है जो उसके राज्य-क्षेत्र में उगती और बढ़ती हैं। प्रत्येक अच्छी-बुरी परिस्थिति में राजा को ही पूर्ण सन्तुलन खोजना पड़ता है इन्हीं प्रयासों के सुन्दरतम परिणाम भी निकलते हैं। धन-वैभव से समृद्ध प्रजा की उपमा घने एवं वृक्ष-राजियों से लदे वन से दी जा सकती है। वह वन विशाल होता है उस वन में तुम सिंह की भांति हो जो वनस्पति के रुप में उस विशाल वन की रक्षा करता है। इसीलिए वन रम्य एवं आकर्षक दिखायी देता है।

78

कृषकों की सुरक्षा राजा का परम कर्तव्य है। इससे कृषक शांतिपूर्वक अन्न उपजा सकेंगे। यह राजा की शक्ति और योग्यता का संकेत है कि वह किस प्रकार शांति स्थापित कर प्रजा को उन्नति का पूरा अवसर प्रदान करता है। इसी से उसकी योग्यता एवं कुशलता का परिचय मिलता है। अन्न ही प्रजा के भोजन का एकमात्र साधन होता है। अन्न की आवश्यकता राज्य के लिए भी होती ही है। प्रजा के दुःखों और कठिनाइयों को पूरी तरह सुन समझकर उनकी सदैव ही सहायता करनी चाहिए। प्रजा के कष्टों को जानकर केवल मौन हो जाना ही उचित नहीं है। उन्हें दूर करने का हर सम्भव प्रयत्न राजा को करना चाहिए। नीचे कहे गये पांच प्रकार के भय प्रजा के लिए कहे जा सकते हैं। उन भय की परिस्थितियों को समाप्त कर प्रजा को सुखी एवं समृद्ध बनाना राजा का कर्तव्य है।

79

1. यदि क्षेत्रों के स्वामी अपने काम करने वाले सेवकों तथा कृषकों को सूखे वाले क्षेत्र में जाने के लिए आज्ञा दें।
2. यदि राज्य में बहुत से चोर डाकू बढ़ गये हों।
3. स्थान-स्थान पर भाँति - भाँति के बुरे कर्म किये जा रहे हों। वेश्यावृत्ति काफी बढ़ चुकी हो।
4. यदि राजा की कोई प्रेमिका भी हो तो वह कई उपद्रवों का कारण बन सकती है। वह बहुत सी कठिनाइयाँ प्रस्तुत कर सकती है, अतएव यह भी एक बड़ी बुराई राजा में हो सकती हे।
5. राजा का लोभी होना भी प्रजा के लिए कष्ट का कारण होता है। यह भी एक भय का ही विशेष कारण है।

मैं आशा करता हूं कि तुम्हें इन सब बातों पर विशेष रुप से ध्यान देना चाहिए।

80

इसीलिए हे भाई भरत ! सभी प्रकार के सेवकों, राज्य कर्मचारियों की ओर से तुम्हें पूर्णतः सचेत रहना चाहिए। उनमें कौन व्यक्ति चतुर एवं कार्यकुशल है, अपने कर्तव्य का उचित रुप में पालन करता है तथा कार्य में पूर्ण रुप से अनुशासित होकर लग जाता है यह देखना तुम्हारा कर्तव्य है। उसका चरित्र ऊंचा है, झूठ बोलने में यह विश्वास नहीं करता है, बड़ी दृढ़ता, चतुरता एवं कुशलता से सेवा कार्य पूरा करता है, लोभ लालच से सदैव ही दूर रहता है ऐसे सेवक की पहचान भी करनी चाहिए। जो अपने विचारों तथा अपने सामने दृष्टिगोचर होने वाली सभी परिस्थितियों का विधिवत परीक्षण करके ही कोई कार्य करता है उसकी ओर भी ध्यान देना चाहिए। अच्छे-बुरे के विषय में तुम्हारा अन्वेषण इसी रुप में होना चाहिए। इसी खोज के आधार से तुम्हें राज्य की गतिविधियाँ आगे बढ़ानी चाहिए। राज्य में किसी प्रकार की भीषण परिस्थिति उत्पन्न न हो सके, इस दृष्टि से इन बातों को महत्व देना आवश्यक है।

81

ऐंसी राजनीति का आश्रय लेना चाहिए, जो मानव हित में हो। राजनीतिक चतुरता एवं सूझबूझ का पूरा परिचय देना चाहिए। अन्य लोगों के हृदय टटोल कर वास्तविकता का पता लगाना आवश्यक है। सभी अच्छी बातों तथा गुणों को बढ़ने का पूरा अवसर दिया जाना ही उचित है। अपने शत्रुओं को समूल नष्ट कर डालो। शीघ्र ही उनसे सभी प्रकार के संबंध विच्छेद करके उन्हें पूर्ण रुप से मिटा दो। यदि तुम्हारा कोई शत्रु बनता है, तो सम्पूर्ण अस्त्र-शस्त्रों से उस पर भीषण आक्रमण करो। युद्ध का पूरी कुशलता एवं बुद्धमत्ता से संचालन करो। किसी भी नीच प्रवृत्ति वाले व्यक्ति अथवा शत्रु को उभरने का कभी भी अवसर प्रदान मत करो। सभी दुर्गुणों एवं बुराइयों को समूल नष्ट कर डालो। हे भाई भरत ! इन सभी बातों पर ध्यान देने से तथा विवेकपूर्ण राजनीति का सहारा लेने से ही प्रजा तथा राजा का कल्याण संभव है।

82

इस जगत में ऐसे कार्य करो, जिससे लोग सदैव ही तुम्हें याद करते रहें। तुम्हें भली भाँति सेवा भाव से प्रजा की सेवा करना अपना कर्तव्य समझना चाहिए। स्वामिभक्ति के विषय में भी पूरा ध्यान देना आवश्यक है। प्रत्येक कार्य बड़ी चतुरता से एवं पूरा ध्यान देकर करना चाहिए। आवश्यक बातों को समझना ही सत्-असत् के विवेक का परिचायक है। दूसरों की सहायता एवं रक्षा में कभी भी असावधानी नहीं बरतनी चाहिए। हृदय में झूठा अभिमान रखना उचित नहीं है। उसको हृदय से समाप्त कर देना चाहिए। इस प्रकार संघर्ष करके अन्तरतल से अभिमान एवं दर्प का नाश करना चाहिए। यद्यपि मदान्ध होना मानव का स्वभाव है। बुराई तथा कुकृत्यों ने

सारे संसार रक्खा है। यह अज्ञान का अंधकार सम्पूर्ण विश्व पर छाया हुआ है।

83

शक्ति संपन्न होना, कार्यकुशल होना तथा स्वस्थ रहना जीवन के ऐसे महान मूल्य हैं, जिनके सही मूल्यांकन बहुत ही कठिन है। उन सभी गुणीजनों का जो वास्तव में पवित्र ग्रन्थों एवं शास्त्रों के महत्व को समझते हैं तथा उसके उद्देश्यों के विषय में पूरा ज्ञान रखते हैं, तुम्हें पूर्ण आदर करना चाहिए। उनका सम्मान करते हुए उनकी विशेषताओं को भी तुम्हें स्वीकर करना चाहिए। इस प्रकार उन्हें पूरा महत्व देना चाहिए। हे छोटे भाई भरत ! तुम स्वयं सर्वगुण संपन्न हो, निश्चय ही तुम प्रजा का हित सदैव ही करते हुए उनकी सेवा में लगे रहोगे। तुम सदैव ही ऐसे व्यक्तियों से दूर रहना जो व्यक्ति जीवन में निद्देश्य होकर नीच कार्यों में लगे रहते हैं। वे मदिरा पान करते हैं तथा दूसरों की झूठी प्रशंसा में लगे रहते हैं। इसका परिणाम यह होता है कि जिसकी चापलूसी करते हैं, उसे ही नीचा गिराते हैं। अन्त में उसे विपत्तियों में डाल देते हैं।

84

यही सब प्रजा के प्रति राजा के कर्तव्य हैं। इनका ऊपर विशद रुप से उल्लेख किया गया है। इन्हीं के आधार पर राजा विश्व की रक्षा करता है। वह ऐसे कार्य करता है जिससे जन साधारण सौभाग्य का अनुभव कर सुख और समृद्धि का जीवन व्यतीत कर सकें। राजा को सदैव ही दूसरे लोगों – प्रजा की आवश्यकताओं की पूर्ति करनी चाहिए। अपने प्रेम को विस्तृत करते हुए प्रजा को सुखी बनाना चाहिए। प्रजा की सभी कठिनाइयों एवं कष्टों पर विचार करके उन पर पूरा ध्यान देते हुए उनका निवारण करना चाहिए। ध्यानपूर्वक उन सभी बातों पर विचार करना चाहिए, जो पवित्र पुस्तकों एवं शास्त्रों में कही गयी है। यही नहीं जीवन में मूल्यों की प्रतिष्ठा करके उनका अनुकरण करना चाहिए। यदि राजा इन नियमों का विधिवत पालन करता है तो निश्चय ही प्रजा उससे अपार प्रेम करेगी। राजा के प्रति कभी कोई भी व्यक्ति विश्वासघात नहीं करेगा। दूसरों को छल कपट से कभी धोखा नहीं देना चाहिए। अच्छे व्यवहार से तथा अच्छे गुणों के आचरण से ही बहुत अच्छे परिणाम निकलते हैं ?

85

इस प्रकार श्री राम ने भाँति-भाँति के उपदेश देकर अपने छोटे भाई भरत को विधिपूर्वक सभी बातें समझायीं जिससे उनके हृदय में दृढ़ता आ सके। राम के प्रेम पूर्ण शब्दों को सुनकर भरत का अपार प्रसन्ता हुई। उन्होंने राम द्वारा दिये गये सदुपदेशों को ध्यानपूर्वक सुना। श्री राम को प्रणाम कर भरत ने उनसे वापस अयोध्या लौटने की आज्ञा माँगी। उनके साथ ही साथ उनकी सेना के उच्च अधिकारियों तथा सैनिकों ने भी राम से वापस लौटने के लिये विदा माँगी।

86

इस प्रकार राजपुत्र भरत श्री राम से विदा लेकर अयोध्या के लिए प्रस्थान करने लगे। वे राम की चरण–पादुकाएँ अपने साथ ला रहे थे। वे उनके लिए महान, मूल्यवान एवं पवित्र थीं। जब भरत अयोध्या लौटकर आये, तो नागरिकों ने उनका सेवाभाव से स्वागत किया। भरत अयोध्या के राज्य की सुरक्षा में लग गये तथा जनहित में पूरी स्वामिभक्ति के साथ दृढ़ होकर कार्य करने लगे।

अध्याय – 4

1

भरत अयोध्या पहुंच कर राजमहल में राज्य का कार्यभार संभाल कर विधिवत प्रजा की सेवा करने लगे। श्री राम वन प्रदेश में ही रहने लगे। चित्रकूट पर्वत की माला पर श्री राम लक्ष्मण के साथ निवास करने लगे। उनकी पति परायण पत्नी देवी सीता भी उनके साथ थीं और निरन्तर उनकी सेवा करती रहती थीं।

2

वहीं पर वन में अत्रि महर्षि का आश्रम था। राम, लक्ष्मण तथा सीता ऋषि के सत्संग में समय व्यतीत कर रहे थे। बड़े आदर सम्मान से महर्षि अत्रि उनसे वार्तालाप करते रहते थे। उन लोगों की जो भी आवश्यकता होती थी, उसकी पूर्ति करने के लिए महर्षि सहर्ष प्रस्तुत रहते थे। ऋषि का जीवन तपस्या एवं साधना का प्रतीक था।

3

राम बहुत समय तक चित्रकूट में नहीं ठहरे। इसके आगे एक बहुत विशाल वन था, जो अपने विस्तार के कारण बहुत प्रसिद्ध भी था। यह वन बहुत ही भयानक था। इस वन का नाम दंडकारण्य था। यहीं पर जाने का राम ने निश्चय किया। तत्पश्चात रघुवंशी श्री राम ने उसी वन की ओर प्रस्थान किया।

4

राम के लिए किसी भी स्थान पर कोई भय नहीं था। अपनी शक्ति पर उनको पूरा विश्वास था। उनके साथ उनके भाई लक्ष्मण तथा उनकी प्रियतमा देवी सीता भी थीं। उस वन में बड़े भयानक राक्षस रहते थे। वे राक्षस गण बड़े ही आक्रामक भी थे। उनका लक्ष्य जानबूझ कर साधारण लोगों पर आक्रमण कर उनका वध करना था। इसके अतिरिक्त उनके पास अन्य कोई कार्य नहीं था।

5

विराध नामक एक महान राक्षस वहीं पर था। वह महान शक्तिशाली था। वहां कोई भी उसकी शक्ति के समकक्ष नहीं था। ऐसा कहा जाता था कि उस राक्षस के पैर पेट में पलटे हुए थे। उसकी आकृति भयानक थी। उसका रुप बहुत डरावना था। उसके हाथ ही केवल उसका मार्गदर्शन करते थे। उसकी भयानक आकृति देखकर मृत्यु भी उससे भयभीत हो रही थी।

6

उन दोनों राजपुत्रों–राम तथा लक्ष्मण ने उसी वन में विराध को देखा। उसे देखकर उनको किसी प्रकार का भय नहीं लगा। वे उस नीच पर आक्रमण के लिए आगे बढ़े। मूर्ख विराध ने राम को देखकर उनका अपमान करने की चेष्टा की। उसका अनुमान था कि दोनों राजपुत्र शक्ति–संपन्न नहीं हैं।

7

अपना चौड़ा मुंह फाड़कर वह राक्षस उनके ऊपर झपटा। एक विशाल वटवृक्ष की भाँति उसका शरीर था। उसके पैर जैसे वृक्ष की दो विशाल शाखाएँ थीं। उनमें तीव्रता थी। उसके तेज नख भी बड़े तीक्ष्ण थे, उनसे ही उसने राजपुत्रों पर आक्रमण किया। ऐसा लगा जैसे वह राम और लक्ष्मण के शरीर को अपने विशाल नखों से विदीर्ण कर देगा।

8

विराध को आक्रमण करता देखकर राम और लक्ष्मण ने भी उस पर आक्रमण किया। दोनों भाइयों ने उसकी एक–एक टाँग पकडी तथा शक्ति से खींच कर उसको फाड़कर दो टुकड़ों में कर दिया। इस प्रकार विराध की मृत्यु हो गयी। राम और लक्ष्मण को उसके आक्रमण से तनिक भी आँच नहीं आयी। अब उस राक्षस का शरीर दो हिस्सों में फटा हुआ पड़ा था।

9

जब मूर्ख विराध राक्षस का वध हो गया तो राम और लक्ष्मण निर्भय होकर उस वन में विचरण करने लगे। उसके बाद वे एक पवित्र आश्रम में गये। यह आश्रम बहुत ही आकर्षक एवं सुन्दर था। महर्षि सरभंग की यही तपोभूमि थी। वह एक महान पवित्र स्थान था। महर्षि सरभंग एक उच्च स्तर के महान योगी थे।

10

महर्षि सरभंग एक सम्पूर्ण योगी थे। वे अलौकिक एवं उच्चतम योग से संबंधित सम्पूर्णतत्वों को जानते थे। वे आश्रम में पूर्ण रुपेण समाधिस्थ बैठे हुए थे। शान्त भाव से तपस्यारत होकर वे ध्यान मग्न थे। उन्होंने श्री राम से भेंट होने पर सीधे ही मोक्ष प्राप्त करने की अभिलाषा व्यक्त की।

11

महर्षि ने कहा हे राजपुत्र राम ! मैं आपसे आज्ञा लेकर मोक्ष प्राप्त करने जा रहा हूं। मैं आज बहुत ही भाग्यशाली हूं कि आप स्वयं मेरे आश्रम में पधारे हैं। आप भगवान विष्णु के अवतार हैं। आप हम सबका मंगल एवं कल्याण करने की कृपा करें।

12

वहीं पर योगी सुतीक्ष्ण का भी पवित्र आश्रम था। उसी आश्रम में जाने के लिए महर्षि सरभंग ने राम से अनुरोध किया। महर्षि ने कहा, हे राम ! आपके लिए वही स्थान उत्तम है। उसी को आप अपने ठहरने के लिए निश्चित कीजिए, वहाँ आपको किसी प्रकार की कोई कठिनाई न हो सकेगी। वह स्थान यहाँ से निकट भी है। उन्हीं ऋषि योगी सुतीक्ष्ण से आपको हर संभव सहायता प्राप्त होगी। वही आपके प्रमुख सहायक सिद्ध होंगे।

13

तपस्वी ने राम से ये शब्द कहे। उसके बाद शीघ्र ही योग बल से उन्होंने पूर्ण समाधि ले ली। उन्होंने योग की शक्ति से अग्नि प्रज्वलित की। उसी योगाग्नि में वे जल कर भस्मीभूत हो गये। उनका भौतिक शरीर अब समाप्त हो चुका था।

14

इस प्रकार महर्षि ने पूर्ण मोक्ष प्राप्त कर लिया। वे एक पूर्ण योगी की भाँति अपनी पूर्णगति को प्राप्त हुए। वहाँ पर केवल रघुवीर राम ही उपस्थित थे। वन में कुछ समय ठहरने के पश्चात वे योगी सुतीक्ष्ण के आश्रम की ओर चल पड़े। वे शीघ्र ही योगी के आश्रम में भी पहुंच गये।

15

ऋषि सुतीक्ष्ण ने बड़ी ही उदार सहृदयता से श्री राम को अपने आश्रम में आश्रय दिया। ऋषि सदैव ही निराश्रय मनुष्यों को आश्रय देने की अभिलाषा रखते थे। ऋषि को सभी से अनुपम प्रेम था विशेषतया वे उन लोगों को अधिक प्रेम देते थे जो ऋषि के अतिथि होते थे। बहुत समय तक श्री राम आनंदपूर्वक ऋषि केआश्रम में ठहरे रहे। उन्हें महर्षि से बहुत प्रेम था। महर्षि का तो स्वभाव ही प्रेममय था।

16

ऋषियों के साधना–स्थलों पर राम आते–जाते थे। इस प्रकार कई तपस्या स्थलों पर राम ने जाकर ऋषि

मुनियों से भेंट की। वहाँ पर महापंडितों तथा विद्वानों ने उनका भाँति-भाँति से स्वागत-सत्कार किया। विभिन्न प्रकार के कन्दमूल फल आदि उन्होंने उनकी सेवा में अर्पित किये, जिससे वन में उनको सरलता से भोजन की प्राप्ति हो सके।

17

दिवस की समाप्ति के पश्चात जब रात्रि का आगमन हुआ तो राजपुत्र राम ने वन में शयन किया। वृक्षों की पत्तियाँ ही अब उनकी चटाई थीं। इस पर ही वे शयन करते थे। वे जानबूझ कर कठिन व्रत का पालन कर रहे थे। अपने नियमों के पालन में उन्हें तनिक भी संकोच नहीं था।

18

दिन में वे इच्छानुसार इधर-उधर घूमते रहते थे। वन में उनका कार्य केवल मृगया ही था। वे जंगली जन्तुओं का शिकार खेलते थे। यह कार्य दैनिक रुप से निरन्तर चलता रहता था।

19

भिक्षु, पंडित, वेद-विज्ञानी, विद्वानों से आश्रमों में राम की भेंट होती थी। वे परस्पर एक दूसरे का मन प्रसन्न करते थे। राम स्वयं ऋषि मुनियों का आतिथ्य-सत्कार भी करते थे। उसी प्रकार ऋषिगण भी राम का पूरा आदर करते हुए उनका आतिथ्य करते थे। कभी-कभी तो अतिथियों को खिलाने के पश्चात जो कन्दमूल फल शेष बच रहते थे, राम, लक्ष्मण और सीता उसी को खा कर अपना समय व्यतीत कर लेते थे।

20

वन में राम तपस्वियों के वेष में रहते थे। बड़ी ही शान्ति और सन्तोष से वे वल्कल वस्त्रों को धारण करते थे। पेड़ों की छाल ही अब उनके वस्त्रों का कार्य करती थी। वृक्षों से उन्हें बड़ा प्रेम था। जब कठिन ग्रीष्म ऋतु में कड़ी गर्मी पड़ती तो वृक्ष अपनी सघन छाया से राम को शीतलता प्रदान करते थे।

21

राम वन के तपस्वी की भाँति वस्त्र धारण करते थे। यदि साधारण रुप में कोई उन्हें देखता तो वे साधु वेशधारी ही लगते थे, परन्तु अस्त्र शस्त्र-धनुष बाण वे सदैव ही धारण किये रहते थे। इससे वे राक्षसों से ऋषि-मुनियों की वन में रक्षा करते थे। इसे वे अपना कर्तव्य समझते थे। एक सैनिक की भाँति

यही उनका व्रत था कि वन में ऋषियों को सुरक्षा प्रदान करें और उनकी तपस्या में किसी प्रकार की बाधा उत्पन्न न होने पाये।

22

पर्वतमाला के आसपास जितने भी आश्रम स्थित थे, उन सभी आश्रमों की परिक्रमा प्रतिदिन करना राम का कर्तव्य था। वे उनकी पूर्ण सुरक्षा का भार अपने ऊपर लिये हुए थे। वे तपस्वियों की रक्षा करते थे। उनकी छत्रछाया में ऋषिगण निर्विघ्न आनंदपूर्वक वन में तपश्चर्या कर रहे थे।

23

जब तक राम ने उस वन में निवास किया। उनके मन एवं कल्पना में केवल एक ही बात थी और वह थी ऋषि मुनियों की रक्षा। इसकी अपेक्षा उनका ध्यान दूसरी ओर कभी भी नहीं जाता था। उनको केवल ऋषि-मुनियों के सुख-दुःख का ही पूरा ध्यान रहता था। महामुनियों के प्रति अपने कर्तव्यों को निभाने की अपेक्षा उनको अन्य किसी बात की चिन्ता भी नहीं थी। यहाँ तक कि अपने कष्टों एवं कठिनाइयों पर कभी भी उन्होंने विचार नहीं किया। केवल एक ही बात के अन्वेषण में उनका हृदय निरन्तर संलग्न रहता था। वह बात थी महामुनियों की रक्षा। वन में उनको तपस्या करने की सुविधा हो सके और वे सुरक्षित रह सकें, इसी उपाय में वे लगे रहते थे।

24

राम एक महान रघुवंशी राजा थे। वे अपनी महान वंश परम्परा का भी पूरी तरह पालन कर रहे थे। उनका व्यक्तित्व बहुत ही प्रभावशाली था। केवल वे दूसरे लोगों के हित-चिन्तन में ही लगे रहते थे। इस प्रकार अन्य लोगों की आवश्यकताओं की पूर्ति में ही वे रत रहते थे। अपने शरीर के व्यक्तिगत कष्टों की उनको कभी भी कोई परवाह नहीं थी। केवल महामुनियों के कष्टों को दूर करने का ही वे निरन्तर प्रयास करते रहते थे।

25

इस प्रकार आनंदपूर्वक समय व्यतीत होता गया। दिवस के अवसान के बाद रात्रि आती थी। इसी प्रकार राम के वनवास की अवधि पूरी हो रही थी। आश्रम में सन्ध्या वेला भी आती थी। सन्ध्या समय राम कभी भी पूजा – व्रत करना नहीं भूलते थे। तपस्वी की भाँति वे भी सदैव ही साधना एवं तपश्चर्या का जीवन वन में रहकर ही व्यतीत कर रहे थे। वे रात दिन पवित्र व्रतों में संलग्न थे।

26

दिवस आता था। उसके अवसान के पश्चात रात आती थी। प्रातःकाल ही उठकर राम प्रतिदिन नियमानुसार पूजा करते थे। वे कभी भी अपना पूजा व्रत नहीं छोड़ते थे। निरन्तर उनको अपने व्रत का ध्यान रहता था। इस कार्यक्रम में कभी कोई परिवर्तन संभव नहीं था। इस प्रकार वे सतत साधना-रत थे।

27

शूर्पणखा नामक एक राक्षसी थी। वह राक्षसराज दशमुख रावण की भगिनी थी। वह राक्षसी सभी वनों में भटकती रहती थी। इस प्रकार घूमते-घूमते वह दण्डकारण्य में राम के आश्रम के पास भी एक बार आ गयी।

28

वन में आकर शूर्पणखा ने उन दोनों सुन्दर राजपुत्रों को देखा। यह मिलन भी अकस्मात ही हो गया। उस समय राम, लक्ष्मण तथा सीता वन में पुष्पों के चयन के लिए गये हुए थे। देवी सीता कभी भी पीछे नहीं रहती थीं। वे सदैव ही वन में भी राम और लक्ष्मण का अनुगमन करती रहती थीं।

29

जब शूर्पणखा ने राम को उनकी पत्नी के साथ देखा, तो वह सहम कर कुछ क्षण के लिए रुक गयी। शूर्पणखा को बहुत ही लज्जा का अनुभव हुआ। वह छिपकर वन में किसी अन्य अज्ञात स्थान पर चली गयी। वहाँ पर उसने श्री लक्ष्मण को पुष्प-चयन करते देखा।

30

लक्ष्मण से आकर्षित होने पर शूर्पणखा की कामेच्छा जागृत हो गयी। उसने मदमत्त होकर प्रेमभरी दृष्टि से लक्ष्मण की ओर देखा। तरह-तरह से मनोहारी हावभाव से लक्ष्मण को अपनी ओर आकर्षित करने की चेष्टा उसने की। मन्थर गति से लक्ष्मण के पास पहुंच कर उसने उन्हें लुभाने की पूर्ण चेष्टा की। उसका शरीर पूर्ण सौंदर्य का प्रतीक था। जैसे पूर्णिमा में चन्द्रमा अपने सौंदर्य की चरम सीमा पर होता है, उसी प्रकार उसका सौंदर्य भी मनोहर था।

31

शूर्पणखा की पतली लचकदार कोमल कटि थी। उसकी आँखें मधुरता का संकेत देती थी। तीव्र दृष्टि से वह लक्ष्मण को देख रही थी। उसकी जंघाएँ चौड़ी और चिकनी थीं। उसके पैर बहुत ही आकर्षक थे। उसकी उंगलियाँ ऐसी सुन्दर थीं मानो चित्रांकित की गयी हों। उनसे लाल-लाल किरणें फूट रहीं थीं। उसका सम्पूर्ण व्यक्तित्व सौंदर्यमय था।

32

उसकी पीठ तथा रीढ़ विस्तृत एवं सुन्दर थी। विशाल वक्षस्थल जैसे उभर कर ऊपर उछले जा रहे थे। उसकी अंगूठी मणियों से युक्त प्रकाश किरणें बिखेर रही थीं। जो बहुत ही आकर्षक प्रतीत हो रही थी। सुव्यवस्थित सुन्दर केशराशि पर सुन्दर पुष्प सुशोभित थे तथा कर्ण कुहरों पर भी पुष्प लगे हुए थे।

33

उसकी सुन्दर मधुर मुस्कान तथा शरीर का लावण्य मन-मोहक था। उसकी गहरी मधुर अभिलाषाओं के साथ प्रेम रस छलक सा रहा था। इस प्रकार यौवन भार से लदी हुई यह युवती अत्यंत सुन्दर थी। इस मनोदशा के कारण स्वाभाविक नारी की लज्जा भावना का उसमें लोप हो गया था। वह एक रुपगर्विता युवती थी। आगे बढ़कर उसने लक्ष्मण से मीठे शब्दों में कहा :

34

हे प्रिय लक्ष्मण ! आप सुमित्रानंदन हैं। मैं आपके प्रति आकर्षित होकर कामातुर हो रहीं हूं। इसीलिए मैं मूर्च्छित हुई जा रही हूं। मेरा विश्वास है कि आप अवश्य ही मुझसे प्रेम करेंगे। आपके मधुर प्रेम में मैं डूब जाऊंगी। मैं जीवन-पर्यन्त आपकी दासी बनकर रहना चाहती हूं। आप मेरे यौवन और शरीर पर पूरा अधिकार करने की कृपा कीजिए और मुझे स्वीकार कीजिए।

35

जब तक इस संसार में मैं जीवित हूं, एक क्षण भी आपसे अलग होकर मैं रहना नहीं चाहती हूं। जहाँ भी आप जाएँ गे, मैं निश्चय ही आपका अनुगमन करुगी। मैं आपसे कभी भी दूर रहना नहीं चाहती हूं। मैं सदैव ही आपकी आज्ञा का पालन करती रहूंगी। आप मेरा प्रेम स्वीकार करें अर्थात एक ऐसी युवती का प्रेम स्वीकार करें जो आपके प्रेम में आकंठ मग्न है। ऐसी युवती की अभिलाषा आपको अवश्य ही पूरी करनी चाहिए। यह आपका पावन कर्तव्य है।

36

नारी की लज्जा को त्यागकर उसने लक्ष्मण से खुलकर अपना प्रेम निवेदन किया। वह कामदेव के बाणों से बिंध चुकी थी। वह स्पष्ट रुप से लक्ष्मण के प्रति अपने काम भाव का प्रदर्शन करने लगी। अपने प्रेम के प्रति वह विश्वास दिलाने लगी। लक्ष्मण इस विचित्र परिस्थिति में बहुत संकोच का अनुभव करने लगे।

37

लक्ष्मण ने कहा – हे अपार सुन्दरी युवती ! तुम यह सब क्या कह रही हो ? तुम कहाँ से आई हो ? तुम्हारा व्यक्तित्व अनुपम एवं असाधारण है। तुम एक अपूर्व सुन्दरी हो। क्या इस भयानक जंगल में तुम्हें किसी प्रकार का भय भी नहीं लगता है ? मैंने तो इस भीषण वन में किसी अन्य व्यक्ति को कभी आते हुए नहीं देखा है।

38

हे युवती ! तुम्हारा सौंदर्य अपार है। तुम अनुपम सौंदर्यमयी प्रतिमा हो। मैं तुम्हारी सुन्दरता को देखकर आश्चर्यचकित हो गया हूं। क्या मैं जान सकता हूं कि तुम जन्म से क्या हो ? क्या तुम कोई अप्सरा हो ? क्या अपने सेवकों अथवा साथ के लोगों को तुमने कहीं छोड़ दिया है ? तुम अपने आप में एक अपूर्व सुन्दरी युवती प्रतीत हो रही हो।

39

यही कारण है कि मुझे तुम्हारे प्रति गहरा सन्देह उत्पन्न हो गया है। बिना किसी लज्जा के स्पष्ट रुप से तुमने मेरे समक्ष अपना प्रणय निवेदन किया है। इस प्रकार तुमने मेरे मन में एक आशंका पैदा कर दी है। तुम्हारे शब्द मेरे हृदय को वेध रहे हैं। तुम निश्चय ही कोई देवांगना हो। मैं तो केवल एक साधारण मानव हूं।

40

क्या तुमने किसी से विवाह कर लिया है अथवा अभी तक अविवाहित हो ? वह कौन व्यक्ति है, जिसकी तुम अभिलाषा रखती हो ? हे सुन्दरी ! शायद इसी कारण से तुममें लज्जा भाव का सर्वथा अभाव है। हे मधुरे ! मुझसे सब बातें स्पष्ट रुप से बताने की कृपा करो।

41

शायद मैं तुम्हारे योग्य वर नहीं हूं। तुम एक अपूर्व सुन्दरी हो। तुम मेरे बड़े भाई राम के पास जाओ। तुम्हारे लिए सबसे सुयोग्य व्यक्ति वे ही हैं। तुम सर्वथा उन्हीं के योग्य हो। उनका नाम श्री राम है और इस जगत में वे प्रसिद्ध हैं। वे निश्चय ही तुम्हारी अभिलाषा की पूर्ति करेंगे। ऐसा व्यक्ति जो विरहाकुल हो, उसके प्रति उन्हें पूर्ण सहानुभूति अवश्य ही होगी, फिर तुम्हारा तो रुप भी अनुपम है।

42

अपने महान गुणों के कारण राम का चरित्र आदर्श है। साथ ही साथ वे पूर्ण यौवनावस्था में भी हैं। वे मेरे बड़े भाई हैं। निश्चय ही वे तुमसे प्रेम करने के लिए उद्यत हो जायेंगे। वे स्त्रियों के मन की इच्छाओं को भली भाँति समझते हैं तथा उनको पूरी भी करते हैं। शायद मेरे भाई श्रीराम आपकी अभिलाषा को पूर्ण करने में समर्थ हों।

43

उनका व्यक्तित्व आकर्षक एवं मनोहारी है। उनका शरीर अतीव सुन्दर है। मुख–मंडल पर आभा की किरणें फूट रही हैं। वे आजानुबाहु हैं। शत्रुओं को युद्ध में परास्त करना उनका कार्य है। इस प्रकार वे सौंदर्य एवं शौर्य के प्रतीक हैं।

44

उनके पास बहुत ही तीक्ष्ण तलवार है। चाहे शत्रु उनके समीप हो अथवा न हो, वह करीस (तलवार) सदैव ही उनके साथ रहती है। वे सदैव ही शत्रुओं द्वारा उत्पन्न किसी भी युद्ध की स्थिति का सामना करने के लिए उद्यत रहते हैं। आत्म रक्षा के लिए भी वह करीस उनके साथ सदैव रहती है।

45

इसकी अपेक्षा उनके पास और भी कई अस्त्र शस्त्र हैं। वे एक विशाल धनुष धारण करते हैं। दूसरा कोई अन्य धुनर्धर ऐसा नहीं है, जो उसकी प्रत्यंचा खींच कर उस धनुष पर बाण चढ़ा सके। यह वह शस्त्र है, जिससे वे सभी शत्रुओं का नाश कर सकने में पूर्ण समर्थ हैं। मूर्ख राक्षसों का सर्वनाश करना तो उन्हें बहुत ही रुचिकर लगता है।

46

यहाँ मूर्ख राक्षस महामुनियों के तपस्या स्थलों को नष्ट भ्रष्ट करते हैं। ऋषियों की साधना में वे अनेक बाधाएँ उत्पन्न करते हैं। वे ऋषियों के शत्रु हैं। वे तपस्वी गणों से घृणा करते हैं। राम ने उन सभी दुष्ट राक्षसों का वध कर दिया है। उनमें से किसी को भी उन्होंने जीवित नहीं छोड़ा है।

47

आजकल इस वन में ऋषिगण निर्भय होकर आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे हैं! यह सब श्रीराम की ही महिमा और प्रताप है। यह बात बहुत ही श्रेयस्कर एवं उचित होगी कि तुम अपने आप को श्रीराम की सेवा में अर्पित कर दो। ऐसा होने पर तुम बहुत ही सौभाग्यशालिनी बन जाओगी। तुम श्रीराम के पास जाकर अवश्य अपना प्रणय निवेदन करो। यदि वे तुमको स्वीकार करलें, तो यह तुम्हारा परम सौभाग्य होगा।

48

श्रेष्ठवर श्री लक्ष्मण जी ने शूर्पणखा को इस प्रकार विधिवत समझाया। श्री राम के गुणों का वर्णन सुनकर शूर्पणखा आनंदमग्न हो गयो। बाद में वह राम की ओर ही चल पड़ी। राम उधर ही रास्ते में आ रहे थे। उनसे उसकी अकस्मात ही भेंट भी हो गयी।

49

जब शूर्पणखा राम के पास पहुंची। जिस प्रकार उसने लक्ष्मण से प्रणय-निवेदन किया था, उन्हीं शब्दों को राम के समक्ष भी उसने दोहराया। उसके शब्द सुनकर राम ने यह उत्तर दिया, हे युवती ! तुम अपूर्व सुन्दरी हो। मैं तुम्हारे प्रति अपनी सहानुभूति प्रकट करते हुए कहता हूं कि मैं तुम्हें स्वीकर करने में असमर्थ हूं।

50

आप स्वयं देख लीजिए कि मेरी पत्नी यहाँ से कुछ ही दूर पर खड़ी है। उनका नाम देवी सीता है। वे इस जगत में प्रसिद्ध हैं। मैंने तो अपने ह्रदय में कभी भी किसी अन्य स्त्री के विषय में सोचा ही नहीं है। हे सुन्दरी ! केवल ये ही इस जगत में मेरी पत्नी हैं। मैं अन्य किसी स्त्री को पत्नी के रुप में स्वीकार करने की कल्पना ही नहीं कर सकता!

51

यद्यपि आपको मैंने उत्तर दे दिया है, फिर भी यह कहना उचित समझता हूं कि तुम मेरे छोटे भाई

लक्ष्मण के पास जाओ, वे पास में ही हैं। मैं समझता हूं कि अवश्य ही वे इस समय तुमसे प्रेम कर सकते हैं। तुम एक अतीव सुन्दरी युवती हो। निश्चय ही वे तुम्हारा प्रणय स्वीकार कर लेंगे।

52

जब राम ने शूर्पणखा से इस प्रकार कहा तो शूर्पणखा फिर लक्ष्मण के पास लौट कर चली गयी। लक्ष्मण पूर्ण युवा भी थे। उनके साथ उनकी स्त्री भी नहीं थी। वह कामदेव के बाणों से लक्ष्मण पर पूरा प्रहार करने को उद्यत थी।

53

वह निस्संकोच बिना किसी प्रकार की लज्जा के लक्ष्मण के पास फिर जा पहुंची और भाँति-भाँति की कामोत्तेजक मुद्राएं बनाकर लक्ष्मण को अपनी ओर आकर्षित करने लगी। हाव-भाव का यह प्रदर्शन किसी असाधारण सुन्दरी का आकर्षक संकेत मात्र नहीं था वरन ऐसी स्त्री की कुचेष्टाएँ थीं जो कामेच्छा जागृत करने का भद्दा किन्तु असफल प्रयास कर रही थी!

54

शूर्पणखा की इन कामुक कुचेष्टाओं को देखकर लक्ष्मण को बार-बार आभास होने लगा कि इस स्त्री की गतिविधियाँ एवं हावभाव विचित्र सा ही दिखायी देता है। यह स्त्री दुश्चरित्र प्रतीत होती है। वह वज्र मूर्ख भी है। निश्चय ही वह राक्षसी ही हो सकती है। यह सन्देह करते ही उन्होंने उसका आलिंगन-सा किया।

55

उन्होंने अपने एक हाथ से उसकी नासिका घुमाकर बाहर खींच ली, जिससे उसकी नाक चेहरे से कट कर अलग हो गयी। इस प्रकार वह नासिका विहीन हो गयी। उसके बाद वह आकाश में उड़ गयी। जब वह आकाश में उड़ रही थी, उस समय उसने राक्षसी रुप धारण कर लिया था।

56

उसने कहा कि हे लक्ष्मण ! मैं शूर्पणखा हूं। मैं एक राक्षसी हूं। तुम अभी तक मेरे विषय में कुछ भी नहीं जानते हों। तुम वज्र मूर्ख हो । मुझे तुम्हारे ऊपर दया आती है। अब तुम लोग चतुरता से अपने प्राणों की रक्षा करने का प्रयास करो। यदि मेरा भाई तुम पर आक्रमण करने आया तो निश्चय ही वह तुम्हारा वध कर देगा. अतएव

तुम अपने प्राणों की रक्षा के लिए उद्यत हो जाओ।

57

खर और दूषण नामक दो प्रधान राक्षस थे। उनकी शक्ति के समक्ष कोई भी टिक नहीं पाता था। उनके आक्रमण को सहन करने की शक्ति भी किसी में नहीं थी। सभी वीर युद्व में उनसे भयभीत होते थे। तुम दोनों भाइयों का निश्चय ही अब वध कर दिया जायेगा। यदि मेरे दोनों भाई युद्व करने आये तो निश्चय ही तुम्हारा नाश कर देंगे।

58

इस प्रकार भयानक परिस्थितियों का संकेत देती हुई बड़े कठोर शब्दों से उसने भाँति-भाँति के भय दिखलाने की चेष्टा की। शूर्पणखा चिल्लाती हुई दौड़ी चली गयी। शीघ्र ही उसने अपने बड़े भाई से सहायता मांगी. जिसका नाम त्रिशिरा था। खर दूषण भी उसके ही भाई थे।

59

हे भाई त्रिशिरा ! आप मेरी सहायता कीजिए। आपको मेरे कष्टों और विपत्तियों के विषय में अभी कुछ भी ज्ञात नहीं है। आप सब भ्रम में पडे हुए हैं। आपने मेरे विषय में कुछ भी विचार नहीं किया है। एक भयानक शत्रु अब आपके निकट ही है, जिसने मुझे बहुत कठिन परिस्थिति में डालकर अथाह कष्ट पहुंचाया है तथा मेरा घोर अपमान किया है।

60

दो तपस्वी इस वन में आये हुये हैं। बड़े भाई का नाम राम है तथा छोटे भाई का नाम लक्ष्मण है। ऐसा प्रतीत होता है कि वे दोनों बड़े ही चरित्रवान एवं पवित्र विचारों वाले हैं। वे बहुत ही सच्चरित्र हैं और उनके अस्त्र शस्त्र भी बहुत ही शक्तिपूर्ण हैं। उन्होंने मेरे साथ घोर दुर्व्यवहार किया है।

61

उन दोनों में से लक्ष्मण अशिष्ट एवं बुरी प्रवृत्ति का है। उसने दुस्साहस कर मुझे अपार कष्ट पहुंचाया है। उसी व्यक्ति ने मुझे नासिका-विहीन भी कर दिया तथा मुझ पर किसी प्रकार की द्रया नहीं दिखलायी। जबकि मेरा कोई दोष नहीं था। लक्ष्मण ने जान बूझकर मुझसे क्रूरता का व्यवहार किया। अकारण ही मुझे उन्होंने

नासिका–विहीन कर दिया।

62

यदि तुम इस भीषण शत्रु की क्रूरता को देखते हुये उसे सहन करते रहे, चुपचाप बैठे रहे, मुझे कष्ट पहुंचाने वाले के प्रति यदि तुममें क्रोध का भाव जागृत न हुआ, तो मेरे जीवन का इस संसार में कोई अर्थ ही नहीं है। अब तो मेरी नाक भी काट दी गयी है और मैं नासिका–विहीन होकर घोर लज्जा का अनुभव कर रही हूं।

63

राजा रावण हमारे राजा हैं। उनके अतिरिक्त मेरे बहुत से बड़े भाई राक्षस ही हैं। यद्यपि मेरी शक्ति इतनी अधिक है, फिर भी शत्रु मुझसे लेशमात्र भी सशंकित नहीं है। जानबूझकर शत्रुओं ने मेरा घोर अपमान किया है, जबकि न तो मेरा कोई दोष ही था और न कोई विशेष कारण ही था।

64

इन परिस्थितियों में क्या मेरा जीवित रहना आवश्यक है ? मेरे लिये अब केवल मृत्यु ही श्रेयस्कर है। यदि आप लोग मेरे इतने अपमानित होने पर भी शत्रु के प्रति उदासीन बने रहे, उसके प्रति किसी प्रकार के क्रोध का प्रदर्शन आप सब ने न किया तो सभी को धिक्कार है। उन लोगों ने मेरे साथ दुर्व्यवहार करके मुझे इतना अपमानित किया है, जो मेरे लिये असह्य है। अब केवल मेरी मृत्यु ही मेरे लिये शेष रह गयी है।

65

इसीलिए यदि तुम लोग मेरे शत्रुओं पर आक्रमण कर उनको उचित दण्ड देने में समर्थ हो सकते हो, तो मेरे अपमान का बदला लेना संभव होगा। इसलिए तुम लोग राम तथा लक्ष्मण का वध कर दो। यदि मैं स्वयं अपनी रक्षा करने में समर्थ नहीं हूं, तो यह तुम्हारा सबका कर्तव्य है कि तुम मुझे आश्रय देकर अपनी शरण में लो। मेरे शत्रुओं से मेरी रक्षा करो। यदि शत्रु बहुत ही शक्तिशाली भी हो, तो भी उसके सर्वनाश का पूरा प्रयास करना तुम्हारा परम कर्तव्य है।

66

वे दोनों भाई राम तथा लक्ष्मण सदैव ही साथ–साथ नहीं रहते हैं। उनमें कई बातों में मतभेद भी है, अतएव उनमें भी पूर्णमित्रता का सर्वथा अभाव है। वे केवल कन्द मूल फल का ही आहार करते हैं अथवा विभिन्न प्रकार

की सब्जियों का प्रयोग करते हैं। उनके वस्त्र भी वृक्षों की छाल के ही हैं। वे देखने में दुर्बल हैं तथा घोर निर्धनता का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। वे निश्चय ही युद्व में तुमसे हार जायेंगे। उनको परास्त करने में तुम्हें एक क्षण का भी समय नहीं लगेगा।

67

नीच राक्षसी शूर्पणखा ने इस प्रकार अपने भाइयों को राम लक्ष्मण के विरुद्व पूरी तरह उकसाया। शूर्पणखा का भाई त्रिशिरा अपनी भगिनी के घोर अपमान की बात सुनकर क्रुद्व हो गया तथा बदला लेने के लिए तैयार हो गया। उसके मुख पर घृणा का भाव झलक आया। खर और दूषण भी क्रोधाग्नि में जलने लगे। वे तीव्र स्वर में चिल्लाने लगे। वे अपनी भुजाएं ठोक-ठोक कर युद्व के लिए तैयार हो गये। वे सिंह की भाँति गर्जना करते हुए इस प्रकार कहने लगे।

68

हे भगिनी शूर्पणखा ! दुःखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है। हम दोनों ही तुम्हारे शत्रुओं को पकड़ लायेंगे। क्या हम लोग वास्तव में नरभक्षक नहीं हैं ? हम लोग मनुष्यों को पकड़कर उनका आहार करते हैं। राम और लक्ष्मण का या अन्य मानवों का कोई दोष हो अथवा न हो, हम उनका वध अवश्य ही करेंगे।

69

उसके बाद ही उन्होंने सिंहनाद किया। राक्षसों की एक विशाल सेना लेकर उन्होंने युद्व के लिए प्रयाण किया। यह सेना अस्त्र-शस्त्रों से पूर्णतया सुसज्जित थी। वे सभी राम के स्थान पर जा पहुंचे। वे घोर रव करते हुये युद्व के लिए ललकारने लगे। उन्होंने राम और लक्ष्मण पर अपनी पूर्णशक्ति से आक्रमण किया। जैसे आकाश में बादल घिर आये हों, इसी प्रकार राक्षस-दल राम-लक्ष्मण पर उमड़ आया।

70

अपनी अपनी पताकाएँ उड़ाते हुए पूर्णरुपेण अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित विशाल किन्तु नग्न शरीर वाले वे राक्षस भीषण शब्द करते हुये दीख पड़े। भयानक रुप से उनकी जीभें निकली हुई बाहर तक लटकी थीं। उनक हाथों में बड़े-वड़े भाले थे। ऐसा लगता था जैसे राक्षस रुपी वृक्षों के साथ भाले कांटों की भाँति हों। वे बहुत ही तीक्ष्ण धार के थे और बहुत ही कठोर एवं भयावने थे।

71

तपस्या स्थल पर आते ही उन राक्षसों ने एक ही साथ राम लक्ष्मण पर घोर आक्रमण कर दिया। राम और लक्ष्मण भी राक्षसों से युद्ध करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने राक्षस दल पर भीषण वाणों की वर्षा की तथा भयानक राक्षस दल को धराशायी कर दिया। सभी राक्षस उस भयानक युद्ध में हताहत हुए। उनमें कोई भी जीवित नहीं वच सका। खेतों एवं मैदानों में चारों ओर राक्षसों के शवों के ढेर ही ढेर दिखायी दे रहे थे।

72

किसी का आधा शरीर कट गया था तो किसी का शरीर फट गया था। कोई जंघाओं के कटने से लंगड़ा हो गया था। उनके शरीर के जिस भाग पर वाण लगा, वही कट गया। किसी की हड्डियां चूर-चूर हो गयीं। कुछ ऐसे भी थे, जिनके हाथ तथा उगंलियां कट गये थे। वे भी अपंग होकर भूमि पर लोट रहे थे।

73

उन राक्षसों की दयनीय दशा देखकर अन्य राक्षसों का शरीर काँप रहा था। उनमें से ऐसे भी राक्षस थे जो युद्ध के मैदान को छोड़ कर पलायित हो गये थे। वाद में लज्जा के कारण वे लौटने में असमर्थ थे। उनकी मानसिक दशाएँ असन्तुलित हो गयी थीं। उनके मुख रक्त प्रवाह के कारण लाल-लाल वर्ण के दिखायी दे रहे थे। वाणों से उनके शरीरों पर तथा गर्दनों में भीषण घाव हो गये थे। उनकी आकृतियों को देखते ही वीभत्स दृश्य सामने आ जाता था। इस प्रकार राम और लक्ष्मण ने सम्पूर्ण नीच राक्षसों का वध कर दिया।

74

राक्षसों की पूरी सेना इधर-उधर बिखर गयी। जो सैनिक शेष वचे थे वे भी भयभीत होकर युद्ध में काँपने लगे। उसके पश्चात् क्रुद्ध होकर त्रिशिरा राक्षस घोर आक्रमण के लिए आगे आया। शूर्पणखा के अपमान के कारण वह वहुत ही क्रुद्ध था। वह सर्प की भाँति झपटा, गरुड़ की भाँति दोनों राजपुत्रों ने उसके आक्रमण को विफल कर दिया।

75

अपने तीक्ष्ण वाणों से राजपुत्रों ने उसकी गर्दन को ही अपना लक्ष्य बनाया। लक्ष्मण के बाण पक्षियों की भाँति उड़-उड़ कर आक्रमण करने लगे। वे श्वेत वर्ण के तथा बहुत ही तीक्ष्ण थे। वे सभी बाण त्रिशिरा की गर्दन पर लगे। उसकी गर्दन कट कर धड़ से अलग हो गयी, जिससे रक्त की भीषण धाराएं बह निकलीं।

76

युद्व–क्षेत्र में राक्षसों के मस्तक इस प्रकार भूमि पर लोट रहे थे जैसे पर्वत की श्रेणियां टूट–टूट कर पृथ्वी पर बिखर रही हों। गिर–गिर कर घायल राक्षस पृथ्वी पर लोट रहे थे। राम और लक्ष्मण को अब उनसे लेशमात्र भी भय नहीं था। नीच राक्षसों की सेना अब उनकी ओर दृष्टिपात करने का साहस भी नहीं कर सकती थी।

अध्याय – 5

1

इस प्रकार राक्षस त्रिशिरा का मस्तक धड़ से अलग हो गया। उसका कटा हुआ मस्तक पृथ्वी पर लोटने लगा। उसका धड़ आगे बढ़ने के लिए प्रस्तुत हुआ। इस भीषण दृश्य को देखकर खर दूषण क्रोध से आतुर हो उठे। अपनी सेना सहित वे आकाश में उड़ गये। उस भयानक सेना से आकाश पर जैसे काले-काले मेघ छा गये हों। तलवार, चक्र तथा भाँति-भाँति के अन्य अस्त्र-शस्त्र राक्षसों के हाथों में इस प्रकार चमक रहे थे जैसे काले बादलों में दामिनि दमक रही हो।

2

उन राक्षसों में से कई योद्धाओं ने आकाश से बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी। उनके बाण बज्र की भाँति कठोर तथा विष से बुझे हुए बहुत ही भयानक थे। उनके धनुषों की प्रत्यंचाएं भीषण टंकार करते हुए आकाश को गुंजायमान कर रही थीं। उनका घोर रव आकाश में बिज़ली की भाँति गर्जना कर रहा था। उसी अवसर पर श्री राम ने अपने बाणों से उस वातावरण को शान्त किया। प्रभंजन की भांति बाण चले और राक्षसों की माया के बादल छंटने लगे। उन्होंने दुष्ट राक्षसों पर आक्रमण कर उन्हें अपना निशाना बनाया। सभी राक्षस राम के भीषण प्रहार से आहत होकर पृथ्वी पर धराशायी होने लगे।

3

जब राम ने खर दूषण और त्रिशिरा जैसे भीषण राक्षसों को युद्ध में मार डाला, तो शूर्पणखा बहुत ही दुःखी हुई तथा कष्ट से पीड़ित होकर चिल्ला--चिल्ला कर रोने लगी। उसके पश्चात् दौड़ती हुई वह रावण के पास पहुंची। अपने भाइयों की मृत्यु का पूरा हाल उसने दशानन को सुनाया। आगे बढ़कर युद्ध करने का भी आग्रह उसने रावण से किया तथा उसे भी युद्ध के लिए प्रेरित किया।

4

हे राजन् ! आप दशमुख वाले वीर हैं। आप दैवी शक्तियों से संपन्न हैं तथा सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त कर चुके हैं। आपके शत्रु आपके समक्ष नतमस्तक रहते हैं। वे आपका पूर्ण आधिपत्य स्वीकार करते हैं। सभी आपसे भयभीत होकर डरते हैं। यहां तक कि सुरपति इन्द्र भी आपके आधिपत्य को स्वीकार कर चुके हैं। आपका इतना बल प्रताप है, अतएव आप शीघ्र ही मेरे शत्रुओं से मेरे अपमान का बदला लीजिए। हम सबका घोर अपमान हुआ है। शत्रुओं का यह कार्य आपके सम्मान के भी विरुद्ध है।

आप स्वयं जानते हैं कि आपने सम्पूर्ण विश्व में अपने प्रतिनिधि भेजकर घोषणा की थी कि जो आपसे लोहा लेना चाहे उसे आपकी चुनौती स्वीकार कर आगे आना चाहिए। सभी वनों को भी ढूंढा गया था। यह भी संभावना की गयी थी कि शायद तपिस्वयों में से कोई आपसे लोहा लेने के लिए सामने आ जाये। पर कोई नहीं आया। किन्तु आज एक ऐसी ही परिस्थिति सामने आ गयी है, जिस पर आपको विशेष रुप से ध्यान देना चाहिए। किसी प्रकार की भयानक संभावना का ज्ञान हो जाने पर आपको शान्त होकर बैठना नहीं चाहिए। पूरी तरह विचार करके तुरंत आपको निर्णय लेना चाहिए। यदि आप ऐसे तपस्वी शत्रु पर ध्यान न देंगे और उससे बदला नहीं लेंगे तो आपकी सम्पूर्ण सेना एवं शक्ति के नष्ट होने की भी संभावना उत्पन्न हो जायेगी।

6

खर, दूषण और त्रिशिरा तीनों ही महान वीर योद्धा थे। वे सब इन तपस्वियों द्वारा युद्ध में मारे गये। उन्हीं को दण्डक वन में जाकर शैलमालाओं की रक्षा करने का भार सौंपा गया था। इसी उद्देश्य से वे वहां गये थे। वे तीनों ही युद्ध में पराजित होकर धराशायी हुए। वे एक साथ ही मारे गये। वे अपने शत्रु राम का कुछ भी नहीं बिगाड़ सके। तपस्वियों ने उनका संहार कर डाला। वे तपस्वी राम तथा लक्ष्मण ही हैं। उन्होंने ही उनका वध किया है। उनसे अभी तक कोई बदला नहीं लिया जा सका।

7

यदि आप सभी राक्षस गण अपनी सुरक्षा के लिए उद्यत न हुए, तो राम सबका वध कर देंगे। अतएव आप सबको इस अपमान का प्रतिशोध राम से लेना चाहिये। मैं आग्रहपूर्वक कहना चाहती हूं कि ऐसा न हुआ तो आप सब शीघ्र ही काल-कवलित हो जायेंगे। यदि आप प्रयास नहीं करेंगे तथा क्रुद्ध होकर तपस्वियों से बदला नहीं लेंगे, तो निश्चय ही सभी लोग मारे जायेंगे। यदि राम और लक्ष्मण जीवित बने रहे तो आप उनके चक्र में शीघ्र ही फंस जायेंगे और काल के गाल में भी शीघ्र ही चले जायेंगे।

8

आप आनंदपूर्वक आहार-बिहार कर रहे हैं और झूठी डींगे मारते हुए अभिमानपूर्वक थोथी बातें कर रहे हैं। अपनी सेना सहित मदिरापान में आप डूबे हुए हैं। सभी आनंदप्रिय वस्तुओं का आप भाँति-भाँति प्रकार से रस ले रहे हैं। कभी भी आपने उसके परिणामों पर विचार नहीं किया है। यह सब होने पर भी आप सभी शत्रुओं के प्रति बहुत ही क्रूरतापूर्वक व्यवहार करते रहे हैं। सदैव ही उन्हें आप दण्डित भी करते रहे हैं। अब एक भीषण शत्रु से संघर्ष करने का अवसर आ गया है। आपका यह शत्रु भी बहुत ही भीषण एवं शक्तिशाली है। उसको दण्ड देना आप सबका कर्तव्य है।

9

दण्डक वन में तपस्वी निर्भीक होकर स्वच्छन्द विचरण कर रहे हैं। प्रत्येक दिवस होम तथा यज्ञादि कर्म संपन्न होते हैं। ऋषि मुनि भी उनके साथ ही साथ यज्ञादि करते हैं। अब तो राक्षसों का नाम भी दण्डक वन में शेष नहीं बचा है। इसीलिए यज्ञ आदि में किसी प्रकार की बाधा भी उत्पन्न नहीं हो पाती है। रघुवंशी श्री राम तथा लक्ष्मण के कारण सभी राक्षस भयभीत रहते हैं।

10

यद्यपि राम के साथ कोई शक्तिशाली सेना भी नहीं हैं, फिर भी खरदूषण की अथाह बलशाली राक्षस सेना राम के आगे ठहर न सकी। उन भयानक राक्षसों में एक भी ऐसा नहीं था जो राम को आहत कर सकने में समर्थ हो सकता। राम भयानक शत्रु के रुप में बिना किसी हानि के युद्ध में डटे रहे, जबकि राक्षस सेना के झुण्ड के झुण्ड राम के तीक्ष्ण बाणों से घायल होकर धराशायी हो गये। उनके शस्त्रों का समूह रणभूमि में पटा पड़ा हुआ था। घायल राक्षस भूमि पर लोट-लोट कर अपने प्राण त्याग रहे थे। इसका एकमात्र कारण भी यही है कि राम के बाण भीषण और तीक्ष्ण हैं। उनको यमराज की संज्ञा दी जा सकती है।

11

दधि, मक्खन आदि उनका भोजन है। वे सुन्दर मधुर फलों का भी रसास्वादन करते हैं। सभी महत्वपूर्ण देवतागण तथा अन्य देवता भी वहाँ तृप्ति से भोजन करते हैं। आजकल वे आनंदमग्न होकर जीवन व्यतीत करते हैं। यद्यपि आपकी सेना में विशालकाय शक्तिशाली राक्षस समूह हैं फिर भी वे सभी भूखों मर रहे हैं। डर से भयभीत होकर इधर-उधर वे छिपे रहते हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि वे राम तथा लक्ष्मण के शौर्य से आतंकित हैं। वे दोनों भाई युद्ध कला में पूर्ण निपुण हैं।

12

इसीलिए मैं आपसे आग्रह करती हूं कि सबकी सुरक्षा का आपको पूरा प्रयास करना चाहिए। विवेक से शत्रु पर विजय पाने का प्रयत्न कीजिए। अपने विचारों को पूर्णरुपेण सन्तुलित कीजिए। सभी प्रकार के आनंद और उत्सवों का परित्याग कीजिए, जिससे कि सदैव ही आप सबकी सुरक्षा विधिवत होती रहे। जीवन में उन्नति तथा ऐश्वर्य सदैव ही स्थिर रुप में नही रहते। यह सभी वस्तुएँ एक क्षण में ही नष्ट हो जाती हैं। इसीलिए सदैव ही सतर्करहकर सभी की सुरक्षा की पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। बुद्धिमत्तापूर्वक सभी कार्य करना ही उचित है। अतएव इस विषय में तनिक भी ढील देना उचित नहीं है।

13

राम के साथ एक सुन्दर स्त्री भी है जो उनकी पत्नी है। वह अपने सौंदर्य के कारण संसार की एक अपूर्व सुन्दरी भी है। उसके शरीर से हरीतिमा की कान्ति-किरणें फूट रही हैं। उसका व्यवहार अत्यन्त मृदु है। वह पूर्ण प्रेममयी है। वह प्रेम-व्यवहार में पूर्ण कुशल है। उसका स्वर कल-हंसनी की भांति मधुर है। यदि कोई उसके मधुर स्वर को सुने तो आनंदमग्न हो सकता है। उसको आप अपने लिए प्राप्त कीजिए। यदि ऐसी स्त्री-रत्न आपको मिल सके तो आप कृतकृत्य हो जायेंगे। मेरे शब्द भी निरर्थक नहीं हैं। आप उन पर पूरा विचार करके उस स्त्री को प्राप्त करने का यत्न कीजिए।

14

यदि यौवन भार से लदी ऐसी सुन्दरी युवती को तुम अपनी आँखों से देखो, तो क्या कभी अपने नेत्रों पर अधिकार कर सकते हो। ऐसी अपूर्व सुन्दरी तुमने अभी तक कभी नहीं देखी होगी। तुम्हारी नासिका और तुम्हारे ओष्ठों का कोई अर्थ नहीं है, यदि तुमने उस युवती का चुम्बन न किया। तुम्हारे कर्ण-कुहरों का भी कोई अर्थ नहीं है यदि तुमने उसके मधुर वचनों को अपने कानों से नहीं सुना। जो भी व्यक्ति उस स्त्री-रत्न को प्राप्त करेगा, उसके जीवन में आनंद की धाराएँ बहने लगेंगी। उसके सुख-समृद्धि की सीमा नहीं रहेगी। हर्षोल्लास से उसका जीवन भर जायेगा।

15

वह स्त्री-रत्न एक आनंद-उद्यान की भाँति मनोरम है। उसमें आनंद उल्लास की सभी सामग्री है। राम की पत्नी सभी प्रकार की प्रसन्नता एवं हर्ष का प्रतीक है। यदि तुम उसको अपनी स्त्री के रुप में प्राप्त कर सको तो कभी भी तुम अपने जीवन में अन्य किसी सुन्दरी की आकांक्षा नहीं करोगे। जो भी उस अनुपम सुन्दरी को देखेगा, वही उसे पाने के लिए उत्सुक एवं आतुर हो जायेगा। निश्चय ही उसके हृदय में राम की पत्नी से प्रेम की अभ्यर्थना करने की अभिलाषा जागृत होगी। यदि उस सुन्दरी को प्राप्त करने में तीनों लोंको को भी त्याग देना हो, तो भी उन्हें त्याग कर भी उस स्त्री-रत्न को प्राप्त करना चाहिए। इस प्रकार सर्वस्व देकर भी यदि वह स्त्री प्राप्त हो सके तब भी उसे ले आने में कभी संकोच नहीं करना चाहिए।

16

भगवान विष्णु की पत्नी लक्ष्मी तथा देवराज इन्द्र की इन्द्राणी शची भी सुन्दरता में राम की पत्नी सीता की समता नहीं कर सकतीं। देवी उमा, देवी रोहिणी तथा देवी रति, जो सौंदर्य की प्रतीक मानी जाती हैं, वे भी राम की पत्नी सीता के समकक्ष नहीं रक्खी जा सकतीं। ये सभी देवंगनाएँ वास्तव में सौंदर्य की चरम सीमाएँ हैं ऐसा कुछ

मूर्खों का विश्वास है परन्तु मेरा यह दृढ़ विश्वास एवं विचार है कि राम की स्त्री में ही सौंदर्य की पराकाष्ठा है।

17

जब नीच शूर्पणखा ने दशमुख रावण से इस प्रकार बल देकर सीता के अपार सौंदर्य का वर्णन करते हुए, उसे उकसाया और प्रेरित किया तो दशमुख ने उन मोहक शब्दों को सुनकर शीघ्रता से उनका उत्तर दिया। हे वहिन ! तुम अपने हृदय में किसी प्रकार का क्लैश मत करो। तुम्हारे इस प्रकार दुःखी होने का भी कोई कारण नहीं है। मेरा नाम भी रावण है। मैंने भी सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त की है।

18

तुम कुछ समय तक धैर्यपूर्वक प्रतीक्षा करके देखो। मैं वही रावण हूं, जिनका आधिपत्य इन्द्र ने भी स्वीकार किया है। जैसा कि विश्व विदित है, कुलिश, इन्द्र का वज्र मेरे वक्षस्थल से टकराकर चूर-चूर हो गया था। वह मेरे वक्ष को घायल न कर सका। मैंने इन्द्र के हाथी ऐरावत को पकड़ लिया था। उसे अपने स्थान से टस से मस न होने दिया। यहाँ तक कि वह हिल भी नहीं सका। कोमल घास की भाँति मैंने उसको पृथ्वी पर लुढ़का दिया था।

19

हे वहिन ! अव आओ। रावण की अतुल शक्ति को देखो। विश्व में आज मेरे समकक्ष अन्य कोई नहीं है। सदैव ही मेरे राजमहल पर पूर्ण चन्द्र की आभा झलकती रहती है। उसकी मधुर चाँदनी में मेरा राजमहल डूबा रहता है। कभी भी चांदनी का प्रकाश कम नहीं होता है। सभी देवतागण मुझे कर देते हैं। सभी देवता मुझसे भयभीत भी रहते हैं। स्वर्ग की सभी अमूल्य वस्तुओं अर्थात स्वर्ग की सम्पूर्ण सम्पदा को और अन्य अनेक प्रकार की वहुमूल्य सामग्री को मैं पृथ्वी पर ले आया हूं। ये सारी वस्तुएँ मेरी शक्ति का पूर्ण प्रमाण प्रस्तुत करती हैं।

20

तुम्हारे द्वारा कहे गये शब्द बड़े ही उपहासास्पद हैं। उनको सुनकर मुझे वहुत ही लज्जा आती है और उसका गहरा अनुभव होता है। यदि मैं दाशरथ राम से युद्ध करने के विषय में विचार करु तो राम एक ऐसे मनुष्य हैं जिनमें शक्ति नहीं है। वह अपूर्व बल तथा शक्ति, जो मुझे प्राप्त है, उसका राम में सर्वथा अभाव है। तुम पर मेरा अथाह प्रेम है, अतएव हे बहिन ! इस विषय में जो भी तुम्हारी आज्ञा होगी, मैं निस्संकोच उसका पालन करुगा।

21

इस प्रकार रावण ने शूर्पणखा के हृदय को पूर्ण आश्वस्त करते हुए उसे अपार सन्तोष दिलाया। इसके पश्चात शीघ्र ही आकाश मार्ग की ओर से प्रस्थान करने के लिएं रावण प्रस्तुत हुआ। तीव्रगति से तत्काल वह इस प्रकार उड़ा, जैसे क़ोई कल्पना की उड़ान भर रहा हो। उसके हाथ में उसकी प्रसिद्ध तलवार चन्द्रहास भी थी, जिसको वह सदैव ही अपने साथ रखता था। उसके पश्चात वह सागर तट पर आ गया। तटवर्ती सागर के क्षेत्र पर उसने अपना स्थान बनाया।

22

राक्षस मारीचि को आवश्यक आदेश देने के लिए रावण उसके पास गया। मारीचि के पास जाना रावण के लिए बहुत महत्वपूर्ण था। मारीचि के पास आने के पश्चात उसने मारीचि को अपनी इच्छानुसार आवश्यक आदेश दिये। जिस कार्य को कार्यान्वित करने के लिए उसने योजना बनायी थी उसे उसने मारीचि को पूरी तरह स्पष्ट कर दिया। उसके बाद अपना शस्त्र उठाते हुए उसने मारीचि से कार्य को शीघ्र संपत्र करने का आग्रह किया। मारीचि ने भी किसी प्रकार अपने को सन्तुलित किया। वह रावण के इस आग्रह से बहुत भयभीत हो गया। उसे राम के बाण की शक्ति का पहले ही अनुभव हो चुका था। राम के बाण से आहत होकर पहले ही वह बहुत दूर जा गिरा था।

23

हे महाराज दशमुख ! आप निश्चय ही मेरा वध करवा देंगे। यदि आप राम से युद्ध करेंगे तो निश्चय ही अपने प्राणों की रक्षा करना हमारे लिए असंभव हो जायेगा। श्री राम रघुकुल–तिलक हैं। वे सर्वशक्तिमान हैं। आपकी यह तलवार चन्द्रहास राम के बाणों के समक्ष कुछ नहीं कर सकती। इसीलिए आप दाशरथ राम से युद्ध के लिए प्रस्तुत न हों। उनके पास जाने के लिए उद्यत होना भी उचित नहीं है।

24

एक बहुत बड़े पराक्रमी योद्धा एवं ऋषि परशुराम (जामदग्नि) हैं। उन्होंने इस पृथ्वी पर अनेक राजाओं का वध कर दिया था। उन्होंने सहस्त्रबाहु का युद्ध में संहार कर डाला। उन्होंने भी राम के समक्ष अपनी पराजय स्वीकर की। विविध युद्धों में महान विजयी राम के समकक्ष संसार में अन्य कोई दूसरा योद्धा नहीं है।

25

आप स्वयं देखिए क्या राम ने ही ताड़का राक्षसी का वध नहीं किया ? उन्होंने ही वन में ऋषि मुनियों की सुरक्षा का पूरा प्रबन्ध किया। उस अवसर पर हम सबको भागने के लिए विवश होना पड़ा और युद्ध–क्षेत्र से पीछे हटना पड़ा। राम के वायु बाणों से बहुत अधिक घबराकर मैं युद्ध में त्रस्त हो गया। राम ने अपने तीव्र वाणों से मुझे बहुत दूर फेंक दिया। हे महाराज ! अभी आप राम की शक्ति का पूरा अनुमान नहीं लगा पाये हैं। वे बहुत ही तीव्रगति से बाणों की वर्षा करने में निपुण हैं।

26

राम बहुत बड़े पराक्रमी योद्धा हैं। उनको धुनर्विद्या में पूर्ण कुशलता प्राप्त है। उनकी समकक्षता कोई भी धनुर्धर योद्धा नहीं कर सकता है। सभी असुर एवं राक्षस उनके भय से इतने भयभीत हो गये हैं कि उनमें से कोई भी उन पर आक्रमण करने का साहस नहीं करता है। राम को कड़ा प्रत्युत्तर दिया जा सके ऐसा साहस किसी में भी नहीं रह गया है। इससे पूर्व कि क्रोधातुर होकर राक्षस समूह उन पर आक्रमण करे और क्रोध प्रदर्शित करते हुए राम पर टूट पड़े, राम अपने तीव्र बाणों से राक्षसों के मस्तक धड़ से अलग कर देते हैं। इस प्रकार राम सम्पूर्ण राक्षस सेना का संहार कर डालते हैं। उन्होंने ही खर दूषण ओर त्रिशिरा जैसे योद्धाओं को युद्ध–क्षेत्र में धराशायी कर दिया।

27

सीता स्वयंवर के अवसर पर राम जनकपुरी में गये थे। इस प्रकार उन्होंने राजा जनक के व्रत को पूरा किया। एक बहुत बड़ी सभा के मध्य में शिवजी का धनुष रखा गया था। सभी राजागणों ने, जो वहाँ पर उपस्थित थे अपनी शक्ति का परीक्षण धनुष उठाने में किया। धनुष को चढ़ाने का पूरा प्रयास किया। किसी को भी उसमें सफलता प्राप्त नहीं हो सकी। चाहे जैसे भी हुआ हो राम ने ही उस धनुष को चढ़ाया और तोड़ दिया। उसके खण्ड–खण्ड करके उन्होंने उसे पृथ्वी पर फेंक दिया।

28

आप एक बड़े यशस्वी राजा हैं। आनंद एवं उल्लासमय जीवन प्रतिदिन आप व्यतीत कर रहे हैं। रसपूर्ण भोजन करके मदिरा पान के पश्चात आप मस्त रहते हैं। आपका सुरापान का क्रम तो निरन्तर चलता ही रहता है। अपनी राक्षस सेना के साथ आप हर्ष एवं सुख का जीवन व्यतीत करते हैं। सदैव ही मदिरापान में डूबे रहने में आनंद का आप अनुभव करते हैं। ऐश्वर्य एवं सुख के सभी साधन आपके पास हैं। आप भांति–भांति के सुगन्धित पुष्प धारण करते हैं। इत्र तैल आदि सुगन्धित वस्तुओं का भी प्रयोग आप करते हैं। इस प्रकार जीवन की मधुरताओं में डूब कर आप इस जीवन में आनंद मना रहे हैं। आपके पास ऐसी कौन सी महान शक्ति है, जिसके बल पर आप राम को युद्ध में परास्त कर सकते हैं। मेरा तो यह अनुमान है कि राम से युद्ध करके जीतना आपके लिए कठिन

है। आप इस परिस्थति के प्रति पूर्ण सतर्कहोकर, पहले शक्ति का संचय कीजिए।

29

मारीचि ने दशमुख रावण से इस प्रकार कहा। इसके पश्चात ठहरकर आग्रहपूर्वक उसने फिर कहा कि वे वापस लौट जायं। उसने राम की अपार शक्ति और गुणों की भूरि-भूरि प्रशंसा की। वह रावण के मन में भय उत्पन्न करने का निरन्तर प्रयास कर रहा था। वह स्वयं भी राम से बहुत भयभीत था। इन बातों को सुनकर रावण क्रोध से लाल हो गया। उसने मारीचि से इस प्रकार कहा :

30

हे मारीचि ! तुम पूर्ण अशिष्ट हो। तुम कृमिवत नीच़ हो। तुम तो वज्र मूर्ख एवं श्वान की भाँति हो। यह तुम्हारे शब्द ठीक नहीं हैं। तुम्हारा कथन कभी भी सही नहीं हो सकता। इस प्रकार की बातों से कई भ्रम भी उत्पन्न हो जाते हैं। राम ने निश्चय ही परशुराम को पराजित कर दिया। यह सत्य है। परशुराम के हारने का एकमात्र कारण परशुराम की वृद्धावस्था ही थी, जबकि राम अभी पूर्णरुपेण युवा हैं।

31

राम ने राक्षसी ताड़का का वध किया है, पर इसी कारणवश तुम्हें राम की प्रशंसा नहीं करनी चाहिए। उनमें हम सबके समक्ष टिकने की शक्ति नहीं है। उनके साथ बलशाली सेना भी नहीं है। राम को खर दूषण तथा त्रिशिरा के वध के पश्चात उचित प्रत्युत्तर भी नहीं दिया गया है, इसीलिए वे अपने को बहुत शक्तिशाली समझते हैं। यदि ऐसे व्यक्ति की भी तुम भूरि-भूरि प्रशंसा करते हो तो निश्चय ही ऐसा प्रतीत होता है कि तुम राम से बहुत अधिक भयभीत हो। तुम एक शैतान एवं वज्रमूर्ख हो। तुम जाओ और मेरी आज्ञा का पालन करो।

32

निश्चय ही राम तुम्हारे ऊपर बाण का प्रहार करेंगे। इसी डर से तुम शक्तिहीन एवं भयभीत दिखाई देते हो। तुम्हारा हृदय भय से कम्पित है। तुम भय के कारण ही अपनी शक्ति खो बैठे हो। राम के बाण तो इतने शक्तिशाली नहीं है, जितनी तुम्हारी कल्पना तुम्हें भयग्रस्त कर रही है। वायु भी अब तीव्र गति से नहीं बह रही है। अतएव तुम अपना कार्य प्रारम्भ कर दो। यदि तुम्हें बहुत अधिक भय लगता है, तो राम के बाण चलाते ही तुम जितनी तीव्र गति से संभव हो, दौड़ो। तुम्हें बिना किसी चिन्ता के यही मार्ग अपनाना चाहिए।

33

राम की प्रशंसा के विषय में तुम्हारे अन्य विचार भी हैं। तुम्हारे कथनानुसार राम की शक्ति अपार है। उन्होंने शंकर का धनुष भंग कर दिया है। यह बात भी सत्य है। वह धनुष भी पुराना एवं जीर्ण था। अतएव उसे जीर्ण–शीर्ण ही कहा जा सकता है। वह धनुष भी बहुत समय से रखा हुआ था, इसलिए उसे दीमक ने खा लिया था। उसमें स्थान–स्थान पर छिद्र भी हो गये थे। अतएव वह बड़ी ही जीर्णावस्था में था, इसीलिए राम ने बड़ी सरलता से उस धनुष को तोड़ डाला। प्रारम्भ में जिन राजाओं ने धुनष पर बाण चढ़ाने का प्रयास किया था, वे बहुत ही साधारण कोटि के व्यक्ति थे। अतएव राम का यह कार्य भी कोई बहुत प्रशंसनीय नहीं कहा जा सकता।

34

खर, दूषण और त्रिशिरा का वध भी राम की प्रशंसा का कोई विशेष कारण नहीं माना जा सकता है। वे सभी बड़े ही प्रमादी एवं साधारण कोटि के राक्षस थे। यही कारण है कि वे तीनों युद्ध क्षेत्र में राम के हाथों धराशायी हुए। यदि वे शौर्यपूर्ण ढंग से राम पर भीषण आक्रमण करते तो निश्चय राम को युद्ध में मार सकते थे। यह कार्य भी केवल एक क्षण का ही था। उनका यह आक्रमण कभी भी विफल नहीं हो सकता था।

35

क्या वास्तव में राम की शक्ति इतनी महत्वपूर्ण है कि उसकी बार–बार प्रशंसा की जानी चाहिए ? तुम वज्रमूर्ख हो, इसीलिए बार–बार राम की झूठी प्रशंसा कर रहे हो। तुम राक्षस कुल के द्रोही हो। तुम्हारे विचार शत्रु के प्रति पक्षपातपूर्ण हैं। इसीलिए तुम उनके प्रति इतनी अधिक श्रद्धा–भक्ति रखते हो। मेरे प्रति तुम्हें कोई सहानुभूति भी नहीं है। मेरे गुणों और भलाइयों के प्रति भी तुम पूर्ण उदासीन हो। तुमने कभी भी मेरी प्रशंसा नहीं की है। अतएव अब तुम्हें बहुत ही सचेत रहना चाहिए। तुम द्रोही हो। तुम्हारी मृत्यु अवश्य ही होगी। तुम्हारे इन नीच विचारों से निश्चय ही तुम्हारा पतन होगा।

36

इस प्रकार मारीचि को अपशब्द कहते हुए रावण ने अपनी तलवार खींच ली। क्रोध से उसकी मूंछें काँप रहीं थी। उसके सारे शरीर पर श्रमकण झलक रहे थे, क्रोध से उसका मुख लाल हो रहा था। उसकी आकृति भयावह हो गयी थी। मारीचि के मन में भय उत्पन्न हो गया। उसने रावण से प्राणों की भिक्षा माँगी।

37

मैं आपका सेवक हूं तथा आधिपत्य स्वीकार करता हूं। आपकी आज्ञा का पालन करना मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। मैं किसी भी रुप में द्रोही नहीं हो सकता। जैसी भी आपकी आज्ञा एवं आदेश होगा उसी के अनुसार

जहाँ तक संभव हो सकेगा मैं उसका पालन करुगा। आप मुझे आदेश देने की कृपा करें। अपने धर्म के अनुसार भी आपकी सेवा करना ही मेरा कर्तव्य है। एक सेवक एवं भक्त का यह भी दायित्व है कि वह अपने स्वामी को वास्तविक़ता के प्रति पूर्णरुपेण सचेत कर दे। आवश्यक यह है कि आपकी पूरी सुरक्षा हो सके।

38

यदि आप राजाओं के पालन करने योग्य नियमों का पूरी तरह पालन नहीं करते हैं तो निस्संकोच अपने ढंग से अपने कार्यों को कीजिए। एक राजा को सभी अच्छाइयों एवं गुणों के आधार पर ही कार्य करना चाहिए। राजा को स्वयं भी सद-असद के विवेक से चलना चाहिए। यही उसका कर्तव्य भी है। अब आज्ञा दें। मैं आपकी आज्ञा का पालन करुगा तथा आपके आदेश के अनुसार ही कार्य करुगा। मैं स्वर्ण मृग का रुप धारण करुगा। उस स्वर्ण मृग के रोम स्वर्णिम होंगे। इस प्रकार स्वर्ण मृग बनकर मैं राम के समक्ष जाऊंगा।

39

वहाँ पर जाकर राम तथा लक्ष्मण को मैं एक दूसरे से बहुत दूर कर दूंगा। इस प्रकार आपकी इच्छा एवं योजना के अनुसार सभी कार्य किया जाएगा। मैं यह कहना बहुत आवश्यक नहीं समझता हूं कि मैं आपके आदेश को कार्यान्वित करने के लिए सदैव ही प्रस्तुत हूं। इस प्रकार मारीचि ने रावण को अपने शब्दों से पूरी तरह आश्वस्त किया तथा योजना को अन्तिम रुप देने के पश्चात रावण तथा मारीचि साथ-साथ आगे बढ़े। जब दोनों उस वन के निकट पहुंच गये, जहाँ राम, लक्ष्मण तथा सीता की कुटी थी, तो मारीच स्वर्ण मृग के रुप में परिवर्तित हो गया।

40

उस स्वर्णमृग का वर्ण स्वर्णाभा से चमक रहा था। उस मृग की रुचिरता मनमोहक थी। उस चमक से विचित्र प्रकार की कोमलता का संकेत मिल रहा था। उस स्वर्णमृग का सुन्दर रुप अन्यन्त आकर्षक था। उसके शरीर के रोम-रोम से कोमलता एवं सुन्दरता का आभास हो रहा था। उसका शरीर पूर्णतः स्वर्णिम था। वह रक्त वर्ण का स्वर्ण ही प्रतीत हो रहा था। वह मृग, विशेष संकेत के रुप में जान-बूझकर सीता के निकट आ गया। उसे देखकर सीता आश्चर्य चकित हो उठीं और वे अत्यन्त प्रसन्न हो गयीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि यह स्वर्ण मृग पालतू है। वह निस्संकोच वन-विहार कर रहा है।

41

सीता ने बार-बार उस स्वर्ण मृग के चर्म की चमक और सुन्दरता को देखा। उन्होंने उसकी भूरि-भूरि

प्रशंसा की। उस मृग के रुचिर चर्म से मृगछाला बनाने की अभिलाषा उन्होंने व्यक्त की। उस मृग का शरीर बहुत ही कोमल दिखायी देता था। कोमलता से उसके रोम-रोम से सौंदर्य टपक रहा था। उस स्वर्ण मृग के अनुपम सौंदर्य एवं आकर्षण के कारण सीता का मन उस पर मुग्ध हो गया। उसे प्राप्त करने की अभिलाषा भी उनके हृदय में जागृत हुई। उसके वाद उन्होंने उस स्वर्णमृग को पकड़कर उसे अपने पास लाने के लिए राम से आग्रह किया।

42

राम सदैव ही सीता की सभी इचछाओं की पूर्ति करने के लिए प्रस्तुत रहते थे। वह भी हिरन को देखकर उससे बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने अपने छोटे भाई लक्ष्मण को तपस्या-स्थल एवं कुटी की सुरक्षा का भार सौंपा। वे शीघ्र ही स्वर्ण मृग का पीछा करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने स्वर्णमृग के निकट जाकर उसे पकड़ने का प्रयास किया तथा एक तीक्ष्ण बाण मारा जो उसको लगा नहीं। वड़ी तीव्रता से उछलता, कूदता तथा छलागें मारता हुआ वह स्वर्ण मृग भागने लगा।

43

वह कभी-कभी जानबूझ कर चुपचाप खड़ा भी हो जाता था। तब लगता था जैसे वह गतिहीन हो गया हो। कभी-कभी राम के निकट आकर वह खड़ा हो जाता और दृष्टिगोचर हो जाता। कभी-कभी दृष्टि से ओझल भी हो जाता था। जब उसके पास जाकर राम उसे पकड़ने की चेष्टा करते, तो तीव्र गति से भाग कर वह दूर चला जाता था। हाथ से स्पर्श करते ही वह सरक जाता था। उसके रोम इतने सरकने वाले एवं कोमल थे कि जैसे तैल का प्रयोग करके उनको कोमल बनाया गया हो। राम के शक्तिशाली हाथ जब तक उसे छूते, वह आगे भाग जाता था। राम के हाथ शीघ्र ही ढीले पड़ जाते थे। वह निकल कर और अधिक आगे भाग जाता था।

44

राम ने उस स्वर्ण मृग का बड़ी दूर तक पीछा किया। स्वर्ण मृग उनके हाथ न आ सका। यहां तक कि उसने राम को बहुत अधिक श्रान्त कर दिया। राम उसका पीछा करते-करते हार से गये, अतएव वे रुककर कुछ समय के लिए खड़े भी हो गये। राम इस विचित्र परिस्थति में अत्यन्त क्रुद्ध होकर श्रान्त हो गये थे। उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाया तथा लक्ष्य सांध कर स्वर्ण मृग पर बाण चला दिया।

45

बाण के लगते ही हिरन के एक भाग की अस्थियाँ चूर-चूर होकर बिखर गयीं। उसके शरीर से रक्त की धारा बह निकली। उसकी आँतें बाहर निकल कर बिखर गयीं। जब उसने अपने प्राणों का त्याग किया तो

वह भीषण रव में चिल्लाया। ऐसा लगा जैसे उस पर कोई महान विपत्ति टूट पड़ी हो। सीता उस स्वर को सुनकर बहुत दुःखी हुईं। उस स्वर में एक आर्तनाद था। ऐसा प्रतीत हुआ कि वह स्वर राम का ही था। वे ही अपनी सहायता के लिए जैसे किसी को उस करुण स्वर में पुकार रहे हों।

46

इस करुण स्वर को सुनते ही दुःखी होकर सीता रुदन करने लगीं। उन्होंने लक्ष्मण से राम के पास जाने का आग्रह किया। उन्होंने कहा हे लक्ष्मण ! आप शीघ्र ही जाइए तथा अपने बड़े भाई की सहायता कीजिए। शीघ्र ही इस कार्य को पूरा कीजिए। आपको राम ने बुलाया है। उनके स्वर से ऐसा प्रतीत होता है कि उन्होंने आपको अपनी सहायता के लिए ही अपने पास बुलाया है। ऐसा लगता है कि आपको अपने भाई से बिल्कुल प्रेम नहीं है। अतएव मेरा आग्रह है कि आप शीघ्र ही जाकर राम की सहायता कीजिए।

47

उस समय रोते-चिल्लाते हुए सीता ने लक्ष्मण से यह शब्द कहे। राम के प्रति उनके मन में अपार प्रेम था, इसीलिए उनके मन में भाँति-भाँति की शंकाएँ भी उत्पन्न होने लगी थीं। सीता की बात सुनकर युवक लक्ष्मण ने दृढ़तापूर्वक उत्तर दिया। उनके हृदय में लेशमात्र भी भय का कोई भाव नहीं था। उनको अपने बड़े भाई की शक्ति पर पूरा विश्वास था। लक्ष्मण ने सीता से कहा कि राम को कोई भी युद्ध में कभी परास्त नहीं कर सकता है।

48

आप भी रघुवंशियों के तिलक राम की पत्नी हैं और मेरे भाई राम की प्रिया है। आपके पिता जनक भी हम सबके पूज्य हैं। आपकी यह व्याकुलता व यह व्यवहार अशोभनीय है। डर के कारण आप रोने चिल्लाने लगें, यह ठीक नहीं है। क्या आपने राम का आर्तनाद सुना है। ऐसा कौन व्यक्ति है जो राम के प्रति इस प्रकार की सन्देहपूर्ण बातें सोच सकता हैं। अतएव आप इस शंका तथा भ्रम को दूर कीजिए तथा शान्त हो जाइए।

49

संसार में इतना शक्तिशाली योद्धा कौन है जो राम से युद्ध में संघर्ष कर सके। राजपुत्र राम का शौर्य विश्व विदित है। वे महान शक्तिशाली योद्धा हैं। उनको सभी अस्त्र-शस्त्रों का पूरा ज्ञान है। उनमें वे पूर्ण पारंगत भी हैं। क्या उनकी मृत्यु के विषय में ऐसी कोई संभावना कभी भी की जा सकती है ? उस पर क्या एक मृग में इतनी शक्ति है कि अपने सींगों के प्रहार से वह राम को आहत कर सके।

50

इस जगत में जितने भी उत्तम रघुवंशी हुए हैं उनके विषय में आपने भली भाँति सुना है। क्या वे कभी मृत्यु के भय से भयभीत हुए हैं ? क्या ऐसे उत्तम कुल के योद्धा राम कभी किसी से युद्ध में सहायता की अपेक्षा करते हैं ? रघुवंशियों का यह सहज स्वभाव है कि वे युद्धक्षेत्र में कभी भी पीछे नहीं हटते, कभी भी कोई रघुवंशी युद्ध के मैदान को छोड़कर नहीं भागा। युद्ध क्षेत्र में संघर्ष करते हुए प्राणोत्सर्ग करना रघुवंशी अपना धर्म समझते हैं। यदि कोई भीषण शत्रु भी उनसे युद्ध कर रहा हो तो भी निडर होकर युद्ध करना वे अपना कर्तव्य मानते हैं। युद्ध में संघर्ष करते हुए प्राणों का त्याग उनके लिए महान गौरव का विषय है।

51

ऐसा प्रतीत होता है कि यह स्वर्ण मृग जानबूझ कर यहां मरने के लिए ही स्वतः आया था। यदि इस मृग के असाधारण व्यवहार पर विचार किया जाय, तो ऐसा लगता है कि यह कोई मायामृग है। राम ऐसे मृगों से कभी भी भयभीत नहीं हो सकते। राम के बाण के लगने से मृग को अत्यन्त लाभ होगा। जब राम के बाण से उसकी मृत्यु होगी तो उसे और भी अधिक गौरव प्राप्त होगा। इस प्रकार की कल्पना से ही वह स्वर्ण मृग राम के समक्ष आया था। वह जानता था कि राम का बाण अग्नि बाण होगा। उसी अग्नि में जलकर वह भस्मसात हो जाएगा। राम के बाण की अग्नि को झेलना भी कठिन है। वह एक प्रकार से अग्नि में कूदने के ही समान है। उससे बचना भी असंभव है।

52

आप इस वास्तविकता पर पूरा विचार कीजिए। इस जगत में कौन व्यक्ति है जो राम की अपार शक्ति को देखकर आश्चर्यचकित नहीं हो जायेगा। वे शत्रु पर पूरी तरह छा जाते हैं। उनके समकक्ष योद्धा इस जगत में दूसरा नहीं है। इसीलिए आप किसी भी अशुभ की कल्पना न करें। दुःखी होने अथवा रोने चिल्लाने की आवश्यकता नहीं है। राम शीघ्र ही उस मृग को मारकर लायेंगे। स्वयं उनकी इच्छा भी उस हिरन को लाने की ही थी।

53

जो स्वर आर्तनाद का संकेत सा था, वह राम का स्वर नहीं हो सकता। यह एक दुष्ट राक्षस का स्वर था। इसमें राक्षसी माया एवं छल प्रपंच का संकेत मिलता है। यह सब कपट जानबूझ कर किया गया प्रतीत होता है। यह आर्तनाद स्वर्ण मृग का स्वर है। बाण लगने के पश्चात ही उसके मुख से यह स्वर निकला होगा। यह मेरा दृढ़ विचार है कि वह स्वर ही भ्रमवश आपको राम के स्वर के समान प्रतीत हुआ है।

54

इस प्रकार जब लक्ष्मण ने सीता के समक्ष अपने विचार प्रस्तुत किये तो सीता उस बात से पूरी तरह आश्वस्त नहीं हो सकीं। इसका कारण सीता के ह्रदय में राम के प्रति अथाह प्रेम ही था, सीता के मन में इसलिए भाँति–भाँति की शंकाएं एवं भय पैदा हो गये थे। उन्होंने लक्ष्मण के प्रति आवेश में कुछ अपशब्द भी कहे। यद्यपि उनके वे शब्द बहुत उचित नहीं थे।

55

सीता ने लक्ष्मण से आग्रहपूर्वक कहा कि हे लक्ष्मण ! इसका क्या अर्थ है ? प्रथम बार ही मैंने तुम्हें आदेश दिया है पर तुमने मेरी आज्ञा का उल्लंघन कर दिया। तुम तो बड़ी ही भक्तिभावना से मेरी सेवा करते थे। तुम राम के प्रति भी पूरी स्वामिभक्ति का परिचय दे रहे थे। आज इस कठिन परिस्थिति में तुम्हारा यह व्यवहार अशोभनीय है। तुम मेरी सहायता के लिए प्रस्तुत नहीं हो और मेरे शब्दों की पूर्ण उपेक्षा कर रहे हो।

56

मैं तुम्हारी कपटपूर्ण बुद्धि तथा क्षुद्र विचारों को भलीभाँति समझ चुकी हूं। इस प्रकार के कठोर शब्दों का प्रयोग सीता ने लक्ष्मण के प्रति किया। सीता ने यह भी कहा कि तुम्हारी अवज्ञा को शुभकारी नहीं कहा जा सकता है। तुम्हारा ह्रदय निश्चय ही राम के प्रति द्रोही है। राम को ही हानि पहुंचाने का तुम्हारा उद्देश्य भी प्रतीत होता है। क्या रघुवंशियों के व्यवहार का एवं सोच का यही स्तर होता है, जिसका तुम आज प्रदर्शन कर रहे हो। मुझे लगता है कि रघुवंशियों का व्यवहार बहुत ही नीचतापूर्ण होता है। विचार भी तुम्हारे बहुत ही गिरे हुए हैं। तुमने अपने बड़े भाई के प्रति भी किसी सम्मान का भाव प्रकट नहीं किया है। तुम्हारा यह व्यवहार कितना नीचतापूर्ण है। यह तो एक कुकृत्य है।

57

राम के विषय में तुम्हारे नीच विचार हैं। यदि इस स्वर्ण मृग ने राम को मार डाला, तो तुम्हें क्या हानि होगी। इससे तो तुम्हारी भाग्य रेखा और भी अधिक उज्जवल हो जायेगी। राम के न रहने पर तुम सोचते हो कि तुम सीता प्राप्त कर लोगे। इस प्रकार सीता पर तुम्हारा अधिकार हो जायेगा। दूसरा कोई व्यक्ति तो ऐसा है नहीं जो सीता को आश्रय दे सकेगा। यही तुम्हारी कल्पना होगी। क्या यह एक वास्तविकता नहीं है कि तुम इसीलिए राम की रक्षा की ओर बिल्कुल ध्यान नहीं दे रहे हो ?

58

हे लक्ष्मण ! तुम्हारी बुद्धि मारी गयी है। तुम्हारे अंदर कलुष भाव आ गया है। तुम सोचते हो कि मेरे हृदय में बुरे भाव आ गये हैं, अतएव मेरा हृदय बुरा है। मैं बुरी बातें ही सोच सकती हूं। यहाँ तक कि तुम शायद यह भी सोचते हो कि राम की मुत्यु के पश्चात मैं सतीत्व का पालन नहीं कर सकूंगी। मैं तुम्हें विश्वास दिलाती हूं कि कभी कल्पना में भी मैंने राम की अपेक्षा किसी अन्य पुरुष की आकांक्षा नहीं की है। मेरे मन में वेही एक वयक्ति हैं, जिनकी मैं सदैव ही कामना करती रही हूं। उनकी अपेक्षा अन्य कोई व्यक्ति मेरा स्वामी नहीं बन सकता। मेरे स्वामी केवल राम ही हो सकते हैं। यह मेरा अंतिम निर्णय है।

59

मुझे स्वर्ण मृग के सींग बहुत ही पैने एवं आक्रामक प्रतीत होते हैं । यदि विधाता की हम सब पर कृपा न हुई और मेरे स्वामी राम युद्ध में पराजित होकर धराशायी हो गये तो मैं भी संसार में रहना नहीं चाहुंगी। मैं इस परिस्थिति में अपनी गरदन काट कर अग्नि में कूद पडूंगी, जिससे कि मैं अपने प्रियतम राम का अनुसरण कर सकूं। मैं किसी प्रकार तुम्हारी शरण में आकर आश्रय पाने के लिए प्रस्तुत नहीं हूं।

60

इस प्रकार क्रुद्ध होकर सीता ने लक्ष्मण से इतने कठोर वचन कहे और उनको धिक्कारते हुए अपशब्द भी कहे। उस समय आकस्मिक रुप से एक विचित्र परिस्थिति भी उत्पन्न हो गयी। वे स्वयं उस परिस्थिति में अपने को संभाल न सकीं। अपने हृदय में आये हुए बुरे भावों की बुराई का स्वतः ही वे अनुभव न कर सकीं। उनके हृदय में भी एक विचित्र संघर्ष था। इसलिए दूसरों के प्रति उनके मन में बुरे विचार आने लगे थे। भाँति-भाँति की शंकाएं भी उनके मन में उत्पन्न होने लगी थीं। इस प्रकार दूसरों के प्रति भी उनके हृदय में सन्देह पैदा हो गया था।

61

सीता के इन अपशब्दों को सुनकर दशरथ पुत्र लक्ष्मण बहुत दुःखी हुए। वे भी भ्रम में पड़ गये। यदि उस समय भी उनके शब्दों को सुनकर उन पर सीता द्वारा ध्यान दिया जाता, तो उनकी वाणी बहुत ही सन्तुलित एवं विचार पूर्ण थी। उनका कार्य उचित एवं उस अवसर के सर्वथा अनुकूल था। यद्यपि वे सीता के वचनों से बिल्कुल सहमत नहीं थे। सीता के वचनों से उनके हृदय को अपार कष्ट भी हो रहा था। इसीलिए उन्होंने सीता को इस प्रकार उत्तर दिया :

62

आपने मुझ पर बुरे विचारों का आरोप लगाया है और सन्देह किया है। मुझे भ्रातृद्रोही की संज्ञा दी गयी है। मेरा हृदय निष्कलुष है। मैं अपने भाई के प्रति पूरी स्वामिभक्ति का परिचय भी दे रहा हूं। मेरे हृदय में बुरी भावना का स्थान नहीं है। मेरे हृदय की पवित्रता के सभी देवतागण भी साक्षी हैं। वे स्वयं मेरे हृदय का परीक्षण करके देख सकते हैं।यदि मेरे विचार नीच हुये तो मुझे नरकवास प्राप्त हो। यदि मैं किसी भी रुप में भ्रातृद्रोही सिद्व किया जा सकूं तो मैं जीवन में सभी कष्ट झेलने का भागी बनूं।

63

हे सीता ! आपकी शुभकामनाएं भी हमारे साथ नहीं हैं, इसीलिए ऐसी बुरी भावना आपके हृदय में उत्पन्न हुई है। आपने मेरे प्रति पूर्ण अविश्वास प्रकट करते हुए सन्देह व्यक्त किया है। अतएव आपके यह शब्द भी अशुभ हैं। हम सबके लिये यह सब कष्टप्रद भी हो सकता है। हो सकता है कि इसके परिणाम स्वरुप आपको अथाह कष्ट भी झेलना पड़े। ऐसा प्रतीत होता है कि आप घोर विपत्ति में पड़ने वाली हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि निश्चय ही शत्रु आपको पकड़कर ले जायेगा। यदि मैं यहाँ से इस समय चला गया तो आपका कल्याण संभव नहीं है। हे सीता ! इसीलिए ध्यान देकर मेरे शब्दों को सुनिए।

64

इन शब्दों को कहते हुए उन्होंने सीता जी को शपथ दिलायी। उसके बाद शीघ्र ही वे अपने बड़े भाई राम के पास जाने के लिए उद्यत हो गये। वे स्वर्णमृग के पीछे मृगया के लिए गये राम की सहायता करना चाहते थे।जब लक्ष्मण पर्णकुटी को छोड़कर वहाँ से चले गये,तो सीता उठकर खड़ी हो गयीं। बाद में वे पुष्प–चयन के लिए तपस्या–स्थल के एक किनारे पर कोने के एक भाग में चली गयीं।

65

इस प्रकार जब वे पुष्प–चयन करती हुई वन में दूर तक चली गयीं, तो दशमुख रावण वेश बदल कर वहां पर आया। वह एक पवित्र साधु की भाँति दिखायी दे रहा था। उसके व्यक्तित्व से निर्मलता का आभास हो रहा था। वह शैवधर्म का अनुयायी प्रतीत हो रहा था। वह एक तपस्वी एवं शान्त वृत्ति वाला साधु दिखायी दे रहा था। उसका सिर गंजा–सा था, परन्तु केश सुव्यवस्थित ढंग से संभाले गये थे। उन पर हल्दी का कुछ लेप–सा किया गया था।

66

उसकी दन्तपंक्ति बिल्कुल स्वच्छ थी तथा पारस पत्थर की भाँति श्वेतवर्ण की थी। उसके हाथ में रुद्राक्ष

की माला थी। उसके कंधे पर कमंडलु लटक रहा था। सभी वस्तुओं का रंग लाल था, जो बहुत ही सुन्दर लग रहा था। वह धीरे-धीरे भिक्षा माँगता हुआ आगे बढ़ रहा था। वह स्पष्टतः दिखायी भी नहीं दे रहा था।

67

मंत्रों का उच्चार करते हुए जादू सा बिखेरता हुआ दशमुख आगे बढ़ता चला जा रहा था। उसकी मुखाकृति बहुत ही मृदु एवं आकर्षक थी। वह स्वस्थ एवं सुन्दर दिखायी दे रहा था। उस समय उसकी राक्षसी वृत्तियां जैसे उसमें थीं ही नहीं। उसे देखकर ऐसा ही प्रतीत हो रहा था। आश्रम की पक्रिमा करता हुआ वह एक ओर से आश्रम में प्रवेश करने लगा। उस अवसर पर आश्रम की शोभा भी वर्णनातीत थी। सभी वस्तुएं वहाँ आकर्षक लग रही थीं।

68

सीता को रावण ने वन में पुष्प-चयन करते हुए देखा। उसके पश्चात बहुत प्रसन्नतापूर्वक दशमुख भी आगे बढ़कर सीता के पास पहुंचा। बड़े सम्मानपूर्वक उसने सीता से इस प्रकार कहा :

69

आप बहुत ही श्रेष्ठ एवं सुन्दर युवती हैं। आपकी मुखाकृति बहुत ही आकर्षक है। आप वन में जाकर सुन्दर पुष्प भी चुनती हैं। आपके समकक्ष सौंदर्य में किसी अन्य युवती को नहीं रक्खा जा सकता। आपकी सुन्दरता सम्पूर्ण है। पूर्णिमा का चन्द्रमा भी आपके सौंदर्य के समकक्ष प्रस्तुत नहीं किया जा सकता। दिवस में उसकी ज्योति तथा चाँदनी क्षीण हो जाती है। उसकी किरणें प्रकाशहीन हो जाती हैं।

70

सरोज पुष्प तड़ाग में साथ ही साथ खिलते हैं। वे सुन्दर, सुगन्धियुक्त तथा रक्त वर्ण के होते हैं। उनमें कुछ का रंग श्वेत भी होता है। वे भी आपके समान सुन्दर नहीं हैं। उनका सौंदर्य भी आपके समकक्ष नहीं ठहर पाता है। दिवस के अवसान पर कमल-पत्रों के कोष में वे बन्द हो जाते हैं अतएव उसकी सुन्दरता को पूर्ण एवं निरन्तर दिवा-रात्रि का सौंदर्य नहीं माना जा सकता।

71

यह स्थान जहाँ पर आप खडी है, बहुत ही भयानक है। सदैव ही मनुष्य यहां नहीं आते, अतएव अधिकतर निर्जन ही रहता है। यह तो एक घना वन भी है। यहाँ पर जब सिंह गर्जना करते हैं, सर्प फुफकारते हैं तो आपको

क्या भय नहीं लगता ? क्या मैं पूंछ सकता हूं कि इस भयानक जंगल में यदि चीता आप पर आक्रमण करे, तो आपकी सुरक्षा कौन करेगा? मैं आपके अपार सौंदर्य को देखकर आपके प्रति करुणा एवं दया का अनुभव करता हूं। मेरा परामर्श है कि अपने सौंदर्य की सदैव ही रक्षा करनी चाहिए तथा उसे निखारते एवं संवारते रहना चाहिए।

72

आप मृदु, सौंदर्यमयी एवं आकर्षक हैं। एक बार देख लेने पर किसी का भी हृदय कभी भी आपको भूल नहीं सकता। सदैव ही वह आपका स्मरण करता रहेगा। आज आपकी उपस्थिति से जैसे इस वन की शोभा बहुत अधिक बढ़ गयी है। वन की शोभा के लिए आप उसका अमूल्य आभूषण बन गयी हैं। क्या मैं जान सकता हूं कि वह सौभाग्यशाली कौन है जो आपका स्वामी है अथवा जिसको आपने पति के रुप में स्वीकार किया है। जो व्यक्ति आपको प्राप्त कर सका, वह इस जगत में सबसे अधिक सौभाग्यशाली है।

73

मुझे संसार के अन्य भागों में भी इधर उधर परिभ्रमण करने का अवसर प्राप्त हुआ है। कोई भी युवती सौंदर्य में मुझे आपके समकक्ष दृष्टिगोचर नहीं हो सकी, जिसको मैं आपके समान मान सकूं अथवा जिसको इस विश्व में सर्वश्रेष्ठ सुंदरी की संज्ञा दी जा सके। मेरा यह दृढ़ विश्वास है कि आप इस जगत में सुन्दरता की चरम सीमा हैं। आपके सदृश इस संसार में अन्य कोई युवती नहीं है। मैं तो आपको देखने के पश्चात अपने जीवन को सार्थक मानता हूं अन्यथा मुझे अनुभव हो रहा था कि इस जगत में मेरा जीवन व्यर्थ ही है परन्तु आपको देखने के पश्चात मेरे जीवन में जैसे सार्थकता आ गयी हो। अब तो मुझमें जीवन की अभिलाषा जागृत हो उठी है।

74

आपका सौंदर्य इतना आकर्षक है कि मैं उसे निरन्तर देखना चाहता हूं, मन्त्र मुग्ध की भाँति प्रति क्षण निहारना चाहता हूं। जैसे मधुमक्खी रस के आकर्षण से पुष्प की ओर देखती रहती है तथा उसका रस निचोड़ कर मधु बनाती है, जो टपकता रहता है। उसी प्रकार आपका सौंदर्य प्रशंसनीय है। पुष्प का रस लेने के बाद भी पुष्प में एक अनुपम सौंदर्य की आभा झलकती है। उसकी उपमा आपसे बड़ी सरलता से दी जा सकती है। इस दृष्टिकोण से मेरा संकेत स्पष्ट हो गया होगा। कोई व्यक्ति अवश्य आपका प्रेमी होगा। आप उसी की सेवा में रत हैं अथवा उसकी ही पत्नी हैं।

75

हे युवती ! तुम्हारा सौंदर्य इतना मनमोहक है कि भगवान विष्णु भी यदि तुम्हें देखें तो अपनी पत्नी लक्ष्मी

का कभी भी स्मरण नहीं करेंगे, न ही कभी उनकी अभिलाषा करेंगे। लक्ष्मी की सुंदरता तुमने बहुत ही कम है। वे सौंदर्य प्रतियोगिता में तुमसे बहुत पीछे रह जायेंगी। उसी प्रकार यदि कामदेव की दृष्टि तुम पर पड़ जाये,तो अपनी पत्नी रति में अत्यन्त आसक्त होते हुए भी वे अवश्य ही तुम्हारी कामना करेंगे। तुम्हारे सौंदर्य के समकक्ष रति का सौंदर्य उन्हें बहुत ही साधारण लगेगा।

76

यदि कोई रुपवती स्त्री भी तुम्हें देख लेगी, तो वह भी तुम्हारे सौंदर्य पर मुग्ध होकर आश्चर्य में पड़ जायेगी। उसका हृदय अचम्भे से चौंक जायेगा। यदि किसी युवक की दृष्टि तुम पर पड़ जाये, तो वह निश्चय ही तुम्हें प्राप्त करने का उत्कट अभिलाषी हो जायेगा। तुम्हारा स्मरण ही उसके अपार आनंद का कारण बन सकेगा। यहाँ तक कि वह एक प्रेममार्गी रवं रहस्यवादी व्यक्ति बन जायेगा।

77

आप यह भी मान सकती हैं कि कोई नितान्त धनहीन एवं दुःखी व्यक्ति है,अपार कष्टों के कारण उसे अपने जीवन में अब कोई इच्छा अथवा अभिलाषा.नहीं है,उसका जीवन केवल निराशापूर्ण ही है, कभी भी उसके व्यथित हृदय में प्रेमभाव जागृत नहीं हो सका है, उसे किसी स्त्री की कभी कामना भी नहीं हो सकी है। यदि ऐसा व्यक्ति भी हो तो आपके सौंदर्य को देखकर उसमें भी काम–वासना व प्रेम–भावना जाग उठेगी। यदि उसे आपकी शैया के निकट आने का कोई भी अवसर प्राप्त हो तो वह सुखी हो उठेगा। उन लोगों के विषय में भी यह कहा जा सकता है जिन्हें किसी अन्य युवती ने अपने प्रेम पाश में बांध लिया है। इस प्रकार प्रेम–जाल में फंसने के कारण उनके विचार एवं मन प्रति क्षण इधर–उधर भटकते रहते हैं। उनकी कल्पना में बार–बार कई बातें आती रहती हैं। वे लोग भी यदि आपको एक बार देख लें, तो सदैव ही आपको प्राप्त करने की अभिलाषा रखेंगे। सभी आपको अमृत की भाँति दुर्लभ मानते हुये भी प्राप्त करने का प्रयास करेंगे। उन लोगों के लिए भी जो प्रेमी एवं विरही हैं, काम ज्वर एवं प्रेम ज्वर के रोगी हैं, आप अमृत की भाँति औषधि सिद्ध हो सकती हैं।

78

वह कौन सौभाग्यशाली श्रेष्ठ पुरुष है, जिसकी तुम स्वामिनी हो। वह व्यक्ति बहुत ही चतुर एवं बुद्धिमान प्रतीत होता है। वह तुम्हें इस भयानक जगंल में ऋषि मुनियों की तपस्या स्थली में अपने साथ रखता है। निश्चय ही उसे इस बात का डर होगा कि कहीं अन्य लोगों की दृष्टि तुम पर न पड़ जाय। अन्यथा तुम्हें देखते ही वे प्रेमोन्मत्त हो उठेंगें। यही कारण है कि तुम्हारा पति सभी लोगों से तुम्हें छिपाकर इस तपस्याभूमि में ले आया है और यहीं रहता है।

79

रावण ने सीता से अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक ये वचन कहे। रावण सीता के सौंदर्य पर भी मुग्ध हो गया। रावण के वचन और अपनी प्रशंसा सुनकर सीता का शरीर कांप उठा। कम्पित शरीर से उनका डर भी प्रकट हो रहा था। उन्होंने संकोच पूर्वक अपना मस्तक झुकाते हुए अपने पति के विषय में रावण को बताया।

80

सीता ने कहा कि मेरे पति-देवता का नाम राम है। वे महाराज दशरथ के राजपुत्र हैं। वे एक महान शक्तिशाली योद्वा हैं। उनके समकक्ष इस विश्व में कोई दूसरा वीर नहीं हैं। वे राम ही मेरे स्वामी हैं। मेरे स्वामी अपने पिता के प्रति भक्तिपूर्ण एवं आज्ञाकारी हैं। उन्होंने अपने पिता राजा दशरथ की सभी आज्ञाओं एवं आदेशों का सदैव ही पालन किया है। इस तपस्या-स्थली में जितने भी ऋषि मुनि अपने व्रतों का पालन कर रहे हैं, उन सबकी सुरक्षा का भार राम ने स्वयं अपने ऊपर ले लिया है।

81

यहाँ तक कि महर्षियों के सभी शत्रुओं, राक्षसों आदि का राम ने वध कर दिया है। उन्होंने ही महान योद्वा ऋषि परशुराम को युद्व में परास्त किया है। जब भी ऋषि गण यज्ञादि करते हैं उस समय राम ही उनकी सुरक्षा करते हैं। इस प्रकार राम की छत्र-छाया में वन में सभी ऋषि मुनि निर्विघ्न तपस्या कर रहे हैं। वन में उनके साथ मेरे आने का भी कारण है। उनकी सेवा एवं भक्ति के लिए ही मैं वन में उनके साथ आयी हूं। वे तो केवल पिता की आज्ञा का पालन करने एवं ऋषियों की शंत्रुओं से रक्षा करने के लिए वन में आये हैं।

82

वन में आने के पश्चात् उन्होंने देखा कि राक्षसगण यहाँ पर उपद्रव करके घोर क्रूरता का परिचय दे रहे थे। राक्षसों ने राम से युद्व किया। सभी राक्षसों ने अपनी महान शक्तिशाली सेनाएं लेकर युद्व किया। इतना ही नहीं सभी ने साथ-साथ मिलकर राम पर आक्रमण भी किया। अकेले राम ने अपने तीक्ष्ण बाणों से राक्षस-दल को युद्व में धराशायी कर दिया। आश्रम के एक किनारे पर आप राक्षसों के अवशेषों के रुप में उनकी अस्थियों के विशाल ढेर देख सकते हैं।

83

राम सम्पूर्ण विश्व में एक महान धनुर्धारी के रुप में प्रख्यात हैं। सारे जगत के योद्वागण उनका लोहा मानते

हैं। बाण-विद्या में हा नहीं वरन् अन्य अस्त्र-शस्त्रों में भी वे सिद्वहस्त हैं। संसार में कोई ऐसा योद्वा नहीं है, जो गदायुद्व में उनके समकक्ष रक्खा जा सके। जो भी शत्रु उन पर आक्रमण करते हैं, राम अपने युद्व-कौशल एवं अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग से उनको धराशायी कर देते हैं। कोई भी शत्रु उनसे बच कर जीवित नहीं लौट पाता। यदि आपको मेरी बातों में कोई अतिशयोक्ति दिखायी दे अथवा ऐसा लगे कि मैं बढ़-चढ़ा कर उनकी वीरता का वर्णन कर रही हूं तो आप स्वयं ही मेरे स्वामी गम के विषय में अन्य लोगों से पूछ सकते हैं।

84

आज मेरे स्वामी राम यहाँ पर आपको नहीं मिल सके, इसका भी एक कारण यह है। इसको ध्यानपूर्वक सुनिए। एक स्वर्ण-मृग आज यहाँ आश्रम के निकट दिखायी दिया। राम उसका शिकार करने के लिए उसका पीछा करते हुए आगे चले गये। उस स्वर्ण मृग का रुप बहुत आश्चर्यजनक एवं आकर्षक है। मेरे स्वामी के अनुज लक्ष्मण यहाँ पर मेरी सुरक्षा के लिए रहे। अन्त में उनको मैंने राम के पास उन्हें बुला लाने के लिए भेज दिया। यह आदेश मैनें ही उनको दिया था। मेरी आज्ञा का ही पालन करते हुये लक्ष्मण भी राम के पीछे चले गये हैं।

85

जब सीता ने रावण से सभी बातें कह दीं, तब शनैःशनैः रावण उनकी ओर बढ़ता हुआ उनसे फिर कहने लगा, ज़िस व्यक्ति का नाम राम है, उसके विषय में मुझे पूरी जानकारी है तथा सभी बातें मालूम हैं। उनमें कोई विशेष बात नहीं हैं। मेरे लिए उनका कोई महत्व भी नहीं है। हे सीता ! ऐसा क्या है जिसके कारण तुम इतने साधारण एवं निम्नकोटि के व्यक्ति का अनुसरण कर रही हो। मेरी दृष्टि में तो राम का व्यक्तित्व बहुत ही साधारण है।

86

राम बहुत ही साधारण एवं निम्न कोटि के व्यक्ति हैं। वह अपने एक छोटे भाई से भी हार गये। हाँ यह अवश्य है कि उनके सभी छोटे भाई चतुर हैं। यद्यपि राम सबसे बड़े थे। उन्हीं को राजा बनना चाहिए था परन्तु उनको वन में ऋषियों के आश्रमों की रक्षा करने के लिए भेज दिया गया। यह कार्यभार भी उनको सौंपा गया। राक्षस आश्रमों में आकर तपस्या में बाधा डाल रहे थे। राम की गरिमा की इन सभी छोटी-मोटी बातों में कोई भी बात आश्चर्य की नहीं है। मेरी दृष्टि में तो उनमें कोई महत्वपूर्ण विशेषता है ही नहीं। वे एक नितान्त गुणहीन व्यक्ति हैं।

87

हे सीता ! अब मैं आपके समक्ष यह स्पष्ट करना चाहता हूं कि मैं वास्तव में वह राजा हूं जिसको पूरे अर्थ में राजा की संज्ञा दी जा सकती है। मेरे पास राजा की भाँति पूरी शक्ति एवं एक विशाल सेना है। राज्य वैभव तथा सम्पत्ति के कारण मैं जीवन के सर्वसंभव सुख भोग रहा हूं। इन तीनों लोकों में मुझसे बढ़कर अन्य कोई राजा नहीं है। मेरा नाम रावण है। आज मैं स्वयं आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं।

88

मैंने स्वर्ग, मनुष्यों, जीवों तथा वनस्पतियों पर पूर्ण विजय प्राप्त कर आधिपत्य स्थापित किया है। देवता वैश्रवण को भी मैंने ही युद्व में परास्त किया है तथा उस पर अपना आधिपत्य स्थापित किया है। मृत्यु के देवता यमराज मुझसे अपने जीवन के लिए अभ्यर्थना करते हैं। वे मुझसे अत्यन्त भयभीत हैं। यहाँ तक कि देवराज इन्द्र भी मेरा आधिपत्य स्वीकार करते हैं। वे मेरी सेवा में रत हैं तथा अन्य सभी देवता गण मेरे समक्ष अपना मस्तक झुकाते हैं।

89

मेरी दृष्टि में सभी देवताओं का इतना साधारण स्थान है, जैसे वे सभी सागर तल में डूब गये हों और वहीं पर निवास कर रहे हों। सभी एक ही साथ डर से शक्तिहीन होकर जैसे काँप रहे हों। वे सभी चौंक–चौंक से उठते हैं और भयभीत से रहते हैं। उनके मुख कान्तिहीन हो गये हैं। सभी थके हुए दुर्बल एवं शक्तिहीन हो बैठे हैं। इसका कारण रावण की महत्ता एवं अपार शक्ति ही है। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी देवतागण मुझसे अत्यन्त भयभीत होकर घबराये हुए हैं। मेरी शक्ति के कारण सभी देवता मुझसे डरते हैं। मैंने उनको परास्त करके उनका महत्व कम कर दिया है। वे अब पूरी तरह मेरे आधीन हैं।

अध्याय – 6

1

प्रसिद्ध लंकाद्वीप में सागर तट पर मेरा राजमहल स्थित है। वह चन्द्रमा की किरणों की भाँति उज्जवल एवं प्रकाशवान है। मेरे राजमहल का नाम 'रत्न-पारायण' है। उसके समकक्ष सम्पूर्ण विश्व में दूसरा राजमहल नहीं है। इसका कारण यह है कि उसमें मणि, माणिक एवं रत्न अत्यधिक संख्या में लगे हुए हैं। इसीलिए मेरा राजमहल प्रतिक्षण जगमगाता रहता है।

2

यदि तुम उस राजमहल की स्वामिनी बनना चाहती हो, तो निश्चय ही तुम्हारा जीवन मेरे साथ बहुत आनंदपूर्वक व्यतीत होगा। इसलिए तुम्हें किसी भी प्रकार से भयभीत होने की कोई आवश्यकता नहीं है। जिस वस्तु की भी जीवन में तुम्हें अभिलाषा होगी, वह शीघ्र ही तुम्हें वहीं पर प्राप्त हो सकेगी। यदि कभी भी तुम पुष्पहार की कामना करोगी, तो शीघ्र ही पुष्प तुम्हारे लिए प्रस्तुत किये जायेंगे।

3

यदि तुम पूर्ण रुप से मुझसे प्रेम करोगी तो मुझे भी सुख मिलेगा। अभी तो मैं अपनी युवावस्था में हूं,इसके साथ ही साथ सर्वशक्ति संपन्न भी हूं। तुम एक अपूर्व सुन्दरी युवती हो। हे सीता ! राम में कोई विशेषता नहीं है। वे बहुत साधारण व्यक्ति हैं। अतएव मेरे लिए तुम उनका परित्याग कर दो।

4

भोजन, रसपान एवं पारस्परिक मेल-मिलाप आदि सभी का पूरा आनंद तुम्हें मेरे ही पास प्राप्त हो सकेगा। मैं सदैव ही तुम्हारी सेवा के लिए सच्चे सेवक की भाँति प्रस्तुत रहूंगा। इसलिए शीघ्र ही मेरे साथ लंका के लिए प्रस्थान करो। मेरे वचनों के अनुसार हर कार्य शीघ्रता से करो। हे मानिनी ! अपने शरीर को पूरी तरह वस्त्राभूषणों से सुसज्जित कर लो। सर्वश्रेष्ठ रुप में प्रस्तुत होकर मेरे साथ प्रस्थान करो।

5

रावण ने सीता को इस प्रकार अपनी ओर आकर्षित करते हुए भली भाँति समझाया। यही नहीं उसने सीता से प्रेम की याचना की। सीता ने उसकी बात स्वीकार नहीं की। वे मौन हो गयीं। उन्होंने रावण के वचनों का कोई उत्तर भी नहीं दिया। इस परिस्थिति को देखकर रावण सीता का मन्तव्य पहचान गया। उनकी अस्वीकृति मान कर वह अत्यन्त क्रुद्ध हो गया। वह शीघ्रता से आगे बढ़ा। तीव्र गति से उसने अपना सभी कार्य प्रारम्भ कर दिया। उसने

सीता को अपने दोनों हाथों से पकड़ लिया। उसके बाद शीघ्र ही वह आकाश में उड़ गया।

6

सीता कष्ट से दुःखी होकर आर्तनाद करती हुई रुदन करने लगीं। वे दुःखी होकर चिल्लाने लगीं। उनका करुण स्वर आकाश में गूंज उठा। वे बिलख-बिलख कर रो रही थीं। तपस्यास्थली तथा आश्रम के सभी पक्षी मौन हो गये। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे इस भीषण घटना को देखकर वे सभी डर कर चुप हो गये हों।

7

हे राम ! हे राघव ! क्या आपको मेरी इस दयनीय दशा पर करुणा नहीं आती है ? क्या अब आप मुझसे बिल्कुल प्रेम नहीं करते ? आपने सदैव ही मेरी सभी आकांक्षाओं और आदेशों की पूर्ति की है और कभी भी उपेक्षा नहीं की है। मेरा तो यह विश्वास था कि यह सभी बातें मेरे प्रति आपके अपार प्रेम की सूचक हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अन्त में आपने मुझसे अपना मुख मोड़ लिया है।

8

सदैव ही आप मेरा वन में भलीभाँति मनोरंजन करते थे। मेरे हृदय की इच्छाओं के अनुसार सभी कार्य करते थे। पत्नी की आकांक्षाओं और अभिलाषाओं को पूरी तरह समझने में आप बहुत ही कुशल हैं। आपने मेरी सभी इच्छाओं की पूर्ति बड़ी ही तत्परता से की है।

9

मैंने भाई लक्ष्मण के साथ भी मनमाना व्यवहार किया है। लक्ष्मण एक उत्तम पुरुष हैं। किसी कार्य के करने से पूर्व वे बहुत ही विवेक से काम लेते हैं। केवल उनके शब्द अथवा वचन कभी-कभी कठोर प्रतीत होते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे किसी वस्तु में उन्हें कोई रुचि ही न हो। उनका हृदय अत्यन्त पवित्र हैं। वे वास्तव में एक उदार एवं प्रेमी व्यक्ति हैं।

10

हे लक्ष्मण ! आप मेरे द्वारा कहे गये कटु वचनों के लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। मेरे वचन उचित नहीं थे। जो भी आपने मुझसे सुना,वह नितान्त अनुचित था। वे सभी बातें ठीक नहीं थीं। वास्तव में कभी-कभी स्त्रियाँ बहुत असावधानी से कार्य कर बैठती हैं। ये कार्य विवेकपूर्ण नहीं होते। यह स्त्रियों के चरित्र में एक बहुत

बड़ी कमी है। आप मेरे अपराधों के लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। आप मुझ पर किसी प्रकार से असन्तुष्ट न हों। मुझ पर दया कीजिए।

11

हे लक्ष्मण ! आपके बड़े भाई राम ने भी मेरी ओर से अपना मुख मोड़ लिया है। पहले वे मुझे हर प्रकार से प्रसन्न करते रहते थे। मेरे प्रति उन्हें प्रगाढ़ प्रेम था। बिना किसी संकोच के वे मेरे सभी आदेशों का पालन प्रेमपूर्वक करते थे। अभी कुछ समय पूर्व आपने मेरे आदेश पर विशेष ध्यान नहीं दिया। मैं समझती हूं कि इसका कारण केवल आपका विवेक ही था, जिसमें मेरे प्रति आपकी करुणा का भी आभास अब मुझे मिलता है। वास्तव में अपनी सभी विपत्तियों के प्रति मैं ही उत्तरदायी हूं। यह सब मेरा ही दोष है। मैं क्रूर एवं नीच हूं। सभी आपत्तियां मैंने स्वयं अपने ऊपर ली हैं।

12

हे लक्ष्मण ! आप कितने दृढ़ एवं स्वतंत्र वृत्ति के वीर हो ! मेरे ऐसे मूर्खतापूर्ण एवं नीच व्यवहार को भी आपने सहन किया। अन्त में मेरे वचनों को मानने के लिए आपको विवश भी होना पड़ा। यद्यपि आपके सभी कार्य बुद्धिमत्तापूर्ण एवं उचित थे। जो भी आपने किया, वह उचित ही था। आपका इस कार्य में कोई दोष नहीं था। वास्तव में मेरे कटु वचनों के कारण ही आश्रम से जाने के लिए आपको विवश होना पड़ा।

13

यह भी नहीं कहा जा सकता है कि इन सभी गतिविधियों में सारा दोष मेरा ही है। फिर भी यदि कोई नीच व्यक्ति किसी सज्जन पुरुष के प्रति अनुचित शब्दों का प्रयोग करता है तो विवेकी व्यक्ति कभी भी अपना क्रोध नीच व्यक्ति के प्रति व्यक्त नहीं करता। उस पर वह थोड़ा भी ध्यान नहीं देता है। वह उस बुरे विचार को मन में भी नहीं रखता है। विशेषतया उस समय जबकि उसको यह स्पष्ट दिखायी दे रहा हो कि उसके प्रति दुर्व्यवहार करने वाला नीच व्यक्ति विपत्तियों में पड़कर अपार कष्ट झेल रहा है। वह उसे क्षमा कर देता है। सब कुछ होने पर भी सज्जन व्यक्ति उसकी सहायता के लिए शीघ्र ही प्रस्तुत हो जाता है।

14

हे लक्ष्मण ! इसीलिए एक दयावान व्यक्ति की भाँति तथा एक सज्जन पुरुष की भाँति यहां आकर आप मेरी सहायता कीजिए। मैं बहुत दुःखी हूं। विपत्ति के गर्त में गिर गयी हूं। आपके वचन बहुत ही उचित और हितकारी थे। आपने मुझे शपथ भी दिलायी थी। मैने हठवश किसी बात को नहीं माना, अतएव उसके

परिणामस्वरुप मैं शत्रु के हाथों में पड़ कर आज एक बन्दिनी का जीवन व्यतीत कर रही हूं।

15

इस प्रकार रोती चिल्लाती हुई सीता अपनी सहायता के लिए प्रार्थना करने लगीं। सहायता की प्रार्थना करते हुए उनके शब्द गूंजने लगे। उनके दारुण दुःख की करुण गाथा वातावरण को स्पन्दित करने लगी। उनके रुदन की ध्वनि उस समय अकस्मात् ही जटायु को सुनायी दी। उसके बाद जटायु ने उड़ान भरी। उन्होंने दशमुख को देख लिया और उससे इस प्रकार कहा :

16

हे दुष्ट दशमुख ! तुमने बड़ी क्रूरता एवं नीचता का परिचय दिया है। तुम तपस्वियों के घोर शत्रु हो। तुम वज्र मूर्ख एवं वन्य पशु की भाँति हो। तुमने वीरत्व का अपमान किया है। तुमने पंडितों एवं विद्वानों के प्रति दुर्व्यवहार किया है। यदि तुम वास्तव में अपने को एक महान योद्धा समझते हो, तो मेरे समक्ष आकर युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाओ।

17

राम की ऋषि-मुनियों के प्रति अपार श्रद्धा है। उन्हें उनसे प्रेम है। उनका हृदय अत्यन्त पवित्र है। उनमें सभी के प्रति प्रेमभाव है। इसी प्रकार सभी के हृदयों में राम के प्रति भी भक्ति भाव है। तुम इतने नीच राक्षस हो कि तुमने राम की पत्नी के हरण का दुःस्साहस किया। तुम शैतान, नीच और क्रूर हो। एक पवित्र हृदय वाले महान सज्जन व्यक्ति को कष्ट पहुंचाते हुए तुम्हें किसी प्रकार की लज्जा नहीं आती। सभी पवित्र मानवों के हृदयों को दुखी करने में तुझे आनंद का अनुभव होता है।

18

उस अवसर पर जटायु ने सूर्य देव की भाँति प्रचण्ड रुप धारण किया। सूर्य की प्रखर किरणें ही सभी बुराइयों एवं अन्धकार का नाश कर देती हैं। जहां अन्धकार का कोई भी स्वरुप होता है, सूर्य वहां पर प्रकाश-किरणें बिखेर कर उसे मिटा देता है। मैं रघुकुल तिलक राम का संरक्षक हूं। उनके वंश के महान गुणों का मैं चिर ऋणी रहूंगा। यही कारण है कि मैं राम के पिता दशरथ को अपना परम सखा एवं निकटतम मित्र मानता रहा हूं।

19

यह कहकर जटायु आगे बढ़ा। रावण से युद्ध करने के लिए उसने रावण पर आक्रमण कर दिया। जटायु ने रावण को खदेड़ना प्रारम्भ किया। उसके पंखों के रोम–रोम खिल उठे। उसने भयानक रुप धारण किया। उसके चौड़े एवं तीव्र पंख गतिशील हो गये। उसने सिंह की भाँति भीषण रुप धारण कर रावण पर आक्रमण कर दिया। उसने अपनी चोंच से रावण को काटते हुए प्रहार किया। उसी को वज्र की भाँति अपना अस्त्र बनाकर जटायु ने रावण पर कठोर आक्रमण किया।

20

रावण ने भी चमचमाती हुई चन्द्रहास नामक तलवार को म्यान से बाहर निकाल कर जटायु पर आक्रमण कर दिया। अत्यधिक गतिशील एवं प्रसन्न होकर जटायु ने भी पूरी शक्ति से रावण के ऊपर चोंच का प्रहार किया। उसने दशमुख को ऊपर से आच्छादित करते हुए घायल कर दिया। उसके पश्चात् बड़ी कुशलता से जटायु शनैः शनैः पीछे हटकर रावण से कुछ दूर हो गया। रावण ने चन्द्रहास तलवार से जटायु पर आक्रमण करने की चेष्टा की थी। रावण भी डरकर चौंका हुआ था। उस समय रावण बहुत आशचर्यचकित भी हो रहा था। अतएव अपना हाथ ऊपर उठाते हुए उसने जटायु से पूछा।

21

जटायु के पंखों के बाल खड़े से हो गये थे और वह रोमांचित हो उठा था। जब जटायु ने एक बार फिर ऊपर की ओर रावण पर आक्रमण किया और क्रुद्ध होकर अपनी चोंच से रावण पर तीक्ष्ण प्रहार किया तो रावण की भुजा पर उसने भीषण चोट पहुंचाई। रावण की बाँह पर घाव हो गया। उससे रक्त की तीव्र धारा प्रवाहित होने लगी। जटायु ने उसको चाट लिया। वह फिर पीछे हट गया तथा आकाश में ऊपर उड़ गया। उस अवसर पर भी जटायु के नेत्र रावण की ओर ही देख रहे थे। अब भी वह रावण का रक्तपान करना चाहता था।

22

रावण भ्रम में पड़कर घबरा उठा था। जटायु ने उसे युद्ध में हरा दिया था, अतएव सीता का हरण अब उसके लिए एक बहुत ही कठिन प्रश्न बन गया था। रावण ने अपने राक्षसों की सेना को संकेत देकर अपने पास बुलाया। घोड़ों को चाबुक लगाकर तीव्र गति से आगे बढ़ने का उसने संकेत दिया और उसका रथ आकाश में उठने लगा। आकाश में ही उसके अश्व तीव्रतम गति से आगे बढ़ सकते थे। उनकी गति कल्पना की भाँति तीव्र थी। जटायु ने फिर आगे बढ़कर उस पर आक्रमण किया। रावण का रथ चूर–चूर हो गया। जटायु ने अपने पंखों से झटके से भीषण प्रहार कर रथ को तोड़ दिया। इस प्रकार टूट कर रावण का रथ नीचे पृथ्वी पर गिर पड़ा।

23

रावण ने उसी टूटे रथ पर सीता को विठा लिया। वह रथ अव पृथ्वी पर गिरा पड़ा था। भय के कारण उसने अपनी आँखें वन्द कर ली थीं। आकाश के मध्य उसको मूर्च्छा भी आ गयी थी। दुर्वलता से थक कर, कष्ट झेलते हुए तथा आहें भरते हुए वह आकाश से पृथ्वी पर नीचे गिरने लगा। जटायु ने शीघ्र ही नीचे की ओर आकर ऊपर से झपटते हुये सीता को अपनी सुरक्षा में ले लिया। दशों दिशाओं के रक्षक देवताओं ने आकाश से हर्षध्वनि की। वे सभी जटायु की इस गरिमा को देखकर आश्चर्य चकित हो गये। वे उसकी वीरता की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे।

24

आकाश में देवताओं के समूह तथा अप्सराओं ने जव जटायु की विजय पर हर्षनाद करते हुए उसकी प्रशंसा की, तो इसे देखकर दशमुख वहुत ही क्रुद्ध हो गया। उसके हृदय में गहरा क्षोभ हुआ। वह घायल अवस्था में तो था ही, उसने अपनी भुजा को जिससे रक्त वह रहा था, वलपूर्वक दवाया। फिर भी उससे निरन्तर रक्त वहता ही जा रहा था। उसने संघर्ष में लीन रहने के कारण कष्ट का विल्कुल अनुभव नहीं किया। अपनी सम्पूर्ण शक्ति से उसने जटायु पर भीषण आक्रमण किया। यह प्रहार ऐसा था कि जटायु की छाया को भी उसने पूरी तरह अपने प्रहार के अन्तर्गत ले लिया। जव जटायु इस आक्रमण से टक्कर न ले सका तो वहुत लज्जित हुआ और हट गया।

25

सीता को अर्द्धमूर्च्छित अवस्था में जटायु ने अपनी गोद में ले लिया। उसको सीता की यह दशा देखकर वहुत अधिक कष्ट हो रहा था। वह तीव्रता से अव उड़ भी नहीं सकता था। उड़ने में उसकी गति आधी हो गयी थी। अपनी पूर्ण शक्ति से उसने हर संभव प्रयास किया कि वह सीता को बचा ले। इस प्रयत्न में उसको बहुत कठिनाई का अनुभव हो रहा था। यदि जटायु उस दशा में सीता की रक्षा न करता तथा अपनी गोद में न ले लेता तो निश्चय ही नीचे गिर जाने से सीता की मृत्यु हो जाती। यही कारण था कि जटायु ने अपने उड़ने की गति धीमी कर दी। वह शनैः शनैः सीता की रक्षा करते हुए ऊपर उड़ने लगा।

26

जटायु की धीमी गति के कारण रावण आक्रमण करता हुआ शीघ्र ही जटायु के पास पहूंच गया। अव जटायु की दशा दयनीय थी। युद्ध के कारण वह थक कर शक्तिहीन हो गया था। वह आहें भरता हुआ संघर्ष कर रहा था। रावण निरन्तर ही उसका पीछा करता चला जा रहा था। जहां भी जटायु आकाश में उड़ कर जाता, रावण वहीं पहुंच कर उसका पीछा कर रहा था। जटायु किसी प्रकार का खिलवाड़ रावण से नहीं कर रहा था वरन् पूरी शक्ति से

संघर्ष कर रहा था। रावण अपनी चमचमाती हुई चन्द्रहास तलवार लेकर जटायु का पीछा करते हुए भीषण प्रहार कर रहा था। जब रावण की तलवार से उसके पंख का एक कोना कट गया तो वह पृथ्वी पर पंखहीन होकर गिर पड़ा। इस प्रकार रावण ने उसके पंख काट डाले।

27

रावण ने शीघ्र ही सीता को पकड़कर रथ पर बैठा लिया। सीता को अब अपने शरीर का कोई बोध नहीं था। वे मूर्च्छितअवस्था में थीं। रावण ने अब दूसरे रथ का प्रयोग किया। जिससे वह तीव्र गति से आगे बढ़ता हुआ लंका की ओर लौट गया। उसे अब मार्ग में किसी प्रकार की बाधा नहीं थी,अतएव नवीन रथ ने शीघ्रता से उसकी यात्रा पूरी करा दी।

28

लंका द्वीप में लौटने के पश्चात रावण बहुत कठिनाई में पड़ गया। उसको प्रेम–ज्वर आने लगा। उसकी कामेच्छा पराकाष्ठा पर पहुंच गई। वह रात दिन अपने हृदय में केवल सीता की ही कामना करता रहता था। अब सीता ही केवल उसके प्रेमज्वर की औषधि हो सकती थीं। उसने अनुमान किया कि सीता निश्चय ही उसकी प्रार्थना को स्वीकार कर लेगी, अतएव प्रेम एवं वासना से आकुल वह सीता के पास आया। उसके हृदय में सीता के प्रति अपार प्रेम था।

29

जितने भी वीर योद्धा राक्षस वहाँ पर थे। रावण ने उनको आज्ञा दी कि वे राम के ऊपर पूरी तरह से कड़ी दृष्टि रक्खें। वे सदैव ही उनके प्रति सचेत रहें। राम को सीता के हरण का समाचार मिलते ही अपार कष्ट और दुःख होंगा। इसीलिए दशमुख अब बहुत ही भयभीत रहने लगा था। इसका एक अन्य कारण यह भी था कि उसकी सेना के राक्षस–समूह को राम ने पहले ही नष्ट भ्रष्ट कर दिया था। वे सभी योद्धा युद्ध में मारे जा चुके थे। इस प्रकार रावण की राक्षस–सेना का प्रधान अंग प्रायः समाप्त हो चुका था। केवल झूठे बल–प्रदर्शन के लिए उसने राक्षस–समूह को राम पर दृष्टि रखने के लिए आज्ञा दी थी।

30

जब राक्षसगण वहाँ से चले गये तो रावण मुस्कराया। वह उन सबको आने वाली परिस्थिति के प्रति सचेत करना चाहता था। उसके बाद वह सीता के निकट आकर उनसे प्रणय की भिक्षा माँगने पहुंचा। सीता ने उसके प्यार को पूरी तरह ठुकरा दिया। उन्होंने केवल अपने बायें हाथ से संकेत मात्र दे दिया। मुख से एक मधुर

शब्द भी नहीं कहा। रावण ने उस अवसर पर अतयन्त मूर्खता का परिचय दिया। उसने सीता के संकेत को अपने पक्ष में समझा। वह बिना किसी संकोच के सीता के पास पहुंचने के लिए आगे बढ़ा।

31

प्रतिदिन रावण सीता से प्रणय की भिक्षा माँगता रहता था। सीता राम के प्रति भक्तिभाव में लीन थीं। वे उन्हीं के प्रेम में मग्न थीं। उनके प्रणय के अधिकारी केवल राम ही थे, अन्य कोई व्यक्ति कभी भी उनकी कल्पना में आ ही नहीं सकता था। रावण सीता के इस निर्णय से बहुत ही निराश एवं दुःखी रहता था। उसने अपनी सेना को शीघ्र ही यह आदेश दिया कि सीता पर कड़ी दृष्टि रक्खी जाय, जिससे वे कभी भी कहीं जा न सकें।

32

जब पतिपरायण सीता लंका में थीं, राम के हृदय में एक विचित्र उथल-पुथल सी प्रारम्भ हो गयी। उनको स्वतः ही हार्दिक दुःख एवं कष्ट का अनुभव होने लगा। विभिन्न प्रकार के अशुभ लक्षण दिखायी देने लगे। बुरे अपशकुन होने लगे, जो इस बात का संकेत दे रहे थे कि अब सीता आश्रम में नहीं है। पक्षीगण भी जैसे अपनी विभिन्न प्रकार की बोलियों में राम को सीता-हरण की सूचना दे रहे थे। वे आगे बढ़कर सभी परिस्थिति स्पष्ट कर रहे थे।

33

इस परिस्थिति में राम का हृदय घोर कष्ट का अनुभव कर रहा था। उन पर आपत्तियों का पर्वत टूट पड़ा था। वे श्रान्त और दुःखी थे। उनके मन में अनेक भ्रान्तियाँ उत्पन्न होने लगीं थीं। वे आहें भरते हुए कहने लगे कि यदि सीता से मेरी भेंट हो सकी तो मैं अपने को बहुत ही सौभाग्यशाली समझूंगा। कहीं ऐसा न हो कि सीता को किसी नरभक्षी व्याघ्र ने मार कर खा लिया हो अथवा वे किसी पर्वत की घाटी में गिर गई हों अथवा किसी सरिता के प्रवाह में बह गयी हों। मेरे मन में भाँति-भाँति की अनेक अशुभ कल्पनाएँ आती हैं एवं ऐसे संकेत मिल रहे हैं। हे सीता ! तुम्हारी दशा वास्तव में करुण ही प्रतीत होती है। कहीं ऐसा न हो कि तुम्हारे ऊपर कहीं कोई भयानक विपत्ति आ पड़ी हो।

34

राम के मन में भाँति-भाँति की असम्भावित कल्पनाएँ जागृत होकर उन्हें भ्रान्तियों में डाल रही थीं। बुरे अपशकुनों से उनका मन अत्यन्त दुःखी हो रहा था। उसी समय जीर्ण-शीर्ण वस्त्रों में लक्ष्मण उनके सामने आकर उपस्थित हो गये। उन्हें देखकर राम को और भी अधिक दुःख हुआ। उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे मैथिली

की मृत्यु हो गई हो। इस प्रकार अपने दुःख के क्षणों में राम नें यह सब सोचा।

35

इसके पश्चात शीघ्र ही राम ने लक्ष्मण से उनका कुशल-क्षेम पूछा। राम के वचन सुनकर लक्ष्मण ने वहुत शिष्टता से उसका उत्तर दिया। वे अपने बड़े भाई के प्रति वहुत ही स्वामिभक्तिपूर्ण भावना रखते थे। वे अत्यंत आज्ञाकारी थे। राम को भी उनसे अपार प्रेम था। सीता-हरण का समाचार सुनकर राम को अपार कष्ट हुआ। उनका हृदय उस अशुभ समाचार से विदीर्ण हो गया। उनके विचार से अव यह संसार केवल शून्य ही था। इस विश्व में उनके लिए सूनेपन एवं अकेलेपन की अपेक्षा अव कुछ भी शेष न था।

36

ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे राम के शरीर से उनके प्राण ही निकल गये हों। उनका शरीर अव निष्प्राण-सा था। उन्होंने अपने हृदय को सन्तोष देते हुए धैर्य धारण किया, जिससे उनके मन को शान्ति प्राप्त हो सके। फिर भी उन्हें वहुत दुःख हो रहा था। उनके विचारों और मन में अव केवल सीता की कल्पना ही वार-वार साकार हो रही थी। अतएव अब स्वस्थ विचारों से मन की शांतिं असंभव थी। उनके कपोलों पर अश्रु निरन्तर वह-बह कर ढुलक रहे थे। यह अश्रुधारा एक क्षण के लिए भी नहीं रुक रही थी।

37

हे सीता ! तुम किस स्थान पर हो। मुझे तुम इसके संवंध में शीघ्र ही सूचना दो। वह कौन सा क्षेत्र है जहाँ तुम चली गयी हो। मैं दुःखी होकर तुम्हें पुकार रहा हूं। अत्यन्त दुःख के कारण मेरा शरीर काँप रहा है। अव इतने अपार कष्ट को सहन करने में मैं असमर्थ हूं। तुम सदैव ही वहुत से पुष्प तोड़ती रहती थीं। क्या इसी कारण मेरे पास लौट कर नहीं आ रही हो ? क्या पुष्प तोड़ने में ही संलग्न हो अथवा किसी स्थान पर धर्मोपदेश सुनने में मग्न हो ? क्या इसीलिए यहाँ आने में तुम्हें इतना विलम्व हो रहा है ? शायद धर्म-शास्त्रों के अध्ययन में तुम डूबी हुई हो।

38

वह ऐसा कौन सा व्यक्ति है जिससे मैं तुम्हारे विषय में पूछताछ करके यह पता लगा सकूं कि तुम किस स्थान पर और कहाँ हो तथा मुझे तुम्हारे संबंध में सभी समाचार प्राप्त हो सकें। तुम्हारी परिस्थिति का पूरा ज्ञान मुझे हो सके। मैं अपने माता पिता की आज्ञा का पालन करने के लिए इस वन में आया हूं। माताओं से मिलने का भी मुझे कोई अवसर अब प्राप्त नहीं हो सकता। वे सभी मुझसे बहुत दूर पर हैं। यहाँ तक कि मुझे किसी के

विषय में कोई जानकारी भी नही हो सकती। देवतागण भी इस संबंध में मौन धारण किये हुए हैं। आश्चर्य है कि इन देवताओं ने भी मुझे तुम्हारे विषय में कोई संकेत नहीं दिया।

39

अब मैं तुम्हें स्थान-स्थान पर ढूंढ रहा हूं। तुम्हें पाने के लिए मैं निरन्तर प्रयत्नशील हूं। सबसे पहले मैं तुम्हें ढूंढने के लिए तुम्हारे शयनागार में गया। वहाँ पर तुम्हें नहीं पाया। शिलाखण्डों के पास भी जाकर तुम्हें देखा। जहाँ-जहाँ तुम्हारे मिलने की संभावना थी, जिन-जिन स्थानों पर तुम्हें पाने के लिए मैं जा सकता था, वहाँ पर मैं गया। मैं तुम्हें कहीं भी न पा सका।

40

मैं तुम्हें ढूंढता हुआ घने जंगलों में उन स्थानों पर भी गया, जहाँ तुम प्रतिदिन पुष्प-चयन करने के लिए जाया करती थीं। मैंने वहाँ फूलों को विचित्र अवस्था में टूटा और बिखरा हुआ पाया। तुम्हारी अनुपस्थिति में जैसे वे टूट कर मुरझा गये हों। सूर्य की प्रखर किरणों ने भी उनको झुलसा दिया था, उनका सौंदर्य समाप्त हो गया था। ऐसा प्रतीत होता है कि वे भी तुम्हारे वियोग में दुःखी हैं। तुम्हारी अनुपस्थिति के कारण ही उनकी यह दशा हुई है।

41

यह पुष्प कितने पवित्र, मूल्यवान एवं सौभागयशाली हैं। वे तुमसे बहुत प्रेम करते हैं। आज तुमसे बिछुड़ कर वे गहरी विरह व्यथा का अनुभव कर रहे हैं। उन पर जैसे आपत्तियां टूट पडी हैं। वे तुमसे मिलने को आकुल-व्याकुल हो रहे हैं। केवल मैं ही ऐसा एक अभागा हूं, जिसको तुमसे प्रेम नहीं है। यहाँ तक कि मैं तुमसे प्रेम करने में अचेतन पुष्पों से भी पीछे हूं। मैं उनकी भी समानता नहीं कर सकता। अब जब तुम उपस्थति नहीं हो, तो तुम्हारे विरह और वियोग में दुःखी होकर मैं अपने प्राणों का भी त्याग नहीं कर पा रहा हूं। हे देवी ! यदि आज तुम्हारे विरह में मेरा प्राणान्त हो जाता है तो मैं अपने को अत्यन्त सौभाग्यशाली मानूंगा।

42

आज मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि शायद तुम मेरी परीक्षा लेने का प्रयास कर रही हो अथवा छिप कर मुझसे हंसी, खेल या उपहास का कोई दृश्य प्रस्तुत कर रही हो। क्या तुम मुझसे केवल आँख-मिचौनी खेल रही हो और कहीं छिपी हुई हो ? हे सीते! तुम शीघ्र ही मेरे सामने आकर खड़ी हो जाओ। तुम नहीं जान सकती हो कि तुम्हारी विरह-व्यथा मुझे कितनी अधिक सता रही है। हो सकता है कि तुम्हारी उपस्थिति से मेरे प्राणों

की रक्षा हो सके। इसलिए शीघ्र ही तुम मेरे समक्ष आकर प्रकट हो जाओ।

43

मैं उस क्रूर राक्षस का वध करके अभी वापस लौटा हूं। तुम मेरे समक्ष आकर मुझे प्रसन्न करने के लिए उपस्थित क्यों नहीं हो जातीं ? हे देवी ! तुम्हारे प्रति मेरा ऐसा क्या अपराध है जिसके कारण मुझे अकेला छोड़कर तुम यहाँ से चली गयी हो ? शीघ्र ही मेरे पास आ जाओ। वास्तव में तुमने मेरे हृदय को बहुत कष्ट पहुंचाया है। मैं वह व्यक्ति हूं जिसने सदैव ही तुम्हारी सेवा की है। मैंने सदैव ही तुमसे अपार प्रेम किया है।

44

पर्वत श्रेणी, वन तथा ऊंचे-ऊंचे पर्वतों पर कहां मैं जाऊं और जाकर तुम्हारे स्थान के संबंध में किससे पता लगाऊं ? मैं किससे तुम्हारे विषय में पूछूं ? तुम मुझसे क्यों इतनी अधिक क्रुद्ध हो गयी हो ? इसको मैं समझ सकने में पूर्णतः असमर्थ हूं। ऐसा प्रतीत होता है कि अचानक ही कुछ हो गया है जिससे तुम मुझसे बोलना भी नहीं चाहती हो। इस भीषण परिस्थिति में मेरे हृदय का धैर्य तथा निर्णय करने का विवेक समाप्त हो गया है। मेरा हृदय इस दुःख से विदीर्ण हो गया है। इस प्रकार तुमने मेरे धैर्य एवं हृदय को अशान्त कर दिया है। मेरा मन इतना सताया गया है कि आज मैं निष्प्राण एवं शक्तिहीन-सा हो गया हूं। केवल मेरा भौतिक शरीर मात्र ही जीवित दिखायी दे रहा है।

45

निरन्तर तुम्हारे वियोग में रुदन करने से रक्तवर्ण की होकर मेरी आँखें सूज गयी हैं। ऐसा लगता है कि जैसे आँसुओं के स्थान पर उनसे रक्त की धारा बह रही हो। मैं सदैव ही तुम्हारी सहायता की अपेक्षा रखता हूं। मुझे ऐसा लगता है कि जैसे तुमने सदैव के लिए मुझे विस्मृत कर दिया है। यदि तुम्हारा प्रेम मेरे प्रति अब समाप्त हो गया है तो मैं भी तुम्हारे लिए विरह-वेदना का इतना कष्ट क्यों उठाऊं ? तुमने मुझे इस प्रकार यहाँ अकेला छोड़कर चले जाने का न तो कोई कारण बताया और न जाने से पहले मुझसे आज्ञा मांगी।

46

मेरे छोटे भाई लक्ष्मण को तुम्हारे क्रोध के विषय में बिल्कुल ही पता नहीं है। तुम्हारा क्रोध भी केवल एक प्रदर्शन मात्र ही था। संभवतः इसी कारण वे तुम्हारी पूरी सुरक्षा भी न कर सके। वास्तव में क्या उनका भी कोई दोष हो सकता है ? मुझसे भी असन्तुष्ट होने का कोई कारण नहीं था। मै सदैव ही अपनी ओर से तुम्हें पूर्ण सन्तुष्ट करने के सभी संभव प्रयास करता रहा। इसीलिए मैं निर्दोष हूं। उसी प्रकार तुम्हारा व्यवहार भी सदैव ही मेरे

लिए मधुरतापूर्ण रहा है, जिसका अब स्मरण मात्र ही शेष है।

47

जहाँ पर पुष्पों से तुम अपना साज श्रृंगार किया करती थीं, वहाँ पर भी तुम्हें ढूंढने के लिए मैं गया। वहाँ पर मुझे केवल सरोवर एवं जल की धारा ही दिखायी दी। तुम्हारा कोई भी संकेत मुझे वहाँ प्राप्त नहीं हो सका। उसके पश्चात मैं उस स्थान पर भी गया, जहां तुम क्रीड़ा किया करती थी और मन बहलाने के लिए खेल खेलती थीं। मैं सदैव ही उस स्थान पर तुमसे मिला भी करता था। मैं बहुत दुःखी होकर आज वहाँ से लौट आया। तुम्हें वहाँ न पाकर मुझे अपार कष्ट हुआ। तुम उस स्थान पर मुझे दृष्टिगोचर नहीं हो सकीं।

48

इस प्रकार इस भीषण आपत्ति में राम दुःखी होकर सीता के वियोग में रुदन करने लगे। वे मूर्च्छित होकर भूमि पर गिर पड़े। उनका शरीर जैसे भयानक अग्नि में जलकर अधमरा हो गया हो। उसी अवसर पर धीरे-धीरे वायु बहने लगी। वायु के झोंकों से शीतलता प्राप्त करते हुए भी उनके शरीर को विरहाग्नि जलाती रही। उसने किसी प्रकार की औषधि का कार्य नहीं किया, वरन विष की भाँति उनके शरीर की त्वचा को उधेड़ दिया। यहाँ तक कि उसके स्पर्श से भी राम का शरीर अचेत होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा था।

49-50

जब वे अपनी मूर्च्छा से जागृत हुए तो उनको दुर्बलता का अनुभव हुआ। उनकी आँखों से जो निरन्तर अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी, उसको उन्होंने पोंछा तथा रोकने का प्रयास किया। उन्होंने जल प्रपात के पास स्वयं जाकर स्नान किया। सीता के प्रति विरह-व्यथा से उनका मन भरा हुआ था। यद्यपि राम बहुत बड़ी विपत्ति में पड़कर अत्यन्त दुःखी थे, फिर भी उन्होंने नियमानुसार विधिवत पूजा पाठ किया। वे पूजा, आराधना को कभी नहीं भूले। वास्तव में इस जगत में जो पवित्र प्राणी हैं, वे ईश्वर के प्रति भक्तिभाव पूर्ण हैं, वे परिस्थितियों के आधार से ही अपना जीवन-यापन करते हैं। जीवन की गतिविधियों को उन्हीं नियमों के अनुसार वे ढाल लेते हैं।

51

उन्होंने तुरन्त ही अपने छोटे भाई लक्ष्मण को अपने पास बुलाया और कहा कि हे लक्ष्मण !यहां आकर देखो। ऐसा प्रतीत होता है कि किसी राक्षस ने यहाँ पर युद्ध किया है। यहाँ भूमि पर लाल-लाल रक्त बिखरा पड़ा हैं। स्पष्ट है कि यहाँ पर निश्चय ही रक्तपात हुआ है। एक कटी बाँह का भी संकेत मिला। उसका एक भाग

कटा पड़ा था। वहीं पर एकं कवच भी दिखाई दिया। पास में ही एक टूटा रथ भी पड़ा हुआ था। यह एक बड़ा रथ था, जो नष्ट-भ्रष्ट होकर टूटा हुआ था।

52

हे भाई लक्ष्मण ! देखो ! यह युद्ध क्यों किया गया ? हम दोनों इस वन में प्रवेश करें। चारों ओर राक्षसों की खोज करके उन्हें ढूंढ निकालें। इसी वन में राक्षसों की खोज करना उचित होगा। ऐसा लगता है जैसे मेरी आपत्ति का बोझ कुछ हलका सा हो गया हो। विपत्ति कुछ कम हो गयी हो। अब सीता को ढूंढने में मैं बहुत ही निराश हो उठा हूं। मुझे ऐसा लगता है कि कहीं यह रक्त-कण सीता के ही न हों। यह बात राम, बहुत दुःख के साथ, लक्ष्मण से कहने लगे।

53

हे वन के पक्षियों ! क्या तुम सब यह बता सकते हो कि यह युद्ध क्यों और कैसे हुआ ? क्या यह युद्ध बहुत ही भीषण था ? बड़े-बड़े पंख इसका प्रमाण प्रस्तुत कर रहे हैं। आश्चर्य है कि यह पंख कटे पड़े हैं। क्या यहाँ पर कोई भयानक युद्ध हुआ है ? यहाँ तक कि प्राणों की बलि देकर घोर संघर्ष किया गया है ? ऐसा प्रतीत होता है कि सीता को पाने के लिए ही यह युद्ध किया गया। निश्चय ही इससे इस प्रकार की संभावना प्रतीत होती है। किसी अन्य संकेत का आधार यहाँ दिखायी नहीं देता।

54

राम ने इस प्रकार जब अपने विचार व्यक्त किये तथा युद्ध के संकेतों पर पूरा प्रकाश डाला तो अत्यन्त क्रोध से उनका हृदय जलने लगा। यही नहीं उस दृश्य को देखकर उनका क्रोध भभक भी उठा। उनके नेत्र लाल-लाल दिखायी दे रहे थे। ऐसा लगता था कि जैसे उनके रक्तिम नेत्र अपनी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे हों। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि अब वे तीनों लोकों को नष्ट-भ्रष्ट करके उनका संहार करने को प्रस्तुत हो रहे हैं। उस समय राम के भीषण क्रोध की सीमा न रही।

55

सूर्य देवता की प्रखर किरणों की उष्णता की भाँति उनका क्रोध बढ़ता ही चला गया। शनैः शनैः वे अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को एकत्रित करके संघर्ष के लिए प्रस्तुत हो गये। उनका विश्वास और शक्ति दृढ़तर होती चली गयी। क्रोधाग्नि से उनका शरीर अग्निज्वाला की भाँति प्रज्वलित हो उठा। सिंह की भाँति राम शत्रु पर आक्रमण करने के लिए व्याकुल हो उठे।

56

वह कौन नीच राक्षस है जिसने इतनी क्रूरता का प्रदर्शन इस वन में किया है ? किसने इतनी नीचता से आक्रमण किया है ? किसने इतनी शक्ति प्रदर्शित की कि राजपुत्री सीता का अपहरण करके उन्हें इतना अपमानित किया है ? क्या राम कभी भी किसी भीषण एवं शक्तिशाली राक्षस से भयभीत हो सकते हैं ? अतएव ऐसा शत्रु महानीच, बहुत ही क्रूर एवं चरित्रहीन है।

57

दिवस के प्रकाश-स्तम्भ सूर्य देवता भी मेरे समक्ष शक्ति में परास्त हो चुके हैं। शत-शत विशाल पर्वतों के गर्व को मैंने चूर-चूर कर दिया है। सागर को जलहीन करके सुखाने की शक्ति मुझ में है। मैं सम्पूर्ण विश्व को नष्ट-भ्रष्ट करने की शक्ति रखता हूं। मैंने सर्पराज शेषनाग, जो पृथ्वी को धारण किये हुए हैं, को भी चूर-चूर कर दिया है। इस प्रकार तीनों लोकों पर अधिकार करने की शक्ति मुझमें है।

58

इन नीच राक्षसों का तो पूर्ण संहार करने में मैं निश्चय ही समर्थ हूं। मैं निश्चय ही सभी राक्षसों का वध कर दूंगा। धन-सम्पत्ति के राजा कुबेर भी मुझसे संघर्ष करके दरिद्र हो सकते हैं। मैं सभी यक्षों को भी युद्ध में परास्त करके धराशायी कर सकता हूं। मैंने मृत्यु के देवता यमराज का वध करने के लिए काल-देवता को नया अस्तित्व एवं व्यक्तित्व प्रदान किया है और उन्हें नवीन शक्ति दी है। सम्पूर्ण विश्व के संहार की शक्ति मुझमें है। इस प्रकार सम्पूर्ण भूमि तल पर मैं अपना आधिपत्य स्थापित करने में पूर्ण समर्थ हूं।

59

जो देवतागण अपने को बहुत महत्वपूर्ण एवं महान समझते थे, उन्हें मैंने साधारण सिद्ध करके महत्वहीन बना दिया है। देवराज इन्द्र की शक्ति का दर्प मैंने ही चूर करके उन्हें शक्तिहीन बना दिया है। आकाश की दूरी को भी मैंने कम कर दिया है। मैंने ही उसे पृथ्वी के काफी निकट ला दिया है। मैं पृथ्वी को तहस-नहस करने की पूर्ण शक्ति रखता हूं तथा पृथ्वी को रात्रि के सन्नाटे की भांति सुनसान बना सकता हूं।

60

उस समय सिंहनाद करते हुए राम ने इस प्रकार के वचन कहे और धनुष पर बाण चढ़ा लिया। उनके मन में इस संसार के प्रति अपार घृणा तथा क्रोध उत्पन्न हो गया था। इस दृश्य को देखकर लक्ष्मण ने आर्त स्वर

में राम से प्रार्थना की और आग्रह तथा निवेदन किया कि इस विषय में पूरे संसार का क्या दोष है ? वह तो पूरी तरह निर्दोष है। संसार का ध्वंस करने से राम को रोकने का प्रयास लक्ष्मण ने किया। उनके क्रोध को शान्त करते हुए उन्होंने उन्हें आश्वस्त किया।

61

हे राम ! आप अपनी शक्तियों का झूठा प्रदर्शन कर रहे हैं। ये शक्तियाँ तो विश्व के प्रति आपकी शक्तियों और गरिमा का परिचय देती हैं। इस समय आपका क्रोधयुक्त यह व्यवहार ठीक नहीं है। आप भ्रांत और चौकें हुए हैं। आपका लक्ष्य आपको स्पष्ट नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि इस भीषण परिस्थिति ने आपको उद्विग्न कर दिया है, अतएव इस जगत से अब आपको कोई प्रेम ही नहीं रह गया है। मैं आपकी दशा देखकर आपके प्रति बहुत ही करुणा का अनुभव करता हूं। आप विक्षिप्त मानवों की भाँति इस प्रकार का व्यवहार क्यों कर रहे हैं। वास्तव में इस समय आपका मन तथा आपके विचार सन्तुलित नहीं है। मैं बहुत दुःखी हूं और कष्ट का अनुभव करता हूं। आप इन परिस्थितियों का वास्तवविक मूल्यांकन करने में पूर्णतः असमर्थ हैं।

62

इसका कारण यह भी हो सकता है कि आपको वियोग का दुख सता रहा है। आप मातेश्वरी सीता से मिलन की उत्कट अभिलाषा रखते हैं। इसीलिए आपके हृदय में इतना अधिक क्रोध उतपन्न हो गया है। क्या जो लोग वास्तव में विवेकशील हैं, कभी इस सीमा तक इस प्रकार अपने विचारों का सन्तुलन खो बैठते हैं ? इसमें सन्देह नहीं कि यह स्वाभाविक ही है कि इस परिस्थिति में विचार शीघ्र ही असन्तुलित हो जाते हैं और मनुष्य विक्षिप्त जैसा व्यवहार करने लगता है। वह मन का सन्तुलन खो बैठता है। अतएव इस कठिन परिस्थिति में मनुष्य को केवल धैर्य का ही आश्रय लेना पड़ता है, तभी क्रोधाग्नि शान्त हो सकती है।

63

क्या क्रोध आदि दुर्गुणों को स्वीकार कर आप उसका पूरा अनुसरण करेंगे ? इससे मानव के विचार निश्चित रुप से संकुचित हो जाते हैं। उसका दृष्टिकोण बहुत ही सीमित हो जाता है। इससे संसार के प्रति मानव के मन में अविश्वास उतपन्न होता है तथा आदर सम्मान भी कम हो जाता है। उसे विश्व में रुचि नहीं रहती। इस घटना में तो सम्पूर्ण जगत का कोई दोष भी नहीं है। आप ही स्वयं भ्रान्ति में पड़े हुए हैं। आप दुःखी भी हैं। आप पर एक भीषण आपत्ति आ पडी है।

64

राम के छोटे भाई लक्ष्मण ने दृढ़तापूर्वक राम से जब ये शब्द कहे और उन्हें समझाया तो दोनों भाई साथ ही साथ गहन वन में सीता को ढूंढ़ने के लिए उद्यत हुए। इस प्रकार वे आश्रम से बहुत दूर निकल गये।

65

जब दोनों भाइयों ने वन में प्रवेश किया तो उन्हें एक विशाल पक्षी दिखायी दिया। वह जटायु था। दूरी के कारण पहले तो स्पष्ट दिखायी नहीं दे रहा था। केवल यह आभास हो रहा था कि सामने कोई पर्वत–सा खड़ा है।

66

दोनों भाइयों ने यह अनुमान लगाया कि शायद इस पक्षी ने सीता का वध किया है। राम ने पूरा निश्चय कर लिया कि यह कार्य इसी पक्षी का है। राम उस पर आक्रमण करने के लिए जैसे ही आगे बढ़े, जटायु ने उनसे कहा।

67

हे राम ! हे रघुपुत्र ! आप मुझे मत सताइए। मैं जटायु हूं। आपका शत्रु मैं नहीं हूं। मैं इतना जानता हूं कि इस वन में सीता का हरण कर लिया गया है। उनको कहीं दूर ले जाया गया है।

68

जब उस विशाल पक्षी ने राम से यह कहा तो राम ने उसकी वन्दना की तथा जटायु के प्रति गहरी करुणा प्रकट की। जटायु उनका निकटतम मित्र था।

69

जटायु कष्ट से तड़प रहा था। उसके घावों से रक्त की धारा बह रही थी, फिर भी वह अब तक जीवित था। राम से मिलने की उसकी उत्कृष्ट अभिलाषा भी थी। इसीलिए दृढ़तापूर्वक वह अपने प्राणों की रक्षा किये हुए था। राम के प्रति उसका अगाध प्रेम उसे अनुपम शक्ति दे रहा था।

70

जब राम जटायु के पास आकर खड़े हो गये, तो जटायु ने शत्रु के विषय में उनको पूरी जानकारी दी। इस वर्णन के पश्चात उसने प्राण त्याग दिया। वह भयानक रुप से घायल हो गया था। उसके घावों से रक्त की धारा बह रही थी।

71

जटायु का प्राणान्त हो गया, तो राम बड़े दुःखी हुए। जटायु के शरीर त्याग पर उन्हें अपार दुःख हुआ। उन्होंने इसके पूर्व मरणासन्न जटायु से कहा था कि हे जटायु ! आप बहुत ही पवित्र एवं गुणी हैं। मैं आपके जीवन को और अधिक समय तक बढ़ा सकता हूं, अतएव आप अपने प्राण को शरीर में ही रक्खें।

72

हे जटायु ! आपका सदैव से ही मेरे पिता के प्रति प्रेम रहा है। वह संबन्ध आपने मेरे साथ भी रखा। मेरे हित में आपने अपने प्राणों का उत्सर्ग कर दिया है अर्थात मेरे पिता दशरथ के पश्चात मेरे प्रति पूर्व संबंध का आपने पूरा निर्वाह किया है। यह स्तुत्य है। हे पक्षिराज ! आपका जीवन कितना महान एवं मूल्यवान है।

73

अभी आप जीवित थे। मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे अपने पिता से भेंट करने का शुभ अवसर प्राप्त हो गया हो। मैं आपको अपने पिता तुल्य ही समझता हूं। अब आपकी मृत्यु से मेरा दुःख और अधिक बढ़ गया है।

74

जटायु के शोक में राम के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी। उन्होंने अग्निदाह करके जटायु का अन्तिम संस्कार किया। उस मृतात्मा की शान्ति के लिए उन्होंने जटायु का विधिवत संस्कार किया। उससे उन्होंने अन्तिम विदा ली। उसके पश्चात सीता की खोज करने के लिए उन्होंने गहन वन में प्रवेश किया।

75

उनको उस वन में एक भयानक राक्षस भी दिखायी दिया। उसके बहुत लम्बे-लम्बे हाथ थे। वह बहुत भूखा था तथा भोजन की अभिलाषा करता था। वन में लक्ष्मण एवं राम उसके पास जा पहुंचे।

76

बहुत समय तक उसका आहार अधिकतर पशु ही थे। अतएव वह उन्हीं का सबसे बड़ा शत्रु था। उसका नाम दीर्घबाहु था। उसने राम पर आक्रमण कर दिया। राम भी क्रुद्ध हुए। उन्होंने अपनी तीक्ष्ण धार वाली तलवार

निकाली। तलवार खींच कर उन्होंने भी राक्षस पर आक्रमण कर दिया।

77

जब राम ने उस पर आक्रमण किया, तो उसने भीषण रुप धारण कर राम से घोर संघर्ष किया। अपनी लम्बी वाहों को फैला कर राम को उसने उनमें लपेट लिया। राम ने उसकी भुजाएं काट दीं। वह गिरकर धराशायी हो गया।

78

उसके पश्चात वह अपने असली स्वरुप में परिवर्तित हो गया। उसका आकार देवता के रुप में वदल गया। उसके शरीर के चारों ओर से आभा की किरणें फूटने लगीं। वह किरणें इस प्रकार प्रकाश विखेर रही थीं, जैसे सूर्य की किरणें उजाला कर रही हों।

79

उसने राम से उनका नाम पूछा तथा यह भी पूछा कि इस गहन वन में उनके आने का क्या कारण है। दीर्घवाहु ने राम से इन वातों को जानना चाहा।

80

अपने अस्त्र–शस्त्रों को हाथ में धारण किये हुए राम ने अपना नाम दीर्घबाहु को बताया तथा अपना परिचय दिया। यह भी स्पष्ट किया कि वन में उनके प्रवेश का क्या कारण था। उसके बाद राम ने भी उससे उसका परिचय पूछा।

81

उन्होंने पूछा – तुम्हारा जन्म पहले किस रुप में हुआ था ? हे पवित्र आत्मा ! तुम्हारा अस्तित्व तो देवताओं की भाँति दिखायी देता है। मैं भी तुमसे यह पूछना चाहता हूं कि क्या मेरी सभी अभिलाषाएँ पूर्ण होगीं और मेरे लक्ष्यों की पूर्ति हो सकेगी ?

82

क्या मैं सीता को प्राप्त करने की अपनी अभिलाषा की पूर्ति कभी कर सकूंगा ? क्या मैं अपने शत्रु को पराजित करके पूरी सफलता प्राप्त कर सकूंगा ? राम ने इस प्रकार के कई प्रश्न दीर्घबाहु से पूछे। उसके पश्चात उस देवता ने राम के सभी प्रश्नों का सविस्तार एवं यथोचित उत्तर दिया :

83

मैं लक्ष्मी देवी का पुत्र हूं। एक समय की बात है। मैंने खेल खेलते हुए अपनी अशिष्टता का परिचय दिया। उस समय मैं स्वर्ग में घूम रहा था। मैंने एक बड़े मुनि का अनादर कर दिया। उन्हें मैंने पैर से स्पर्श किया।

84

मुझसे अत्यन्त क्रुद्ध होकर मुनि ने शाप दे दिया। फलतः मैं राक्षस योनि में जन्म लेने के लिए विवश हो गया। आपने यहाँ आकर मुझे उस शाप से मुक्त किया है। वास्तव में मैं आपका ही पुत्र हूं।

85

हे दीर्घबाहु ! तुम्हारा उद्देश्य तो पूरा हो गया है। मुझे तो अभी भी अपनी पत्नी सीता की खोज करनी है। रावण सीता का हरण करके ले गया है। उसके विषय में अभी तक कोई सूचना प्राप्त नहीं हुई है।

86

सामने एक पर्वत है। वहाँ पर आपको जाना चाहिए। इस पर्वत का नाम ऋष्यमूक है। वहाँ पर एक वानर राज से आपको भेंट करना चाहिए। उनका नाम सुग्रीव है।

87

सुग्रीव बड़े ही विवेकशील, बुद्धिमान एवं शक्ति-संपन्न हैं। वे भी बड़ी विपत्तियों में फंसे हुए हैं तथा दुःखी जीवन व्यतीत कर रहे हैं। आपको उन पर अपनी कृपादृष्टि करनी चाहिए। सुग्रीव के बड़े भाई वालि का वध करने से ही सुग्रीव को शान्ति मिल सकेगी।

88

सुग्रीव बहुत दुःखी हैं। वे भी एक विरही का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। उनकी प्रेमिका तारा को उनसे बालि ने छीन लिया है। बालि बहुत क्रूर एवं नीच व्यक्ति है।

89

सुग्रीव तारा के विरह में बहुत व्याकुल रहता है। उसकी परिस्थिति उस बैल के समान है जिसको कि गाय के निकट जाने का अवसर ही प्राप्त नहीं हो पाता है। गाय ने जैसे अभी हाल में ही बछड़े को जन्म दिया हो, ऐसे ही वह तड़प रहा है।

90

इसीलिए हे राम ! आपकी कठिनाई एवं सुग्रीव का कष्ट समान है। यदि इस पर आप थोड़ा भी विचार करें, तो सारी परिस्थिति स्पष्ट हो जायेगी। जब वानर राज सुग्रीव से आपकी प्रगाढ़ मित्रता हो जायेगी तो सुग्रीव ही आपके सच्चे मित्र बन कर आपके शत्रु का वध करेंगे।

91

मेरे यह वचन बनावटी नहीं है वरन पूर्ण वास्तविकता के सूचक हैं। इसीलिए सभी आवश्यक बातें मैंने आपको बतला दी हैं। आप अब शीघ्र ही वानर राज सुग्रीव को अपना मित्र बनाइए। निश्चय ही रावण युद्ध में परास्त हो जायेगा।

92

यदि आप सुग्रीव से प्रेम करेंगे तो वह शीघ्र ही आपके भक्त बन जायेंगे। आप गुरु के रुप में कार्य करें तो सुग्रीव आपके आज्ञाकारी शिष्य बन जायेंगे। इस प्रकार आपकी सभी इच्छाएँ एवं अभिलाषाएँ पूरी हो सकेंगी।

93

चाहे आपका लक्ष्य कितनी भी दूर क्यों न हो, वे शीघ्र ही उसको प्राप्त कर सकेंगे। उनकी प्रजा भी असंख्य हैं। बड़े-बड़े वानर उनके साथ हैं। वे बड़े ही वीर एवं शक्तिशाली हैं।

94

आप भी सुग्रीव का कष्ट यथाशीघ्र दूर करने की कृपा कीजिए, ऐसा होने पर वे आपके साथ अपनी कृतज्ञता ज्ञापित करेंगे और आपकी सहायता कर सकेंगे। तब आप भी अपनी प्रेमिका देवी सीता से शीघ्र ही मिल सकेंगे।

95

इस प्रकार राक्षस रुपी उस देवता ने राम को भाँति-भाँति की बातें समझायी। तत्पश्चात वह आकाश में उड़कर चला गया। राम फिर वन में प्रवेश करके सीता की खोज में निकल पड़े।

96

राम ने वन की सुरम्यता का आनंदपूर्वक अवलोकन किया। वन में वहुत से अच्छे-अच्छे फलों वाली वृक्ष-राजियाँ थीं। उन सुन्दर मधुर फलों को देखकर उनकी क्षुधा शान्त हो गयी। इसके वाद राम एवं लक्ष्मण एक पवित्र और बड़ी नदी के तट पर जा पहुंचे।

97

नदी की निर्मल जलधारा तीव्रगति से वह रही थी। राम और लक्ष्मण दोनों भाइयों ने उस नदी को पार किया। उसके वाद फिर वे एक सुन्दर वन में जा पहुंचे। वहाँ पर उन्होंने तप करती हुई स्त्रियों को देखा।

98

वहाँ पर एक स्त्री शवरी (शवर जाति की भीलनी) थी। पेड़ों की छाल के बने उसके वस्त्र थे। उसके शरीर का रंग काला था, जो कालिमा का प्रतीक माना जा सकता है।

99

उस भीलनी का रुप पवित्र था। उसके विचारों में अस्थिरता लेशमात्र भी न थी अर्थात वह स्थिर बुद्धि वाली स्त्री थी। वह उस व्यक्ति की भाँति थी, जिसने जीवन में पूर्णता एवं परिपक्वता को प्राप्त कर लिया था। जीवन के सभी सुख तथा आनंद का उसने सर्वथा परित्याग कर दिया था। केवल धर्म के नियमों का पालन करना ही उसके जीवन का परम लक्ष्य था। वह केवल फलों का ही आहार करती थी। सदैव ही केवल पूजा अर्चना में वह अपना समय व्यतीत करती थी।

100

जब राम ने शबरी को देखा तो उसके दर्शन मात्र से उनका दुःख समाप्त हो गया। शबरी की तपस्या एवं कठिन व्रत के कारण उसका व्यक्तित्व पवित्रता का प्रतीक बन गया था। शबरी की इस महानता को देखकर राम आश्चर्यान्वित हो उठे। राम ने कहा :

101

हे तपस्विनी शबरी ! तुम्हार जीवन पवित्रता का प्रतीक है। तुम केवल तपस्या में ही लीन रह कर कठोर व्रत का पालन करती हुई अपना जीवन व्यतीत कर रही हो। तुम्हारी पूजा तथा अर्चना का क्यालक्ष्यहै ? तुम तो धर्माचरण करती हुई, ईश्वर के प्रति भक्ति-भावना से. अपने कर्तव्यों का पालन कर रही हो।

102

तुम अपने पूर्वजों की मृतात्माओं को प्रसन्न करने के लिए विधिवत उनकी पूजा करती हो। प्रातःकाल ईश्वरोपासना एवं आराधना में तुम्हारा समय व्यतीत होता है। इस प्रकार सदैव तुम पूजा अर्चना में रत रहती हो। धर्मग्रन्थों के प्रति भी तुम्हारी अपार श्रद्धा है। पवित्रजनों और महापुरुषों के चरित्रों तथा उनके आदर्शों के प्रति भी तुम्हारी गहरी आस्था है।

103

कठिन तपश्चर्या की प्रक्रिया भी मानव जीवन में एक आकस्मिक घटना की भाँति अपना स्थान रखती है। इससे सभी प्रकार की विलासी प्रवृत्तियाँ, सन्देह एवं भ्रम समाप्त हो जाते हैं। व्रत एवं नियमों से जीवन में अनुशासन और दृढ़ता आती है। इससे गुरुजनों के प्रति भक्ति-भाव उत्पन्न होता है।

104

इस प्रकार के वचन राम ने शबरी से कहे। तत्पश्चात उस तपस्विनी स्त्री से उन्होंने बड़े आदर भाव से वार्तालाप किया। शबरी ने भी राम का पूरा सम्मान करते हुए उन्हें मधु दिया तथा भाँति-भाँति के फल खाने के लिए प्रदान किये।

105

हे राम ! आप मुझे क्षमा कीजिए। मैं इस वन में तपस्या कर रही हूं। मैं अपने तप के द्वारा जो कुछ भी प्राप्त कर सकी हूं, उससे मुझे पूरा सन्तोष है। मेरे मन में आपके प्रति भक्ति भावना है। उसके लिए मैं सदैव ही

स्वतंत्र रुप से धर्माचरण करती रहतीं हूं।

106

मेरे व्रत तथा तप करने का भी एक विशेष कारण है। मेरे हृदय में अन्य सभी लोगों से प्रेम करने की गहरी अभिलाषा है। मुझे यह विश्वास है कि जब विष्णु का अवतार होगा तो वह पृथ्वी के अन्तराल में चले जायेंगे।

107

रुद्रदेव ने जब उनको शाप दिया था, उस समय वे एक लिंग के रुप में थे। विष्णु उस समय एक मधुपायी की अवस्था में थे। उन्होंने वराह का रुप धारण कर लिया था, तत्पश्चात उन्होंने देवी पृथ्वी से विवाह कर लिया था।

108

उसके बाद विष्णु वराह के रुप में फिर प्रकट हो गये। एक पर्वत श्रेणी में जाकर उन्होंने शरण ली। बाद में एक मोतियों की माला को वे खाने लगे।

109

इस घटना के पश्चात उस बराह की मृत्यु हो गयी। उसके मृतक शरीर को हम सब ने खा लिया। यहीं से सभी दुःखों का प्रारम्भ होता है। इसी कारणवश हम सबके शरीर नील वर्ण के हो गये।

110

आपको हम सब पर दया आ गयी। आपने हमारे मुख धोयें एवं पोंछ कर स्पर्श किया। इससे हम सब फिर नया स्वास्थ्य लाभ कर सके हैं। आपने यहां आकर हमारे शाप को पूर्णरुपेण समाप्त कर दिया है। हमारा रोग अब सदैव के लिए नष्ट हो गया है।

111

तपस्विनी शबरी ने राम से इस प्रकार के प्रेमपूर्ण वचन कहे तो राम ने एक बार फिर उसका स्पर्श कर उसे अभयदान दिया। वह तपस्विनी पूर्णरुपेण रोगमुक्त होकर स्वस्थ हो गयी। उसने भी राम को भेंट देकर उनका पूरा

स्वागत किया।

112

हे राम ! आप कितने श्रेष्ठ, पवित्र एवं महान हैं। आपको देख कर ऐसा प्रतीत होता है कि आप ही जैसे विष्णु के अवतार हैं। आपके रुप में ही विष्णु साकार होकर मानव के रुप में प्रकट हुए हैं। आपने अपने मधुर स्पर्श मात्र से ही मुझे रोगमुक्त कर दिया है। इसीलिए मैं आपकी सेवा-सुश्रुषा कर आपको उपहार देना चाहती हूं।

113

वानरों के राजा सुग्रीव बड़े ही बुद्धिमान एवं विवेकपूर्ण हैं। उनको आप अपना मित्र बनाइए। इसके बाद आपकी इच्छा पूरी होगी, सीता को प्राप्त करने में आपको तब कोई कठिनाई नहीं होगी। इन शब्दों को कहकर वह विलीन हो गयी।

114

राम तथा लक्ष्मण तत्पश्चात एक प्रसिद्ध वन में प्रवेश करने के लिए प्रस्तुत हो गये। उस वन का नाम प्रतीतकम्प था। उस वन में अनेक वन्य पशु आनंदपूर्वक विहार कर रहे थे। बड़े-बड़े विद्वान तथा तपस्वी भी उसी वन में प्रवेश करके पूजा तथा व्रत में अपना समय व्यतीत कर रहे थे।

115

उस वन को देखकर राम को अपार हर्ष हुआ। उन्हें वहाँ पूर्ण शान्ति एवं सन्तोष प्राप्त हुआ। भाँति-भाँति के मनोहर पुष्प उस वन में खिल रहे थे। वह वन परम सुरम्य था। वह फल-फूल से सुशोभित हो रहा था। उन्होंने वहाँ पर सुन्दर सरोवर देखे। उन सुन्दर जलाशयों में बहुत से श्वेत कमल पुष्प खिले हुए थे।

116

उस सुरम्य वन के वातावरण में सुख मिलने की अपेक्षा राम के हृदय को कष्ट होने लगा। उनका ध्यान सदैव ही ऐसे अवसरों पर सीता की ओर चला जाता था। सीता का विछोह अब उनको व्याकुल किये हुए था। इस सुन्दर दृश्य को देखकर राम के नेत्रों से सीता के विरह में अश्रुधारा प्रवाहित हो उठी। बड़े दुःख के साथ उन्होंनें अपने छोटे भाई लक्ष्मणसे इस प्रकार कहा :

117

हे भाई लक्ष्मण ! इस निर्मल जल युक्त जलाशय का अवलोकन करो। इसमें मधु मक्खियाँ कमल-पुष्पों का रस लेती हुई मधुर रव में गुंजार कर रही हैं और सरोवर की शोभा बढ़ा रही हैं। तेलियर पक्षी के जोड़े - नर एवं मादा-धीरे-धीरे मधुर स्वर में बोल रहे हैं। राम ने ठंडी आहें भरते हुए कहा कि ये दोनों पक्षी विरहीजनों को छेड़कर उनके दुःख को और अधिक उभार रहे हैं और उन्हें दुःखी कर रहे हैं।

118

इन सरों में सुन्दर कमल पुष्प खिल रहे हैं, साथ ही इन जलाशयों में नवीन पुष्प भी प्रतिक्षण पुष्पित होते दिखायी दे रहे हैं। इन पुष्पों की सुन्दरता आकाश के नक्षत्रों से भी अधिक आकर्षक प्रतीत होती है। पुष्पों की कोमलता एवं सौंदर्य तो हृदय को और भी अधिक दुःखी कर रहे हैं। जो व्यक्ति अपनी प्रेमिका से विलग होकर कष्टमय जीवन व्यतीत कर रहा है, वह इस मनोहारी वातावरण में इस सौंदर्य को देखे, तो निश्चय ही और भी अधिक दुःखी होगा।

119

जो लोग अपनी प्रेमिकाओं के साथ आनंदपूर्वक जीवन-यापन कर रहे हैं, वे तो अवश्य ही मधुमक्खियों के मधुर रव एवं हंसों के स्वरों को सुनकर और अधिक आनंदमग्न हो जायेंगे। ये पक्षी मधुर शब्द करते हुए उल्लास मना रहे हैं। इसी प्रकार आनंद मनाते हुए प्रेमियों को यह वातावरण बहुत ही मधुर एवं आनंदपूर्ण लगेगा। उनके हृदय में इससे और अधिक आकर्षण उत्पन्न होता है। ये सभी बातें प्रसन्न-चित्त प्राणियों को ही भली लगेंगी। जिन लोगों की प्रेमिकाएँ उनके साथ नहीं हैं, जो विरही लोगों की भाँति जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उनके कानों में वे स्वर पीड़ा ही उत्पन्न करेंगे। इनसे उन्हें और अधिक दुख ही होगा।

120

वृक्षों पर अठखेलियाँ करते हुए पक्षी, पुष्पों को नीचे गिराते हैं। इस प्रकार पुष्प बिखरते हैं तथा वृक्षों से नीचे गिर जाते हैं। इसे देखकर कौन ऐसा मूर्ख होगा, जिसका हृदय द्रवित नहीं होगा। ऐसे लोग भी हैं जिन्होंने जीवन में सभी आनंद एवं सुखों का परित्याग कर दिया है।

121

पुष्पों की सुगन्धि वातावरण में चारों ओर बिखर कर उसे सुगन्धियुक्त बना रही थी। पक्षियों का कलरव

एवं शोर कानों को कुछ कटु–सा प्रतीत हो रहा था। ऐसा आभास हो रहा था कि खिलते हुए कुसुम हृदय को कष्ट पहुंचा रहे थे। ऐसी विकट परिस्थिति में विरहियों के हृदय विदीर्ण करने के लिए कामदेव ने भी अपने बाणों की वर्षा प्रारम्भ कर दी। इसने राम के हृदय को भी वेध दिया।

122

सभी वृक्ष भी कामदेव की भाँति ही पुष्प–बाणों की वर्षा कर रहे थे। उनकी पतली तथा कोमल पत्तियाँ तीक्ष्ण बाणों की भाँति ही प्रतीत हो रही थीं। वृक्षों की शाखाएं सीधे एवं कठोर धनुष की भांति थीं। राम को ऐसा लग रहा था जैसे कि उनके हृदय को वेधने के लिए ही वृक्ष भी यह बाण वर्षा रहे हों। एक विरही की भाँति उनका हृदय भी बाणों ने वेध कर टुकड़े–टुकड़े कर दिया था।

123

मन्द पवन धीरे–धीरे वहकर पंखा झल रहा था। सुगन्धियुक्त पुष्प वन प्रदेश को सुवासित कर रहे थे। राम को यह अनुभव भिन्न रुप में हो रहा था। उनके हृदय में वे अग्निज्वाल की भाँति उष्णता उत्पन्न कर रहे थे। उन्होंने आहें भरते हुए कहा कि जो प्रेमी अपनी प्रेयसियों के वियोग में दुःखी हैं, उनके लिए यह मोहक वातावरण अत्यधिक दुःखदायी है।

124

वृक्षों की कोमल तथा हरी–हरी पत्तियाँ धीरे–धीरे वायु के झकोरों से हिल रही थीं। उन पर श्वेत ओसकण बिखरे हुए थे। वे ऐसें लग रहे थे मानों आकाश पर नक्षत्र दिखाई देते हैं। राम को ऐसा लग रहा था जैसे उनका हृदय विरहाग्नि से पिघल कर ओसकणों की भाँति बिखर गया हो। अश्रुधारा के माध्यम से आँसू की बूंदें टपक रही थीं।

125

हाय ! मेरे इस अपार कष्ट का अन्त कब हो सकेगा ? राम बार–बार यही सोच कर संतप्त हो रहे थे। प्रियतमा सीता से बिछुड़ कर मैं बहुत दुःखी हो रहा हूं। इससे मुझे कब मुक्ति प्राप्त हो सकेंगी ? मृत्यु के देवता भी मेरी ओर ध्यान नहीं दे रहे हैं। उन्हें भी मुझ पर दया नहीं आती। वे मेरा वध भी नहीं करते। मेरे प्रति अब इस संसार में घोर अन्याय हो रहा है। वह सब मुझे निरन्तर सहन करना पड़ रहा है।

126

मधु मक्खियों की गुंजार मेंरे हृदय में ज़्वाला–सी जलाती है। जब भी मैं वह स्वर सुनता हूं, मेरा हृदय दुःख से भर जाता है। शीघ्र ही मुझे सीता का स्मरण हो आता है। हृदय में एक प्रकार की उष्णता सी भर जाती है, जैसे कोई अग्नि की पर्वतमाला धधक रही हो और उससे निरन्तर लपटें फूट रहीं हों। इस परिस्थिति से विवश होकर मैं कुछ कर भी नहीं पा रहा हूं। कोई ऐसा स्थान भी नहीं है जहाँ मुझे इस कठिनाई से मुक्ति हेतु शरण प्राप्त हो सके तथा इस दुःखमय परिस्थिति में सहायता प्राप्त हो सके।

127

अचानक ही मेरे हृदय में अन्धकार छा जाता है। मैं इस सुरम्य वन में खिले हुए सुन्दर पुष्पों को देखकर भ्रमित एवं चकित हो जाता हूं। सभी पुष्प वातावरण में सुवास बिखेर रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि यह वन कामदेव का राजमहल है और सौंदर्य का प्रतीक है। यदि मैं बहुत चतुरता एवं कुशलता से अपने को सन्तुलित न करु, तो निश्चय ही मैं पथ–भ्रष्ट हो सकता हूं।

128

वायु के झकोरे वृक्षों की डालों को हिला रहे हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आनंद उल्लास में सुखी एवं डूबे हुए ये वृक्ष मग्न होकर नृत्य कर रहे हैं। मधुमक्खियाँ अपने कार्य में रत फूलों का रस चूसती हुई गीत गाती हैं। मुझे विरह सता रहा है। वह मेरे हृदय को बार–बार दुःख से भर देता है, जिससे मेरा मन भारी हो जाता है।

129

राम सीता के वियोग में इसी प्रकार दुःखी होकर रुदन कर रहे थे। उनके शरीर की शक्तियाँ जैसे क्षीण–सी हो गयी थीं। शरीर के जोड़ों में विशेष दुर्बलता आ गई थी। उनका हृदय दुःख से परिपूर्ण था। ऋष्यमूक पर्वतमाला उन्हें भयानक लग रही थी। वह घने जंगलों से ढकी हुई थी। उसी ओर राम और लक्ष्मण ने सीता की खोज करते हुए प्रस्थान किया। बड़े दुःखी हृदय से वे जंगलों के मध्य से होकर ऋष्यमूक पर्वत श्रेणी की ओर बढ़े चले जा रहे थे।

130

जब राम ऋष्यमूक पर्वत पर आये, तो वहाँ पर उन्होंने सुग्रीव से भेंट की। सुग्रीव बहुत दुःखी जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे रात दिन चिन्ताग्रस्त रहते और सोचा करते थे। उनके दुःख की सीमा न थी। वे सोचते थे कि राम को उनकी सहायता करनी चाहिए तथा उनके लिए यही उचित है कि वे राम की शरण एवं सुरक्षा में रहें। सुग्रीव के लिए अन्य कोई मार्ग नहीं था। यही सोचते हुए वे वहाँ से चल पड़े तथा वन में उन्होंने प्रवेश किया। उन्होंने

शीघ्र ही मलय पर्वत की ओर प्रस्थान कर दिया।

131

मलय पर्वतमाला से वढ़कर सुरम्य अन्य कोई पर्वतश्रेणी नहीं थी। वह वन बहुत विशाल था। बड़ी कठिनाई से ही वहाँ पहुंचा जा सकता था। इसी पर्वत की ओर अपनी विशाल वानर सेना लेकर उन्होंने प्रस्थान किया। राम के प्रति उनके मन में अपार भक्ति–भावना थी। इसी से आश्वस्त होकर राम ने सोचा कि मैं सुग्रीव के कष्टों का निवारण करु तथा उनकी अभिलाषाओं की पूर्ति करु। सुग्रीव बहुत ही शीलवान एवं पवित्र विचारों वाले हैं। वे यदि मेरी सेवा के लिए प्रस्तुत हैं तो मुझे उनकी सेवाओं को स्वीकर करना चाहिए। इस प्रकार सुग्रीव के प्रति राम ने अपना विचार बनाए।

132

जब सुग्रीव मलय पर्वत पर पहुंच गये। उन्होंने हनुमान को अपना दूत वनाकर राम के पास भेजा। राम को अपने पास लाने का आग्रह उन्होंने किया। जब पवन–पुत्र हनुमान से राम के पास जाने के लिए कहा गया, तो वे शीघ्र ही वहाँ जाने को तैयार हो गये। वे उसी क्षण ही वहाँ जाने को तैयार हो गये और आकाश में उड़ गये।

133

शीघ्र ही हनुमान ऋष्यमूक पर्वत पर जा पहुंचे। वायुवज्र हनुमान के आगमन से तीव्र हवा के झोंके आने लगे। वायु के झोंकों से एक ध्वनि उत्पन्न हो गयी। तीव्र झोंकों की गति के कारण वृक्ष हिलने लगे एवं उखड़–उखड़ कर पृथ्वी पर गिरने लगे। उनकी शाखाएं टूट गयीं। वे टूट–टूट कर भूमि पर गिर पड़ीं। इस प्रकार अनेक वृक्ष पृथ्वी पर धराशायी हो गये।

134

तत्पश्चात हनुमान ऋष्यमूक पर्वत के प्रदेश में आ गये। उन्होंने पर्वतमाला पर पदार्पण किया। उनका स्वभाव एवं चरित्र महात्माओं की भाँति था। अपनी इच्छा से ही उन्होंने पवित्र जीवन–पथ का अनुसरण किया था। उन्होंने इधर–उधर वन में सीता को खोजते हुए राम को पाया। वे राम के पास गये। उन्होंने उनसे इस प्रकार निवेदन किया :

135

हे गुणी, दृढ़ एवं पवित्र विचारों वाले राम ! आप ऋष्यमूक पर्वत तक आ पहुंचे हैं। यह पर्वतमाला बहुत ही दुर्गम है। यहाँ पहुंचना अत्यन्त दुष्कर है। मार्ग भी बहुत ही कष्टप्रद है। यहाँ तक कि महेश्वर देवता भी यहाँ पर नहीं आना चाहते। क्या कारण है कि आप दोनों भाई इस कठिन वन प्रदेश में प्रवेश करके यहाँ तक आये हैं ? आपको ऐसी क्या आवश्यकता थी जो इतना कष्ट सहा ?

136

बहुत ही क्रुर प्रवृत्तियों वाले प्राणी इस स्थान पर रहते हैं। यहाँ की गुफाओं में राक्षसों एवं पिशाचों का निवास है। आपने किस प्रकार इस दुष्कर पथ को पूरा किया तथा यहाँ तक आप कैसे आये ? यह मार्ग घने जंगलों से ढका हुआ है। इस मार्ग पर चलना बहुत ही कठिन है। जहाँ तक मेरा विचार है, आपकी अपेक्षा शायद ही किसी अन्य ने यहाँ आने का साहस किया होगा।

137

यहाँ अनेक सिंह घूमते रहते हैं। मानव का प्रत्येक शत्रु यहाँ पर उपस्थित है। वे भीषण रूप में आक्रमण भी करते हैं। चीते का भयानक स्वर मन में भय उत्पन्न करता है। सभी भयानक जन्तु इस दुर्गम पर्वतमाला पर आनंद-विहार करते हैं। बड़े-बड़े पत्थर हिल-हिल कर नीचे लुढ़कते रहते हैं। यदि कोई इस मार्ग से चले, तो यहाँ के कष्टप्रद प्रस्तर बहुत कष्ट देंगे। लुढ़क-लुढ़क कर पत्थर हर समय गिरते ही रहते हैं।

138

यहाँ नदियाँ भी टेढ़े-मेढ़े मार्गों से बहती हैं। उनमें अनेक बड़े-बड़े प्रस्तर-खण्ड पडे रहते हैं। उनका जल भंवरों से युक्त है। विशाल हाथियों के झुण्ड के झुण्ड नदियों के जल को आन्दोलित करते हैं। वे विविध भाँति से डूबते-उतराते जल-क्रीड़ा करते रहते हैं। जल में मग्न होकर बाहर निकल-निकल कर भूमि तल पर तथा पर्वतों की ढालों पर आकर वे खडे होते हैं। पर्वत की ढालों में भी कई विचित्र मोड़ हैं जो नीचे झुके हुए हैं। नदियों के जल को गज-क्रीड़ा ने जैसे मथ डाला हो। विशाल गजों के झुण्ड के झुण्ड सदैव ही इन नदियों में स्नान करने के लिए आते रहते हैं और गहरे जल में उतर-उतर कर आनंद मनाते हैं।

139

इस भयानक पर्वतमाला पर भाँति-भाँति के डरावने जीव-जन्तु हैं। यहाँ सिंह अपनी इच्छानुसार मांसाहार करते हैं। वे बहुत ही आक्रामक हैं और भीषण रव करते हुए गुर्राते हैं। बड़े-बड़े पत्थरों में नीचे की ओर बड़े-बडे छेद भी हैं, जहाँ पर सर्प प्रसन्नता-पूर्वक पड़े रहते हैं। वे अत्यन्त विषैले हैं। उनके काटने से शीघ्र

हो प्राणान्त हो जाता है।

140

हनुमान ने विनम्रता से यह सब राम और लक्ष्मण से कहा। उसके पश्चात वे उनके पास आकर उनके विषय में पूछने लगे। राम ने सविस्तार अपनी परिस्थितियों का कथन किया और वहाँ आने के कारणों को पूरी तरह स्पष्ट किया। हे आर्य ! आप ध्यानपूर्वक मेरी बात सुनिए। मेरी कठिनाइयों पर विचार कीजिए तथा मेरे पास आइए। इसी कारण हम दोनों भाई वनों में भीषण कष्ट उठाते हुए घूम रहे हैं। इसी बात को मैं आपके समक्ष स्पष्ट करना चाहता हूं।

141

राजा दशरथ एक जगत प्रसिद्ध राजा थे। उनके पास सभी प्रकार के धन–धान्य, भोजन आदि की व्यवस्था थी। वे सभी प्रकार के अतुल धन–वैभव और ऐश्वर्य में अपना जीवन व्यतीत करते थे। आनंदोल्लास तथा सभी विशेष सुख सुविधाएँ उन्हें प्राप्त थी। उनके शक्तिशाली एवं पवित्र विचारों वाले राजपुत्र हैं। उनमें से हम दो ही ऐसे हैं जिन्हें उनके सुख वैभव में भाग लेने और उसका आनंद लेने का अवसर प्राप्त नहीं हो सका है। अतएव हम दोनों ही इस दृष्टि से सौभाग्यशाली नहीं हैं।

142

मेरे पिता महाराज दशरथ ने मुझे वन में जाने का आदेश दिया था। अतएव निसंकोच मैंने उनकी आज्ञा को शिरोधार्य किया। यही कारण है कि हम दोनों भाई वनों में भटक रहे हैं। हम लोग पहले सुतीक्ष्ण ऋषि के आश्रम में उनकी शरण में ठहरे। वहाँ तपोभूमि की पूर्णरुपेण सुरक्षा का भार हम दोनों ने अपने ऊपर लिया था। हम दोनों ने बहुत ही कुशलता से तपोभूमि की सुरक्षा की थी।

143

मेरी प्रियतमा सीता भी उस समय उस आश्रम में मेरे साथ थीं। अब नीच राक्षस रावण ने उनका अपहरण कर लिया है और उन्हें लेकर दूर कहीं चला गया है। हम दोनों सीता की खोज में निकले हैं। यहाँ तक कि उन्हें ढूंढ़ते–ढूंढ़ते हम इस प्रदेश तक आ पहुंचे हैं। यही कारण है कि हम दोनों इधर–उधर भटकते हुए इस दुर्गम पर्वतमाला तक आये हैं।

144

इस प्रकार सभी बातें स्पष्ट करते हुए राम ने हनुमान को अपने आने का उद्देश्य स्पष्ट कर दिया। इसके उत्तर में हनुमान ने राम से निवेदन किया, हे राम ! मुझे आपके पास आकर मिलने की आज्ञा दी गयी है। वानरों के राजा सुग्रीव की आज्ञा से ही मैं आपके पास आया हूं। राजा सुग्रीव ने ही मुझे आदेश दिया था कि मैं आपको ढूंढ़ कर आपसे मिलूं। वे स्वयं आपकी खोज में हैं और आपसे भेंट करना चाहते हैं।

145

मैं निवेदन करते हुए सुग्रीव की परिस्थिति स्पष्ट करना चाहता हूं। एक बहुत बड़ा वानर–राजा है। उसकी शक्ति की तुलना भी किसी से नहीं की जा सकती अर्थात वह अतुलनीय शक्ति से सम्पन्न है। वह एक महान योद्धा है। उसका नाम बालि है। सूर्य पर भी वह विजय प्राप्त कर चुका है। अतएव उसका प्रभाव सूर्य से भी अधिक है। क्रुद्ध होकर उसने मेरे स्वामी सुग्रीव का घोर अपमान किया है।

146

राजा बालि के डर के कारण सुग्रीव भागकर मलय पर्वत पर रहते हैं। केवल इसी प्रदेश में वे शान्तिपूर्वक जीवन व्यतीत कर रहे हैं। एक विशेष कार्य के लिए उन्होंने मुझे आपसे मिलने का आदेश दिया है। उनकी यह गहरी अभिलाषा है कि वे आपके चरण–कमलों की सेवा में ही अपना जीवन व्यतीत करें। आपके साथ ही रहकर आपकी सेवा करें।

147

अतएव यह उचित है कि आप उनसे मैत्री संबंध स्थापित कर लें। वह बड़े ही योग्य एवं कुशल वानर–राज हैं। इस प्रकार आप उन पर अनुग्रह कीजिए। वे बहुत ही शक्तिशाली योद्धा हैं। उनका हृदय विशाल है। उनका चरित्र एवं बुद्धि बहुत ही पवित्र है। वे बहुत ही स्वामिभक्त भी हैं। वे आपसे प्रेम करते हैं। वे आपके सभी आदेशों का पालन करने के लिए प्रस्तुत हैं। वे युद्ध के एक सुप्रसिद्ध सेनानी हैं, इसीलिए रावण के वध में आपकी वे पूर्ण सहायता करेंगे।

148

इस प्रकार हनुमान ने अत्यन्त विनयपूर्वक राम से निवेदन किया। राम भी सुग्रीव से भेंट करने के लिए चल पड़े। जब राम उनके साथ चल पडे तो हनुमान को अपार प्रसन्नता हुई। राम का सान्निध्य उन्हें आशा के कल्पवृक्ष की भाँति प्रतीत हुआ। उन्हीं के माध्यम से उनकी सभी आशाएं एवं अभिलाषाएं पूरी होंगी।

149

इसके पश्चात राजपुत्र राम मलय पर्वत पर सुग्रीव से मिले। उस समय उनकी तुलना एवं उपमा बड़ी सरलता से वर्षाऋतु से दी जा सकती थी। उनके बाण मेघों की भाँति थे। बालि जैसे सूर्य के समान हो, जिस पर आक्षेप लगा कर राम ने उसका बध करने का निश्चय किया। सुग्रीव अत्यधिक उष्णता एवं गर्मी की तीव्रता से संतृप्त थे। उनको अपने बाण रुपी मेघों की छाया में राम ने आश्रय दिया।

150

जब सुग्रीव राम तथा लक्ष्मण दोनों भाइयों से मिले, उन्होने अग्नि प्रज्वलित करके अग्नि को साक्षी मान कर मित्रता की शपथ ली। उसके पश्चात दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी शक्ति का अनुमान लगाया। दोनों ही पक्ष प्रसन्नतापूर्वक एक दूसरे से निकटता का अनुभव करने लगे। उसके बाद वे आक्रमण करने के लिए शक्ति का संगठन करने की योजना बनाने पर विचार-विमर्श करने लगे।

151

राम ने विशाल वानर सेना को हर्षपूर्वक देखा। वानर सेना आनंद एवं उललास मना रही थी। सब मनमानी करते हुए खेल रहे थे। वे जैसा सोचते थे वैसा ही करने लगते थे। उनकी प्रत्येक गतिविधि विचित्र सी थी। वे सभी प्रसन्नता से शोर करते हुए मस्ती में झूम रहे थे। वे सभी वृक्षों की शाखाओं पर विश्राम कर रहे थे। राम वानरों की इन गतिविधियों को देखकर बहुत प्रसन्न हुए। इस प्रकार के खेल तथा तमाशे देखकर उन्हें हर्ष हुआ।

152

जब राम और सुग्रीव दोनों की मैत्री पूर्णरुपेण दृढ़ हो गयी, वानरों के राजा ने एक मित्र की भाँति राम से कहा। सुग्रीव ने राम को अपनी परिस्थिति से अवगत कराया और कहा हे राम ! वानरों का राजा बालि अत्यन्त शक्तिशाली है। इन तीनों लोकों में उसके समक्ष बलवान योद्धा दूसरा नहीं है।

153

यह सब आपका निरादर करने के उद्देश्य से नहीं कह रहा हूं। हे राजा राम ! आप अब मेरे घनिष्ठ मित्र बन चुके हैं, इसीलिए आपको सभी बातें बता देना मेरा कर्तव्य है। बालि अपने बल और पराक्रम के लिए विश्वविख्यात है। उसकी प्रशंसा उसकी अपार शक्ति के लिए ही की जाती है। मुझे भलीभाँति ज्ञात है कि आपकी शक्ति और बाण निश्चय ही उससे अधिक समर्थ हैं। आपके बाण से ही उसका वध संभव है।

154

अपने पराक्रम एवं शक्ति के कारण बालि विश्व प्रसिद्ध हो गया है। उसकी विशेषताओं से सभी भली भाँति परिचित हैं। बालि पर भगवान शिव ने विशेष अनुग्रह कर उसे अपार शक्ति प्रदान की है। वह शिव का महान भक्त है। शनैः शनैः शिव की आराधना से निरन्तर उसे शक्तियाँ प्राप्त होती गयी हैं। अन्त में उसके शौर्य और वीरता को स्वीकार करने के लिए सभी को बाध्य होना पड़ा। अपने शत्रु के समक्ष बालि सूर्य की भाँति है। उसके शत्रु केवल अंधकार का समूह हैं, जिनका बड़ी सरलता से वह नाश कर देता है।

155

अब मैं उससे बहुत ही भयभीत रहता हूं। उसकी शक्तियों से मैं भली भांति परिचित हूं। उसका वध करने की हम सब कल्पना भी नहीं कर सकते थे। उसकी अपार शक्ति के समक्ष अब तक कोई टिक नहीं सकता था। अब आप स्वयं यहाँ आ गये हैं। हे राजा ! आपकी शक्ति के समक्ष वह ठहर नहीं सकता है। अब हमारे मन में यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि आप अजेय हैं । आपकी शक्ति की तुलना में वह हेय है। अतएव आप उसका वध करने में पूर्ण समर्थ हैं।

156

बालि ने बहुत से शक्तिशाली और पराक्रमी राजाओं को पकड़ कर उनका वध कर दिया है। वह अपार शक्तिशाली है। एक बार जब उसने एक शैलमाला पर आक्रमण किया तो उसे चूर-चूर कर सैकड़ों टुकड़ों में बाँट दिया। देवराज इन्द्र का सबसे घोर शत्रु महिषासुर अपार पराक्रमी राक्षस था। बालि ने उसको भी मारा। मुझे अब भलीभाँति स्पष्ट हो गया है कि बालि आपके ही हाथों युद्ध में मारा जा सकेगा।

157

राजपुत्र राम से सुग्रीव ने सभी बातें बतला दीं। उन्होंने पूरे विस्तार से बालि के विषय में समझा दिया। इसका कारण यह था कि वे अपने बड़े भाई बालि की शक्ति से बहुत भयभीत रहते थे। उनकी यह इच्छा थी कि वे आर्य राम की शक्ति का भी परीक्षण करें। राम ने अपनी बाण-विद्या की कुशलता से ताड़ वृक्षों की जड़ों को एक बार में ही वेध दिया, जिससे सुग्रीव पूर्णरुपेण आश्वस्त हो गये।

158

राम ने सुग्रीव के समक्ष कई प्रकार के लक्ष्यवेध की क्रियाएँ दिखायीं। राम ने सभी को अपने बाणों से वेध

दिया। राम की यह निपुणता देखकर सुग्रीव को बड़ा आश्चर्य हुआ। जब उन्होंने ताड़वृक्षों की जड़ों को एक साथ वेधते देखा तो वे राजपुत्र राम के साथ वहाँ से चले गये। अब किष्किंधा की ओर उन्होंने प्रस्थान किया। युद्ध के लिए वही स्थान चुना गया था।

159

सुग्रीव ने युद्धक्षेत्र में बालि की बलि चढ़ाने की इच्छा प्रकट की। इस प्रकार ऐसा लगा मानो एक भोज का आयोजन किया गया है। इस कार्य के लिए बालि को बलि का भैंसा बनाया गया, जिसका वध करके यज्ञ किया जायेगा। राम को उस बलि के लिए प्रधान धार्मिक कृत्य कराने वाले पंडित का स्थान दिया गया। सुग्रीव ने उनसे विनयपूर्वक इस कार्य के लिए प्रार्थना की। तारा उस यज्ञ से प्राप्त फल के समान थी जिसका सुस्वाद लेने को सुग्रीव आतुर था। तारा ही उस परम सौभाग्य का फल थी। वही उसकी प्रतीक भी थी।

160

राम ने किष्किंधा की गुफा के द्वार की ओर प्रस्थान किया। वहाँ पहुंचने के लिए वे चल पड़े। मार्ग में सुग्रीव भी उनके साथ थे जो उस समय पूरे पराक्रम से युक्त थे। गर्व से मस्तक उन्नत करके वे आगे बढ़ रहे थे। उस समय उनकी शक्ति का संकेत उनकी मुद्रा से स्पष्ट ही मिल रहा था। एक बड़ी पर्वतमाला में एक विशाल गुफा का द्वार दृष्टिगोचर हुआ, जो भीतर की ओर से बहुत भयानक दिखायी दे रहा था। यह वास्तव में राजा बालि का राजमहल था। उसके बड़े-बड़े द्वार थे जो अन्धकार के कारण एक विचित्र भय उत्पन्न करते थे।

161

सुग्रीव ने शीघ्र ही अपने बड़े भाई को युद्ध के लिए ललकारा, जिससे वह बाहर निकल कर उससे युद्ध करे। भीषण गर्जना करते हुए सुग्रीव ने क्रोध से बालि को बुलाया। भौंहों को टेढ़ा करते हुए तथा ऐंठते हुए सुग्रीव ने उसे बाहर से ही बुलाया था। बालि सुग्रीव की इस ललकार को सुनकर शीघ्र ही गुफा-द्वार से बाहर निकला। उसने भी भीषण गर्जना करते हुए सुग्रीव को प्रत्युत्तर दिया। उसका स्वर हृदय-वेधी था, जिससे सम्पूर्ण वातावरण गूंज उठा। दशों दिशाएँ उसके घोर रव से भर गयी।

162

ललकारता हुआ तथा क्रोध से आग बबूला होकर बबर-शेर की भाँति बालि सुग्रीव के समक्ष आया। उसने सुग्रीव पर आक्रमण किया। सुग्रीव ने उसके आक्रमण को झेलते हुए उससे गहरा संघर्ष किया। सुग्रीव का आक्रमण भी उसी सिंह की भाँति भयानक था जो भीषण गर्जना करता हुआ मुंह को फाड़ कर अपने शिकार पर

झपटता है। दोनों एक दूसरे पर मुष्टि प्रहार करने लगे। एक दूसरे को पकड़कर मुख से वे काटने लगे। भीषण शब्द करते हुए वे एक दूसरे से युद्ध करते रहे, दोनों परस्पर गुथ गये। वे दोनों ही बहुत क्रोध में संघर्ष कर रहे थे। उन दोनों में विभिन्न प्रकार से लड़ाई होने लगी।

163

वे दोनों एक दूसरे के बाल नोचने लगे। जो बाल उन दोनों की दाढ़ियों में थे उनको दोनों ने नोच-नोच कर फेंक दिया। भीषण गर्जना करते हुए, एक दूसरे को ललकारते हुए तथा मुड़-मुड़ कर वे घोर युद्ध करने लगे। संघर्ष करते हुए एक दूसरे पर वे भाँति-भाँति के आक्षेप लगाने लगे। एक दूसरे के प्रति आरोपों को दोहराने लगे। रक्त बह-बह कर उनके शरीर से टपकने लगा। टपकता हुआ रक्त उनके गालों पर धारा बन कर बहने लगा। गालों से वह रक्त बह कर उनकी बाहुओं पर गिरा तथा वक्षस्थलों पर गिरकर वह रक्त कुमकुम की भाँति प्रतीत होने लगा।

164

घोर युद्ध करते हुए तीक्ष्ण नखों से उन्होंने एक दूसरे की नासाओं पर आक्रमण किया तथा एक दूसरे को वे दूर-दूर तक फेंकने लगे। शीघ्रता से झपट कर वे युद्ध करने लगे। एड़ियों पर बैठ-बैठकर वे एक दूसरे की पूँछ खींचने लगे। एक दूसरे की ठोढ़ी को पकड़कर वे प्रहार करने लगे। दोनों परस्पर भिड़कर संघर्ष करने लगे। उनके दाँतों में भी घाव हो गये थे। उनकी लड़ाई कई प्रकार से हुई। दोनों ने अपनी युद्ध-कुशलता का भिन्न-भिन्न विधियों से पूरा परिचय दिया।

165

सभी योगी जो पर्वतमाला के किनारे तपस्या कर रहे थे, इस भीषण युद्ध को देखने लगे। पंडितों एवं विद्वानों के बालक भी अपने सम्पूर्ण कुल वर्ग के साथ इस युद्ध को देखने में पीछे न रहे। जो लोग पूजा-अर्चना के लिए पुष्प चुनने जा रहे थे, वे भी मार्ग में रुककर इस भयानक लड़ाई को देखने लगे। जिन लोगों को नियमानुसार बोलने एवं वार्तालाप करने की मनाही थी, वे भी इस संघर्ष को देखकर चुप न रह सके। उन्होंने पारस्परिक वार्तालाप करते हुए बालि और सुग्रीव का भीषण युद्ध देखा।

166

राम ने भी निरन्तर दोनों भाइयों को भीषण संघर्ष करते हुए देखा। दोनों ही योद्धा बराबर एक दूसरे से टक्कर ले रहे थे। राम बालि और सुग्रीव में कोई अन्तर न पा सके। उनकी आकृति एवं रुप एक दूसरे से बहुत कुछ

मिलता जुलता था। अतएव उनमें अंतर न होने के कारण उनका पहचानना कठिन था। राम भी सुग्रीव की आकृति भूल गये। स्मरण करते-करते भी उनसे यह भूल हो ही गयी। इसीलिए उन्होंने धनुष पर बाण चढ़ाकर नहीं चलाया। उन्हें पूरी तरह यह भी स्पष्ट नहीं हो पा रहा था कि बाण का लक्ष्य किसको बनाया जाय। वास्तव में वे दोनों भाई एक रुप के ही थे।

167

सुग्रीव वालि से युद्ध करते-करते अपना धैर्य खो वैठे। वे सदैव इसी प्रतीक्षा में थे कि राम अपने वाण का संधान करके अपनी शक्ति का परिचय देंगे। उनका शरीर चूर-चूर होकर मृतप्रायः हो गया था। वे घोर कष्ट का अनुभव कर रहे थे। वे किसी प्रकार अपने को संघर्ष-रत रक्खे हुए थे। उन्होंने चोट खाये हुए अपने मस्तक को पीछे की ओर किया। उसको पूरी तरह दवाया और लज्जित होकर पीछे लौटने लगे। दोनों ही योद्धा युद्ध में बुरी तरह घायल होकर कष्ट का अनुभव करने लगे थे।

168

राम ने देखा तथा यह जान लिया कि सुग्रीव भयभीत होकर हारे हुए से लौटे आ रहे हैं। वे भी आगे बढ़े। शीघ्र ही सुग्रीव ने उनका पदवंदन किया। उन्होंने राम से कहा, हे स्वामी ! आपने अपनी बाण विद्या की कुशलता का कोई परिचय नहीं दिया। आपने अपना वचन भी पूरा नहीं किया। ऐसा प्रतीत होता है कि आपने भी मुझसे झूठ बोल कर मुझे वहला दिया है। आप निरन्तर हम दोनों को युद्ध करते देखते रहे, परन्तु आपने अपने एक भी शर का संधान नहीं किया।

169

राम ने वानरराज सुग्रीव को उत्तर दिया। सच है कि मैंने तुम्हारे युद्ध की ओर विशेष ध्यान नहीं दिया। पूरी गतिविधियों को ध्यान से देखते हुए भी मैं मौन बना रहा। जब तुम दोनों भाई युद्ध कर रहे थे, तो मैंने तुम दोनों को एक-सा पाया। तुम्हार अस्तित्व भी एक समान ही था। तुम दोनों भाई एक रुप के ही हो। बालि में तथा तुम में इतना सादृश्य है कि मैं दोनों में भेद न कर सका। तुम दोनों को अलग-अलग करके पहचान भी नहीं सका। यहाँ तक कि मैं पूरी तरह तुम्हारे रुप को भूल ही गया।

170

इस परिस्थिति में तुमको ऐसा लग सकता है कि वाह्य रुप में मैं अपने मित्र के प्रति अपना वचन पूरा न कर सका। मैं अपने युद्ध कौशल का कोई प्रमाण भी प्रस्तुत नहीं कर पाया। मैं इस विषय में तुमको एक सुझाव

दे रहा हूं। तुम उसी पर चलो। संकेत के रुप में वृक्ष के पत्तों की माला अपने कंधों पर तुम डाल लो जिससे कि मेरा भ्रम समाप्त हो जाय और मुझे स्पष्ट संकेत मिल सके। यदि इस संकेत को तुम धारण कर लोगे, तो मुझे कोई भ्रम नहीं रहेगा। हे सुग्रीव ! जाओ और वालि से एक वार फिर भीषण युद्ध करो। डरने की कोई आवश्यकता नहीं। निश्चय ही इस युद्ध में वालि की ही मृत्यु होगी। तुम मेरा लक्ष्य नहीं वनोगे। वालि पर ही मैं वाण मारुगा।

171

यह कहकर राम ने वन के वृक्षों की एक माला सुग्रीव के कंधों पर डाल दी। एक वार फिर सुग्रीव ने युद्ध के लिए वालि को ललकारा। जब सुग्रीव ने वालि को युद्ध के लिए आमंत्रित किया, तो वह शीघ्र ही दौड़कर सुग्रीव से भिड़ गया। सुग्रीव को धराशायी करने के लिए उसने अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग किया। दोनों में भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया। इसी बीच राम को भी सुअवसर मिल गया। उन्होंने अपने धनुष पर वाण चढ़ाकर वालि पर घोर प्रहार किया। लक्ष्य ठीक वैठा और वालि को एक ही बाण से राम ने धराशायी कर दिया।

172

वालि शर के लगते ही पृथ्वी पर विकल होकर गिर पड़ा। वानरों के कुल-वर्ग उससे भयभीत हो गये। उनके ह्रदय में कंपन प्रारम्भ हो गया। वाद में राम वालि के पास गये और उसके मस्तक को अपनी गोद में ले लिया। दूसरे वानरों ने अपने ह्रदय में यह विचार किया कि राम ने निन्दा के योग्य कार्य किया है। यह शब्द उन मुनियों के भी थे जो मौन होकर यह सब देख रहे थे। उनके मुख से अनायास राम के प्रति घृणा के शब्द निकल पड़े।

173

वानर-राज बालि को बाण लगने से अपार कष्ट हो रहा था। बाण वालि के पेट पर लगा था और अन्दर प्रविष्ट हो गया था। इस परिस्थिति में भी उसने शक्ति और अपूर्व साहस का परिचय दिया। एक वीर योद्धा की भांति उसने धैर्य एवं शौर्य का पूरा संकेत दिया। उसने राजपुत्र राम को अपशब्द भी कहा। जितना बन पड़ा भला-बुरा कह सुनाया।

174

हे राम ! यद्यपि तुम्हारा जन्म उच्च कुल में हुआ है तथापि तुम्हारा ह्रदय कपटपूर्ण है। मैं तुम्हें शाप देता हूं कि सभी प्रकार की महान विपत्तियों का तुम्हें जीवन में सामना करना पड़े तथा अपार कष्ट भोगो। जब मैं युद्ध में संलग्न था, उस समय तुमने मेरे ऊपर अकस्मात ही वाण मार दिया। इस कुकृत्य के समय अन्य किसी नियम

का तुमने पालन ही नहीं किया।

175

हे राम ! तुम्हारा व्यवहार निकृष्ट कोटि का है। क्या तुम यह नहीं जानते हो कि तुम्हारे पिता कितने चरित्रवान एवं महान व्यक्ति थे। उनके विचारों की पवित्रता विश्वविख्यात थी। मेरा कोई अपराध भी नहीं था। यदि तुम इस विषय पर ध्यान दो तो पता लगेगा कि तुम्हारे प्रति मैंने कोई अनुचित कार्य नहीं किया था। तुम्हारे हृदय में अचानक ही बुराई उत्पन्न हो गयी। क्रोध में आकर तुमने मुझे बाण मार कर इस निकृष्ट आचरण का परिचय दिया।

176

वास्तव में तुम्हारे पिता दशरथ ने सदैव ही बहुत विवेक से काम लिया था। वे बड़े ही दूरदर्शी राजा थे। अब मैं यह अनुमान सरलता से लगा सकता हूं कि वे तुमसे निश्चय ही असन्तुष्ट एवं क्रुद्ध थे जिसके कारण उन्होंने तुम्हें वनवास की आज्ञा दी। मैं सोचता हूं कि तुम्हारे किसी दुर्गुण के कारण ही उन्होंने तुम्हें वन में आने की आज्ञा दी। यह परिस्थिति अब मुझे पूरी तरह स्पष्ट हो गयी है।

177

मैं तथा सुग्रीव परस्पर सहोदर भाई हैं। हम लोग आपस में युद्ध कर रहे थे, यह और बात है। चाहे मेरी भूल तथा अपराध हिमालय पर्वत की चोटी से भी सौ गुना अधिक हो, परन्तु हम दोनों भाइयों में प्रेम का सूत्र तो था ही। चाहे हम एक दूसरे से एक सहस्र बार अलग-अलग होकर रहे हों फिर भी हम दोनों हैं तो भाई-भाई ही। हमारा यह संबंध-सूत्र जन्मजात है जो कभी भी समाप्त नहीं हो सकता। मेरा और सुग्रीव का रक्त एवं मांस एक ही है।

178

वह मेरा भाई है। मैं अपने को बहुत ही भाग्यशाली मानता हूं। इसके प्रति मेरा प्रेम भी पृथ्वी तथा आकाश के समान व्यापक है बल्कि उससे भी बड़ा है। हम लोग एक दूसरे से असन्तुष्ट अवश्य हो गये थे। युद्ध में मृत्यु के देवता की भांति हम दोनों ने विकराल स्वरुप भी धारण कर लिया था। यह सब होते हुए भी आपको यह सन्देह कभी उत्पन्न नहीं होना चाहिए था कि हम दोनों एक दूसरे का वध ही करके रहेंगे। एक दूसरे का प्राण लेने का हमारा कभी उद्देश्य नहीं था। हे राम ! तुम हमारे निकट संबंधी व्यक्ति नहीं वरन् एक बाहरी व्यक्ति हो, यह बात तुम्हें स्पष्ट होनी चाहिए।

179

वीर योद्धा क्षत्रिय का कर्तव्य युद्ध में शत्रु का संहार करना है। पवित्र विचारों वाला क्षत्रिय नीच प्रवृत्ति वाले दुष्टों का संहार करके पृथ्वी को भारहीन बनाता है। उसके उन पवित्र विचारों से निश्चय ही पृथ्वी पर पवित्रता आती है। उसके सुकृत्यों से आनंद छा जाता है। देवी पृथ्वी पवित्रता की प्रतीक बन जाती है। वास्तव में यह विचार ही उचित है। इससे संसार में सुख समृद्धि बढ़ती है। भू-भार से पृथ्वी को मुक्त करने के लिए ही वीरों और सद्विचार वाले योद्धाओं का जन्म होता है और उनको तदनुरूप आचरण भी करना चाहिए।

180

यदि आप केवल पंडितजनों के चरित्र का ही अनुकरण करें, उत्तम धर्म का विधिवत पालन करें, तो आप निश्चय ही लोगों के लिए गुरु स्वरूप बन सकते हैं। आपका ज्ञान भी निश्चय ही व्यापक एवं जनहितकारी हो सकता है। ऐसी परिस्थिति में दो परस्पर संघर्ष करने वाले भाइयों के मध्य में आप विरोध को समाप्त करने वाली औषधि का कार्य कर सकते थे। आपके लिए यह उचित भी होता कि आप मेरे अपराधों तथा कुकृत्यों के लिए औषधि के रूप मे सामने आते और हम दोनों भाइयों में परस्पर मेल कराकर प्रेम भाव उत्पन्न कराते ।

181

आपने जो व्यवहार मेरे साथ किया है, उससे पता चलता है कि आपके विचार ठीक नहीं थे। आपका व्यवहार अनुचित था। यद्यपि यह सत्य है कि आप अच्छाई को भलीभाँति जानते हैं, फिर भी इस परिस्थिति में आपने नितान्त अज्ञानपूर्ण व्यवहार का ही परिचय दिया है। यही कारण है कि आपके यहाँ पर आने से भी आपके प्रति मुझे किसी प्रकार की कोई सहानुभूति नहीं है। हे पवित्र पुरुष ! आप मेरे प्रति बनायी हुई अपनी धारणा को बदल दीजिए। अपने ज्ञान का आप उचित प्रयोग कीजिए। आपने निरपराध व्यक्ति का वध करके घोर अपराध किया है। आपने मेरा अकारण वध किया है, जिसके लिए आप दोषी हैं।

182

क्या आप मुझे बता सकते हैं कि किस अपराध अथवा कारण से आपने मुझे मारा है ? यदि आपको मेरे शरीर का अन्त और मांसाहार करना था तो निश्चय ही पाँच नख वाले पशु को भी भोजन के रुप में स्वीकार किया जा सकता है। वानर का मांस तो वर्जित भी नहीं है। इसलिए मेरे मांस का प्रयोग सरलता से किया जा सकता था।

183:

मैंने आपके विषय में पहले से यह सुन रक्खा था कि आप बड़े ही शीलवान एवं पवित्र विचारों वाले व्यक्ति हैं। आप अपनी प्रजा की सुरक्षा कर उसका हित करने में पूर्ण समर्थ हैं। यही नहीं सभी मानवों अथवा समाज के प्रति आपको अपार प्रेम है। मेरी भी आपके प्रति यही धारणा थी। आज आपका यश समाप्त हो गया है। आपने एक निरपराध वानर का वध किया है। आपको इस नीच कृत्य में तनिक भी लज्जा नहीं आयी ? आपके छोटे भाई लक्ष्मण भी इस कुकृत्य की प्रशंसा नहीं कर सकते।

184

मेरा एवं सुग्रीव का पारस्परिक संघर्ष भाइयों का ही संघर्ष था। कभी न कभी यह निश्चय ही समाप्त हो जाता। परस्पर हम दोनों का समझौता भी हो जाता। आज आप इस सुग्रीव के प्रति अपना अपार प्रेम प्रदर्शित कर रहे हैं। यह नीच प्रवृत्ति का एक साधारण वानर है। इसका साथ आप जैसे व्यक्ति के लिए उचित नहीं है। अतएव आपका यह कृत्य आपको शोभा नहीं देता।

185

वालि ने अपने को पूर्ण रुप से संभालकर सन्तुलित रुप में राम के समक्ष विचारों को व्यक्त किया। उसको सुनकर रघुवर राम ने सिंह की भाँति उत्तर देते हुए वालि से कहा। मैं इस जगत में व्यवहार में आने वाले नियमों से भलीभाँति परिचित हूं। मैंने अपने बाण से तुम्हें घायल किया है, इससे मुझे कोई दोष नहीं लगेगा।

186

क्षत्रीत्व का एक निश्चित आधार होता है, मैंने उसी का अनुसरण करने का प्रयास किया है। मेरा यह कार्य निरपराध हत्या नहीं है। यह वध केवल वध करने के लिए ही नहीं किया गया है। यह कार्य अनेक पशुओं के वध के समान भी नहीं है। प्राचीन काल के सभी वीर क्षत्रियों के कार्यों का मैंने भी अनुकरण किया है। इसलिए मुझे इस वध में किसी प्रकार के दोष की संभावना नहीं प्रतीत हो रही है।

187

जहाँ तक जंगली हिंस्र जीव जन्तुओं का संबंध है, उनका वध तो किया ही जाना चाहिए। उनको ढूंढ़-ढूंढ़ कर उन पर आक्रमण करना चाहिए। उनको जाल में फाँस लेना चाहिए। उनको लकड़ी आदि से प्रताड़ित भी करना उचित है। घने वनों में जितने वन्य हिंसक पशु हैं, चाहे वह सीधे सरल ढंग के हों अथवा भयानक एवं आक्रामक हो, उनका वध सदैव ही किया जाना उचित है।

188

यदि तुम अपने को एक मनुष्य मानते हो और तुम निरे जानवर नहीं हो, तो मेरे व्यवहार और कार्यों का अनुसरण करो। यही मानवीयता है। यदि ऐसा करोगे, तो भविष्य में तुम्हें कभी कोई दोष नहीं लगेगा। इस परिस्थिति में वास्तविकता तो यह है कि मैंने एक ऐसे व्यक्ति का वध किया है जिसका चरित्र गिरा हुआ है और जिसने दूसरे व्यक्ति की पत्नी छीन ली है।

189

तुम्हारे इस दुर्व्यवहार एवं चरित्र के विषय में मैं पहले ही सुन चुका हूं। सुग्रीव को तुमने उसकी प्रेयसी तारा से अलग कर दिया है। इस प्रकार तुमने सुग्रीव को वियोग का अपार दुःख पहुंचाया है। तारा को तुमने अपने पास रख लिया है। संसार में सदैव ही तुम्हारे इस अपराध की निन्दा की जायेगी। कभी भी कोई इसको ठीक नहीं कहेगा।

190

राम ने इस प्रकार स्पष्ट शब्दों में वालि का समझाया। वालि इस बात को सुनकर अत्यन्त लज्जित हुआ। वह निरुत्तर होकर चुप हो गया। उसे अपने आप पर क्षोभ भी हुआ। यह भावना उसके मन पर इतना गहरा प्रभाव डालने लगी कि वह अत्यन्त दुःखी होने लगा। अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को केन्द्रित करके उसने राम से विनय करते हुए प्रार्थना की। प्रार्थना करते हुए ही उसने प्राण त्यागने की इच्छा भी प्रकट की।

191

हे राम ! आपकी बुद्धि एवं विवेक महान है। आप उन सबका नाश कीजिए, जो दुष्ट एवं नीच प्रवृत्ति वाले हैं। आपके महान गुणों की सीमा नहीं है। मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि अब आप मेरे पुत्र अंगद का वध न कर उसे अपनी शरण में ले लीजिए।

192

हे सुग्रीव ! तुम भी मेरे निकट आ जाओ। मैं अब तुमसे आज्ञा लेकर तुम्हें सदैव के लिए छोड़कर जाना चाहता हूं। मैं अपने प्राणों को त्याग रहा हूं। यदि भगवान की करुणा हम दोनों पर रही तो फिर दूसरे जीवन में हम दोनों भाई के रुप में ही होंगे।

193

मुझे आशा है कि अगले जन्म में फिर साथ ही साथ इसी स्थान पर रहेंगे। इसी पर्वतमाला पर हम विचरण करेंगे। जिसके वृक्षों की पंक्तियाँ मनोहारी हैं और उन पर बहुत से फल लदे हुए हैं। इसके फलों का रस तथा मधु कभी समाप्त नहीं होगा। हम यहाँ आएँ गे। उन फलों को भी हम साथ-साथ खाया करेंगे।

194

वास्तव में मेरा तुम्हारे प्रति व्यवहार बहुत ही अनुचित था। मैं आशा करता हूं कि तुम अब कभी यह मत समझना कि मैंने जानबूझ कर ऐसा किया। इसको यह समझो कि भाग्य-रेखा के आधार से ही यह सब हुआ। यह ईश्वर ने ही निश्चित कर दिया था कि हम दोनों भाइयों में पारस्परिक संघर्ष हो। इसके लिए अब किया ही क्या जा सकता है। देवों ने भाग्य में जो भी निश्चित कर दिया था, उसी के कारण यह सब गतिविधियाँ चलती रहीं।

195

भगवान की अपार महिमा और शक्ति का कभी भी अनुमान नहीं लगाया जा सकता है। उसने हम दोनों को ऐसा अवसर ही नहीं दिया कि हम दोनों साथ-साथ जीवन का आनंद ले सकते। इसी ईश्वरीय संकेत से ही पहले मुझे जीवन में सफलता प्राप्त हुई तथा जीवन में अपार यश भी प्राप्त हुआ। यह सब ईश्वर की ही इच्छा थी।

196

इस प्रकार वालि ने सुग्रीव को अपने पास बुलाकर कहा। अपने मस्तक का स्वर्ण-पुष्प उसने सुग्रीव को दे दिया। उस समय उसके नेत्रों में आँसू छलछला रहे थे। उसके बाद सुग्रीव ने वालि के निकट आकर उसका मस्तक अपनी गोद में ले लिया। प्रसन्नतापूर्वक वालि ने अपने प्राणों का त्याग कर दिया। वे लोग वास्तव में बिल्कुल नीच प्रवृत्तियों वाले ही हैं, जो इन परिस्थितियों में भी जीवित रहने की आकांक्षा करते हैं। वालि ने मृत्यु के समय कहा कि आज मेरे समक्ष श्री राम उपस्थित हैं, इससे सुन्दर अवसर मुझे कभी भी प्राप्त नहीं हो सकता था। यह गति ऋषि मुनियों को भी दुर्लभ है।

197

जब वालि स्वर्ग में लौट गया तो उसने स्वर्ग में अपने कुल-वर्ग के उन सभी व्यक्तियों से भेंट की जो उससे पहले स्वर्गवासी हो चुके थे। वे सभी वहाँ पर अपने कार्यों में व्यस्त थे। उसके सभी भाइयों ने उसका स्वागत किया

तथा वे सभी प्रार्थना में लग गये। सुग्रीव भी अपने कुल-वर्ग के लोगों के विषय में नहीं भूल सके थे। बालि का राजमहल अब उनके अधिकार में था। उनको भी उस स्थान से वालि की भाँति ही लगाव था। सुग्रीव ने भी राजमहल के प्रति अपना प्रेम बनाये रक्खा।

198

अंगद वालि के पुत्र थे, उनको युवराज के पद पर सुशोभित किया गया। यह राम के आदेशानुसार ही किया गया था। राम को अंगद से प्रेम था। उसी प्रकार उसके कुल-वर्ग तथा अन्य संबंधियों को भाँति-भाँति की भेंट अर्पित की गयी। इस प्रकार वानर-कुल को पूर्णतः मन्तुष्ट किया गया। बाद में वे सभी पूर्ण प्रसन्न होकर एक-एक करके वहाँ से चले गये।

199

राम से वानर-समूह बहुत ही सन्तुष्ट एवं प्रसन्न थे। सभी वानरगण साथ-साथ होकर सुव्यवस्थित एवं अनुशासित रुप में राम की वन्दना के लिए आगे बढ़े। नत-मस्तक होकर वे सभी खड़े हो गये। उन्होंने राम के प्रति अपनी गहरी श्रद्धा प्रकट की। राम की ओर उन्होंने विशेष ध्यान दिया। राम का पूरा सम्मान करते हुए वानरों ने उनका अभिनंदन किया। राम से प्रार्थना करते हुए आगे बढ़ कर उन्होंने राम के चरणों का चुम्बन किया। राम वानरों के इस सुन्दर व्यवहार से बहुत हर्षित हुए।

200

हे राजा राम ! हम सबके प्रति आपका अपार प्रेम है। इसीलिए हम सब भी बहुत ही आश्वस्त हैं। हम आपसे यह प्रार्थना करते हुए आशा करते हैं कि अपने कार्य के लिए शीघ्र चल पड़ने को आप हमसे अभी नहीं कहेंगे। निकट भविष्य में हम आपके आदेशानुसार सभी कार्यों को पूरा कर देंगे। आजकल वर्षाऋतु का आगमन हो चुका है। इसीलिए कुछ शीत एवं पानी के कारण वानर समूह अपनी पूरी शक्ति का प्रदर्शन नहीं कर सकेंगे। जब मौसम सूखा रहेगा तो हम सब सीता को लौटाने का प्रयास करने के लिए अपना अभियान प्रारम्भ करेंगे और तब निश्चय ही हम शत्रु का विनाश कर देंगे।

201

वानरों के राजा सुग्रीव ने राम से विनम्रतापूर्वक यह सब कहा। यही नहीं, उन्होंने राजा राम से प्रार्थना भी की कि वे सदैव ही उन पर अपना प्रेम बनाये रहें। वर्तमान परिस्थिति में वानर-सेना पूर्णरुपेण शक्तिशाली नहीं है। राम ने सुग्रीव के प्रस्ताव को स्वीकार करते हुए अपनी सहमति प्रकट की। अपनी स्वीकृति देकर उन्होंने सुग्रीव

को आश्वस्त किया।

202

जब दोनों पक्षों में विचारों की पूर्ण सहमति हो गई, तो उन दोनों व्यक्तियों ने वर्षाकाल की समाप्ति तक की प्रतीक्षा करने का निर्णय किया। उसके पश्चात सुग्रीव ने राम से वापस लौटने की आज्ञा चाही, जिससे वे शान्ति एवं आनंदपूर्वक जीवन व्यतीत कर सकें।

203

लौटने की आज्ञा लेकर शीघ्र ही वानर राज सुग्रीव वापस लौट गये। उनके साथ उनकी वानर सेना भी बहुत ही प्रसन्नतापूर्वक किष्किन्धा में लौट आयी। उन्होंने जीवन का रसास्वाद विधिवत प्रारम्भ किया। जब वर्षाऋतु पूरी तरह आकर छा गयी, मोर गर्व और आनंद से पंखों को खोल कर नृत्य करने लगे और सम्पूर्ण वातावरण में उल्लास बिखेरने लगे।

अध्याय – 7

1

अब वानरराज सुग्रीव की सभी बाधाएँ समाप्त हो चुकी थीं। वे जीवन का सम्पूर्ण आनंद–रस ले रहे थे। अब उनके हृदय में ऐसी कोई बात नहीं थी जिसका उन्हें भय हो। राम तथा लक्ष्मण फिर वन में प्रवेश कर गये। उन्होंने मलयवन नामक एक बड़ी पर्वतमाला की ओर प्रस्थान कर दिया।

2

तत्पश्चात राम उस पर्वत–श्रेणी पर जा पहुंचे। उनका हृदय बहुत ही दुःखी एवं उद्विग्न था। वे सदैव ही सीता के विषय में सोचते रहते थे। वायु के धीमे–धीमे झोंकें वर्षा ऋतु के प्रतिनिधि के रुप में उनके पास आ रहे थे। वे एक ऐसा वातावरण प्रस्तुत कर रहे थे जो विरहियों के मन में एक विचित्र हूक–सी उठा रहा था।

3

अकस्मात ही आकाश में शनैः शनैः वर्षा के काले–काले बादल घिरने लगे। गर्जना करते हुए वे वातावरण में घोर शब्द गुंजाने लगे। उन मेघ स्वरों को सुनकर ऐसा प्रतीत होता था कि प्रेम के देवता कामदेव ने ढोल बजा दिया हो। प्रेमीजन एवं विरहीजन उस ध्वनि को सुनते तो निश्चय ही उनका हृदय विदीर्ण हो जाता।

4

घनघोर वर्षा अनवरत गति से होने लगी थी। वर्षा का पानी किसी क्षण भी नहीं रुक रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे कामदेव ने अपने बाणों की वर्षा कर दी हो और वियोगियों के मन में विरह का दुःख उत्पन्न कर रहा हो। यद्यपि राम कामदेव के उन भीषण बाणों से भी पूरी तरह घायल नहीं हो पाये थे, फिर भी उस दृश्य को देखकर उनका हृदय पीड़ित हो गया था।

5

आकाश में उन्होंने विद्युत को चमकते देखा। बिजली के घोर रव से उनके मन में सन्देह एवं भ्रम उत्पन्न होने लगा। ऐसा लग रहा था कि प्रेम के देवता कामदेव का शस्त्र इसीलिए छोड़ा गया था तथा उन लोगों को लक्ष्य बनाया गया था जो अपनी प्रेमिकाओं से बिछुड़े हुए एवं विरह से पीड़ित थे। इस भयावह हृदय–विदारक परिस्थिति में राम मूर्च्छित होकर गिर पड़े।

6

कूनतूल पक्षी धान के खेतों से अब वापस लौट आये थे। श्वेतवर्ण के ये सभी पक्षी साथ–साथ विहार करते हुए आ रहे थे। ये ऐसे लग रहे थे मानो कामदेव की पताकाएँ फहरा रही हों और कामदेव आनंद मना रहे हों। जब राम ने यह मनोहारी दृश्य देखा तो उनका हृदय काँपने लगा।

7

वर्षा के बादलों के सघन होने के कारण सूर्य देवता के दर्शन भी नहीं हो पा रहे थे। सूर्य बादलों में छिप जाते थे। इस प्रकार वर्षा के मेघ उनको ढक लेते थे। यह वैसे ही लग रहा था जैसे राम के विचारों तथा मन की पवित्रता को सन्देह और भ्रम ने कुंठित कर दिया हो। यद्यपि उनके विचार निर्मल एवं पवित्र थे तथापि वे इस परिस्थिति में भ्रमित हो गये थे। राम सीता के विरह में व्याकुल थे।

8

धीरे–धीरे उनका हृदय विरह एवं दुःख के कारण सदैव ही व्याकुल रहने लगा। जब आकाश में वे बिजली को चमकते तथा इधर–उधर दौड़ते हुए देखते, बादल को गर्जना करते अथवा तड़पते हुए सुनते तो उनकी आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगती थी। उनके हृदय की दृढ़ता पिघल कर आँसू बन कर बहने लगती थी।

9

कभी–कभी तो व्यथा के असह्य होने के कारण वे रुदन भी नहीं रोक पाते थे। उनका गला रुंध जाता था। कभी–कभी उनका स्वर मौन हो जाता था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे उनकी ग्रीवा को कोई मरोड़ रहा हो। उनके हृदय में सदैव ही सीता का स्मरण बना रहता था। यही कारण था कि उनका रुदन बाहर स्पष्ट सुनायी नहीं देता था। वे सदैव ही सीता के वियोग में दुःखी होकर आहें भरते रहते थे।

10

शीतल मन्द पवन स्थान–स्थान पर बह रहा था। कदम्ब वृक्षों के पुष्पों से उसकी सुन्दर सुगन्ध उत्पन्न हो रही थी तथा वातावरण में सुगन्धि बिखेर रही थी। यद्यपि राम ने वन के इस वातावरण में भी अपनी कामेच्छा पर विजय प्राप्त कर ली थी, उसको दबा दिया था परन्तु प्रत्येक क्षण उनको सीता का विरह व्याकुल किये हुए था।

11

सम्पूर्ण वातावरण के गहरे अन्धकार में ढक जाने पर सभी का मन भ्रमित हो जाता है। अन्धकार के पु ज कभी भी बादलों से पूर्ण रुप से नहीं हटते थे। वे उनको आच्छादित किये रहते थे। ऐसा लगता था जैसे वे प्रेम के देवता कामदेव के कारागार में हों। वे देखने में सुन्दर थे। उनको स्पर्श करके कभी भी पकड़ा नहीं जा सकता था। पूरा दृश्य यों तो स्पष्ट दिखायी दे ही रहा था।

12

उसी वातावरण में खद्योतों की चमक मशाल की भाँति प्रकाश बिखेरती थी। वह बुझकर शान्त नहीं हो सकती थी बल्कि निरन्तर घने-घने बादलों के अन्धकार में रोशनी बिखेरती रहती थी। राम के ह्रदय को वह अग्नि के अंगारे की भाँति जलाती थी। उनका ह्रदय उमड़ कर सीता के वियोग में तड़पने लगता था। वे आहें भरते हुए कहते थे, इस दृश्य को देखकर मेरा ह्रदय विदीर्ण हुआ जा रहा है।

13

जब वर्षा ऋतु में बिजली कौंधती है तो मेरी आँखों में चकाचौंध करती है। उसकी चमक से व्याकुल होकर मैं डर जाता हूं। बिजली की चमक मेरे मन में एक विचित्र प्रकार की विरह-वेदना और मीठी टीस उत्पन्न करती है। उसके बाद शीघ्र ही वह चंचला दृष्टि से ओझल भी हो जाती है। हाँ ! ऐसा प्रतीत होता है कि जानबूझ कर बिजली मुझे छेड़ रही है और मेरे ह्रदय को अपार कष्ट पहुंचा रही है।

14

वास्तव में विद्युत की यह गर्जना किसका स्वर है ? इसके विषय में मेरा यह मत है कि यह कामदेव के धनुष की टंकार का घोष है जिसका लक्ष्य सम्पूर्ण विश्व है। कामदेव के बाणों का रुप प्रेम एवं कामवासना है। बिजली की गर्जना भी उसके धनुष का ही स्वर है।

15

स्पष्ट है कि कामदेव ने अपने धनुष के बाणों से सारे विश्व को वेध दिया था। उनके बाणों पर स्वर्ण के बाल सजाये गये थे। यही वे बाण हैं जो आकाश में सदैव ही चमकते रहते हैं। हाँ ! कामदेव के ये बाण कभी भी अपना लक्ष्य नहीं चूक सकते। निश्चय ही वे लक्ष्य वेध करके ही रहते हैं।

16

चूचूर पक्षी का स्वर हृदय में गहरी वेदना जागृत करता है। इस प्रकार प्रेम के वशीभूत होकर वह पक्षी अपनी स्त्री अथवा प्रेमिका को बार-बार चिल्ला-चिल्ला कर बुलाता रहता है। यदि वह अपनी प्रेमिका से एक क्षण के लिए भी विलग हो जाय, तो वह चौंक-चौंक उठता है और भ्रम में पड़ जाता है। वह व्याकुल होकर अपनी प्रेमिका के निकट आ जाता है। इस पक्षी की इस प्रेममयी अभिलाषा को जानकर दूसरे विरही जनों को अपार कष्ट का अनुभव होता है, विशेषतया उन लोगों को जो प्रेम-ज्वर से पीड़ित हैं।

17

कभी-कभी मैं सोचता हूं कि शीतल वायु मेरे लिए कभी आषधि का कार्य करती थी। शरीर को स्वस्थ कर वह शीतलता प्रदान करती थी। पर वास्तव में मैं अब यह अनुभव करता हूं कि इसका स्पर्श मेरे लिए अग्नि-स्पर्श से कम उष्णता प्रदान नहीं करता, क्योंकि इसके स्पर्श मात्र से ही मेरा हृदय जैसे झुलसने लगता है।

18

देखिए, यह मोर पक्षी है। जब यह चलता है तो कितना सुन्दर प्रतीत होता है। यह कूकता है तो अकस्मात एकदम ही मैं दुःखी हो जाता हूं। मेरे हृदय में एक हूक सी उठने लगती है। यह पक्षी इस बात को कैसे जानता है कि मैं विरही हूं और अत्यन्त दुःखमय जीवन व्यतीत कर रहा हूं। मैं अपनी प्रेमिका से बिछुड़ गया हूं। वास्तव में जो लोग वियोगी होकर अत्यन्त दुःखी जीवन व्यतीत करते हैं, उनकी बुद्धि भ्रमित हो जाती है। वे ठीक से सोच समझ भी नहीं पाते।

19

यह वर्षा भी जैसे थमने का नाम नहीं लेती है। जो प्रेमी प्रेम की बलिवेदी पर निछावर हो चुके हैं और निरन्तर कष्ट भोग रहे हैं, उनको प्रतिक्षण वर्षा सताती है। बिना रुके हुए निरन्तर वर्षा होती चली जा रही है। ऐसा लगता है, जैसे यह कभी समाप्त ही नहीं होगी।

20

वन-प्रदेश में जो बड़े-बड़े विद्धान पंडित तपस्या कर रहे हैं, उनको अकेले ही तपस्या में तल्लीन रहने का अभ्यास है। वे सभी तप करते हुए कभी भी भारीपन अथवा दुःख का अनुभव नहीं करते। आजकल वर्षाऋतु उनको बहुत ही शीतलता प्रदान कर रही है। मैं अनुमान लगा सकता हूं कि इस ऋतु का प्रभाव उन पर भी पड़ेगा। वे अपनी प्रेयसियों के लिए बेचैन हो उठेंगे। इस वातावरण में प्रसन्न होकर वे तपस्यारत नहीं रह सकेंगे।

21

बेयो पक्षी अन्य दूसरे पक्षियों के साथ चिल्ला–चिल्लाकर शोर मचा रहे हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि वे विरहीजनों के प्राण ही लेना चाहते हैं। यहाँ तक कि उनका वध भी करने को प्रस्तुत हैं। वे निरन्तर शब्द करते हुए बोलते रहते हैं। कभी शोर समाप्त करने का नाम ही नहीं लेते। हाँ ! उनको मुझे छेड़ कर सताने में कभी भी लज्जा का अनुभव नहीं होता। ये पक्षी मुझे अपार दुःख दे रहे हैं।

22

हे सीते ! मैं तुम्हारे वियोग में दुःखी होकर अपार कष्ट उठा रहा हूं। भूतकाल में कभी भी एक क्षण को भी तुम मुझसे बिछुड़ कर अलग नहीं रही हो। हाँ, पूर्वकाल में मैं बहुत संतुष्ट था। वास्तव में मेरा यह भाग्य ही कितना क्रूर है जिसने अकस्मात ही मुझे तुमसे अलग कर दिया है। उस भाग्य रेखा की क्रूरता के कारण ही तुम्हारे वियोग में मैं तड़प रहा हूं।

23

मैं तुम्हारे वियोग की व्यथा से अत्यन्त दुःखी हूं। आज मेरे कष्ट की सीमा नहीं है। मेरी व्यथा छोटी नहीं है। मेरे नेत्रों को अपार कष्ट हो रहा है। अब तो वे ठीक से देख ही नहीं पाते। जब मैं ऊपर की ओर दृष्टि उठाकर आकाश की ओर देखता हूं अथवा वन–प्रदेश में तुम्हें ढूंढने का प्रयास करता हूं तब सारे दृश्य तुम्हारे वियोग में मुझे आकुल–व्याकुल कर अपार कष्ट पहुंचाते हैं।

24

जब मैं वन में हिरनों को देखता हूं तो मुझे तुम्हारे सुन्दर नेत्रों का सहसा ही स्मरण हो आता है। यदि मैं किसी गज पर दृष्टिपात करता हूं तो मुझे तुम्हारी धीमी मन्थर गति का ध्यान आ जाता है। जब मैं चन्द्रमा की ओर देखता हूं तो मुझे तुम्हारा सुंदर मुख याद आ जाता है। हे सीते ! मैं तुम्हारे सौंदर्य की कल्पना भाँति–भाँति से करते हुए विरहाग्नि में निरन्तर जलता रहता हूं।

25

गहरी नीली झील के पानी में निरन्तर लहरें उठती रहती हैं, जो लहरा–लहरा कर आगे बढ़ती रहती हैं। इसकी लहरें तुम्हारी वक्र भौंहों के समान हैं। उनकी गति भी लहरों की ही भाँति हैं। पहले मोर नृत्य करता रहता था तो हरीतिमा का पूरा आभास होता था। मेरा ऐसा अनुमान एवं विचार है कि तुम्हारी वेणी के गुच्छों की चमक

भी इसी प्रकार शोभा पाती थी।

26

हंसों की पंक्ति उत्तर दिशा की ओर बढ़ती जा रही है। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि वे मान–सरोवर झील की ओर उड़ते चले जा रहे हैं। मेरे वियोग की व्यथा के कारण यह परिस्थिति भी मुझे दुःखदायी सी लग रही है। हंस पक्षी मधुर शब्द करते हुए उड़ रहे हैं। मुझे ऐसा लगता है कि मैं तुम्हारा मधुर स्वर सुन रहा हूं। हंस के कलरव तथा तुम्हारे स्वर में कोई अन्तर मुझे प्रतीत नहीं होता है।

27

मन्द मधुर वायु मलय पर्वत से आकर यहाँ बह रही है तथा चन्दन के वृक्षों को वन में स्वयं छू कर सुगन्धित हो रही है। उसकी सुगन्धि वातावरण में बिखर कर नासिका को बहुत ही आनंददायक प्रतीत होती है। यह शीतल वायु बहुत ही सुखदायक है। इस वातावरण में तुम मेरी कल्पना में प्रतिक्षण बसी रहती हो।

28

दिन के समय मुझे बहुत अधिक विरह–व्यथा अनुभव नहीं होती। मैं वन में बहुत सी आकर्षक वस्तुएँ देखता रहता हूं जिससे मेरा मन बहलता रहता है। रात्रि के समय मेरी विरह–व्यथा की पीड़ा चरम सीमा पर पहुंच जाती है। उस समय मुझे कोई ऐसी वस्तु दिखाई नहीं देती, जो मेरे हृदय को सन्तोष देकर मेरा लक्ष्य बन सके।

29

मेरी यह आशा कि रात्रि का समय क्षणिक ही होगा, उसके पश्चात निरन्तर दिवस ही मेरे हृदय को दुलराता रहेगा, केवल एक भ्रमात्मक कल्पना मात्र है। वियोग में रात बहुत लम्बी हो जाती है और काटे नहीं कटती है। हाँ ! मैं कितना अभागा हूं कि रात के समय मैं अपनी कल्पना में तुम्हें अपने समक्ष पाकर और भी अधिक व्याकुल हो जाता हूं।

30

हा सीते ! मैं तुम्हारा स्मरण करते हुए रात भर जागरण करता हूं। विरह में वियोगी बनकर मैं व्याकुलता का अनुभव करता हूं। यद्यपि मैं शयन करना चाहता हूं तथा नींद के लिए आँखे बन्द करता हूं, परन्तु इसका कोई

परिणाम नहीं निकलता। किसी भी प्रकार मुझे शान्ति का अनुभव नहीं होता है। हाँ ! वियोग से अत्यधिक पीड़ित व्यक्ति के लिए इस संसार में कोई औषधि भी उपलब्ध नहीं है।

31

इस प्रकार सीता के विरह से कातर होकर मलयवन पर्वतमाला पर जब तक राम ठहरे, निरन्तर ही वे रुदन करते रहे। रात के समय उनको रात भर नींद ही नहीं आती थी। पूरी रात वे सीता की कल्पना करते हुए ही व्यतीत कर देते थे। सीता सदैव ही उनकी कल्पना में साकार रहती थीं। उनका रुदन क़िसी समय भी नहीं रुक पाता था। प्रतिक्षण आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित होती रहती थी। इस आधिक्य का कारण यह था कि वे अपार·दुःख से पीड़ित हो रहे थे। वे कहते थे हाय ! मेरा विरह तो मानो सहस्रों वर्षों से मुझे सता रहा है। प्रत्येक क्षण मुझे ऐसा ही अनुभव होता रहता है।

32

अब वर्षा का मौसम समाप्त हो गया है तथा स्वच्छ मौसम अर्थात शरद ऋतु का आगमन हो रहा है। पूरे वातावरण में निर्मलता दृष्टिगोचर हो रही है। आकाश इतना निर्मल एवं स्वच्छ है, जैसे बुद्धिमान व्यक्ति की बुद्धि पूर्ण निर्मल होती है। बादल छितरा–छितरा कर विलीन हो गये हैं। आकाश से बादलों की रेखाएं समाप्त हो गई हैं। चारों ओर श्वेत हंसों की पंक्तियाँ दृष्टिगोचर होने लगी हैं। उनका श्वेतवर्ण पवित्र, स्वच्छ एवं निर्मल बुद्धि के सदृश है।

33

राम ने स्वच्छ एवं निर्मल शरद के आकाश की ओर आँख उठाकर दृष्टिपात किया। उन्होंने पूर्णिमा के गोल विशाल उज्जवल चन्द्रमा को भी देखा। उन्हें निर्मल चन्द्र सीता के सुन्दर मुख की भाँति ही दिखायी दिया। सीता की ओर शीघ्र ही राम का ध्यान चला गया। फिर वे उनकी कल्पना में साकार हो गयीं। उन्हें शीघ्र ही सीता का स्मरण हो आया। इसके पश्चात उन्होंने लक्ष्मण के समक्ष अपनी कोमल भावना को इस प्रकार प्रकट किया।

34

हे भाई लक्ष्मण ! निर्मल आकाश की ओर देखो। ऊपर आकाश में हंसों की पंक्तियाँ प्रसन्नतापूर्वक उड़ रही हैं। वे मानसरोवर झील की खोज में उड़ते जा रहे हैं। आनंदमग्न होकर कलरव करते हुए वे आकाश में विहार कर रहे हैं। यह दृश्य बहुत ही मनोहारी है। स्पष्ट है कि अब स्वच्छ, शुष्क एवं निर्मल शरद ऋतु का वातावरण पृथ्वी पर छा गया है। मेरा अनुमान है कि अब वह ऋतु आ गयी है, जब हम शत्रु पर अपनी पूरी शक्ति से आक्रमण

करने में समर्थ हो सकते हैं। बड़े दुःख की बात है कि वानरराज सुग्रीव ने हम दोनों से जो बातें सहायता के लिए की थीं, वे केवल एक प्रदर्शन मात्र थीं। क्या वह अपनी शक्ति एवं योग्यता का परिचय देकर शत्रु का संहार करने में समर्थ नहीं हो सकेंगे ?

35

क्या वानरराज अपनी शिष्टता के सभी नियमों का उल्लंघन कर अपने पहले की प्रतिज्ञाओं और शपथों की पूर्ण उपेक्षा करेंगे ? अपने वचनों के प्रति उदासीन होकर किसी भी नियम का पालन क्या वे नहीं करेंगे ? क्या अपने वचनों तथा प्रारम्भ में किये गये निश्चयों को वे सर्वथा भूल चुके हैं ? ऐसा प्रतीत होता है कि वानरराज सुग्रीव अत्यधिक नीच प्रवृत्ति के व्यक्ति हैं। इसीलिए अब तक हमारे पास नहीं आये। दिन प्रतिदिन वैभव विलास एवं धन के ऐश्वर्य में वे अपना समय व्यतीत कर रहे हैं ? क्या सुग्रीव ने निर्मल आकाश की ओर आँख उठाकर एक बार भी नहीं देखा जिससे उन्हें यह स्पष्ट हो सके कि ऋतु के परिवर्तन से अब वातावरण कितना स्वच्छ हो गया है। आकाश में अनेक नक्षत्र किरणें बिखेर रहे हैं। क्या इन सबको वानरराज सुग्रीव ने नहीं देखा ?

36

अथवा क्या वानरराज सुग्रीव दिवस के समय एक क्षण के लिए भी राजमहल से बाहर नहीं निकल सकते ? वे सदैव ही शय्या पर लेटे रहते हैं और सोते रहते हैं क्या ? यहाँ तक कि दिवस में खिलते हुए कमल-पुष्पों की सुन्दरता का भी उनको कोई ध्यान नहीं रहता है। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि निरन्तर वे वैभव एवं विलास में ही निमग्न रहते हैं। वे केवल सुखी जीवन का रस ले रहे हैं। क्या इनको इस बात का लेशमात्र भी भय नहीं है कि कहीं बालि की भांति उनको भी मृत्यु का संवरण न करना पड़े ? बालि उनके बड़े भाई थे। हो सकता है कि सुग्रीव भी उनका अनुसरण करें।

37

अपने बच्चों एवं स्त्री के साथ सुखी जीवन व्यतीत करते हुए क्या उनकी बुद्धि भ्रमित हो गयी है ? हे भाई लक्ष्मण ! तुम सुग्रीव के पास चले जाओ। इस कार्य में शीघ्रता करो। इस संबंध में संकोच एवं भय की कोई आवश्यकता नहीं है। इस नीच प्रवृत्ति वाले वानर को कड़े और कठोर शब्दों में समझाओ। यह तो प्रारम्भ ही है, पर अवसर आने पर सुग्रीव ने हम लोगों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया है। झूठ बोल-बोल कर ही हम दोनों को आश्वस्त करने की उन्होंने चेष्टा की है।

38

केवल प्रेमालिंगन में आबद्ध रहना एवं प्रेयसियों के प्यार में मग्न रहना ही जैसे सुग्रीव के जीवन का लक्ष्य हो। उनके विचार केवल जीवन में कामेच्छा की तृप्ति तक ही सीमित प्रतीत होते हैं। उन्होंने अपने मित्र की ओर एवं मित्रता पर कोई ध्यान ही नहीं दिया। प्रतिक्षण आनन्दपूर्ण वार्तालाप, मधुपान करने, मधु रसों का रस लेने तथा सुरापान में वे डूबे रहते हैं। सुग्रीव के विषय में मेरा तो यही अनुमान है कि उन्होंने अपने जीवन के पवित्र मूल्यों, कर्तव्यों एवं आदर्शों के प्रति कोई भी ध्यान नहीं दिया है। मुझे लगता है कि भ्रमित होकर यह व्यक्ति पथभ्रष्ट हो गया है। अतएव तुम शीघ्र ही सुग्रीव के पास जाओ। उनसे स्पष्ट रुप में पूछो कि वास्तव में अब उनकी क्या इच्छा है। वे क्या चाहते हैं ?

39

राम ने जब सुग्रीव के प्रति अपने विचार इस प्रकार व्यक्त किये, तो लक्ष्मण ने शीघ्र ही किष्किंधा की ओर प्रस्थान कर दिया। वे बहुत ही योग्य एवं चतुर व्यक्ति थे। वे राम के हृदय की सभी बातों को भली भाँति जानते थे। उन्होंने किष्किन्धा की ओर प्रस्थान करने से पहले अपना धनुष धारण कर लिया। जब वे उस गुफा में पहुंचे, तो वानरों ने उनके आगमन की सूचना सबको दे दी। वानरों ने लक्ष्मण को उस ओर आते पहले ही देख लिया था।

40

वानरों में सर्वश्रेष्ठ एवं सर्वप्रमुख वानर हनुमान ने शीघ्र ही आकर लक्ष्मण को प्रणाम किया। उनका स्वागत किया। वे उनके पास गये। पूरे सम्मान के साथ उन्होंने लक्ष्मण से प्रार्थना की कि वे राजमहल में प्रवेश करें। जब लक्ष्मण ने राजमहल में प्रवेश किया तो वानरराज सुग्रीव शीघ्र ही लक्ष्मण का स्वागत करने के लिए निकल कर आये। उन्होंने लक्ष्मण का अभिनंदन किया। लक्ष्मण की चरण–रज को अपने मस्तक पर उन्होंने धारण कर लिया।

41

उन्होंने लक्ष्मण से निवेदन किया "मैं आपका दास हूं। मैंने आप लोगों की ओर ध्यान नहीं दिया। मैं वैभव तथा विलास में पड़कर अपने कर्तव्यों के प्रति उदासीन हो गया था। मैं अब आपसे करबद्ध निवेदन कर रहा हूं कि आप मुझे मेरी भूलों के लिए क्षमा कर दीजिए। मेरे प्रति आपके बहुत बड़े उपकार हैं। आप सबके कारण ही यह अवसर आया कि मैं ऐश्वर्य एवं विलास में डूब सका तथा जीवन में प्रसन्नता का अनुभव करता रहा। वास्तव में यह आपके अनुग्रह से ही मुझे प्राप्त हुआ है। अब शुष्क मौसम अर्थात शरद ऋतु आ गयी है, फिर भी मैं तो आपके विषय में सभी कुछ भूल ही गया था। कारण केवल यह है कि मैं जीवन के रस में डूबा हुआ अपनी कामनाओं और इच्छाओं की पूर्ति उसी वैभव के माध्यम से कर रहा था जो आपसे ही मुझे प्राप्त हुआ है।

42

अब आपके इस दास ने यह निश्चय किया है कि मैं वानर सेना को आज्ञा दूं और वानरगण सभी दिशाओं में जाकर सीता की खोज करें। उन्हें किसी से डरने की आवश्यकता नहीं है। सभी वानर समूह मेरा आदेश पाने के लिए प्रस्तुत हैं। वे वनों मैं तथा पर्वतों पर जाकर सीता की खोज करेंगे। चाहे जंगल कितने भी घने एवं भयावह क्यों न हो, वे सभी उनमें प्रवेश कर सीता की खोज करेंगे तथा उनको उन सभी संभव स्थानों पर भेजा जायेगा, जहाँ पर सीता देवी के मिलने की संभावनाएँ हो सकती हैं।

43

सुग्रीव ने इस प्रकार के वचन लक्ष्मण से कहे। उसके पश्चात वे वहाँ से चल दिये। उन्होंने सम्पूर्ण वानर सेना को आदेश दिया कि वे शीघ्र ही सीता की खोज करें। वानरों को यह आज्ञा दी गयी कि किसी भी स्थान को छोड़ा न जाय। अतएव वानरों को इस कार्य के लिए सभी दिशाओं में भेजा गया। शीघ्र ही सभी वानर समूहों को उचित आज्ञा देकर दिशा निर्देश किया गया। वे सभी एकत्रित होकर साथ ही साथ सुग्रीव के समक्ष उपस्थित हुए तथा पास आकर उनके आदेश की प्रतीक्षा करने लगे। लक्ष्मण भी वहाँ से चल पड़े तथा सुग्रीव ने शीघ्र ही उनके साथ जाकर उन्हें विदा किया।

44

लक्ष्मण शीघ्र ही मलयवन में लौट आये। तत्पश्चात उन्होंने आगे बढ़कर राम के चरणों का चुम्बन किया। उसके बाद सुग्रीव ने भी राम का अभिनन्दन किया और निवेदन करते हुए प्रार्थना की। इस तरह सभी वानर समूह राम के निकट आये और एक-एक करके पृथ्वी पर लेट गये तथा उनको दंडवत प्रणाम करने लगे। राम को दंडवत-प्रणाम करने के पश्चात भक्तिभाव से वे वहीं पर बैठ गये। वे राम के प्रति सभी प्रकार से अपना सम्मान प्रकट करते हुए उनका आदर करते थे। सभी वानर राम के समक्ष नतमस्तक बैठे हुए थे। उन्होंने यह भी देखा कि सुग्रीव ने आगे बढ़कर राम से इस प्रकार निवेदन किया:

45

हे राम ! आप मेरी भूलों को क्षमा कीजिए। मैं आपके प्रति उचित व्यवहार न कर सका। मैं अपने वचनों को भी पूरा नहीं कर पाया। मुझे यह भी स्मरण नहीं रह सका कि शत्रु पर आक्रमण करने के लिए तथा अपनी शक्ति के परीक्षण् के लिए मुझे प्रस्तुत हो जाना चाहिए। अब वह मौसम भी आ गया है। मैंने अब तक विलासपूर्ण जीवन व्यतीत करते हुए किसी बात पर ध्यान ही नहीं दिया। यद्यपि वस्तुस्थिति इस प्रकार है तथापि मेरा यही विचार है कि मुझे आपकी कृपा के प्रति अनुगृहीत होना चाहिए था। सदैव ही मुझे आपको धन्यवाद देना चाहिए

तथा कभी भी सदगुणों और भली बातों की उपेक्षा नहीं करनी चाहिए। मैंने अपने कर्तव्यों पर कोई ध्यान नहीं दिया। यहाँ तक कि मैं उनको बिल्कुल भूल ही गया था। वैभव–विलास में पड़कर मैं आनंद–मग्न हो रहा था। वास्तव में यह सभी व्यवहार अज्ञानियों के ही होते हैं। उनके प्रति कोई अच्छा व्यवहार करता है तो भी वे उसका बदला अच्छे व्यवहार से नहीं दे पाते हैं। उन्हें अच्छाई करना कभी आता ही नहीं है। वे किसी भी भले कार्य का बदला देने की कृतज्ञ भावना से बहुत ही दूर रहते हैं।

46

जीवन में अज्ञानी व्यक्ति धन वैभव भी प्राप्त कर ले, तो भी उसकी बुद्धि अस्थिर एवं भ्रमित हो जाती है। वह उन्मत्त होकर अभिमानी हो जाता है। वह सभी अच्छी बातों को भूल जाता है। इस प्रकार के लोग इस बात को भी पूरी तरह नहीं समझते कि जिन लोगों ने उन पर अपार अनुग्रह किया है, उनके प्रति उनका क्या कर्तव्य होना चाहिए। वे अपने कर्तव्यों से शीघ्र ही विमुख हो जाते हैं। केवल जीवन का रस लेने में ही लिप्त होकर वे आनंद मनाते रहते हैं। इसीलिए आपका सेवक आपसे यह प्रार्थना करता है तथा पूरी आशा करता है कि आप मेरी भूलों को क्षमा करने की कृपा करेंगे। मैं एक वज्र मूर्ख एवं अज्ञानी हूं। मेरा ज्ञान भी अपूर्ण है। हे राजन ! जब आपने मुझे अपने पास बुलाया, तभी मुझे सभी बातों का स्मरण हो आया। मैं एक ऐसा मूर्ख हूं जो स्मरण दिलाने पर ही आपके सामने आकर उपस्थित हुआ।

47

जब वानर राज सुग्रीव ने राम से इस प्रकार के वचन विनयपूर्वक कहे तो राम उनकी इस विनम्रता से बहुत प्रसन्न हुए। उन्होंने सुग्रीव के सभी अपराधों को क्षमा कर दिया। उसी समय राम ने देखा कि वानर–समूह एक दूसरे को दबाते हुए बहुत बड़ी संख्या में वहाँ उपस्थति थे। सम्पूर्ण मलयवन की पर्वतमाला को उन्होंने जैसे आच्छादित कर दिया हो। राम को अब स्पष्ट प्रकट होने लगा कि निश्चय ही यह वानर समूह दशमुख रावण का विनाश करने में पूर्ण समर्थ हो सकेंगे। वे सभी वानर अपार शक्तिशाली थे। इसीलिए राम वानर–समूह से इतने अधिक आश्वस्त थे। जब बड़े–बड़े वानर योद्धा उनके समक्ष आकर उपस्थित हुए तो उन्हें बहुत सन्तोष हुआ।

48

जब वानर सेना एकत्रित होकर राम के समक्ष आयी, तो हनुमान, नील, अंगद तथा जाम्बवान आगे बढ़े। सभी प्रमुख वानर योद्धा पूर्ण रुप से युद्ध के लिए प्रस्तुत थे। उन योद्धाओं में अपार बल और उत्साह था। जहाँ तक उनके बल तथा शक्ति का संबंध था,उसकी उपमा केवल चारों सागरों की गहराई से ही दी जा सकती है अर्थात् उनमें अथाह शक्ति थी। वानर राज राजा सुग्रीव ने उन सभी को यह उपदेश देते हुए कहा :

49

हे नील ! अंगद ! जाम्बवान ! आप सभी योद्धागण हनुमान के पीछे-पीछे जाकर उनका अनुसरण करें। हनुमान हमारे प्रतिनिधि के रुप में जा रहे हैं। अब कुछ ऐसा स्पष्ट सा हो चला है कि राजमहिषी सीता लंकापुरी में ही हैं। उनकी खोज ही हमारा उद्देश्य भी है। तुम्हारा मार्ग तथा दिशा मलय वन से दक्षिण-दिशा की ओर ही है। अतएव पहाड़ों के ढालों एवं घाटियों को पार करते हुए अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते चलो। बाद में तुम्हें विशाल एवं विस्तृत सागर दिखायी देगा।

50

सागर को पार करने के पश्चात् सुबल नाम का पर्वत तुम्हें दिखायी देगा। जब वहाँ पहुंच जाओ तो निश्चय ही वहाँ विश्राम करना। बड़ी चतुरता से अपनी पूर्ण सुरक्षा की व्यवस्था भी करना। एक दूसरे को सुरक्षा का कार्यभार देकर शयन करना। इसी प्रकार तुम्हारी सुरक्षा संभव है। बहुत से राक्षसगण रात्रि के अवसर पर ही निशाचर के रुप में क्रूर एवं नीच कर्म करते हैं इसीलिए उनकी इन गतिविधियों पर कड़ी दृष्टि रखते हुए अपनी रक्षा करना आवश्यक है। लंकापुरी में सीता को ढूंढने का प्रयत्न करो, जिससे यह भी पता लग सके कि वे लंकापुरी में किस स्थान पर हैं।

51

तुम लोग आपस में अधिक वार्तालाप भी मत करो। यदि तुमको कहीं पर महादेवी सीता दिखायी दें, तो मौन होकर वहाँ का निरीक्षण करो। जो आस-पास के गृह हों उनके मध्य अपने को बहुत ही चतुरता से छिपा लेना। इधर-उधर देखकर सभी बातों एवं परिस्थितियों का पता लगाना। यदि उस स्थान पर सीता अकस्मात् ही दिखायी दे जायं और वे दुःख से व्याकुल हों तथा विरह से व्याकुल होकर रुदन कर रही हों तो उनके समीप जाकर उनसे सभी बातें पूछो। यदि वह किसी से बातचीत कर रही हों, तो मौन होकर सुनो।

52

इस प्रकार वानर राज सुग्रीव ने अपनी सेना के योद्धाओं को आदेश देते हुए कहा कि वे सीता की खोज में हनुमान का अनुगमन करें। इसके बाद राम ने कहा, हे हनुमान ! आप बड़ी कुशलता से लंकापुरी में सीता की खोज का कार्य कीजिए। आप अपने साथ मेरी यह मुद्रिका भी लेते जाइए। यदि आपकी भेंट देवी सीता से हो जाय, तो निश्चय ही परिचय के लिए यह मुद्रिका उनको अर्पित कर दीजिएगा। यह कार्य बहुत ही आवश्यक है। इसी के आधार पर वे आप पर विश्वास कर सकेंगी। आप मेरे द्वारा भेजे गये एक दूत की भाँति सीता के लिए विश्वसनीय बन सकेंगे।

53

जब राम ने इस प्रकार के वचन कहे, तो हनुमान जी नील,अंगद तथा जाम्बवान के साथ प्रस्थान करने के लिए प्रस्तुत हो गये। उनके साथ चार सौ सहस्त्र वानर सेना भी चलने के लिए तैयार हो गयी। उस समय वे सभी आकाश में उड़ गये तथा आकाश-मार्ग से ही उन्होंने प्रस्थान किया। उनके शरीर के रोम चमचमा रहे थे। लाल वर्ण के कारण उनकी लाल-लाल आभा वातावरण में बिखर रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे आकाश में शत सहस्त्र सूर्य एक ही साथ चमक रहे हों जिनकी किरणें तीव्र, उष्ण एवं शक्तिपूर्ण थीं। अतएव उनकी उपमा सूर्य की किरणों से दी जा सकती थी।

54

जब राम के दूत दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान कर गये,तो शतवली नामक एक वीर वानर योद्वा ने उत्तर दिशा की ओर जाने की योजना बनायी। सुषेण (सुसेन) नामक एक अन्य वीर वानर ने पश्चिम दिशा की ओर जाने का निश्चय किया। विनाता ने पूर्व दिशा की ओर प्रस्थान करने का कार्यक्रम बनाया। वे सभी अत्यन्त शीघ्रता से इस कार्य को करने के लिए प्रस्तुत हो गये। सभी प्रस्थान के लिए आनंद से उछल पड़े। उनके साथ सौ शत सहस्त्र वानर सेना भी प्रस्थान करने के लिए तैयार थी। यह वानर सेना भी उनके साथ ही साथ चल दी। वे ऐसे लगते थे जैसे सिंह छेड़छाड़ तथा हास परिहास करते हुए जा रहे हों।

55

इस प्रकार वानरों ने सीता की खोज के लिंए सभी दिशाओं में प्रस्थान किया। यह सब कार्य रघुकुल तिलक राम के आदेशानुसार ही किया गया था। यह कहा जा सकता है कि जो वानर समूह दक्षिण दिशा की ओर गये थे, उसके प्रमुख सेनाध्यक्ष हनुमान ही थे।

56

बड़े ही अनुशासित ढंग से वानर सेना एक बड़े एवं ऊंचे पर्वत विन्ध्याचल पर जा पहुंची। उनको देखकर मृगराज सिंह भी डर गये। वे छिप-छिप कर तीव्रता से अपने प्राणों की रक्षा के लिए इधर-उधर भागने लगे।

57

इस पर्वत की विशाल चोटी अथवा छोटे-छोटे शिखर बहुत ही भयानक थे। उस पर बहुत सी नदियां बहती थीं,जिनमें बड़े-बड़े पत्थर लुढ़क रहे थे। गहरी झीलें तथा बड़े-बड़े खड्ड भी मार्ग में ही थे।

उनकी गहराई सीमातीत थी। इन सभी भयानक एवं कठिन मार्गों को वानर सेना पार करती हुई आगे बढ़ रही थी।

58

वन प्रदेश में भीषण रव एवं कोलाहल सुनायी देने लगा। वन्य पशु इस शोर को सुनकर चौंक-चौंक कर इधर-उधर भागने लगे। बड़े-बड़े चीते तथा सिंह भी डर से भयभीत होकर चौंकने लगे। सभी वन्य-पशु साथ-साथ भय से भागते चले जा रहे थे।

59

वास्तव में वह वन बहुत ही सघन था। विन्ध्याचल पर्वत की श्रेणियाँ भी बहुत ही उंची थीं। इसी कारण वानर सेना चलते-चलते शान्त सी हो गयी। वे परस्पर घबराकर एक दूसरे से मार्ग की कठिनाइयों का वर्णन करने लगे। सूर्य की तीव्र किरणें और भी अधिक उष्णता बिखेरने लगी थीं।

60

इन कठिनाइयों के कारण वानर सेना थक कर चूर हो गयी थी, इसीलिये वह अब शक्तिहीन सी हो गयी थी। वे सभी भूख से व्याकुल थे तथा दुर्बलता का अनुभव करने लगे थे। इस प्रकार चलते-चलते वन में प्रवेश करते हुए वे विश्रान्त हो गये थे। भूख के कारण उनके शरीर शिथिल हो गये थे। इसीलिये उनका शोर एवं कोलाहल भी अब समाप्त प्रायः हो गया था,जैसे कोई सागर शांत और गंभीर होकर ऊर्म्मि रहित हो गया हो।

61

पृथ्वी पर बड़े-बड़े एवं चौड़े शिलाखण्ड पड़े हुये थे तथा वृक्ष राजियां शान्त खड़ी थीं। सर्वप्रथम वानर सेना स्वाभाविक रुप से विश्राम करने के लिए वृक्षों की छाया में बैठ गयी। पथ की श्रान्ति वे मिटाने लगे। वे सभी अब बहुत ही थके हुये थे।

62

पर्वतों की गुफाओं से झुण्ड के झुण्ड पक्षी बाहर निकल कर आ गये थे। वानर सेना उनको देखकर आश्चर्य चकित रह गयी थी। सभी खड़े होकर तथा सतर्कहोकर उन पक्षियों को देखने लगे।

63

उसके पश्चात् उन्होंने गुफा का एक बड़ा सा द्वार देखा जिसके विशाल द्वार को देखकर बड़ा भय सा लग रहा था। वानर सेना को किसी प्रकार का भी भय नहीं था। वे एकत्रित होकर शरण तथा विश्राम के लिए उस गुफा में प्रवेश करने लगे।

64

जब वानर सेना उस गुफा में प्रवेश कर गयी तो उन्होंने उसमें एक स्वच्छ एवं सुन्दर गृह देखा जो प्रकाश युक्त था। जब वानरों ने इतना सुन्दर स्थान देखा, तो शीघ्र ही उसमें प्रवेश कर गये।

65

उन्होंने उस गुफा में एक अत्यन्त रुपवती स्त्री को देखा। उसके अंग-प्रत्यंग बड़े ही शुभ लक्षणों से युक्त दिखायी दे रहे थे। उसमें किसी प्रकार के भी अशुभ लक्षण अथवा चिन्ह नहीं थे। वह स्त्री चन्द्रमा की भाँति आलोक बिखेर रही थी। वही इस घर की देखभाल एवं सुरक्षा कर रही थी।

66

मुस्कराते हुए बिना किसी प्रकार के भय के वह सुन्दरी आगे बढ़ी। उसने वानरों को भाँति-भाँति के मधुर फल खाने के लिए दिये। उसने बहुत स्वच्छ एवं निर्मल जल भी पीने को दिया। वह जल बहुत ठंडा एवं पेय था। इस प्रकार उसने वानरों को तृप्त किया। ऐसा लगा जैसे उसने उन्हें भोज दिया हो।

67

उसके पश्चात् उसने वानरों से कई बातें पूछते हुए कई प्रश्न किये। सभी वानरों ने सविस्तार उसको पूरी परिस्थिति से अवगत कराया।

68

राम एक बड़े प्रसिद्ध योद्धा हैं। उन्होंने ही हमें आने का आदेश दिया है: उनकी यह आज्ञा है कि हम सब सीता की खोज करें। सीता को कारागृह में बन्दी कर दिया गया है।

69

वानरों ने कहा कि हम सब यह पूछना चाहते हैं कि इस पर्वत पर यह गुफा किसने इस रुप में बनायी है ? वह कौन व्यक्ति है जिसने यहाँ पर इतने सुन्दर गृह का निर्माण किया है। हम सब आपसे यह आशा करते हैं कि इन सभी बातों को आप हमें सविस्तार बताने की कृपा करेंगी।

70

वह कौन प्रसिद्ध एवं सौभाग्यशाली व्यक्ति है जो तुम्हें यहाँ पर ले आया है। तुम एक अपूर्व सुन्दरी युवती हो। तुम्हारा नाम क्या है ?

71

यह कहकर वानरों ने उस युवती से सभी बातें विस्तारपूर्वक पूछीं। तत्पश्चात् उस क्षीण कटि वाली सुन्दरी युवती ने उनको सभी बातें बतला दीं।

72

दानवों का एक राजा है। उस दानव-राज का नाम विश्वकर्मा है। कोई भी व्यक्ति उनके समकक्ष नहीं है। उन्होंने ही इस सुन्दर गृह का निर्माण किया है। उन्होंने इस गुफा को अनुपम सुन्दरता प्रदान करते हुए बनाया है।

73

अब दानवराज विश्वकर्मा स्वर्गलोक में निवास करते हैं। देवराज इन्द्र ने वज्र का प्रहार कर उनको धराशायी किया था। उन दानवराज ने संसार को नष्ट-भ्रष्ट कर अपना आतंक फैला दिया था। इस प्रकार उन्होंने इस जगत को असीम क्षति पहुंचायी थी।

74(क)

मैं एक दानव-राज की पुत्री हूं। मेरा नाम स्वयंप्रभा है। मेरे पिता बहुत ही प्रसिद्ध थे। उनका नाम मेरुसवर्णी था।

74 (ख)

सर्वप्रथम यहाँ पर एक प्रमुख अप्सरा निवास करती थी,जो मय राक्षस की पत्नी थी। उसका नाम हेमा था। इस गृह और क्षेत्र को मैंने अपनी सुरक्षा एवं देखरेख में ले लिया है। यह सब अब मेरे ही आधिपत्य में है। यह गुफा तथा इसके चारों ओर के वन भी मेरे ही अधिकार–क्षेत्र में हैं।

74

इस गृह पर लिखे गये सभी वाक्य अब ठीक से पढ़े नहीं जा सकते। इस प्रकार ये अब अस्पष्ट से ही हैं।

75

यदि अब तुम शीघ्र ही लंकापुरी पहुंचना चाहते हो तो मेरे निर्देशानुसार जाने के लिए तैयार हो जाओ। तुम सबको सरलता से मैं वहाँ पर पहुंचा दूंगी। तुम सवको अपने नेत्रों को बन्द करना होगा। चारों ओर देखने की कोई आवश्यकतां नहीं है, इसलिये आँखें बन्द कर लो।

76

इस प्रकार दानवराज की पुत्री ने वानरों से सभी बातें स्पष्ट कर दीं। वानरों को इससे अधिक और कुछ जानने की आवश्यकता भी नहीं थी। अब वह युवती भी जान गयी थी कि वानर सेना लंकापुरी की ओर प्रयाण करना चाहती है। उसको उसके प्रति कुछ द्वेष उत्पन्न हो गया। उसने शीघ्र ही अपनी ईर्ष्या एवं द्वेष का स्पष्ट परिचय भी दिया। अब वानरों के प्रति उसके मन में निश्चय ही बुरा भाव आ गया था।

77

दानवों का आचार भी राक्षसों के ही समान होता है,अतएव वे दोनों एक ही वर्ग में आते हैं, इसीलिए उन दोनों की गतिविधियाँ भी बहुत कुछ समान ही होती हैं। वे कई बातों में एक दूसरे से पूरी तरह मिलते जुलते हैं। यही कारण है कि इस दानवी स्वयंप्रभा के मन में वानरों के प्रति ईर्ष्या तथा द्वेष का भाव उत्पन्न हो गया। उसने वानरों को कष्ट देने व सताने की ठानी और अपनी जादूगरी की विद्या का प्रदर्शन किया।

78

इस प्रकार उस वानर सेना में ऐसा कोई भी व्यक्ति नहीं था, जो उसके जादू के प्रभाव से अछूता रह पाता। हनुमान भी अकस्मात् ही इस विचित्र परिस्थिति से भ्रम में पड़ गये। वे आँखे मलते और शोर मचाते हुये

आँखे बंद करने लगे। किसी को भी आने वाली विपत्ति की कोई कल्पना भी न थी।

79

वास्तव में वन में प्रवेश करने के पश्चात् वानर सेना पूरी तरह श्रान्त हो चुकी थी, इसीलिए मार्ग पूरा करने में उनको बहुत समय लग रहा था। यद्यपि वे बहुत शीघ्रता से आगे चलना चाहते थे। यही कारण था कि वे दानवराज की पुत्री स्वयंप्रभा के जादू के प्रभाव में आ गये। जादू के प्रभाव के कारण उनकी गति और भी अधिक मन्द हो चुकी थी। उन सबको अब अपना कोई भान ही नहीं था। यहाँ तक कि उन्हें यह भी ज्ञात न हो सका कि वे गुफा से कब और कैसे बाहर आये।

80

उन सभी वानरों ने शीघ्र ही अपने को गुफा से बाहर पाया। वे भ्रम में पड़ गये। उनकी कुछ भी समझ में नहीं आ रहा था। वे अब किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये थे। उनकी स्मरण-शक्ति जैसे जाती सी रही हो। उस समय एक मास उनको एक क्षण की भाँति लगा। वास्तव में यह सभी स्वयंप्रभा द्वारा किये गये जादू का परिणाम था।

81

अंगद को इस विचित्र परिस्थिति से गहरी निराशा हुई। उनकी भी स्मरण शक्ति जैसे समाप्त हो गयी थी। वे बार-बार इस कठिनाई के विषय में सोच रहे थे,परन्तु इस समस्या का कोई भी हल उनके मस्तिष्क में नहीं आ पा रहा था। दुःखी होकर वे आहें भरते हुए इस कष्ट का वर्णन करने लगे। उनके हृदय में उस अवसर पर जो भी बात आयी,उसी को सोचकर वे मौन हो रहे। उसी समय उन्हें यह ध्यान आया कि इस भयानक स्थिति में इस वन में हम सबकी मृत्यु भी हो सकती है।

82

वही गति वानर योद्धा जाम्बवान की भी हुई। उन्होंने भी अंगद को अत्यन्त दुःखी हृदय से देखा। अंगद किस प्रकार कष्ट का अनुभव कर रहे थे, इसे उन्होंने समझ लिया। उनका सोचना जैसे समाप्त सा हो गया था। उनकी बुद्धि भ्रमित सी हो रही थी। उन्होंने तभी यह कहा कि मैं भी मृत्यु वरण करने में अंगद का अनुसरण करना चाहता हूं।

83

हनुमान भी इस दृश्य को देखकर बहुत ही दुःखी हुए। उन्होंने वृद्ध वानर, वीर योद्धा जाम्बवान की ओर देखा। वे सोचने लगे कि मेरे जीवन का इस जगत में क्या अर्थ है ? उसकी अब क्या आवश्यकता है ? इस अवसर पर यदि वह किसी काम न आ सका तो मैं भी इन सबके साथ ही मृत्यु का वरण करना चाहूंगा। उन्होंने भी इसी प्रकार सोच कर निर्णय किया।

84

हनुमान के साथ दूसरे वीर वानर योद्धाओं ने मृत्यु का वरण करने के लिए दृढ़ निश्चय कर लिया। यहाँ तक कि अन्य सभी वानर समूह भी चित्त में अत्यन्त दुःखी होकर मृत्यु की कामना करने लगे। उस समय विस्मरण के कारण उन्हें स्मरण ही नहीं रहा कि पर्वतमाला पर उन सभी के शरीर को मृतवत कर दिया गया था।

85

इस प्रकार वानर सेना अत्यन्त दुःखी हो रही थी। उनकी दशा को देखकर किसी को भी उन पर दया आ सकती थी। वहाँ पर एक विशाल पक्षी भी उपस्थित था जिसका नाम सम्पाती था। वह पक्षी भी बहुत ही डरावना था। उसकी समानता गरुड़ पक्षी से बड़ी सरलता से की जा सकती थी। वह पक्षी शीघ्र ही वानर सेना की यह दशा देखकर उनके पास आया। उसने वानर सेना को दुःखी होते देखा।

86

सम्पाती के शरीर पर रोम नहीं थे। उसका शरीर बिल्कुल नग्न था। उसकी चोंच तीव्र एवं विशाल थी। वह कठोर, तीक्ष्ण एवं नुकीली थी। जब वानरों ने उस पक्षी को देखा तो वे बहुत डर गये। वे और अधिक कष्ट का अनुभव करने लगे। उनका दुख बढ़ गया।

87–88

वे आहें भर कर परस्पर कहने लगे कि यह तो एक विचित्र और भीषण दुर्घटना होती दिखायी दे रही है। अब तो हम सभी राम की दृष्टि में बहुत ही तुच्छ सिद्व होंगे। यद्यपि हम सब राम के दूत के रुप में यहाँ आये हैं पर नाम मात्र के ही लिये हम उनके दूत रह गये हैं। हमने अभी तक अपने कर्तव्यों को पूरा नहीं किया। स्वयंप्रभा ने अपने जादू से एक विचित्र परिस्थिति उत्पन्न कर दी है। आज हम पथभ्रष्ट एवं दिग्भ्रान्त हो चुके हैं। हमें यह भी पता नहीं कि हमें कहां जाना चाहिये। उन्होंने कहा, हे सम्पाती ! तुम बड़े गुणी एवं महान हो। हमारा तुम पर पूरा विश्वास है। तुम जटायु गृद्वराज के छोटे भाई भी हो। जटायु ने जहाँ तक संभव हो सका था, अपने प्राणों की बलि देकर भी अपना कर्तव्य निभाया था। उन्होंने अपनी मित्रता का पूरा परिचय दिया।

उन्होंने ही राम को सीता के विषय में पूरी सूचना दी थी। उनके अन्तिम क्षणों में ही सघन वन में राम की उनसे भेंट हुई थी।

89

हम सब भी अपने लक्ष्य से पूर्णतया अलग होकर भटक गये हैं। हमें उचित मार्ग स्पष्ट नहीं है। अपने प्रति किये गये राम के उपकारों का बदला भी हम उनको नहीं दे रहे हैं, अतएव अब हमारे जीवित रहने का कोई अर्थ नहीं है अर्थात् हमारा जीवन ही इस संसार में व्यर्थ है। हमारे लिये केवल मृत्यु ही सुखदायी है। वही एक मार्ग अब हमारे लिये शेष है। इस प्रकार वानर समूह दुःखी होकर मृत्यु की कामना करने लगे।

90

उन्होंने देखा कि यह पक्षी गरुड़ पक्षी की भाँति ही विशाल एवं शक्तिशाली है। उसकी चोंच भी बड़ी एवं तीव्र है। वह पराक्रमी है। उसे देखकर भय उत्पन्न हो जाता है। वह पक्षी मृत्यु के देवता की भांति ही उन्हें भयानक लगा। उन्होंने सोचा यदि पक्षी हमें मार डालेगा तो भी हमारी मृत्यु की इच्छा ही पूर्ण होगी। इसलिए इसी से मृत्यु की कामना करनी चाहिए।

91

हम सबको अपने शरीर को उस पक्षी को सौंप देना चाहिये, जिससे कि वह अपनी क्षुधा शान्त कर सके। वह बहुत भूखा भी है। इसी लिए दुःखी भी है। उसने बहुत कम भोजन किया है। वह दुःखी होकर इसीलिए दुर्बलता का अनुभव भी कर रहा है। धीरे–धीरे वह चल पाता है। कितना बड़ा सौभाग्य होगा यदि यह पक्षी हम सबका भक्षण कर ले। हताश वानर यही सोचने लगे।

92

वानर सेना ने अत्यन्त दुःखी होकर यह सब बातें सोचीं। इसी बीच वह विशाल पक्षी आगे बढ़कर उनके पास आ गया और उनसे कहने लगा– हे उत्तम वानर योद्धाओं ! आप सबका यहाँ आने का क्या प्रयोजन है ? विन्ध्याचल की यह पर्वतमाला बहुत ही कठिन स्थल है। इस पर चढ़कर यहाँ तक आना बहुत ही दुस्तर कार्य है। इसीलिए यहाँ तक आना भी सरल कार्य नहीं है।

93

किसी मानव के यहाँ पहुंचने की संभावना भी नहीं की जाती है, अतएव यहाॅ तक आने की कल्पना भी नहीं की जा सकती। इस पर्वत की ऊंचाई भी बहुत अधिक है। इसी के साथ ही साथ यह पर्वतमाला घने जंगलों से भी ढकी हुई है। यहाँ तक आने का आप सबका क्या उद्देश्य है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि आप सब यहाँ आकर बहुत दुःखी दिखायी दे रहे हैं।

94

अपने आपको आप सभी बहुत अभागा समझकर अत्यन्त दुःख का अनुभव भी कर रहे हैं। जटायु ने तो सदैव ही आपके गुणों और विवेक की भूरि-भूरि प्रशंसा की है। हे वानर भाइयों ! मैं जटायु से बहुत प्रेम करता हूं। वह मेरे बहुत निकट था। मैंने दूसरे प्राणी से जीवन में कभी इतना प्रेम नहीं किया।

95

जब पक्षी सम्पाती ने वानर समूह से इस प्रकार के सन्तोषप्रद वचन कहे,तो शीघ्र ही वानर सेना ने सम्पाती को पूरी परिस्थिति की सूचना दे दी और कहा कि हम सब राम के दूत हैं। हम लंका की ओर प्रस्थान करना चाहते हैं। राम का यही आदेश है।

96

राम की पत्नी सीता देवी की खोज करने के लिए हम सब निकले हैं। हम सबका अनुमान है कि निश्चय ही देवी सीता अभी तक जीवित होंगी। हम सब अभी तक राम के आदेश का पूरी तरह पालन नहीं कर सके हैं। यही कारण है कि हम सब दुःख से घिर गये हैं और घोर कष्ट का अनुभव कर रहे हैं।

97

इससे पहले हम सबने अनुमान लगाया था कि इस कार्य को हम सब कितने समय में पूरा कर सकेंगे। इसीलिए हमने अपने कार्यक्रम को निश्चित कर लिया था। अब बहुत अधिक समय व्यतीत हो चुका है। हम सब अपने कार्य को पूरा करने में भी समर्थ नहीं हो सके हैं। हमारे इस अभियान का कोई फल हमें अभी तक प्राप्त नहीं हो सका है। इसीलिए हम सब बहुत दुखी होकर गहरी लज्जा का अनुभव कर रहे हैं। हम सब आपसे प्रार्थना करते हैं कि शीघ्र ही आप आगे बढ़कर अपनी विशाल चोंच से हम सब पर प्रहार कीजिए और हमारा भक्षण कीजिए।

98

इस प्रकार सभी वानरों ने सम्पाती से अपने हृदय की बात कह डाली। उनका उद्देश्य यही था कि वे सभी मृत्यु का वरण करना चाहते थे। अपना प्रेम प्रकट करते हुए सम्पाती ने फिर वानरों से कहा- मुझे दुःख है कि तुम्हारा कष्ट सीमा पार कर गया है। तुम लोग अकस्मात् ही भ्रम में पड़कर घबरा गये हो। तुम्हारी स्मरण-शक्ति भी क्षीण हो गयी है।

99

तुम्हारा दुःख इस सीमा तक जा पहुंचा है कि तुम सब अपने शरीर तक का अन्त करना चाहते हो। हे अभागे वानरों ! ऐसी क्या आवश्यकता अथवा कठिनाई आ पडी है कि तुम सब अपने प्राण देना चाहते हो। वास्तव में मृत्यु की इच्छा का कोई विशेष कारण मुझे तो दिखायी नहीं देता है। तुम सब अपने कार्य को पूरा करने के लिए प्रस्तुत हो जाओ। राम के सच्चे प्रतिनिधि के रुप में अपने कर्तव्यों को पूरा करने का प्रयास करो। जो भी तुम्हारा लक्ष्य हो उसे पूरा करो। मेरे साथ तुम सभी दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान करो।

100

तुम सबको एक ऐसा नगर दिखाई देगा जिसके सभी भवन सुवर्ण से बनाये गये होंगे। ऐसा नगर एक विशाल पर्वत के शिखर पर बसा हुआ हो तो वही लंकापुरी होगी। वहाँ अप्सराओं का निवासस्थान है। सुन्दरता में लंकापुरी तथा स्वर्ग में कोई अन्तर नहीं है।

101

लंकापुरी स्वर्ग से भी अधिक सुन्दर है। उसके वैभव को देखकर आश्चर्य होता है। मेरा तो अनुमान है कि लंका सभी लोकों का सार-तत्व है तथा उसको विश्व का केन्द्र-बिन्दु माना जाना चाहिये। देवताओं ने ही अपने हाथों से उसका निर्माण किया है। देवों की अपेक्षा इतना सुन्दर कार्य अन्य कोई व्यक्ति नहीं कर सकता है। यह उन्हीं के अपार प्रयासों का परिणाम है, इसीलिए अपार आभा से यह नगरी प्रति क्षण चमकती रहती है।

102

सर्वप्रसिद्व धन सम्पत्ति के देवता वैश्रवण हैं। वे ही प्राचीन काल में इस स्थान के राजा थे। रावण ने लंका में प्रवेश कर उन पर आक्रमण किया तथा लंका में पदार्पण किया। इसीलिये वे आजकल अलकावती (अलकापुरी) में निवास करते हैं। लंकापुरी की सुन्दरता का यही प्रधान कारण है।

103

लंकापुरी पर आधिपत्य जमाने वाला महान विजेता रावण ही था। यद्यपि अब उसकी विजय पताका सम्पूर्ण विश्व में फहरा रही है। अब पूरे संसार पर उसने अपना प्रभाव स्थापित कर लिया है। उसने संसार के सभी योद्धाओं को परास्त कर दिया है। आज मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि युद्ध में निश्चय ही वह तुम्हारे हाथों से मार डाला जायेगा। तुम सभी योद्धागण भी महान शक्तिवान हो। तुम्हारे पास अपार बल है।

104

इसीलिए तुम सबको दुःखी नहीं होना चाहिए। तुम सभी अपने कार्य को पूरा करने के लिए प्रस्तुत हो जाओ। राम के आदेश का पूरी तरह पालन करो। निश्चय ही तुम सब अपने लक्ष्य को प्राप्त कर सकोगे तथा देवी सीता की खोज में पूर्णतः सफल हो जाओगे। देवी सीता आजकल दशमुख रावण के राजमहल में लंकापुरी में ही हैं।

105

मैं यह सब सर्वथा सत्य रुप में प्रस्तुत कर रहा हूं। इनमें झूठ लेशमात्र भी नहीं है। मुझे स्पष्ट है कि राम के प्रतिनिधि के रुप में आपका कार्य निश्चय ही सिद्ध होगा। आपकी यह यात्रा तथा अभियान भी पूर्ण सफल होगा। मुझे पूरी तरह विश्वास है कि राम आप सब के इस अथक प्रयास की सफलता देखकरं सब पर प्रसन्न होंगे। आपका प्रयास उनकी पत्नी सीता की खोज से संबंधित है। इसमें आपको पूर्ण सफलता प्राप्त होगी।

106

सम्पाती ने वानर समूह से इस प्रकार वार्तालाप किया। वे पक्षियों के राजा थे। उन्होंने वानर सेना को मार्ग की सभी संभव सूचनाएँ भी दीं। उसके पश्चात वानर सेना को फिर से स्मरण शक्ति प्राप्त हुई। उन्हें सभी बातें याद आने लगीं। वे सभी उठकर प्रस्थान के लिए प्रस्तुत हो गये। सम्पाती के प्रति उन्होंने अपनी अपार श्रद्धा व्यक्त करते हुए प्रसन्नता प्रकट की। वे सभी हर्ष ध्वनि करते हुए चल दिये। वे प्रसिद्ध महेन्द्र पर्वत पर पहुंच गये।

107

अन्ततः वानर सेना महेन्द्र पर्वत की दक्षिणी ढाल पर जा पहुंची। उस पर्वत के उपजाऊ वन के वृक्ष फलों से लदे हुए थे। अत्यन्त हर्षपूर्वकं वे सभी उस वन में भाँति-भाँति के फल खाने में जुट गये। उसी पर्वत-शिखर से उन्होंने दक्षिणी सागर की ओर दृष्टिपात किया, जो आकाश की भाँति विस्तृत एवं विशाल था। सागर की लहरें गुरु-गंभीर गर्जना कर रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि सागर अपनी अपार गौरव-गरिमा बिखेरता

हुआ जगत में उसकी प्रतिष्ठा कर रहा हो।

108

सागर की लहरें घोर शब्द करती हुई उठ तथा गिर रही थीं। उनका यह क्रम अबाध गति से चल रहा था। वानर सेना कठिन पर्वतीय मार्ग पर चलते–चलते थक गयी थी। ऊबड़–खाबड़ एवं पथरीला मार्ग बहुत ही कठिन था। इसीलिए उनके ह्रदय में कुछ क्रोध की भावना भी आ गयी थी। वे क्रुद्ध दिखायी दे रहे थे। पर्वत–श्रेणियों के प्रति उनके मन में घृणा का भाव उत्पन्न हो गया था। उत्तरी क्षेत्र की सुन्दरता का आनंद लेना तथा उसे देखना अब उनके लिए संभव नहीं था। वे पूर्ण रुप से श्रान्त हो रहे थे।

109

लगता था जैसे रत्न तथा मणि माणिक्यों की अधिकता के कारण सागर में अभिमान उत्पन्न हो गया हो। उसकी सभी चेष्टाएँ तथा कार्यकलाप भाँति–भाँति के थे मानो वह वैभव के मद में चूर तथा भ्रमित था। वास्तव में महान गुणों की आधार–शिलाओं पर कभी–कभी उन्मत्तता पनपती है। वही अभिमान को पोषित भी करती है।

110

सागर के तल पर शीतल एवं तीव्र वायु के झोकें सदैव ही चलते रहते थे। वे सागर की श्वासों की भाँति थे। उसकी भावनाओं ने जैसे प्यासे की प्यास बुझाने की अनुपम कामना की हो। पीने का जल भी चारों ओर बिखर–बिखर कर बहता हुआ दिखाई दे रहा था। यह अनिश्चित दिशाओं की ओर जाता हुआ बह रहा था।

111

इस प्रकार यात्रा करते–करते सभी वानर गण गुरु गंभीर गर्जना करते हुए सागर के तट पर उपस्थित हो गये। सागर तट पर पहुंचना ही उनका लक्ष्य था, इसीलिए वे सभी तट पर जा पहुंचे। वे अब अपार प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे।

112

सागर तट पर आने के पश्चात वानर सेना ने वहाँ पर विश्राम किया। उन्होंने मकर तथा मछलियों को एकत्रित होकर आनंद मनाते हुए चट्टानों के पास देखा। उसी जल में वानर नामक मछली भी विहार कर रही थी।

वह जल में उछल–उछल कर क्रीड़ा कर रही थी। उसकी गतिविधियों को देख–देख कर वानर–समूह खिलखिला कर हंस पड़ता था। इस प्रकार सागर तट पर वानर सेना आनंदपूर्वक विहार करने लगी।

113

उस अवसर पर जितने भी प्रधान वानर योद्धा थे, वे सभी निरन्तर मछलियों की गतिविधियों को देख–देख कर आनंद ले रहे थे। अंगद ने उसी समय लंका की ओर प्रस्थान करने का प्रस्ताव किया। हनुमान जी उठकर खड़े हो गये। उन्हीं को प्रधान दूत अथवा प्रतिनिधि के रुप मे जाने का कार्यभार सौंपा गया था। वे शीघ्र ही प्रधान दूत के रुप में प्रस्थान करने के लिए उद्यत होकर खड़े हो गये। अन्य जितने भी वानरगण वहाँ पर उपस्थित थे, उन्हें वहीं स्थित रहने का आदेश दिया गया। वे सभी हनुमान की निरन्तर प्रतीक्षा करते हुए वहाँ पर उपस्थित थे।

अध्याय – 8

1

इसके पश्चात हनुमान आकाश में उड़ गये। उन्होंने यह निश्चय किया कि आकाश मार्ग से ही गमन करना उचित होगा। गरुड़, सूर्य तथा वायु तीनों ही उड़ने की गति में उनसे पीछे छूट गये। हनुमान की तीव्र गति से उनकी समानता नहीं की जा सकती थी। वे तीव्रतम गति से शीघ्र ही कल्पना की भाँति आकाश में उड़ गये।

2

उस अवसर पर वे सूर्य की भाँति आकाश में देदीप्यमान दिखायी दे रहे थे। उनके शरीर के रोम सूर्य की किरणों की भाँति चमकते हुए दृष्टिगोचर होते थे मानो वे किरणों के जाल से ही बने हुए हों। उनके रोम कोमल एवं लम्बे होने के कारण चमारा (चमर) वृक्षों की भाँति शोभा पा रहे थे। उनका वर्ण लाल-लाल दिखाई दे रहा था। उससे विचित्र प्रकार की आकर्षक किरणें फूट रही थीं।

3

उन्होंने अपने शरीर को और अधिक फैलाकर विशाल आकार दे दिया। सम्पूर्ण वातावरण में भय उत्पन्न करते हुए भयानक रुप धारण कर, एक पर्वत श्रेणी की भाँति वे आकाश में ऊपर उड़ने लगे। आकाश में बहुत ऊंचे उठकर वे उसमें प्रवेश कर गये। नक्षत्रों को छूने के लिए उनकी ऊंचाई तक जा पहुंचे। वे नक्षत्रों के समूह को भी छूने लगे। सूर्य तथा चन्द्रमा से भी वे ऊपर उड़ गये थे।

4

सागर की महानता एवं विशालता की तुलना भी हनुमान के पराक्रम, तेज तथा शक्ति से नहीं की जा सकती थी। उस समय वायु भी तीव्रगति से प्रभंजन का रुप धारण किये हुए थी। वायु के प्रकोप से भीषण रव वातावरण में गूंज रहा था। वास्तव में वह तीव्र वायु प्रलय वायु की भाँति वातावरण को प्रकम्पित कर रही थी।

5

वहीं पर एक महान भयानक राक्षसी भी रहती थी। वह बहुत अधिक विशाल एवं डरावनी थी। उसका नाम डाकिनी था। जब वह अपना मुख खोलती थी, तः वह बहुत ही चौड़ा हो जाता था। जब वह जम्हाई लेती थी, तः उसकी आकृति बहुत ही भयावह हो जाती थी। उसने तुरन्त ही हनुमान को निगल लिया। हनुमान सीधे उसके पेट के भीतर चले गये।

6

हनुमान ने बड़ी चतुराई से उसके पेट में प्रवेश किया। हनुमान ने उसका पेट फाड़ डाला। उसके बाद फिर वे आकाश में उड़ गये। तत्पश्चात उस नीच राक्षसी ने घोर शब्द किया। वह स्वर बहुत ही भय उत्पन्न करने वाला था। उसका स्वर तूफान की भाँति वातावरण में गूंज उठा।

7

इसके अनन्तर मर कर वह सागर में गिर पड़ी। मगर तथा अन्य समुद्री जन्तुओं ने उसका मांस छीन-छीन कर खाना प्रारम्भ कर दिया। सागर में जितनी विशाल एवं भयानक मछलियाँ थीं, उन्होंने तृप्ति से उसके मांस का भक्षण किया। वह मूर्ख राक्षसी डाकिनी बहुत ही विशालकाय थी।

8

जब राक्षसी डाकिनी की मृत्यु हो गयी तो हनुमान जी को अपार प्रसन्नता हुई। सागर के मध्य में हनुमान जी को एक पर्वत श्रेणी भी दिखायी दी। उसका नाम मेनका पर्वत था। वह पर्वत श्रेणी बहुत विशाल थी। उस पर बड़ी कठिनाई से चढ़ा जा सकता था। उसकी चढ़ाई दुर्गम थी। अपने आप अकेली खड़ी हुई यह पहाड़ी सागर क मध्य में चमक रही थी। यह पहाड़ी एक असाधारण पर्वत श्रेणी-सी थी।

9

यह बात जगत प्रसिद्ध है कि वायु देवता से हनुमान की गहरी मित्रता थी। वायु देवता से अधिक शक्तिशाली कोई नहीं है। उनको पवनसाका अथवा वायु मित्र भी कहते हैं। यह बात सर्वविदित है कि हनुमान वायुदेवता के पुत्र हैं, इसीलिए हनुमान जी ने उनको नमस्कार किया। वहीं पहाड़ी पर ठहर कर सम्मानपूर्वक शब्दों में उनका अभिनंदन किया।

10

हे हनुमान ! मेरे निकट आओ। तुम यहीं पर ठहरो। शीघ्रता की कोई आवश्यकता नहीं है। मेरा निमंत्रण स्वीकार करो। अनेक प्रकार के फल मेरे पास हैं, जिनमें जामबू, डूरीयान, आम, मांगीस, नींबू तथा भाँति-भाँति के फल हैं, जो तुम्हारी सेवा में अर्पित हैं। सभी फल मीठे हैं। उन्होंने हनुमान से आग्रह किया कि अपनी इच्छानुसार इन फलों को खायें और तृप्ति प्राप्त करें।

11

तुम अपनी इच्छानुसार श्रान्ति दूर करने के लिए मेरी ढाल पर लेट जाओ। ध्यान देकर देखो कि भाँति-भाँति के पक्षीवृन्द मेरे वनों में अठखेलियाँ करते हुए आनंद-विहार कर रहे हैं। यदि तुम शीघ्रता करोगे, तो समय थोड़ा ही मिल सकेगा और तुम पूरा विश्राम नहीं कर सकोगे। इसीलिए कुछ क्षण यहाँ अवश्य ही विश्राम करो। मैं यह भली भाँति जानता हूं कि तुमको राम ने अपना दूत बनाकर भेजा है।

12

मैं तुम्हारे इस महान कार्य को देखकर तुमसे बहुत ही प्रसन्न हूं। हे पुत्र ! तुम पवित्र प्रेम के अग्रदूत हो। राम के पवित्र कार्यों का बदला बड़ी सरलता तथा विनम्रता से दे सकते हो। जितने विद्वान पंडित उस अवसर पर उस पहाड़ी पर उपस्थिति थे, उन्होंने आशा प्रकट की और यह आशीर्वाद भी दिया कि जिस पवित्र कार्य को तुम्हें सौंपा गया है, उसको शीघ्र ही सफलतापूर्वक पूरा कर वापस आ जाओ।

13

तुम कुछ समय के लिए यहाँ पर ठहरो। यहाँ तुम्हारा हार्दिक स्वागत है। मैं वायु देवता का मित्र हूं। ऐसा कोई नहीं है जो शक्ति में मुझ से अधिक आगे बढ़ सके। इस समय सूर्य की किरणें भी उष्णता बिखेर रहीं हैं। अतएव तुम यहाँ पर ठहर कर आश्रय लो। जब गर्मी तथा सूर्य की किरणों की उष्णता समाप्त हो जाये तो शीघ्र ही प्रस्थान कर देना।

14

यह भौरा मधुर गुंजार कर रहा है। इसको ध्यान देकर सुनो। यह गीत सा गुनगुना रहा है। यह एक सुन्दर पुष्प है इसको भी देखो। यह कितना सुन्दर एवं आकर्षक है। सदैव ही इसे देखने की अभिलाषा रहती है। मैं तुम्हें भी देखने को बहुत पहले से इच्छुक था। अब मैं अपने को भी बहुत ही भाग्यशाली मानता हूं। हे वायु पुत्र ! आप यहाँ पर आये। मेरी और कोई भी आकांक्षा नहीं थी। केवल आपसे मिलने की उत्कट अभिलाषा थी।

15

यह कह कर उस पर्वत श्रेणी ने हनुमान से वहाँ पर ठहरने का आग्रह किया। हनुमान जी वहाँ से अत्यन्त शीघ्र ही प्रस्थान करना चाहते थे, अतएव उन्होंने उत्तर देते हुए यह वचन कहे। हे पर्वत मेनका ! आप किसी प्रकार के भ्रम में मत पड़िए। मैं बहुत ही शीघ्रता में हूं। इसके लिए मुझे क्षमा कर दीजिए। राम मेरी प्रतीक्षा में होंगे।

वे यह आशा करते होंगे कि मैं शीघ्रातिशीघ्र सीता की खोज करके उनको आवश्यक सूचना दूंगा।

16

कोई भी अन्य व्यक्ति आपके समकक्ष या आपके सदृश नहीं है। आंप वायु देवता के मित्र हैं, इसीलिए आपसे बढ़कर अन्य कोई मेरे लिए पूज्य नहीं हो सकता। मैं अतिशीघ्र ही रावण का पता लगाना चाहता हूं। उसका रुप कैसा है, उसे भी देखना चाहता हूं। सारा संसार उसके नाम से चौंकता है और भयभीत होता है। मैं उसकी शक्ति से टक्कर लेना चाहता हूं। यदि वह एक प्रवीर है, तो मुझसे युद्ध करे।

17

मैं लंकापुरी को नष्ट भ्रष्ट कर दूंगा। यहाँ तक कि वहाँ कोई भी राक्षस अब शेष जीवित नहीं बच सकेगा। राक्षस समूह देवताओं का शत्रु है। उन सभी का मैं वध करना चाहता हूं। मैं इस संसार के कल्याण की आशा करता हूं। मेरी अन्य कोई इच्छा नहीं है। हनुमान ने इस प्रकार के वचन कहे। इसके पश्चात वे शीघ्र ही वहाँ से उड़ गये।

18

मार्ग में उन्हें एक अन्य भयानक राक्षसी मिली। उसका नाम विक्कटाक्षिणी था। उसका आकार भी बहुत बड़ा था। उसको सागर तल पर घूमने मे अपार आनंद आता था। वह समुद्र में आनंद से मछलियाँ पकड़ती थी। सदैव ही वह मछलियों का आहार किया करती थी।

19

उसने आकाश की ओर दृष्टि डाली। तत्पश्चात आकाश में उड़ गयी। उसने हनुमान जी का बड़ी तीव्र गति से पीछा किया। उसने उनको शीघ्र ही अपनी बाहों में भर लिया तथा निगलने की चेष्टा करने लगी। अपनी पूर्ण शक्ति लगाकर उसने हनुमान को खाने का यत्न किया। उसने हनुमान का वध करने के लिए उन पर आक्रमण भी किया।

20

वह राक्षसी हनुमान को केवल अपने गले तक ही निगल पाई थी, उसी समय हनुमान ने भी अपने आकार को और अधिक विशाल बना दिया। वे फूल कर बहुत चौड़े बन गये। उन्होंने अपने शरीर को वज्र की भाँति बना दिया। इस परिस्थिति में विकटाक्षिणी का दम घुटने लगा। उसकी आँखें फटकर बाहर निकलने लगीं।

हनुमान को निगलना अब उसके लिए बहुत दुष्कर हो गया था।

21

उस राक्षसी की गरदन पर हनुमान ने नखों से भीषण प्रहार किया। उसकी गरदन में उन्होंने नख भोंक दिये, जिससे उसकी गरदन फटने लगी। उसी समय उन्होंने उसके गले पर पद प्रहार किया, जिससे उसकी गरदन फट कर दो भागों में हो गयी। उसको चीरते हुए उन्होंने उसे काट भी खाया, जिससे उसकी गरदन टूट गयी। अन्त में वह मर कर गिर पड़ी। उसके पश्चात हनुमान जी शीघ्र ही आकाश में उड़ गये।

22

सागर को पार करने के पश्चात वे शीघ्र ही सुवेला पर्वतमाला पर आ गये। वहाँ उन्हें अधिक गतिविधियाँ दिखायी दे रही थीं। वहाँ बहुत से भयानक राक्षस भी दिखायी दिये, जो तरह-तरह से उस स्थान पर आनंद विहार कर रहे थे। हनुमान जी ने बहुत से राक्षसों को मार्ग में आते-जाते देखा। इस परिस्थिति में उन्होंने अपने को वहाँ पर छिपा लिया, जिससे राक्षसों को उनके वहाँ आने का पता न लग सके।

23

हनुमान ने बड़ी ही कुशलता से अपनी यात्रा पूरी की और लंका में प्रवेश किया। उनके अभियान का प्रथम चरण अब पूरा हो चुका था। उन्होंने दिवस में अपना आकार केवल एक शशक के समान हो रक्खा। उन्हें राम की वे सभी शिक्षाएँ पूरी तरह याद थीं जो राम ने लंका अभियान से पहले दी थीं।

24

जब हनुमान जी लंकाद्वीप के दक्षिणी भाग की ओर बढ़े, तो उन्हें मार्ग में बहुत विकट बाधाएँ दिखायी दीं। उस क्षेत्र में बहने वाली नदियों में बड़े - बड़े प्रस्तर खंड पड़े थे। नदियाँ बहुत ही चक्करदार थीं। वे घुमाव लेकर बह रही थीं। पर्वतमालाएँ नगर की चहारदीवारी बना रहीं थीं जो अभेद्य कही जा सकती थीं। यह स्थिति उन्हें बहुत ही भयावह सी प्रतीत हो रही थी।

25

हनुमान जी ने बाद में नदियों को पार किया। किसी प्रकार रात भी व्यतीत हुई। रात्रि के अन्धकार में दशों दिशाओं में अन्धकार की काली रेखाएँ वस्तुओं को आच्छादित किये हुए थीं। अतएव रात्रि के गहन अन्धकार

में वे रावण की राजधानी में प्रविष्ट हुए। उन्होंने देखा कि नगर में सुन्दर विशाल भवनों की पंक्तियाँ हैं, जो एक दूसरे के बहुत निकट हैं। उनका क्रम सुव्यवस्थित एवं आकर्षक है।

26

लंका नगर के विशाल मार्गों में हनुमान को अन्य बहुत से राक्षस भी दिखायी दिये। वे सेना के उच्च अधिकारी थे। सभी चारों ओर झुण्ड बनाकर घूम रहे थे। उनके हाथों में मशालें थीं। उन्हीं को हाथों में लेकर वे नगर की रखवाली कर रहे थे। इस प्रकार नगर की सुरक्षा की विशेष व्यवस्था थी। हनुमान जी डर रहे थे कि कहीं उनको वहाँ कोई देख न ले। इसलिए उन्होंने अपने को बड़ी कुशलता से छिपा लिया था। राक्षस उनको देख नहीं सके।

27

राजमार्गों के किनारों पर बहुत से लोग आपस में वार्तालाप भी कर रहे थे। बड़ी कुशलता से चतुरतापूर्वक अपनी रक्षा करते हुए हनुमान जी उनके निकट गये। उन्होंने राक्षसों की बातचीत का रस लिया। यद्यपि हनुमान से उस वार्तालाप का कोई संबंध नहीं था, उन्होंने स्पष्ट ही यह सुना कि सभी राक्षसगण रावण के अपार गुणों और भलाइयों की भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे।

28

कुछ राक्षसंगण वहाँ पर मदिरा–पान कर रहे थे। मदिरा पीकर वे नृत्य भी कर रहे थे। इस प्रकार वे लोग हर्षोल्लास और आनंद मना रहे थे। कुछ राक्षस गीत गा रहे थे तथा मधुर संगीत का रस ले रहे थे। कुछ ऐसे भी थे, जो बांसुरी वादन कर रहे थे। कुछ लोग हास परिहास करते हुए हास्य का रस ले रहे थे। कुछ राक्षस आनंद मनाने के लिए पुष्पहार धारण कर रहे थे। उस नगरी की तुलना केवल स्वर्ग से ही की जा सकती थी, जहाँ सभी की मनोकामनाएं पूरी हो रही थीं।

29

वहाँ पर एक बहुत विशाल कक्ष दिखाई दिया। हनुमान जी ने उसी को अपना लक्ष्य बनाना चाहा। उन्होंने उसी के भीतर प्रवेश करने का निर्णय किया। उस कक्ष में सभी पंडित कोटि के राक्षस बैठे हुए थे। वे सभी साथ–साथ मंत्रों का प्रयोग कर रहे थे, जिससे जादूगरी का सफल प्रयोग किया जा सके।

30

एक दूसरा व्यक्ति वज्रकाय मंत्र का प्रयोग कर रहा था। वज्रकाय मंत्र का प्रयोग इसलिए किया जाता था कि मनुष्य उसके प्रयोग से गूंगा होकर एक भी शब्द बोलने में असमर्थ हो जाय। ऐसे भी विभित्र कठिन मंत्रों का प्रयोग किया जा रहा था, जिनसे कोई एक स्थान से दूसरे स्थान पर गतिशील होकर न जा सके। अपने स्थान से हिल न सके। यह सब बार-बार तालियाँ बजाकर किया जा रहा था। कभी-कभी वे राक्षस-पंडित पृथ्वी पर लेट जाते थे। खड़े होकर वे कमर हिलाते थे। इस प्रकार उनके सभी कृत्य बहुत ही पाशविक थे। उनका ठहाका मार-मार कर अट्टहास करना और हंसना बहुत ही भय उत्पत्र कर रहा था।

31

वहाँ पर यह सब कृत्य उचित माना जाता था। राक्षस-पंडित झूठ, कपट, छल आदि बुराइयों का अध्ययन करते थे। उसी विषय में वहाँ विधिवत पाठ पढ़ाये जाते थे। यह कपट विद्या राक्षसों के लिए उचित ही थी। वे एक दूसरे की आलोचना करते हुए छिद्रान्वेषण भी कर रहे थे। इसी वाद विवाद में कभी-कभी पारस्परिक संघर्ष भी हो रहा था। कहे जा रहे मंत्रों की व्याख्या भी की जा रही थी। यदि उनमें कुछ राक्षस-पंडित उच्चरित किये जा रहे उन मंत्रों का उचित अर्थ नहीं निकाल पाते थे तो उनके प्रति क्रूर शब्दों का प्रयोग भी किया जाता था। इतना ही नहीं, उचित अर्थ न लगा पाने पर गाली अथवा अपशब्दों का प्रयोग भी किया जाता था।

32

एक वर्ग उन अन्य लोगों का भी था, जो व्यापार करते थे। वे मांस बेचते थे। विशेष रुप से एक ऐसा भी वर्ग था जो नर मांस की दुकानें चला रहा था। नर-मांस सदैव ही राक्षसों का भोजन रहा है। वे मदिरापान करने में भी अपार आनंद का अनुभव करते थे। राक्षसों को मनुष्य का रक्त पीने में विशेष रस आता था। इस प्रकार लड़ा ई झगड़ा करते हुए वे परस्पर भद्दे शब्दों अथवा अपशब्दों का प्रयोग कर रहे थे।

33

कुछ ऐसे भी राक्षस थे जो अत्यधिक मदिरापान करते थे। वे कभी-कभी पका हुआ मांस अथवा कच्चा मांस, जो भी मिल पाता था, उसी का प्रयोग कर लेते थे। कुछ राक्षस मनुष्यों की जांघें काट रहे थे। वे उससे माँस निकाल-निकाल कर रख रहे थे। बाद में उससे गाडो-गाडो अथवा एक प्रकार की मिली-जुली सब्जी-सी बना रहे थे। इस प्रकार नर-मांस का भाँति-भाँति से प्रयोग वे कर रहे थे। उनमें कुछ ऐसे भी राक्षस थे जो उबली हुई पत्तियों को खा रहे थे।

34

राक्षसगण बड़े-बड़े पात्रों में मदिरापान कर रहे थे। मांस का भोजन भी रक्त के द्वारा पकाया गया था। वे कभी-कभी तो एक ही बार में सम्पूर्ण सुरापात्र की मदिरा उड़ेल कर निगल जाते थे। सभी राक्षस अत्यधिक मदिरापान कर परस्पर बहुत उच्च स्वरों में वार्तालाप कर रहे थे।

35

निकट ही में सेना के प्रमुख अधिकारियों का एक प्रधान वर्ग भी मदिरापान में मग्न था। सभी अपनी तलवारें म्यान से बाहर निकाल कर सुरक्षा के लिए अपने पास रक्खे हुए थे। वे बहुत अभिमानी भी थे। मदिरा पीने के पश्चात वे सभी उठ खड़े हुए। वे भाँति-भाँति के अस्त्र शस्त्रों गदा आदि को घुमा रहे थे। अपने अपार बल का इस प्रकार वे परिचय दे रहे थे।

36

कुछ ऐसे राक्षस भी थे जो भाँति-भाँति की गाड़ियाँ, रथ अथवा यान चला रहे थे। कुछ राक्षस आकाश में वायुयान उड़ा रहे थे। वे प्रसन्नपूर्वक आकाश की परिक्रमा कर रहे थे। कुछ राक्षसगण गाड़ी, रथ, हाथी तथा घोड़ों की सवारियाँ चला रहे थे अथवा उन पर सवार थे। रात्रि के समय वे आनंद-उत्सव मनाते हुए प्रसन्नता से अपना समय व्यतीत कर रहे थे।

37

दूसरे अन्य राक्षसों ने अपना कार्य समाप्त कर लिया था। उनका कार्य दूसरों पर आधिपत्य स्थापित करना था। शत्रुओं को युद्ध में पराजित करने तथा अपने साथ युद्धबन्दियों को लाने का दायित्व भी वे पूरा कर चुके थे। वे निरन्तर स्वादिष्ट भोजन करते रहते थे। प्रसन्नतापूर्वक अपने उल्लास को व्यक्त करते हुए वे परस्पर मधुर वार्तालाप करते रहते थे। भाँति-भाँति के पुष्पहार भेंट कर वे विजयोल्लास मना रहे थे तथा तरह-तरह की इत्र आदि सुगन्धित वस्तुएँ प्रयोग में ला रहे थे। वे अपने कंधों पर पेटी धारण किये सैनिकों की भाँति सुसज्जित थे।

38

वहाँ पर स्त्रियों का एक विशाल समूह भी था, जिससे राक्षसगण अपना मनोरंजन कर रहे थे तथा उन्हें अपने पास आने का निमंत्रण दे रहे थे। कभी-कभी वे तरुणियाँ मौन हो जाती थीं। वे कभी-कभी क्रुद्ध स्वरुप भी धारण करती थीं। हास-विलास के कारण उन्हें कठिनाई का अनुभव होता था। कभी-कभी तो राक्षसगण बड़े प्रेम से उन स्त्रियों को मदिरापान के लिए बुलाते एवं उनसे मधुर संभाषण करते थे। वे मदिरा पीने से कभी-कभी

इन्कार भी करती थीं, परन्तु युवक राक्षस उन युवतियों को अपनी ओर आकर्षित करने में बहुत ही रुचि लेते थे। वे उनको अपने पास बुला बुला कर उनसे मीठी-मीठी बातें करते थे। वे उसके पश्चात आलिंगन करते हुए उनका चुम्बन भी कर रहे थे। यह अशिष्ट दृश्य हनुमान से देखा नहीं गया। उन्होंने आँखे बन्द कर लीं।

39

हनुमान आगे बढ़ गये। उन्होंने उन राक्षसों को परस्पर एक दूसरे के साथ हास-परिहास करते हुए तथा आनंद-उल्लास मनाते हुए देखा। परस्पर उनका उल्लास देखकर हनुमान बहुत प्रभावित हुए। उनको राम की कठिनाइयों एवं विरह-व्यथा का स्मरण हो आया। राम सीता के वियोग में कितने व्याकुल थे, इस पर भी उनका ध्यान गया। राम की गहरी विरह वेदना का उन्हें पूरा आभास भी होने लगा।

40

राम की वेदना का अनुभव कर वे अत्यधिक दुखी हो उठे। इस प्रकार उन्हें भी अपार कष्ट हो रहा था। इसके पश्चात उन्होंने उन राक्षसों पर दृष्टिपात ही नहीं किया, जो पारस्परिक हास-परिहास करते हुए मदिरापान कर रहे थे। उनका मन अब स्वयं दुःखी था। वे अब राक्षसों की कविताओं तथा गीतों को भी ध्यान से नहीं सुन रहे थे। उन्हें उनसे भी बहुत कष्ट का अनुभव हो रहा था। इस दृश्य को देखकर उन्हें राम की विरह-व्यथा का बार-बार स्मरण हो रहा था। इस विषय पर सोचते रहने से उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी।

41

धीरे-धीरे रात्रि का समय व्यतीत हो चला था। उस समय लगभग एक बज रहा था। यह दिनांक सोलह की सन्ध्या थी। चन्द्रदेव आकाश पर सुशोभित हो कर अपनी किरणें बिखेर रहे थे। इसीलिए अन्धकार का विनाश होता जा रहा था। जैसे भगवान विष्णु के प्रकट होने पर दैत्य समुदाय इधर उधर भाग कर छिपने लगता है, उसी प्रकार चन्द्र किरणों के प्रकट होने से तिमिर का नाश हो गया था।

42

अत्यन्त शीघ्रता से चन्द्रमा आकाश पर चढ़ने लगा। वह बहुत ऊंचा उठ गया तथा उदयगिरि पर सुशोभित होकर दृष्टिगोचर होने लगा। ऐसा लगता था मानो वह लंकानगरी की सुन्दरता को निहार रहा हो। सबसे ऊंचे स्थान उदयगिरि पर चढ़कर वह लंका की सुन्दरता को पर्वत-शिखर से देख रहा था।

43

हनुमान जी ने दशों दिशाओं की ओर दृष्टिपात किया। उनको सभी वस्तुऍं स्पष्ट ही दिखायी दे रही थीं। उन्हें स्वर्ण एवं स्फटिक से बना हुआ एक ऊंचा एवं विशाल मन्दिर भी दिखायी दिया।

44

उस मन्दिर की भित्ति पर एक शशक का चित्र बना हुआ था। वास्तव में सुवर्ण से ही यह सभी मूर्तियां एवं चित्र बनाये गये थे। उनमें गज, सिंह, चीता, हिरन, बराह तथा गैंडे प्रधान रुप से चित्रित किये गये थे। वन-प्रदेश का एक चित्र भी बनाया गया था। एक राज-प्रासाद का भी चित्र था, जो एक पर्वत श्रेणी की भाँति चित्रित किया गया था।

45

चन्द्रकान्त मणियों से उस मन्दिर का प्रांगण निर्मित किया गया था। भाँति-भाँति के अन्य मणिमुक्ता भी उसमें जड़े हुए थे। चारों ओर उस मन्दिर से जैसे स्वर्ण की किरणें फूट रही हों। वहाँ पर आसपास सिकताकण भी चन्द्रमा के प्रकाश में रजत की भाँति चमक रहे थे। अब चन्द्रमा पूर्ण रुप से निकल आया था, इसलिए चन्द्रकान्त मणियाँ द्रवित होकर शीतलता बिखेर रही थीं। मन्दिर का पूरा प्रांगण द्रवित एवं निर्मल था। वहां पर अनुपम स्वच्छता एवं सुन्दरता का आभास हो रहा था।

46

स्फटिक की भाँति स्वच्छ यह मन्दिर मन्दराचल पर्वत सा सुशोभित हो रहा था। उसका प्रांगण क्षीर-सागर की भाँति श्वेतवर्ण का था, जिसमें मणि, मुक्ता एवं मोती क्षीर सागर के फेन की भाँति तैर रहे थे। वह स्थान बहुत ही स्वच्छ एवं शीतल था। ऐसा लग रहा था जैसे अमृत की धाराऍं वहाँ पर बह रही हों और अमृत छलक-छलक कर बाहर निकल रहा हो।

47

मन्दिर की चहारदीवारी किरणों से चमक रही थी। उस मन्दिर को सभी प्रकार से सजाया गया था। विशाल लहरों की भाँति सुव्यवस्थित प्रांगण प्रस्तुत किये गये थे। मन्दिर के भीतर से गामलान वाद्य यंत्रों की ध्वनि सुनायी दे रही थी। वे यंत्र निरन्तर बजाये जा रहे थे। उनका स्वर ऐसा था जैसे सागर की लहरें गुरु गंभीर गर्जना कर रही हों और उनकी ध्वनि वातावरण में गूंज रही हो।

48

उनके बाह्य भाग पर बहुत से चक्राकार भित्तियों के घेरे थे। वहाँ पर भी बहुत से छोटे-छोटे सुन्दर मन्दिर बने हुए थे। सभी छोटे-छोटे मन्दिरों पर बहुत से चित्र उत्कीर्ण किये गये थे। इन मन्दिरों का निर्माण काले पत्थरों अर्थात संगमूसा से किया गया था। इस प्रकार उस विशाल मन्दिर के आस पास के यह छोटे-छोटे मन्दिर चारों ओर इस प्रकार खड़े थे जैसे सागर तट पर मूंगे की चट्टानें स्थित हों तथा तटों को चारों ओर से घेरे हुए हों।

49

इन सभी मन्दिरों के बाहर एक विशाल प्रासाद बना हुआ था। मन्दिरों की ही भाँति उसमें भी स्वर्ण प्रतिमाएँ शोभा पा रही थीं। ऐसा प्रतीत होता था जैसे अमृत मंथन के अवसर पर देव और दानव दोनों ही साथ - साथ अमृत प्राप्त करने के लिए वहाँ आगे बढ़ रहे हों। उन दोनों के लिए अमृत ही सबसे आवश्यक एवं महत्वपूर्ण था। उसी का सबसे अधिक आकर्षण भी था।

50

यह सभी मूर्तियां भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्र धारण किये हुए थीं। किसी के पास गदा, किसी के पास भाला, किसी के पास धुनषबाण तो किसी के पास फेंकने वाले भाले की भाँति के अस्त्र, तलवार, आक्रामक चक्र आदि सुशोभित हो रहे थे। ऐसी भी मूर्तियां थीं, जिनके हाथों में वज्र सुशोभित हो रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि वे देवताओं से अमृत घट छीनने के लिए युद्ध करने के उद्देश्य से प्रस्तुत की गयी हों।

51

मूर्तियों के स्थान के समीप एक द्वार भी था, जिस पर माणिक एवं चन्द्रकान्त मणियों से सुन्दर चित्र उत्कीर्ण किये गये थे। उनकी गोलाकार बड़ी-बड़ी आँखें इतनी सजीव थीं कि वे दृष्टिपात करती सी दिखायी पड़ रही थीं। वे राहु की भाँति देवताओं से अमृत घट छीनने के लिए प्रस्तुत की गयी सी लगती थीं।

52

यह दृश्य कालकूट विष से संबंधित था। राहु उसी द्वार से निकल कर भागा था, जहाँ से उसे मार्ग मिला। जिन देवों ने उस पर कृपा की थी तथा उसके सभी पापों और अपराधों का निवारण किया था, उन्हीं देवताओं की स्थापना इन मन्दिरों में की गयी थी। उनका वहाँ पर सदैव निवास मान्य था। राक्षसों के भी वे ही पूज्य देवता थे। वे उन पर कृपालु थे।

53

आवरण से बाहर एक सुन्दर कल्पवृक्ष दिखायी दे रहा था। कल्पवृक्ष सुव्यवस्थित ढंग से लगाया गया था। वह हरित वर्ण का एवं आकर्षक था।

54

कल्पवृक्ष के निकट स्वर्ण से बना हुआ एक विशाल मंडप था। उसकी आधारशिला के पत्थर हरिताभ से हरे रंग की चमक दे रहे थे। उनमें सभी में देवों की मूर्तियाँ प्रतिष्ठित थीं। वे सभी देवता राक्षसों के पूज्य थे।

55

वहीं पर मोतियों की बड़ी–बड़ी मालाएँ लटक रहीं थीं। ऊपर छत्र भी लगा हुआ था। देवताओं के वाहन भी तैयार किये गये थे। गज, छत्र सहित रथ, मणि माणिक, सुवर्ण आदि अन्य प्रधान वस्तुएँ जो समुद्र–मन्थन के फलस्वरुप प्राप्त हुई थीं, वहाँ सुशोभित थीं। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे वे किरणों की भाँति ही चमक रही थीं।

56

देवगृह सुवर्ण से बना हुआ था। उसका निर्माण भी बड़े ही सुव्यवस्थित ढंग से किया गया था। वे सभी मन्दिर सुवर्ण की आभा के कारण किरणों की भाँति चमक रहे थे। यह वास्तव में घूमनेवाली गाड़ी थी, जिसको बड़े मन्दिर के प्रांगण के बाहर की ओर रक्खा गया था। इसी से आकाश मार्ग की यात्रा भी की जाती थी। इस विशाल रथ को वायुयान की भाँति उड़ाने के काम में लाया जाता था।

57

बाहर की ओर चारो ओर एक उंची भित्ति सी स्थित थी, जिसके किनारों को श्वेत रजत से ढका गया था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे नागराज वासुकि कुण्डली मार कर वहाँ विश्राम कर रहे हों। क्षीर–सागर के मन्थन के पश्चात जैसे वे श्रान्त होकर लेट गये हों।

58

वहां किरणों की भाँति चमकदार लाल मणियों के पत्थर झिलमिल–झिलमिल कर रहे थे अर्थात

उसका प्रधान द्वार गैंडे के सींग की भांति चमक रहा था। उसके द्वार पर दो राक्षसों की मूर्तियाँ द्वारपालों की भाँति सुरक्षा के लिए बनायी गयी थीं। उनके विशाल दन्त तीक्ष्ण एवं नुकीले थे।

59

एक विशाल देवगृह लंकापुरी में हनुमान जी को दिखायी दिया। वह अत्यन्त सुन्दर था। उसकी शोभा एवं चमक बहुत ही आकर्षक थी। उसकी प्रकाश-किरणें बड़ी ही चित्ताकर्षक एवं चमकीली थीं। जैसे-जैसे चन्द्रमा की किरणें निखरती जाती थीं, वैसे ही वैसे उनके प्रकाश से वातावरण उज्जवल दिखायी देने लगता था। वह मन्दिर भी चाँदनी में स्नान कर आलोक युक्त एवं प्रभायुक्त हो रहा था। चन्द्रमा की किरणों के कारण मन्दिर पर जैसे सौंदर्य-राशि बिखर रही थी।

60

देवी सीता निश्चय ही यहीं कहीं होंगी, यह अनुमान हनुमान जी ने लगाया। उस समय उनके हृदय में यही विचार आया। उसके पश्चात हनुमान जी और आगे बढ़ गये। हनुमान जी उछल कर अनुमानित स्थान पर भी जा पहुंचे। उन्होंने राक्षसों की एक विशाल सेना को देखा जो सुरक्षा के लिए उस स्थान पर नियुक्त की गयी थी।

61

जो राक्षस वज्र मूर्ख थे, उनको अपार वीरता की अनुपम शिक्षा देकर वहाँ पर नियुक्त किया गया था। वे बहुत ही चतुराई और कुशलता से चारो प्रधान द्वारों की सुरक्षा कर रहे थे। वहीं पर राक्षसों की सेना की नियुक्ति भी विशेष रुप से की गई थी। वे सभी बड़ी योग्यता से चौकन्ने होकर वहाँ खड़े थे। उनका शौर्य अभिमान स्पष्ट ही प्रकट हो रहा था। वे बड़े ही चतुर एवं कार्यकुशल थे। वह विशालकाय एवं शक्तिशाली थे।

62

उनकी दाढ़ियों के बालों के गुच्छे लाल वर्ण के दिखायी दे रहे थे। उनकी मूंछे बहुत घनी और बड़ी थीं। उनके वक्षस्थल पर भी बड़े-बड़े बाल थे, जिनको देखकर भय सा उत्पन्न हो जाता था। उनकी भुजाएँ और कंधे चौड़े-चौड़े थे। उनका स्वभाव, प्रकृति और चरित्र किसी सिंह से कम नहीं था। उनके मुख के दाँत बाहर निकले हुए, बड़े, नुकीले एवं तीक्ष्ण थे। यदि मृत्यु के देवता यमराज भी उन्हें देख लेते, तो उनके भय से उनका आदर एवं सत्कार करने लगते।

63

जब हनुमान ने वहाँ पर एक विशाल राक्षस समूह देखा, तो वे वहाँ से कुछ हटकर दूर चले गये। नगर की विशाल चहारदीवारी की ओर जाकर वे उसके और निकट चले गये। वहाँ पर वे बड़ी कुशलता से शीघ्र ही उस भित्ति के ऊपर चढ़ गये। वहीं से उन्होंने महादेवी सीता को ढूंढ़ने का प्रयास किया। देवी सीता उनको वहाँ पर कहीं भी दिखायी नहीं दीं। अतएव प्रयास करके भी वे सीता की अब तक खोज न कर सके। इसीलिए शीघ्र ही वे उस स्थान को छोड़कर अन्यत्र चले गये।

64

उन्होंने देखा कि युवा राक्षस-गण युवतियों के साथ आनंद मना रहे थे। बहुत से राक्षस, चन्द्रमा की शीतल किरणों के स्पर्श से, विरह की ज्वाला में जल रहे थे। वे सभी उपाहार गृह के पास जा पहुंचे तथा युवतियों के निकट जाकर उनसे प्रेम का प्रस्ताव करने लगे। युवतियों - प्रेमोन्मत्त स्त्रियों को रिझाने का भी प्रयास वे कर रहे थे। उन्हें अपने साथ-साथ नृत्य करने के लिए उन्होंने निमंत्रण दिया। बाद में सभी युवकों एवं युवतियों ने मिलकर नृत्य किया। हनुमान यह सब देख कर लज्जा का अनुभव कर रहे थे, पर भेद लेने की उत्कट इच्छा के कारण वे यह सब देखने के लिए विवश से थे।

65

जब नृत्य करते-करते सभी श्रान्त हो गये तो वे एक साथ बैठ गये। उपाहार गृह में कार्य करने वाली युवतियों ने आगे बढ़कर उनको सुरापान कराया। भाँति-भाँति के मधुपान कराये गये, जिनमें प्रधान रुप से अंगूरी मदिरा तथा अन्य कई विशेष प्रकार की मदिराएं थीं। वे सभी प्रेमोन्मत्त होकर फिर आनन्द मनाने लगे। उन्होंने वहाँ पर पूर्ण तृप्ति के साथ भोजन भी किया।

66

अन्य राक्षसगण भी प्रसन्नतापूर्वक निरन्तर मदिरापान करते जा रहे थे। उनकी सुरा सुगन्धित एवं स्वच्छ थी। जिन चषकों में वे मदिरा पी रहे थे, वे शीशे की भाँति निर्मल एवं स्वच्छ थे। ऐसा प्रतीत होता था कि चन्द्रमा की किरणें ही पिघल कर सुन्दर चषकों में सुरा के रुप में छलछला रही हों। विशेषता यह भी थी कि वे प्रेमी राक्षसगण राहु की भाँति मदिरापान करते हुए आनंद एवं उल्लास में आकंठ निमग्न थे।

67

कुछ अन्य प्रेमी राक्षसगण अपनी प्रेमिकाओं से उनके कटु व्यवहार के कारण ईर्ष्यालु भी हो रहे थे। कुछ प्रेममग्न थे और कहते थे कि जीवन का रस भी इच्छाओं की तृप्ति में ही है।

68

हनुमान जी ने बहुत से ऐसे राक्षस योद्धा भी वहाँ पर देखे, जिनकी आकृतियाँ बहुत ही भयानक थीं। उन्हें देखने से बड़ा भय लगता था। देवराज इन्द्र भी उनके भय से प्रकम्पित रहते थे। वे असाधारण रुप से भयावने थे। हनुमान जी उनको देखकर तनिक भी भयभीत नहीं हुए। लेश मात्र भी वे नहीं चौंके। हनुमान ने वहाँ के प्रत्येक भवन को भली भाँति खोज-खोज़ कर सीता का पता लगाने का प्रयास किया।

69

राक्षसगण इस बात को कभी नहीं जान सके कि हनुमान सीता की खोज करने के लिए वहाँ आये हुए थे। हनुमान ने भी जादू की शक्ति से राक्षस का सा रुप धारण कर लिया था। उन्होंने सोचा कि ये राक्षसगण वज्रमूर्ख हैं। ये नीच आलस्य के कारण ध्यान नहीं दे पायेंगे, इसीलिए पहचान नहीं सकेंगे। स्वाभाविक रुप से ही ये सभी अभिमानी एवं नीच चरित्र के होते हैं। यह बात हनुमान जी ने अपने मन में सोची और अपना कार्य प्रारम्भ किया।

70

वे सीता की खोज करने के लिए राजमहल में प्रवेश कर गये। वहाँ उन्होंने सुवर्ण से बनीं हुई भाँति-भाँति की सुन्दर वस्तुएँ देखीं। सुवर्ण के भवन भी उन्होंने देखे। उनमें उन्होंने एक स्वर्ण-महल भी देखा। यह रावण का ही राजमहल था, जहाँ रावण आनंदमग्न होकर क्रीड़ा किया करता था। वहाँ पर भाँति-भाँति की सुन्दरियां तथा अप्सराएँ पुष्पमालाओं को धारण किये हुए उसके साथ आनंद-विहार कर रहीं थीं। वहाँ अनेक स्त्रियाँ एवं सुन्दरियाँ उपस्थित थीं।

71

राजमहल की सुन्दरियों के समकक्ष रति का सौन्दर्य भी गौण-सा प्रतीत हो रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे रावण की सुन्दरियों ने उन पर आक्रमण करके उन्हें सौंदर्य के क्षेत्र में परास्त कर दिया हो। उनकी भावभंगिमाएँ, हाव-भाव एवं गतिविधियां आनन्दित करने वाली थीं। उनका व्यवहार बहुत ही मृदु था। उनके नेत्रों के संकेत एवं उनके नेत्र-बाण अपने लक्ष्य का वेध निश्चय ही कर सकते थे। वे हास-परिहास एवं मधुर वार्तालाप में पूर्णरुपेण निपुण थीं। प्रेमकलापों में उनकी गतिविधियां हंस-लीला की भाँति थीं। जहाँ तक प्रणय-व्यापार एवं प्रेम से संबंधित क्रियाकलापों का स्वरुप था, उसमें वे पूर्णरुपेण पारंगत थीं। उनको प्रेमलीला का पूरा ज्ञान था। अतएव उनको प्रणयलीला का गुरु स्वीकार किया जा सकता है। वीर हनुमान लंका का यह विलासमय रुप देखकर संकोच से गड़े जा रहे थे।

72

काम–देवता का वहाँ निवास था। उसने कभी भी अपने बाणों एवं धनुष को वहां नीचे नहीं रक्खा था, वरन सदैव ही उसका प्रयोग किया था। उसके बाणों के लिए लक्ष्य एवं मृगया के पशु उसे बड़ी सरलता से प्राप्त हो जाते थे। सुन्दरियाँ सदैव ही एक के बाद एक स्वरुप परिवर्तित कर नेत्र–बाणों से प्रेमियों के हृदय को बेध रही थीं। उनकी भौहें एवं पलकें तीव्रगति से संचालित हो रही थीं अर्थात उनके नयन–बाण अत्यन्त तीव्र थे और लक्ष्य–वेध में अचूक थे।

73

वहाँ हनुमान को कई अप्सराएँ दृष्टिगोचर हुई। वे मानो उज्जवल किरणों के जाल बिखेर रही हों। किरणों की चमक बहुत ही तीक्ष्ण् थीं। वे चारों ओर प्रकाशपुंज बिखेर रही थीं। इसके पश्चात वहाँ पर एक वायुयान को देखकर हनुमान जी के आश्चर्य की सीमा न रही। वह वायुयान अपनी चमक से जैसे स्वच्छ निर्मल किरणें बिखेर रहा हो। यह विमान जगत–प्रसिद्ध पुष्पक विमान ही था। इसकी अपेक्षा अन्य कोई भी वायुयान इतना आकर्षणयुक्त नहीं हो सकता था।

74

पुष्पक विमान की उपमा केवल मन्दराचल पर्वत से ही दी जा सकती थी। उस विमान की गति की उपमा केवल मन की गति अथवा विचारों की गति से ही हो सकती थी। जहाँ तक उसकी प्रकाश–किरणों का संबंध है, उसके प्रकाश के समक्ष सहस्रों सूर्य भी उसकी उपमा में नहीं ठहर सकते थे। उसका भीषण रुप बहुत ही भयानक था। उसका मुख जैसे राहु राक्षस के मुख की भाँति था।

75

वहाँ पर राजमहल में हनुमान ने रावण को शयन करते देखा। उसका विशालकाय शरीर पर्वत श्रेणी के समान था। अनेक सुन्दरियाँ उसकी सेवा में रत थीं। उसको संसार की कोई चिन्ता भी नहीं थी। रावण सेवालीन स्त्रियों से हास परिहास कर रहा था। वे स्त्रियाँ अनुमप लावण्यमयी और देवांगनाओं से भी अधिक आकर्षक थीं। उनकी चौडी–चौडी बाहें एवं विशाल वक्षस्थलों से कस्तूरी की सुगन्धि बिखर रही थी। इससे मन चंचल और लुब्ध हो जाता था, पर हनुमान को यह रुप लज्जास्पद सा लग रहा था। उन्हें वे सभी धृष्ट और अशिष्ट लग रही थीं।

७६

उसके (रावण के) शरीर का अस्तित्व स्पष्ट ही कैलाश पर्वत की भाँति था। उसकी विशालता भी पर्वताकार ही थी। उसके बहुत से मस्तक ऐसे प्रतीत होते थे मानों कैलाश पर्वत की ऊंची-ऊंची चोटियाँ हों। उसकी बीसों भुजाएँ वन के घने एवं छायादार विशाल वृक्षों की भाँति थीं।

77

उसकी घनी मूंछों के गुच्छे कुछ लालिमा-सी लिए हुए थे, जो उसकी तीव्र श्वासों की गति के कारण सदैव ही हिलते से प्रतीत होते थे। यह ऐसा लगता था जैसे हिमालय की पर्वत श्रेणियों में कोई वन हो और वायु के झकोरों से उसके वृक्ष हिल रहे हों। शब्द करती हुई तीव्र गति युक्त उसकी श्वास वायु की भाँति बह रही थी।

78

उसको देखकर हनुमान के हृदय में बहुत ही आश्चर्य हुआ। वे वहाँ पर आश्चर्यचकित होकर बहुत समय तक खड़े रहे। उसके पश्चात छिपकर वे सभी ओर देखने लगे। अब उन्होंने रावण का अतुल वैभव देखा।

79

वहाँ पर स्त्रियाँ गंभीर निद्रा में सो रही थीं। इनमें सीता देवी हो ही नहीं सकतीं हनुमान ने अपने मन में ऐसा सोचा। देवी सीता निश्चय ही राम के विरह में जाग रही होंगी। उनको विरह-व्यथा के कारण निद्रा आ ही नहीं सकती। उनके विचारों और मन में केवल राम का स्मरण ही हो रहा होगा। ऐसा सोच कर तुरंत हनुमान जी आगे की ओर बढ़ चले।

80

हनुमान जी को बड़ी उलझन-सी प्रतीत होने लगी। वे भ्रम में पड़ गये। रावण के राजमहल में उन्होंने देवी सीता को नहीं पाया। वे वहां पर उन्हें दिखायी नहीं दीं। इसी स्थान पर देवी सीता का स्थान मिलने की संभावना हो सकती थी। यहीं पर उनके होने का अनुमान हनुमान जी को था। इस प्रकार सोचकर हनुमान जी मन में चिन्तित होकर विचार करने लगे।

81

इससे पहले हनुमान जी ने अब तक कहीं देवी सीता को कभी नहीं देखा था। इसीलिए उछलकर हनुमान जी फिर वानर का स्वाभाविक रुप बनाकर आकाश में उड़ गये यद्यपि वहाँ पर बहुत से राक्षस प्रहरी पहरा दे

रहे थे। वे राजमहल की सुरक्षा कर रहे थे। रात्रि में वे सब गहरी नींद में सोये हुये थे। उनको किसी प्रकार का भी न तो कोई सन्देह ही था और न किसी प्रकार की चिन्ता ही थी। यह परिस्थिति बहुत ही सन्तोषजनक थीं तथा हनुमान जी के पक्ष में थीं। हनुमान जी का हृदय इससे उल्लसित था तथा इस परिस्थिति से वे लाभ भी उठा सकते थे, परन्तु उन्होंने सोते राक्षसों का वध करना उचित नहीं समझा।

82

उनका लक्ष्य केवल सीता देवी की खोज करना ही था। इसकी अपेक्षा वे अन्य किसी बात को सोच ही नहीं सकते थे। देवी सीता का राजमहल में कौन सा स्थान हो सकता है, इसी को वे बार–बार सोच रहे थे। सीता को ढूंढते हुए वे कह रहे थे, हा ! मेरा सभी प्रयास जैसे व्यर्थ–सा प्रतीत हो रहा है। मैं ढूंढ़ते–ढूंढ़ते श्रान्त भी हो गया हूं। मेरी खोज का अब तक कोई अर्थ ही नहीं निकल पाया। मैं देवी सीता को अब तक नहीं खोज सका, इसीलिए मेरी श्रान्ति विशेष रुप से अधिक बढ़ गयी है।

83

यदि मैं देवी सीता की विधिवत खोज कर सका, जो निश्चय श्रीराम मुझसे बहुत ही प्रसन्न होंगे। आजकल वे सीता के वियोग में बहुत ही दुःखी हैं। देवी सीता को भी इससे अपार सन्तोष होगा। इस विषय पर हनुमान जी ने अपने मन में गंभीरतापूर्वक विचार किया। वे कहने लगे कि अभी तक मैं किसी भी रुप में अपना उद्देश्य पूरा नहीं कर सका हूं। मैं देवी सीता की खोज तक नहीं कर पाया। मैं राम का कैसा दूत हूं ? स्वयं भी मैं इस उत्तरदायित्व को पूरा न कर पाने पर हीनता का अनुभव कर रहा हूं। वास्तव में मैं अपना कार्य अभी तक पूर्ण नहीं कर पाया हूं।

84

जितने भी राक्षस यहाँ सो रहे हैं, निश्चय ही मैं उन सबका वध कर सकता हूं। यह सत्य तो भली भांति स्पष्ट है। यदि मैं उन पर घूंसे से प्रहार करु, तो उनके कपोलों की त्वचा निश्चय ही छिल जायेगी। वास्तव में इस कार्य का कोई अर्थ नहीं होगा। मेरा प्रधान उद्देश्य तो सीता की खोज है। यही मेरे लिए सबसे महत्तवपूर्ण कार्य भी है। मैं उन्हें अब तक न पा सका। देवी सीता को खोज पाना मेरे लिए बहुत कठिन है।

85

श्री हनुमान जी ने इस प्रकार अपने मन में विचार किया। उन्होंने बहुत दुःखी होकर अपने हृदय में अपार कष्ट का अनुभव किया। वे भ्रम में पड़ गये। उनका मन इतन दुःखी हुआ कि वे यह निर्णय ही नहीं कर पा रहे थे कि इस परिस्थिति में उंनको क्या करना चाहिए। उसके पश्चात यही सब सोचते हुए हनुमान जी ने इधर–उधर

दृष्टिपात किया। उनकी दृष्टि एक अशोक वृक्ष पर गयी, जिसके पुष्प लाल वर्ण के थे। यह रंग बहुत ही आकर्षक था।

86

लंका नगरी के पूर्वी भाग की ओर एक बहुत चौड़ा, सुन्दर एवं विस्तृत उद्यान था। उसमें भाँति-भाँति के पुष्प खिले हुए थे। उस वाटिका का नाम अशोक-वाटिका रखा गया था क्योंकि उसमें बहुत से अशोक वृक्ष थे।

87

जो कोई भी व्यक्ति वहाँ पर जाता था, वह कभी भी दुःख का अनुभव नहीं करता था। अशोक वाटिका में सुन्दर पुष्पों का अपार सौंदर्य एवं आकर्षण था। उस वाटिका में सभी को अपार आनन्द प्राप्त होता था। जो पुष्प जिस ऋतु के थे, वे ऋतु के अनुसार ही नहीं वरन वर्ष भर खिलते रहते थे। वर्षा ऋतु अथवा ग्रीष्म की शुष्क ऋतु दोनों का ही कोई विशेष प्रभाव उस उद्यान पर नहीं पड़ता था। अतएव किसी भी ऋतु का वहाँ कोई महत्व नहीं था। उस उद्यान का नाम आनंद वाटिका कहा जा सकता था। वह वाटिका सब दुःखों से रहित, आनंद-आगार थी।

88

चन्द्र देवता रावण के उद्यान में सदैव ही सेवा के लिए प्रस्तुत रहते थे। वे दशमुख रावण की आज्ञा का पालन करते थे। रावण का प्रभुत्व तीनों लोकों में छाया हुआ था। वह एक बहुत बड़ा सम्राट था। उसके यहाँ चन्द्रमा की किरणें छिटकती रहती थीं। चन्द्रमा का आकार न कभी घटता था, न कभी किसी प्रकार से उसकी किरणों का प्रकाश कम होता था। सदैव ही वहाँ पर पूर्णिमा का चन्द्रमा दृष्टिगोचर होता था। इस प्रकार अशोकवाटिका में चतुर्दशी की सन्ध्या का चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण कलाओं के साथ दिखायी देता था। चन्द्रमा को रावण का यही आदेश था।

89

वहाँ पर अप्सराएँ पुष्प मालाएँ गूंथने का कार्य कर रही थीं। अशोक वाटिका ही उनके लिए सबसे उपयुक्त स्थान था। उनके लिए पुष्पों से सुगन्धित इत्र बनाना बहुत ही सरल कार्य थ।। पुष्पों से पुष्प मालाएँ बनाने में वे पूर्ण कुशल थीं। वे सभी प्रकार के पुष्पों से इत्र बनाने में निपुण थीं। उनको इस कला में विशेष कौशल प्राप्त था। शरीर पर भाँति-भाँति के अंगराग तथा सुगन्धित इत्र लगाने का उनको गहरा अनुभव था। साज-श्रृंगार एवं

प्रसाधन कला में वे सभी विशारद थीं।

90

वहाँ पर बहुत सी युवती राक्षसियाँ सुरक्षा के लिए नियुक्त की गयी थीं। उनका वेष छद्मपूर्ण और इन्द्रजाल सा था। इसी कारण उनका रुप मन मोहक भी था। वे अपने शरीर पर केवल आवश्यक वस्त्र ही धारण किये हुए थीं। अनके अधोवस्त्र (कटि के नीचे के वस्त्र) कोमल, रेशमी एवं सुन्दर थे। उनके वर्ण भाँति-भाँति के पुष्पों की तरह थे, जो कामीजनों के लिए अत्यन्त चित्ताकर्षक थे किन्तु उन्हें देखकर हनुमान का मन क्षोभ और वितृष्णा से भर उठा।

91

देवी सीता पर दृष्टि रखने के लिए वे राक्षसियाँ नियुक्त की गयी थीं। देवी सीता वहाँ पर अकेली ही थीं। उनकी दशा पर करुणा आती थी। उनको एक बन्दिनी की भाँति रक्खा गया था। वे दुःखी, विरह वियोग से संतप्त, मौन तथा अपार कष्ट का अनुभव कर रही थीं। वहाँ पर केवल राक्षस ही राक्षस दिखायी दे रहे थे। उन (सीता) के प्रति सहानुभूति प्रकट करने वाला वहाँ उनका कोई मित्र भी नहीं था। अतएव वे नितान्त दुःखी थीं ओर चुपचाप अकेली बैठी हुई थीं।

92

हनुमान जी का प्रयास अब सफल दिखायी दे रहा था। देवी सीता की खोज ही उनका एकमात्र उद्देश्य था। धीरे-धीरे आगे चलते हुए हनुमान देवी सीता के निकट आये। वास्तव में यही स्थान उनके इस सम्पूर्ण अभियान का एकमात्र लक्ष्य था। उसके पश्चात वे एक वृक्ष पर चढ़ गये। वे डर रहे थे कि कहीं अशोक वृक्ष की शाखाओं पर सोते हुये पक्षी जाग न जाएँ। आहट से उन्हें चौकन्ना होना पड़ेगा। अशोक वृक्ष पर पक्षी निरन्तर शयन करते रहते थे।

93

शनैः शनैः समय व्यतीत हो रहा था। अब प्रातःकाल की वेला भी आ गयी थी अर्थात प्रातःकाल के सात बज रहे थे। ठंडा-ठंडा पवन बह रहा था जिसके मधुर स्पर्श से वृक्षों की राजियाँ लहरा रही थीं, जैसे वे यह कह रही हों कि अब जागरण की वेला आ गयी है। प्रातःकाल की शीतल वायु पुष्पों को जगाकर दुलराने लगी। वह कोमल पुष्पों की रक्षा करने लगी। उद्यान में अब तक कोई पुष्प अविकसित नहीं था, सभी फूल खिल चुके थे।

94

हनुमान जी को वायु की तीव्र गति के कारण डर–सा लगने लगा था। हवा तीव्र गति से चल रही थी। उन्होंने अनुमान लगाया कि सभी पक्षी प्रातःकाल के समय उठकर जाग गये हैं। वे जानबूझकर वृक्ष की शाखा पर बैठे रहे। वृक्ष की शाखाएँ भी वायु के वेग से शनैः शनैः हिल रही थीं।

95

उस उद्यान में बहुत सी चन्द्रकान्त मणियां भी एकत्रित थीं। जब सूर्य की किरणें उनका स्पर्श करती थीं, तो वे द्रवित हो जाती थीं। उनसे सुधा–रस की बूंदें टपक–टपक कर निरन्तर बहती रहती थीं। यह ऐसा ही था जैसे सीता की आँखों से अश्रुधारा बह रही हो। हनुमान जी ने देखा कि देवी सीता के नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। रात्रि के समय जब सम्पूर्ण विश्व निद्रा की गोद में था, उस समय भी देवी सीता निरन्तर जाग रही थीं। उनको एक क्षण के लिए भी निद्रा नहीं आ पा रही थी।

96

वायु के तीव्र झोंकों से जो पुष्प पृथ्वी पर गिर–गिर कर बिखर गये थे, वे इस प्रकार लग रहे थे जैसे वृक्षों के भी आंसू टपक–टपक कर भूमि पर गिर रहे हों। ओसकण भी गिरते हुए ऐसे लग रहे थे जैसे किसी का ह्रदय करुणा से द्रवित हो रहा हो। ओसकणों के रुप में अश्रु टपक रहे हों। इस अपार कष्ट और दुःख का निरंतर अनुभव करते हुए देवी सीता हनुमान जी को अशोक वाटिका में दृष्टिगोचर हुई।

97

उस समय प्रातः के लगभग आठ बज रहे थे। सभी पक्षीगण नीड़ों से उठ चुके थे। जागृत होकर वे कलरव कर रहे थे। उनके स्वर बड़े ही मीठे एवं मोहक थे। उनका मधुर शब्द ह्रदय को प्रभावित कर रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वृक्ष भी करुणा से द्रवित होकर देवी सीता की व्यथा पर सहानुभूति प्रकट कर रहे हों। दुखी सीता का मन बहलाने की भरसक वे चेष्टा कर रहे हों। देवी सीता विरह दुःख के सागर में डूबी हुई थीं।

98

देवी सीता ने भी पक्षियों को कलरव करते हुए सुना। उनके स्वर बड़े ही मधुर थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वे देवी सीता के दुःखी ह्रदय को प्रसन्न करके बहलाने का पूर्ण प्रयास कर रहे हों। सीता का ह्रदय भी अब प्रसन्नता का अनुभव कर रहा था। उनकी कल्पना एवं विचारों में जैसे श्रीराम सदैव ही उनके साथ थे। वह कौन

अवसर आयेगा, जब राम उनके निकट आयेंगे तथा उनसे मिलेंगे। इस प्रकार सीता रात–दिन राम की ही चिन्ता में निमग्न रहती थीं।

99

हनुमान जी भी पक्षियों के कल–गान को सुनकर बहुत अधिक प्रसन्नता का अनुभव करने लगे। यह लक्षण तो बड़े ही शुभ हैं। उन्होंने अपने हृदय में विचार किया, मेरा प्रयास एवं मेरा परिश्रम व्यर्थ नहीं गया। अन्त में मेरा अभियान सफल ही हुआ। निश्चय ही मैं देवी सीता से भेंट करने में सफलता प्राप्त कर सकूंगा।

100

अशोक वाटिका में अचानक ही ढोल बजा कर उद्घोष किया गया, जिसको सुनकर हनुमान आश्चर्य में पड़कर भौंचक्के से रह गये। उन्होंने सोचा कि यह किसी भीषण परिस्थिति का सूचक है। वह स्वर तीक्ष्ण एवं प्रतिक्षण तीव्रतर–सा होता जा रहा था। इस परिस्थिति से हनुमान जी ने यह अनुमान लगाया कि निश्चय ही कोई विशेष बात है।

101

उस समय सूर्य देवता का उदय हो चुका था। वे गगन प्रांगण पर सुशोभित हो रहे थे। चन्द्रमा की किरणें सूर्य की किरणों के समक्ष आकाश के वर्ण की भाँति पीत वर्ण में परिवर्तित हो गयी थीं। चन्द्रमा भी सीता के दुःख को देखकर अत्यन्त दुःखी था। सीता का शरीर भी शनैः शनैः क्षीण हो रहा था। इसी प्रकार चन्द्रमा की दशा भी थी जिसे देखकर किसी के भी हृदय में करुणा का संचार हो सकता था। चन्द्रमा भी सीता के प्रति सहानुभूति प्रकट करता हुआ कान्तिहीन–सा दिखायी दे रहा था।

102

श्री हनुमान जी बड़े ही चतुर एवं राजनीति–कुशल थे। उन्होंने गिलहरी की भाँति छोटा सा आकार बनाया था जो उनकी राजनीतिक निपुणता के सूचक के रुप में था। उछलते–उछलते वे एक वृक्ष से दूसरे वृक्ष पर कूद कर पहुंच गये। वे अपनी पूंछ को बार–बार हिला रहे थे। इससे वह काँपती हुई सी प्रतीत होती थी।

103

जब हनुमान जी ने पृथ्वी की ओर दृष्टिपात किया, तो उन्हें वहाँ एक सुन्दरी युवती रुदन करती हुई दिखाई

दी। वह सुन्दरी दुःखी होकर घोर कष्ट का अनुभव कर रही थी। उनकी दशा को देखकर किसी को भी उन पर दया आ सकती थी। उन्हें देखकर ऐसा आभास होता था कि यह निश्चय ही कोई विरहणी होगी जो अपने प्रियतम से बिछुड़ कर विरह-विधुरा सी अत्यन्त दुःखी चित्त हो रही है। वास्तव में यह देवी सीता जी ही हो सकती हैं। उन्होंने अपने पूरे विश्वास के साथ यह बात कही। अब हनुमान जी को अपनी अपार सफलता पर पूर्ण सन्तोष था।

104

हनुमान जी जिस ओर भी देखते थे अशोक वाटिका में एक से एक सुन्दर दृश्य दिखायी देते थे। ये दृश्य मन को मोह लेते थे। उन मनोहर दृश्यों को देखकर उनके हृदय में वानर-प्रवृत्ति अर्थात वानरों के सभी गुण एवं विशेषताएं भी जागृत होने लगीं। उन्होंने फिर एक बार नीचे की ओर दृष्टि डाली। वे झाँक - झाँक कर सुन्दर वृक्षों को देखने लगे। वे वहाँ की सौंदर्यमयी छटाएँ देखकर मग्न हो गये। उनका हृदय करुणा से भर आया। क्या विरहीजन अपने जीवन में प्रिय के वियोग में इतना घोर कष्ट उठाते हैं ? देवी सीता को देखकर इसका अनुमान लगाया जा सकता है। हनुमान जी ने इस प्रकार विचार किया। उनके हृदय में अपार करुणा का सागर लहराने लगा। हनुमान ने सीता की दशा देखकर सोचा।

105

उनका शरीर कृशकाय कहा जा सकता था। उनकी अस्थियों के किनारे शुष्क हो कर जैसे बाँस की पेटी की भाँति हो गये थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे कोई अस्थि-पंजर हों। किसी का स्वरुप ऐसी अवस्था में शायद ही देखा गया हो। उनका शरीर सूख-सूख कर काँटा हो गया था। उनके उस पिंजड़े रुपी शरीर में जैसे प्राणों का पक्षी किसी प्रकार बन्द कर दिया गया था। पिंजड़े में बन्द होने के कारण जैसे उस पर घोर अन्याय किया गया हो। विरह-व्यथा से चिन्ताग्रस्त होने के कारण सभी बातों को सोच-सांच कर वे और भी अधिक कष्ट पा रही थीं। प्रति क्षण दुख का अनुभव वे करती रहती थीं।

106

वास्तव में देवी सीता का शरीर क्षीणप्राय, सूखा हुआ तथा धूल-धूसरित सा हो गया था। उनका शरीर मटमैला सा प्रतीत हो रहा था। वे पृथ्वी पर ही शयन करती थीं। धूल से ढका होने पर उनके मुख मण्डल की आभा श्वेतवर्ण की हो गई थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे पूनम के चाँद को किसी पतले एवं छोटे बादल ने आच्छादित कर लिया हो।

107

यद्यपि देवी सीता के लिए वहाँ एक स्वर्ण भवन तैयार किया गया था, पर उन्होंने उसे अस्वीकार कर दिया। उन्होंने अपने शयन का स्थान स्वयं भूमि को ही चुना। श्री राम जिस प्रकार वनों में अपार कष्ट झेलते हुए दुःखी जीवन व्यतीत कर रहे हैं, उसी प्रकार मुझे भी कठिनाइयों एवं दुःखों को सहन करना चाहिए, यह विचार सीता के मन में बराबर बना रहा। अपने इस निर्णय के प्रति वे दृढ़ थीं। उन्होंने जीवन में सभी सुखों एवं साधनों का परित्याग कर दिया था।

108

देवी सीता का हृदय बहुत दुःखी था। प्रतिदिन नीच राक्षसियां भी उनको सताती रहती थीं। उनको विरहिणी सीता के प्रति कोई सहानुभूति भी नहीं थी। सीता को कष्ट दे देकर वे प्रतिक्षण उन्हें दुःख पहुंचाती हुई छेड़ती रहती थी। इस प्रकार उस वियोगिनी के हृदय को और भी अधिक व्यथित करती थीं। वे सभी राक्षिसयां आनंद उल्लास मनाती हुई सीता को दुःखी करने में अपार प्रसन्नता का अनुभव कर रही थीं। वे सीता का ध्यान भी प्रतिक्षण अपनी ओर आकर्षित करने का प्रयास करती रहती थीं। ऐसे कार्यों की वे पारस्परिक रुप से प्रशंसा भी करती रहती थीं।

109

हनुमान जी ने उन नीच राक्षसियों को छेड़-छेड़ कर सीता को दुःखी करते हुए देखा। उन्हें उन्होंने आनंद उल्लास मनाते एवं प्रसन्नता का अनुभव करते हुए भी देखा। इसके पश्चात परस्पर कुछ रहस्यमय वार्तालाप करते हुए उन्होंने उस विरहिणी को और अधिक कष्ट पहुंचाया। यह देखकर हनुमान जी ने कहा कि यह तो घोर अन्याय एवं नीचता का परिचायक है। इनके हृदय में दयाभाव लेशमात्र भी नहीं है। यह इन राक्षसियों की हृदयहीनता एवं नीचता की पराकाष्ठा है। इस प्रकार के विचार हनुमान के हृदय में आने लगे। सीता की यह दशा देखकर वे बहुत ही दुःखी हुए।

110

उस समय देवी सीता फूट-फूट कर रो रही थीं। उनके हृदय में गहरी विरह वेदना का बोझ था, जिससे उन्हें बहुत कष्ट हो रहा था। विरह व्यथा के कारण उनका मन बहुत ही चिन्ताग्रस्त था। अब उनका जीवन में एकमात्र सहारा केवल रुदन और आँसू ही थे। देवी सीता शिशुओं की भाँति रोती-चिल्लाती गहरे दुःख में अपना जीवन व्यतीत कर रही थीं।

111

इसी प्रकार घोर दुःख के कारण विरहणी सीता का जीवन भार स्वरुप हो गया था। धीरे-धीरे सभी दिशाओं में वातावरण प्रकाशमय दिखायी देने लगा। उसके पश्चात प्रकाश की ज्योतिर्मय किरणें बिखरती चली गयीं। उजाला भी दृष्टिगोचर होने लगा। अन्धकार विलुप्त होकर खो गया। उसका स्थान अब केवल विरहिणी सीता का दुःखी हृदय ही था। उन्हीं के दुःखी हृदय में निराशा का गहन अन्धकार आश्रय पा सकता था।

112

दशमुख रावण सदैव ही अपने हृदय में सीता के विषय में सोचता रहता था। वह उनको अपना बनाने के लिए व्याकुल रहता था। सीता के प्रति उसके हृदय में अपार आकर्षण था। वह शीघ्र ही अशोक वाटिका की ओर बढ़ते हुए देवी सीता के पास आया। वहाँ आकर सीता की प्रशंसा करते हुए मधुर शब्दों से वह उनकी चाटुकारी करने लगा। उसके उद्देश्य की पूर्ति कें लिए केवल एक ही मार्ग शेष था।

113

देवी सीता के पास आकर रावण ने स्वयं कहा कि हे सीते ! यह मेरा दुर्भाग्य है कि तुम मेरे प्रति इतनी उदासीन हो। यदि तुम्हारे सिवा किसी और स्त्री की कामना मैंने की हो तो निश्चय ही मुझे नरक में वास का दण्ड मिले। तुम्हीं सदैव मेरी आँखों के सामने तथा मेरे विचारों में रहती हो।

114

हे सीते ! तुम प्रतिदिन मेरा हृदय बहुत ही दुःखी करती रहती हो। मेरी ओर से तुम्हें इस संसार में प्रत्येक इच्छित कार्य करने की पूर्ण स्वतंत्रता है। केवल मेरा तुमसे यही विनम्र आग्रह है कि तुम मेरे प्रति उदासीनता का भाव मत रक्खो। अब तुम्हारे बिना मेरे हृदय को बहुत अधिक कष्ट पहुंच रहा है। इससे अच्छा एवं उचित तो यही होगा कि मैं अपने प्राण तुम्हारे लिये दे दूं। जीवन में जो असह्य परिस्थिति मेरे सामने है, उसको अब मैं सहन नहीं कर पा रहा हूं। मैं जीवन में तुम्हारे प्रेम की ही कामना करता हूं। तुम्हारा प्रेम यदि मुझे प्राप्त न हो सका तो इस जगत में मेरा जीवन व्यर्थ है।

115

इस प्रकार सीता की प्रार्थना करते हुए रावण ने अपनी इच्छाएँ प्रकट कीं। उसके मन में अपार कष्ट हो रहा था। सीता कें प्रति वह अपार प्रेम का प्रदर्शन करते हुए भ्रम में पड़कर बहुत चिन्तित भी हो रहा था। मणियों, अन्य बहुमूल्य रत्नों से जड़ित आभूषण एवं स्वर्ण के अनेक उपहार सीता को प्रसन्न करने के लिए तथा उनकी प्रशंसा करते हुए रावण ने उन्हें भेंट किए। सीता को प्रसन्न करते हुए उसने उनसे प्रेमपूर्वक निवेदन किया।

116

वास्तव में देवी सीता अपने अस्तित्व को अपने प्रियतम राम के प्रति पूर्णरुपेण समर्पित किये हुए थीं। वे सदैव ही एक आदर्श पतिव्रता की भाँति सम्पूर्ण आदेशों का पालन कर रही थीं। उन्होंने अपने जीवन में राम की अपेक्षा अन्य किसी पर पुरुष की कभी कामना भी नहीं की थी। जैसे वायु के झोकों में इतनी शक्ति नहीं है कि वे पर्वत श्रेणी को अपने वेग से हिला सकें, इसी प्रकार एक क्षण के लिए भी उनका ह्रदय राम से कभी नहीं हटा। उनका प्रेम सदैव ही राम के प्रति अटूट एवं अक्षुण्ण रहा।

117

दशमुख ने फिर एक बार सीता से प्रेम का प्रस्ताव किया। राजा जनक की राजपुत्री सीता उसके उस प्रस्ताव को सुनकर केवल मौन ही धारण किये रहीं। सीता की इस उदासीनता से रावण ह्रदय में दुःखी हुआ। उसने अपने क्रोध को चतुरता से छिपा लिया तथा स्पष्ट रुप से अपने ह्रदय के भावों को सीता पर प्रकट नहीं होने दिया।

118

हे सीते ! तुम्हारे लिए इस प्रकार मौन धारण करने का क्या कारण है ? अब मैं तुमसे कुछ और अधिक निवेदन करने का साहस नहीं कर पा रहा हूं। तुम निरुत्तर होकर मौन हो जाती हो। वास्तत में मेरा यह कार्य उचित ही है। इसमें मेरी क्या भूल है ? केवल तुमसे यही कथन है कि मेरी प्रकृति और स्वभाव भी राक्षसों की भाँति ही है। उसी के आधार पर मैं सभी आचरण भी करता हूं। अतएव मेरी इन स्वाभाविक प्रवृत्तियों की पूर्ति के लिए भी मुझे तुम्हारी सहानुभूति की पूर्ण आवश्यकता है।

119

उचित अथवा अनुचित किसी भी कार्य की ओर मैं कभी कोई ध्यान भी नहीं देता। इसीलिए मुझे उसका कोई डर भी नहीं है। जो लोग जीवन में अपने को बहुत अनुशासित करके सीमाओं में बाँधते हैं, वे जीवन का पूरा रस नहीं ले पाते। इसीलिए उनका जीवन अधूरा–अधूरा सा रहता है। वास्तव में हम लोग इस संसार में जीवन का पूरा आनंद लेते हुए तृप्ति प्राप्त कर रहे हैं। जीवन की सम्पूर्ण मधुरता एवं रस का आस्वादन कर रहे हैं। वास्तव में इस संसार में इस बात की चिन्ता करने की कोई आवश्यकता ही नहीं है कि जीवन के लिए किन बातों का निषेध किया गया है अथवा किन बातों का निषेध नहीं किया गया है। हमारे जीवन का आधार केवल जीवन में आनंद लूटना है। स्वच्छन्दता का जीवन व्यतीत करना ही हमारे जीवन का उद्देश्य है।

120

इसीलिए मेरा यह विनम्र निवेदन है कि तुम्हारे लिए भी जीवन इतना दुःखी बनाना उचित नहीं है। यदि तुम्हारे विचारों में सदैव ही अस्थिरता बनी रहती है तो निश्चय ही तुमको मेरे शब्दों पर पूरा विश्वास करना चाहिए। क्या तुम को मेरे बाहुबल पर अब भी कोई सन्देह है ? मैं इस सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त कर चुका हूं। इतनी शक्ति एवं वैभव प्राप्त करने के पश्चात भी मैं तुम्हारी सेवा एवं आज्ञा पालन करने के लिए प्रस्तुत हूं। हे सीते ! तुम स्वर्ण के अमूल्य आभूषणों से अपने सुन्दर शरीर को सजाओ, अपना पूर्ण श्रंगार करो, यही मेरी हार्दिक अभिलाषा है। इसको तुम अवश्य ही स्वीकार करो।

121

तुम्हारे लिए मणि एवं माणिक्यों से एक भवन निर्मित किया गया है। वास्तव में उसको केवल तुम्हारे लिए ही निर्मित किया गया है। उसी भवन में तुम आनंदपूर्वक मेरे साथ रहने की स्वीकृति दो। क्या जब तुम भूमि पर शयन करती हो अथवा पृथ्वी पर लेटी पड़ी रहती हो, तो तुमको अपार कष्ट का अनुभव नहीं होता है ? अतएव उसी भवन में प्रसन्नतापूर्वक शयन करो। मेरे साथ रह कर आनंद से जीवन व्यतीत करो। इस प्रकार जीवन का सम्पूर्ण रस लो।

122

हे सीते ! तुम मेरे हृदय-पटल में निवास करो। तुम्हारे लिए मेरे हृदय में बहुत व्यापक स्थान है। इस प्रकार तुम सदैव ही मेरे निकट रह सकोगी। जब तुम मेरे हृदय में आ जाओगी तो जहाँ भी मैं जाऊंगा, तुम सदैव ही मेरे साथ मेरे निकट रहोगी। हे सीते ! मैं यह प्रार्थना इसलिए कर रहा हूं कि मैं तुमसे कभी दूर न रह सकूंगा। सदैव तुम्हारे पास रहूंगा तथा तुम्हारी पूजा एवं सेवा में प्रवृत्त रह सकूंगा।

123

हे प्रिय सीते ! जो शब्द मैं तुमसे कह रहा हूं उस पर तुम पूरी तरह ध्यान दो। यही तुम्हारे लिए श्रेयस्कर है। तुम्हारी अपेक्षा संसार में कोई अन्य स्त्री ऐसी नहीं है, जिसकी सेवा करने के लिए कभी उससे ऐसा प्रस्ताव मैंने किया हो। मैं तुमसे अपार प्रेम करता हूं। तुम्ही को अपनी प्रेमिका मानकर पूजा करता रहता हूं। इसीलिए अपना मधुर जीवन तुम मुझे अर्पण कर दो, राम की ओर अब और अधिक ध्यान की कोई आवश्यकता नहीं है। उनके विरह में अधिक दुःखी होने से क्या लाभ है ? अतएव अपने जीवन को सुखी बनाओ।

124

जैसे सिकता-कणों को दुहकर दूध निकालने में सफल हो सकना संभव नहीं है, उसी प्रकार राम द्वारा भी

कोई व्यक्ति सौभाग्यशाली होकर ऐश्वर्य प्राप्त नहीं कर सकता है। इसीलिए हे सीते ! तुम मेरे वचनों के प्रति उदासीन मत बनो। इस संसार में मैं ही ऐसा व्यक्ति हूं जिसके लिए तुम्हें अपने आपको अर्पित कर देना चाहिए क्योंकि मैं ही तुम्हारी रक्षा करने में पूर्ण समर्थ हूं।

125

यदि तुम अपने को मुझे समर्पित कर दो तो मैं तुम्हें तीनों लोकों का राज्य अर्पित करने के लिए प्रस्तुत हूं। उस पर तुम्हारा एक छत्र राज्य होगा और तुम उसकी साम्राज्ञी होगी। इसीलिए विरह में दुःखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है। उससे कोई लाभ भी नहीं है, उसे छोड़ दो। वास्तव में जो विरहिणी स्त्रियाँ दुःखी जीवन व्यतीत कर रहीं हैं, उनके हृदय को बहलाने एवं प्रसन्न करने की मैं अचूक औषधि हूं। तुम्हारे दुःख को भी मैं सहज ही दूर कर सकता हूं।

126

यह मेरी जितनी भी शक्तिशाली राक्षस सेना है उसका नेतृत्व तुम स्वयं करो एवं उसको पूर्ण रुप से अपने अधिकार में ले लो। वे सभी वस्तुएँ जिनकी तुम अभिलाषा करोगी, मैं तुम्हारी सेवा में प्रस्तुत कर सकता हूं। यदि तुम्हारा आदेश हो तो देवराज इन्द्र को भी मैं तुम्हारे समक्ष तुम्हारी आज्ञा का पालन करने के लिए उपस्थित कर सकता हूं। विश्व में यह सभी बातें, जो असंभव सी दिखायी देती हैं, हे सीते ! मेरे लिए बहुत साधारण–सी है। यदि तुम्हारी किसी प्रकार की भी कोई अभिलाषा है, तो उसकी पूर्ति निश्चय ही मेरे आदेश से की जायेगी।

127

यद्यपि रावण ने सीता जी से भाँति–भाँति के प्रलोभन देते हुए मधुर वचन कहे, तो भी उनका सीता पर कोई प्रभाव दिखायी नहीं दिया। वे दृढ़तापूर्वक अपने नियमों पर अटल बनी रहीं। रावण की इतनी चाटुकारी से भी वे टस से मस न हुई। उनके हृदय में केवल उनके प्रियतम राम का ही निवास था। उसके पश्चात उन्होंने रावण को स्पष्ट एवं कठोर शब्दों में इस प्रकार उत्तर दिया :

128

हे दशमुख रावण ! तुम्हें धिक्कार है। तुम नीच, मूर्ख, चरित्रहीन, विक्षिप्त, शैतान तथा एक अधम राक्षस हो। आज यदि तुम राम से सभी बातों में अपनी तुलना करते हुए अपने को उनसे श्रेष्ठतर सिद्ध कर रहे हो, तो यह नीच कृत्य तुमने क्यों किया ? राम की अनुपस्थिति में छल–कपट से धोखा देकर तुमने मेरा हरण क्यों किया। तुम मुझे यहाँ ले आये। क्या यह तुम्हारी नीचता का स्पष्टतम प्रमाण नहीं है ?

129

यदि वास्तव में तुम युद्ध-क्षेत्र के एक वीर योद्धा हो, तो इसका क्या कारण है कि तुमने अपने को राम से छिपाकर छल-कपट से मेरा वन से अपहरण किया ? क्या ऐसा व्यक्ति कभी भी एक वीर योद्धा की संज्ञा पा सकता है ? जब शत्रु युद्धक्षेत्र में न हो, उस समय वह लूटपाट करे तथा अपहरण आदि जैसे नीच कृत्यों में प्रवृत्त हो, यह क्या उचित है। यह इस सत्य का स्पष्ट संकेत है और उद्घाटन कर रहा हें कि तुम एक कुकर्मी, नीच व्यक्ति हो। तुममें वीरत्व एवं शक्ति का सर्वथा अभाव है।

130

यह भी इस बात का स्पष्ट प्रमाण है कि तुम राम के समक्ष युद्ध में डरते हो। उन्हीं के भय के कारण तुमने युद्ध में उनसे सामना न करके इस नीचता का परिचय दिया है। केवल दूसरे की स्त्री का अपहरण करना ही तुम्हारे विचारों का प्रतीक है। इससे अधिक तुम्हारे कर्मो की नीचता और क्या हो सकती है ? मैंने शत्रुओं पर विजय प्राप्त करने वाले योद्धाओं के विषय में भली भाँति सुन रक्खा है। वे युद्धबन्दियों को भी सहर्ष लौटा देते हैं।

131

क्या तुमने श्री राम की वीरता के संबंध में अब तक यह नहीं सुना है कि वे एक महान योद्धा एवं धुनर्धर हैं और उनकी प्रसिद्धि एक धुनर्धारी के रुप में विश्व भर में हो चुकी है ? वे भगवान विष्णु के एक स्वरुप के रुप में पृथ्वी पर अवतरित हुए हैं। इस प्रकार देवता विष्णु ने मानव का शरीर धारण किया है। निश्चय ही जब युद्ध क्षेत्र में तुम्हारा और उनका संघर्ष होगा, तुम्हारी पराजय एवं मृत्यु अवश्यंभावी है।

132

यदि राम से शत्रुता करके संघर्ष से बचने के लिए तुम सागर तल में भी भाग कर अपने को छिपाओगे, पृथ्वी के किसी गहरे छेद अथव पृथ्वी के नीचे छिपने की चेष्टा करोगे तो भी बच न पाओगे। जहां पर किसी का भी पहुंचना अत्यन्त दुष्कर कार्य होगा, जहाँ कोई कभी पहुंच नहीं पायेगा अथवा ऐसी पर्वतमाला में जाकर छिपने का प्रयास करोगे, जो घने जंगलों से ढकी हुई है तो भी तुम्हें सफलता नहीं मिलेगी। यदि तुम अपने शरीर का आकार बहुत पतला और सूक्ष्म बना लोगे, जो केवल शरीर की इन्द्रियों पर ही ठहरा हुआ है, तो भी तुम्हारा बच पाना अब असंभव है। तुम निश्चय ही राम द्वारा किसी भी परिस्थिति में बन्दी हुए बिना नहीं बच सकते। युद्ध से भी इस प्रकार भाग कर कभी भी कहीं जा नहीं सकते हो। तुम्हारी पराजय निश्चित है।

133

यदि तुम किसी उत्तम वीर राजा की शरण में जाने की आकांक्षा करोगे और वह जिससे तुम पूरी सहायता की अपेक्षा करोगे, महान शक्तिशाली भी होगा तो भी मेरा ऐसा विचार है कि कोई भी वीर योद्धा राजा तुम्हारी सहायता करने के लिए प्रस्तुत नहीं होगा। जिसने भी राम की वीरता की गौरव-गाथा सुनी है, वह राम की शक्ति से अवश्य ही प्रभावित होगा। वह उनके समक्ष कभी भी संघर्ष के लिए तैयार नहीं होगा।

134

इस विश्व में शिवजी सबसे महान एवं शक्तिशाली देवता हैं। उन्होंने भी राम के महत्व और शक्ति को भली भाँति देख लिया है। इसकी अपेक्षा अन्य देवता, असुर, मनुष्य तथा राक्षस भी हैं, वे सभी यदि राम से संघर्ष करें तो निश्चय ही राम के एक बार बाण चलाने पर धराशायी हो जायेंगे।

135

जब सीता ने रावण को इस प्रकार कठोर वचन कह कर उत्तर दिये तो दशमुख वहाँ से उठ खड़ा हुआ। उसने अपनी तलवार म्यान से बाहर खींच ली। आँखें निकालते हुए तथा उन्हें तरेरते हुए क्रोध से उसने सीता की ओर देखा। उसका वह विकराल रुप बहुत ही डरावना एवं भयानक था।

136

हे सीते ! मेरे हाथ में यह क्या है ? इसे ध्यान से देखो। मेरे हाथों में यह तलवार है। साक्षात मृत्यु देवता के रुप में इसे देखकर भीषण भय उत्पन्न होता है। यदि तुम मेरी बातों को मानकर मेरी आकांक्षाओं की पूर्ति नहीं करोगी, तो निश्चय ही मेरी यह तलवार अकस्मात तुम्हारी गरदन के टुकड़े-टुकड़े कर देगी।

137

इसके पश्चात रावण ने सीता को बुरी तरह डराया-धमकाया, अपने मन में उसने बदला लेने की भावना को भी पूरी तरह दृढ़ किया। तदनन्तर लज्जित होकर वह अपने नगर को वापस लौट गया। उसके पास लगभग तीन सौ राक्षसियों का एक समूह था। उनको रावण ने यह आदेश दिया कि वे शीघ्र ही सीता के पास जाकर उन्हें त्रास देकर धमकाएँ। वे शीघ्र ही सीता के पास आ गयीं।

138

वे सभी राक्षसियां आकर सीता को धमकाने लगीं। सीता को चारो ओर से घेरकर उन्होंने सीता का वध

करने की भी धमकी दी। भाँति-भाँति से उन्होंने इस प्रकार सीता को डराने-धमकाने का पूरा प्रयास किया। उससे भी सीता के ह्रदय में किसी प्रकार का भय उत्पन्न नहीं हुआ। वे मौन ही रहीं। उन राक्षसियों को इस प्रकार डराते धमकाते एवं उत्तेजित करते देखकर भी सीता ने उनकी ओर तनिक ध्यान नहीं दिया। उन्होंने उनकी सर्वथा उपेक्षा की।

139

वहाँ एक बड़े ही पवित्र विचारों वाली राक्षसी भी थी। वास्तव में वह राक्षसी रावण के भाई विभीषण् की पुत्री होने के साथ ही सर्वथा योग्य भी थी। उसका नाम त्रिजटा था। उसको सीता की दुःखी अवस्था देखकर उनपर अत्यन्त करुणा आ गयी। उसने अशोक वाटिका में सीता की पूर्ण सुरक्षा का भाव व्यक्त किया और सहानुभूति भी प्रकट की।

140

त्रिजटा राक्षसी ने अन्य सभी नीच प्रवृत्ति वाली राक्षसियों को धिक्कारते हुये कहा, "तुम क्या चाहती हो? वास्तव में तुम्हारा व्यवहार बहुत ही नीचतापूर्ण है। तुम सभी क्रूर एवं निर्दयी हो। अपने प्रिय से बिछुड़ने में सीता का कोई दोष नहीं है। ऐसी पवित्र स्त्री का तुम सब वध करना चाहती हो। तुम सभी महानीच हो। तुम्हारे हृदय में क्या लेशमात्र भी किसी दुःखी व्यक्ति के प्रति करुणा का भाव नहीं है?

141

इनके समान पतिव्रता एवं स्वामिभक्त अन्य कोई स्त्री नहीं है। वे अपने प्रियतम के प्रति पूर्णरुपेण पवित्र भाव से तल्लीन। इस महान पतिव्रता सती की सेवा करना हम सबका परम कर्तव्य है। मैं स्वयं सच्चे हृदय से इनकी परिचर्या करने के लिए प्रस्तुत हूं। यदि तुम्हारा क्रूर हृदय उनका वध करना चाहता है, तो निश्चय ही उनके स्थान पर मैं अपने प्राण का उत्सर्ग करना उचित मानती हूं।"

142

त्रिजटा ने उन सभी राक्षसियों को इस प्रकार कठोर शब्दों में धिक्कारा। जो राक्षसियाँ सीता को डराने-धमकाने आयी थीं, उनके प्रति निर्भीक होकर त्रिजटा ने सीता के प्रति उनके नीच व्यवहार की घोर निन्दा की। उसके पश्चात् अत्यन्त लज्जित होकर वे सभी वापस लौट गयीं। अब वहाँ देवी सीता ही अकेली बैठी थीं। त्रिजटा भी अब उनसे बहुत दूर नहीं थी वरन् निकटता का अनुभव करते हुये उनके पास ही बैठी थी।

143

त्रिजटा एक पवित्र विचारों वाली चरित्रवती युवती थी। उसकी बुद्धि अच्छी बातों की ओर सदैव ही आकृष्ट होती थी। इसीलिए सीता ने त्रिजटा के समक्ष अपनी पूरी विरह-व्यथा प्रस्तुत कर दी। उन्होंने यह भी बताया कि वे राम के वियोग में किस प्रकार तड़प-तड़प कर व्याकुल होती रहती हैं। उन्होंने यह भी स्पष्ट किया कि उन्हें अपने पति श्रीराम से अपार प्रेम है। यह सभी बातें विस्तार सहित निरन्तर आँसू बहाते हुये उन्होंने त्रिजटा के सामने स्पष्ट कर दीं।

144

हे वहिन त्रिजटा ! तुम किसी प्रकार भी मेरी यह दशा देखकर मेरा उपहास मत करो। मैं अपनी पूरी दुःखमय परिस्थिति का सम्पूर्ण वृत्तान्त तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत करना अपना कर्तव्य समझती हूं। वास्तव में मेरा चित्त बहुत ही दुःखी है। मेरा हृदय वियोग की अग्नि में जल-जल कर भस्मसात हो गया है। आज मैं अपने जीवन में अपार कष्ट उठा रही हूं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है, जैसे विधाता ने ही मुझे इतना कठोर दण्ड दिया है, जिसे मैं आज भोग रही हूं।

145

हे बहिन ! तुम तो अभी तक कुमारी ही हो। इसीलिए विरह-व्यथा के कष्ट का तुम्हें कोई भी अनुभव नहीं है। मैं पूरी तरह यह समझ रही हूं कि मेरे प्रति तुम्हारे हृदय में कितनी अपार करुणा के भाव हैं। वास्तव में तुम एक पवित्र विचारों वाली युवती हो। तुम निश्चय ही किसी धर्मात्मा एवं विवेकशील व्यक्ति की पुत्री होने के सर्वथा योग्य हो। यही कारण है कि हे बहिन ! निस्संकोच, बिना किसी लज्जा भाव के मैंने अपनी सम्पूर्ण विरह-व्यथा तुम्हारे सामने प्रस्तुत कर दी है।

146

तुम सभी लोगों से पूंछ-पूंछ कर इसका पता लगा सकती हो। मैं तुमसे विश्वासपूर्वक कह सकती हूं कि तुमने कभी ऐसी करुण कथा अपने जीवन में नहीं सुनी होगी। ऐसी दुःखद परिस्थति इस संसार में तुमने शायद ही कहीं देखी हो। यह कथा बहुत ही हृदय -द्रावक एवं दुःखपूर्ण है। इसीलिए मेरा विचार है कि किसी अन्य व्यक्ति का दुःख मेरे दुःख के समान नहीं हो सकता। मेरा दुःख असीम है। मेरा जीवन दुःख और कष्ट का प्रतीक है। मेरी भाग्य रेखा में दुःख एवं वियोग ही लिखा है।

147

इस संबंध में मेरा तो केवल यही विचार है। इसकी अपेक्षा मैं और कुछ कल्पना ही नहीं कर सकती हूं। हो सकता है कि यह मेरे कर्मों के दोष का ही परिणाम हो,जो आज मुझे भोगना पड़ रहा है। शायद मेरे दोषों ने ही मेरे शरीर का रुप धारण कर लिया है। हे बहिन ! मैंने अपने इस शरीर पर अपार कष्ट झेला है। यह मेरा कितना वड़ा दुर्भाग्य है कि मैं अपने प्रेमी से विछुड़ कर प्रेम और विरह की आग में निरन्तर जल रही हूं। क्या यह सभी बातें मेरे शरीर के लिए किसी भी रुप में सुखदायी वन सकती हैं ! मैं इस शरीर से शायद कभी भी सुख नहीं पा सकती हूं।

148

मेरी कथा तो जैसे कोई प्राचीन काल की दुखद गाथा हो। ऐसी कथाएँ प्राचीन युगों से ही प्रचलित होती चली आ रही हैं। इस प्रकार की कथाएँ धर्म ग्रन्थों, इतिहास, नाटक, लोक कथाओं आदि में वर्णित मिलती हैं। इनमें प्रेमियों तथा विरहिणियों की कथाएँ विस्तारपूर्वक कही गयी हैं। जैसे प्रेमी अथवा प्रेमिका का पारस्परिक विछोह हो गया है,वे विरह-कातर होकर दुःखी जीवन व्यतीत करते हैं। प्रारम्भ में तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे प्रेम की बलिवेदी पर प्राणों का उत्सर्ग करने को प्रस्तुत हैं तथा अपने जीवन का अन्त ही कर लेंगे। सौभाग्य से कथा की समाप्ति प्रायः सुखान्त ही होती है। अन्त में विछुड़े हुए प्रेमी फिर एकत्रित होकर एक दूसरे से मिल जाते हैं।

149

वास्तव में ऐसी बहुत सी कथाएँ मैंने सुनी हैं। इस प्रकार की कथाएँ बडी ही मनोहारी एवं कर्णप्रिय होती भी हैं, जिनके श्रवण में अपार आनंद का अनुभव होता है। हो सकता है कि ऐसी कथाएं तुम्हें भी सुनने को मिलें। मुझे कभी-कभी यह आशा भी बंध जाती है कि मेरे इस वियोग का अन्त कभी अवश्य ही होगा। यह तभी हो सकेगा जब ईश्वर की मुझ पर कृपा एवं करुणा होगी। दुःख भोगते-भोगते यदि मेरे प्रियतम अभी तक जीवित होंगे, तो उन्हें भी विरह का दुःख मेरी तरह ही व्याकुल करके सता रहा होगा। यदि मेरे राम का वियोग के असह्य होने के कारण देहावसान हो गया होगा, तो भी ऐसा कौन है जो मुझे इस विषय में सूचित करेगा। यही सोच-सोच कर सीता आहें भरती हुई रुदन करने लगीं।

150

ऐसा कौन सा देवता है,जो अपनी कृपा एवं करुणा मुझ पर दिखा कर राम के कुशल-क्षेम की सूचना मुझे देगा और मेरे पास आकर सभी बातें मुझे बताने की कृपा करेगा। इन तपस्या करते हुये महर्षियों में भी वन प्रदेश की तपस्या स्थली में ऐसा कौन ऋषि है जो मुझे राम के संबंध में सूचना दे सकेगा! वास्तव में राम का प्रधान गुण ही सभी की भलाई करना रहा है। उनके सुकृत्यों में कभी परिवर्तन दिखायी नहीं दिया। उन्होंने सदैव ही परहित

में अपना जीवन लगाया है। यह सत्य भी विश्व विदित है जबकि अन्य देवता सदैव ही अपने कर्तव्यों के प्रति पूर्ण उत्तरदायी नहीं रहे हैं। उन्हें धिक्कार है कि उन्होंने कभी भी राम के गुणों का अनुकरण करने की दिशा में ध्यान नहीं दिया है।

151

मैं दुःख में आकंठ मग्न हूं। मेरी बुद्धि भी अत्यन्त भ्रमित होकर अस्थिर सी हो गयी है। जो कुछ भी मैं अपनी आँखों से देखती हूं और सुनती हूं वह सभी मुझे असह्य होता है एवं दारुण दुःख देता है। यहाँ तक कि बाँसुरी का मधुर स्वर एवं भाँति-भाँति के आकर्षक नृत्य मेरे कर्ण-कुहरों को बहुत अधिक कष्ट पहुंचाते हैं। मेरी आँखों को भी उनसे कोई रस नहीं मिलता है। जो लोग वियोग में दुःखी हो रहे हैं,उनकी व्यथा तथा उनका रोग प्रति क्षण बढ़ता ही जाता है। उसकी कोई भी औषधि इस जगत में नहीं है।

152

इस जगत में अनेक प्रकार के स्वादिष्ट भोजन तथा भाँति-भाँति के मधुर पेय पदार्थ हैं। जब उनका मैं प्रयोग करती हूं तो मेरे गले से ही वे नीचे नहीं उतरते। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मैं विषपान कर रही हूं। रात्रि के समय जब शैया पर लेट कर विश्राम करती हूं तो मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मैं करागार में अपना जीवन व्यतीत कर रही हूं। मैं अत्यन्त दुःखी हो कर दारुण विपत्ति झेल रही हूं।

153

सुगन्धित पुष्पों को देखकर मेरा हृदय व्यथा से व्याकुल हो जाता है। सामान्यतः सुगन्धियुक्त लेप अथवा इत्र का प्रयोग प्रसन्नता उत्पन्न करते हुये आनंद पहुंचाता है। उसकी सुवास वातावरण को भी सुगन्धियुक्त बना देती है, किन्तु यह सभी हर्षोत्पादक वस्तुएँ मुझे और अधिक दुःखी बनाती हैं। उनके प्रति अब न तो मुझे कोई आकर्षण ही है,न उनसे कोई लाभ ही प्रतीत होता है। मेरे मन में ये वस्तुएँ एक विचित्र प्रकार का केवल क्लेश ही उत्पन्न करती हैं। मेरे वियोग की पीड़ा भी उनसे द्विगुणित हो जाती है।

154

क्या मेरे जीवन का यह अपार कष्ट कभी मुझसे दूर भी हो सकेगा ! मेरा हृदय इस विरह वेदना से जैसे विदीर्ण हो गया है। वह सदैव ही दारुण दुःख का अनुभव करता रहता है। मन्मथ भी मेरे साथ घोर अन्याय कर रहे हैं। वे मेरे मन को मथ पर मुझे उत्तेजित करते हैं,जिससे मुझे बहुत अधिक कष्ट होता है। मेरे हृदय को वे अपने बाणों से वेध कर उसके टुकड़े-टुकड़े किये दे रहे हैं।

155

जो लोग विरह–वेदना से पीड़ित होते हैं उन्हीं के हृदय भी विरहाग्नि में जल कर राख हो जाते हैं। कामदेव का यह प्रहार बहुत ही निर्मम एवं नीचता का द्योतक है। यह मन को अधिक उत्तेजित करके दुःखी करता है। कामदेव उस शैतान की भाँति है जो सीधा हृदय में प्रवेश कर जाता है। उसी मर्म स्थल पर (हृदय स्थल में) जहाँ विरह वेदना का भी प्रकोप होता है, कामेच्छा को जगाकर मानो वह हृदय–द्वार बन्द कर देता है। इससे विरही का मन भ्रमित हो जाता है।

156

कामदेव के पास दया एवं करुणा नाम की कोई वस्तु ही नहीं है। कभी भी उन्होंने विरहिणियों पर अपनी कृपा दृष्टि नहीं डाली। वास्तव में कामदेव इस जगत में सभी के सबसे बड़े शत्रु हैं। यद्यपि स्वयं वे बहुत कोमल एवं सुन्दर हैं विश्व भर में व्याप्त हैं,फिर भी किसी को दिखायी नहीं देते। उनके अस्त्र–शस्त्र पुष्पों के बने हुये हैं। वे बहुत ही तीक्ष्ण एवं शक्तिशाली हैं। उनकी तीक्ष्णता इतनी प्रखर है कि उनके द्वारा सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त करके उन्होंने उसे पूर्णरुपेण परास्त कर दिया है।

157

हे कामदेव ! तुम किस प्रकार मनुष्य का रुप धारण करोगे? ऐसा होने पर ही तुम्हें यह अनुभव हो सकेगा कि तुम्हारे सताने से मनुष्य को कितनी कठिनाई तथा कष्ट होता है। तुम्हें विरह–व्यथा की वेदना का पूरा अनुभव मानव रुप धारण करने के बाद ही हो सकता है। कदाचित् तुम भी विरही बनकर इस दारुण दुःख को सहन करो। तुमने मुझे असह्य वेदना पहुंचायी है। तुमने अपने पुष्प–बाणों से मुझे घायल कर दिया है। अब मैं मरणासत्र हूं। केवल मेरे जीवन में विरह–वेदना ही मुझे व्याकुल किये हुये है।

158

इस भवन में मेरा हृदय व्याकुल, विरह–वेदना से संतृप्त होकर अपार कष्ट कर अनुभव करता रहता है। मैं पृथ्वी पर शयन करने के लिए नीचे उतरती हूं। हे त्रिजटा ! तुम मेरा सहारा बनकर मेरा साथ दो। किसी प्रकार मेरे दुःखी मन को बहलाओ। मुझ जैसे दुःखी व्यक्ति पर दयाभाव भी रक्खो। अपने प्रेमी से बिछुड़ कर मेरा मन अपार कष्ट उठा रहा है।

159

मेरे जलते हुए शरीर को ठंडक पहुंचाने के लिए त्रिजटा लेप तैयार करती है। यह लेप चन्दन से तैयार किया जाता है। चन्दन घिस कर ही इसको बनाया भी जाता है,इसीलिए यह अत्यधिक शीतल होकर शीतलता प्रदान करता है। मेरे शरीर पर चन्दन का यह लेप औषधि की भाँति लगाया जाता है, जिससे मेरे उष्ण शरीर को शीतलता प्राप्त हो सके। परन्तु उस चन्दन-लेप का भी मेरे शरीर पर कोई प्रभाव नहीं पड़ता। अब मेरा शरीर क्षीण होकर शक्तिहीन हो गया है तथा प्रतिक्षण मेरा कष्ट बढ़ता ही जाता है।

160

यह सुन्दर अशोक वाटिका विश्व भर में प्रसिद्व है। यह अत्यन्त आकर्षक एवं सौंदर्यमयी है। जो भी यहाँ पर आकर आश्रय लेता है,उसके लिए यह अत्यन्त सुन्दर एवं मनोहर है,परन्तु मेरी विरह-वेदना इतनी अधिक है कि यहाँ पर भी मुझे किसी प्रकार का आनन्द प्राप्त नहीं हो पाता है। दुःख एवं कष्ट ही मुझे उठाने पड़ रहे हैं, अतएव इस सौंदर्य से आकर्षित होकर भी मुझे जीवन में कोई रस नहीं आ रहा है।

161

अशोक वृक्ष के फूल वृक्ष से गिरकर पृथ्वी पर बिखरते रहते हैं। यहाँ तक कि अशोक के वृक्ष सदैव ही हृदय को लुभाते रहते हैं। जब शीतल मन्द पवन बहती है,तो ये वायु के झकोरों से आनंदित होकर झूमने लगते हैं। उनकी मस्ती बहुत ही हृदयग्राही है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे विरह वेदना की उष्णता में व्याकुल होते व्यक्ति के प्रति वे करुणा एवं शीतलता प्रदान कर रहे हों।

162

अशोक वाटिका में नागश्री का वृक्ष अत्यन्त सुन्दर है। वह सदैव ही हृदय को आकर्षित करता रहता है। समतल भूमि पर खड़ा शीतलता प्रदान करता हुआ वह ऐसा लगता है मानो मुझ पर दया भाव दिखला रहा है। वह यह भली भाँति जानता है कि यहाँ पर मैं एक विरहिणी का जीवन व्यतीत करते हुये दारुण दुःख भोग रही हूं। मेरा चित्त प्रतिक्षण दुःखी रहता है,इसीलिये वह मुझे सहानुभूति एवं दया का पात्र मानता है। पूयासामा वृक्ष जब फूलों से लद जाता है और प्रति क्षण उसके फूल खिलने लगते हैं तो मेरे हृदय में एक कोमल टीस सी उठती है तथा गहरी विरह-वेदना जागृत हो जाती है।

163

वास्तव में मेरा हृदय ऐसे सुन्दर पुष्पों के प्रति अब बहुत अधिक आकर्षित ही नहीं होता, जो बहुत सुगन्धियुक्त हैं। मेरे मन में उनके लिए अब आकांक्षा उत्पन्न नहीं होती। उनकी कोमल कलियाँ एवं गुच्छे मेरे

हृदय को बहुत दुःखी बनाते हैं। मुझे तुरन्त विरह–वेदना का अनुभव होने लगता है। उन वृक्षों की हरी एवं कोमल पत्तियाँ, जो बहुत ही मृदुल हैं, मेरे हृदय में तृष्णा एवं प्रेमोन्माद जागृत करती हैं। जब मैं खड़ी होकर उनकी शोभा निहारती हूं तो मेरे नेत्रों से अविरल अश्रु–धारा प्रवाहित होती रहती है।

164

कभी–कभी मेरे विचारों में अतीत की कई बातों का स्मरण हो आता है। समतल प्रस्तरों को देखकर मेरा मन आनंद से भर जाता है। वे प्रस्तर खण्ड नीचे की ओर हैं तथा सभी रुपों में स्वच्छ एवं आकर्षक हैं। मुझे सदैव ही तब अतीत की याद सताने लगती है। मुझे स्मरण हो आता है कि मैं अपने प्रियतम राजा श्री राम के साथ ऐसे ही प्रस्तरों पर तथा ऐसे ही शिलाखण्डों पर बैठकर आनंद करती थी। उस समय मैं कितनी प्रसन्नतापूर्वक जीवन बिता रही थी। वन प्रदेश की तपस्या भूमि में राम के साहचर्य में मेरा जीवन आनंदमग्न था।

165

मैं यहाँ पर विरह संतृप्त और भ्रम में पड़ी हुई हूं। प्रतिक्षण आहें भरती हुई मैं अपनी व्यथा को प्रकट करती रहती हूं। मुझे कुछ भी स्मरण नहीं रहता है। मैं सभी कुछ भूलती जा रही हूं। मैं इतनी निराशा से घबराकर भी क्यों जीवित हूं ? अब तक मेरे प्राणों का अन्त नहीं हो पाया। क्या इसका कारण यह है कि मेरा शरीर स्वस्थ एवं सुगठित है अथवा क्या मैं अपना प्राणांत करना नहीं चाहती हूं ? मेरी आँखें कभी भी मेरे प्रति क्रूर नहीं होती हैं। मैं रात में जागरण करती हूं। मेरे नेत्र जागते तो हैं,परन्तु वे मेरे प्रियतम का दर्शन करने में असमर्थ हैं। अतएव मेरा हृदय दुःखी है। मैं कदापि सौभाग्यशाली नहीं हूं।

166

इन परिस्थितियों के कारण ही मेरे मन में विरह–वेदना जागृत होती है और मेरे हृदय में अपार कष्ट होता है। वंशीवादन के स्वर रात और दिन मेरे कानों में निरंतर गूंजते रहते हैं। जब प्रेमी तथा प्रेमिका एक दूसरे के लिए वियोग के गीत गाते हैं और वह स्वर मैं सुनती हूं, तब वह हृदय विदारक से प्रतीत होते हैं। उनमें एक अनुपम मधुरता एवं आकर्षण होता है। मेरे हृदय पर उनका गहरा प्रभाव पड़ता है। उन स्वरों को सुनकर मेरी आँखों से अविरल अश्रु टपकने लगते हैं।

167

मेरी इस दुःखी दशा में यह मधुर वातावरण भी मेरे पक्ष मैं नहीं हैं। मैं प्रति क्षण ठंडी आहें भरती रहती हूं। उद्यान में शीतल वायु धीरे–धीरे बहती रहती है। उसके झकोरों से पुष्प पृथ्वी पर गिरते रहते हैं। सभी पुष्पों की

सुगन्धि एकत्रित होकर वातावरण को अत्यधिक सुगन्धियुक्त बना रही है। वह सुगन्धि मेरे हृदय को विदीर्ण करते हुये मेरी नासिका तक पहुंच कर वातावरण में बिखर जाती है।

168

ऐसी अवसरों पर मेरी स्मरण-शक्ति कुछ समय के लिए पूर्णरुपेण समाप्त हो जाती है। मैं मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ती हूं। मैं कुछ भी बोलने में असमर्थ हो जाती हूं। मैं तड़प-तड़प कर संतप्त होने लगती हूं। मेरे शरीर की अस्थियाँ एवं जोड़ काँपने लगते हैं। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि जैसे मेरे शरीर से प्राण निकल चुके हैं। मैं निर्जीव की भाँति हो गयी हूं।

169

शीतल मन्द पवन पुष्पों के पराग की धूलि को अपने साथ मिलाकर निरन्तर बहती रहती है,उसकी शीतलता मेरे लिए उष्णता सी प्रतीत होती है। उससे मेरी विरह व्यथा और भी अधिक बढ़ जाती है। कभी-कभी तो मेरा हृदय अकस्मात् ही धीमे अथवा तीव्र स्वरों को सुनकर चौंक उठता है और कांपने लगता है। वर्षाऋतु में घनघोर वर्षा होती है। वह भी मुझे अत्यन्त व्याकुल कर देती है। घनघोर रव होता है। उस भीषण रव से मैं डर जाती हूं।

170

पर्वत की शिला अथवा विशाल प्रस्तर खण्ड पर जब मैं जाती हूं तो मेरी पुरानी स्मृतियाँ फिर जागृत हो जाती हैं। मैं हाथ बढ़ा-बढ़ा कर अपने हृदय के स्वामी को अपने पास बुलाती हूं। हाय ! मेरे विरह एवं वियोग के रोग की दवा मुझे कहाँ मिल सकती है ? आज यहां पर मेरे कुटुम्ब एवं परिवार के निकट संबंधी भी नहीं हैं,जिनके समक्ष मैं अपनी विरह-वेदना की गाथा रो-रो कर प्रस्तुत कर सकूं। वास्तव में मेरा यह शरीर बहुत ही अभाग्यशाली है।

171

घनघोर वर्षा विरहाग्नि को प्रतिक्षण बढ़ाती रहती है। ऐसा लगता है कि जैसे यह वर्षा प्राणान्त ही कर देगी। कामदेव के बाण बिना दिखायी दिये ही सबको बेधते रहते हैं और हृदय को घायल कर देते हैं। इन बाणों द्वारा निकला हुआ रक्त नहीं दिखायी देता है, पर वह भी शनैः शनैः आँसुओ के रुप में आँखों से बाहर निकलने लगता है, हवा के शीतल झोंके बार-बार आते हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे वे मेरी सहायता कर रहे हों। उनसे मुझे शीतलता प्राप्त होती है।

172

हे वायु देवता! मुझे पूरी आशा है कि आप अवश्य ही मेरी दशा देखकर मुझ पर दया करेंगे। आप मेरी सहायता हेतु कृपा कीजिए। जो लोग प्रेमियों से बिछुड़ गये हैं तथा आज दीन–हीन अवस्था में हैं,उन दुखियों पर आप दया कर उनका उपकार कीजिए। हे वायु देव ! वन के आश्रम में जाकर राम को यह सूचना दे दीजिए कि मैं एक महानीच राक्षस के पास बन्दी के रुप में हूं। वायुदेव की अपेक्षा मेरी सूचना राम तक कौन पहुंचा सकता है ?

173

हे वायु देव ! आप श्री राम से मेरे दुखी जीवन का पूरा समाचार कहने की कृपा कीजिए। विरह वेदना से मेरा हृदय अत्यन्त दुःखी है। मेरे वियोग की विरह–व्यथा की तुलना करना संभव नहीं है। मेरे दुःख की भी सीमा नहीं है। यह सभी बातें राम को बतलाइए। यदि मैं आपसे दूर रहकर इसी प्रकार निशि–दिन व्याकुल हो–होकर तड़पती रही,तो निश्चय ही मेरा प्राणान्त हो जायेगा। यह समाचार,हे वायु देवता ! आप मेरे प्रियतम राम तक पहुंचाने की कृपा कीजिए। उनसे यह भी कहिए कि मैं उनके वियोग में मृतप्राय हो गयी हूं। प्रेमी के वियोग में प्रेमिका की दशा अत्यन्त शोचनीय हो गयी है।

174

आज मेरा मन अपने पिता महाराज जनक से भी मिलने के लिए व्याकुल हो रहा है। उनके प्रति मेरे हृदय में अपार प्रेम और श्रद्धा है। यह सूचना भी उनके पास पहुंचाने की कपा कीजिए। मेरी करुण कथा इस प्रकार है कि मैं एक व्याकुल विरहिणी का जीवन व्यतीत कर रही हूं। अपने प्रियतम राम से मैं बिछुड़ गयी हूं। मुझे एक दुष्ट राक्षस ने बंदी बना लिया है। अतएव मेरा चित्त बहुत दुखी है। मेरा यह संदेश शीघ्र ही मेरे पिता राजा जनक तक पहुंचा दीजिये।मुझे केवल इतना ही समाचार देना है, अतएव अब शीघ्र ही प्रस्थान कर मुझ पर दया कीजिए।

175

हे मेरे प्रिय पिता ! आपको ज्ञात नहीं है कि मैं अपने जीवन में कितना महान कष्ट उठा रही हूं। मैं जानती हूं कि आपको मुझसे अपार प्रेम हैं। आप बड़े ही विवेकशील एवं दयालु हैं। मुझे यह सोचकर और भी अधिक दुःख हो रहा है कि.जब आप मेरे विषय में यह सूचना प्राप्त करेंगे, तो आपको भी बहुत दुःख होगा। विशेषतया यह जानकर कि मैं अपने प्रियतम राम से भी दूर होकर बिछुड़ गयी हूं। मैं अब एक नीच राक्षस के कारागार में बन्दिनी की भाँति दुःखी जीवन व्यतीत कर रही हूं।

176

इसके पश्चात् सीता तथा त्रिजटा प्रासाद की ओर ईश्वर–प्रार्थना अर्थात् पूजा के लिएं चल पड़ीं। सर्वप्रथम उनकी दृष्टि ईश्वर पर गयी। उनसे उन्होंने प्रार्थना करते हुये वरदान माँगा कि श्री राम आनंदपूर्वक रहें एवं उनके चिरंजीवी होने की भी उन्होंने प्रार्थना की। वन में जिस परिस्थिति में भी वे हों,वे प्रसन्नतापूर्वक जीवन यापन करें। सीता ने कहा कि मेरी केवल एकमात्र यही अभिलाषा है कि मेरे प्रियतम राम कुशल–क्षेम से रहें। मेरी अन्य कोई इच्छा नहीं है। मैं राम से प्रेम करती हूं। उनकी मंगल–कामना ही मेरे जीवन का एकमात्र लक्ष्य है।

177

देवी सीता की गतिविधियाँ देखकर हनुमान अत्यन्त प्रसन्न हुये। वे वृक्ष से नीचे उतर कर पृथ्वी पर खड़े हो गये। वे चाहते थे कि देवी सीता की दृष्टि उन पर पड़ जाय और वे हनुमान जी को देख लें। उन्होंने प्राचीन युग की कथाओं का संकेतात्मक रुप में वर्णन करना प्रारम्भ किया। देवी सीता के और अधिक निकट आकर उनको राम का हालचाल बताने की अभिलाषा उन्होंने व्यक्त की।

178

हनुमान ने विस्तारपूर्वक राम के सीता से विछोह की कथा सुनायी। उन्होंने पूरी तरह यह भी स्पष्ट कर दिया कि अपनी प्रियतमा सीता के विरह में राम की क्या दशा हुई है। अब उनका जीवन सीता के वियोग में अत्यंत दुःखी है। राम की विरह–व्यथा सीता से किसी भी प्रकार कम नहीं थी। उन्होंनें यह भी बताया कि सीता–हरण के पश्चात् विरह की पीड़ा से पीड़ित राम किस प्रकार सीता की खोज करते हुये और स्थान–स्थान पर उनका पता लगाते हुए व्याकुल हुए थे। इन सभी परिस्थितियाँ एवं वन में राम का रुदन करते हुए सीता को खोजने का समाचार हनुमान ने सीता के समक्ष सविस्तार प्रस्तुत किया।

179

देवी सीता ने हनुमान जी को देखा। उसके बाद उनके हृदय में बहुत सी शंकाएं उत्पन्न होने लगीं। उन्होंने हनुमान जी को बड़े ध्यान से देखकर वास्तविकता का अनुभव करने की चेष्टा की। यह कौन वानर है, जो मेरे निकट आकर इस प्रकार की कथा का विस्तार सहित वर्णन कर रहा है। मेरा अनुमान है कि यह रावण ही होगा तथा एक नई विपत्ति का मेरे लिए सूत्रपात कर रहा होगा। इस प्रकार हनुमान को देखकर सीता ने अपने मन में सोचा।

180

यह सोचकर कि शायद यह रावण ही होगा, सीता ने उनकी ओर कोई विशेष ध्यान नहीं दिया। उनका अनुमान था कि रावण ने ही वानर का रुप धारण करके मायाजाल फैलाने का प्रयास किया है। हनुमान ने इस प्रकार कथा का वर्णन किया तो इसे सुनकर सीता ने अनुमान लगाया कि यह सभी रावण की प्रपंच–लीला है, जो उन्हें पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पायी है। इसी कारण उन्होंने यह विचार किया कि शायद यह राक्षस का ही स्वरुप न हो। उसने कुछ नवीन प्रपंच की कल्पना न की हो।

181

मुझे कुछ ऐसी ही सूचना प्राप्त हुई है। उन राक्षसों ने भी, जो अशोक वाटिका के रक्षक का कार्य करते हैं, बताया है कि एक वानर को मेरे पास दूत बनाकर भेजा जायेगा। यह एक असम्भाव्य बात है कि कोई वानर भी कभी एक प्रतिनिधि के रुप में दूत बनाकर भेजा जा सकता है।

182

यही कारण है कि मुझे इस विषय में सन्देह उत्पन्न हो गया है। आज प्रातःकाल से ही बहुत शुभ शकुन दिखायी दे रहे हैं, जो बहुत शुभ संकेत भी हो सकते हैं। पक्षीवृन्द एक साथ मिल कर बड़े ही मधुर स्वरों में गीत गा रहे हैं। इससे ऐसा प्रतीत होता है कि निश्चय हो राम के प्रतिनिधि के रुप में मुझे कोई शुभ सूचना देने मेरे पास अवश्य आयेगा।

183

वास्तव में यहाँ ऐसा कौन हो सकता है, जो मेरे संशय को दूर कर सकता है, जबकि दंडकारण्य यहाँ से बहुत ही दूर है। यहाँ आने में बीच में पड़ने वाले सागर, पर्वत, वन, घाटियाँ, गहरे खडड आदि अनेक बाधाएँ प्रस्तुत करते हैं। मेरे प्रियतम राम के पास क्या इतने साधन संभव हो सकते हैं कि उन्हें मेरे विषय में सभी सूचनाएँ सरलता से प्राप्त हो सकें। मैं सोचती हूं कि सीमित साधनों में यह कार्य उनके लिए बहुत ही कठिन है।

184

जब रावण मेरा अपहरण कर पहले मुझे यहाँ पर लाया था, मैंने मार्ग में पर्वत, गहरी नदियाँ तथा घने वन आदि देखे थे। यह सभी एक बहुत ही भयानक दृश्य प्रस्तुत करते थे। उनको देखकर बहुत भय सा लगता था। उनकी भयानकता असाधारण थी। क्या कोई भी व्यक्ति जो मानव शरीर धारण किये हुए है, कभी इस दुस्तर सागर को पार कर सकता है ?

185

केवल दो ही लोग इतने महान शक्तिशाली माने जा सकते हैं जो सागर को सरलता से पार कर सकते हैं। इनमें एक तो वायु देवता है, दूसरे गरुड़ पक्षी हैं। अन्य दूसरे शरीरधारी इस दुरुह सागर की यात्रा की कल्पना भी नहीं कर सकते हैं। क्या कारण है कि यह वानर शरीरधारी एक साधारण प्राणी के रुप में मेरे पास तक आ पहुंचा है। मुझे तो अब भी ऐसा ही लगता है कि यह प्रपंच रावण का ही रचा हुआ है।

186

सीता के हृदय में भाँति-भाँति की इसी प्रकार की शंकाएँ उत्पन्न होने लगीं। वे बार बार इस वास्तविकता का सही मूल्यांकन करने का प्रयास करने लगीं। वे सोचने लगीं कि क्या यह राक्षसी माया-जाल ही तो नहीं है ? उसके पश्चात हनुमान जी एक दूत की भाँति उनके निकट गये। उन्होंने मस्तक झुकाकर विधिवंत शिष्टता से सीता जी को प्रणाम्म किया। उन्होंने सीता जी से निवेदन किया :

187

हे देवी ! आपका कल्याण हो। आप अपने हृदय में मेरे प्रति किसी प्रकार का सन्देह न कीजिए। आपके इस दास का नाम हनुमान है। मुझे राम के प्रतिनिधि के रुप में आपके पास यहाँ आने का आदेश दिया गया है। राजपुत्र श्रीराम ने इस दास को यह आदेश दिया है कि मैं यहाँ पर आकर आपकी खोज करुं। यह पता लगाऊंकि क्या आप अब तक वास्तव में जीवित हैं ? अतएव आप के विषय में पूरा समाचार जानने के लिए ही मैं यहाँ पर आया हूं। यही मेरा उद्देश्य एवं लक्ष्य है। आजकल राजपुत्र श्री राम एक प्रसिद्ध पर्वतमाला स्थित मलयवन पर्वत पर निवास कर रहे हैं, जो विन्ध्याचल पर्वत से दक्षिण दिशा की ओर है। वहीं पर ऋष्यमूक पर्वत भी है, जो दक्षिण की ही ओर है। वहाँ से वह भी बहुत दूरी पर नहीं है।

189

कल रात संध्या के समय रात्रि के लगभग सात बज रहे थे, उस समय यह दास चारो ओर इधर-उधर घूमने के पश्चात अशोक-वाटिका में आकर छुप गया था। उसी समय रावण यहाँ पर अपनी नंगी तलवार हाथ में लिए हुए खड़ा था। उससे युद्ध करने की अभिलाषा भी मेरे मन में आयी थी।

190

मैं रावण पर आक्रमण करने को उद्यत हुआ। मैंने तुरंत ही यह कल्पना की और विचार किया कि यदि

मैं ऐसे युद्ध में जीत भी जाऊंतो अन्य बाधाएँ भी उतपत्र हो सकती हैं। इन्हीं कठिनाइयों पर मेरा ध्यान गया। यह भी संभावना हो सकती थी कि जिस कार्य के लिए मुझे प्रतिनिधि के रुप में यहाँ पर भेजा गया था, वह कार्य अधूरा ही रह जाता। यही कारण था कि मैंने उस समय रावण पर आक्रमण न करने का निर्णय किया। मैंने रावण का विरोध भी नहीं किया।

191

आपके स्वामी श्रीराम के एक अभिन्न मित्र भी हैं। उनका राम सुग्रीव है। वे वानरों के राजा हैं। वे अपार शक्तिशाली हैं। उन्होंने मुझे दूत के रुप में आपके पास आने का आदेश दिया था।

192

इधर–उधर घूमते हुए तथा आपकी खोज करते हुए मैं रावण के राजमहल में भी प्रवेश कर गया था। वहाँ पर भी पता लगा कर मैंने परिस्थिति का पूरा अनुमान लगाया। नगर में मैं कहीं पर भी आपको खोज नहीं सका।

193

मुझे नगर में बहुत सी अप्सराएँ दिखायी दीं। वहाँ पर युवतियाँ बहुत ही सुन्दर एवं चित्त चुराने वाली थीं। रखवाली करने वाले रक्षक राक्षस सुरक्षा कर रहे थे। उन्होंने सबसे बड़ी भूल यह की थी कि रात्रि के अवसर पर वे सभी प्रगाढ़ निद्रा में मग्न हो रहे थे।

194

श्री राम आपका स्मरण करके बहुत दुःखी रहते हैं। निराशा ही अब उनके जीवन को कष्टमय बनाये हुए हैं। प्रतिक्षण वे आपका स्मरण करते रहते हैं। यहाँ तक कि विरह व्यथा एवं अपार कष्ट के कारण उनका शरीर वहुत दुर्बल हो गया है, इसीलिए उन्होंने मुझे आपके पास अपना दूत बनाकर भेजा है। आपके विषय में उन्हें सभी सूचनाएँ प्राप्त हो सकें, यही यहाँ आने का मेरा उद्देश्य है।

195

राम अत्यन्त दुःखी होकर आपके विषय में निरन्तर सोचते रहते हैं। आप चाहे मुझ पर विश्वास न करें, पर वास्तव में मैं राम का ही सच्चा प्रतिनिधि एवं दूत बनकर आपके समक्ष उपस्थित हुआ हूं। यह श्री राम क द्वारा ही मुझे दी गई मुद्रिका है, जो एक संकेत के रुप में मैं आपके समक्ष प्रस्तुत कर रहा हूं। यह आवश्यक भी है

कि मैं आपको विश्वास दिलाने के लिए आवश्यक प्रमाण प्रस्तुत करु। यह मुद्रिका उसी रुप में ग्रहण करने की कृपा करें।

196

श्री राम के छोटे भाई लक्ष्मण भी बहुत ही दुःखी रहते हैं। वे आपके विषय में सोच–सोच कर अत्यधिक कष्ट का अनुभव करते हैं। एक दिन वे क्रुद्ध हुए और शीघ्र ही यहाँ आकर रावण का वध करना चाहते थे।

197

वानर सेना अब रावण पर आक्रमण करने के लिए तैयार हो गयी है। वे सभी इसीलिए एकत्रित हो रहे हैं कि जिस समय उनको शत्रु का पता लगे वे आक्रमण कर दें। हे राज पुत्री ! आप कुछ समय तक प्रतीक्षा करें। शीघ्रता में कोई कार्य करने की आवश्यकता नहीं है। अब आपको अपने प्राण की रक्षा करनी चाहिए।

198

अभी कुछ समय पहले मैं स्वयं ही भयभीत हो रहा था। जब आप उस नीच रावण से वार्तालाप कर रही थीं। मैं आपकी वार्ता से बहुत प्रभावित हुआ। आप वास्तव में बहुत ही चतुर एवं योग्य हैं। आपने बड़ी बुद्धिमत्ता से उस क्रूर राक्षस को अपने पास से टाल दिया है।

199

निश्चय ही युद्धक्षेत्र में श्रीराम द्वारा रावण का वध किया जाएगा। आपके अपहरण का जो पाप उसने किया है, उस अपराध का दण्ड उसे अपने प्राणों की बलि देकर ही भुगतना पड़ेगा। इस प्रकार उसे इसका गहरा मूल्य चुकाना पड़ेगा।

200

हे महादेवी ! आप राम के लिए जो भी सन्देश अपनी ओर से प्रेषित करना चाहें, उसके विषय में मुझे आदेश दें। इस समय यहाँ पर अशोक वाटिका के रक्षक भी नहीं है, अतएव यह एक बहुत सुन्दर अवसर है। सभी रक्षक भी जा चुके हैं।

201

ज़ैसा कि मैंने आपको बताया है, आपके स्वामी श्री राम मलयवन पर्वत पर निवास कर रहे हैं। आपकी अनुपस्थिति एवं वियोग में उनके लिए एक दिवस एक सौ वर्ष के समान प्रतीत होता है। वे भी आपसे मिलने को व्याकुल हो रहे हैं।

202

जब हनुमान जी ने देवी सीता को पूरा समाचार देते हुए सभी बातें बतलाई, तो सीता जी को अपार प्रंसन्नता हुई। हनुमान जी द्वारा पूरी परस्थिति का ज्ञान उन्हें हो गया। सभी बातों का पता उन्हें लग गया। इससे उनके मन को अपार हर्ष हुआ। वे प्रसन्नचित्त होकर आनंदमग्न हो गयीं।

203

हे हनुमान ! आप मेरे निकट आने की कृपा कीजिए। वास्तव में आपने एक सच्चे प्रतिनिधि एवं राम के दूत की भाँति ही मेरे हृदय को हर्षोल्लास से भर दिया है। जो मणियाँ एवं माणिक्य मैं अपने मस्तक पर धारण किये हुए हूं उनको आप श्री राम को ले जाकर दे दीजिए। मेरी ओर से संकेत एवं प्रमाण के रुप में वे इन्हें पाकर संतुष्ट और प्रसन्न होंगे।

204

इसी के साथ ही साथ मेरा यह पत्र भी है। यह इस तथ्य का सूचक है कि राम के वियोग में मैं कितनी कठिनाई एवं दुःख से अपना जीवन व्यतीत कर रही हूं। आप इसको स्वयं अपने हाथों में लीजिए एवं श्री राम को जाकर दे दीजिए।

205

मेरी ओर से श्री राम को यह स्मरण भी दिलाइये, मैं आपके समक्ष यही निवेदन कर रही हूं। मेरा उनसे अनुरोध है कि भोजन तथा शयन का इस दुःखमय परिस्थिति में भी त्याग न करें। इससे वियोगी एवं दुःखी लोगों को किसी प्रकार का लाभ नहीं मिलता। मैंने स्वयं यह सब करके देखा है; इसीलिए मुझे इसका पूर्ण अनुभव है।

206

सीता ने हनुमान से इस प्रकार विनम्र निवेदन किया। उन्होंने श्रीराम की मुद्रिका देखी तो उनका संशय

दूर हो गया। उनको वास्तविकता का पूरा आभास हो गया। यही कारण था कि उन्होंने हनुमान जी पर अपना पूरा विश्वास प्रकट किया।

207

श्री हनुमान जी सीता के निकट गये। उन्होंने मणि तथा माणिक्यों को ग्रहण कर लिया। उसके पश्चात उन्होंने देवी सीता को प्रणाम किया। वे शीघ्र ही वहाँ से प्रस्थान करने के लिए उठकर खड़े हो गये।

208

अब उनके हृदय में अपार प्रसन्नता थी। वे देवी सीता की खोज कर उनसे भेंट भी कर चुके थे। एक क्षण के लिए अपनी सफलताओं के बारे में उन्होंने आनंदपूर्वक सोचा और फिर कई बातों पर गंभीरतापूर्वक विचार करने लगे।

209

वास्तव में वही दूत प्रशंसा के योग्य है जो अपने उद्देश्य एवं कार्य को सफलतापूर्वक पूर्ण कर सके। चाहे अपने कार्य की पूर्णता के लिए उसे कितना भी प्रयास क्यों न करना पड़े। अपने यश तथा कार्यसिद्धि के लिए उसे सब कुछ करने को प्रस्तुत रहना चाहिए। यहीं उसकी सफलता एवं कार्य कुशलता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

210

उन्होंने सोचा, मुझे देवी सीता से मिलने में सफलता प्राप्त हो चुकी है। मैंने अपने कार्य को पूरा कर लिया है। इसका पूरा श्रेय भी मुझे प्राप्त हो गया है। अब मेरा कोई अन्य उद्देश्य शेष नहीं है। मेरी दृष्टि रावण की सुन्दरतम वाटिका अशोक–वाटिका पर है। यह उद्यान बहुत ही विस्तृत एवं विशाल है। मैं इसको नष्ट–भ्रष्ट करना चाहता हूं। इसके सभी सुन्दर वृक्षों का नाश करने की मेरा अभिलाषा है।

211

यदि मेरे इस विध्वंसक कार्य को देखकर कोई अपना क्रोध प्रकट करेगा तो निश्चय ही मैं उसका विरोध करुगा। मैं उन सबका वध कर दूंगा। इस प्रकार इस कार्य को करने के पश्चात मेरा महत्व और भी अधिक हो जाएगा। मेरी सफलता द्विगुणित हो जायेगी।

212

उन्होंने उस परिस्थिति पर बार–बार विचार किया। वे वृक्षों को नष्ट–भ्रष्ट करने के लिए प्रस्तुत होकर खड़े हो गयें। उनकी दृष्टि उद्यान के सुन्दर–सुन्दर उन वृक्षों पर भी थी जो अत्यन्त मनमोहक थे। जो भी वीर राक्षस यहाँ उपस्थित हो, आगे बढ़कर मेरे समक्ष आ जाय और मुझसे संघर्ष करे। हनुमान जी ने ललकारते हुए कहा।

213

जैसे ही हनुमान ने वृक्षों को हिलाया, उनके पुष्प भी पूरी तरह हिलने लगे। पुष्प पराग पुष्पों सहित गिर–गिर कर झड़ने लगा। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे पराग का धूम्र ऊपर से उठता हुआ नीचे की ओर आ रहा है। पलाश वृक्षों के पुष्प पृथ्वी पर झड़–झड़ कर गिरने लगे। वे सभी पुष्प रक्तिम लाल वर्ण के थे, अतएव ऐसा प्रतीत होता था जैसे अग्नि की वर्षा हो रही हो।

214

जैसे प्रलय के अवसर पर पृथ्वी अग्नि की ज्वालाओं से भर जाती है, उसी भाँति वहाँ पर भयावना वातावरण एवं दृश्य उत्पन्न हो गया। वह दृश्य देखने में भयानक था। हिरन, बन्दर आदि सभी पशु जैसे इस अग्नि ज्वाल को देखकर डर–डर कर इधर–उधर भागने लगे। उनको ऐसा लगा जैसे वे अग्नि की लपटों में घिर से गये हैं और उससे बचना कठिन–सा हो रहा है।

अध्याय – 9

1–2

अशोक वाटिका के वृक्ष शब्द करते हुए टूट–टूट कर पृथ्वी पर गिरने लगे। हनुमान जी उन्हें तोड़–तोड़ कर नष्ट–भ्रष्ट करने लगे। वृक्षों का सर्वनाश चारों ओर दिखायी देने लगा। उन वृक्षों की शाखाएँ अब पृथ्वी पर बिखरी पड़ी थीं। शाखाओं के छोटे–छोटे टुकड़े भी गिरे पड़े थे। वृक्षों पर बैठे हुए सभी पक्षी शोर करते हुए उड़ने लगे। वे भी बहुत चौंके हुए थे। जो राक्षस उद्यान के रक्षक थे, वे सभी आश्चर्यचकित से रह गये। इसके पश्चात वे नगर की ओर भागे। समाचार देने के लिए वहाँ पर वे जा पहुंचे। वे सभी साथ ही साथ आये। सबने मिलकर रावण के चरणों पर गिरकर प्रार्थना की तथा रावण से इस प्रकार निवेदन किया :

3

हे देवों के शत्रु महाराज रावण ! हम सब आपसे आदेश लेने और आपकी आज्ञा का पालन करने के लिए आपके समक्ष प्रस्तुत हैं। एक बहुत विशाल वानर अशोक वाटिका में आ गया है। वह बहुत ही अशिष्ट भी है। उसने अशोक वाटिका उजाड़ डाली है और वृक्षों के वन को नष्ट–भ्रष्ट कर दिया है। उसने वृक्षों को तोड़–तोड़ कर पृथ्वी पर गिरा दिया है तथा उनका सर्वनाश कर दिया है। अनेक वर्णों के पुष्पों को उसने नष्ट करके धूलि में मिला दिया है।

4

इसकी अपेक्षा हे महाराज ! पहले तो देवतागण आपका पूरा सम्मान करते थे। मनुष्यों का तो कभी भी इतना साहस नहीं था कि वे आपकी आज्ञा का पालन न करते अथवा आपका सम्मान न करते। सभी मानव एवं देवता आपका सम्मान करना अपना कर्तव्य समझते हैं। साधारण वानरों में तो इतनी शक्ति थी ही नहीं, न तो उनमें इतना साहस ही था। वानर तो एक नीच पशु है। ऐसा क्या कारण आ गया है जो यह वानर अपनी सीमा का उल्लंघन कर आपका आदर नहीं कर रहा है तथा आपकी आज्ञा का पालन करने को प्रस्तुत नहीं है।

5

सूर्य की किरणें दिन के मध्य अर्थात मध्यान्ह काल में प्रखरता की चरम सीमा पर होती हैं। यह कहा जा सकता है कि उनमें इतनी प्रखरता होती है कि कभी भी वे शीतल हो ही नहीं सकतीं। जैसे उनकी उष्णता स्वाभाविक है पर उसी सूर्य की किरणें जब आपके उद्यान पर पड़ती हैं तो उनकी प्रखरता एवं उष्णता समाप्त हो जाती है। अकस्मात ही वे शीतल हो जाती हैं। इसका एकमात्र कारण यही है कि वे आपका समुचित आदर करती हैं। इसीलिए सम्मान प्रकट करने हेतु वे शीतलता प्रदान करती हैं।

6

तीव्र वायु के भीषण झोंके घोर रव करते हुए तीव्र गति से बहते हैं। उनकी गति एवं झोंकों से बड़े–बड़े वृक्ष टूट कर पृथ्वी पर गिर जाते हैं। वही झंझावात जब आपके उद्यान में आता है तो उसकी वह तीव्र गति नहीं होती वरन शीतल मन्द पवन में वह परिवर्तित हो जाता है। उसका शोर मचाते हुए बहना बन्द हो जाता है। वह आपसे बहुत भयभीत रहता है, इसीलिए मन्द–मन्द गति से आपके उद्यान में शीतल पवन की भाँति बहता है।

7

पूर्णिमा का पूरा गोल चन्द्रमा अपनी सम्पूर्ण आभा से विश्‍व में चन्द्र–किरणें बिखेरता है। वह जब आपके उद्यान में आता है तो प्रथमा का चन्द्रमा भी किरणों से पूरा प्रकाश देता है। वह सदैव ही किरणें बरसाता रहता है। वह कभी भी नहीं थकता। ऐसा लगता है जैसे अशोक वाटिका में चन्द्र किरणों से निरन्तर चाँदनी की धार गिराना उसका कर्तव्य है। उसी कर्तव्य को पूरा करने के लिए अशोक वाटिका में वह सदैव ही पूनम का चाँद बनकर मुस्कुराता रहता है।

8

वे सभी अनुकूल परिस्थितियां अब इतनी अधिक प्रतिकूल क्यों बनती जा रही हैं; इसका क्या कारण है ? यहाँ तक कि वानर जो एक नितान्त नीच पशु है उसने भी आपकी कोई चिन्ता नहीं की। आपका किसी भी प्रकार से सम्मान नहीं किया। स्पष्ट ही है कि उसने आपकी सम्पूर्ण अशोक वाटिका उजाड़ दी है। उसने उद्यान को नष्ट भ्रष्ट कर दिया है। एक अशिष्ट एवं नीच वानर ने यह विचित्र दशा उत्पन्न कर दी है। आप शान्त होकर चुपचाप इसे देख रहे हैं।

9

इस प्रकार सभी उद्यान–रक्षकों ने एकत्रित होकर दशमुख से प्रार्थना करते हुए उसे सभी गतिविधियों का परिचय दिया। दशमुख यह हाल सुनकर क्रोध से लाल हो गया। उसकी क्रोधाग्नि भड़क उठी। उसके पश्‍चात उसने राक्षसों की सेना को आक्रमण करने का आदेश दिया। हनुमान का निश्‍चय ही वध कर दिया जाये, यह निर्देश भी स्पष्ट था।

10

रावण की आज्ञा का पालन करने के लिए शत सहस्र राक्षस सेना प्रस्तुत थी। परशु, कुल्हाड़ी, भाले तथा

तलवार लिए हुए, वे सभी युद्ध के लिए प्रस्तुत थे। भाँति-भाँति के चक्र धनुष, पत्थर तथा फेंक कर प्रहार करने वाले अस्त्र-शस्त्रों से वे पूर्णतः सुसज्जित थे। इन शस्त्रों को सैनिक अपने हाथों में पकड़े हुए थे। वे सभी सैनिक एकत्रित होकर हनुमान पर आक्रमण करने के लिए अशोक वाटिका की ओर चल पड़े।

11

भीषण रव करके शोर मचाते हुए वे सभी अशोक वाटिका में आ गये। सघन आकाश में बिजली की भाँति गुरु गंभीर गर्जना करते हुए एवं घोर कठोर रव से वातावरण को कम्पित करते हुए उन्होंने हनुमान पर आक्रमण किया। हनुमान जी को भी क्रोध आ गया। उनकी मुखाकृति भी क्रोध से लाल होकर रक्तवर्ण की दिखायी देने लगी। ऐसा लगा जैसे उससे अग्नि की ज्वालाएँ उठ रही हों। उन्होंने भी राक्षसों के प्रन्युत्तर में मेघों की भाँति घोर गर्जना की।

12

राक्षसों की सेना जल के भीषण प्रवाह की भाँति भीषण शब्द करती हुई हनुमान जी पर टूट पड़ी। जैसे जल की बाढ़ आगे बढ़ती जाती है, उसी प्रकार राक्षसों की सेना ने चारों ओर से हनुमान जी को घेर लिया। उनकी तुलना में अकेले हनुमान सागर की भाँति स्थिर एवं दृढ़ थे जिन पर बाढ़ रुपी राक्षसों की सेना का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। प्रतिदिन के जीवन में यदि सागर में बाढ़ आती है, तो भी वह सागर के जल को अस्थिर नहीं कर सकती। इसी प्रकार राक्षसों का आक्रमण हनुमान जी को अस्थिर नहीं कर सकता था।

13

उस अशोक वन के प्रवेशद्वार बहुत बड़े - बड़े थे। उसके साथ ही साथ एक विशाल वृक्ष था जो प्रवेश-द्वार से सटा हुआ था। वह वृक्ष विशाल था। हनुमान जी अपनी रक्षा के लिए उसी पर चढ़ गये। वहीं से आक्रमण करने वाली राक्षसों की सेना का उन्होंने पूरी तरह सामना किया।

14

राक्षसों की सेना ने एकत्रित होकर हनुमान पर आक्रमण किया। कुछ राक्षसों ने बड़े-बड़े पत्थर हनुमान जी की ओर फेंके। कुछ अन्य राक्षसों ने उनको पाश फेंक कर उसमें फाँसने का प्रयास किया। वे सभी बड़े भयावह थे। उन्होंने पूरी शक्ति से हनुमान जी पर आक्रमण किया। सभी फेंके हुए पत्थर पृथ्वी पर इधर-उधर गिर गये। हनुमान जी को एक भी पत्थर नहीं लगा। सभी पत्थर उनके शरीर के पास से होकर निकल गये। कुछ राक्षसों ने भीषण बाणों से भी उन पर प्रहार किया। कुछ ऐसे भी थे जिन्होंने भाले से आक्रमण किया तथा हनुमान जी के

शरीर को बेधने का असफल प्रयास किया।

15

इन अस्त्र-शस्त्रों में कोई भी ऐसा नहीं था जो हनुमान जी के शरीर पर लग कर उनको घायल कर सके। उछलते हुए बाण हनुमान को न लगकर व्यर्थ हो गये। राक्षसों के प्रयास असफल सिद्ध हो रहे थे। वे बाण बिना लक्ष्य-वेध के ही वापस लौट रहे थे। हनुमान जी ने उनको असफल सिद्ध कर दिया था। इस प्रकार चारों ओर पाशों के ढेर लग गये थे। ग्रीवा में बाँध कर फाँसने वाली अन्य रस्सियाँ भी असफल सिद्ध हुई। राक्षसों के अस्त्र-शस्त्रों के सभी प्रयास एवं आक्रमण व्यर्थ सिद्ध हुए। हनुमान जी का एक भी रोम पृथ्वी पर नहीं गिर सका अर्थात कोई अस्त्र उन्हें नहीं लगा।

16

वाटिका में एक लम्बा एवं विशाल चन्दन का वृक्ष था। वह वृक्ष लम्बा, चिकना तथा विशेष रुप से शक्तिशाली एवं कठोर था। श्री हनुमान जी ने उसी वृक्ष को उखाड़ लिया तथा राक्षसों पर उसी से आक्रमण कर उन्हें मार डाला। बहुत से राक्षस उनके चारों ओर एक घेरा बनाकर खड़े हुए थे। उन पर प्रहार करके उन्हें भी हनुमान ने धराशायी कर दिया।

17

बहुत से ऐसे राक्षस भी थे, जिनके शरीर से रक्त बह रहा था। उनके मस्तक प्रहार से फट गये थे। कुछ के शरीरों की अस्थियाँ चूर-चूर होकर बिखरने लगी थीं। कुछ राक्षसों की ग्रीवाएँ टूट गयी थीं। वे पृथ्वी पर लुढ़क रहे थे। कुछ अन्य राक्षस रक्त उगलते हुए पलटा मार-मार कर अपने प्राणों का परित्याग कर रहे थे।

18

कुछ राक्षस ऐसे भी थे जो लंगड़ा-लंगड़ा कर चल रहे थे। उनके अंग-भंग होने से वे अपंग हो चुके थे। अशोक वाटिका में एक विचित्र दृश्य उपस्थित हो गया था। बहुतों का व्यवहार विक्षिप्तावस्था का भी सूचक हो उठा था। वे स्वतः ही प्रयास करके मार्ग में झुकते हुए धीरे-धीरे चल रहे थे। राक्षसों ने हनुमान जी पर जो पत्थर फेंके थे, उनके ढेर वहीं पर लग गये थे। बहुत से पत्थर तो प्रहार करते समय राक्षसों को ही लगे। इससे बहुत से राक्षसों की जंघाओं की अस्थियाँ टूट-टूट कर बिखर गयीं।

19

कुछ राक्षस ऐसे भी थे जो हनुमान की के प्रहार से केवल घायल हं. .. ुए वरन उनकी टांगें भी टूट गयी थीं। उदर में गहरे घाव भी हो गये थे। उनकी आँतें बाहर निकल आयी थीं। जिनके हाथों में धनुष बाण थे, वे ऐसे कुचले गये कि कष्ट से चीत्कार कर उठे। हनुमान ने उनके धनुष तोड़ डाले तथा भीषण प्रहार करक उनके कपालों को फोड़ दिया। रक्त की धाराएँ बह निकलीं।

20

अन्य राक्षसगण उस परिस्थिति से बहुत ही भयभीत हो गये थे। एक गहरी हीनता की भावना उनमें आ गयी थी। उनको हनुमान जी ने शीघ्रता से पीछे खदेड़ दिया। उन्होंने पद-प्रहार कर उनकी पीठें भी तोड़ दीं। वे भूमि पर गिर पड़ें तथा बड़ी कठिनाई से उठकर खड़े हो पाये। वे लंगड़ा-लंगड़ा कर चलने लगे।

21

कुछ ऐसे भी राक्षस थे, जो युद्ध क्षेत्र छोड़कर भाग निकले थे। वे उछल-कूद कर अपने प्राणों की रक्षा करने लगे। वे लौटते हुए पीछे की ओर भागने लगे। भय के कारण किसी ने भी मुड़कर पीछे नहीं देखा। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सिंह वन में हिरनों का पीछा करके उन्हें खदेड़ रहा हो। वे सभी राक्षस एक दूसरे से टकराते हुए गंभीर रुप में घायल होकर युद्धस्थल से भाग निकले।

22

राक्षसों की सेना की भी एक विशेष टुकड़ी थी। वे उनके चुने हुए वीर योद्धा माने जाते थे। वे शीघ्र ही इस आक्रमण का उत्तर देने के लिए वहाँ आये। वे युद्ध के अस्त्र-शस्त्रों से भली भाँति सुसज्जित थे। उसके साथ अश्व, गज, रथ तथा भांति-भांति के अन्य वाहन भी थे। सभी राक्षस योद्धा बहुत उत्तेजित एवं प्रेरित थे। सभी ने एकत्रित होकर घोर शब्द करते हुए हनुमान पर आक्रमण किया। वे आगे बढ़ने लगे और संघर्ष करने लगे।

23

इस आक्रमण को देखकर हनुमान जी ने और भी अधिक भीषण रुप धारण किया। वे भी क्रुद्ध होकर राक्षसों पर तीव्र प्रहार करने लगे। उन्होंने भी राक्षसों पर आक्रमण करने के लिए अपनी पूंछ को और भी अधिक बढ़ा कर एक विशाल रुप दे दिया। उन्होंने अपने शरीर की रोमराशियों को दृढ़तापूर्वक खड़ा कर दिया, जिससे वे कठोर हो सकें। उसके पश्चात फिर वे आकर उसी विशाल कतीमाँग वृक्ष पर चढ़ गये और उसकी शाखों पर झूलने लगे।

24

भयानक शब्द करते हुए राक्षस गण आगे बढ़ रहे थे। उन्होंने एक भैंसे के बराबर विशाल पत्थर को हनुमान जी की ओर लक्ष्य कर फेंका। उस प्रस्तर से हनुमान जी के वक्षस्थल को उन्होंने लक्ष्य बनाया। वह वक्षस्थल को छू तो सका, परन्तु उसका कोई प्रभाव अथवा आघात उनके शरीर पर नहीं पहुंचा। उस प्रहार का भीषण रव चारों ओर गूंजने लगा। उसके द्वारा न तो हनुमान को कोई आघात लगा और न उनको किसी कष्ट का अनुभव हुआ।

25–26

जो राक्षस वाहनों पर सवार होकर युद्ध कर रहे थे, युद्ध की भीषणता के कारण वे नीचे उतर पड़े। वे बहुत ही भयभीत हो गये। हनुमान जी ने उन पर लकड़ी तथा वृक्ष की विशाल शाखाओं से प्रहार किया, जिससे एक घेरे में ही बंधे हुए से वे धराशायी हो गये। उनके वाहन–चालकों ने भी अपनी सुरक्षा का प्रयास किया। वे रथों से नीचे कूद पड़े। जब उनके रथ–स्वामियों की मृत्यु हो गयी तो वे भी इधर–उधर भाग कर शरण लेने लगे। जो अन्य अश्वारोही राक्षस थे, उन्होंने भी आक्रमण का उत्तर देने के लिए युद्ध में अपनी कुशलता दिखाने की चेष्टा की। उन्होंने क्रुद्ध होकर म्यान से अपनी तलवारें खींच लीं। वे आहें भरते हुए हुंकार भी भर रहे थे। जब वे तलवार खींचकर आक्रमण के लिए प्रस्तुत हो रहे थे,तभी हनुमान जी ने उनको पकड़ लिया। उसी समय एक क्षण में ही उन्होंने उनको मार डाला। इस प्रकार राक्षस हनुमान जी का कुछ भी नहीं बिगाड़ सके। वे एक ही प्रहार में धराशायी हो गये।

27

अन्य राक्षस योद्धा जो हाथियों पर सवार थे,वे भी आगे बढ़े। उन्होंने हनुमान जी पर भाले से आक्रमण किया। उनका भाला चूक गया। वह भी हनुमान जी के शरीर पर नहीं लगा। शीघ्र ही हनुमान जी ने उस आक्रमण को मध्य में रोक कर असफल कर दिया। जो राक्षस हाथियों पर आरुढ़ थे,वे बहुत डर गये। उन्होंने देखा कि हनुमान जी उनके आक्रमण के प्रत्युत्तर में फिर उन पर भीषण प्रहार करने को प्रस्तुत हो रहे थे। वे अपने–अपने गजों से नीचे उतर कर भयभीत होकर इधर–उधर भागने लगे।

28

हनुमान जी ने गजों के मस्तकों पर भीषण प्रहार किये,जिससे उन गजों के मस्तक चूर–चूर हो गये। उनकी आँखें बाहर निकल पड़ीं। हाथियों के दाँतो को तोड़–तोड़ कर उन्होंने टुकड़े–टुकड़े कर दिये। अब हनुमान जी ने सिंह की भाँति आक्रामक रुप धारण किया तथा उनके भयानक रुप को देखकर राक्षस डर–डर कर इधर–उधर भागने लगे।

29

उसके पश्चात् राक्षसों की पैदल सेना के सैनिकों ने हनुमान जी पर आक्रमण किया तथा आक्रामक रुप में उन्होंने पूर्व की सेनाओं की हार का बदला लेने का भी पूरा प्रयास किया। उन्होंने यह निर्णय लिया कि वे युद्ध में किसी भी परिस्थति में कभी भी पीछे नहीं हटेंगे। उन्होंने कहा कि जो लोग युद्ध के मैदान को छोड़कर भाग गये हैं वे बहुत बड़े नीच एवं कायर हैं। यह कहते हुए उन सभी राक्षसों ने एक साथ मिलकर हनुमान पर भीषण आक्रमण किया। उनका घोर रव चारों ओर गूंजने लगा।

30

उन सभी राक्षसों ने पूरी शक्ति से आक्रमण किया। उनकी गतिविधियां बहुत ही तीव्र थीं। उनमें कुछ राक्षसों ने भाले से हनुमान जी को छेदने का प्रयास किया, परन्तु उन्होंने उस आक्रमण को भी प्रारम्भ में ही असफल कर दिया। उन्होंने उनकी गरदनें भी मरोड़ दीं तथा कुहनी से भीषण प्रहार करके उनको बहुत दूर फेंक दिया। उसके पश्चात् अपनी पूंछ से लपेट कर उन्हें काफी दूर झटक दिया। झटके से गिरने पर मूर्च्छित होकर वे पृथ्वी पर गिरते ही मर गये। कोई घायल जीवित नहीं बचा। केवल मृतकों के ही शवों के ढेर वहाँ लग गये।

31

जो राक्षस मृत्यु के शिकार न हो सके वे ही शेष बचे थे। वे सभी वहाँ से भाग निकले। उनमें से कुछ ऐसे भी थे जो अभी तक अधमरे–से थे। उन पर हनुमान ने एक बार ही केवल कुहनी से प्रहार किया था। वे सभी अपने ह्रदय को दबाये हुए खड़े थे। हृदय पर आघात लगने के कारण उनको सांस लेने में बहुत ही कष्ट हो रहा था। उनके शरीर पर सूजन आ गयी थी। उनके शरीर की नस–नस टूट चुकी थी। वे भयभीत होकर रोते चिल्लाते भागे जा रहे थे। उन्होंने रावण के पास आकर पूरी घटना का विस्तृत वर्णन प्रस्तुत किया।

32

हे महाराज ! हम सब बहुत दुःखी हैं। हम सबके शरीर टूटे हुए से हैं। युद्ध में हमारे पास सभी संभव शस्त्रास्त्र एवं वाहन आदि थे। अश्व, रथ और गज आदि सभी कुछ था। पहले हम सब अपार शक्तिशाली थे, परन्तु आज हम जैसे शक्तिहीन से हो गये हैं। हममें से ऐसा कोई नहीं है जो आज शत्रु को कड़ा प्रत्युत्तर देकर उसको गहरी क्षति पहुंचा सके। यह वानर अभी भी हमें उत्तेजित कर युद्ध के लिए आमन्त्रित कर रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि यह वानर हमारा सर्वनाश ही करके रहेगा।

33

युद्व से भागे हुए राक्षस योद्धाओं ने विनयपूर्वक रावण को उस भयानक युद्व की गतिविधियों से पूरी तरह परिचित कराया। इसे सुनकर दशमुख और अधिक क्रूर हो उठा। वह क्रोध से अंगारा हो गया। उसने अपनी सेना के सबसे उच्च श्रेणी के वीर योद्वाओं को आदेश दिया कि वे युद्व के लिए प्रस्तुत होकर उस वानर पर शीघ्र ही घोर आक्रमण करे और उसे धराशायी कर दें। उसके आक्रमण का उसको उचित उत्तर मिलना चाहिए। उनमें से कोई भी योद्वा ऐसा नहीं था जिसको आक्रमण करने में कोई आपत्ति होती। अतएव वे सेना के साथ पूरी तरह सुसज्जित होकर युद्व के लिए चल पड़े।

34

शत्रु पर पहले पूरी तरह विजय प्राप्त करने,साथ ही साथ उसको पराजित करने,युद्व में अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर जाने एवं वीरता से भाग लेने आदि गतिविधियों का उन योद्वाओं को गहरा अनुभव था। इस क्षेत्र में उनके समकक्ष किसी को भी नहीं रक्खा जा सकता था। उनके पास फेंककर प्रहार करने वाले भाले भी थे। ग्रीवा फांसने वाले जाल भी थे। उन सभी को उन्हेंने अपने साथ ले लिया। वे घोर शब्द करते हुए तथा बिजली की भाँति गुरु गंभीर गर्जना करते हुए आगे बढ़े।

35

उनके शरीर पुष्ट, सीधे तथा अथाह शक्ति वाले थे। वे प्रत्येक कार्य को शीघ्रता से करने की पूर्ण क्षमता रखते थे। उनके शरीर पर्वताकार विशालकाय थे और अत्यन्त भयावह भी थे। उनकी मूंछे काले बादलों की भाँति काली एवं घनी थीं। बिजली की भाँति उनके बड़े-वड़े दाँत चमक रहे थे।

36

उनकी गोल-गोल आँखों में जैसे प्रकाश पुंज चमक रहे हों। ये सूर्य की किरणों की भाँति प्रखर थे। सहस्त्रों किरणों की भाँति उनसे ज्योति किरणें फूट रही थीं। वे किरणें इतनी उष्णतायुक्त थीं कि अग्नि की ज्वालाओं की भाँति उनसे आग की लपटें निकल रहीं थीं। उनकी भौंहों के बाल इस भाँति उलझे हुए थे मानो उठता हुआ घूम्र विचित्र आकृति धारण कर चुका हो।

37

सभी मुख्य देवतागण ऐसे लग रहे थे जैसे उनके शरीर पर कुक्कुट चर्म चढ़ा हुआ था। उन देवों में किसी में भी इतनी शक्ति नहीं थी जो उन पराक्रमी राक्षसों से लोहा ले सकता। इस दृष्टिकोंण से यदि देखा जाय तो हनुमान जी ने वीरत्व का महान गौरवमय परिचय दिया। वे पूरी वीरता एवं दृढ़ता से उन पराक्रमी राक्षसों से युद्व करने के लिए प्रस्तुत हो गये। उनके हृदय में लेशमात्र भी भय नहीं था। उन्हेंने राक्षसों की सेना को इस प्रकार देखा जैसे सिंह गजों के समूह को देखता है और निर्भय होकर गजों पर आक्रमण करता है। बिना किसी प्रकार

के डर के वे युद्ध के क्षेत्र में राक्षसों से लड़ने के लिए आगे बढ़े।

38

उन सभी राक्षसों ने एक साथ ही मिलकर हनुमान जी पर भीषण आक्रमण किया। वे बादलों की भाँति हनुमान जी के निकट आकर छा गये। उन्होंने हनुमान जी को वानर समझकर अपने कठोर जाल फैला दिये और उन्हें उसमें फाँसने का प्रयास किया। फेंकने वाले भालों को फेंककर उन्होंने हनुमान जी पर प्रहार किया। कुछ राक्षस योद्धाओं ने तलवारें खींच ली तथा बाणों से उन्होंने हनुमान जी को बेधने का प्रयास किया। कुछ ऐसे भी योद्धा थे जिन्होंने उन पर चक्र का प्रहार किया। अत्यन्त उत्तेजित होकर वे भीषण रुप धारण करते हुए आक्रमण करने लगे। उन्होंने ऐसा प्रयास किया, जिससे हनुमान जी को घायल किया जा सके।

39

भीषण आक्रमण कर राक्षसों ने यद्यपि इतनी भीषण परिस्थति उत्पन्न कर दी थी, फिर भी हनुमान जी को उनसे कोई भय नहीं लगा। उन्होंने ताड़ का एक विशाल वृक्ष उखाड़ कर उसे घूमाकर उसी से राक्षसों पर भीषण प्रहार किया। राक्षसों को मारते हुए एवं धराशायी करते हुए वे फिर आगे बढ़े। जिसे भी वह वृक्ष लगा, वहीं चूर-चूर होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। वहीं पर उसी समय उसकी मृत्यु हो गयी।

40

कुछ ऐसे राक्षस भी थे, जो अब लगभग मरणासन्न थे। कुछ अधमरे से थे। फिर भी उन्होंने अपार साहस का परिचय देते हुए अपनी महान शक्ति का प्रदर्शन किया। उन्होंने सभी को अपने पराक्रम से आतंकित कर दिया। वे सभी एक साथ ही हनुमान को युद्ध में ललकारते हुए घोर रव करने लगे। कुछ के रुदन का भी स्वर सुनायी पड़ रहा था। उनका भीषण रव इस प्रकार था, जैसे पर्वत के शिलाखंड टूट-टूट कर गिरते हुए शब्द कर रहे हों। यह दृश्य हृदय विदारक था। उस घोर रव ने पृथ्वी एवं आकाश को कंपित करते हुए भय का वातावरण उत्पन्न कर दिया। उनके उस स्वर से वातावरण गुंजित होने लगा।

41

उन सभी राक्षसों की मृत्यु के कारण उनकी अस्थियों के ढेर एक पर्वत श्रेणी की भाँति बिखरे दिखायी दे रहे थे। उनकी अस्थियाँ भूमितल पर भी बिखरी पड़ी थीं। घायल होने वाले राक्षसों की संख्या की भी कोई सीमा न थी। इस प्रकार मृतकों एवं घायलों की एक बहुत बड़ी संख्या दिखायी दे रही थी। उनके मुखों से रक्त की धाराएँ बह रही थीं। वह इतना रक्तिम था जैसे लाल रंग की कोई जल धारा किसी

पर्वत की गुफा से बह निकली हो।

42

जब राक्षसों की पूरी सेना का संहार हो गया तो हनुमान जी उत्साहपूर्वक वहीं पर शान्त होकर खड़े हो गये। अशोक वाटिका में एक अति सुन्दर पारिजात वृक्ष भी लहलहा रहा था। उसको भी समूल नष्ट करने का निश्चय हनुमान जी ने किया। इसी उद्देश्य से वे उस वृक्ष के निकट गये। हिमवान मेरु पर्वत की तरह उस वृक्ष की बहुत विशाल शाखाएँ थीं। उसका तना सुवर्ण का था,जो सूर्य किरणों की भाँति चमक रहा था। उसकी बहुत सी शाखाएँ फूट-फूट कर बिखरी हुई थीं। सभी शाखाएँ एक दूसरे को परस्पर विचित्र ढंग से संगुम्फित किये हुए थीं। वे सभी लगभग एक ही प्रकार की थीं। वे आकार में भी लगभग एक दूसरे के ही सदृश थीं।

43

कर्णफूल, छोटी छोटी वाद्य-यत्रों की घंटियाँ, सुवर्ण के कंगन, भुजाओं में शोभा पाने वाले अन्य आभूषण, ब्राह्मणों के पवित्र उपवीत, मुद्रिका तथा चूड़ामणि आदि सभी आभूषण अनेक रुपों में उस अलौकिक पारिजात वृक्ष में फलों की भाँति लगे हुये थे। लाल-लाल रेशमी पताकाएँ उस विशाल वृक्ष पर फहरा रही थीं। उस वृक्ष की पत्तियां मन्द पवन के झोकों से हिल रहीं थीं। मोतियों की मालाएँ चारों ओर अपनी चमक एवं प्रकाश की आभा विखेर रही थीं। वे उस पारिजात वृक्ष की शाखाओं को प्रकाश-किरणों से प्रकाश पुंज की भाँति आलोकित कर रही थीं।

44

उद्यान में चारों ओर सुन्दर पौधे एवं लताएं आदि फैली हुई थीं। वे सभी जैसे सुवर्ण की ही थीं। वे पारिजात वृक्ष की शाखाओं से लिपटी हुई थीं। सभी प्रकार के पुष्प वहाँ पर पुष्पित हो रहे थे। उन सुन्दर पुष्पों की सुगन्धि सम्पूर्ण वातावरण को सुगन्धिमय बनाये हुये थी। विभिन्न प्रकार के पुष्प, पुष्पों की कलियाँ, गुच्छे, तानजूंग पुष्प, चम्पक सुगन्धि पुष्प, मन्दार, अशोक, मलूर, पुन्नाग, करव, अशान, अनार, श्रीगाडींग तथा आम्र वृक्षों की राजियां सुशोभित हो रही थीं।

45

इस प्रकार इस अलैकिक पारिजात वृक्ष सहित पूरी अशोक वाटिका हनुमान जी ने उजाड़ डाली। उन्होंने उस सुन्दर उद्यान का सर्वनाश कर दिया। उन्होंने सभी बड़े-बड़े वृक्षों की विशाल शाखाओं के टुकड़े-टुकडे कर डाले। बाद में जब वे बड़ी-बड़ी शाखाएँ पृथ्वी पर गिरी, पूर्णरुपेण चूर-चूर हो गयीं। ऐसा प्रतीत हो रहा

था जैसे लंका का पूर्ण विनाश ही हो गया हो। राक्षसगण निरन्तर दुःखी हो होकर रो और चिल्ला रहे थे। ऐसे लक्षणों का संकेत मिल रहा था जैसे जितने भी नीच प्रवृत्ति वाले चरित्रहीन विशालकाय राक्षस हैं,उस सभी का संहार निश्चय ही होकर रहेगा।

46

जब हनुमान जी ने अशोक वाटिका को नष्ट-भ्रष्ट करके सभी वृक्षों को भीषण क्षति पहुंचाई तो रावण के राजकुमार अक्षय कुमार ने हनुमान को दण्ड देने के उद्देश्य से अशोक वाटिका की ओर प्रयाण किया। अक्षय एक रणकुशल योद्धा था। वह युद्ध क्षेत्र में अपनी वीरता के कौशल कई बार दिखा चुका था। एक महान योद्धा के रुप में उसकी पूरी प्रतिष्ठा थी। वह अन्य शक्तिशाली वीरों की सेना का भी सेनाध्यक्ष था। वह एक विशाल धनुष धारण करता था। उसने धनुष को बाणों सहित अपने हाथ में ले लिया। भाँति-भाँति के अन्य अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित होकर उसने युद्ध के लिए प्रस्थान किया।

47

जिस समय अक्षय कुमार अशोक वाटिका की ओर आ रहा था उस समय उसने उद्यान में पृथ्वी पर गिरे टूटे हुए अनेक वृक्ष देखे। उन सभी वृक्षों की शाखाएँ टुकड़े-टकडे हो गयी थीं। उसने अर्द्धचन्द्र बाण धनुष पर चढ़ाया। हनुमान जी को लक्ष्य बनाकर उन पर बाण से उसने प्रहार करने की चेष्टा की। इससे पहले अक्षय का लक्ष्यकभी भी नहीं चूक पाया था। जैसे ही उसका बाण शत्रु को लगता था शत्रु की मृत्यु हो जाती थीं। यद्यपि अक्षय का यह बाण हनुमान जी के उदर में लगा, पर वे उससे घायल नहीं हुए। जैसे ही बाण उनकी ओर आया,उन्होंने उस प्रहार को झेलने की चेष्टा की। उसे रोक कर उन्होंने मध्य में ही चूर-चूर कर दिया। इसलिए अक्षय का लक्ष्य पूरा न हो सका। उसके बाण का प्रयोग असफल हो गया।

48

इस आक्रमण से क्रुद्ध होकर हनुमान जी ने भी भयानक रुप धारण कर लिया और आगे बढ़कर अक्षय पर भीषण आक्रमण कर दिया। उन्होंने वृक्ष की एक विशाल शाखा तोड़कर तीव्र गति से राक्षस अक्षय को लक्ष्य कर घोर प्रहार किया। एक बार की भयानक चोट से उसकी भुजा में गहरा घाव हो गया। भुजा से रक्त की धारा प्रवाहित हो चली। वह मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसने उछलकर फिर अपनी रक्षा करने का प्रयास किया। वह बहुत चिन्तित होकर अत्यन्त लज्जित हुआ। वह युद्ध का मैदान छोड़ कर भाग निकला। कुछ समय के बाद ही उसंका घाव भी ठीक हो गया। उसके पश्चात् रावण पुत्र अक्षय कुमार रथ पर बैठ गया।

49

अक्षय ने यह अनुभव किया कि वह पूर्ण स्वस्थ है। उसे किसी प्रकार का कष्ट नहीं हो रहा है। शीघ्र ही उसने अपने रथ को आगे बढ़ाने का आदेश सारथी को दिया। रथ के चक्र तीव्रगति से शब्द करते हुये आगे बढ़ने लगे। उसने फिर दूसरा बाण लेकर हनुमान को लक्ष्य बनाया और भीषण प्रहार किया। इस बार उसने शस्त्र का प्रयोग इस भाँति किया कि पूरे आकाश को उससे आच्छादित कर लिया। इस प्रकार उसके बाण सम्पूर्ण आकाश पर छा गये। उसका बाण हनुमान जी के वक्षस्थल पर भी लगा। वह बाण भी शीघ्र ही पूर्णरुपेण चूर-चूर होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। हनुमान जी को ऐसा प्रतीत हुआ जैसे किसी ने पुष्प फेंक कर उनके वक्षस्थल पर प्रहार किया हो।

50

अब अक्षय कुमार बहुत ही क्रोधातुर हो गया था। हनुमान ने उसके प्रहार को असफल कर उसका बाण पीछे लौटाते हुए फेंक दिया। बाद में फिर एक बार आगे बढ़कर अक्षय कुमार ने हनुमान को लक्ष्य बनाकर बाण चलाया। वह बाण सर्व संहारक था। वह इतना भीषण था कि उसका वर्णन करना कठिन है। शीघ्र ही हनुमान ने प्रत्युत्तर देते हुए एक वृक्ष की शाखा तोड़कर अक्षय पर आक्रमण किया। वह शाखा उसकी भुजा पर लगी और लगते ही टूट गयी। उसी समय अक्षय कुमार की मृत्यु हो गयी। उसके शरीर से रक्त की धाराएँ फूट-फूट कर बहने लगीं। शीघ्र ही उसका प्राणान्त हो गया।

51

हनुमान जी ने अक्षय कुमार का वध कर दिया। तब वे सागर में उछल कर कूद पड़े। वे वहाँ पर स्नान करने के लिए आये थे। युद्ध के कारण शरीर में थकावट आ गयी थी। वास्तव में उन्होंने बहुत समय तक भीषण युद्ध किया था। वे जानबूझकर श्रान्ति मिटाने के लिए सागर में स्नान करने गये थे।

52

जब हनुमान पूर्ण सन्तोष से स्नान कर चुके तो शीघ्र ही उछलकर अशोक वाटिका में लौट गये। वे वहाँ के पारिजात वृक्ष को गिरा कर समूल नष्ट करना चाहते थे। उन्होंने वहाँ जाकर उसकी शाखाओं को खींच-खींच कर तोड़ दिया। उसकी पत्तियाँ स्थान-स्थान पर बिखर गयी थीं। वृक्ष के झटके से हिलने के कारण उसके बहुत से कच्चे फल भी पृथ्वी पर गिर पड़े थे।

53

अशोक वृक्ष के फूल कुम्हला-कुम्हला कर जैसे उलझ गये हों। उनके तन्तु भी असुन्दर से दिखायी देने

.लगे थे। पलाश वृक्ष का कोई भाग भी शेष न बचा था। सम्पूर्ण वृक्ष चूर-चूर होकर धराशायी हो गया था। उसके टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। नागासारी वृक्ष की शाखाएँ टूट-टूट कर गिर पड़ी थीं। वृक्ष तथा शाखाएँ झुक गयीं थीं। आम्र वृक्ष भी टूट गये थे। उनकी शाखाओं से पत्तियाँ छूट-छुट कर अलग हो गयीं थी।

54

उनकी पत्तियां टूट-टूट कर इस तरह इकट्ठी हो गयी थीं कि उनका ढेर सा लग गया। ऐसा लगता था जैसे आकाश में बादल घिर आये हों और बड़े-बड़े ढेर की भाँति दिखायी दे रहे हों। कपूनडूंग वृक्षों,जिसमें बहुत फल लगते हैं,से अशोक वाटिका ढक गयी। उन सभी घने वृक्षों ने पृथ्वी पर गिरते ही बहुत सा स्थान घेर लिया। सभी वृक्षों को अपार क्षति पहुंची। फलों के गुच्छे पके और तैयार होने के कारण चुनकर उठाने योग्य थे क्योंकि वे सभी मधुर फल खाने के लिए ही थे। सभी फल आदि पृथ्वी पर ढके पड़े थे। हनुमान ने अब उछलकर छलांग लगायी।

55

विशाल ताड़ वृक्ष भी टूट टूट कर नीचे गिर पड़े। उन्होंने अनन्नास के पेड़ों को भी क्षति पहुंचाई। इस प्रकार बड़े वृक्षों के गिरने से छोटे फलदार वृक्ष भी टूट-टूट कर गिर पड़े। चन्दन वृक्ष की छाल छिल-छिल कर वृक्षों के तने से छूटने लगी क्योंकि बड़े एवं भारी ताड़ वृक्ष के तने उसके ऊपर आ गिरे थे। पक्षियों के बच्चे चौंक-चौंक कर इधर उधर भागने लगे तथा भ्रम में पड़कर शोर मचाते हुए चिल्लाने लगे। उन पक्षियों की माताएँ उनको सुरक्षित स्थान पर ले गयीं तथा उनके पास ही रहीं अन्यथा वे बहुत ही डरे हुए थे और उनकी सुरक्षा का कोई साधन भी नहीं था।

56 (ए)

वन्य कबूतर फल वाले वृक्षों पर बैठे हुए थे। वृक्षों के गिरने से वे उन्हें छोड़-छोड़ कर उड़ गये। उनको वहाँ एक बड़े वानर के आने की भी आहट मिली थी,जिससे कबूतर ऊंचे स्वरों में चिल्ला-चिल्ला कर शोर मचाने लगे। गिलहरी भी बहुत शब्द कर रही थी। इसी प्रकार अन्य पक्षी भी विशाल वानर को देखकर और डर कर शोर मचाने लगे थे। भाँति-भाँति के जो पक्षी वहाँ थे वे सभी अशोक वाटिका छोड़कर आकाश में उड़ गये।

56 (बी)

काडावा पक्षी भी चौंक कर इधर–उधर भागने लगे। वे भी अन्य पक्षियों के साथ एक ही पंक्ति में मिलकर उड़ने लगे। वे सभी एक बहुत बड़े आंकार के वानर को देखकर बहुत ही भयभीत हो गये और पूरी शक्ति से आकाश में उड़ गये। उनके साथ कबूतर, वेओ तथा सूआरी आदि अन्य पक्षी भी थे।

56 (सी)

काले बन्दर भी उस भयावह दृश्य को देंखकर स्वयं इतने डर गये थे कि गीनतूं गान वृक्ष की चोटी के एक कोने पर जा छिपे। यद्यपि उस वृक्ष के फल उनको बहुत ही स्वादिष्ट लगते थे। वे सदैव ही उन फलों को खाने के अभिलाषी थे, पर भय के कारण उस वृक्ष के फलों को भी नहीं खा सके।

56 (डी)

भ्रमर बिना गुंजार के कनीकीर पुष्पों के पास चले गये। ये सभी पौधे पाडाली वृक्षों के गिरने से उनके नीचे दब गये थे। उन पुष्पों के पराग को वायु के झोंके उड़ाकर ले गये।

57 (ए)

भय के कारण अशोक वाटिका में रहने वाले शशाक भी इधर–उधर भागने लगे। उनके लिए वहाँ पर रहना बहुत कठिन हो गया था। वे सदैव ही सरुनाई वृक्ष के नीचे छिपे रहते थे। उसकी पत्तियां घनी, शीतल एवं शान्त थीं। यद्यपि वह वृक्ष घना एवं चौड़ा था, परन्तु उसमें बहुत अधिक पक्षी विश्राम नहीं कर पाते थे। इसीलिए उस पर एक विशेष प्रकार का सूनापन था। वहीं शशाक आनंद से घुस जाते थे। वे अपने को पूरी तरह छिपा लेते थे। उनका शरीर बहुत छोटा एवं पतला था। वे जानबूझ कर एक विशेष स्थिति में पृथ्वी पर लेट जाते थे और प्रतीक्षा करते रहते थे। आवश्यक अवसर पाते ही वे भाग जाते थे। वहाँ पर एक प्रकार की लोमड़ी भी दिखायी देने लगी। वह भी डर से उछल –उछल कर भागने लगी। सभी शशाक चौंक–चौंक कर शीघ्रता से एवं तीव्रगति से चारों ओर भागने लगे।

57 (बी)

सागर के पक्षी एक साथ मिलकर ही पंक्ति में उड़ते हुए भाग रहे थे। वे देखने में बड़े ही सुन्दर लग रहे थे। वे मन्द गति से उड़ रहे थे। उन्होंने अपना मार्ग बहुत धीरे–धीरे पूरा किया। अशोक वाटिका में हिलते डुलते मन्द गति से आगे बढ़ते हुये विशालकाय हाथी बड़े दुःखी दिखायी दे रहे थे। उनके उदर की पूर्ति के लिए अब बहुत अधिक मात्रा में भोजन मिलना कठिन था। वे चतुरता से ही कुछ काम बना पाते थे। वे बहुत

थके हुए भी थे। वे दुःखी भी हो रहे थे क्योंकि किसी प्रकार उनको अपनी रक्षा के लिए एक सुअवसर प्राप्त हो पाया था पर उदर-पूर्ति का कष्ट था। उनके कंठ प्यासे थे तथा उष्णता के कारण उनकी जिह्वाएं लटक-लटक कर बाहर निकल आई थीं। उनकी कठिनाइयाँ वर्णनातीत थीं।

57 (सी)

हिरन चौंक-चौंक कर शीघ्रता से तथा तीव्र गति से उछलते कूदते हुए अपनी रक्षा करने के लिए भागने लगे तथा चींटी खोर भी उनके साथ ही साथ दौड़ने लगे। वे सभी श्लथ थे पर वनविलाव उनके साथ नहीं गये। वास्तव में चींटीखोर को कोई भ्रम एवं भय भी नहीं था। उसके हृदय में पूर्ण स्थिरता थी क्योंकि उसके शरीर पर मजबूत रोमों के वस्त्र थे और वह घने जंगलों में रहने के भी अभ्यस्त थे। साही पशु के प्रति उनके मन में एक विचित्र भावना आयी जिसने यह प्रयास किया कि उसकी माया भी सदैव ही उसके साथ रहनी चाहिए। वह पानडान वृक्ष के नीचे चौड़ा होकर लेट गया। चींटी खोर ने वनविलाव की दशा पर अपनी सहानुभूति प्रकट की।

57 (डी)

अशोक वाटिका में रहने वाले सभी जीव-जन्तु भयभीत होकर धीरे-धीरे इधर - उधर दौड़ने लगे। वे घने जंगलों में घुस कर छिपने का प्रयास करने लगे, जिससे उनकी रक्षा हो सके। अशोक उद्यान का जितना भी सौदर्य था, अब तक उसका सर्वनाश हो चुका था। उद्यान में रह रहे सभी जीव-जन्तुओं की दशा बहुत ही दयनीय थी। वही परिस्थिति वाटिका के फलों की भी हुई। उनकी मधुरता एवं सुन्दरता दोनों पर ही करुणा आ रही थी। हनुमान जी ने फल वाले वृक्षों को हिला-हिला कर सभी फल पृथ्वी पर गिरा दिये थे। फल पृथ्वी पर गिरते ही फट-फट कर चूर-चूर हो गये। छूते ही उनका रस भी बाहर निकल कर बहने लगा। ऐसा प्रतीत होता था जैसे रुदन के कारण उनकी आँखों से आंसू बह रहे हों। उनका पूरी तरह दुरुपयोग किया गया था। वे अब फट-फट कर खाने के योग्य भी नहीं रह गये थे।

58

हनुमान जी ने पारिजात वृक्ष को धराशायी करके समूल उखाड़ दिया। उन्होंने पश्चिम दिशा की ओर उद्यान से बाहर जाकर विश्राम किया। अब वे क्रुद्ध राक्षसों के दूसरे आक्रमण की प्रतीक्षा कर रहे थे। उनको यह भी आशा थी कि निश्चय ही रावण युद्ध करने के विषय में विचार कर रहा होगा। वह योजना बनाकर आक्रमण करने के लिए सोच रहा होगा।

59

यदि रावण बहुत क्रुद्ध हो गया होगा तो निश्चय ही आक्रमण करने के लिये यहाँ आयेगा। युद्ध में मेरा विरोध कर वह बदला लेगा। मैं उसके मस्तक को काट कर राम के समक्ष प्रस्तुत कर दूंगा। इस प्रकार राम की सच्ची सेवा मैं कर सकूंगा। राम निश्चय ही मुझसे बहुत प्रसन्न होंगे। देवी सीता भी इस महान सफलता से मुझ पर अपार प्रसन्न होंगी।

60

इस प्रकार हनुमान जी अपने हृदय में विचार करने लगें। शीघ्र ही उन्होंने देखा कि रावण का राजपुत्र इन्द्रजीत उन पर आक्रमण करने के लिए आ रहा था। रावण का ये पुत्र सम्पूर्ण विश्व में अपने पराक्रम के लिए प्रसिद्ध था। वह अपनी शक्तियों के लिए भी सर्वविदित था। एक महान योद्धा के रुप में सभी उसकी भूरि–भूरि प्रशंसा करते थे। उनका नाम मेघनाद था।

61

मेघनाद हनुमान जी के प्रति अत्यन्त क्रोध प्रकट करता हुआ उनके समक्ष आया। हनुमान जी ने अक्षय कुमार का वध किया था। मेघनाद ने प्रतिज्ञा की थी कि वह शीघ्र ही हनुमान को पकड़ कर बन्दी बना लेगा। किसी प्रकार का झूठा प्रदर्शन किये बिना ही वह अपने शस्त्रों और अस्त्रों को लेकर युद्ध के लिए आगे बढ़ा। उसने अपनी सेना के सैनिकों को आदेश दिया कि शीघ्र वे आगे बढ़कर युद्धक्षेत्र में अपनी रण–कुशलता एवं वीरता का पूर्ण परिचय दें।

62

उसका रथ विशाल, चौड़ा और तीव्रगतिगामी था। उसके चलने से भयानक शब्द भी होता था। सुसज्जित एवं शक्तिशाली अश्व उस विशाल रथ को खींच रहे थे। उसके रथ में बहुत से तीक्ष्ण एवं शक्तिशाली बाण रक्खे हुए थे। जो राक्षस उसकी सुरक्षा कर रहे थे, वे बड़े प्रवीर एवं योद्धा थे।

63

जब वह अपनी सम्पूर्ण सैन्य शक्ति को लेकर अशोक वाटिका में आया, तो वातावरण में एक भीषण रव गूंजने लगा। अशोक वाटिका में और अधिक विनाश होने लगा। वृक्ष एवं पौधों के हिलने से उनके पुष्प भी जैसे कम्पित होने लगे। मेघनाद की गतिविधियों को देखकर हनुमान जी उससे युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये। वे भी आगे बढ़े। उन्होंने इन्द्रजीत को सम्बोधित करते हुए अपना विचार इन शब्दों में प्रकट किया :

64

हे मायावी एवं प्रपंची मेघनाद ! तुम मेरे आगे आकर मुझसे युद्ध करो। तुम सभी राक्षसगण महानीच हो। मुझे रामदेव के प्रतिनिधि के रुप में जान लो। यदि तुम महाराज राम का आधिपत्य स्वीकार नहीं करते, तो मैं तुम्हारी सम्पूर्ण लंका की सभी वस्तुओं का सर्वनाश कर दूंगा। मैंने यही दृढ़ संकल्प कर लिया है।

65

इस प्रकार हनुमान जी ने इन्द्रजीत को सम्बोधित करते हुए कहा और एक बड़ा प्रस्तर-खण्ड इन्द्रजीत की ओर फेंक कर प्रहार किया। इससे इन्द्रजीत एवं उसकी सेना में खलबली मच गयी। एक भयावह परिस्थिति उन सबको दिखायी देने लगी। इन्द्रजीत के साथ अन्य राक्षस योद्धाओं ने हनुमान पर बाणों की वर्षा कर दी। वे बड़ी ही तीव्रता से उनकोलक्ष्य बनाकर उन पर प्रहार करने लगे। इन्द्रजीत ने नारायमल्ल नामक वाण से हनुमान जी को लक्ष्य बनाकर उन पर भीषण प्रहार कर दिया।

66

इन्द्रजीत का वह वाण बहुत ही तीक्ष्ण था। वह बाण हनुमान जी के निकट जाकर गिरा। हनुमान जी उससे धायल नहीं हो पाये। उसका लक्ष्य पूरी तरह सफल नही हो सका। जैसे ही बाण का संधान किया गया, वह इस प्रकार चूर-चूर हो गया, जैसे असंख्य पत्थरों वाले पर्वत पर बूंदों की वर्षा हो रही हो। वर्षा का कोई भी प्रभाव पत्थरों पर नहीं पड़ सकता। उसी भांति हनुमान जी पर भी बाण का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। केवल इन्द्रजीत का बाण पृथ्वी पर गिर कर व्यर्थ हो गया। उसका कोई भी स्वरुप शेष नहीं बच सका। वह पूर्णरुपेण नष्ट हो गया।

67

इन्द्रजीत की सम्पूर्ण विशाल सेना जैसे गहरे अन्धकार की प्रतीक-सी थी। उसे देखकर अत्यन्त भय उत्पन्न हो जाता था। उसमें भयानक भूधरों के आकार के राक्षस योद्धा थे। वे युद्ध क्षेत्र में बड़े ही रण-कुशल थे। तीव्रगति से हनुमान जी पर आक्रमण करते हुए वे आगे बढ़े। उन्होंने सम्पूर्ण शक्ति से एक साथ मिलकर हनुमान जी पर आक्रमण किया, परन्तु वे सब युद्ध में चूर-चूर होकर धराशायी हुए। उनका सम्पूर्णतः विनाश हो गया। हनुमान जी मानों प्रखर सूर्य की भाँति थे और अपनी तीक्ष्ण किरणों से अंधकार स्वरुप राक्षसों की सेना को नष्ट-भ्रष्ट कर उसका सर्वनाश कर रहे थे।

68

हनुमान जी ने अत्यन्त उग्र रुप धारण कर तीव्रगति से युद्ध की गतिविधि को और अधिक बढ़ा दिया। उन्होंने अपने हाथ में एक विशाल वृक्ष की शाखा ले ली। जो भी राक्षस उनसे संघर्ष करने के लिए आगे ब ़ढता, उसे वे उस शाखा से बाण की भाँति बेधते जाते थे। इस प्रकार एक-एक करके बहुत से पराक्रमी राक्षसों का हनुमान जी ने वध कर डाला। राक्षसों का सैन्य-दल यह देखकर बहुत दुःखी हुआ कि हनुमान पहले तो एक थे, बाद में अनेक हनुमानों के अस्तित्व उन्हें स्पष्ट दिखायी देने लगे। वे सभी यह देखकर आश्चर्यचकित रह गये कि एक व्यक्ति अनेक व्यक्तियों के रुप में कैसे परिवर्तित हो गया है। राक्षस जिस ओर भी दृष्टि डालते, उन्हें हनुमान जी ही दिखायी दे रहे थे।

69

किसी समय हनुमान जी एक ही दिखायी देते थे। किसी समय सहस्त्रों की संख्या में हनुमान के रुप दिखायी दे रहे थे। जब उन पर आक्रमण किया जाता, तो वे आकाश में ऊपर उड़कर वहीं ठहर जाते थे। जव राक्षस भी अत्यन्त तीव्रगति से उनके साथ ही साथ ऊपर आकाश में उड़ जाते थे तो शीघ्र ही हनुमान जी आकाश से नीचे की ओर पृथ्वी पर उतर आते थे। इस प्रकार एक विचित्र गति विधि दृष्टि गोचर हो रही थी।

70

हनुमान का पीछा करते हुए राक्षसगण भी उनके साथ ही पृथ्वी पर नीचे उतर आया करते थे। हनुमान फिर उन पर तीव्र गति से आक्रमण करते थे। वे राक्षसों को ऐसा कोई अवसर ही नहीं देते थे जिससे राक्षसों का उन पर आंक्रमण हो सके। आक्रमण देर से होने के कारण पूर्णतः असफल हो जाता था। वे सभी चिंन्तित होकर आक्रमण करने की चेष्टा करते थे। इस विचित्र परिस्थिति के कारण वे सभी भ्रम में पड़कर भयभीत हो गये थे।

71

इस प्रकार शनैः शनैः राक्षस दल संघर्ष करते-करते थककर चकनाचूर हो गया था। दुःखी होकर वे सभी इस भयानक युद्ध से कतराने लगे थे। इसी बीच हनुमान ने अपने आक्रमण की गतिविधियां और भी अधिक तीव्र कर दीं। उन्होनें उग्र रुप धारण कर युद्ध को और अधिक विकट रुप दे दिया। उन्होंने अपने हाथ में पारिजात वृक्ष की एक बडी सी शाखा ले ली, जिससे उन्होंने सभी राक्षसों पर भीषण प्रहार किया। उन सबको शाखा से मार-मार कर उनका सर्वसंहार कर डाला।

72

इस प्रकार जो राक्षस योद्धा इन्द्रजीत की भली भाँति सुरक्षा कर रहे थे, हनुमान जी ने उन सभी का वध कर दिया। अब इन्द्रजीत युद्ध में तीव्रगति से आगे बढ़ा। उसके रथ के पहियों के आगे बढ़ने का भीषण रव सुनाई दे रहा था। उसने तीव्र गति से तीक्ष्ण बाणों से हनुमान पर प्रहार किया। यह शस्त्र भी उनके शरीर पर नहीं लगा क्योंकि उसका बाण तीक्ष्ण नहीं था। वह असफल हो गया था।

73

हनुमान ने इन्द्रजीत के अश्व पर आक्रमण किया। इन्द्रजीत का अश्व सिंह की भाँति गर्जना करते हुए हिनहिना रहा था। दोनों शत्रुओं ने एक दूसरे पर भीषण आक्रमण किया। हनुमान जी उछल कर बहुत दूर जा गिरे। उन्होंने अपने तीक्ष्ण नखों के कोनों को अश्व के उदर में भोंक कर उसे फाड़ डाला। अश्व के दोनों नथुनों से रक्त की तीव्र धारा बह निकली। वह पशु शीघ्र ही मर गया।

74

जब उस अश्व की मृत्यु हो गयी तो इन्द्रजीत को बहुत आश्चर्य हुआ। उसे भूतकाल में ऐसा कोई योद्धा नहीं दिखायी दिया, जो अश्व का वध कर सकता था। हनुमान ने इस असंभव बात को भी संभव सिद्ध कर दिया। सभी प्रकार के शत्रुओं का उस अश्व ने संहार कर दिया था 'आश्चर्य–आश्चर्य' शब्द कह कर वे सभी चिल्लाने लगे। हनुमान जी ने उस अश्व को भी मार डाला।

75

उसके बाद इन्द्रजीत ने शक्तिशाली एवं सुन्दर अश्वों को अपने रथ के लिए मंगवाया। अबकी बार उसका रथ पहले की अपेक्षा भी अधिक आकर्षक था। जो राक्षस योद्धा उस रथ की रक्षा कर रहे थे वे सुरक्षा के लिए प्रस्तुत हो गये। वे सुरक्षा की कड़ी व्यवस्था करने लगे। उन सैनिकों की संख्या एक सहस्र थी। वे युद्ध के लिए पूरी तैयारी करके अपने तीक्ष्ण अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित होकर आए और युद्ध क्षेत्र में आक्रमण के लिए आगे बढ़े।

76

जितने भी विकट राक्षस योद्धा थे, उनको इन्द्रजीत ने एकत्रित किया। उन प्रवीरों ने कभी भी युद्ध में पीठ नहीं दिखायी थी। उन्होंने सदैव ही आगे बढ़कर शत्रु से लोहा लिया था। वे सभी बड़े ही रण–कुशल योद्धा थे। उन सभी को रथ की सुरक्षा के लिए रथ के आगे खड़ा किया गया। उन सबको युद्ध में महत्वपूर्ण भूमिका निभाने के लिए ही आगे किया गया था। इस प्रकार कुशल राजनीतिज्ञ की भाँति उसने युद्ध की व्यूह रचना की। इसे रथ

की व्यूह–रचना की संज्ञा दी जाती है।

77

जब राक्षसों की व्यूह रचना युद्ध क्षेत्र में आक्रमण की दृष्टि से पूरी तरह तैयार हो गयी तो उन सभी योद्धाओं में से प्रत्येक ने अपने–अपने शस्त्र ग्रहण किये। किसी ने तलवार, किसी ने धनुष तथा किसी ने अपने हाथ में भीषण भाला धारण किया। सभी ने मिलकर सम्मिलित रुप से हनुमान जी पर बाणों की वर्षा करते हुए घोर आक्रमण कर दिया। इस प्रकार इस सुव्यवस्थित युद्ध की गतिविधि से उन्होंने सम्पूर्ण आकाश को बाणों से भर दिया।

78

इसी रण कौशल के कारण भूतकाल में कोई भी योद्धा कभी इन राक्षसों से युद्ध करके विजयी नहीं हो पाया था। यहाँ तक कि देवराज इन्द्र को भी उनसे भय लगता था। राक्षसों के बाण बड़े ही तीक्ष्ण तथा उनका लक्ष्य अचूक था। यदि वे किसी व्यक्ति पर अकस्मात् उसका वध करने के लिए बाण का संधान करते थे तो निश्चय ही उसका विनाश हो जाता था। वे सभी लक्ष्यवेध में निपुण थे। इस प्रकार किसी भी शत्रु को वे शीघ्र ही मार डालते थे। उनसे बचकर जाना असंभव था।

79

ऐसा कोई योद्धा पृथ्वी पर नहीं था जो उन विशालकाय वीर राक्षस योद्धाओं को युद्ध में परास्त कर सकता था। उनके बाण निश्चय ही लक्ष्य-वेध करने में सफल रहते थे। जब उन योद्धाओं के बाण हनुमान जी के शरीर पर लगे तो उन्हें तनिक भी पीड़ा नहीं हुई। केवल बाण उन्हें स्पर्श ही कर सके। उनका कोई प्रभाव उनके शरीर पर नहीं पड़ा। केवल हनुमान की जंघा को वे वेध सके। उस बाण को जो उनकी जंघा में लग गया था अपनी जंघा से बाहर नहीं निकाला। उन्होंने उसको उसी रुप में अपनी जंघा में ही लगा रहने दिया।

80

युद्धक्षेत्र में किसी महान योद्धा के महान चरित्र का प्रमाण और क्या हो सकता था कि वह शरीर में शस्त्र लग जाने पर भी विचलित न हो। यही मान्यता हनुमान जी की भी थी। यदि इसका कोई प्रमाण एवं साक्षी न हो, तो वीरों की गौरव गाथा भी अधूरी ही रह जायेगी। इसीलिए हनुमान जी मौन होकर शस्त्र के प्रहार को सहकर भी शान्त एवं स्थिर चित्त बने रहे। उनके हृदय में कोई अशान्ति नहीं थी। यही कारण था कि जो बाण उनकी जंघा में जा घुसा था,उसको उन्होंने जंघा में ही घुसा रहने दिया। उसके कष्ट की ओर ध्यान न देते हुए उसको उन्होंने

जंघा के बाहर नहीं निकाला।

81

जब इस परिस्थिति का इन्द्रजीत को पता लगा तो वह बहुत क्रुद्ध नहीं हुआ। युद्व-क्षेत्र में हनुमान की इतनी बड़ी सहनशक्ति देखकर उसको आश्चर्य हुआ। वह समझ गया कि हनुमान का हृदय शान्त एवं गंभीर है। उसके पश्चात् उसने अपने धनुष पर बाण चढ़ाया। उसने उसकी प्रत्यंचा को इतना खींचा कि वह इन्द्रजीत के कानों तक जा लगी। इसके पश्चात् उसने हनुमान जी पर "नागपाश" शस्त्र का प्रहार किया।

82

नाग के रुप में ही वह "नागपाश" बाण भी था। उसकी उंन्चाई ताड़वृक्ष के बराबर थी। उसकी चौड़ाई की माप लेना संभव नहीं था। उसके दन्त लम्बे एवं तीक्ष्ण थे। उसको देखकर अत्यन्त भय लगता था। उसका पूरा आकार ही भयानकता का प्रतीक था। वह अपने दन्त बाहर निकाल कर दिखा रहा था,जो वज्र की भाँति प्रतीत हो रहे थे।

83

सर्पाकार वह नागपाश नामक वाण हनुमान की एक भुजा में घेरा डाल कर लिपट गया। नागपाश ने इस प्रकार उनको पूरी तरह लपेट लिया। उनकी जंघा को भी घुटनों तक उसने जकड़ लिया। इस प्रकार नागपाश के प्रहार से हनुमान पृथ्वी पर गिर पड़े।

84

यह परिस्थिति इसलिये नहीं आयी थी कि हनुमान जी में शक्ति का अभाव था और इन्द्रजीत ने नागपाश में इसीलिए उनको बाँध लिया था। स्थिति इससे भिन्न थी। यदि वे उसे तोड़ना चाहते तो इस नागपाश को अपनी अपार शक्ति से तोड़ भी सकते थे। वस्तुतः यह तो रावण से साक्षात्कार करने की उनकी सूझबूझ थी। इसीलिए वे मौन हो गये। उन्होंने कोई प्रयास नहीं किया। सर्प अथवा नागपाश का यह प्रहार सहन करके भी वे शान्त रहे। उसके विरुद्ध उन्होंने कोई संघर्ष नहीं किया।

85

जब हनुमान जी को नागपाश में बाँध लिया गया तो उल्लास एवं हर्ष से राक्षस सेना चिल्लाने लगी। उनका

यह भीषण शब्द चारों ओर सुनायी दिया। इन्द्रजीत ने भी इस उल्लास में राक्षसों का पूरा साथ दिया। अपनी राक्षसी सेना के निकट आकर उसने भी भीषण सिंहनाद किया। वे सभी एक दूसरे से मिलकर परस्पर धीरे-धीरे वार्तालाप करते हुए उत्तेजित स्थिति में आगे बढ़ें। उन्होंने हनुमान जी को घेर लिया एवं उन्हें मारने लगे। हनुमान जी का शरीर लौह की भाँति था जिस पर वे टीन के हथौड़ों से प्रहार कर रहे थे। हनुमान के शरीर पर उनके आघातों का कोई प्रभाव ही नहीं पड़ रहा था।

86

इस परिस्थिति को देखकर इन्द्रजीत नें राक्षसों को हनुमान पर आक्रमण करने से रोका। उसकी गहरी अभिलाषा थी कि रावण उसकी इस महान विजय की प्रशंसा करे। वह पूरी तरह से सम्मानित किया जा सके। इसीलिए उसने राक्षसों को सम्बोधित करते हुए कहा-"हे राक्षसों ! इस वानर के प्राण मत लो। इसको जीवित रहने दो। निश्चय ही अब यह कहीं भागकर जा नहीं पायेगा। मेरा ओदश है कि इसको सभी लोग पकड़कर उठा लो तथा राक्षस-राज रावण के समक्ष ले जाकर उपस्थित करो जिससे कि राजा रावण इसको भली भाँति देख सकें। यह नागपाश कितना शक्तिशाली है,इसका प्रमाण इसके प्रयोग से ही सिद्ध होता है। वास्तव में इसके समकक्ष दूसरा अस्त्र-शस्त्र नहीं है।"

87

हनुमान जी को कष्ट दे रहे राक्षसों को इन्द्रजीत ने इस प्रकार का आदेश दिया। उसके पश्चात् हनुमान जी को मारना-पीटना बन्द कर दिया गया तथा आदेशानुसार शीघ्र ही उन्होंने मिल कर हनुमान को पकड़ लिया तथ उठाते हुए कहा- "आहा ! यह वानर बड़ा ही नीच है। यह पूर्णरुपेण अशिष्ट भी है। इस धृष्ट नीच का वध करना ही उचित होगा। इसको अभी अग्नि में जला दीजिए। आइए ! इसकी गरदन ही उड़ा दें। इसका रक्तपान कर लिया जाना चाहिए अथवा इसके मस्तक को फोड़कर उसको चूर-चूर कर देना चाहिए।"

88

राम का यह दूत बहुत ही असम्य एवं अशिष्ट है। इसका उद्देश्य लंका में आकर निरन्तर मारकाट ही करना था अथवा यहाँ आकर राक्षसों को हराकर केवल अपने बल का झूठा प्रदर्शनमात्र ही करना था। यदि दूर से राम के चरित्र को देखा जाय तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे बड़े पवित्र विचारों वाले व्यक्ति हैं। यदि उनके कार्यों पर ध्यान दिया जाय तो निश्चय ही उनको नीच पुरुषों की श्रेणी में रक्खा जाना चाहिए। राम के चरित्र में भी क्रूरता का अभाव नहीं है। राम के दूत ने तथा राम ने निर्दोष राक्षसों का भी सदैव ही वध किया है। जो भी युद्ध में आगे बढ़ा, हनुमान ने उसी राक्षस का वध कर दिया। प्रत्येक को मार डाला। उनकी पूजा तथा तपस्या का क्या अर्थ है ? उनके व्यवहार और बुद्धि की कुशलता का क्या यही प्रमाण है कि जहाँ भी राक्षस अथवा उनकी सेना

दिखायी दी, उन्होंने आक्रमण कर उसका संहार कर दिया। उनका कृत्य केवल राक्षसों का वध करना ही रहा है। ऐसे व्यक्ति को उत्तम चरित्र वाला महापुरुष कौन मान सकता है ? उनके अस्त्र-शस्त्र उनके तपस्वी होने का प्रमाण नहीं हैं।

89

इसी प्रकार सभी नीच राक्षस परस्पर बातचीत करते हुए राम पर दोषारोपण कर रहे थे। बाद में वे इस प्रकार चिल्लाये कि उस घोर रव से गगन मंडल गूंजने लगा। इसके पश्चात् वे अशोक वाटिका से चल दिये। शीघ्र ही उन्होंने नगर की ओर प्रस्थान कर दिया। हनुमान जी रावण के समक्ष प्रस्तुत किये गये। राक्षसों ने सर्वप्रथम दशमुख रावण का अभिवादन किया। उसके बाद हनुमान को रावण के सामने खड़ा कर दिया।

90

हे महाराज ! यही वह नीच वानर है, जिसने अशोक वाटिका के पारिजात वृक्ष को नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है। उस उद्यान के अन्य सभी वृक्षों को अपार क्षति भी पहुंचाकर उद्यान का सर्वनाश इसने कर दिया है। सभी वृक्षों को गिरा कर मूल से भी इसने उखाड़ा और तोड़ दिया है।

91

जब रावण को अशोक वाटिका के उजाड़े जाने के विषय में इस प्रकार सूचित किया गया,वह आग बबूला हो गया। नीच,अशिष्ट एवं असभ्य इस वानर का तुरन्त ही वध कर दो। इस प्रकार के शब्द दशमुख के मुख से निकल पड़े। वह अत्यन्त क्रुद्ध था।

92

उस समय विभीषण वहाँ पर आये। वहां उन्होंने यह परिस्थिति देखी। जब उन्हें पता लगा कि हनुमान जी को बाँध लिया गया है तो उनके मन में हनुमान के प्रति दयाभाव आ गया। वे दुःखी हुए। शीघ्र ही उन्होंने रावण से कहा।

93

हे महाराज दशमुख ! सभी पवित्र ग्रन्थों में यह लिखा गया है और उनका पालन करना भी आपका कर्तव्य है कि दूत का वध नहीं किया जाता है। अतएव यह कार्य वर्जित है। यह दूत चाहे कितना भी क्रूर क्यों न हो, राम का यह दूत है, इसलिए इसका वध नहीं करना चाहिए।

अध्याय – 10

1

इस प्रकार शिष्टता के नियमों का स्मरण दिलाते हुए विभीषण ने अपना तर्क प्रस्तुत किया। सभी तर्क उत्तम एवं पवित्र शिक्षाओं के आधार पर ही दिये गये थे। रावण फिर भी अत्यन्त क्रुद्ध था। उसके क्रोध की सीमा न थी। उसने और अधिक क्रोध में आकर विभीषण से कहा।

2

क्या कारण है कि इस वानर ने इतनी नीचता का परिचय दिया है ? निश्चय ही इसका वध उचित होगा। वास्तव में यह वानर बड़ा ही क्रूर है। इसने मेरी सम्पूर्ण अशोक वाटिका को उजाड़ कर नष्ट-भ्रष्ट कर दिया है।

3

इस नीच वानर का एक और सबसे बड़ा अपराध यह है कि इसने राक्षसों की सेना का संहार कर दिया है। जो हमारी शक्तिशाली एवं उच्च स्तरीय राक्षस सेना थी, उसको भी नष्ट करने का इसने पूरा प्रयास किया है। क्या तुम्हारे इन तर्कों के अनुसार इतने पर भी इसका वध नहीं किया जाना चाहिए ?

4

इस धृष्ट वानर ने लंका की सुन्दरतम अशोक वटिका को उजाड़ दिया है तथा पूर्ण रूप से इसने उसे विध्वंस कर दिया है। इसीलिए निश्चय ही इसको मृत्युदंड देना उचित होगा। जो इतना अशिष्ट व्यक्ति है, उसके साथ यही व्यवहार किया जायेगा अर्थात् जो भी ऐसा करेगा, वह मृत्युदण्ड का ही भागी होगा।

5

इस प्रकार इस नीच व्यक्ति ने नितान्त अधम कर्म किये है। यदि हम उनके प्रति चुपचाप होकर शान्त रह जाएँ तो इनकी गतिविधियों का पता लगाना भी कठिन हो जायेगा। जब ऐसे व्यक्ति शत्रु हो जाते हैं तो बिना किसी प्रकार की चिन्ता किये अपार हानि पहुंचाते हैं। उस समय इनको रोकना कठिन हो जाता है। ऐसे लोग अपने अपमान से भी सदैव डरते रहते हैं।

6

यह व्यक्ति तो बहुत ही अशिष्ट एवं नीच वर्ग का है। आज तक मैंने जितने भी शत्रुओं पर विजय प्राप्त की है,उन सबने मेरा आधिपत्य स्वीकार कर सदैव ही मेरा सम्मान किया है। यहाँ तक कि मैं सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त कर विश्वविजयी हो चुका हूं। सभी देवतागण भी मेरे प्रति पूरा सम्मान प्रकट कर मेरा आधिपत्य स्वीकार करते हैं। वे सभी मेरे प्रति पूरी स्वामिभक्ति का परिचय देते रहते हैं।

7

इसीलिए निश्चय ही इस असभ्य वानर का वध किया जाना चाहिए। मेरी सम्पूर्ण अशोक वाटिका को इसने उजाड़ दिया है। मेरे उद्यान में सदैव ही फल फूल खिले रहते थे। उन सबको इस धृष्ट वानर ने उखाड़-उखाड़ कर तोड़ दिया है। यही नहीं वाटिका के सभी वृक्ष भी इसने धराशायी कर दिये हैं।

8

सभी व्यक्ति अथवा जो कोई भी मेरी अशोक वाटिका में आता था मेरा आज्ञाकारी बन कर मेरी आज्ञा का पालन करता था। मेरी वाटिका के सौंदर्य को किसी ने कभी कम नहीं होने दिया था। चाहे वे जड़ हों अथवा चेतन सभी मेरे नाम से थर-थर काँपते थे। सभी मेरा आधिपत्य स्वीकार करते थे। सूर्य अपनी उष्णता एवं तीव्रता को छोड़कर सदैव ही शीतलता प्रदान करता था। इससे उद्यान का वातावरण सुखमय बना रहता था। तीव्रगति से बहने वाली वायु भी अशोक वाटिका में मन्द-मन्द पवन बन कर बहती रही है।

9

हे नीच वानर ! तुमने किस उद्देश्य से अशोक वाटिका को उजाड़ने का दुःसाहस किया है ? क्या तुम्हें अपने प्राणों से तनिक भी मोह नहीं है। यद्यपि तुम एक पशु हो,फिर भी बहुत नीच,अशिष्ट एवं असभ्य हो। तुमने इतना दुस्साहस किया कि यहाँ पर आकर अशोक वाटिका उजाड़ कर,हमें युद्ध के लिए प्रेरित कर दिया।

10

रावण ने हनुमान से इस प्रकार के अपशब्द कहकर अपनी यह अभिलाषा व्यक्त की कि इस वानर का निश्चय ही वध कर दिया जाना चाहिये। इसे क्षमा करने के लिए कोई आधार कभी भी नहीं बन सकता है। अतएव हनुमान जी को रावण के प्रश्न का शीघ्र ही उत्तर देने के लिए विवश होना पड़ा। हनुमान जी ने जो कुछ कहा उसका उद्देश्य रावण को उचित सुझाव देना था। उन्होंने कहा कि रावण की नीचता की गहरी निन्दा की जानी चाहिए। फिर भी रावण यदि अपने कुकृत्यों के प्रति प्रायश्चित करे तो उसे क्षमा किया जा सकता है।

11

वे बोले– हे राक्षस राज ! आपका क्रुद्ध होना अर्थहीन है। एक वानर को लक्ष्य बनाकर भाँति–भाँति की बातें करना आपको शोभा भी नहीं देता है। जहाँ तक मेरे दूत होने का प्रश्न है,निश्चय ही मेरे प्रति एक दूत के रुप में दुर्व्यवहार किया गया है। इस समय मैं स्वयं नागपाश में जकड़ा हुआ हूं। इस परिस्थिति में जबकि मैं बंधा हुआ हूं,मेरा वध करने में आपको क्या कठिनाई हो सकती है।

12

जो लोग पवित्र विचारों वाले होते है और चरित्र के उच्च आदर्शों का पालन करते हैं, वे ही युद्ध में विजय प्राप्त करते हैं। वे नीच कर्मों से सदैव ही बचते हैं। अपने दोषों के प्रति लज्जा का भी वे अनुभव करते हैं। अपने से छोटे एवं नीच वर्ग के लोगों के प्रति कभी वे क्रोध नहीं करते। वास्तव में जो पशुओं के व्यवहार हैं, उनको भी पशु का व्यवहार समझ कर क्षमा कर देते हैं।

13

वास्तव में श्री राम बहुत पवित्र विचारों वाले विवेकशील व्यक्ति हैं। वे सदैव ही इस संसार की रक्षा करते हैं। वे बहुत ही महान हैं एवं उच्चादर्शों की रक्षा करने वाले हैं। उनको विजय–श्री की भी कभी कोई अभिलाषा नहीं है। यहाँ तक कि वे अपने शत्रु से भी कभी घृणा नहीं करते हैं। तुम नीच प्रवृत्तियों वाले क्रूर राक्षस हो,अतएव तुम जान बूझकर उनसे घृणा करते हो।

14

स्त्री, सुवर्ण तथा हीरे, अमूल्य मणि, माणिक्य आदि युद्ध में शत्रु पर विजय श्री प्राप्त करने के पश्चात् उसके फल–स्वरुप प्राप्त होते हैं। यदि तुम इन सबकी इच्छा रखते हो, तो ये वस्तुएँ तुम्हें राम से युद्ध करके कभी भी प्राप्त नहीं हो सकतीं। राम बहुत साधारण रुप से एक तपस्वी का जीवन व्यतीत कर रहे हैं। धन–सम्पत्ति उनके पास होने का प्रश्न ही नहीं उठता है।

15

यदि तुम राम के मित्र बन जाते हो, तो निश्चय ही तुम्हारी मित्रता राम एवं सुग्रीव दोनों से ही हो सकेगी। निश्चय ही इस मित्रता से संसार में शान्ति बढ़ेगी। दोनों पक्षों को सुख प्राप्त हो सकेगा तथा तुम्हारी सुरक्षा बढ़ेगी और सुख भी अधिक बढ़ता चला जायेगा। इसलिए किसी भी प्रकार के भ्रम में मत पड़ो। इस विषय

पर शांतिपूर्ण ढंग से विचार करके मित्रता के लिए तैयार हो जाओ।

16

राम एवं सुग्रीव सागर की भाँति गंभीर हैं। वे अपार शक्तिशाली भी हैं। जैसे सागर तल में अनेक मोती होते हैं,उसी प्रकार उनके अन्तस्तल में भी तुम्हें बहुमूल्य भावों के मोती प्राप्त हो सकेंगे। सागर तो मोतियों का भण्डार ही होता है। जब तुम उनसे मैत्री का हाथ बढ़ाओगे तो निश्चय ही तुम्हें इस मित्रता से गहरा लाभ होगा। तुम्हारी पूर्ण सुरक्षा संभव हो सकेगी। तुम्हारा शरीर भी विशालकाय है। वह ऐसी शोभा पाता है जैसे हिमालय पर्वत की कोई पर्वत श्रेणी हो। अतएव तुम्हें सुरक्षा की पूर्ण आवश्यकता भी है।

17

यदि तुम अपने जीवन में प्रसन्नतां और आनंद का अनुभव करना चाहते हो.तो तुम्हारे लिए यह एक बहुत बड़ी उपलब्धि होगी। यदि तुम धन–सम्पत्ति के अभिलाषी हो.तो वह एक बहुत ही साधारण प्रकार का लाभ होगा। सबसे महत्वपूर्ण लाभ तो तुमको तभी हो सकेगा,जब तुम राम के साथ मित्रता का हाथ बढ़ाओगे। यही लाभ अतिउत्तम होगा। इसलिए सबसे उचित यही है कि राम से मैत्री संबंध स्थापित कर लो, यही तुम्हारे लिए उचित होगा।

18

श्री लक्ष्मण जी अपनी विशेषताओं एवं चारित्रिक गुणों के कारण विश्वविख्यात हैं। इसके साथ ही साथ वे एक महान योद्धा भी हैं। वे राम के छोटे भाई हैं। अपने बड़े भाई के प्रति वे पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय देते हैं। उनके शब्दों का वे पूरी तरह पालन करते हैं। वे पूर्ण रुप से एक विश्वासपात्र व्यक्ति हैं। वे भी राम के साथ ही आपके मित्र बनने के लिए तैयार हो जायेंगे।

19

जितने भी वानर योद्धा हैं, वे भी आपसे मित्रता का व्यवहार करेंगे। वे बहुत शक्तिशाली तथा वानरराज सुग्रीव के प्रति पूर्णरुपेण स्वामिभक्ति का परिचय देते हैं। सुग्रीव की जो भी आज्ञा अथवा आदेश होता है,उसका पालन करना वे सभी अपना कर्तव्य समझते हैं। वे सदैव ही वानर–राज सुग्रीव का अनुगमन करते हैं। वे सुग्रीव के आदेशों को पूरा करने में किसी प्रकार की असावधानी नहीं करते हैं। जिस प्रकार का कार्य भी उनको सौंप दिया गया हो,वे उसे पूरा करने में अपना उत्तरदायित्व पूरी तरह से निभाते हैं।

20

राम एवं सुग्रीव से मित्रता करने में आपको बहुत से लाभ होंगे। अतएव आपको बहुत क्रुद्ध नहीं होना चाहिए। अपने हृदय को शान्त कीजिए। यही सबसे अधिक आवश्यक एवं उचित है। राम की राजपत्नी सीता को उन्हें लौटा दीजिए। यदि राम को आपके इस विचार का पता लगेगा, तो निश्चय ही वे बहुत प्रसन्न होंगे ? वे आपकी मित्रता को मूल्यवान मानते हुए उचित महत्व देंगे।

21

धार्मिकता, धन सम्पत्ति तथा प्रसन्नता यह तीनों ही गरिमाएं आपको निश्चय ही प्राप्त होंगी। आपके हृदय की सभी अभिलाषाएँ भी पूर्ण हो जायेंगी। वास्तविकता तो यह है कि आपको राम के समक्ष नतमस्तक होना पड़ेगा, जिससे आपको गौरव ही प्राप्त होगा।

22

राम सभी को पूर्ण आश्रय देने में समर्थ हैं। शत्रु को पराजित करने में दक्ष अन्य कोई उनके समकक्ष नहीं है। उनका एक ही वाण यमराज के सदृश है। यदि वे शत्रु का संहार करने को उद्यत हो जाते हैं तो निश्चय ही उसका संहार कर देते हैं। चाहे वह कैसा भी भयानक शत्रु ही क्यों न हो और उसका नाश करना बहुत ही कठिन क्यों न हो।

23

ताड़का, बाली, दीर्घबाहु, दूषण, मारीच तथा विराध इन सभी का वध राम ने अपने तीक्ष्ण बाणों से ही किया है। यद्यपि वे सभी अपार बलशाली थे।

24

इन सभी बातों को आप अपने क्रोध का कारण एवं आधार मत बनाइए। अब बहुत से राक्षसों का संहार भी हो चुका है। वास्तव में आपकी यह राक्षस–प्रजा बहुत ही नीच और कुटिल है। वे सभी राम का वध करना चाहते थे। उस समय उन सबका एकमात्र यही उद्देश्य था।

25

राम ने अपने सभी कार्यों एवं कर्तव्यों को विधिवत् पूरा कर दिया है। उन्होंने छली,प्रपंची राक्षसों का देखते ही देखते विनाश कर दिया है। इस प्रकार उन्होंने मनुष्यों के शरीर एवं प्राण की पूर्ण रक्षा की है। मानव जीवन के सभी मूल्य अब सुरक्षित रह सकेंगे। वास्तव में धर्म का यह भी एक उत्तम एवं महान लक्ष्य है।

26

जव हनुमान जी ने रावण से यह शब्द कहे तो रावण बहुत ही क्रुद्व हुआ। क्रोध के कारण उसका मुख लाल हो गया। उसका क्रोध झंझावात के सदृश था। उसमें सभी को नष्ट करने की शक्ति होती है। उसके नेत्रों की गतिविधियां क्रोध के कारण विचित्र सी थीं। भौंहों की कुटिलता को देखकर बहुत ही भय सा लग रहा था।

27

हे नीच वानर ! तुम महानीच हो। साथ ही साथ अज्ञानी एवं वज्रमूर्ख भी हो। तुम किसी भी प्रकार दूत बनने के योग्य नहीं हो। इसलिए तुम्हें अब बहुत अधिक बोलने नहीं दिया जायेगा। अनेक प्रकार के बहुत से संकेतों तथा व्यवहारों को प्रदर्शित करना अब आवश्यक नहीं है। यदि तुम राम के दूत बन गये हो, तो बस तुम केवल एक दूत ही बने रहो। इससे अधिक बात तुम्हें नहीं करनी है।

28

तुम अपने को एक दूत कहते हो। यदि ऐसा भी है तो तुमने बहुत से राक्षसों का वध क्यों किया है ? बिना किसी संकोच अथवा भ्रम के मेरे उद्यान को उजाड़ कर क्यों विध्वंस कर दिया तुमने ? क्या तुम मुझे बता सकते हो कि राम के दूत के रुप में कौन से नियमों का तुमने पालन किया है ? क्या यही तुम्हारी शिष्टता की परिभाषा है ?

29

हे वानर! तुम प्रतिक्षण राम की अपार शक्ति की ही प्रशंसा करते हो। उन कार्यों को तो कोई भी सरलता से कर सकता है। मैं अब तक यह नहीं समझ पा रहा हूं कि राम में ऐसी कौन सी शक्ति है जिसकी तुम निशिवासर प्रशंसा करते हो। राम ने अपने जीवन में कई कुकृत्य किये हैं,जिसके लिए वे दोषी हैं। उन्होंने बहुत से ऐसे राक्षसों का अकारण ही वध कर डाला है जो वध करने के कभी भी योग्य नहीं थे। राम ने ऐसे बहुत से अनुचित अपराध किये हैं जो अक्षम्य हैं।

30

तुम निश्चय ही पूरी तरह से दीर्घबाहु के विषय में जानते होगे। सभी को यह वास्तविकता ज्ञात है। वह अचानक ही राम को वन में नहीं मिला वरन् स्वयं वे उसी के पास जानबूझ कर गये। उसका वध करने के लिए ही वे वहाँ गये थे। दीर्घबाहु तो अपने पैरों से रास्ता भी नहीं चल सकता था। वह एक अपंग था। राम ने उसका वध कर दिया। तुम भी मुझे नीच स्तर के ही लगते हो। तुम निरन्तर ऐसे व्यक्तियों की प्रशंसा कर रहे हो,जिनके पास करुणा नाम की कोई भावना नहीं है। ऐसे नीचों को धिक्कार है,जो अपंगों का वध करते हैं।

31

ताड़का भी वास्तव में वध के योग्य नहीं थी। सर्वप्रथम तो वह एक स्त्री थी। दूसरे उसका कोई मित्र अथवा संरक्षक भी नहीं था। उसकी ऐसी दशा थी,फिर भी राम ने निर्दयता से उसका वध कर डाला। उसमें किसी के प्रति भी दयाभाव नहीं है। ऐसे व्यक्ति दोषी ही ठहराये जाने के सर्वथा योग्य हैं।

32

स्वर्ण, मणि, माणिक तथा स्त्री यह सभी वस्तुएँ युद्ध में विजय के परिणामस्वरुप प्राप्त होती हैं। यह बात अभी तुमने मुझसे कही है। हे अभिमानी वानर ! मुझे इन सब वस्तुओं की कोई आवश्यकता नहीं है। मैं केवल संसार में सुयश एवं प्रसिद्दि की कामना करता हूं। इसकी अपेक्षा मेरी अन्य कोई अभिलाषा ही नहीं है।

33

रावण ने कहा, हे हनुमान ! तुम बड़े ही अभिमानी हो। यह अभिमान तुम्हारी चारित्रिक विशेषता सा दिखायी देता है। जैसे राम के विषय में तुमने अपनी राय पूरी तरह स्थिर कर ली है। उसमें किसी परिवर्तन की भी संभावना प्रतीत नहीं होती। तुम यह भी नहीं सोच सकते कि राम के समकक्ष अन्य किसी को भी रक्खा जा सकता है। तुम्हारी दृष्टि में उनके समान इस जगत में दूसरा योद्धा नहीं है। स्वामिभक्ति का तुम सदैव ही उपदेश देते हो। तुम्हारा पूरा प्रयास इसी दिशा की ओर दिखायी देता है। ऐसे व्यक्ति भी हो सकते हैं,जो किसी दूसरे व्यक्ति के प्रति अथवा राम के प्रति स्वामिभक्ति दिखाने को प्रस्तुत न हों। इसका यह अर्थ नहीं कि उन व्यक्तियों का वध कर देना चाहिए। तुम्हारा संकेत तो उनके वध को ही मान्यता देता सा प्रतीत होता है,जो गलत है।

34

जो वास्तव में सच्चे अर्थों में सच्चे वीर एंव योद्वा हैं,उनसे यह आशा की जाती है कि उनके कार्य दूसरों के लिए आदर्श एवं सम्माननीय हों। यह भी देखा जायेगा कि उन्होंने जीवन में उच्च आदर्शों का ही पालन किया है अथवा नहीं। ऐसी ही उनसे अपेक्षा भी की जाती है। जीवन के ये उच्च आदर्श सदैव ही एक रुप में स्थिर नहीं

रहते। उनमें परिवर्तन भी होते रहते हैं, परन्तु वह व्यक्ति अशिष्ट है जो वह कार्य नहीं करता, जिसकी उससे अपेक्षा की जाती है।

35

हां! आश्चर्य है कि तुम जीवन के मूल्यों एवं आदर्शों से पूरी तरह अपरिचित हो। जीवन की वास्तविकताओं को भी भलीभाँति तुम नहीं समझते। क्या तुम्हारी इस नासमझी एवं अज्ञान पर मुझे आश्चर्य नहीं होना चाहिए। वास्तव में राक्षसों का चरित्र ही क्रूरता का प्रतीक है। राक्षस योद्धाओ की स्वाभाविक प्रवृत्तियाँ इस ओर सदैव ही रहती हैं। यदि वे दूसरों की स्त्रियाँ बलपूर्वक हरण करके छीन नहीं लेते, तो उनके नीच स्तर के चरित्र की सार्थकता ही क्या है ?

36

राम तथा सुग्रीव दोनों को ही मुझे अपना मित्र बनाना चाहिए, यह तुम्हारा विचार है। इसी बात पर तुम विशेष रुप से बल दे रहे हो। इससे तुम्हारी मूर्खता एवं अज्ञान का पूरा परिचय मिलता है। क्या राक्षसों के लिए मानवों एवं वानरों से मित्रता करना उचित हो सकता है। मेरा तो यह विचार है कि इस प्रकार की मित्रता पूर्णतः असंगत होगी। मेरी दृष्टि में दोनों के चरित्रों एवं कार्यों में मौलिक भेद है।

37

राम ने एक महान राक्षस योद्धा विराध का वध कर दिया। वह राक्षस युद्ध में क्यों न मारा जाता ? वह केवल अकेला ही था। अकेले ही उसने दो व्यक्तियों से युद्ध किया। उस समय राम ने बहुत नीचता का परिचय दिया। उनको कोई संकोच भी नहीं लगा। दो व्यक्तियों राम तथा लक्ष्मण ने मिलकर अकेले एक विराध से युद्ध किया। उस समय युद्ध में लक्ष्मण ने राम की पूरी सहायता की थी।

38

मारीच तो बहुत ही साधारण स्तर का राक्षस था। उसको वीर योद्धा भी नहीं माना जा सकता। यदि राम ने उसका वध कर किया, तो इसके लिए वे प्रशंसा के पात्र कभी भी नहीं हो सकते। तुम उन्हीं की भूरि--भूरि प्रशंसा करते चले जा रहे हो। मारीच एक नितान्त कायर था, वह भयानक शत्रु को जब भी देखता था तो युद्धक्षेत्र छोड़कर भाग जाता था। उसकी दशा तो उस मृग सी थी जो सिंह को देख कर डर के कारण चौकड़ी भरता हुआ भाग जाता है।

39

जब मैनें मारीच को आगे बढ़ने का आदेश दिया तो वह कुछ भी करने को प्रस्तुत नहीं था। वह स्वभाव से बहुत ही डरपोक था। वास्तव में मेरे आदेश का पालन करना उसका कर्तव्य था। इसीलिए उसने निस्संकोच मेरी आज्ञा का पालन किया। स्पष्टतः यही कारण था कि उसने विवश होकर मेरे आदेश से अपनी वीरता का परिचय दिया अन्यथा यह कार्य उसके लिए संभव ही नहीं था।

40

वानरराज बालि अपार शक्तिशाली था। तुम स्वयं ही उसकी वीरता का वर्णन कर रहे हो। क्या कारण था कि राम ने बालि को अपने वाणों से मारकर घायल किया ? यदि वास्तव में वह महाबलशाली होता तो, निश्चय ही राम के वाण उसे सरलता से वेध नहीं सकते थे। उनके वाण तभी चूर-चूर हो जाते। मुझे तो बालि भी एक साधारण स्तर का वानर ही प्रतीत होता है। वह कोई वीर योद्धा भी नहीं माना जा सकता है।

41

इस प्रकार बालि को मार कर राम ने घोर पाप एवं अपराध ही किया है। उन्होंने बालि को छिपकर एवं धोखा देकर मारा था, जबकि बालि अपने छोटे भाई सुग्रीव से युद्ध करनें में लगा हुआ था। हाँ ! मुझे राम के इस व्यवहार से बहुत दुःख है कि राम का चरित्र कितना हीन प्रकार का है।

42

जब रावण क्रोध से लाल अंगार हो गया तथा क्षुब्ध ह्रदय से राम के प्रति इस प्रकार की बातें कहीं, तो उसका उचित उत्तर देते हुए हनुमान जी ने कहा। उस समय उनके ह्रदय में दृढ़ विश्वास एवं अपार दृढ़ता थी। उनके विचार स्पष्ट थे एवं सत्य पर आधारित थे।

43

क्या आप मुझे इसीलिए दोषी ठहराते हैं अथवा मुझे अपराधी के रुप में देखते हैं कि मैंने आपकी अशोक वाटिका को उजाड़कर उसे विध्वंस कर दिया है ? किसी भी राजदूत को किसी कार्य के प्रारम्भ के लिए कोई न कोई मार्ग तो ढूंढना ही पड़ेगा। किसी प्रश्न को हल करने के लिए उसका उचित समाधान खोजने का कोई न कोई उपाय तो अवश्य ही करना पड़ेगा। इसके माध्यम से ही तो अपनी गतिविधियां प्रारम्भ की जा सकती हैं।

44

मुझे दूत के रुप में प्रतिनिधि बनाकर लंका में भेजा गया है, जिससे कि मैं देवी सीता की स्थिति का पूरा पता लगा सकूं। मैंने अपने कार्य एवं कर्तव्य को सीता जी से भेंट करने तक ही सीमित नहीं किया, वरन में आपसे भी मिलना चाहता था। स्पष्ट रुप से सभी बातें समझना चाहता था, अतएव मैंने आपसे मिलने का यही एक मार्ग खोज निकाला।

45

इसीलिये मैं यह आवश्यक समझता था कि अशोक वाटिका के वृक्षों को नष्ट-भ्रष्ट करु। मिलने के लिए आपके समक्ष इसी रुप में एक परिस्थिति उत्पन्न कर सकूं। अब आपको मुझ पर बहुत अधिक क्रोध करने की आवश्यकता नहीं है। मेरे प्रति बुरी भावना को भी आप हृदय से त्याग दीजिये। जो भी होना था, अब वह समाप्त हो चुका है। अतएव मेरे इस व्यवहर के प्रति आप मुझे क्षमा प्रदान करने की कृपा कीजिए।

46

मैंने आपके राजपुत्र अक्षय का वध आपकी सेना के साथ ही युद्ध में किया है। अन्य राक्षस भी उनके साथ उनकी सहायता कर रहे थे। उनका भी मैंने वध कर दिया है। यह भी केवल आपसे भेंट के लिए कोई मार्ग ढूढंने का एक प्रयत्न मात्र था। इसकी अपेक्षा मेरा अन्य कोई उद्देश्य नहीं था। मैं समझता हूं कि अपने उद्देश्य में मुझे पूरी सफलता मिली है। मेरा लक्ष्य सिद्ध हुआ है।

47

वे सभी राक्षसगण बड़े ही छली तथा प्रपंची थे। ऐसे बहुत से राक्षस आपकी सेना के प्रधान अंग थे। वास्तव में उन सबका वध करना ही उचित था। उन्होंने पूरे विश्व को कष्ट देकर दुःखी बना रखा था। वे सारे संसार को नष्ट-भ्रष्ट करने के लिए कटिबद्ध थे।

48

यही कारण है कि प्रपंची राक्षसों का वध करना मैं परम आवश्यक समझता था। वे महाभिमानी भी थे। यद्यपि वे वीरता का दावा करते थे परन्तु उनके सम्पूर्ण चरित्र का आधार नीचता और कुकृत्य ही था।

49

अभी स्वयं आपने मेरे समक्ष अपना विचार स्पष्ट किया है और कहा है कि युद्ध की विजय श्री का फल केवल वीरों का यश और सम्मान ही है। इसीलिए मैंने सभी नीच प्रवृत्तियों वाले छली एवं कपटी राक्षसों का वध किया है। क्या ऐसा करना अनुचित एवं व्यर्थ कहा जा सकता है ?

50

यद्यपि आप भी उच्च आदर्शों एवं आध्यात्मिक तत्वों को पूरी तरह समझते हैं परन्तु आपने भी राक्षसीवृति का ही अनुसरण किया है। आपकी वृत्ति का प्रधान आधार भी राक्षसी वृत्ति ही है। इसे नीचे स्तर की राक्षसी प्रवृत्ति भी कहा जा सकता है। उसी वृत्ति को आधार मानकर आपने भी अपने कार्यों को पूरा करने की चेष्टा की है। आपने अपना विरोध प्रकट करने के लिए भी वही मार्ग अपनाया है।

51

शिक्षा एवं सदुपदेश देना तथा उनके विषय में अत्यधिक बढ़ा-चढ़ा कर बातें करना बहुत ही सरल है। जहां तक आपका संबंध है, आपने भी बदला लेने के लिए अपनी नीच राक्षसी प्रवृत्ति का ही पूरा सहारा लिया है। सभी शिक्षाओं का पूरा ज्ञान होते हुए भी आप ने नीच प्रवृत्ति वाले राक्षसों के मार्ग का ही अनुसरण किया है तथा एक महाअभिमानी के रूप में आप सभी के समक्ष आये हैं। आपने स्वयं स्वीकार किया है कि आप स्वयं अच्छे विचारों एवं नीच प्रवृत्तियों के विषय में पूरी तरह जानकारी रखते हैं।

52

अब आपके पवित्र कर्तव्य एवं उच्च विचार तथा आदर्श कहाँ गये ? ऐसा प्रतीत होता है कि आपके चरित्र का आधार पहले पवित्र विचारों पर आधारित था, जिसका आपने सर्वथा परित्याग कर दिया है। पहले इस संसार की सुरक्षा करना सदैव ही आपका कर्तव्य था। यदि आप वास्तव मे अपनी रक्षा करने वाली प्रवृत्ति का पूरा तरह पालन करते, तो निश्चय ही इस संसार में सभी का पूरा कल्याण संभव हो सकता था।

53

तपस्वीगण सदैव ही सुनसान एवं निर्जन वन में तप तथा साधना करते हैं। उनकी रक्षा करना भी आपका कर्तव्य था। यदि पूर्ण रूप में आप सभी की सुरक्षा के प्रति किये गये कार्यों एवं कर्तव्यों को निभाते, इस संसार में निरीह व्यक्तियों का वध आदि न कर शक्ति से शान्ति की स्थापना करते तो निश्चय ही विश्व में आपका यश फैलता।

(यहां पर कवि ने यह स्मरण दिलाने का प्रयास किया है कि राक्षस शब्द का अर्थ क्या है ? रक्षा करने

वाले के रुप में ही राक्षस शब्द का प्रयोग किया गया है, जो अच्छाई और कल्याण का संकेत देता है अर्थात सभी की पूर्ण सुरक्षा का उत्तरदायित्व लेता है परन्तु यह अर्थ केवल हनुमान जी के मुख से प्रतिपादित होता है। जब रावण ने राक्षस शब्द का प्रयोग किया तो उसने उसका अर्थ बिल्कुल बदल दिया है। राक्षस शब्द का प्रयोग नीच प्रवृति वाले लोगों के लिए किया गया है जो मूल अर्थ का विपरीत अर्थ ही है।)

54

हे नीच प्रवृत्ति वाले कपटी रावण! अपने जीवन एवं व्यवहार में तुम्हारा चरित्र बहुत नीचे स्तर का हो गया है। तुमने अपने जन्मजात गुणों एवं व्यवहारों का परित्याग कर उनके विपरीत आचरण करना प्रारम्भ कर दिया है। आज तुम दोषी राक्षसों के तथा छलने एवं अपराध करने वालों के सबसे बड़े समर्थक एवं रक्षक हो, उन्हीं के सर्वेसर्वा भी हो। तुमने अपने चरित्र के सभी अच्छे गुणों की दिशा पूरी तरह मोड़कर बुराइयों की ओर कर दी है। इसी रुप में तुमने अपनी प्रवृत्तियों को प्रेरित करने की चेष्टा की है।

55

मैंने अभी आपसे यह प्रार्थना की थी कि आप श्री राम से मैत्री संबंध स्थापित कर लीजिए। उस प्रस्ताव के प्रति आपने अपनी पूरी असहमति प्रकट की है जो आपकी वज्र मूर्खता का पूरा परिचायक है। वास्तव में अब आपको कुकर्म एवं अपराध करने का पूरा अभ्यास हो गया है। वही आपके स्वभाव का पूरा अंग भी है।

56

स्वभाव के अंग तथा चरित्र को एक दूसरे की प्रतियोगिता में आप कमी नहीं रख सकते हैं। वे दोनों तो किसी न किसी रुप में जीवन के धरातल पर मिलकर निश्चय ही एकाकार हो जाते हैं। ऐसा आपका भी स्पष्ट मत है। मुझे अब पूरी तरह स्पष्ट है कि आपकी प्रवृत्ति छल, कपट से पूर्ण और मायावी है। अब आपकी अच्छे व्यवहारों के प्रति कोई श्रद्धा नहीं है, जैसा कि आपके आचरण से भली भाँति प्रकट भी हो रहा है।

57

विराध नाम का जो राक्षस था, जिसके विषय में आपने उल्लेख किया है, वह सदैव वन में तपस्वियों को अपार कष्ट पहुंचाता रहता था। उसका राम ने वध किया। वे हृदय से उससे किसी भी भाँति असन्तुष्ट नहीं थे।

58

जैसा कि मै पहले ही राम के विषय में कह चुका हूं वास्तव में वे पूज्य हैं। उनके प्रति सेवा भाव की भावना सभी में होनी चाहिए। उनके हृदय में मानव–मात्र के प्रति अपार प्रेम है। उन्होंने वन में तपस्या करने वाले सभी ऋषि – मुनियों को पूरी तरह आश्रय प्रदान किया है। उनका हृदय पारस – प्रस्तर की भाँति निर्मल और सभी के प्रति कृपालु है।

59

जहाँ तक मारीच का प्रश्न है, वह तो राम के बाण की लपेट में आ गया। वह तो माया–मृग था तथा दौड़ता हुआ उनके सामने से निकला। निश्चय ही मृगया के लिए उन्होंने उसका पीछा कर उस पर आक्रमण किया था।

60

इस घटना की पूरी परिस्थिति इस भाँति थी। जब राम ने लक्ष्य साध कर उसके पेट में बाण मारा, तो उसका प्राणान्त हो गया। इस संसार में कौन ऐसा शक्तिशाली क्षत्री है जो इस प्रकार के माया–मृग पर लक्ष्य साधकर उसको मारने में समर्थ हो सकता है।

61

आपने बालि वानर के विषय में भी संकेत किया है। क्या आप अत्यन्त शीघ्र ही इस बात को भूल गये कि बालि कितना शक्तिशाली था ? क्या वास्तव में यह सत्य नहीं है कि यदि बालि किसी शत्रु पर आक्रमण करता था, तो निश्चय ही उसका शत्रु उसे देखते ही मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर जाता था ?

62

अब मैं आपको एक कहानी सुनाता हूं। बालि का व्यक्तित्व क्या था, आप उसको ध्यान देकर सुनने की कृपा करें। एक बार बालि संध्या के समय ध्यान करते हुए ईश्वर की अर्चना में लीन था। सदैव ही वह ईश्वर का स्मरण किया करता था। अकस्मात् ही उसने एक व्यक्ति को अपनी ओर आते हुए देखा। उसके बहुत सी भुजाएं थी। उसने बालि को रोकने की चेष्टा की तथा ध्यानावस्थित एक व्यक्ति के कार्य में जानबूझ कर बाधा उपस्थित कर उसे उत्तेजित किया। यद्यपि बालि उस समय ईश्वर की आराधना कर रहा था, फिर भी उसने अपार शक्ति का परिचय दिया।

64

उस नीच राक्षस ने बाद में बालि के पास आकर उसे अपनी बाहों में भर लिया। बालि को दबाने की भी चेष्टा की। यह भी दिखाने का प्रयास किया कि वह नीच राक्षस अत्यन्त बलशाली भी है, जिसका वह प्रमाण देना चाहता था। यह केवल उसका मिथ्या अभिमान ही था। इसीलिए उसको बालि के समक्ष अपमानित भी होना पड़ा था।

65

जब वह नीच राक्षस बालि को अपनी बाहों में भरने का प्रयास कर रहा था, उसी समय अपनी शक्ति से बालि ने उसको बगल में दबा लिया, जिससे कि वह दु:खी होकर भयभीत एवं मरणासन्न होने लगा। उस समय उसका दम ही घुटा जा रहा था। ऐसा कौन व्यक्ति है जो इस विषय में पूरी कथा नहीं जानता है ?

66

इसीलिए हे दशमुख ! अपने हृदय को शान्त करो। राम एक अवतार हैं इसीलिए उन से युद्ध करने का विचार मत करो। यदि राम से तुम मित्रता का प्रस्ताव करते हो तो निश्चय ही तुम्हें असीम लाभ प्राप्त होगा। तुम तब अपने को सौभाग्यशाली समझोगे। यदि अब राम से युद्ध करोगे तो निश्चय ही लंका का सर्वनाश हो जायेगा।

67

इसीलिए तुम श्रीराम को राजा के रुप में स्वीकार कर उनका आधिपत्य भी स्वीकार कर लो तथा देवी की भाँति सीता के महत्व को स्वीकार करो। सम्मानपूर्वक राजा राम को उनकी राजपत्नी सीता लौटा दो। उनका आदर करते हुए उन्हें सुवर्ण, मणि और माणिक्य भेंट सवरुप दे दो।

68

हनुमान जी ने रावण के समक्ष इस प्रकार सभी बातें स्पष्ट कीं। उनके हृदय में लेशमात्र भी भय नहीं था। हनुमान ने रावण के समक्ष सारी बात कटु सत्य के रुप में कही थी। उस समय रावण की राक्षसी सेना, मंत्री तथा अन्य बहुत से राक्षस भी वहाँ पर उपस्थित थे। उन्हीं के समक्ष हनुमान जी ने रावण से स्पष्ट शब्दों में वार्तालाप किया।

69

हनुमान की यह सभी बातें सुनकर रावण ने बड़ा ही आक्रामक स्वरुप धारण किया। वह शीघ्र ही उठकर

खड़ा हो गया । अपने बायें हाथ को उठाकर हनुमान जी को सम्बोधित करते हुए उसने कहा तथा संकेतों से धमकाया । उसकी भौंहे वक्राकार होकर क्रोध से, जैसे आपस में मिलने लगी हों। उसका मुख क्रोध से लाल हो गया तथा उसका रूप बहुत ही भयानक दिखायी दे रहा था। उसके नेत्रों में क्रोध की लालिमा अग्नि की ज्वाजाओं की भाँति फूट रही थी।

70

हे वानर ! तुम यह क्या कहते हो ? तुम महानीच हो तथा शैतानी करने का तुम्हारा स्वभाव भी है। वानरों के विषय में यदि लोगों की यह धारणा है तो उचित ही है। तुम्हारे व्यवहार से स्पष्ट भी है। तुमने एक पागल की भाँति बहुत-सी व्यर्थ की बातें मेरी उपस्थति में सबके समक्ष कही हैं। अब मेरी आज्ञा है कि इसकी पूंछ मजबूती से बाँध कर उसमें आग लगा दो , चाहे इसको कितना भी हार्दिक कष्ट क्यों न पहुंचे। ऐसी व्यवस्था करो कि इसे पूरी तरह दण्ड दिया जा सके।

71

जब दशमुख ने इस प्रकार का आदेश दिया तो सभी राक्षस शीघ्र ही उठकर खड़े हो गये। उन्होंने लम्बी-लम्बी सूखी घास एकत्रित की। उसको हनुमान की पूंछ पर चारों ओर से लपेट कर बांध दिया गया। लम्बी-लम्बी पटटियों से फागुन के लम्बे-लम्बे टुकड़ों से तथा रेशमी वस्त्रों से पूंछ बांध दी गयी। सुवर्ण के कड़े भी पूंछ में डालकर लगा दिये गये। इस प्रकार जितनी भी कोमल वस्तुएं थीं अथवा जो आग लगते ही शीघ्र प्रज्वलित हो सकती थीं, उन सभी वस्तुओं को शीघ्र ही हनुमान की पूंछ में लपेट कर भली भाँति बाँध दिया गया।

72

जब उनकी पूंछ में सभी कोमल तथा शीघ्रता से जलने वाली वस्तुएँ बाँध दी गयीं तो उस पर तेल तथा जलने वाले अन्य तरल पदार्थ छिड़क दिये गये। बहुत से लोग अपने हाथों में मशालें ले लेकर आ गये। वे सभी हनुमान जी को चिढ़ाते हुए तथा भीड़ लगाकर शोर मचाते हुए आगे बढ़े। उनके हृदय में किसी प्रकार की दया एवं करुणा का भाव नहीं था। वे हनुमान जी की पूंछ में आग लगाने के लिए निस्संकोच प्रस्तुत हो गये! उन्होंने शीघ्र ही उनकी पूंछ में आग लगा दी। अग्नि के दाह से शीघ्र ही लपटें उठने लगीं। उसकी चमक किरणों की भाँति प्रकाश करने लगी। शनैः शनैः वे प्रकाश-किरणें चारों ओर बिखरने लगीं।

–0–

अध्याय – 11

1(क)

जब हनुमान जी की पूंछ से अग्नि की ज्वालाएं उठने लगीं, उसकी प्रकाश–किरणें चारों ओर बिखरने लगीं, हनुमान जी ने अपने शरीर को फुला कर बृहदाकार कर लिया। मेरु पर्वत के सदृश उनका विशाल आकार हो गया और नागपाश टूट गया तथा नष्ट भ्रष्ट हो गया। यही नहीं, उसके अनेक टुकड़े–टुकड़े होकर पृथ्वी पर गिर पड़े। नागपाश का बन्धन पूरी तरह समाप्त हो गया। हनुमान जी की भुजाएँ उससे मुक्त हो गयीं। वे शीघ्र ही मुक्त होकर आकाश में उड़ गये। उस समय तीव्र गति से प्रभंजन के झोंके भीषण रव करते हुए बहने लगे। घोर रव करती हुई झंझा के झोंके वातावरण में गूंज उठे। उसके साथ ही धूलिकण भी ऊपर उठकर आकाश में छाने लगे।

1 (ख)

इस प्रकार अग्नि की ज्वालाएं भी धीरे–धीरे उग्र रुप धारण कर चारों ओर बिखरने लगीं। वायु के तीव्र झोंकों के कारण अग्नि और भी अधिक तीव्रतर रुप में प्रजवलित होकर सभी ओर फैल गयी। ज्वालाएं भी पृथ्वी से आकाश की ओर उड़ गये। उन्हीं के साथ अग्नि की ज्वालाएं भी पृथ्वी से आकाश की ओर विखरती चली गयीं। इस प्रकार सम्पूर्ण वातावरण में एक भयानक स्थिति उत्पन्न हो गयी। हनुमान जी उछलकर राजमहल के भीतरी भाग के भवनों की ओर बढ़ गये। उस समय हनुमान जी का रुप बहुत ही सुन्दर प्रतीत हो रहा था एवं ज्योतिपुंजों से जगमगा रहा था। उनका आकार बहुत विशाल था। वहाँ पर अग्नि की प्रखर ज्वालाओं से चारों ओर अग्निदाह का ही दृश्य दिखायी देता था। वातावरण अनेक प्रकार के रंगों एवं भाँति–भाँति की किरणों से देदीप्यमान हो रहा था।

1 (ग)

ऊपर से अग्निपुंज पृथ्वी पर गिर रहे थे। अतएव पृथ्वी पर जैसे अग्नि प्रज्वलित हो उठी थी । चारों ओर विनाश का वातावरण उत्पन्न हो गया था। उसी अग्नि में राजमहल के मंडप तथा उनके लट्ठे आदि सभी जलकर भस्म हो गये। धीरे–धीरे अग्नि और भी अधिक प्रचण्ड रुप धारण करने लगी। वह सूर्य किरणों की भाँति चमकती हुई आगे बढ़ने लगी तथा अपनी भयानक लपटों को फैलाती हुई आकाश का स्पर्श करने लगी। हनुमान जी के हृदय में इसका लेशमात्र भी भय नहीं था। सभी राक्षस जो भूमि पर खड़े थे, वे यह दृश्य देख रहे थे तथा आश्चर्यचकित हो रहे थे। स्वतः ही उनको अनुभव होने लगा था कि वे हनुमान जी से वीरता के क्षेत्र में पराजित हो चुके थे। उनके समकक्ष वे इस क्षेत्र में नहीं रक्खे जा सकते थे। एक योद्धा के रुप में भी हनुमान जी उनकी तुलना में उन सबसे बहुत ही अधिक शक्तिशाली सिद्ध हो रहे थे।

1 (घ)

सभी राक्षसगण भयभीत होकर भौंचक्के से रह गये। उनके मुख पर डर की गहरी रेखाएं खिंची हुई थीं। चौंक-चौंक कर तथा भयभीत होकर वे चारों ओर देखते हुए राजमहल पर दृष्टिपात कर रहे थे। राजमहल अग्नि की लपटों में जल रहा था। उसको जलाती हुई आग की लपटें स्थान-स्थान पर फैल रही थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे मृत्यु के देवता काल ने अपनी लाल-लाल जिह्वा बाहर निकाल ली हो। उसी प्रकार लाल-लाल लपटें चारों ओर फूट रही थी, जो काल की जिह्वा की भांति लपक-लपक कर भय उत्पन्न कर रही थी। उन्हीं से धूम्र निकलता हुआ ऐसे लग रहा था जैसे काल की जिह्वा लपलपाती हुई धूम्र उगल रही हो। यह धूम्र बहुत ही घना था। चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार प्रतीत हो रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे काल देवता ने भयानक रुप धारण कर अपने मस्तक के बालों को बिखेर दिया हो तथा भय उत्पन्न कर दिया हो। जो भी उनके उस रुप को देखता था, वह निश्चय ही भयाक्रान्त हो जाता था। सभी राक्षसगण इस दृश्य को देखकर भय के कारण रोने चिल्लाने लगे। इस प्रकार आकाश उनकी भीषण चीत्कारों से गूंज उठा।

2 (क)

जिस प्रकार भगवान शंकर ने राक्षस त्रिपुरासुर के राजमहल को भस्मसात कर दिया था और उस राजमहल को घेर लिया था, उसी भाँति रावण के सुवर्ण महल जल-जल कर पिघलने लगे। उन स्वर्ण भवनों के बड़े-बड़े खम्भे एवं स्तम्भ चूर-चूर होकर धराशायी होने लगे। वे सभी स्तम्भ कठोर एवं विशुद्ध कणाश्मों के बने हुए थे। वे बहुत ही विशाल एवं दृढ़ थे, जैसे फौलाद के बने हों। सबसे अधिक दया की मूर्ति तो वे अप्सरायें थीं, जो राजमहल में निवास कर रही थीं। वे अग्नि की इन भीषण ज्वालाओं को देखकर आश्चर्य चकित और भौचक्की रह गयीं। वे सभी अत्यंत कोमलांगी अप्सरायें थीं, इसलिए इतने अधिक भीषण अग्निदाह के दृश्य को देखकर वे उसे सहन न कर सकीं। उन स्त्रियों के वस्त्रों को हाथों में थामे हुए उनके सेवकों को बड़ी ही लज्जा एवं जुगुप्सा का अनुभव हो रहा था। वे भाँति-भाँति से इस संबंध में दुःखी होकर चर्चा कर रहे थे। वे सभी थककर बैठ गये।

2(ख)

रावण के राजमहल के सरोवरों के चारो किनारों को चन्द्रकान्त मणियों से निर्मित किया गया था। वे सुन्दर जल से सदैव ही परिपूर्ण रहते थे। अब वे सरोवर जल के अभाव में सूखे पड़े थे। उनमें पानी का नाम भी नहीं था। अग्नि की भीषण उष्णता एवं लपटों ने जल को पूर्ण रुप से सुखा दिया था। अशोक वृक्ष के पुष्प उष्णता एवं धूम्र के कारण मुरझा-मुरझा कर वृक्षों से नीचे गिर रहे थे। सभी वृक्ष नष्ट भ्रष्ट होकर सूख से गये थे। उन पर निवास करने वाले पक्षी दुःखी होकर चिल्ला रहे थे। इस विध्वंस एवं उथलपुथल को देखकर वे और भी

अधिक डर गये एवं शोर करने लगे। कुछ पक्षी बहुत ही व्याकुल होकर इधर–उधर भागने लगे। वे नीचे झुकने लगे तथा अपनी रक्षा करने लगे। हंस एक दूसरे के निकट जा कर खड़े हो गये तथा भय के कारण बड़ी कठिनाई से अपना स्वर गुंजित कर सके। सारस के जोड़े भी इस भीषण परिस्थिति में कलरव न कर सके।

2(ग)

रावण की सारी राक्षस सेना तितर–वितर हो गयी थी। गिरते–पड़ते राक्षस गण इधर उधर दौड़ने लगे। वे शीघ्र ही आकाश की ओर उड़ने लगे। उनके भवन जल–जल कर भस्मसात हो गये थे। वे अग्नि में जलकर पूरी तरह नष्ट–भ्रष्ट हो चुके थे। गजों की परिस्थिति पर तो बहुत ही अधिक दया आती थी। वे अपने खूंटों से बंधे हुए अग्नि की तीव्रता के कारण झुलसे जा रहे थे। इसीलिए वे बहुत दुःखी भी थे। उसी प्रकार अश्व भी इस अग्निजाल की लपेट से न बच सके। वहाँ पर ऐसा कोई राक्षस नहीं था, जो उन पर सवारी कर सके। अश्वों ने भी अग्नि की लपटों से बचने का प्रयास करते हुए छलांगें मारना प्रारम्भ किया। वे पृथ्वी पर गिर पड़े तथा उसी अग्नि के घेरे में आ गये, जो सभी को लपेटे हुए भस्मसात किये दे रही थी।

2(घ)

लड़ने वाले कुक्कुट अन्य पक्षियों–मैना एवं बैओ से पारस्परिक वार्तालाप करने लगे। मैना, शुक आदि बहुत से पक्षी जो सुवर्ण के पिंजरों में स्थित थे, वे सभी झुलस–झुलस कर मर गये। किसी की भी दृष्टि उन पर नहीं पड़ सकी। किसी ने उनकी ओर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। उस समय राक्षसियाँ अपने ही शरीरों को नहीं संभाल पा रही थीं। वे दौड़ती हुई आगे भागी चली जा रही थीं। वे सभी अत्यन्त दुखी हो–होकर आहें भर रही थींउनके मुख से ये शब्द निकल रहे थे "आडूह, आह, आहाई आदि आदि।" इन शब्दों को मुख से निकालते हुए चिल्लाती हुई वे रो रही थीं। उनके रुदन स्वर चारों ओर गूंज रहे थे। वे चारो ओर उन राक्षसों को भी देख रही थीं, जो लगभग अग्नि की लपेट में आकर पृथ्वी पर गिर गये थे। वे मूर्ख अकस्मात ही प्राणों की रक्षा के लिए दौड़ पड़े थे, इसीलिए पथभ्रष्ट होकर वे अग्नि में जा गिरे। अधमरे होकर वे पृथ्वी पर लोटने लगे।

3

इस प्रकर अग्नि से लंका की दुर्दशा हो गयी। स्वर्ण की लंका जलकर राख हो गयी। नागासारी के वृक्ष नष्ट होकर धराशायी हो गये। मंदार, अशोक, पुन्नाग आदि वृक्षों की पत्तियाँ आग की उष्णता से झुलस गयीं। यही नहीं उनके पुष्प और शाखाएँ भी आग की लपटों मे आकर जल गयीं। तानजूंग, आम, गोला और माजा (वितव) आदि फलों के वृक्ष आग में जलकर भस्म हो गये। जामवू तथा रामबूतान आदि फलों के वृक्ष भी जल

गये। ड्रीयान, मांगीस, पूरीयान तथा अनन्नास आदि फलों के वृक्ष भी अग्नि की उष्णता से विनष्ट होकर पृथ्वी पर गिरे पड़े थे।

4

जब लंका पूर्ण रुपेण जलकर भस्म हो गयी तो हनुमान उछलकर फिर अशोक वाटिका में चले गये। उसके बाद वे शीघ्र ही सीता जी के पास आकर उपस्थित हो गये। हनुमान जी ने देखा कि सीता जी वहाँ पर बहुत निराश और दुःखी तथा विरह वेदना से व्यथित बैठी हुई थीं। वे धीरे-धीरे फूट-फूट कर रो रही थीं। उनके केशों के गुच्छे बिखरे पड़े थे। उनके केश सदैव ही खुले एवं अव्यवस्थित रुप में बिखर रहे थे। वे अशोक वृक्ष के नीचे बैठी अत्यन्त दुःखी जीवन व्यतीत कर रही थीं। वे भूमि पर ही शयन करती थीं। यहाँ तक कि चटाई भी विछाकर उस पर वे नहीं लेटती थीं। अपने दुःखी जीवन के स्वरुप को समझकर भी वे स्वयं को पूरी तरह स्थिर किये हुए थीं।

5

हनुमान जी ने शीघ्र ही आगे बढ़कर सीता के चरणों की वन्दना की। शीघ्र ही उन्होंने निवेदन किया कि हे देवी ! मैं आपका दास हनुमान हूं। मैं महान राजा राम का प्रतिनिधि हूं। मैंने अपने आप को यहाँ श्री राम के आदेशों तक ही पूरी तरह सीमित नहीं किया है वरन कुछ अन्य आवश्यक कार्य भी किये हैं। इसके पश्चात जब मैं वापस लौट कर जाऊंगा, तो ऐसे बहुत से चिन्ह एवं संकेत हैं जिनसे राम को पूरी परस्थिति स्पष्ट हो जायेगी। हाँ ! अब मैं आपसे प्रार्थना करता हूं कि आप मुझे राम के पास वापस लौटकर जाने की आज्ञा दीजिए जिससे कि मैं श्री राम के पास जाकर उनको सभी परस्थितयाँ स्पष्ट कर सकूं और पूरा समाचार शीघ्र दे सकूं। इन बातें को सुनकर राम को अपार प्रसन्नता होगी।

6

इस प्रकार देवी सीता से आज्ञा लेकर हनुमान शीघ्र ही लौटने के लिए तैयार हो गये। उसके बाद उन्होंने सीता की पद-वन्दना की। शीघ्र ही वे आकाश में उड़ गये। उनकी आकृति से किरणें फूट रहीं थीं। उन्होंने अपने शरीर को फिर विशालकाय कर लिया था। उनका रुप अब बहुत ही भयानक था। सम्पूर्ण आकाश-मंडल में उनका भीषण रव गूंज रहा था, जो वातावरण को कंपित कर रहा था। आकाश में तीव्र वायु एवं तूफान के कारण भीषण शब्द उठ रहा था। प्रवल झंझा के झोंके आ रहे थे जिनसे वातावरण परिपूरित था। इसे देखकर देवी देवतागण भी चौंक रहे थे।

7

सागर में उंची लहरें उठने लगी थीं। हनुमान जी के उड़ने से वायु का तीव्र प्रकोप व्याप्त हो गया था। इससे सागर में उत्ताल तरंगे भयानक शब्द करती हुई ऊपर उठने एवं गिरने लगीं। सागर में रहने वाले सभी जीव–जन्तु डर–डर कर अकुलाने लगे। ऐसा लग रहा था जैसे सागर तल में नागराज के जागृत होने पर उनके हृदय में भाँति–भाँति की आशंकाएँ उत्पन्न हो जाती थीं। अब सम्पूर्ण सागर तल हिलने लगा था। सभी उस भीषण परिस्थिति को देखकर भ्रम में पड़ गये थे। वायु घोर रव करती हुई तीव्रगति से बहने लगी थी, जिससे सभी वृक्ष भी हिलने लगे थे। महेन्द्र पर्वत भी कम्पायमान हो उठा था। जितने वानरगण सागर तट पर हनुमान की प्रतीक्षा कर रहे थे, वे भी शीघ्रता से इस दृश्य को देखकर एक दूसरे के निकट आने लगे। उनके मन में शत्रु की आशंका उत्पन्न हो गयी और उनकी शक्ति का भय उत्पन्न होने लगा। वे शत्रु से सशंकित हो उठे।

8

जब हनुमान जी सागर पार कर तट पर पहुंच गये, सागर की लहरों में थपेड़े से लगे। उसके साथ ही बड़ी–बड़ी लहरें भी उठने लगीं। उन्होंने विशाल वृक्षों की शाखाओं को अपने बहाव में लपेटते हुए तट की ओर फेंक दिया, जिससे सुन्दर एवं आकर्षक पुष्प भी सागर–तट पर आकर एकत्रित हो गये तथा उसकी शोभा बढ़ाने लगे। वे पुष्प भूमि पर बिखरे पड़े थे, जैसे चटाई बिछी हो। उनकी मीठी सुगन्ध वातावरण में चारो ओर बिखर कर उसे सुगन्धियुक्त बना रही थी। शीघ्रता से कित्ररगण एक दूसरे से हास–परिहास करते हुए वहाँ आये। उस पुष्प–राशि पर लेट–लेट कर वे आनंद मनाने लगे। वे सभी वहाँ आकर अपनी थकान दूर करने के लिए विश्राम करने लगे।

9

अब हनुमान उस स्थान पर आये, जहाँ पर सभी वानरगण उनकी प्रतीक्षा कर रहे थे। वे निरन्तर उनके आने की प्रतीक्षा कर रहे थे। हनुमान जी का स्वागत करने के लिए जाम्बवान, अंगद तथा नील प्रसंत्रतापूर्वक अन्य सभी वानरों के साथ आगे बढ़े। उन्होंने सोचा कि निश्चय ही हनुमान जी ने दूत के रुप में अपना कार्य पूर्ण कुशलता से कर लिया है। इस प्रकार उनका लक्ष्य सिद्ध हो चुका है। हनुमान जी ने आकर उनसे अभी तक कुछ भी नहीं कहा था, केवल उनके मुख पर मधुर–मधुर मुस्कान खेल रही थी। वास्तव में उनके अधरों की मुस्कान ही इस बात का संकेत कर रही थी। यह मुस्कान ही वानरों को हनुमान की लक्ष्य सिद्धि एवं सफलता का पूर्ण संकेत दे रही थी।

10

सभी वानरों ने हनुमान जी के शरीर पर ऐसे चिन्ह देखे, जिसे देखकर वे बहुत ही सचेत एवं सजग हो गये। उन्होंने देखा कि हनुमान जी की जंघा में बाण घुसा हुआ था जो वानरों को स्पष्ट ही दिखायी दे रहा था। यह

इस तथ्य को स्पष्ट प्रमाणित कर रहा था कि हनुमान जी ने निश्चय ही लंका में युद्ध किया है और निश्चय ही यह वीर योद्धा इतनी कठिन पीड़ा को भी सहन कर सकता है। उन्होंने जानबूझ कर अपने शरीर पर युद्ध के प्रतीक चिन्ह को बनाये रक्खा था जो उनके वीर योद्धा होने का भी स्पष्ट प्रमाण था। इस प्रमाण से सभी वानर आश्चर्य में पड़ गये। वे एक दूसरे की ओर भ्रम में पड़कर देखने लगे। उनके शरीर पर युद्ध के अन्य और भी कई संकेत थे। इस प्रकार युद्ध के प्रमाण भी उन्हें पूरी तरह दिखायी दे रहे थे।

11

वास्तव में हनुमान जी का शरीर भी बहुत विशालकाय दिखायी दे रहा था। इसकी समानता किसी पर्वत श्रेणी से बड़ी सरलता से की जा सकती थी। उनका विशाल वक्षस्थल ऐसा लग रहा था जैसे पर्वत की घाटी का एक ढाल हो। उनके लम्बे-लम्बे बाल पर्वतों के घने वनों की भाँति थे। उनका विशाल भाल पर्वत की ऊंची चोटी की भाँति था। वह बाण जो उनकी जंघा में प्रविष्ट था, सर्प की भांति था। जो घाव उनकी जंघा पर था, उसे पर्वत की गुफा माना जा सकता था। उस घाव से रक्त की धारा बह रही थी। वह रक्तवर्ण प्रसाधन की वस्तुओं की भाँति था। हनुमान के रुप को देखकर सभी वानरों ने इस प्रकार अपने विचार व्यक्त किये। वे हनुमान जी की भूरि-भूरि प्रशंसा कर रहे थे। वे प्रसन्नतापूर्वक वार्तालाप करते हुए आनंद मना रहे थे। हनुमान की शक्ति और सफलता पर अत्यन्त हर्ष से वे ध्वनि कर रहे थे।

12

वानर सेना हनुमान जी की सफलता के कारण अत्यन्त प्रसन्न थी। उसके अपार हर्ष की समानता सुमेरु पर्वत के ढाल के सौंदर्य से की जा सकती है। ऐसा लगता था, जैसे सुमेरु पर्वत पर जाकर कोई प्रसन्न हो रहा हो। उनके लाल-लाल रोम हर्ष से खिलने लगे जैसे स्वर्णिम पेड़ पौधे वायु की गति के कारण मन्द पवन में झूम रहे हों। उनकी आँखों में एक विचित्र चमक थी, जिसकी समानता चन्द्रकान्त मणि के प्रकाश से की जा सकती थी। उन्होंने बहुत ही हर्षपूर्वक हनुमान जी को देखा। उनके नेत्रों से आँसुओं की बूंदें टपकने लगी मानो अमृतकण टपक रहे हों।

13

जब वानरगण आगे बढ़े तो हनुमान जी ने उनको पूरा समाचार दिया। लंका की परिस्थिति के विषय में उन्होंने विस्तृत उल्लेख किया। उन्होंने कहा कि मैंने देवी सीता से भेंट की है। वे अभी तक जीवित हैं और लंका में हैं। जब हनुमान जी ने सीता जी के विषय में सारा हाल बता दिया तो सभी वानरगण देवी सीता के विषय में जानकर और भी अधिक प्रसन्न हुए। उनके हृदय की प्रसन्नता निरन्तर बढ़ती ही गयी जैसे पूर्णिमा के चन्द्रमा की किरणों से सागर तल की लहरें एक के बाद एक बढ़ती ही जाती हैं और अन्त में ज्वार का रुप धारण कर लेती

हैं। इसी प्रकार इस शुभ समाचार को सुनकर वानर सेना के हर्ष की सीमा न रही।

14

आनंदपूर्वक समय व्यतीत हो रहा था। उसके पश्चात शीघ्र ही हनुमान अन्य वानर योद्धाओं के साथ लौटने के लिए प्रस्तुत हो गये तथा प्रसन्नतापूर्वक महान पर्वतमाला विन्ध्याचल पर आ गये। उन सभी वानर योद्धाओं ने अपनी इच्छानुसार तृप्ति पूर्वक वहाँ के वनों में भाँति-भाँति के फल खाये।

15

हनुमान जी का व्यक्तित्व जैसे सूर्य की भाँति था। सीता के विषय में कहा गया वृतान्त जैसे सूर्य की किरणों की भाँति शोभित था। इसने गहरे अन्धकार एवं निराशा में प्रकाश की किरणें बिखेर दी थीं। राम की विरह-व्यथा गहरे अन्धकार की भाँति थी; गहरी निराशा ने उनको और भी अधिक दुःखी कर दिया था। सीता के विषय में दिया गया पूरा वृतान्त प्रकाश की किरण बन कर उनकी निराशा एवं दुःख के अन्धकार का पूर्ण विनाश कर रहा था।

16

उसके पश्चात हनुमान जी शीघ्र ही विशाल मलयवन पर्वतश्रेणी पर राम के पास गये। वहाँ पर राजपुत्र श्री राम एवं लक्ष्मण से उन्होंने भेंट की। उसके पश्चात वानरराज सुग्रीव के पास भी जाकर उन्हें पूरी परिस्थिति से उन्होंने अवगत कराया।

17

राम अपने शरीर पर वृक्ष की छाल धारण किये हुए थे। उनका पूरा व्यक्तित्व पवित्रता का प्रतीक था। वे जटाएं बाँधे हुए थे। अपने शरीर पर गजचर्म को भी वस्त्र की भांति वे पहने हुए थे। पवित्रता, धार्मिक वृत्ति, सत्यव्रत तथा पूजा-अर्चना के पूरे नियमों का विधिवत पालन करते हुए राम एक तपस्वी का कठिन जीवन व्यतीत कर रहे थे। वे नारायण देवता के ही एक अंश थे अर्थात उनको विष्णु का ही एक स्वरुप माना जा सकता था।

18

हनुमान जी श्री राजा राम देव के पास शीघ्र ही पहुंच गये। हनुमान जी इस अवसर पर अत्यन्त हर्ष का

अनुभव कर रहे थे। हनुमान जी उस अवसर पर पूर्णिमा के पूर्ण चन्द्र की भाँति प्रकाश किरणें बिखेरते हुए शोभा पा रहे थे। उनके हाथ में सीता के मस्तक पर सुशोभित होने वाला आभूषण चिन्तामणि था जिसे सीता से भेंट के साक्षी रुप में, राम को दिखाने के लिए, वे लंका से लाये थे।

19

राम ने देवी सीता द्वारा साक्षी रुप में भेजी गयी उस मणि तथा उसके साथ पत्र को भली भाँति देखा। जैसे वे दोनों वस्तुएँ देवी सीता के प्राणों की प्रतीक हों। उनका यह विश्वास था तथा उन्हें सीता की उन दोनों भेंटों को देखकर ऐसा लगा जैसे उनकी विरह–व्यथा को पूरी सान्तवना प्राप्त हुई हो। उनके ह्रदय की वेदन जैसे पूर्णतः समाप्त हो गयी हो।

20

हनुमान एक महान सम्माननीय़ एवं पवित्र विचारों वाले सच्चे दूत के रुप में राम के समक्ष उपस्थित हुए। हनुमान जी ने चिन्तामणि राम को समर्पित करते हुए सर्वप्रथम अपने कर्तव्य का पालन किया। राम ने हनुमान जी की कर्तव्य परायणता एवं सीता की खोज के लिए उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की। सीता का पूरा समाचार जानने के पश्चात उनके ह्रदय में अब लेशमात्र भी दुःख अथवा निराशा का भाव नहीं था।

21

जब राम ने राजपुत्री सीता के सुन्दर पत्र को देखा तो उन्हें अपार हर्ष हुआ। उन्होंने शीघ्र ही उसे हनुमान से लेकर भलीभाँति पढ्ा। सीता जी के पत्र को पढ़कर उनके मन को अपार सन्तोष प्राप्त हुआ। वे आनंदमग्न हो गये।

22

देवी सीता ने अपने पत्र में लिखा था कि हे मेरे स्वामी ! मैं आपकी वन्दना करती हूं। मुझे आशा है कि मैं शीघ्र ही आपके चरणों का स्पर्श करने के लिए आपके पास आऊंगी। हे राजा ! आप मेरे इस पत्र पर ध्यान देकर उसे पढ़ने की कृपा कीजिए। जो भी इसमें लिखा गया है वह मेरे विरह की गहरी अभिव्यक्ति है। चूड़ामणि को मैं आपकी सेवा में प्रेषित कर रही हूं, जो आपके प्रति मेरे मिलन की प्रतीक है। जो मुद्रिका आपने मेरे पास भेजी थी, उसको मैं आपके हाथों का स्पर्श–स्वरुप ही मानती हूं।

23

जब मैंने आपके द्वारा प्रेषित मुद्रिका प्राप्त की तो मेरा हृदय आनंदमग्न होकर पूर्ण सन्तुष्ट हुआ। मेरे हृदय में अतीत की स्मृतियां जागृत होकर जैसे साकार होने लगीं। मैंने आपके दर्शन बहुत समय से नहीं किये हैं। हे महाराज राम देव ! मैं आपको सूचित करना चाहती हूं कि मेरा रुदन, आपके विरह में किसी क्षण भी नहीं रुक पाता है। इसका प्रमाण यह है कि मेरे हृदय में आपसे मिलने की अपेक्षा अन्य कोई अभिलाषा ही नहीं है। मुझे अपने जीवन में पूरी आशा एवं विश्वास है कि जीवन-पर्यन्त सदैव ही मैं आपकी सेवा करती रहूंगी। सप्त जन्मों तक मेरा और आपका साहचर्य बना रहेगा। इसी आशा से मैं जीवित हूं।

24

इससे पहले मुझे आपके जीवन के विषय में भी पता नहीं था। अब मुझे पूरा समाचार स्पष्ट हो गया है। यदि इससे पहले मुझे यह पता लगता कि आप इस संसार में नहीं है तो मेरी अभिलाषा केवल मृत्यु का वरण करने की ही होती। मेरे विचारों में सदैव ही आपका स्मरण रहता था। आपके बिना मेरे जीवन का इस जगत में कोई अर्थ भी नहीं था। मेरे पास पवित्र अग्नि-पुंज भी था, पर्वत, सागर आदि सभी ऐसे साधन थे, जिनके माध्यम से मैं अपने प्राण का परित्याग कर सकती थी। सारांश यह है कि मेरा हृदय सदैव ही आपका स्मरण करता रहा है। मेरा हृदय पवित्र भावना से आपकी आराधना में सदैव ही तल्लीन रहा। मैं आपको विश्वास दिलाती हूं कि अन्य किसी पुरुष से प्रेम की कल्पना मैंने कभी भी नहीं की यद्यपि मेरा हृदय बहुत ही दुःखी था।

25

जीवन में जो भी संभव सुख और रस हैं, पहले मैंने उसका पूरा आनंद उठाया है। जीवन में जो भी मधुर एवं आकर्षक था, उसे मैंने प्राप्त किया है; अतएव अपने जीवन में इससे अधिक की मुझे कोई अभिलाषा नहीं रही है। यद्यपि मेरे इस उद्यान में भाँति-भाँति के सुन्दर अनेक फूल खिलते रहते हैं। वे भी मेरे हृदय के दुःख की कभी भी औषधि नहीं बन सके हैं। वे सभी वस्तुएँ, जिनको चित्ताकर्षक माना जाता है, विभिन्न प्रकार के सुगन्धियुक्त पुष्प आदि मेरे लिए आज अर्थहीन हैं। मुझे उनकी कोई आवश्यकता नहीं है। मेरा कण्ठ इतना सूखा हुआ है कि बोलना भी कठिन-सा हो गया है। जल की एक बूंद भी विरह व्यथा के कारण सरलता से मेरे कंठ के नीचे नहीं उतर पाती है।

26

हे मेरे स्वामी ! अब आप मेरे विषय में सोच-सोच कर बहुत अधिक दुःखी न हों। अपने हृदय को दुःख का स्थान न बनने दें। मन को शान्त रक्खें। अब आप अपनी विरह-व्यथा का पूरा परित्याग कर दीजिए। इनका स्मरण अब व्यर्थ है। इनकी कोई आवश्यकता भी नहीं है। आपको अब इस विषय में विचार करके बहुत अधिक दुःखी नहीं होना चाहिए। दुखी होने का अब कोई कारण ही नहीं है। मैं आपसे सदैव ही यह प्रार्थना करना

चाहती हूं कि आप जहां भी हों, सुखपूर्वक जीवन व्यतीत करें। आपकी विजय ही मेरी अभिलाषा का प्रतीक है।

27

हे स्वामी ! मैं आपसे विनयपूर्वक यह भी निवेदन करना चाहती हूं कि आप अतीत की परिस्थितियों एवं उल्लासों को स्मरण कर अब और अधिक दुःखी न हों। विशेषतया उस समय का जब कि आप अपने पूर्ण यौवन पर थे। जब आप मेरे यहाँ वर के रुप में मुझसे विवाह करने के लिए जनकपुर आये थे। वहाँ एक महान राजा के रुप में आपका स्वागत किया गया था। हम दोनों ही अपने–अपने ह्रदय में अत्यन्त आनंदमग्न थे। सभी रुपों में जो भी आनंद एवं जीवन का रस संभव है, वह हम दोनों को वहां प्रदान किया गया था। सभी प्रकार के वैभव एवं ऐश्वर्य की सामग्री मेरे पिता राजा जनक ने उस अवसर पर प्रस्तुत की थी। हमारे आनंद एवं सुख में किसी प्रकार की कोई कमी नहीं रही थी। आज इन भीषण परिस्थितियों में उस सुख को सोच–सोच कर दुःखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है। यही आपसे मेरा विनम्र निवेदन है।

28

आप बहुत ही कुशल एवं निपुण व्यक्ति हैं। यही कारण है कि पुरानी आनंदमय स्मृतियों के विषय में सोच–सोचकर मेरा ह्रदय अपार दुःख से पीड़ित हो जाता है। मेरा ह्रदय जैसे टुकड़े–टुकड़े होकर विदीर्ण हो गया है। आपके सदृश सुन्दर स्वभाव वाला तथा अत्यन्त कुशल अन्य कोई व्यक्ति इस विश्व में मुझे दृष्टिगोचर नहीं होता है। आपके समकक्ष सरल एवं सुन्दर भी कोई नहीं है। सभी कलाओं में आप पूर्ण निपुण हैं।

29

इसीलिए मैं आशा करती हूं कि आप शीघ्रातिशीघ्र मुझसे आकर मिलेंगे। इसमें अब और अधिक समय नहीं लगायेंगे। मुझे शीघ्र ही आनंद का अवसर प्रदान करेंगे। मैं आपकी परिचारिका हूं और अभी तक भली–भाँति जीवित हूं। जहाँ तक रावण का प्रश्न है वह एक महानीच राक्षस है। वह कभी भी अच्छाई तथा दूसरों के हित के विषय में सोच ही नहीं सकता। वह सदैव मदिरा में उन्मत्त रहता है। उसे किसी भी बात का स्मरण या ध्यान मदिरापान के पश्चात नहीं रहता है। आप भी मेरे विषय में बहुत चिन्तित होकर दुःखी न हों। कहीं ऐसा न हो कि बाद में आपकी अभिलाषाएँ एवं इच्छायें भी भली–भाँति पूरी न हो सकें। आप इन वीर वानर योद्धाओं की शक्ति का पूरा उपयोग कीजिए। यही सब आपकी युद्ध में सहायता करेंगे। इस प्रकार शीघ्र ही आपको मुझसे मिलने का सुअ्वसर प्राप्त हो सकेगा। यह सभी वानर योद्धा रण कुशल एवं वीर प्रवीर हैं।

30

जब आप मेरे पास आ जायेंगे, तो जो भी आपकी इच्छा एवं अभिलाषा होंगी उनको आप पूर्ण रुप से पूरा कर सकेंगे। शत्रु के त्रास के कारण मैं अपार कष्ट उठा रही हूं। मैं भ्रम में पड़कर घोर विरह व्यथा से पीड़ित हूं। इसीलिए मैं कुछ भी सोच नहीं पा रही हूं। मेरी अभिलाषाएँ एवं इच्छाएँ समाप्तप्राय हैं। अब मेरे जीवन में केवल दुःख की व्यथा ही शेष है। अब आपके लिए भेंट स्वरुप प्रस्तुत करने हेतु भी मेरे पास कोई वस्तु शेष नहीं है। अपने दुःखी ह्रदय को मैं अब सदैव ही दुलराने का प्रयत्न करती रहती हूं। मैं अपनी आँखों के आँसुओं को भी अपने आप में संजोये हुए हूं। मिलन के अवसर पर यही आँसू मेरी विरह-व्यथा के परिचायक एवं साक्षी होंगे।

31

वास्तव में मेरे ह्रदय में जो सबसे अधिक दुःखदायी बात है वह यह कि मेरे ही कारण आपको इतना कष्ट उठाना पड़ा है। मैं ही सब कठिनाइयों का कारण बनी हूं। दुष्ट राक्षस रावण के कारण ही आपसे मेरा विछोह हो गया है। आपको मेरी खोज में भीषण कष्ट भी उठाना पड़ा है। आपके ह्रदय में मेरे प्रति निश्चय ही अपार प्रेम है। यदि मैं जीवन में फिर आपसे मिलने का सुअवसर प्राप्त कर सकूं, तो भविष्य में कभी भी आप ऐसी परिस्थिति न आने दीजियेगा कि मेरा आपसे इस प्रकार विछोह हो। मेरे जीवन में केवल एक ही अभिलाषा है कि मैं आपकी सेवा में ही अपना जीवन व्यतीत कर सकूं। आपकी सेविका की भाँति पूरी तरह अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए ही मैं आपकी सेवा में रत रहना चाहती हूं।

32

अपने कर्तव्यों की भाँति आपके सभी आदेशों एवं आज्ञाओं का मैं पूरी तरह पालन करुगी। आपके शब्दों को मैं कभी भी पूरा करने में संकोच नहीं करुगी। मैं आपसे सदैव ही यही आशाएँ रखती हूं। अन्य दूसरी मेरी कोई इच्छा नहीं है। वास्तव में मैं आपके प्रेम के प्रति बहुत आभारी एवं चिर ऋणी हूं। आपने मेरी दशा को अभी तक अपनी आँखों से नहीं देखा है, न ही आपसे अब तक मेरा साक्षात्कार संभव हो पाया है, इसीलिए मैं नहीं जानती कि मुझे आपसे और अधिक अब क्या कहना चाहिए। मैं आपसे आशा करती हूं कि मेरी विरहवेदना और दुःख पर ध्यान देते हुए आप शीघ्रातिशीघ्र आकर मेरा उद्धार करने की कृपा करें।

33

जब राम ने इस प्रकार सीता का लिखा हुआ पत्र देखा, तो उनको बहुत ही कष्ट और दुर्बलता का अनुभव हुआ। उन्होंने ध्यानपूर्वक विरहाकुल होकर पत्र को बार-बार पढ़ा। उनके ह्रदय में प्रेम तथा करुणा का भाव पूरे रुप मे उमड़ आया। यहाँ तक कि उनकी आँखों से पत्र पढ़ते समय टप-टप आँसू टपक रहे थे। अश्रुधारा के अविरल तीव्रगति से प्रवाहित होने के कारण उन्हें यह भी पता नहीं लग पाया था कि उनके आँसू आँखों से बह-बह कर एवं टपक-टपक कर देवी सीता द्वारा लिखे हुए प्रेम-पत्र पर गिर रहे हैं। वे इस परिस्थिति को

बाद में देखकर एकदम चौंक पड़े। पत्र पर लिखे गये सभी अक्षर अश्रुधारा में विलीन से हो गये थे। यहाँ तक कि उन्हें यही पता नहीं लग पाया कि पत्र कहाँ पर समाप्त हुआ है। इससे उनके हृदय को अपार कष्ट हो रहा था।

34

हे हनुमान जी ! आप मेरे निकट आकर मेरी सहायता कीजिए। हे भाई लक्ष्मण ! मेरे निकट आओ। इस ओर देखो ! इस पत्र का परीक्षण करो। इसके अक्षर विलीन हो गये हैं। बहुत से अक्षर अस्पष्ट होकर पढ़ने के योग्य नहीं रह गये हैं। वे स्पष्ट दिखायी भी नहीं दे रहे हैं, हा ! मैं तो यह भी नहीं समझ पा रहा हूं कि इनका क्या संकेत है ? अपनी वेदना के कारण मैं पूरी तरह से कुछ भी पढ़ नहीं पाया हूं। क्या पत्र का अन्तिम भाग भी प्रथम भागों की भाँति ही हृदय-विदारक होगा ? उसको पढ़कर मेरा हृदय टुकड़े-टुकड़े हो जायेगा।

35

राजा राम ने जब इस प्रकार कहा तो उनके प्रश्न का सविस्तार उत्तर देते हुए हनुमान ने उनसे कहा, हे राजा राम ! आप मुझे क्षमा करें। अब बहुत दुःखी होने की कोई आवश्यकता नहीं है। इसलिए आप अपने कष्ट का निवारण कीजिए। आप अपने हृदय को शान्त करते हुए सन्तुष्टि धारण कीजिए। अब आपको इस पत्र का पूरा समाचार एवं सारांश स्पष्ट हो चुका है। सीता जी ने आपसे विनम्र निवेदन करते हुए आग्रह किया है कि आप उनके पास आकर राक्षस रावण से उनका उद्धार कीजिए। केवल प्रश्न यह है कि आप लंकापुरी की ओर प्रस्थान कब करने वाले हैं ? बस यहीं पर आपका उद्देश्य पूरा हो जाता है। यही इस रोग का उपचार भी है। यही उसकी औषधि भी है।

36

हे राजा राम ! अब आपको किसी भी प्रकार के भ्रम में नहीं पड़ना चाहिए। अब आपको इस विषय में उपाय एवं प्रयत्न करना चाहिए। अब तो आपको पूरी परिस्थिति लगभग स्पष्ट ही हो चुकी है। परमेश्वरी राजरानी सीता अभी तक सकुशल जीवित हैं। वे एक पूर्ण सती-सी वहाँ स्थित हैं। अब यह बात निश्चित हो चुकी है। हम सबको सारी परिस्थिति पूरी तरह ज्ञात हो गयी है। अब इतना ही शेष है कि आप शीघ्र ही लंका की ओर अपना अभियान प्रारम्भ करें। उस अभियान का लक्ष्य ही लंका के राजमहल का सर्वनाश होना चाहिए। यही एक मात्र इस अभियान का उद्देश्य होगा। जब हनुमान ने राम के समक्ष इस प्रकार निवेदन किया तो उनकी बात बहुत ही ध्यान से सुनते हुए राम ने लक्ष्मण की ओर दृष्टिपात किया।

37

जब राम ने पूरा पत्र पढ़ लिया, तो उन्होंने मणि और मणिक्यों को बार-बार देखकर उनका परीक्षण किया। बड़ी प्रसन्नता से उन्होंने अपने दोनों कपोलों से उनको लगाया। उन्हें ऐसा लगा कि इन वस्तुओं की भेजने वाली देवी सीता बहुत ही दुःखी थीं। वे विरह वेदना से व्याकुल होकर तड़प रही थीं। यह अनुमान उन्होंने अपनी कल्पना के द्वारा उन वस्तुओं को देखकर लगाया।

38

जब राम ने मणियों को बारबार देखकर उन्हें पूरी तरह पहचान लिया तो उन्होंने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। उसके पश्चात हनुमान जी ने राम को विस्तारपूर्वक सभी बातें फिर से बतलायीं। वानरराज सुग्रीव एवं रामानुज लक्ष्मण को भी उन्होंने पूरी परिस्थिति से भलीभाँति अवगत कराया।

39

उन्होंने कहा कि हे राजन ! आपका शत्रु सिंह के समान है। वह लंका रुपी सघन वन में निवास करता है। उसी नगरी लंका में देवी सीता निवास कर रही है। वे उस वन के लिए दावाग्नि की भाँति ही सिद्ध होंगी।

40

जहाँ खद्योत वातावरण में अपना प्रकाश बिखेर रहे हों, वहाँ श्री राम का अस्तित्व उस प्रचण्ड वायु की भाँति होगा जो तीव्र गति से बह रही हो। यह दावाग्नि को और भी प्रज्वलित कर रही होगी। इस प्रकार जलती हुई अग्नि शिखाएँ और अधिक भीषण रुप धारण कर लेंगी। इस परिस्थिति में निश्चय ही वह सिंह उस अग्नि में जलकर भस्मसात हो जायेगा।

41

संसार में सदैव ही लूटमार करके दूसरों पर विपत्तियाँ ढाना ही रावण के जीवन की सबसे प्रधान गतिविधि रही है। यही उस राक्षस के स्वभाव का प्रधान अंग भी है। उसने वैश्रावण को भी इसी प्रकार पराजित किया है। उसको उसने पहले बन्दी बनाया था। उसके राज्य से सैकड़ों सहस्त्र की संख्या में स्वर्ण मुद्राएँ उसने लूटीं। उसके राज्य में कुछ भी शेष नहीं छोड़ा। इस प्रकार अपार स्वर्ण राशि रावण ने लंका में एकत्रित की है।

42

देवतओं के समुदाय को सदैव ही रावण त्रस्त कर सताता रहा है। उसको कभी भी किसी प्रकार की लज्जा

अथवा संकोच का अनुभव नहीं हुआ। जैसे उसे किसी बात का ध्यान ही न हो और उसकी स्मरण शक्ति समाप्त हो गयी हो। वह धन के मद में उन्मत्त हो गया हो। जीवन में बहुत अधिक सफलताओं अथवा सौभाग्य ने उसके सोचने की शक्ति को जैसे विपरीत दिशा में मोड़ दिया हो। इसीलिए उसने सन्मार्ग पर चलना सदैव के लिए ही छोड़ दिया है।

43

उसका जन्म भी राक्षस कुल में हुआ है। इस प्रकार स्वभाव से ही वह नीचवृत्ति का राक्षस है। बाद में उसने अतुल धन वैभव प्राप्त कर लिया। धीरे-धीरे उसमें असीम शक्ति के साथ अभिमान भी बढ़ता चला गया। अच्छी-अच्छी शिक्षाओं और पवित्र विचारों से उसका मन अलग होता गया। इसीलिए हे राजा राम! आपके द्वारा उस नीच राक्षस का वध किया जाना ही उचित होगा।

44

देवी सीता अत्यन्त दुःखी हैं। वास्तव में आपसे बिछुड़ जाने के कारण विरह व्यथा से पीड़ित होकर उनकी यह दशा हो गयी है। उनका चित्त बहुत दुःखी रहता है। उनकी कल्पना तथा उनके विचारों में सदैव ही आपकी आकृति रहती है। वे अहर्निश आपके विरह में व्याकुल हो कर रुदन करती रहती हैं। उनके नेत्रों में किसी भी क्षण अश्रुधारा रुकती नहीं है।

45

विरहाग्नि में प्रतिक्षण् जलने के कारण वे शक्तिहीन हो गयी हैं। शरीर के दुर्बल होने के कारण उनका शरीर पीतवर्ण-सा हो गया है। वे नितान्त कान्तिहीन हो गयी है। जैसे सन्ध्या के समय चन्द्रमा कान्तिहीन एवं क्षीण दिखायी देता है, उसी प्रकार देवी सीता का शरीर भी कान्तिहीन एवं क्षीण हो गया है। गोलाकार चन्द्रमा उनसे एक अर्थ में पीछे है और पराजित हो गया है, वह यह कि चन्द्रमा के मुख का काला धब्बा जो एक चिन्ह के रुप में है और कभी भी विलीन नहीं हो पाता। वह सदैव ही चन्द्रमा के कलंक का प्रतीक है। देवी सीता पूर्णरुपेण निष्कलंक है। यही चन्द्रमा पर उनकी विजय का संकेत है।

46

सीता जी लंका में उस कुमुद पुष्प की भाँति हैं जो कीचड़ में फंस गया है। वहाँ के सभी कार्य मूर्खतापूर्ण हैं। सभी कार्य व्यापार क्रोध के परिणाम रुप में वहां होते हैं। उन भीषण परिस्थितियों में भी देवी सीता अपने पूर्ण सतीत्व का पालन कर रही हैं। उनका हृदय निर्मल है। उनका चरित्र निष्कलंक है। श्वेत कुमुद के पराग की

भाँति ही उनका सम्पूर्ण अस्तित्व एवं व्यक्तित्व उन कठिन परिस्थितियों में भी निर्मलता का प्रतीक रहा है।

47

इस प्रकार हनुमान जी ने सभी प्रकार से लंका की परिस्थितियों एवं वहाँ की सम्पूर्ण गतिविधियों का परिचय दिया। राम इन सब मधुर बातों से इतने प्रसन्न हुए कि उनके हृदय में अमृत का माधुर्य बहने लगा। उनके लिए सभी कुछ अमृतमय हो गया। जब उन्होंने वीर हनुमान के शब्द सुने तो उन्हें अमृत के माधुर्य तथा रस का पूर्ण आभास होने लगा।

48

जब तक हनुमान जी देवी सीता का संदेश लेकर राम के पास नहीं आये थे, तब तक राम का हृदय उष्णता एवं दुख से जैसे सूख कर अत्यन्त व्याकुल हो रहा था। जब हनुमान जी लंका से लौटकर आ गये, तो उनके हृदय की उष्णता का स्थान शीतलता ने ले लिया मानो किसी रोगी व्यक्ति को उचित उपचार के रुप में औषधि प्राप्त हो गयी हो तथा वह पूर्ण स्वस्थ हो गया हो।

49

उन्होंने लक्ष्मण जी की ओर प्रेम से देखा लक्ष्मण का यौवन एवं सौन्दर्य आकर्षक था। ऐसा लग रहा था जैसे वे लक्ष्मण से अपना स्पष्ट उद्देश्य सांकेतिक रुप में कह रहे हों कि तुमको शीघ्र ही लंका की ओर प्रस्थान करना चाहिए। इस संकेत को वानरराज सुग्रीव ने स्पष्ट रुप से समझ लिया। उन्होंने तुरन्त ही सभी उपस्थित वानर सेना को लंका की ओर प्रस्थान करने के लिए बुलाया। उनका आदेश सभी को दे दिया गया।

50

राम शीघ्र ही वहाँ से उठकर प्रस्थान के लिए उद्यत हो गये। वानरगण भी तुरन्त ही डोली आदि लेकर राम को उस पर बैठाकर आगे बढ़ने के लिए तैयार हो गये। सभी मिलकर आगे बढ़ने लगे। मार्ग में वानर समूह भी आकाश में उड़ता हुआ आगे जाने लगा। वे सभी दक्षिण दिशा की ओर बढ़े चले जा रहे थे। अन्त में राम वानर सेना सहित महेन्द्र पर्वत पर आ पहुंचे।

51

यह पर्वतमाला हिमालय पर्वत की भाँति ही विशाल थी तथा अत्यन्त आकर्षक थी। इसकी स्थिति सागर

तट के निकट ही थी। पर्वत के पत्थरों के कारण तटवर्ती क्षेत्र भी सुदृढ़ हो गये थे। यह भी भय था कि सागर का जल कहीं भीतरी भागों को आत्मसात न कर ले तथा इस जगत में उथल पुथल न मचा दे। इन पर्वतमालाओं ने अर्थात महेन्द्र गिरि पर्वत ने मानो पानी को रोककर चारों ओर से उसका बाँध बना दिया हो।

52

इस सागर की भी एक विशेषता यह थी क़ि उसका सागर–तल बहुत ही स्वच्छ तथा निर्मल–सा प्रतीत होता था। सदैव ही बाढ़ का पानी उस जलधि में आकर मिलता रहता था, परन्तु कभी भी वह अपनी सीमाओं का उल्लंघन नहीं करता था। उस सागर का अस्तित्व गौरवमय था। उसकी अभिलाषा थी कि वह राम के समक्ष अपने वीरत्व का प्रदर्शन करे, इसीलिए वह सागर तट पर अपना देव रुप धारण कर स्वयं ही उपस्थित हुआ।

53

उस सागर तल का आधार भूमि तल अर्थात पाताल से भी नीचे था। पर्वत का शिखर भी बहुत ही ऊंचा था। वह आकाश की ऊंचाइयों को छू रहा था। ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे तीनों लोक ही उसकी छत्रछाया में हैं। अत्यन्त गहरे पाताल और सबसे ऊंचे पर्वत का गगनचुम्बी स्वरुप ही इसको स्पष्टतः प्रमाणित कर रहा था।

54

जहाँ तक आकाश का संबंध था, उसकी उपमा एक नग्न युवती से ही दी जा सकती थी। उसके वक्षस्थल पर मणि माणिक की भाँति नक्षत्र चमक रहे थे। सागर तट पर मूंगे की चट्टानें भी मणियों की भाँति थीं। ऐसा प्रतीत होता था कि यह पर्वत आकाशरुपी युवती का आलिंगन करने का अभिलाषी था, इसीलिए वह गगनचुम्बी हो रहा था और उसका आकार इतना वृहद हो उठा था। उसने अपने को आकाश की ऊंचाइयों तक पहुंचा दिया था, जिससे विधिवत वह उस युवती का आलिंगन कर सके।

55

उस पर्वतमाला पर भाँति–भाँति के वृक्ष सुशोभित हो रहे थे। वे बड़े ही आकर्षक एवं फलों से लदे हुए थे। फलों के अधिक लदे होने के कारण वृक्षों की शाखाओं पर इतना भार था कि वे उस भार से पृथ्वी पर झुके जा रहे थे। उन वृक्षों पर असंख्य पके हुए फल लगे थे। कुछ फल अभी गदराये हुए ही थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह पर्वतश्रेणी अपने फलों आदि की भेंट चढ़ाने के लिए प्रस्तुत हो।

56

ऐसा लगता था जैसे सभी वृक्ष पुष्पों की मालाएँ लेकर खड़े हों। कुछ फूल पीले पड़कर तथा वृक्षों से नीचे झड़कर भी बिखरे पड़े थे। वे सभी पुष्प भूमि पर सुगन्धि बिखेर रहे थे। वास्तव में पुष्पों की यह साज सज्जा मानो राजपुत्र राम का उस स्थान पर स्वागत करने के लिए की गयी हो। सभी वृक्ष पुष्पहारों से राम की अगवानी करने को तैयार थे।

57

महेन्द्र पर्वत की शोभा इन्द्रपुरी से किसी भाँति भी कम नहीं थी। यहाँ तक कि महेन्द्र पर्वत पर बहुत से कल्पवृक्ष भी थे। वहाँ पर बड़े-बड़े प्रस्तर तथा शिलाखंड माणिक की भाँति बिखरे पड़े थे। वह किन्नरों,पक्षियों तथा विभिन्न जीवों के आनंद-विहार का भी मनोहर स्थल था।

58

जब श्री राम उस महेन्द्र पर्वत पर आये,तो उन्होंने पर्वत की उपत्यका का अनुपम सौंदर्य देखा। उसे देखकर उनके मन में अपार आकर्षण उत्पन्न हो गया। राम ने जैसे ही उस सुन्दर पर्वतमाला को देखा, अपनी रुग्ण मानसिकता से मुक्त हो उठे मानो उन्होंने स्वास्थ्य लाभ किया हो। उन्होंने देखा कि पर्वत की झील उन्हें भाँति-भाँति के सुन्दर पुष्प भेंट कर रही है। वे सभी पुष्प लाल एवं गुलाबी रंग के कुमुद थे, जो राम के हृदय में अपनी पत्नी सीता के मुख-कुमुद की भाँति अपना स्थान बना रहे थे।

59

उसी प्रकार भ्रमरों की पंक्तियों की गतिविधियाँ भी थीं। ये इधर-उधर चारों ओर उड़ रहे थे। गुनगुन गुंजार करते हुए वे कमल-पुष्पों के पराग को चूम रहे थे। उस स्वर में जैसे राम को सीता का मधुर स्वर सुनायी दे रहा था,जिससे राम के मन को और भी अधिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था।

60

राम उस सुन्दर स्थान महेन्द्र गिरि पर जाकर ठहर गये। वहाँ से रावण की लंका का राजमहल स्पष्ट दिखायी दे रहा था। सभी वानरों ने भी वहीं से रावण के राजमहल पर दृष्टि डाली। हनुमान जी स्वयं ही सभी को संकेत से उस स्थान को दिखा रहे थे।

61

इस प्रकार जब सभी को लंका का राजमहल स्पष्ट ही दिखायी देने लगा, तब वे सभी उस पर्वत की सुन्दर उपत्यका में उतर पड़े। पूरी वानर सेना के साथ सभी वानर योद्धा भी शीघ्र ही सागर तट पर आकर उपस्थित हो गये।

62

जब राम सागर तट पर आ गये, तो वे अपनी वानर सेना सहित सागर के ऊपर उठती हुई उत्ताल तरंगों को देखकर बहुत आनंदित हुए। लहरें पर्वतशिखर की भाँति ऊपर उठती हुई दिखायी दे रही थीं। उसी के साथ ही साथ उनसे गुरु गंभीर गर्जन स्वर भी सुनायी दे रहे थे। उस स्वर को सुनकर ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सागर की लहरें राम का स्वागत करने के लिए उद्यत हो रही थीं।

63

सागर के जल-तल पर उतराता हुआ श्वेत समुद्र-फेन निरन्तर लहरों में बिखर-बिखर कर पुष्पों के रुप में अपनी श्रद्धा के सुमन राम को भेंट कर रहा था। सागर की लहरें राम को देखकर अपनी अपार प्रसन्नता व्यक्त कर रही थीं। राम इस पृथ्वी के कलंक एवं भार को उतारने और विश्व में शान्ति की स्थापना के लिए अवतरित हुए थे।

64

सागर तल पर जल में मूंगे की चट्टानें भी शोभा पा रही थीं। उसमें भाँति-भाँति के रत्न एवं मणि-माणिक भी थे जो उसके अन्तराल में रत्नों की खान की भाँति प्रतीत हो रहे थे। उन रत्नों का प्रकाश दर्शनीय था और आकर्षण का केन्द्र था। ऐसा लगता था मानो सागर राम की वन्दना एवं पूजा कर रहा हो। यदि लोग इस पर ध्यान देते, तो स्पष्ट हो जाता कि सागर रत्नों से किस प्रकार राम की अर्चना कर रहा था।

65

सागर में कम भार के मणि और माणिक जल के तल पर ऊपर की ओर प्रकाश किरणें बिखेर रहे थे। मणि तथा माणिक की भाँति लाल रंग की छाया डालता हुआ फौलाद भी प्रकाश-किरणें बिखेर रहा था। उसकी इतनी चमक का कारण यह भी था कि सूर्य की किरणें उस पर गिर रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि जैसे समुद्र हंसता हुआ आगे बढ़कर कुछ निवेदन करने आ रहा हो।

66

सागर के मध्य में एक पर्वत श्रेणी भी सुशोभित थी। इसके पत्थर चन्द्रकान्त मणि की भाँति प्रतीत हो रहे थे। उसके आन्तरिक भागों तथा गुफा के मध्य में सर्प एवं मकर आनंद-मग्न होकर रहते थे। ऐसा लगता था जैसे वे जन्तु मणि और रत्नों की रक्षा के हेतु ही वहाँ रहते थे। वे उनकी सुरक्षा के लिए प्रतिक्षण उद्यत थे।

67

हांगर मछली, कूर्म आदि अन्य कई जल-जन्तु सागर तल में वहाँ पर रहते थे। वहाँ पर केकड़े भी थे जो कभी भी अपनी स्त्री का वियोग सहन नहीं कर सकते थे। राम के वियोगी हृदय को वे और भी अधिक दुःखी कर रहे थे। इस दृश्य को देखकर अकस्मात् ही उनके हृदय में वियोग की टीस उठने लगी थी।

68

सागर में सदैव ही ऊंची-ऊंची लहरें उठती रहती थीं जो मूंगे की चट्टान से टकरा-टकराकर बिखर जाती थीं। वे मूंगे की चट्टानों को भी ढकती रहती थीं। ऐसा लगता था जैसे उष्णता एवं शुष्कता के वातावरण को देखकर उनके हृदय में करुणा उत्पन्न हो रही हो। सूर्य की उष्ण किरणें ही इस शुष्कता एवं उष्णता का एकमात्र कारण थीं।

69

ऐसा प्रतीत होता था जैसे सागर की गगनचुम्बी लहरों की ऊंचाई भी हिमवान पर्वत की चोटियों से समानता कर रही हो। उसकी उत्ताल तरंगे उंची लहरों के रुप में ऐसी शोभा पा रही थीं जैसे पर्वत के ही उत्तुंग शिखर हों। इसी प्रकार भाँति-भाँति के मणि-माणक आदि रत्नों की राशि भी मूंगे की चट्टानों से मिलकर अपूर्व सौंदर्य प्रतिबिम्बित कर रही थी। नागराज भी सागर तल में तथा पर्वत शिखरों पर समान रुप से उपस्थित थे।

70

उस सागर की शोभा सुरालय से भी अधिक थी। वास्तव में सागर की सम्पत्ति एवं रत्न राशि देव लोक से भी अधिक दृष्टिगोचर हो रही थी। देवलोक उसके समक्ष बहुत साधारण-सा प्रतीत हो रहा था। जहाँ तक देवलोक का प्रश्न है वहाँ पर सदैव ही चन्द्रमा की किरणों का शीतल प्रकाश रहता है। यद्यपि सागर के पास चन्द्रमा नहीं है, फिर भी, चन्द्रमा की किरणें उसको सदैव ही आलोकित करती रहती थीं।

71

पर्वतमालाओं का परिवार तथा कई विशाल पर्वतश्रेणियाँ, पृथ्वी पर कई दिशाओं में अपना आधिपत्य बनाये हुए खड़ी हैं। इन सभी पर्वत श्रेणियों के प्रति सागर का पूर्ण उत्तरदायित्व था। वे सभी सागर तट पर ही स्थित थीं। विष्णु के अवतार के रुप में वराह, जो सम्पूर्ण विश्व का संहारक बन कर सामने आया था,वह भी सागर के समक्ष अपनी पराजय स्वीकार कर चुका था। जब पृथ्वी पर संकट पड़ा था तो सागर ने उसकी पूरी सहायता की थी।

72

सागर तट पर एक पर्वतमाला थी,जो सागर की उत्ताल तरंगों की भाँति ही ऊंची थी। यह दोनों एक दूसरे के बहुत निकट थे। एक समान ही वे बड़े–बड़े थे। इस प्रकार उनका आकार अपने में सम्पूर्ण था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यह स्थान पृथ्वी का केन्द्र बिन्दु हो।

73

उसकी गरिमा एवं तीव्रता का भी उसकी स्थिति से ही पूरा आभास होता था। उनके मध्य में जल की एक धारा भी बह रही थी जो इधर–उधर के चिंहों को मिटाती हुई उस स्थल की शोभा को और भी अधिक बढ़ा रही थी। वहाँ पर उसको छूने के लिए भी बड़ी–बड़ी लहरें उठ कर आती थीं। यह दृश्य ऐसा था मानो प्रेम के आधिक्य के कारण कोई प्रेमी प्रेमिका के हाथों को सहलाता हुआ, आकर्षण के कारण, तीव्रता से दबा रहा हो।

74

सागर के तट पर आने के पश्चात् श्रान्ति दूर करने के लिए राम ने वहाँ बैठकर विश्राम किया। राम का चरित्र भी सागर की भाँति ही निर्मल था। सागर को गहराई के कारण भी कोई पार नहीं कर सकता था। उसी प्रकार राम का व्यक्तित्व भी गंभीरतापूर्ण था। राम का चरित्र उच्च एवं आदर्श था। सागर की ही भाँति उनमें अनेक मानव मूल्य रुपी रत्न राशियों एवं गुणों का भंडार था। उनका चरित्र भी निर्मल था। उनके विचार गंभीर एवं स्थिर थे। उन्हें स्थिति कहा जा सकता था। उनके विचारों में सागर की ही भाँति गांभीर्य भी था।

75

कभी–कभी वहां एक हाथ के बराबर छोटी–छोटी लहरें भी उठती थीं। कुछ लहरें पर्वत शिखरों की भाँति बहुत ही ऊंची–ऊंची उठती थीं। वे क्रमश सुख एवं दुःख का संकेत दे रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि लहरों का यह क्रम उतार और चढ़ाव की एक सूचना है जो परिस्थितियों के परिवर्तन का ही स्पष्ट सूचक है। वे सदैव ही यह स्मरण दिलाती रहती हैं कि जीवन की परिस्थितियां निरन्तर इसी प्रकार परिवर्तित होती रहती हैं।

76

फिर भी राम के हृदय में वियोग के दुःख का अपार सागर लहरा रहा था। उनके मन को कहीं भी शान्ति नहीं मिल पा रही थी। वे बार-वार सीता के प्रति सोच-सोचकर विरहाग्नि में जलते रहते थे। उनका विरह-वियोग उन्हें सीता की प्रतिक्षण याद दिलाता रहता था।

77

कामदेव के पुष्प वाण अत्यन्त कोमल हैं। वे बड़े ही साधारण एवं मुलायम प्रतीत होते हैं। यहाँ तक कि उनके घाव स्पष्ट दिखायी ही नहीं देते। केवल अज्ञात एवं अप्रत्यक्ष रुप से ही वे हृदय में प्रवेश करके उसे घायल कर देते हैं। प्रेम-ज्वर इतना भीषण होता है कि कोई भी उसे सहन नहीं कर सकता है। अकस्मात् ही कामदेव के वाणों ने राम के हृदय को घायल कर दिया। सीता के विरह में उनका हृदय विदीर्ण हो गया।

78–79

गगनांगन पर सूर्य देवता का अस्त होना दिखायी देने लगा। रात्रि हो चुकी थी। रात्रि का काला अन्धकार दसों दिशाओं में व्याप्त हो चुका था। उस समय राम की वियोग-व्यथा और भी बढ़ गयी थी। वाह्य वातावरण के अंधकार के कारण उनके हृदय में भी विरह का अन्धकार दिखायी दे रहा था।

80

श्री राम का ध्यान सीता की अपेक्षा किसी ओर नहीं जाता था। उनका हृदय बहुत दुःखी था। उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे वे कारावास का दुःखी जीवन व्यतीत कर रहे हों। उनके विचारों में प्रतिक्षण दुःख की गहरी छाया रहती थी। रात्रि के समय उनके विचारों और कल्पना में सीता की अपेक्षा अन्य और कोई नहीं रहता था। वे सदैव ही सीता का स्मरण विरहाकुल होकर करते रहते थे।

81

धीरे से अन्धकार तीव्रगति से आगे बढ़ता हुआ घने एवं विशाल वृक्षों के पत्रों के नीचे प्रवेश करने का प्रयत्न करने लगा। वह उन पत्थरों के बीच में जाकर घुस गया, जहाँ पर कुछ रिक्त स्थान थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे चन्द्रदेवता से डर कर अन्धकार भागता हुआ कहीं न कहीं छिपने के लिए अपना स्थान खोज रहा हो।

82

श्री राम ने यह वातावरण देखा। उन्होंने गोल-गोल चन्द्रमा को अपनी किरणें बिखेर कर अन्धकार का नाश करते देखा तो उन्हें ऐसा लगा जैसे उनकी स्मरण शक्ति ही समाप्त हो गयी हो। अकस्मात् ही वे भ्रम में पड़कर इस प्रकार कुछ कहने लगे मानो उन्हें दुख के कारण कोई ध्यान ही न रहा हो। उन्होंने अपने छोटे भाई लक्ष्मण को सम्बोधित करते हुए इस प्रकार कहा :-

83

जव राम लक्ष्मण को सभी बातें बतला रहे थे, तब उनके हृदय में एक विचित्र सी उथल-पुथल थी, जिसके कारण वे भ्रम में पड़े हुये थे। वृत्ताकार गोल चन्द्रमा की सभी आकर्षक गतिविधियाँ भी उन्हें स्पष्ट नहीं थीं। सभी मनुष्यों को काम के बाण घायल कर अपार कष्ट पहुंचाते हैं। अकस्मात् ही काम के बाणों से घायल राम का हृदय भी सभी बातों को विस्मृत कर भ्रम में पड़ गया। उस समय उनकी परिस्थिति एवं दशा एक विरही व्यक्ति की भाँति थी।

84

विरह वेदना से संतृप्त होकर अब उनके हृदय में केवल दुःख एवं निराशा ही शेष थी। वियोग के कष्ट झेलते-झेलते वे व्याकुल रहते थे। उनको नींद भी नहीं आती थी। वे रात्रि के समय भी जागते रहते थे। विरह वेदना के कारण उनको नींद नहीं आती थी। उनका शरीर जैसे कारागार के कष्ट झेल रहा हो। वे प्रतिक्षण फूट-फूट कर रोते रहते थे। उनका पूरा जीवन जैसे दुःख से व्याकुल हो। वे रात दिन सीता के ही विषय में सोचते रहते थे। उनकी कल्पना में सीता ही प्रतिक्षण साकार- रहती थीं। अन्य किसी की ओर उनका ध्यान ही नहीं जाता था।

85

उस समय मन्मथ के बाणों ने राम को बुरी तरह घायल कर दिया था। राम वियोग में अत्यन्त व्याकुल थे। चन्द्रमा के आकाश में उदय होने से राम का विरही हृदय और भी अधिक व्यथित था। बड़े विवेकपूर्ण ढंग से उनके छोटे भाई लक्ष्मण ने राम से कहा। उन्होंने बड़े ही मधुर स्वर में राम को सभी बातों का स्मरण दिलाया।

86

हे उत्तम योद्धा ! हे मेरे भाई श्री राम ! आप देवी सीता के वियोग में इतने अधिक व्याकुल न हों। आपके लिए साधारण व्यक्तियों की भाँति इतना दुःखी होना उचित नहीं है। आप इस सम्पूर्ण विश्व की सहायता करने वाले एक महान व्यक्ति हैं। यदि आप ही गतिशील न होकर प्रमादग्रस्त दिखायी देंगे, तो संसार के दुःख और

कष्टों को कौन दूर कर सकेगा ? सभी आपसे यही आशा रखते हैं।

87

यदि आप कठोर विपत्तियों में भी दृढ़ रहे तो संसार के सभी लोग आपकी भूरि-भूरि प्रशंसा करेंगे। उनको यह विश्वास हो जायेगा कि आप स्थिर विचारों वाले महान व्यक्ति हैं। अतएव आप अपने व्यक्तित्व की महानता एवं कार्यों से कभी भी विचलित न हों। समाज आपको सदैव ही इस रुप में उच्चतम सम्मान का पात्र मानता रहेगा। समाज एवं विश्व को यह दृढ़ विश्वास है कि आप पवित्र विचारों वाले एक आदर्श महापुरुष हैं। वे सभी आपके चारित्रिक गुणों से भली भाँति परिचित हैं। आपका चारित्रिक आधार भी उन्हें पूरी तरह स्पष्ट है। अतएव आप अपने विचारों में स्थिरता और दृढ़ता ही रखिए अन्यथा समाज और विश्व को आपके इस व्यवहार से पूर्ण निराशा हो जायेगी।

88

इसका कारण यह नहीं है कि अभिमानवश अथवा अन्य किसी भावना से मैं आपको अपने कर्तव्यों का स्मरण दिला रहा हूं। आपको इतना दुःखी देखकर ही मुझे आपसे कुछ कहने की अभिलाषा हुई। वास्तव में आप स्वयं एक महान विवेकी महापुरुष हैं। आपके पास बुद्धि एवं विवेक की कोई कमी नहीं है। आप अपने सम्पूर्ण कार्य-व्यापारों एवं आचार-व्यवहारों को पहले ही भली-भाँति सोचकर समुचित रुप से सन्तुलित करते रहे हैं। इस बात की कोई आवश्यकता नहीं है कि कोई आपको आपके कर्तव्यों का स्मरण दिलाये। आप तो स्वयं ही सर्वज्ञ हैं।

89

यद्यपि आपका प्रत्येक कार्य आपके विवेकपूर्ण होने का पूरा परिचायक है। आप एक कुशल दूरदर्शी व्यक्ति हैं परन्तु आपके इस दास ने यह उचित समझा कि आपके कर्तव्यों का आपको भली भाँति स्मरण करा दे। परिस्थिति एवं वास्तविकता से आपको पूरी तरह अवगत कराना आवश्यक था। आपके प्रति मेरे हृदय में अगाध प्रेम तथा करुणा है। इसी भावना ने मुझे विवश कर दिया कि मैं आपको सभी बातों का स्मरण दिलाऊं इसीलिए मैं आपसे विनम्र निवेदन करता हूं कि प्रेम-भावना के वशीभूत होकर ही मैंने यह सब कहा है। इसका यह अर्थ कभी नहीं है कि मैं आपसे अधिक विवेकी हूं तथा परिस्थितियों को अधिक समझ सकता हूं।

90

इस प्रकार लक्ष्मण ने राम के प्रति अपनी प्रेम भावना व्यक्त की। राम के हृदय में भी लक्ष्मण के प्रति अपार

प्रेम भावना थी। अतएव उन्होंने एक वियोगी की भाँति दुःखी व्यक्ति के रुप में न रहकर धैर्य धारण किया। उसके पश्चात उन्होंने आनंदपूर्वक शयन किया। वे निद्रामग्न हो गये। वृक्षों की हरी-हरी पत्तियाँ ही उनकी शैया थी।

91

सम्पूर्ण रात अन्य वानर सेना जागरण करती रही। वे बहुत ही चतुरता एवं कुशलता से अपनी सुरक्षा के लिए जागते रहना ही उचित समझते थे। सुग्रीव ने राम के निकट आकर उनके चरणों को दबाया। इस प्रकार सुख मिलने से राम को और अधिक निद्रा आ गयी। तत्पश्चात् वे शान्त होकर सो गये।

अध्याय – 12

1

जब रात्रि व्यतीत हो गयी, चन्द्र देवता ओझल होने लगे। उस समय प्रातःकाल की सूर्य-किरणों का प्रकाश बिखरने लगा। उसके पश्चात् रक्तिमवर्ण के कुमुद सरोवरों में खिलने लगे। बन्द होने वाले कुमुद अब सौंदर्य के प्रतीक नहीं थे। वे कुम्हला कर कान्तिहीन हो गये थे। उनकी दशा अब विचित्र सी ही थी। सरोवरों में अब सुगन्धि बिखेरने वाले रक्त कमल अपने सौंदर्य से वातावरण को और भी अधिक सुखद बना रहे थे।

2

चन्द्रमा के डूबते ही आकाश के अन्य सभी नक्षत्र भी दृष्टि से ओझल हो गये। चन्द्रमा उस समय पश्चिम दिशा की ओर जाकर उसकी शोभा बढ़ा रहा था। अन्य नक्षत्र उसका अनुसरण कर रहे थे। जिस प्रकार प्रेम के कारण सेवक सदैव ही अपने स्वामी का अनुगमन करता है, उसी प्रकार नक्षत्र भी चन्द्रमा का अनुसरण कर रहे थे। इसीलिए चन्द्रमा के डूबने के साथ ही साथ अन्य नक्षत्र भी पश्चिम दिशा में जाकर उसके साथ ही डूब गये।

3

प्रातःकाल होते ही लंका की सभी स्त्रियां अपनी शैया छोड़कर उठ खड़ी हुई। उस समय उनकी केश-राशि बिखरी हुई थी। उनके गुच्छे हवा में लहरा रहे थे। उनका सौंदर्य मनमोहक था। वे बहुत श्रान्त एवं अलसायी सी दिखायी दे रही थीं। रातभर निरन्तर वे काम-केलि और प्रेम-क्रीड़ा में आनंदमग्न होकर डूबी रही थीं। उन युवतियों के अनुपम सौंदर्य को देखकर चन्द्रमा डर कर लज्जित होकर पीछे हटने लगा। वह तुरन्त ही तीव्रगति से छिपने के लिए भागने लगा। चन्द्रमा की शोभा उन युवतियों के सौंदर्य के सामने कान्तिहीन सी लग रही थी। अतएव चन्द्रमा स्वयं ही अपनी पराजय का अनुभव करने लगा। वह पश्चिम की ओर जाकर कहीं छिप गया।

4

उन स्त्रियों ने अपने-अपने मुख-कमलों को शीतल जल से धोया। उसके पश्चात् सौंदर्य एवं शोभा के लिए विधिवत् श्रृंगार किया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि लंका नगरी एक विशाल सरोवर की भाँति थी। वहाँ की सभी सुन्दरियों के मुख रक्त कमलों की भाँति उसमें खिले हुए थे। उन युवतियों के बड़े-बड़े नेत्र चंचल गति से विक्षेप कर रहे थे जैसे भ्रमर कमल पुष्पों को चूम रहे हों।

5

जिस प्रकार ऊपर का आकाश स्वच्छ एवं निर्मल था,उसी प्रकार राजमहल के विशाल प्रांगण को स्वच्छ एवं सुन्दर बनाया गया था। उस पर बिछे हुए सिकताकण बहुत ही सुन्दर एवं आकर्षक प्रतीत हो रहे थे। वह विशाल प्रागंण समतल एवं विस्तृत था। कालिमा की एक विचित्र चमक उस पर अनुपम सौंदर्य बिखेर रही थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे आकाश के नक्षत्र पृथ्वी पर उतर कर बिखरे पड़े हो अथवा किसी ने उस प्रांगण में असंख्य सुन्दर पुष्प बिखेर दिये थे। उसका सौंदर्य इतना आकर्षक था मानो वह काम-देवता का ही अपना प्रमुख क्षेत्र हो,इसीलिए उसकी शोभा इतनी चित्ताकर्षक थी।

6

रावण के साथ प्रात-काल ही सभी राक्षसी युवतियाँ भी उठकर बैठी हुई थीं। वे उसकी आज्ञा का दृढ़ता एवं पूर्ण स्वामिभक्ति से पालन करती थीं। वे अपने स्वामी रावण की इच्छाओं एवं अभिलाषाओं से पूरा परिचय रखती थीं। उनके विचार सदैव ही रावण के प्रति प्रेम एवं भक्ति भावना से परिपूर्ण थे। रावण की सेवा में वे किसी प्रकार की भी कमी नहीं आने देती थीं। उनके हृदय रावण की सेवा-भावना में संलग्न थे। वे सभी युवतियां भाँति-भाँति से हाव-भाव दिखाते हुए कार्य करने में कुशल थीं,जिससे रावण का मन मुग्ध हो जाता था। उन प्रेमिकाओं का अन्य कोई उद्देश्य नहीं था। केवल वे रावण के मन को बहलाती, भुलाती एवं बहकाती हुई उसका प्रेम से रंजन करती रहती थीं।

7

वहीं पर क्रम से अपने-अपने पदों के अनुसार,साथ ही साथ विभिन्न श्रेणियों में,रावण के उच्च राज्याधिकारी राक्षसगण भी बैठे हुए थे। वे अपने-अपने पदों के प्रति पूर्णरुपेण उत्तरदायी थे। वे रावण की आज्ञा का पालन करने के लिए सदैव ही प्रस्तुत रहते थे। वे सम्मान प्रकट करके तथा डरते हुए रावण के समक्ष अपना मस्तक झुकाये हुए सेवा के लिए प्रस्तुत थे। कोई भी पदाधिकारी ऐसा नहीं था,जो नियमों का पूरी तरह पालन न कर रहा हो। वे सभी अधिकारी अपने आसनों को अनुशासित ढंग से ग्रहण कर बैठ गये। उन्होंने उन्हीं स्थानों को ग्रहण किया जिन्हें उनको ग्रहण करना चाहिये था।

8

जो राक्षसगण अथवा स्त्रियाँ रावण की सेवा करने के लिए नियुक्त थीं वे प्रेमपूर्वक सच्चे हृदय से रावण की सेवा में रत थीं। वे अच्छे से अच्छे व्यवहार से उसको प्रसन्न करती रहती थीं। जो भी रावण की इच्छा थी उसकी पूर्ति करना राक्षस-सेवक अपना कर्तव्य समझते थे। वे सभी इसके साथ ही साथ राजनीति के दाँवपेचों में भी पूर्ण निपुण थे। उनको अपने विवेक पर पूरा विश्वास था। बुद्धि और विवेक से ही वे कार्य करते थे। इसके साथ ही साथ वे शिक्षाओं तथा महान ग्रन्थों से भी पूर्णतः परिचित थे। कोई ऐसी ज्ञान की पुस्तक नहीं थी.

जिसका उन्होंने अध्ययन नहीं किया था अर्थात् वे सभी में पारंगत थे। उन सभी वातों अथवा सेवा को जो उनके स्वामी रावण को प्रसन्न करती थीं, करने के लिए वे सदैव तन और मन से प्रस्तुत रहते थे। उनका सम्पूर्ण व्यवहार एवं लक्ष्य रावण की सेवा ही था।

9

वे सभी राक्षस महा अभिमानी थे। उनके हृदय दर्पपूर्ण एवं अत्यन्त कठोर थे। वे स्वार्थ लाभ के लोभी थे। वे दूसरों को कष्टदायी थे। वे बड़े ही निरंकुश तथा स्वेच्छाचारी थे। वे बड़े ही कुशल गुप्तचर भी थे। उनकी क्रूरता की कोई सीमा नहीं थी। सारे विश्व में अपने क्रूर कर्मों के कारण उन्होंने आपत्ति एवं विपत्ति का वातावरण उत्पन्न कर दिया था। जो लोग धर्म के नियमों का पालन करते हुए उसका आचरण करते थे,उनके कार्य में वाधा डालते हुए उन्हें कष्ट पहुंचाना ही उनका प्रधान उद्देश्य था। वे निर्दयी,घृणित एवं पराक्रमी थे। प्रतिक्षण वे मूर्खतापूर्ण व्यवहार करते रहते थे। वे बड़े ही दुष्ट एवं निर्मम अमानुषिक व्यवहार करते रहते थे।

10

वे उन सभी कार्यों में सदैव ही रत थे, जिससे दूसरे लोगों को कष्ट एवं कठिनाई हो। यही उनके नीच व्यवहार का प्रधान उद्देश्य भी था। वे बड़े ही क्रोधी,तीक्ष्ण स्वभाव वाले,कटु व्यवहार वाले तथा रुक्ष स्वभाव के थे। वे बहुत अभिमानी भी थे। उनकी कटि के भाग बड़े ही तीव्र तथा शक्तिशाली थे। यदि वे उंगलियों एवं अंगूठे की शक्ति से किसी को पकड़ लेते थे, लगता था जैसे सिंह के पंजे में जकड़ लिया गया हो। उसका छूटना तब असंभव हो जाता था। उनकी दाढ़ियों के बाल घने एवं कठोर थे। उनकी मूंछे लाल-लाल रंग की तथा भयानक थीं।

11

उस अवसर पर वे सभी राक्षसगण अपने प्रधान मंत्री का स्वागत करने के लिए प्रस्तुत थे। उनके प्रधान मंत्री का नाम श्री प्रहस्त था। वे बहुत ही प्रतिष्ठित एवं पूजनीय थे। वे लंका के सबसे अधिक वयोवृद्ध मंत्री थे। वे बड़े ही दृढ़ निश्चय वाले एवं स्थिर चित्त के व्यक्ति थे। एक महान योद्धा के रुप में भी उनकी अपार प्रसिद्धि थी। वे बड़े ही सन्तुलित विचारों वाले एवं अनुशासन का पूरी तरह पालन करने वाले थे। राज्य की सभी राजनीतिक गतिविधियों का सफलतापूर्वक संचालन करने में वे पूर्ण कुशल थे।

12

जब प्रधान मंत्री श्री प्रहस्त उस मार्ग से होकर निकले, तो उनका आदर एवं स्वागत करने के लिए बहुत

से राक्षस वहाँ खड़े थे। उनके साथ ही साथ अनेक सेवकों के समुदाय भी थे, जो उनके साथ ही चल रहे थे। उनके साथ अच्छे-अच्छे वस्त्रों एवं सुन्दर रुपों में बहुत से लोग थे। वे उन सभी नियमों एवं क्रमों को भलीभाँति जानते थे, जिनको अच्छे राज्य-शासन के लिए प्रयोग में लाया जाता था। वे बड़ी ही कुशलता से सेवा-कार्य में रत रहते थे। वे ऐसे संकेतों को प्रस्तुत करने में भी पूर्ण पटु थे, जो अंग-संचालन द्वारा राजाओं के प्रति सम्मान प्रकट करने हेतु किये जाते थे। इस प्रकार उनके सेवक अपनी सम्पूर्ण चारित्रिक गरिमाओं से सेवा करने को सदैव ही प्रस्तुत थे। वे सभी कार्यों को बड़ी कुशलता से करते थे। किसी भी कार्य में उनके अज्ञान का आभास नहीं होता था।

13

इस प्रकार सहस्त्रों सेवकों के समूह एक निश्चित क्रम से सुव्यवस्थित होकर अपने-अपने स्थानों पर बैठ गये। वहां पर उपस्थित बहुत से राक्षस योद्धा अपने - अपने क्षेत्रों के अधिपति थे। वे सभी सुन्दर वस्त्राभूषणों से भली भाँति सुसज्जित थे। वे सभी एक स्थान पर एकत्रित होकर सहस्त्रों की संख्या में वहाँ पर उपस्थित हुए थे। वे कभी भी युद्ध क्षेत्र में पीछे पैर नहीं रखते थे एवं पीठ नहीं दिखाते थे। वे संख्या में अगणित कहे जा सकते थे। वे महान संख्या में सम्पूर्ण मार्ग पर खचाखच भरे हुए थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वह राक्षस समूह एक विशाल जल-प्लावन की भाँति असीम था।

14

वहाँ पर एक बहुत विशाल सभागार भी था, जो अत्यन्त विस्तृत था। उसको सागर की भाँति विस्तृत माना जा सकता है। उसका मुख्य द्वार भी सभी प्रकार से सम्पूर्ण कहा जा सकता था। वह मुख्य द्वार विशालता एवं महानता का सूचक था। वह मूंगे की भित्ति की भाँति वहाँ जैसे खड़ा था। जो लोग भी स्वागत के लिए वहां पर उपस्थित थे, वे सभी मुख्य द्वार से बाहर जाकर वहीं पर ठहर कर खड़े हो गये। उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे बाढ़ के ऊपर बढ़ते एवं चढ़ते जल को किसी ने सेतु बाँध कर वहीं रोक दिया हो और वह बाढ़ का जल वहीं पर ठहर गया हो।

15

वहाँ पर बड़े-बड़े उच्च पदाधिकारी अपनी सेना के साथ अनेक रुपों में स्वागत एवं अगवानी करने के लिए तैयार खड़े थे। वे भाँति-भाँति से वन्दना के लिए प्रस्तुत थे। वे सभी मुख्य द्वार के बाहर स्वागत के लिए खड़े थे। वे बड़े ही शक्तिशाली थे। उनकी संख्या अगणित थी। उस अपार राक्षस समूह को जिस रुप में वन्दना के लिए प्रस्तुत देखा गया, उसका वर्णन करना बहुत ही कठिन था। उस दृश्य को देखकर सभी लोग आश्चर्यचकित हो जाते थे। यह दृश्य इस सम्पूर्ण विश्व में उसकी महान गरिमा एवं नवीनता का द्योतक था।

तात्पर्य यह है कि स्वागत एवं वन्दना के लिए प्रस्तुत उस दृश्य को देखकर ऐसा लगता था जैसे बहुत विशाल रुप में स्वागत एवं सम्मान के लिए यह आयोजन किया गया हो।

16

वहाँ पर गजों का समूह बहुत ही शक्तिशाली एवं भयानक दिखायी पड़ रहा था। वे सभी मस्ती में झूमते हुए मतवाले हो चुके थे। वे बड़े भीषण रव करते हुए चिंघाड़ रहे थे, जिससे सम्पूर्ण वातावरण गूंज रहा था। इस प्रकार यह गज–दल भी एक भीषणता का ही प्रतीक था। जो कोई उनके पास आता, निश्चय उनके एक झटके से ही चूर–चूर होकर पृथ्वी पर धराशायी हो सकता था। यद्यपि ये हाथी बहुत भयावह थे, फिर भी शक्तिशाली योद्धाओं का स्वागत एवं वन्दना करने के लिए उन्हें मुख्य द्वारा पर खड़ा किया गया था। उन गजों की समानता किसी भी अन्य गज सेना से नहीं की जा सकती थी। लंका की गज–सेना को योद्धाओं ने भाँति–भाँति से सुसज्जित कर रखा था। वे सभी गजों को पूर्णरुपेण सुसज्जित करने में पूर्ण कुशल थे।

17

उन योद्धाओं में कुछ ऐसे थे, जो अश्वों को सजाने की कला में पारंगत थे। वे अश्वों की सवारी करने तथा उनसे सफलतापूर्वक युद्ध अभियान कराने में निपुण थे। उनके अश्व बाण की भाँति तीव्रगति से चलते थे। वे वायु की गति के सदृश ही तीव्रगामी कहे जा सकते थे। वे सभी अश्व बहुत तीव्र गति से दौड़ते थे। इस प्रकार बहुत से सुन्दर एवं अच्छे तीव्रगामी अश्वों को उनहोंने सजा कर मुख्य द्वार पर खड़ा किया था। गजों की भाँति अश्व भी सजाकर तैयार किये गये थे।

18

वहाँ पर रावण की अगवानी करने के लिए एवं स्वागत के हेतु ऐसे–ऐसे भयावनी आकृति के योद्धा भी खड़े हुए थे, जो बहुत ही डरावने थे। उनकी भाँति–भाँति की आकृतियाँ थीं। वहाँ पर गैंडे, अजगर, सिंह, रीछ तथा चीतों की डरावनी आकृतियों वाले योद्धा उपस्थित थे। सभी प्रकार के पशुओं को उन्होंने बंद करके पिंजर स्थित नहीं किया था वरन योद्धागण दसों पशुओं को अपनी बाहों में दबाये हुए थे। वे कूर्मवत् वंदना प्रस्तुत कर रहे थे। वास्तव में वे सभी राक्षस योद्धा बड़े ही पराक्रमी एवं सिंह की भाँति भयानक थे।

19

उनमें से कुछ योद्धा ऐसे भी थे जो स्वर्गलोक आदि विभिन्न स्थानों में चारों ओर घूम–घूम कर पृथ्वी पर उपस्थित हुए थे। इन्द्रलोक को लूट कर वहाँ से अभी वे वापस आये थे। वे स्वर्ग में इन्द्र के उद्यान नन्दन वन के

सभी वृक्षों अथवा वहाँ जो भी सुन्दर वस्तुए थीं, उन्हें लूटकर पृथ्वी पर ले आये थे। इस प्रकार उन योद्धाओं ने इन्द्रलोक तक धावा मारना प्रारम्भ कर दिया था। वे अपने साथ भांति भाँति के सुन्दर एवं मधुर फल भी लाये थे, रावण को भेंट के रुप में यह सब देने के लिए वे मुख्य द्वार पर खड़े थे। वे फल असाधारण रुप में रसीले एवं मीठे थे। वे अमृत की भाँति मधुरता से युक्त थे। जो कोई भी उन फलों को खाता था, उसका स्वास्थ्य बहुत सुन्दर एवं अच्छा हो जाता था।

20

उन राक्षसों में ऐसे योद्धा भी थे, जो सीधे स्वर्ग से ही अभी पृथ्वी पर उतर कर आये थे। उनके हाथों में पूजा की भेंट के लिए पारिजात वृक्ष के अनुपम पुष्प सुशोभित हो रहे थे। उनके हाथों में इस अलौकिक पारिजात वृक्ष की शाखाएं भी थीं, जो संद्यः ही तोड़ी गयी थीं। वे अभी तक मृदु एवं कोमल थीं। इन सभी लौकिक एवं अलौकिक वस्तुओं को अर्चना के लिए प्रस्तुत कर वे सभी राक्षस मुख्य द्वार पर खड़े थे। देवताओं की शक्ति उनके समक्ष समाप्त हो चुकी थी। अतएव देवतागण बहुत ही निराश एवं दुःखी थे। वे किसी तरह अपने को छिपाकर अपनी रक्षा कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे उनकी कोई भी गतिविधि अब शेष नहीं रह गयी है।

21

इस प्रकार जब सभी योद्धागण रावण की पूजा एवं वन्दना के लिए अपनी–अपनी अमूल्य भेंटें लेकर प्रस्तुत हो गये, तो वे रावण के आगमन की प्रतीक्षा करने लगे। स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान होकर दशमुख सिहंद्वार पर बाहर निकल कर आया। यह स्वर्ण सिंहासन मणि और माणिकों से बनाया गया था। अनेक वर्णों के पुष्पों से सिंहासन को सुसज्जित किया गया था। रावण का वर्ण काला था। उसकी त्वचा के रंग में कालिमा का आभास होता था। उसका व्यक्तित्व ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे आकाश पर काले मेघ छाये हों।

22

जब रावण सभा में आकर उपस्थित हुआ, तो शीघ्र ही गामलान वाद्य यंत्रों का स्वर वहाँ पर मुखरित हो उठा। उसके बाद वृद्ध प्रधान मंत्री ने सेना के प्रधान सेनापति के साथ सभा में प्रवेश किया। वहां आने के बाद वे दोनों ही उच्चतम पदाधिकारी आगे बढ़े। उन्होंने दशमुख का पूरा सम्मान किया। वे आदरपूर्वक रावण के समक्ष खड़े हो गये। सभी की दृष्टि नीचे की ओर झुकी हुई थी। वे रावण के समक्ष सभा–मंडप में विधिवत् अपने–अपने आसनों पर बैठ गये।

अध्याय – 13

1

रावण के अन्य सभी मंत्रीगण भी उसके समक्ष उपस्थित हो गये। केवल विभीषण ही सभा में अब तक आकर उपस्थित नहीं हुए थे। वे सदैव ही महादेव शिव के ध्यान में मग्न रहते हुए उनकी पूजा आराधना करते रहते थे। वे अहर्निश संसार के प्राणियों के कल्याण के विषय में बार-बार विचार करते रहते थे।

2

उनका हृदय शंकर की आराधना एवं समाधि में दृढ़ता से लगा रहता था। उनके स्थिरचित्त में कभी भी परिवर्तन नहीं हो सकता था। उनकी मुखाकृति सुन्दर, मृदु, मधुर और चित्ताकर्षक थी। उनके हृदय में सदैव ही संसार की दशा देखकर दुःख की रेखा खिंची रहती थी, यद्यपि उनके हृदय से सांसारिक भ्रम आदि पूर्णरुपेण समाप्त हो गये थे। फिर भी वे संसार के प्रति अनुरक्त थे। उनके व्यक्तित्व में राक्षसीवृत्ति लेशमात्र भी नहीं थी। कहीं भी राक्षसत्व के कोई लक्षण दृष्टिगोचर नहीं होते थे। उनके हृदय में करुणा का सागर सदैव ही लहराता रहता था।

3

वे सदैव ही विशुद्ध एवं शान्त हृदय से शंकर की पूजा-अर्चना में प्रवृत्त रहते थे। वे पूजा कार्य से निवृत्त होकर उचित दिशा की ओर प्रस्थान को प्रस्तुत हो गये। सर्वप्रथम वेअपनी माता के पास मिलने के लिए पहुंचे। रावण की सभा में जाकर उसका आदर-सत्कार करने से पहले वे अपनी माता का आशीर्वाद प्राप्त करना चाहते थे। वे निरन्तर अपनी माता के प्रति सेवा-भाव रखते थे। सदैव ही उनका पूरा ध्यान रखते हुए कभी भी वे उन्हें भूलते नहीं थे।

4

माता के प्रति पुत्र का क्या कर्तव्य है, यह भावना सदैव ही उनके मन में छाई रहती थी। मानवीय भावना एवं दया को वे सदैव ही धारण किए रहते थे। वे जीवन में उसको सबसे अधिक महत्व देते थे। यही कारण था कि सदैव ही वे ईश-आराधना में संलग्न रहते थे। उनका महान चरित्र एवं धार्मिक जीवन सभी के लिए अनुकरणीय था। उनका अपनी माता के प्रति भक्ति एवं सेवा-भाव भी सभी के लिए सुन्दर आदर्श प्रस्तुत करता था।

5

जब विभीषण ने प्रातःकाल ही अपनी माता के दर्शन किये, तो उनका हृदय आनंदमग्न हो गया। उनकी माता ने विभीषण की ओर देखते हुए प्यार से उन्हें बुलाया। विभीषण ने उनके प्रति गहरा सम्मान प्रकट किया। विभीषण की माता उनके निकट आयीं। उन्होंने विभीषण से कहा कि इस विश्व का कल्याण ही हम सबको सुखी बना सकता है। यही भावना मेरे मन में भी निरन्तर बनी रहती है।

6

हे सौभाग्यशाली विभीषण ! मेरे प्रिय पुत्र ! मेरी ओर देखो। अपनी कठिनाइयों एवं कष्टों का कोई भी संकेत मुझे मत दो। तुम्हारे किसी भी कष्ट के विषय में सुनकर मुझे हार्दिक दुःख होता है। अकस्मात ही मेरा हृदय दुःखी होकर भर आता है। मुझे अपार कष्ट होता है। अब मुझे अपने चारों ओर सदैव ही कष्ट एवं दुःख दिखाई देता है। संसार की दशा शोचनीय हो गई है।

7

तुम्हारा बड़ा भाई दशमुख वज्रमूर्ख है। वह बुद्धिहीन भी है । उसके हृदय में अन्य प्राणियों के प्रति लेशमात्र भी करुणा तथा दया का भाव नहीं है। प्रेम नाम की कोई भावना उसके हृदय में शेष ही नहीं है। रावण ने सम्पूर्ण संसार को त्रस्त कर सभी प्राणियों को अपार कष्ट पहुंचाया है। अपनी शक्ति से उसने विश्व को बहुत दुःखी किया है। वह केवल अपनी धृष्टता एवं अपार शक्ति पर रात दिन गर्व करता रहता है। इसकी अपेक्षा उसक मन में अन्य किसी अच्छी भावना का कोई स्थान नहीं है।

8

ऐसा प्रतीत होता है जैसे इस सम्पूर्ण विश्व पर विष ही विष की वर्षा हो रही है जिससे यह सारा संसार ढका हुआ है। तुम्हारा बड़ा भाई रावण उसी विष की भाँति संसार को अपार कष्ट दे रहा है। इसीलिए तुम्हारा यह कर्तव्य है कि तुम रावण को इस वास्तविक्ता के प्रति सचेत करो। इससे शायद इस संसार की व्यथा एवं दुःख कुछ कम हो सके। तुम इस जगत के लिए जीवन–दान देने की कामना कर अमृतवत बनो, जिससे इस दुःखी विश्व का कल्याण हो सके और संसार में प्राणियों का जीवन सुखमय हो सके।

9

तुम्हारे लिए उचित यही है कि तुम अपने बड़े भाई रावण को इन सभी बातों का स्मरण दिलाओ, जिससे कि वह भी संसार के कल्याण की ओर प्रवृत्त हो सके। रावण का कर्तव्य है कि वह राम की वन्दना करे। इस विषय में मेरा भी यही दृढ़ विश्वास है कि राम की पत्नी सीता को राम की वन्दना करते हुए वापस लौटा दिया जाय।

यही एकमात्र वह औषधि है, जिससे इस संसार में सुख एवं शान्ति का वातावरण उत्पन्न हो सकता है। सम्पूर्ण विश्व का सुख और आनंद सुमार्ग से ही प्राप्त हो सकता है।

10

रावण ने अपनी क्रूरता से सभी देवताओं को भी हार्दिक कष्ट पहुंचाया है। उसके विचार जैसे कालकूट महाविष की भाँति हैं। उसे यह भी स्मरण रखना चाहिए कि श्री राम तथा शिव में कोई अन्तर नहीं है। दोनों ही देवता एक दूसरे के समान हैं। मुझे यह स्पष्ट है कि निश्चय ही रावण का वध राम द्वारा किया जायेगा।

11

यही कारण है कि मेरे ह्रदय में यह विश्वास दृढ़ होता जा रहा है कि युद्ध क्षेत्र में राम द्वारा दशमुख का वध निश्चित रुप से होकर ही रहेगा। जैसा कि हम सब अभी कुछ समय पूर्व ही देख चुके हैं कि लंकापुरी जल कर भस्मसात् हो चुकी है। लगभग उसका सम्पूर्ण विनाश हो चुका है। इन्हीं सब बातें से इस सत्य का स्पष्ट संकेत मिलता है। मुझे इस बात में तनिक भी सन्देह नहीं है कि रावण की मृत्यु अब निश्चित है।

12

जैसा कि तुम स्पष्ट ही देख रहे हो कि रावण की अशोक वाटिका पहले सदैव ही बड़े आदर एवं आनंद की दृष्टि से देखी जाती थी। अब वह सुन्दर उद्यान नष्ट-भ्रष्ट होकर पूरी तरह उजड़ चुका है। उसके सभी सुन्दर-सुन्दर वृक्ष धाराशायी हो गये हैं। रावण की सेना के प्रधान अंग, जिसमें वीर योद्धा राक्षस एवं सेना के उच्च पदाधिकारी भी थे, नष्ट किये जा चुके हैं। ऐसे प्रवीर जो पहले अजेय एवं महान शक्तिशाली माने जाते थे, युद्ध में मारे गये हैं।

13

इसीलिए मेरा तुमसे अनुरोध है कि अपने इस बड़े भाई नीच रावण को इन सभी बातों का स्मरण दिलाते हुए वास्तविकता से पूर्णरुपेण अवगत कराओ। उसको पवित्र लोगों एवं धार्मिक विचार वाले लोगों की भाँति आचरण करने के लिए हर संभव उचित शिक्षा दो, जिससे वह अपने जीवन में सज्जनों की भांति सभी से उचित व्यवहार कर सके। तुम्हें यथाशक्ति ऐसा प्रयास करना चाहिए कि रावण धर्म की शिक्षाओं के प्रति उदासीन न रह सके वरन उनका पालन करे। तुम विवेकपूर्ण युक्ति से काम लो तथा गंभीरता से उचित प्रयत्न करो। बार-बार उसके समक्ष धर्म की शिक्षाओं को दोहराते हुए उसे आवश्यक उपदेश दो। इससे वह धर्माचरण की ओर प्रवृत्त हो सकेगा।

14

इस प्रकार विभीषण की माता ने उनसे आग्रह किया और कहा कि वे रावण के पास जाकर उसे सचेत करते हुए सावधान करें। वास्तव में इन बातों के लिए रावण को सचेत करने में विभीषण को किसी प्रकार का भी संकोच नहीं हुआ। उनके विचार से भी इस विषय में रावण को सचेत करना उनका कर्तव्य था। उनकी माता ने फिर उनसे एक बार स्मरण दिलाने को कहा। उन्होंने यह भी कहा कि इसी उदेश्य से वें विभीषण की प्रतीक्षा भी कर रही थीं।

15

जब विभीषण की माता ने उनसे सभी बातें स्पष्ट रुप में कह दीं, तो विभीषण के ह्रदय में अपार प्रसंन्नता हुई। उनको अपने विचार और अधिक स्पष्ट एवं उचित प्रतीत होने लगे। रावण के विषय में उनकी भी यही धारण थी। वे बाद में रावण का अभिनंदन करने के लिए सभामंडप के भीतर प्रविष्ट हुए। जब वे सभामंडप में पहुंचे, तो उस स्थान की शोभा देखकर वे आश्चर्य चकित रह गये। यह विशाल मंडप दर्शनीय–स्थल बना हुआ था।

16

जब विभीषण सभामंडप में गये तो उन्होंने अपने बड़े भाई रावण को स्वर्ण सिंहासन पर विराजमान देखा। वह स्वर्ण सिहांसन अग्नि की ज्वालाओं की भाँति चारों ओर प्रकाश की किरणें बिखेर रहा था। उसका विशालकाय शरीर काला सा थां, जिसमें एक विचिंत्र प्रकार की कांति थी। धूम्रपुंज कहीं पर एकत्रित हो गया हो, ऐसा ही वह दृष्टिगोचर हो रहा था। उसे देखकर ऐसा भी लगता था जैसे कोयले का ढेर इधर–उधर गतिशील हो रहा हो।

17

विभीषण ने सभा–मंडप में जाकर रावण के समक्ष प्रेम–पूर्वक अभिवादन किया। तत्पश्चात् रावण ने विभीषण की ओर ध्यान देकर देखा। वास्तव में रावण की आकृति बहुत ही भयानक थी। विशेषकर उसका मुख अत्यन्त डरावना था। उसकी आकृति विषैले सर्प से कम भयानक नहीं थी। उसकी सभी गतिविधियों अथवा व्यवहार को, जो भी देखता था, उसके मन में भय उत्पत्र हो जाता था।

18

इस प्रकार जब विभीषण राज्यसभा में आकर उपस्थित हुए तो उन्होंने झुककर अपने बड़े भाई रावण को

प्रणाम किया। उनके सम्मान के लिए रावण स्वयं उठकर खड़ा हो गया। बाद में आगे बढ़कर विभीषण सिंहासन के निकट एक सुन्दर आसन पर आसीन हो गये। उनका आसन रावण से बहुत दूरी पर नहीं था।

19

विभीषण ने रावण के निकट एक बहुत सुन्दर आसन पर अपना स्थान ग्रहण कर लिया। वह सुन्दर आसन चारों ओर अपनी किरणें बिखेर रहा था, बाद में सभी लोग वहां शान्त होकर बैठ गये। तत्पश्चात् दशमुख रावण ने प्रसन्नतापूर्वक अपने सभी मंत्रियों एवं साथियों को सम्बोधित करते हुए इस प्रकार कहा :

20

हे वीरों ! तुम सभी युद्ध में महाशक्तिशाली हो। तुम ऐसे महानयोद्धा हो जो दूसरों को भी रण में आमंत्रित करके उन्हें युद्ध के लिए प्रेरित कर सकते हो। यदि तुम युद्ध क्षेत्र में आगे बढ़ते हो,तो असाधारण वीरता का परिचय देते हो। तुम्हारे समकक्ष अन्य दूसरे ऐसे योद्धा इस विश्‍व में नहीं हैं, जो शत्रु के हृदय में अपार भय उत्पन्न कर सकें। तुम सभी इस विश्‍व में महान योद्धाओं के रुप में प्रसिद्ध हो। एक क्षण में ही अपने शत्रुओं का संहार करने में भी तुम लोग पूर्ण समर्थ हो।

21

आपके हृदय भी स्वच्छ एवं निर्मल हैं। उनमें किसी प्रकार की कोई मलिनता भी नहीं है । इसकी अपेक्षा युद्ध की कलाओं में पूर्ण निपुणता प्राप्त होने के कारण आप सभी परिस्थितियों को भली भांति समझते हैं। आप लोग लंका नगरी की सुरक्षा एवं उसके महत्व को पूरी तरह जानते हैं तथा बहुत ही बुद्धिमान हैं। मैं अच्छी तरह जानता हूं कि आप सबने जिस कार्य को भी भूतकाल में अपने हाथों में लिया था, उसमें आपको सदैव ही अभूतपूर्व सफलताएं प्राप्त हुई थीं। यह सब आपकी शक्ति और शौर्य का स्पष्ट प्रमाण हैं।

22

आप सब जानते हैं कि आजकल राम अपनी सेना सहित महेन्द्र पर्वत तक आ पहुंचे हैं। इस समय तक उन्होंने अपनी वानर सेना सहित निश्‍चय ही सागर को पार कर लिया होगा। इसकी अपेक्षा अन्य कोई दूसरी सूचना प्राप्त नहीं है। इस परिस्थिति में हमें शत्रु को रोकने के लिए किस प्रकार का प्रयास करना उचित होगा ?

23

इसके पहले भी उन्होंने हमारी राक्षस सेना के कई बलशाली योद्धाओं का वध कर दिया है। उनमें ताड़का, विरोध एवं दूषण के विषय में आप सबको विदित ही है। इन सबका वध स्वयं राम ने ही वन में किया है। यह जान कर भी आपमें से किसी को क्रोध नहीं आया। अब समय आ गया है कि शत्रु से लोहा तथा युद्ध के लिए आप सभी शीघ्र ही प्रस्तुत हो जाइए।

24

वानर राज बालि मेरा अभिन्न मित्र था। यहाँ तक कि उसे मेरे ही शरीर का एक अंग माना जा सकता था। मुझे उस वीर से अपार प्रेम था। हम दोनों के मध्य प्रेम–व्यवहार का अटूट संबंध चला आ रहा था। उसका भी राम ने अकारण वध कर दिया। उसके वध का कोई उचित कारण उनके पास नहीं था। मैं इन सभी कार्यों को किसी महाशक्तिशाली योद्धा का कार्य नहीं मानता। मेरा यह अनुमान है कि राम जानबूझ कर बालि के वध के विषय में चुपचाप रहे हैं। यह कार्य उन्होंने बिना कारण ही किया था।

25

आज मुझे अपने राजपुत्र अक्षय का भी स्मरण हो रहा है। उसके लिए मेरे मन में अपार दुःख एवं करुणा का भाव है । क्या आप सबने अभी कुछ समय पहले नही ध्यान दिया कि किस प्रकार वह युद्धक्षेत्र में धराशायी हुआ था ? बाद में लंका नगरी का राजमहल जलाकर भस्मसात् कर दिया गया। कुछ भी शेष नहीं बचा। अग्नि में जलकर सभी कुछ समाप्त हो गया। आश्चर्य की बात है कि आप सभी मौन होकर यह दृश्य स्वयं अपनी आँखों से देखते रहे।

26

राम का व्यवहार अत्यन्त अशिष्टतापूर्ण है। मैं ऐसा ही सोच रहा हूं। मैने सुना भी है कि अब उनकी सेना लगभग सागर को पार ही करने वाली है। अब उस वानर सेना को रोकने का हमें क्या प्रयत्न करना चाहिए, जिससे वे सागर पार न कर सकें ? मान लीजिए कि राम अपनी वानर सेना सहित यहाँ आ पहुंचे तो उस समय हमें कौन सा राजनीतिक दृष्टिकोण अपनाना चाहिए ? शत्रु के आक्रमण को हमें कैसे असफल करना चाहिए ?

27

रावण ने अपने मंत्रीगणों को संबोधित करके जब इस प्रकार के शब्द कहे, तो सभी राक्षस योद्धा उठकर खड़े हो गये। वे खड़े होकर सिंहनाद करने लगे। रावण के प्रति अपना पूर्ण विश्वास प्रकट करते हुए पूरी शक्ति से अपना सहयोग एवं समर्थन देने का उन्होंने वचन दिया। वे सभी भाँति–भाँति के अस्त्र–शस्त्रों को धारण

किये हुए थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे युद्ध के लिए प्रस्तुत थे और आक्रमण के लिए आगे वढ़ रहे थे। उन्होंने म्यानों से अपनी–अपनी तलवारें खींच लीं। उनके हाथों में तलवारें एवं अन्य अस्त्र–शस्त्र चमचम चमक रहे थे।

28

वहाँ पर उपस्थित योद्धाओं में ऐसे भी योद्धा थे जो अपने दण्डों को घुमा रहे थे। कुछ राक्षस बड़ी ही पटुता एवं तीव्रता से अपनी गदाओं को घुमाने लगे। कुछ अन्य योद्धाओं ने अपने हाथों में कुल्हाडी तथा धनुषबाण ले लिये। वे सभी रावण के ओजपूर्ण शब्दों को सुनकर उठ खड़े हुए। वे सिंह की भाँति गर्जना करने लगे। उनका रुप बहुत ही भयानक था। वे शीघ्र ही शत्रु पर आक्रमण के लिए तैयार थे तथा शत्रु का संहार कर उसका पूर्ण विनाश करने के लिए प्रस्तुत हो गये थे।

29

रावण के प्रधानमंत्री प्रहस्त एक बड़े ही प्रसिद्ध युद्ध–कुशल योद्धा थे। वे ही उस विशाल सभा के उस दिन अध्यक्ष थे। उन्हीं की अध्यक्षता में सभी महत्वपूर्ण निर्णय लेने का निश्चय किया गया था। उन्होंने आपस में वहुत समय तक विचार–विमर्श किया। वे अभिमान के कारण उन्मत्त हो रहे थे। वे शत्रु का नाश करने के लिए पूरी तरह प्रस्तुत थे। वे बडे ही उत्साह से उच्च स्वरों में वार्तालाप कर रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे कि चीते जंगल मे दहाड़ रहे हों।

30

हे राजन ! हम सबको क्षमा कर कीजिए। हम सब आशा करते हैं कि आप अवश्य क्षमा कर देंगे। हम सबके पारस्परिक विचार विमर्श की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है। विचार करके हमें केवल कठिनाई का ही अनुभव होगा। वास्तव में आप का शत्रु कन्दमूल फल की भाँति बहुत ही साधारण एवं शक्तिहीन है। ऐसा हम सबका अनुमान है। आपका शत्रु एक कोमल वृक्षराजि की भाँति है। उसकी अभिलाषाएं तथा आकांक्षाएं भी भ्रमात्मक हैं। वास्तव में उसकी इच्छाएं कन्दमूल की भाँति कोमल और मूर्खतापूर्ण हैं।

31

हे राजन ! आपके विचार अब इस साधारण परिस्थिति में भी विपरीत दिशा की ओर क्यों जा रहे हैं ? ऐसा प्रतीत होता है कि आपके सोचने के ढंग में बहुत ही वड़ा अन्तर आ गया है। एक समय था जव आपने इन्द्रलोक में जाकर इन्द्र पर भी विजय प्राप्त कीया। युद्ध में इन्द्र को भी पराजित होना पड़ा था। उस समय आपको

अपनी शक्ति पर पूरा विश्वास था। आपके मन में कोई शंका नहीं थी। युद्ध से पहले आपने इस प्रकार सभा में सबको निमंत्रित करके कभी भी विचार विमर्श नहीं किया था। अब आपका शत्रु जब एक साधारण मानव है, तो आप इतने चिन्तित होकर इतनी गंभीरता पूर्वक विचार-विमर्श क्यों कर रहे हैं ?

32

क्या आपने हम सब राक्षसों की पूरी शक्ति का परीक्षण नहीं कर लिया है ? युद्ध क्षेत्र में हम सबकी भीषणता एवं कुशलता से भी क्या आप पूरी तरह परिचित नहीं हैं ? हम सब अनेक बार अपनी शक्ति और शौर्य का पूरा परिचय दे चुके हैं। यह पृथ्वी लोक, जिसको पवित्र कहा जाता है, हम सभी ने चूर-चूर कर सैकड़ों खण्डों में विभाजित कर दिया है।

33

इस चन्द्रमा को भी जो आकाश में दिखायी देता है, हम सबने पूरी तरह अपने आधिपत्य में ले लिया है। मैं तो अकेला ही उस चन्द्रमा को पूरी तरह खा सकता थां। चाहे में उसे निगल जाता अथवा पूरी तरह चबा जाता। जैसा कि आपने स्वयं देखा है कि आपकी सभी अभिलाषाओं की पूर्ति करने में हम सब सदैव ही पूर्ण सफल हुए हैं। अतएव साधारण मानवों से संघर्ष में हमें कोई कठिनाई नहीं हो सकती। इस विषय में चिंतित होने का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है।

34

हमारे शत्रु राम एवं लक्ष्मण हैं। वे साधारण मानव हैं। उनके साथ मूर्ख वानरों की सेना है। उनकी संख्या भी बहुत अधिक नहीं है। यदि भविष्य में वे हमारे समक्ष युद्ध करने आये, तो केवल उनका भक्षण करके हमारा कलेवा मात्र ही पूरा हो पायेगा। अतएव इस विषय पर बहुत चिंतित होने का कोई विशेष कारण नहीं है। इस विषय पर राजनीतिक दाँव - पेचों के लिए पारस्परिक विचार-विमर्श करने की कोई विशेष आवश्यकता ही नहीं है।

35

पहले आपने कैलाश पर्वत को एक साधारण भारहीन वस्तु की भाँति उठा लिया था। यही नहीं, आपने उस पर्वत को अपने बायें हाथ पर ही सरलता से धारण कर लिया था। वह भी तब जब भगवान शिव अपनी प्रियतमा पार्वती के साथ स्वयं उस पर्वत शिखर पर विराजमान थे।

36

हे राजन ! आपकी अपार शक्ति का वर्णन करना असंभव है। आपकी साधारण प्रजा एवं राक्षस सेना की असाधारण शक्ति का वर्णन करना भी कठिन है। उनमें इतनी शक्ति है कि वे इस पृथ्वी का स्थानान्तरण नीचे से ऊपर स्वर्गलोक की ओर भी कर सकते हैं। वे स्वर्ग लोक को उतार कर नीचे पृथ्वी पर लाने में भी पूर्ण समर्थ हैं।

37

जहाँ तक राम के उस वानर दूत का संबंध है, वह तो एक साधारण नीच वानर ही था, जिसने लंका में कूद-कूद कर जगह-जगह आग लगा दी थी। वह भी किसी रुप में अपार शक्तिशाली नहीं मान्म जा सकता है। कुछ राक्षसों को उसने युद्ध में अवश्य धराशायी कर दिया था। इसका कारण यह भी है कि हम लोग अपार शक्तिशाली होने के कारण छोटे-मोटे शक्ति-प्रदर्शनों पर बहुत ध्यान नहीं दे सके थे। उसकी उपेक्षा भी हमने की। यही कारण है कि उस नीच वानर को सफलता प्राप्त करने के लिए थोड़ा बहुत अवसर प्राप्त हो सका। हम सब केवल झूठा प्रदर्शन मात्र करते रहे।

38

इन परिस्थितियों के आधार पर यह कहा जा सकता है कि राजनीतिक चालों के विषय में वार्तालाप करने का इस समय कोई विशेष अर्थ ही नहीं हो सकता है। इस विषय पर गंभीरता पूर्वक बातचीत कर कोई योजना बनाने का प्रश्न ही नहीं उठता। हम सबका यह उचित अनुमान है कि हम सब पहले से ही बहुत शक्तिशाली रहे हैं। यदि हम सब राम जैसे साधारण मानवों के आक्रमण की कोई विशेष परवाह करेंगे तो हम सबकी ओर से यह भूल ही होगी। यदि भविष्य में कभी उन्होंने आक्रमण किया तो हम सब सरलता से उन्हे पराजित कर देंगे।

39

उस महान सम्मेलन में राक्षसों की सेना के अधिकतर वीरों की इस विषय पर यही राय थी। उनके हृदय में घोर अभिमान था तथा धृष्टता की चरम सीमा थी। उस समय उनके इन दर्पपूर्ण वचनों को सुनकर विभीषण ने इसका उचित उत्तर दिया। सदाचरण के जो भी पवित्र विचार हो सकते थे, उन्हें उस सभा में उपस्थित सभी के समक्ष उन्होंने बड़े आदर से प्रस्तुत किया। उन्हें सभी आवश्यक बातों का विधिवत स्मरण कराया।

40

हे राजा रावण के सच्चे स्वामिभक्त योद्धाओं ! तुम वास्तव में अपने स्वामी की आज्ञा-पालन में पूर्ण तत्पर

हो। इस विषय में तुम सबने जो विचार यहाँ पर व्यक्त किये हैं, वे उचित ही हैं। वास्तव में तुम सबसे यह पूरी आशा की जाती है किं तुम निश्चय ही अपने स्वामी के वचनों को पूरा करने तथा शत्रु का संहार करने के लिए प्रस्तुत रहोगे। इस कार्य के लिए तुम सब अपने प्राणों का उत्सर्ग करने को भी पूर्णतः उद्यत हो। यह बडे ही गौरव की बात है।

41

आपके महाराजा ने अभी आपसे राजनीतिक दाँव–पेचों के विषय में प्रश्न उठाया । आपके राजा को अपने प्रश्न का कोई उचित उत्तर आपसे प्राप्त न हो सका, जिसकी पाने की उन्होने चेष्टा की थी। उचित उत्तर के अभाव में अपार हानि की संभावना है। वास्तव में आपके उत्तर से इस समस्या के समाधान और राजनीतिक सुझाव की आवश्यकता थी। आप शस्त्र बल और युद्ध के माध्यम से इस प्रश्न का हल किस प्रकार खोज सकेंगे ?

42

यह परम आवश्यक है कि पारस्परिक विचार विमर्श कर आप लोग वार्तालाप के माध्यम से इस गंभीर समस्या का हल ढूंढ़ निकाले। इसके लिए शान्त होकर इस प्रश्न पर विस्तारपूर्वक विचार करना उचित है। इसी से संबका कल्याण संभव हो सकेगा। राजनीति के क्षेत्र में केवल शक्ति और शौर्य का झूठा अभिमान प्रदर्शित करना विशेष अर्थ नहीं रखता। वास्तव में जिस व्यक्ति ने नीति शास्त्रों एवं राजनीतिक ग्रथों का गंभीर अध्ययन किया हो, उसी से यह निवेदन किया गया था कि वह अपनी राजनीतिक कुशलता एवं सूझबूझ के आधार से इस प्रश्न का उचित राजनीतिक हल प्रस्तुत करे।

43

मैं व्यक्तिगत रुप से यह स्वीकार नहीं करता हूं कि भविष्य में यदि राम का अभियान लंका पर होता है तो उस पर विशेष ध्यान देने की कोई आवश्यकता नहीं है। कुछ लोगों का ऐसा मत है , परन्तु आप सबके समक्ष मैं यह पूरी तरह स्पष्ट करना चाहता हूं कि आपका यह विचार पूर्णतः भ्रमात्मक है। आप सभी अभी कुछ समय पूर्व ही देख चुके हैं कि राम का अकेला एक दूत ही इतना बलशाली सिद्ध हो चुका है कि उसने लंका नगरी को भस्मसात कर दिया है। पहले जब राम के दूत ने लंका को जलाकर भस्मीभूत कर दिया था, तो कौन राक्षस इतना शक्तिशाली था जो उनके समक्ष जाकर संघर्ष करता। यहाँ तक कि तुम सभी योद्धाओं को अत्यन्त लज्जित होना पड़ा। राम ने पहले भी सभी राक्षसों का वध कर दियां था।

44

कुछ लोग यह अनुमान लगा सकते हैं कि क्या बिना नागपाश के प्रयोग के उस दूत को पकड़ना संभव नहीं था। तो इसका उत्तर स्पष्ट है कि उस शक्तिशाली दूत को पकड़ने का अन्य कोई साधन ही नहीं था। बाद में उस व्यक्ति को बाँध कर उसकी पूंछ में वस्त्र लपेटे गये जैसा कि आप सबका इस विषय में तर्कहै। तुम सभी अत्यन्त आलसी हो। झूठे दर्प के कारण तुम सबने वास्तविकता की पूर्ण उपेक्षा की है। आज मैं यह कह सकता हूं कि आप लोगों ने राम के दूत के शरीर को बहुत अच्छी तरह दृढता से कस कर बांध दिया था। आप उसको महान शक्तिशाली समझते थे। इतना होने पर भी उसने स्वर्ण की लंका को मिट्टी में मिला दिया है।

45

वास्तव में नागपाश ही तुम्हारा एकमात्र ऐसा उत्तम शस्त्र था, जिससे तुम्हें कुछ सफलता प्राप्त हो सकी थी। क्या यह सत्य नहीं है कि नागपाश के बिना तुम्हारे सभी प्रयास असफल सिद्ध हुए थे ? यह नागपाश तुम्हारी शक्ति का चरम बिन्दु था। तुम्हारे पास इससे उत्तम अन्य कोई अस्त्र–शस्त्र नहीं था। उसको राम दूत ने अपनी शक्ति से तोड़कर नष्ट भ्रष्ट कर दिया था। एक ही क्षण में उन्होंने बन्धन से मुक्ति प्राप्त कर ली थी। उसके टुकड़े–टुकड़े करके उस दूत ने अनुपम लाघव एवं शौर्य का परिचय दिया। यह सब उसकी ओर तुम्हारी उपेक्षा परिणाम नहीं था कि उसने बड़ी सरलता से तुम्हारे बन्धन से छुटकारा पा लिया वरन् यह तुम सबकी महान असफलता थी।

46

इसीलिए अब तुम सबसे मेरा यह अनुरोध है कि राजनीति के दाँव–पेंचों और चालों के विषय में भी पूरी सतर्क्ता से काम करो। तुम लोगों को नीति शस्त्रों एवं धर्म ग्रन्थों का भी अनुशीलन कर उन्हीं के आधार से व्यवहार करना चाहिए। तुम उन लोगों का अपमान करने की चेष्टा कभी मत करो, जो किसी औचित्य के लिए संघर्ष करने को प्रस्तुत है अथवा अपनी एक उचित बात तुमसे मनवाना चाहते है। शक्ति एंव झूठे दर्प का कोई महत्व नहीं होता है। उनमें कोई स्थायित्व भी नहीं है। बहुत से लोग जो अपने ह्रदय में दर्प के कारण बहुत ही फूले रहते हैं, अन्त में पराजय ही उठाते हैं।

47

राम से युद्ध कर विजयश्री प्राप्त करना कोई सरल काम नहीं है। जीवन में सभी व्यक्तियों को सदैव सफलता एवं सौभाग्य के दर्शन होना संभव भी नहीं है, न ही जीवन के सम्पूर्ण गुंण गौरव ही सबको प्राप्त हो पाते हैं। जिन लोगों के ह्रदय में दृढ़ता एवं विश्वास है तथा जिन लक्ष्यों की ओर वे आगे बढ़ते हैं, उनके प्रति उनमें पूरी आस्था एवं सत्य का आधार रहता है। उनका संघर्ष सदैव ही पवित्र आदर्शों के लिए होता है। वहाँ पर संभवतः यह कल्पना की जा सकती है कि वे अपने लक्ष्य की प्राप्ति कर सकेंगे। विजय–श्री उनके हाथ में ही होगी। वे

जीवन में पूर्ण सौभाग्यशाली भी हो सकेंगे।

48

वास्तव में उपर्युक्त परिस्थितियों में ही जीवन में सौभाग्य को स्थायी रुप से प्राप्त किया जा सकता है। यह जीवन के वे महान मूल्य हैं। जिनकी खोज केवल सदगुणों की कुशलता से ही संभव है। अतएव इस विषय में सद्-असद् के विवेक की बहुत बड़ी आवश्यकता है। किसमें लाभ है, क्या करना अधम कार्य माना जाता है, इसके जानने से ही सत्य का ज्ञान संभव है। इस तथ्य का भली भाँति परीक्षण कर लिया जानां चाहिए। जिस कार्य से लाभ संभव हो, उसी पर ध्यान देकर उसी का अनुसरण करना उचित होगा।

49

इसका अभिप्राय यह है कि 1- राजनीति 2- आक्रमण 3- यात्रा 4- स्थान 5- शत्रु 6- तथा ऐसे मित्र जिनसे सहायता की आशा की जा सकती है, ही वे सदगुण हैं, जिनका अनुसरण करना चाहिए। किसी के भीलक्ष्यका आधार ये सदगुण ही बन सकते हैं। इन बातों पर सदैव ही उन लोगों को पूरा ध्यान देना चाहिए, जो युद्ध में सदैव ही विजय की कामना करते हैं।

50

सम्पूर्ण मानव मात्र से प्रेम ही पवित्र लक्ष्यों का आधार होना चाहिए। ये सभी बातें उत्तम विचारों से ही संभव हैं। ये सद्गुण एकं प्रकार से ऐसे मित्र ही कहे जा सकते हैं, जो विजय का कारण सिद्ध होते हैं। यदि इन सभी गुणों द्वारा सम्मानित होकर राजा का प्रेम प्राप्त करता है तो यह उचित ही है। यद राजा उत्तम गुणों पर कोई ध्यान नहीं देता, सदगुणों की पूरी अवहेलना करता है तो इस परस्थिति में उसका भी कार्य सफलतापूर्वक पूर्ण नहीं हो सकता। वह विजय भी प्राप्त नहीं कर सकता।

51

यदि कोई राजा किसी सेना को युद्ध में हरा सकता है, अपने शत्रु के शक्ति केन्द्रों को तोड़ सकता है, तो वह निश्चय ही अपने शत्रु को युद्ध में पराजित कर सकता है। इसका कारण भी यही होता है क्रि जन-साधारण अपने राजा से प्रेम करते हैं। वे राजा के लिए अपना प्राणोत्सर्ग करने को भी उद्यत रहते हैं। इसीलिए युद्ध की स्थिति में वह राजा शीघ्र ही अपनी सेना को प्रस्तुत कर तथा अन्य साधनों से सुसज्जित होकर शत्रु से लोहा ले पाता है और वह इसके लिए सदा तैयार रहता है।

52

रागरंग में राजा का बहुत रुचि लेना अथवा भाँति–भाँति से आनंद मनाना उचित नहीं है। इसको सदवर्ग के गुणों की संज्ञा नहीं दी जा सकती है। वास्तव में इस रुप में साथ लगे रहने वाले शत्रु–से होते हैं। अवगुण रुपी शत्रु शरीर से कभी भी दूर नहीं रहता है। जब प्रजा के लोग राजा को प्रसन्न करने के लिए भाँति–भाँति के उपकरण जुटाते हों तो उस अवस्था से अथवा उन गतिविधियों से राजा को बहुत ही सचेत रहना चाहिए। इस प्रकार सदवर्ग के गुणों के अभाव में तथा आकर्षणों में राजा अपने लक्ष्य से पथभ्रष्ट हो सकता है। इसीलिए मन को किसी भी प्रकार के ऐसे आकर्षणों से दूर रखना चाहिए, जिससे लक्ष्य सिद्धि में बाधा उत्पन्न हो सके।

53

यदि शरीर स्थित इन्द्रियों पर राजा अधिकार करके उन्हें अपने वश में नहीं कर सकता, तो उसे निश्चय ही हार का मुख देखना होगा। यदि वह अपने लक्ष्य की ओर आगे नहीं बढ़ता, यदि उन पर विशेष ध्यान नहीं देता, तो उसकी सेना अथवा युद्ध के वे अन्य उपकरण जो उसके पास उसकी निजी सम्पत्ति या रक्षक के रुप में होते हैं, वे ही उसके विनाश का कारण बन जाते हैं। कभी ऐसी भी परिस्थिति आ सकती है कि जब अकस्मात ही देश में युद्धकालीन स्थिति उत्पन्न हो जाय और सभी उपकरण–सेना तथा अन्य सभी वस्तुएँ –राजा के शत्रु के रुप में परिवर्तित हो जायं।

54

इसीलिए इन सभी बातों पर राजा को विधिवत ध्यान देते रहना चाहिए। यदि किसी युद्ध के अच्छे परिणाम निकलने की संभावना न हो, तो कभी भी युद्ध नहीं करना चाहिए। सदैव ही इस भीषण परिस्थिति को बचाने का पूर्ण प्रयास करना चाहिये। यहाँ तक कि यदि युद्ध के परिणामस्वरुप किसी बहुत बड़े लाभ की भी संभावना हो, तो भी युद्ध से बचना चाहिए। कभी–कभी युद्ध से बहुत अधिक अच्छे परिणाम भी देश के लिए निकल सकते हैं। ऐसा होने पर तथा युद्ध करने के लिए विवश होने पर भी युद्ध करना किसी परिस्थिति में उचित नहीं है। युद्ध केवल संहार एवं हानि का ही प्रतीक है।

55

ऐसा युद्ध भी कभी करने की आवश्यकता नहीं है, जिसके दुष्परिणामों का स्मरण सदैव ही किया जाता रहे। इसकी अपेक्षा राजा को संबंधों पर भी विशेष ध्यान देना चाहिए। यही संबंध मूल्यवान होते हैं। युद्ध कभी भी इस जगत में अच्छाइयों को उत्पन्न नहीं कर सकता है। युद्ध एक बहुत ही बुरी एवं भयानक परिस्थिति है। जब युद्ध होकर समाप्त हो जाता है, उसके बाद भी उसके परिणाम भविष्य के लिए बहुत ही भयंकर होते हैं। इसीलिए

युद्ध सभी बुंराइयों का मूल है। उससे विश्व में अनेक आपत्तियाँ एवं कठिनाइयाँ उत्पन्न हो जाती हैं।

56

वास्तव में ऐसे कई अवसर आते है, जिनकी सदैव ही प्रतीक्षा की जाती है। यथा संभव ऐसा प्रयास करना चाहिए, जिससे अच्छे से अच्छे परिणाम निकल सकें। अतएव सदैव ही सन्मार्ग का अनुसरण करना चाहिए।

57

जो वीर युद्ध में विजय के अभिलाषी होते हैं, उनके लिए सबसे आवश्यक मार्ग यह है कि वे अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को केन्द्रित कर उस पर पूर्ण विचार करें। उसके विषय में बहुत पहले से ही सभी साधनों की खोज करनी चाहिये। इसके साथ ही सभी राजनीतिक गतिविधियों का भी पूरा परीक्षण करना चाहिये। यह कार्य शत्रु के साथ एक कूटनीतिज्ञ के रुप में किया जाना चाहिये। इन सभी बातों पर पूरी तरह विचार कर परिस्थिति का विवेचन करना चाहिए। इस प्रकार जो भी व्यक्ति अपनी सुरक्षा को दृढ़ करना चाहता है, उसे पहले से ही उसकी पूरी व्यवस्था करने के लिए तत्पर रहना चाहिए।

58

यह सब कार्य उसी चतुर व्यक्ति के हैं, जो अपने लक्ष्य को भली भाँति समझता है। इस विवेकपूर्ण व्यवहार का परिणाम यह होता है कि उसके शत्रुओं की संख्या भी बहुत नहीं बढ़ पाती। इसकी अपेक्षा ऐसा प्रयास करना चाहिए कि आपके शत्रु का मित्र भी आपके शत्रु के विरुद्ध हो जाय और उससे घृणा करने लगे। शत्रु का मित्र भी जब उससे घृणा करने लगेगा, तो निश्चय ही वह उस व्यक्ति के निकट जाकर मित्रता करेगा, जिसने शत्रु के मित्र की मित्रता को समाप्त कर उन दोनों को अलग–अलग किया होगा। यही कूटनीति की सफलता भी है, जिसका प्रयोग प्रत्येक राजा को सफलतापूर्वक करना चाहिये।

59

यदि शत्रु का मित्र उसकी सहायता से अपने को अलग कर ले और अपना दूसरा मार्ग खोज ले तो इस स्थिति का पता लगने पर शत्रु को चाहिए कि वह फिर अपने मित्र का स्वागत सम्मान करे, उसको अपने पक्ष में करने का प्रयास करे। ऐसे साधन अपने मित्र के लिए जुटाए, जिससे वह प्रसन्न हो सके। इसके साथ ही उसकी सब अभिलाषाओं की पूर्ति भी करने का वह प्रयत्न करे। यही उसके प्रेम का प्रतीक होगा। वास्तविकता को समझा जाय। शत्रु के चरित्र के विषय में पूरी तरह जानकारी प्राप्त की जानी चाहिए। ऐसा करने पर ही उसको सरलता से पराजित किया जा सकता है।

60

जहाँ तक शत्रु के संबंधियों एवं कुल-वर्ग के लोगों का प्रश्न है, उनसे ऐसी राजनीति के दाँव-पेंच चलाने चाहिए, जिससे उनमें आपस का मेल न रह सके। उनके पारस्परिक संघर्ष प्रारम्भ हो जांय। यहाँ तक कि वे सभी आपस में ही लड़ने लगें। यदि उनमें आपस में फूट होगी तथा परस्पर संघर्ष होगा अर्थात किसी भी प्रकार की कोई सहमति नहीं होगी तो निश्चय ही उनमें से कोई न कोई अवश्य बाहरी लोगों से सहायता के लिए प्रार्थना करेगा। इस परिस्थिति से लाभ उठाकर ऐसे व्यक्ति की सहायता की जानी चाहिए। इससे उसका संघर्ष प्रखरतर हो सकेगा तथा यह संघर्ष शत्रु को शक्तिहीन कर सकेगा।

61

जब शत्रु के कुलवर्ग के लोगों में पारस्परिक संघर्ष प्रारम्भ हो जायेगा, तो वे हानि के शिकार हो जायेंगे। उस परिस्थिति में युद्ध प्रारम्भ कर अपने लक्ष्य की सिद्धि का उचित अवसर प्राप्त हो सकेगा। अतएव शीघ्र ही युद्ध प्रारम्भ कर देना चाहिए। शत्रु पर बहुत शीघ्रता से आक्रमण का क्रम प्रारम्भ नहीं करना चाहिए। जो आपके अपने मित्र हैं, उनके प्रति प्रेम को प्रदर्शित कर तथा सुन्दर व्यवहार कर उन्हें अपना मित्र और सहायक बनाये रखना चाहिए।

62

शत्रु की शक्ति एवं उसके प्रति अन्य लोगों की स्वामिभक्ति के विषय में सबसे पहले जानकारी प्राप्त करनी चाहिए। इससे यह स्पष्ट हो सके कि शत्रु के साथ रहकर भी उसके अन्य विपक्षी लोग संभवतः उससे निरन्तर ही संघर्ष करते रहेंगे। इसका लाभ उठाना चाहिए। इसके पहले कि आप उनकी सहायता प्राप्त कर सकें, कहीं ऐसा न हो कि शत्रु के विपक्षी लोग किसी अन्य व्यक्ति से सहायता के लिए प्रार्थना करने दौड़ पड़े। ऐसा करना चाहिए कि वे आपसे ही प्रार्थना करे। शत्रु की शक्ति के संबंध में सर्वप्रथम इन बातों को ही देखना चाहिए। उनका विधिवत परीक्षण भी करना चाहिए।

63

जब शत्रु के विषय में तथा उसकी शक्ति के सभी क्षेत्रों के विषय में पूरी जानकारी प्राप्त हो जाये तथा यह भी पता लग जाय कि उसके दुर्ग अथवा निवास स्थान अभेद्य नहीं है और युद्ध में कोई विशेष बाधा भी उत्पन्न नहीं होनी है, तब आपको भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्रों से अपनी सेना को सुसज्जित करना चाहिए। युद्ध की सामग्री एवं रथ आदि वाहनों की पूरी व्यवस्था करनी चाहिए। यदि इन सब बातों पर विशेष ध्यान दिया जायेगा तो युद्ध-क्षेत्र में शत्रु की पराजय तथा आपकी विजय निश्चित ही मानी जायगी।

64

ऊपर युद्ध की तैयारी एवं राजनीति के विषय में वर्णन किया गया है। उस स्तर पर यदि कोई राजा नहीं आ पाता है और वह शक्ति तथा साधन जुटाने में भी असमर्थ रहता है तथा उसमें दूसरे राजा एवं शत्रु पर आक्रमण करने की क्षमता भी नहीं है, तो राजा को अपने राज्य में ही अपनी सुरक्षा पर पूरा ध्यान देते हुए अपनी राजधानी में रहना चाहिए। उसका निवासस्थान राजमहल, दुर्ग तथा अन्य कोई सुरक्षित स्थान ही होना चाहिए। उसे दुर्ग, सैनिक तथा भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्रों की व्यवस्था कर किसी न किसी प्रकार अपनी सुरक्षा के लिए सदैव ही उद्यत रहना चाहिए।

65

यदि किसी राजा पर उसका कोई शत्रु आक्रमण कर दे, तो उसकी बाधाएँ दूर करने के लिए हर तरह से सहायता अवश्य ही करनी चाहिए। दुर्ग की ऊंची-ऊंची दीवारें, पर्वत श्रेणी, गहरी नदियाँ, घाटियाँ तथा दलदल वाला प्रदेश अथवा असंख्य प्रजाजन ही उस समय शत्रु के आक्रमण के लिए सबसे बड़ी बाधा उपस्थित करते हैं। वे ही सबसे प्रधान प्रहरी भी बन सकते हैं।

66

यदि शत्रु वास्तव में बहुत ही शक्तिशाली है। युद्ध में भी उसकी सहायता करने वाले उसके बहुत से मित्र हैं। उसके पास एक विशाल सेना भी है तो राजा को अपने घनिष्ट मित्रों से तुरन्त ही सहायता लेनी चाहिए। इससे परस्पर प्रेम-संबंध और भी अधिक दृढ़ हो सकेगा। अत्यन्त शक्तिशाली मित्र की सहायता से ही भीषण शत्रु पर विजय प्राप्त कर अपनी सुरक्षा की जा सकती है।

67

वास्तव में किसी के लिए भी अपने लक्ष्य की प्राप्ति हेतु उपरोक्त कही गयी सभी बातें उचित ही हैं, किसी चतुर शासक को इन सभी का पालन करते हुए अपनी शक्ति का संघटन करना चाहिए। तभी युद्ध में विजय-श्री प्राप्त की जा सकती है। इसके लिए सभी संभव प्रयास करने चाहिए। आवश्यक युद्ध सामग्री शीघ्र ही जुटानी चाहिए। अपने मित्रों को भी प्रसन्न रखना चाहिए। प्रजाजन का कल्याण कर उनको भी सदैव अपने पक्ष में रखना चाहिए। लक्ष्य की सिद्धि के लिए इन बातों को आधारभूत सिद्धान्तों के रुप में स्वीकार करना चाहिए।

68

यदि कोई राजा अपनी प्रजा को अपने सुन्दर व्यवहार एवं प्रेम से प्रसन्न कर अपने निकट लाने में समर्थ नहीं है, उसके सभी कुल वर्ग के लोग एवं मित्र आदि भी उसकी ओर कोई विशेष ध्यान नहीं देते हैं और उसकी उपेक्षा करते हैं तो निश्चय ही राजा के व्यवहार में दोष मानना चाहिए। उस राजा के पास उसके सम्मान अथवा उसके महत्व को स्वीकार करने के लिए यदि कोई नहीं आता तो इसका स्पष्ट कारण यही हो सकता है कि सब लोग उस राजा के व्यवहार से असन्तुष्ट है।

69

इन परिस्थितियों में सोचना चाहिए कि अपने संघर्ष के लिए उनसे क्या-क्या आशाएँ की जा सकती हैं। यह विचार भी करना चाहिए कि कौन से वे कारण हैं जिनसे आपको यह दृढ़ विश्वास हो गया है कि आप युद्ध में नहीं हारेंगे और विजय श्री आपके ही हाथ लगेगी। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि वे सभी वस्तुएँ एवं शक्तियाँ, जो आपके पास नहीं हैं, राम के पास उनकी कुशलता के कारण आकर एकत्रित हो गई हैं।

70

यदि राम की शक्ति और शौर्य पर पूरा विचार किया जाय, तो स्पष्ट हो जायेगा कि वे एक महान शक्तिशाली अपराजेय योद्धा हैं। आपकी शक्ति उनकी तुलना में बहुत ही कम है। उनकी शक्ति की सीमा नहीं है। उदाहरण के लिए वानरराज बालि को ही देख लीजिए। क्या वह महान शक्तिशाली योद्धा नहीं था ? राम ने उसका वध बड़ी सरलता से एक ही बाण से कर डाला।

71

वानरराज श्री सुग्रीव को राम ने बाद में राजा बनाया। सुग्रीव भी एक प्रकार से आपका मित्र ही कहा जा सकता है। इनकी अपेक्षा कोई अन्य इतना निकट आपका मित्र नहीं हो सकता है। सुग्रीव ने राम के प्रति अपनी अभूतपूर्व स्वामिभक्ति का परिचय दिया है। इस प्रकार आपका एक प्रधान मित्र भी आपसे दूर चला गया है। आपकी सुरक्षा भी उचित ढंग से अब नहीं हो पायेगी।

72

इस प्रकार आपके सम्मान को बहुत बड़ा धक्का लगा है। आपका सम्मान अब इस जगत में पूर्णरुपेण समाप्त हो गया है। आपके अनेक शक्तिशाली राक्षस योद्धा भी युद्ध में काम आए हैं। अशोक वाटिका पूरी तरह से उजड़ गयी है, यहाँ तक कि राजकुमार अक्षय का वध भी हो चुका है। लंकापुरी जल कर भस्मसात हो गयी है। जो कुछ सुन्दर था, अब नष्ट-भ्रष्ट हो गया है। इस प्रकार अग्नि की ज्वाला में सब कुछ जलकर

राख हो गया है।

73

इस परिस्थिति में आपको अपने शत्रु से कभी भी जीतने की आशा नहीं करनी चाहिए। शत्रु अपने क्षेत्र से बहुत दूर तक चलकर अब तुम्हारे पास आ गया है। आप अपने क्षेत्र में निकट ही है, अतएव आपकी हानि की संभावनाऍं भी शत्रु की अपेक्षा कहीं अधिक हैं। शत्रु में आपके ऊपर आक्रमण करने का अपार उत्साह है। आपके ऊपर आक्रमण करने की पूरी योजना भी बन चुकी है। यद्यपि शत्रु द्वार पर खड़ा है, फिर भी आप में आक्रमण करने का उत्साह नहीं दीख रहा है। शक्तिहीन राजा आक्रमण का उचित उत्तर कभी भी नहीं दे सकता है।

74

आपके कुलवर्ग के सभी लोग मूर्ख हैं। उनके विचार तथा उनकी योजनाएं भी भ्रमात्मक हैं। उनके सभी विचार वास्तविकताओं एवं सत्य से वहुत दूर हैं। वे परस्पर विरोधी भी हैं। वे अपने लक्ष्य तक पूरी खोज एवं सही विचार कर कभी नहीं पहुंच सकते। उनका चरित्र धृष्ट एवं व्यवहार नीचतापूर्ण है। उन्होंने संसार की गतिविधियों पर कभी भी पूरी तरह विचार नहीं किया। केवल भ्रमात्मक धारणाऍं ही वे बनाते रहे हैं।

75

वानरराज वालि आपका मित्र था। वह अब स्वर्गलोक को जा चुका है। सुग्रीव अभी तक जीवित है। वह श्री राम का पूरा भक्तं हो गया है। सुग्रीव अभी तक जीवित है। वह श्री राम का पूरा भक्त हो गया है। उसने राम से अपना संबंध दृढ़ कर लिया है। आजकल आपके असंख्य शत्रु हैं। वे सभी अपने लक्ष्य की सिद्धि में पूर्ण कुशल हैं, इसीलिए वे सभी श्रीराम के प्रति स्वामिभक्ति दिखाना अपना कर्तव्य समझते हैं।

76

इन परिस्थितियों में आपको मेरा यह सुझाव है कि आप शीघ्र ही राम से मित्रता स्थापित कर लीजिए। यह कार्य असंभव नहीं वरन पूरी तरह संभव है। आप लोग एक दूसरे से क्रुद्ध हैं। आप दोनों ने परस्पर कष्ट झेले हैं। राम को अपार दुःख इसलिए झेलना पड़ा है कि उनकी पत्नी का आप अपहरण कर लाए हैं। आपको यह दुःख है कि उन्होंने आपके सम्पूर्ण सैन्य दल का विनाश कर दिया है।

77

फौलाद एवं लोहा दोनों ही समान रुप से शक्तिशाली एवं कठोर होते हैं, यदि उन दोनों को मिला दिया जाय तो वे एक नयी धातु के रुप में परिवर्तित होकर कोमल भी हो जाते हैं। उसी प्रकार राम से आपकी मित्रता का भी स्वरुप होगा। दोनों पक्षों ने समान रुप से ही कष्ट झेले हैं। यदि आप दोनों एक दूसरे के मित्र बन सकें तो निश्चय ही आप दोनों व्यक्तियों में अथाह प्रेम होने की भी संभावना हैं।

78

वास्तंव में श्रीराम के क्रोध की तुलना बड़ी सरलता से अग्नि की उष्णता से की जा सकती है। अग्नि में ज्वाला उठती है तो वह बड़ी भीषण होती है। वानर सेना उस अग्नि को प्रज्वलित करने के लिए तीव्र वायु के वेग के समान है। आपकी शान्ति और आपका मौन जल के समान है। इसका परिणाम यह हो रहा है कि क्रुद्ध व्यक्ति के हृदय में क्रोध की अग्नि पूरे रुप में प्रज्वलित नहीं हो पा रही है।

79

यदि आप श्रीराम के साथ युद्ध न करने का निश्चय कर लें तो यह परिस्थिति आपके लिए ही बहुत हितकर एवं सौभाग्यप्रद होगी। आपको इससे अत्यन्त लाभ भी होगा। ऐसी ही मेरी धारणा है। आप बहुत शक्तिशाली हैं। इसीलिए आप बड़ी सरलता एवं कुशलता से अपने लक्ष्य की सिद्धि प्राप्त कर सकते हैं। इस प्रकार के आचरण से संपूर्ण जगत की आपको विशेष सहानुभूति भी प्राप्त हो सकेगी।

80

निश्चय ही आपके पास एक विशाल शक्तिशाली सेना है। सैन्य सामग्री भी बहुत ही अच्छी एवं पूर्णरुपेण विश्वसनीय है। यह तथ्य आपके लिए और भी अधिक प्रेरणापूर्ण होना चाहिए। इससे तो आप राम के पास जाकर एक शक्तिशाली की भाँति उचित समझौता भी कर सकते हैं। इसीलिए आपको राम से संघर्ष की बात कभी भी नहीं सोचनी चाहिए। वास्तविकता तो यह है कि यदि युद्ध में राम को पराजित होना पड़ा, तो आपको भी युद्ध की विजय-श्री के परिणामस्वरुप किसी प्रकार का कोई विशेष् लाभ मिलने की संभावान नहीं है। यदि आप युद्ध में पराजित हो जाते हैं तो आपकी सैन्य शक्ति एवं सामग्री पूर्ण रुप से नष्ट-भ्रष्ट हो जायेगी। इस प्रकार आपको अपार क्षति भी उठानी पड़ेगी।

81

यदि आप युद्ध के लिए प्रस्तुत होंगे, तो आपको अपनी सम्पूर्ण शक्तियाँ भी जुटानी पड़ेंगी। युद्ध की तैयारी में अत्यधिक प्रयास भी करना पड़ेगा, इसीलिए मेरा आपसे अनुरोध है कि किसी भी परिस्थिति में

युद्ध आपके लिए श्रेयस्कर नहीं होगा। सभी लोगों के ह्रदय में आने वाले युद्ध की आशंका एवं डर भी रहेगा। उनके जीवन की प्रसन्नता एवं आनंद सदैव के लिए ही समाप्त हो जायेगा। इस प्रकार सम्पूर्ण आपत्तियाँ एक वार में ही आकर सब पर टूट पड़ेंगी।

82

अतएव आपको इन वातों पर दृष्टि डालनी चाहिए। मान लें कि आप युद्ध की तैयारी में पूरी तरह लगे हुए हैं, तो भी यह स्पष्ट ही है कि युद्ध में अपार व्यय भी होता है। इतना अधिक व्यय सह पाना निश्चय ही आपके गुण गौरव की गरिमा भी समाप्त हो जायेगी। जिस कार्य का परिणाम उत्तम होता है, उसी के परिणाम स्वरुप जीवन में आनंद एवं सुख प्राप्त होता है। अतएव ऐसा कार्य प्रयासपूर्वक करना चाहिए, जिसका अन्त उत्तम एवं परिणाम सुखकर हो। इसीलिए मैं आपसे आग्रह करता हूं कि आपको युद्ध में संलग्न होने की वजाय अपने सुकार्य की सिद्धि में लगना चाहिए।

83

यदि आपने युद्ध करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है तो यह भी स्पष्ट ही है कि सबसे अधिक हानि आपको ही उठानी पड़ेगी। आप यह भी पूरी तरह जान लीजिए कि इस युद्ध में किसी लाभ की संभावना नहीं हो सकती है, युद्ध की समाप्ति के बाद अन्त में जो कुछ भी आपको प्राप्त होगा वि नहीं के वराबर होगा। इसीलिए आपके हित में सदैव ही यह उचित होगा कि आप राम का आधिपत्य स्वीकार कर उनसे समझौता करने का प्रयास कीजिए।

84

इस भीषण युद्ध में निश्चय ही आपके पुत्र, मित्र मारे जायेंगे एवं सेना का सर्व–संहार हो जायेगा। श्री राम से आपके युद्ध करने का केवल यही परिणाम संभव हो सकता है। इसकी अपेक्षा आपको अन्य किसी प्रकार की आशा कदापि नहीं करनी चाहिए। आप सुग्रीव को अपना मित्र कहते हैं, परन्तु वह भी श्रीराम की शरण में जा चुके हैं। अब भविष्य में कभी भी यह संभावना नहीं की जा सकती कि वानर राज सुग्रीव किसी भी परिस्थिति में श्रीराम का साथ छोड़कर आपके पास सहायता के लिए एक मित्र के रुप में आयेंगे।

85

यही सब परिस्थितियाँ ऐसी हैं, जिनके आधार पर आपको श्रीराम की शरण में जाकर उनका आधिपत्य स्वीकार करना चाहिए। मानवीयधरातल पर ही आपको राम से सुन्दर एवं अच्छे व्यवहार का पूरा परिचय देना

चाहिए। यह सभी व्यवहार पवित्रजनों के चरित्र की आधारशिलाएँ हैं। सज्जन पुरुष के प्रति यदि कोई भी सदव्यवहार करता है, तो उसके उत्तर के रुप में वह भी सदैव सद्व्यवहार करके अपने उत्तम गुणों और अच्छे चरित्र का ही परिचय देता है। अतएव अच्छा व्यवहार सज्जनों के प्रति सदैव ही श्रेयस्कर है।

86

आप यह भी जान लें के राम के भक्त वानर योद्धाओं के ह्रदय भी बहुत ही दृढ़ हैं। राम की सेवा के लिए वे प्राणपण से उद्यत रहते हैं। वे भी किसी भी परिस्थिति में आपकी सहायता करने के लिए नहीं आ सकते हैं। वे आपकी ओर कभी ध्यान भी नहीं दे सकते हैं। उनको श्री राम के प्रति अपार प्रेम है। उनकी सहमति से ही राम इस सीमा तक आये हैं। वे युद्ध क्षेत्र में राम के लिए सर्वस्व निछावर करने तथा प्राणोत्सर्ग करने के लिए भी उद्यत हैं।

87

मणि–माणिक, सुवर्ण अथवा सुन्दर वस्त्र भी यदि आपकी ओर से वानर सेना को भेंट किये जायं, फिर भी वे इन वस्तुओं को स्वीकार नहीं करेंगे। जो वस्तुएँ साधारण मानवों के लिए बहुत मूल्यवान हैं, वानरों की दृष्टि में उन वस्तुओं का कोई मूल्य नहीं है। उनको तो केवल भाँति–भाँति के फलों की ही अभिलाषा रहती है। इसकी अपेक्षा वे इससे अधिक और कुछ नहीं चाहते।

88

बालि के पुत्र अंगद को आप अपनी ओर मिला सकते हैं। इस कार्य के लिए अंगद को अपने पक्ष में लाने के निमित्त आप प्रयास भी कर सकते हैं। यहाँ तक कि आप अंगद को अपने यहाँ आने का निमंत्रण भी दे सकते हैं। अंगद के पास मणि माणिक एवं सुवर्ण आदि भेंट के रुप में भी आप भेज सकते हैं। यद्यपि आप अपनी ओर से सभी कुछ प्रयास कर सकते हैं, परन्तु मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि अंगद आपके पास किसी भी प्रलोभन से कभी नहीं आयेंगे। अंगद एक बहुत ही पवित्र विचारों वाले चरित्रवान योद्धा हैं। उनका ह्रदय द्रढ़ और बुद्धि स्थिर है। वे पूर्ण विवेकशील भी हैं, अतएव आप कभी भी उन्हें किसी प्रकार का प्रलोभन दे कर अपने पक्ष में नहीं कर पायेंगे।

89

इस सम्पूर्ण विश्व में मुझे तो कोई ऐसा व्यक्ति नहीं दिखायी पड़ रहा है, जो युद्ध के अवसर पर आप की सहायता के लिए आपकी प्रार्थना पर आ सके। मेरे अनुमान से ऐसा कोई नहीं दीखता जो आपकी सहातया

करने के योग्य हो। राम से बढ़कर पराक्रमी योद्धा इस विश्व में दूसरा नहीं है। उनके समकक्ष आप किसी भी अन्य योद्धा को प्रस्तुत नहीं कर सकते हैं। उनके समान रणकुशल और शूर–वीर कोई भी अन्य योद्धा आपकी सहायता नहीं कर सकता है।

90

यद्यपि सभी देवता इस योग्य हैं कि युद्ध में सहायता करने के लिए आप उनसे प्रार्थना कर सकते हैं। अभी निकट भूतकाल में ही आपका व्यवहार अन्य लोगों के प्रति बहुत ही घृणित था। आपके ह्रदय में किसी के प्रति दयाभाव कभी भी नहीं था। आपके ह्रदय में किसी के प्रति कोई प्रेम भावना भी नहीं थी। आपने तो सम्पूर्ण संसार से शत्रुता ले ली है। अब आप किससे तथा कहाँ से सहायता की अपेक्षा कर सकते हैं ? क्या कोई ऐसा व्यक्ति है जो आपसे प्रेम करता हो तथा आपकी सहायता कर सकने को उद्यत हो ?

91

यदि आप ईश्वर की शरण में जाकर उनसे सहायता की अपेक्षा करते हैं तथा यह आशा करते हैं कि वे आपकी प्रार्थना अवश्य ही स्वीकार करेंगे,तो जान लें कि ईश्वर भी अभिमानी एवं नीच व्यक्तियों के प्रति प्रेमभाव नहीं रखते। ईश्वर की कृपा के पात्र भी वे ही व्यक्ति हो सकते हैं,जो पवित्र विचारों वाले और सद्‌बुद्धि संपन्न हैं। ईश्वर भी ऐसे ही सज्जनों को प्रसन्न करने का प्रयास करते हैं। यह सत्य ही है कि ईश्वर सभी प्रकार के नीचों से घृणा करते हैं अर्थात वे भी सभी से प्रेम नहीं करते। केवल पवित्र विचार वाले सज्जनों के प्रति ही वे विशेष आकर्षण रखते हैं।

92

यह लंकापुरी बहुत ही सुरक्षित एवं शक्तिशाली नगरी है। यहाँ पर किसी का भी पहुंचना बहुत ही दुरुह है। इसके चारों ओर बहुत गहरा समुद्र है। पर्वतश्रेणियां, ऊंची–ऊंची दीवारों एवं घेरों की भाँति इसकी रक्षा करती हैं। यद्यपि लंका इतनी सुरक्षित है,फिर भी अब यह सिद्ध हो चुका है कि इस पर आक्रमण करने का भी कोई स्थान संभव है। अब इस क्षेत्र के वातावरण में और यहां के लोगों की बुद्धि में युद्ध की ही बात रम रही है। अतएव इस परिस्थिति में लंका नगरी अभेद्य नहीं है।

93

यद्यपि यह सत्य है कि आपके पास शस्त्र अस्त्रों से पूरी तरह सुसज्जित सेना,सैन्य सामग्री तथा एक विशाल सैन्य शक्ति है। आपके पास शस्त्र ही नहीं वरन् अनेक अच्छे वाहन भी हैं। यह भी स्पष्ट है कि राम की

वानर सेना के पास न तो अस्त्र–शस्त्र ही हैं और न युद्व के प्रयोग में आने वाले वाहन ही हैं। यद्यपि उनके पास अस्त्र–शस्त्र नहीं हैं, फिर भी बिना शस्त्रों के वे आपसे किसी प्रकार कम नहीं हैं। इसलिए इस रुप में उनकी शक्ति किसी भी प्रकार से आपसे कम नहीं मानी जा सकती।

94

जो भी वस्तुऍं उनके पास उपलब्ध हैं, युद्व प्रारम्भ हुआ तो वे उन सभी वस्तुओं का प्रयोग अस्त्र–शस्त्रों की भाँति निश्चय ही करेंगे। बड़े–बड़े विशालकाय वृक्ष तथा पर्वतमालाओं के बड़े–बड़े पत्थर प्रधान रुप से उनके अस्त्र–शस्त्र हो सकेंगे। वे बड़ी सफलता से उनका प्रयोग करेंगे। यदि पर्वत श्रेणी,बड़े–बड़े शिलाखंड एवं पत्थर उनको प्राप्त न हो सके, तो उनके विशाल नख तथा मुखों के दन्त ही उनके अस्त्र–शस्त्र हो जायेंगे।

95

इसीलिए राम की वानर सेना की शक्ति को कम समझने का प्रश्न ही नहीं उठता। उनकी सेना का बल कम है ऐसी, संभावना कभी नहीं करनी चाहिए। इस दृष्टि से भी स्पष्ट ही है कि आपकी सेना उनके समक्ष बहुत शक्तिशाली सिद्व नहीं हो सकती है। इसीलिए मेल की अपेक्षा अन्य कोई मार्ग शेष नहीं है। इन बातों को ध्यान में रखकर हम सबको युद्व की परिस्थिति उत्पन्न नहीं होने देनी चाहिए वरन् श्री राम के समक्ष जाकर उनका आधिपत्य स्वीकार करते हुए उनसे समझौता कर लेना चाहिए। यही उचित एवं विवेकपूर्ण मार्ग होगा।

96

विभीषण ने यह भी कहा कि आपका यह दास अब तक मौन होकर सभी बातें चुपचाप सुनता रहा है। अब आपको सभी बातों के प्रति सचेत करना ही मैं अपना कर्तव्य समझता हूं। वह इसलिए नहीं कि मैं कोई बहुत अधिक विवेकशील व्यक्ति हूं वरन इसलिए कि मैं शान्ति और सुख की कामना करता हूं। अभी तक जो कुछ हो रहा है, उसके फलस्वरुप मैं सुखी जीवन का पूरा आनंद नहीं भोग रहा हूं। यही कारण है कि अज्ञानी व्यक्त्रियों को मैंने वास्तविकतां से अवगत कराना चाहा है और उन्हें सावधान एवं सचेत किया है।

97

इस प्रकार स्पष्ट शब्दों में विभीषण ने रावण को सावधान करने की पूरी चेष्टा की। उन्होंने यह भी आग्रह किया कि राम से समझौता करना ही उचित होगा। इससे दशमुख रावण के हृदय में अत्यन्त क्रोध उत्पन्न हो गया। उसने विभीषण को कोई उत्तर नहीं दिया। केवल उसके मन में विभीषण के प्रति घृणा उत्पन्न हो गयी।

अध्याय – 14

1

उस समय दशमुख को अर्ध मौन धारण करना पड़ा। विभीषण की बातों का समर्थन दशमुख के एक बड़े भाई सुमाली ने किया। वे रावण की माँ की बड़ी संन्तान थे। वे बड़े ही विवेकशील एवं बुद्विमान व्यक्ति थे। जीवन की व्यवहारिकता का उनको पूरा ज्ञान था। उनके हृदय में सभी के प्रति प्रेम भावना थी; अतएव रावण को सावधान करते हुए उन्होंने भी बडे सम्मान से रावण से इस प्रकार निवेदन किया

2

हे रावण ! तुम्हारे छोटे भाई विभीषण ने तुमसे बड़े ही विचार एवं विवेकपूर्ण वचन कहे हैं। उनके विचार पूरी तरह ध्यांन देने योग्य हैं। अतएव अब बहुत अधिक भ्रम में पड़ने की आवश्यकता नहीं है। तुम शीघ्र ही विभीषण के प्रस्तावों का अनुसरण करो। इस विवेकपूर्ण राय को मानने के लिए तनिक भी लज्जा का अनुभव मत करो। यदि निस्संकोच तुम विभीषण की उचित राय को मान लेते हो, तो तुम्हारी पूर्ण सुरक्षा संभव है। यदि तुम इन प्रस्तावों के प्रति उदासीनता का दृष्टिकोण अपनाते हो तो यह निश्चित है कि लंका का पूर्ण विनाश हो जायेगा।

3

यही कारण है कि तुम्हें अपने छोटे भाई विभीषण के शब्दों पर उचित रुप से ध्यान देते हुए उन पर व्यवहार करना चाहिए। राम देव केवल कहने मात्र के लिए ही मानव हैं,उनकी विशेषताएं एवं शक्तियाँ मानवेतर हैं। यद्यपि धनुषबाण ही उनके अस्त्र-शस्त्र है, इसकी अपेक्षा उनके पास कोई अन्य युद्व सामग्री तथा उपकरण भी नहीं है तथापि वे महाशक्तिशाली हैं। इसीलिए तो उन्होंने पहले ही बड़ी सरलता से तुम्हारी सेना का संहार कर डाला। इस परिस्थिति से तुम्हें पूरी तरह उनके मानवेतर होने की बात स्पष्ट हो जानी चाहिए।

4

मेरा यह भी अनुमान है कि उन्होंने किसी छल-कपट अथवा जादूगरी से ऐसा नहीं किया। जहाँ तक आकाश के युद्व का प्रश्न है, निश्चय ही उसमें वे बहुत निपुण नहीं हैं अतएव इस प्रकार के साधन एवं ऐसी शक्तियां भी राजपुत्र राम के पास नहीं हैं। क्या वास्तव में उनके पास इतनी शक्ति है कि उन्होंने तुम्हारी राक्षसी सेना का पूर्ण रुपेण संहार कर डाला है ? यदि नहीं,तो निश्चय ही वे मानवेतर महापुरुष हैं और तुम्हें उनसे युद्व नहीं करना चाहिए।

5

राम से युद्ध होने पर तुम्हारे लिए एक विशेष भय एवं आशंका का कारण और भी प्रतीत होता है वह यह कि उनके प्रत्येक कार्य में देवताओं की विवेकपूर्ण राय भी अवश्य ही उनकी सहायता करेगी। ऋषि-मुनि भी उनके पक्ष को दृढ़ करते हुए उन्हें उचित सलाह देंगे। इस प्रकार सुर,नर, मुनि सभी अपनी विवेकपूर्ण राय से राम की सहायता करेंगे,जिससे राम की शक्ति और अधिक बढ़ जायेगी। इन सबके आधार पर वे लंकापुरी का सर्वनाश करने में पूर्ण सफल हो जायेंगे। कोई भी राक्षस अब जीवित शेष नहीं बच सकेगा।

6

जहाँ तक देवताओं की राजनीति का संबंध है, यह निश्चित है कि उनके द्वारा राजनीति-कुशलता एवं पटुता का व्यवहार होगा। उनकी कूटनीतिक चालें बड़ी ही चतुरतापूर्ण होंगी। राम का अपना भी एक अस्तित्व एवं व्यक्तित्व है। उनकी सेना भी वानर सेना है, जो एक नये प्रकार की सेना कही जा सकती है। इस संसार में अभी तक ऐसी सेना कभी भी नहीं देखी गयी है। यदि आप राम का विरोध करते हुए उनसे युद्ध करेंगे और राम यहाँ पर ससैन्य आयेंगे तो निश्चय ही हम सबकों मृत्यु का वरण करना पड़ेगा। इसीलिये मेरा आपसे अनुरोध है कि आप राम का आधिपत्य स्वीकार कर विनम्रतापूर्वक उनसे समझौता कर लीजिए।

7

प्राचीनकाल से ही बहुत सी विचित्र कथाएँ सुनने में आयी हैं। अनेक घटनाएँ भी ऐसी घटी हैं जो किसी को भी आश्चर्यचकित कर सकती हैं। इनके पारस्परिक संबंधों में बड़ा ही भेद था। इनमें कुछ बातें मृत्यु का कारण भी बनीं। इन घटनाओं में जिसने महान कार्य किये,वह भी कोई महाशक्तिशाली व्यक्ति नहीं था। फिर उसने अपने से अधिक शक्तिशाली योद्धाओं को युद्ध में धराशायी कर दिया। वह व्यक्ति व्रेम था। देवराज इन्द्र का शत्रु व्रेम ही एक ऐसा व्यक्ति था। इन कार्यों से अब वह असाधारण एवं विचित्र व्यक्तित्व का व्यक्ति माना जा सकता है। उसको भी समुद्र-फेन द्वारा ही नष्ट कर इन्द्र ने धराशायी कर दिया था।

8

इन्द्र ने अपने वज्र से उसको मारने का प्रयत्न किया था। उनको अपने अभियान में सफलता प्राप्त नहीं हुई। व्रैम अपने स्थान से टस से मस न हुआ। इन्द्र के सभी अस्त्र-शस्त्र नष्ट हो गये। वे टुकड़े-टुकड़े होकर बिखर गये। जैसे ही इन्द्र उस पर शस्त्र का प्रयोग करते,तुरन्त ही वह शस्त्र नष्ट-भ्रष्ट हो जाता। बाद में इन्द्र ने उसको सागर के मध्य में स्नान करने का आदेश दिया। सागर में स्नान करते ही उसकी मृत्यु हो गयी। उसी समय सागर की एक भीषणं लहर ने उसको डुबो दिया।

9

इसी प्रकार की कथा राजा हिरण्यकश्यप की भी है। ऐसा कोई व्यक्ति इस संसार में नहीं था, जो उससे अधिक शक्तिशाली हो। उसकी शक्ति की तुलना में भी किसी अन्य योद्धा को नहीं रक्खा जा सकता था। उसने अपने प्रत्येक शत्रु का सर्वनाश कर दिया था। उस पर देवताओं का ही अनुग्रह था। इसीलिए उसको अपार शक्ति प्राप्त हो सकी थी। देवताओं ने उसे वरदान दिया था कि मध्याह्न में कभी भी तुम्हारी मृत्यु नहीं हो सकती, रात्रि में भी कभी तुम्हारा वध नहीं हो पायेगा। इस प्रकार देवताओं से उसे यह अपार शक्ति प्राप्त हो गयी थी।

10

देवता अथवा मानव किसी में भी इतनी शक्ति नहीं थी कि उसका वध कर सकता। यक्ष, राक्षस, पिशाच, मनुष्य तथा पशु आदि उसके वध के लिए समर्थ नहीं थे। संसार के सभी अस्त्र-शस्त्र उसके लिए कोई अर्थ नहीं रखते थे। उस पर ये सब कोई प्रभाव नहीं डाल सकते थे। परमेश्वर ने जब उस पर अनुग्रह किया था, तभी उसको वरदान दिया था। उसे तभी तमाम शक्तियां भी उन्होंने प्रदान की थीं।

11

जब उस व्यक्ति को अनुग्रह के रुप में सभी प्रकार की वे शक्तियाँ प्राप्त हो गयीं,जो इस संसार में सबसे महान एवं महत्वपूर्ण थीं,तब उसको मिथ्याभिमान हो गया। उसका व्यवहार मधुपायी की भाँति हो गया। उसकी बुद्धि शक्ति के कारण नितान्त विपरीत हो गयी। उसने अपने अतीत की ओर पीछे मुड़कर कभी भी नहीं देखा। यहां तक कि उसने देवताओं की भी कोई परवाह नहीं की। उसने ऋषियों का भी अपमान किया। उसने सभी को समाप्त करना प्रारम्भ कर दिया। विशेष रुप से मनुष्यों को उसने अपार कष्ट पहुंचाया। इस पृथ्वी पर जो भी उसे दिखायी देता था,उसे नष्ट-भ्रष्ट करने में ही उसको आनंद आता था। इस प्रकार सम्पूर्ण विश्व में उथल-पुथल मचाने की कल्पना उसके हृदय में थी।

12

ऐसी कोई भी शक्ति विश्व में नहीं थी,जो उसको दण्डित कर सके और मर्यादा की सीमाओं में रख सके। सभी सिद्वगण,ऋषिमुनि तथा देवतागण उसके त्रास से दुःखी रहने लगे। वे सभी भगवान विष्णु के पास गये। इस राक्षस के अत्याचारों से बचने के लिए उन्होंने सहायता देने और शरण पाने की प्रार्थना की। विष्णु इस जगत के रक्षक हैं और हर परिस्थिति में संसार की रक्षा करते हैं।

13

उन सभी ने विष्णु से अनुग्रह की प्रार्थना करते हुए उनकी शरण में जाने का निवेदन किया। वे

हिरण्यकश्यप के व्यवहार से अत्यन्त दुःखी थे। उसके बाद विष्णु ने अलौकिक शक्ति का परिचय दिया। उन्होंने जादू की क्रिया प्रारम्भ की। उन्होंने नर का शरीर धारण किया, उनका मुख सिंह के मुख की भाँति था। उनके नख अत्यन्त विशाल एवं तीक्ष्ण थे। वे वज्र की भाँति कठोर थे। यह वास्तव में जादूगरी ही थी। बाद में विष्णु का अवतार नृसिंहावतार के नाम से विश्व में विख्यात हुआ।

14

यह बात सारे विश्व में प्रसिद्ध है कि नृसिंह अवतार ने ही उस नीच दैत्य का वध किया था। वह दैत्य अधम एवं दुष्ट था। भगवान विष्णु ने नृसिंह के रुप में उसके वक्षस्थल को विदीर्ण कर उसका विनाश कर दिया। उसका शरीर भी वज्र की भाँति कठोर था। वह लौह की भाँति शक्तिशाली था। जब नृसिंह अवतार ने उसके शरीर को नखों से विदीर्ण किया,तो उसमें इतनी शक्ति नहीं थी कि उस आघात को वह सहन कर सकता। नृसिंह के नखों के कोने बहुत ही तीक्ष्ण थे, जिससे उन्होंने उस राक्षस को मार डाला।

15

यह भी एक महान विचित्र घटना है जो कथा के रुप में प्राचीन काल से ही चली आ रही है। इन दोनों की तुलना करने पर नृसिंह एवं हिरण्यकश्यप में बहुत अन्तर दिखायी देता है। अन्त में हिरण्यकश्यप की पराजय हुई। उसका वध कर दिया गया। जिसने उसका वध किया,उसके विषय में उस नीच ने कभी कल्पना भी नहीं की थी। यही कारण है कि मैं आपसे पूरी तरह अनुरोध करता हूं कि आप भी शत्रु से पूरी तरह सावधान रहिये। चाहे आप शत्रु को अपनी तुलना में कितना भी साधारण क्यों न समझते हों, पर सावधानी जरुरी है।

16

मेरे विचार से आप अपने दृढ़ संकल्पों एवं विवेक के क्षेत्र में अपने शत्रु से पूर्णतया हारे हुए से हैं। आपको अपने कार्य तथा लक्ष्य का पूरा पता तक नहीं है। उनके प्रति आप पूर्ण उदासीन से दिखायी दे रहे हैं। ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आप अपने विवेक से कोई भी निर्णय करने में असमर्थ हैं। आपको केवल एक ही लक्ष्य स्पष्ट दिखायी दे रहा है,वह है राम से युद्ध करना। यही आपकी दृढ़ धारणा भी है। सद्गुणों और पवित्र विचारों की आप पूर्णरुपेण अवहेलना कर रहे हैं। इसीलिए आप उन पर किसी प्रकार का ध्यान भी नहीं दे पा रहे हैं।

17

आप इस ओर भी बिल्कुल ध्यान नहीं दे रहे हैं कि प्रजाजन को कैसे सुखी बनाया जाता है ? आपका प्रत्येक व्यवहार प्रजा के रंजन के लिए नहीं,वरन् उनको उत्तेजित करने के लिए ही होता है। उनको कष्ट पहुंचाने

में भी आपको कोई संकोच नहीं,इसीलिए वास्तविकता यह है कि जनहित के दृष्टिकोण से आपका कोई कार्य नहीं हो पाता। उच्च विचारों वाले बुद्धिमान व्यक्तियों की शिक्षाओं एवं आदर्शों पर चलकर ही कोई अच्छे मार्ग की ओर बढ़ सकता है। पर खेद का विषय है कि सभी पवित्र विचार वाले महानुभावों से आपकी शत्रुता है। सुजनों का चरित्र एवं सज्जनों के विचारों से आपने कभी प्रेरणा नहीं ली। उनका अनुसरण आपने अपने जीवन में कभी भी नहीं किया है।

18

यही आपकी सबसे बड़ी पराजय है। इसीलिए श्री राम की शरण में जाकर उनकी आधीनता स्वीकार कर लेनी चाहिए। अपने छोटे भाई विभीषण के सभी शब्दों का आपको अक्षरशः पालन करना चाहिए। उनके विचार बड़े उत्तम एवं उचित भी हैं। उन्हीं विचारों एवं कार्यों से आपकी सुरक्षा संभव है। मेरा यही विश्वास है। इसकी अपेक्षा अन्य कोई उचित मार्ग नहीं है। केवल राजपुत्र श्री राम के प्रति स्वामिभक्ति एवं विनम्रता के व्यवहार से ही आप सुरक्षित रह सकते हैं।

19

इस प्रकार रावण के बड़े भाई ने उसे विवेकपूर्ण उचित उपदेश दिया। बड़े दुःख के साथ रावण के समक्ष उन्होंने सभी बातें विनम्र भाव से कहीं, जिसके लिए वे विवश थे। उनके हृदय में रावण के प्रति प्रेम भावना थी। उसी से प्रेरित होकर उन्होंने रावण को उचित उपदेश दिया तथा पूरी तरह सावधान किया। वास्तव में रावण का हृदय अत्यन्त कठोर था। वह महा अभिमानी स्वभाव का राक्षस था। इतनी विवेकपूर्ण बातें सुनने के पश्चात् भी उसके विचारों में कोई परिवर्तन नहीं हुआ। उसने उन उपदेशों की ओर कोई ध्यान नहीं दिया। जिस वास्तविकता के आधार पर उसे सभी पवित्रजनों का अनुकरण करना चाहिए था,उसने उस ओर किंचित भी दृष्टि नहीं डाली। वह मिथ्याभिमान में ही ग्रस्त था।

20

जब रावण के बड़े भाई उसे उपदेश दे रहे थे और अपने विचार प्रकट कर रहे थे, उसी समय कुम्भकर्ण की भी निद्रा भंग हो गयी। उन्होंने उस विचार–विमर्श को बड़े ध्यान से सुनकर उस पर पूरा मनन किया। जब विचारों का आदान–प्रदान चल ही रहा था, वे उठकर खड़े हो गये। यद्यपि अभी उनकी नींद पूरी तरह से टूट नहीं पायी थी। वे अर्द्ध–जागृत अवस्था में थे।

21

वास्तव में जिन विषयों को लेकर तथा जिन लक्ष्यों के विषय में विचार विमर्श किया जा रहा था, उसको वे भली-भाँति समझ गये थे। उसके विषय में जितने भी संकेत दिये गये थे, उसके मूलभूत तत्वों पर कुम्भकर्ण ने पूरी तरह विचार किया। उसने पहले से ही कही गयी विवेकपूर्ण उन बातों पर पूरा ध्यान दिया। उसनें पूरी तरह इन तथ्यों का परीक्षण भी किया था। उसके बाद उसने उन प्रश्नों पर अपना मत देते हुए कहा। गुरु गंभीर गर्जना की भाँति उसके स्वर में एक विशेष गांभीर्य था। अपनी बात पर बल देते हुए उसने कहाः-

22

हे दशमुख ! आप जिन बातों पर विचार कर वार्तालाप कर रहे हैं, वे सभी असत्य पर आधारित हैं। इसीलिए इनका कोई विशेष अर्थ नहीं हैं। वास्तव में आप जिस मार्ग का अनुसरण कर रहे हैं, वह अनुचित है। आप के हृदय में मिथ्याभिमान है, इसीलिए आपके हृदय में इतनी कठोरता है। जिन कुशल एवं चतुर व्यक्तियों ने आपको उचित राय दी है, उन्हीं पर आपने यह आरोप भी लगाया है कि उनके विचार निराधार हैं।

23

विभीषण ज्ञान-विज्ञान के ज्ञाता हैं। उनको इन रहस्यों के विषय में पूरा ज्ञान है। उनके शब्द बहुत ही उचित हैं। अतएव उन पर विचार कर उनका अनुसरण करना आवश्यक है। आपके हृदय में झूठा दर्प है, इसीलिए उनकी उचित बात आपको प्रभावित नहीं करती। आप वास्तविकता का अनुभव करने के प्रति उदासीन दिखायी दे रहे हैं। वास्तव में आपके हित की दृष्टि से विभीषण ने जो सुझाव दिये हैं वे सर्वथा उचित हैं।

24

यदि सूर्य की किरणें अत्यन्त उष्ण हैं, तो भी उनको शीतल करने का प्रयास किया जा सकता है। चन्द्रमा भी शीतलता को त्यागकर उष्णता ग्रहण कर सकता है अर्थात् असम्भाव्य भी सम्भाव्य हो सकता है। इसी प्रकार आप भी उचित शिक्षाओं को ग्रहण करने में समर्थ हैं। पता नहीं, क्या बात है कि आप उचित बातों को ग्रहण करने के लिए आज इतने उदासीन दिखायी दे रहे हैं ?

25

ऐसा प्रतीत होता है कि आपका सम्पूर्ण चरित्र राजाओं की भाँति है। इसीलिए स्वभाव भी राजसी ही है। आप नहीं चाहते कि कोई कभी भी आपको सदुपदेश दे, जब कि विभीषण आपको उपदेश देने के लिए पूरी तरह सक्षम हैं। वे आपकी सभी परिस्थकतियों से पूरी तरह परिचित हैं, इसीलिए उन्होंने सविस्तार आपको सभी बातें स्पष्ट करते हुए समझाया है कि इन परिस्थितियों में आपका क्या कर्तव्य होना चाहिए।

26

सवसे पहले तो जो व्यक्ति राजा का स्वामिभक्त हो, हितैषी सेवक हो, उसी से राजा को परामर्श लेना चाहिए तथा उससे ही पूरी जानकारी लेनी चाहिए। अच्छी तरह पूंछतांछ भी उससे करनी चाहिए ताकि राजा अनुशासन से कार्य कर सके और राजा के सेवक में भी राजा के प्रति अपार प्रेम हो। इससे प्रेरित होकर वह सेवक राजा को सदुपदेश देने का प्रयास करता है। वास्तव में इन सब बातों का लक्ष्य केवल एक ही है और वह यह कि इससे राजा की सुरक्षा होती है। राज्य और राजा की सुरक्षा ही उसका प्रधान उद्देश्य है।

27

मुझे भली भाँति ज्ञात है कि आप सद्‌गुणों से अपनी सुरक्षा की सभी बातों को पूरी तरह जानते हैं। भूतकाल में मैंने आपको कई परिस्थितियों में विवेक से कार्य करते देखा है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि इन परिस्थितियों में भी विभीषण के वचन आपको सम्मान सहित स्वीकार कर लेने चाहिए। वे आपके सदैव ही हित में हैं। अब मुझे ऐसा लग रहा है कि आपको अच्छाई एवं औचित्य का कोई ज्ञान ही नहीं रह गया है, इसीलिए विभीषण के उपदेशों के प्रति आप उदासीन हैं। आपको वे बातें जो आपके हित में हैं, बहुत सुखकर प्रतीत नहीं हो रही हैं। आपको शिक्षा भी दी गयी है, पर उसके उद्देश्य को समझने में भी आप असमर्थ हो रहे हैं।

28

मैं आपके इन व्यवहारों तथा कार्यों को देखकर बहुत ही भयभीत हो रहा हूं। मैं जानता हूं कि आपके विचार अनुचित कार्यों एवं बातों की ओर प्रवृत्त हो रहे हैं। आप अब केवल अपनी क्रूरता का ही परिचय दे रहे हैं तथा अन्य किसी सुझाव पर कोई भी ध्यान नहीं दे रहे हैं। इससे स्पष्ट है कि इन अनुचित बातों एवं व्यवहार के परिणाम भी बहुत ही भयंकर निकलेगें और आपको अपार क्षति उठानी पडेगी। मुझे तो ऐसा लगता है कि अब आपकी मृत्यु आपके बिल्कुल निकट आ गयी है। उसका रोकना अथवा उसे हटाना अब असंभव है।

29

आपके चरित्र के विषय में अब कई बातें बहुत प्रसिद्ध हो चुकी हैं। लोग स्थान स्थान पर आपकी नीचता की पूरी निन्दा करते हैं। आपने सदैव ही दूसरों को कष्ट देकर अपनी आकांक्षाओं एवं अभिलाषाओं की पूर्ति करने का प्रयास किया है। आप कभी किसी से भय की आशंका नहीं करते। आप स्वादिष्ट भोजन एवं मधुपान के लिए सदैव ही लालायित रहते हैं और आनंद तथा उल्लास में ही मग्न रहते हैं। आपका आनंद भी नीचवृत्तियों वाले लोगों की भाँति ही नीचे स्तर का है। उसी आधार पर आप अपनी कामवासना की तृप्ति में निरन्तर संलग्न रहते हैं।

30

सभी प्रकार के कुकृत्य तथा दुर्व्यवहारों में आप सदैव ही प्रवृत्त रहते हैं। आपके कर्म बड़े ही नीच, भीषण एवं भयावह हैं। आप उसी प्रकार के कर्म करत्ते हैं, जो क्रूरता के माध्यम से संभव हों। आप सदैव ही ऐसे नीच कार्यों में प्रवृत्त रहते हैं, जिनसे आपार हानि एवं संहार होता है। अतएव स्पष्ट ही है कि इन दुष्कर्मों का फल भी बहुत ही बुरा होगा। बुरे कर्मों का परिणाम भी कभी अच्छा नहीं हो सकता।

31

मैंने इस वास्तविकता का पूरा अनुभव कर लिया है कि आप पर विपत्तियां टूटने वाली हैं। अब इस विषय में किया ही क्या जा सकता है ? मैंने इन परिस्थितियों में यह निश्चय कर लिया है कि एक क्षण के लिए भी मैं आपसे से अब दूर नहीं रहूंगा। यही उचित भी है। दैत्य, दानव तथा भाँति-भाँति के अन्य शत्रु जब चाहें आक्रमण के लिए प्रस्तुत हों, पर मैं उन सभी से युद्ध करने के लिए तैयार हूं। मैं युद्ध-क्षेत्र में ही मृत्यु को वरण करने के लिए प्रस्तुत हूं। इस प्रकार अपने प्राण का उत्सर्ग ही मैं उचित समझता हूं।

32

वह व्यक्ति जो जीवन में सर्व सुख सम्पन्न होकर उन्हें भोग चुका है,जीवन में किसी प्रकार के अन्य सुख के अभाव का अनुभव नहीं कर सका है तथा सुरक्षा एवं शान्ति से अपना जीवन व्यतीत कर चुका है, युद्ध भूमि में वीरगति का वरण करने से डरेगा नहीं। दुःखियों को जिसने सदैव ही दान दिया है, जीवन में साधना एवं तपस्या की है,उत्तम एवं पवित्र विचारों के आधार पर जो भी करने योग्य है, उसका जिसने पालन किया है वह भयभीत नहीं हो संकता है। जो सभी प्रकार से सन्तुष्ट है, जिसकी सभी अभिलाषाएं एवं आकांक्षाएं पूरी हो चुकी हैं, जिसे सभी वस्तुएं प्राप्त हैं और जिसके लिए किसी भी वस्तु का अभाव नहीं है,उसे युद्ध क्षेत्र में प्राणोत्सर्ग करना सुखकर ही लगेगा। ऐसा व्यक्ति वीरगति का वरण करने में सुख की चरम सीमा का ही अनुभव करेगा।

33

अब राजनीतिक दाँव-पेंचों पर बहुत अधिक विचार-विमर्श करने की आवश्यकता नहीं है। उनके माध्यम से आपकी समस्याओं का हल भी संभव नहीं है। आपने अब तक जो कुछ भी किया है, उसमें उद्देश्य अथवा लक्ष्य को सामने रखकर कभी भी विचार नहीं किया। आपने प्रत्येक कार्य की सफलता के लिए शक्ति का प्रयोग किया है। दूसरों को कष्ट देकर सताते हुए ही आपने सदैव अपने लक्ष्य की सिद्धि की है। इसी को आप आवश्यक समझते रहे हैं। उन्हीं मानदण्डों से आप श्रीराम के साथ भी व्यवहार करना चाहते हैं। उनके प्रति ी आपका वही पुराना अशिष्ट व्यवहार है।

34

कुम्भकर्ण ने इस प्रकार स्पष्ट शब्दों में अपने बड़े भाई दशमुख को सावधान किया। उसके पश्चात् कुम्भकर्ण फिर गहरी निद्रा में मग्न हो गया। विभीषण ने फिर एक बार रावण से निवेदन किया, पर सभी प्रयत्न निष्फल रहे। उन्होंने सदैव ही यह अनुभव किया कि दशमुख नीचकृत्य करने में आनंद का अनुभव करता है, जो उचित नहीं है। अन्ततः फिर विभीषण ने कहा :

35

हे दशमुख ! अब आपको पूरी तरह ज्ञात हो गया होगा कि मृत्यु शीघ्र ही आपके प्राण का हरण करने के लिए प्रस्तुत है। बड़े ही विनाशकारी अशुभ लक्षण चारों ओर दृष्टिगोचर हो रहे हैं। इन बुरे लक्षणों से मन में अनेक आंशकाएं उत्पत्र हो रही हैं। आज आपके राजमहल पर राख जमी हुई दिखायी दे रही है। स्वर्ण के स्थान पर धुलिकरण दिखायी दे रहे हैं। इसका इस समय कोई विशेष कारण भी दिखायी नहीं देता, अकस्मात ही यह विचित्र लक्षण सामने दिखायी देते हुए अशुभ लक्षण ही प्रकट कर रहे हैं।

36

प्रचंड वायु तीव्रगति से बहने लगी है, जो वज्र की भाँति भयानक है। नगर के मध्य में भाँति-भाँति के भीषण रव गूंजते रहते हैं। पक्षीगण डर के कारण शोर मचाते हुए जैसे रुदन कर रहे हों। हिरण एक दूसरे के निकट आकर घरों में घुसने की चेष्टा करते हुए दिखायी देते हैं। ये सभी लक्षण अशुभ ही हैं।

37

सूर्य देवता के चारो ओर का प्रभामंडल भय उत्पत्र करता है। ऐसा प्रतीत होता है, जैसे मृत्यु देवता ही आकाश पर उदय होकर नाश का संकेत दे रहे हों। सूर्य की किरणें भी पीतवर्ण की हैं। इन्हें देखकर किसी भी शंका की सम्भावना शेष नहीं रह गयी है। यह मान्यता पहले से ही चली आ रही हे कि ये अशुभ लक्षण बुरे कर्मों के ही बुरा परिणाम देते हैं।

38

सूर्य के चारों ओर श्वेत वर्ण के घेरे के कई संकेत भी हैं। वहीं पर गोल-गोल घेरा भी है, जो रक्तवर्ण का है। उसका स्परुप बहुत ही भयानक है। उसे देखने से ऐसा प्रतीत होता है, जैसे सिंह अभी अपनी गुफा से बाहर निकल कर आया है। उसके अयाल बिखरे हुए हैं, जो किरणों की भाँति चमक रहे हैं तथा अपनी लम्बी-लम्बी

ज्वालाएं बिखेर रहे हैं।

39

आकाश में दिन के समय अशुभ तारे जैसे पुच्छल तारे आदि दिखायी देने लगे हैं। बहुत से नक्षत्र टूट-टूट कर पृथ्वी पर गिरते दिखायी देते हैं। जब यह नक्षत्र पृथ्वी पर गिरते हैं तो पृथ्वी काँपने लगती है। इस प्रकार पृथ्वी का यह कम्पन बहुत ही भयावह होता है। बादलों में बिजली की चमक एवं घोर गर्जना जैसे यह संकेत दे रही हों कि भीषण विपत्तियाँ लंकानगरी पर आने वाली हैं।

40

चारों ओर अनेक शैतान भाँति-भाँति से नृत्य करते हुए भयानक तथा डरावनी मुख मुद्राएं बना रहे है। घोर शब्द करते हुए चिल्ला-चिल्ला कर भय उत्पन्न करते हुए वे समीप आ रहे हैं। आजकल श्रृगाल भी हम सबसे बिल्कुल नहीं डरते हैं। इन सब से यह संकेत मिल रहा है कि मृत्यु तुम्हारा वरण करने के लिए शीघ्र ही आना चाहती है।

41

जहाँ तक दूध देने वाली गायों का संबंध है, उनके पास भी दूध की बहुत कमी हो गयी है। चेष्टा करके दुहने के लिए कोई प्रयत्नशील भी होता है, तो उस दुग्ध का वर्ण बहुत ही अजीब सा हो जाता है। यही नहीं उसमें दुर्गन्ध भी आती है। पवित्र अग्नि भी आजकल वैसी नहीं है जैसी कि पहले थी । अब तो यज्ञ में कितनी भी समिधाएं क्यों न डाली जाएं, उनमें से अग्नि प्रज्जलित ही नहीं होती है।

42

धूप का धुआँ भी विवित्र-सा ही प्रतीत होता है। जब भी लोग यज्ञ करते हैं, यज्ञ-धूम्र उठता है। आजकल उसकी सुगन्धि विचित्र सी हो गयी है। पहले कुछ कुछ धुआँ सा उठता है, उसके पश्चात् चीटियों के समूह की भाँति ऊपर कुछ उठता-सा प्रतीत होता है। मस्तक के बालों की गति भी धुयें की ही भाँति होती जा रही है। इससे ऐंसा स्पष्ट हो रहा है कि इन अशुभ लक्षणों का फल मृत्यु के रुप में ही दिखायी देगा।

43

राम से समझौता करने से ही इन अशुभ लक्षणों और कष्टों को शान्त किया जा सकता है। इस परिस्थिति

में अब आप उन विपत्तियों की अनदेखी नहीं कर सकेंगे। आपत्तियों के मेघ अब मस्तक पर मंडरा रहे है। लगभग सभी कठिनाइयाँ आपके द्वार पर खड़ी हैं। बहुत से अशुभ लक्षण एवं भयावने संकेत भी स्पष्टतः दृष्टिगोचर हो रहे हैं। ये संकेत क्रूरतापूर्ण हैं और कष्टमय परिस्थिति के सूचक हैं। यदि उन्हें शान्त कर दबाया न गया, तो यह हो सकता है कि हम सब शीघ्र ही काल के गाल में चले जायें। इसकी यही संभावना है।

44

अब अपने आने हृदय में सुरक्षा के मार्ग की बात सोचें। सुरक्षा के प्रति उदासीनता का दृष्टिकोंण न अपनावें । मुझे तो कुछ ऐसा प्रतीत होता है कि आपको सदुपदेश देकर सन्मार्ग की ओर ले आना सरल कार्य नहीं है। आपके सभी सेवक केवल खेल में ही अपना समय व्यतीत करते रहते हैं। वे राजा की झूठी प्रशंसा कर उसे युद्ध के लिए प्रेरित करते रहते हैं, जिससे भीषण रक्तपात होने की पूरी संभावना है।

45

इस युद्ध को शान्त करने का अब और कोई उपाय नहीं है। अब तो केवल एक ही मार्ग है, वह यह कि आप श्रीराम का आधिपत्य स्वीकार करके उनकी शरण में जाइये और उनसे सन्धि कीजिए। विनम्रता-पूर्वक आप देवी सीता को श्रीराम के पास ले जाकर उन्हें सौंप दीजिए। आपका यह कार्य सहस्त्रों शुभ कार्यों के समान ही मान्य होगा।

46

युद्धक्षेत्र में वीरगति पाने में आपको तो किसी प्रकार की कठिनाई का अनुभव होना भी नहीं चाहिए। उसके लिए दुःख अथवा पश्चाताप की कोई आवश्यकता नहीं होनी चाहिए। आपने तो जीवन के सुखों का पूरा रस लिया है। आपने अपना उद्देशय सिद्ध किया है तथा अपने जीवन का लक्ष्य तक प्राप्त कर लिया है। सभी प्रकार से सम्पूर्ण विजय एवं यश की भी प्राप्ति आपको हो चुकी है। इन सब कारणों से यदि आप युद्ध मे वीरगति प्राप्त करने में ही अपना लाभ समझते हैं तो कोई आपको रोक भी नहीं सकता है।

47

मैं तो आपके समक्ष आपके सभी स्वामिभक्त सेवकों के प्रतिनिधि के रुप में यह निवेदन करने आया हूं कि हम सब अभी जीवन में सुखों को पूरी तरह भोग नहीं पाये हैं। अभी भी आनंद का रसास्वाद करने के हम अभिलाषी हैं; अतएव हम सबकी उचित राय मानकर आप युद्ध की कल्पना को मन से निकाल दीजिए। हम सबका आपसे यही नम्र निवेदन है कि आप श्री राम के प्रति प्रेम का परिचय देते हुए उनसे समझौता कर लीजिए।

48

जब विभीषण ने इस प्रकार के वचन दशमुख से कहे, तो रावण क्रोध से लाल हो गया। वह अग्नि की भीषण ज्वालाओं की भाँति धधकने लगा । उस समय उसके मुख की आभा बड़ी ही भयानक सी प्रतीत हो रही थी। वह क्रूर वेश में था। उसकी मूंछें हिल-सी रही थीं। क्रोध के कारण वह पागल-सा हो उठा था।

49

क्रोध से उसकी भ्रकुटि कुटिल हो गयी। उसके मस्तक पर बल पड़ गये। उसके मुख की कान्ति रक्तिम वर्ण की हो गयी। उसके हृदय की उष्णता से उसकी सांसें तीव्रतर होकर निकलने लगीं। वह क्रोधावेश में विभीषण द्वारा कही गयी बातों का उत्तर देने लगा। उसका स्वर अत्यन्त तीक्ष्ण था।

50

हे विभीषण ! तुम मेरे पास से कहीं दूर भाग जाओ। तुम तुरंत कहीं दूर चले जाओ। मैं तुम्हें सावधान करता हूं। यहाँ एक पल भी मैं तुम्हें रहने नहीं दूंगा। तुम्हारे सभी वचन नीचता एवं दुष्टतापूर्ण हैं। तुम शैतान हो । तुम जानते हो कि राम की अभिलाषा मुझ पर विजय प्राप्त करने की है। हे भाई ! तुम कह रहे हो कि रावण को निश्चय ही हारना पड़ेगा। पर यह जान लो कि रावण का हारना पाना एक बहुत कठिन और असंभव कार्य है। यदि ऐसा हो सका तो असंभव भी संभव होने लगेगा।

51

यदि वृक्षों के सूखे पत्र सागर की गहराइयों में डूब जांय, पत्थर जल के ऊपर तैरने लगें, जल अपनी शीतलता को छोड़कर उष्णता प्राप्त कर ले और अग्नि की ज्वालाओं की भाँति सबको जलाने लगे, तभी मैं हार सकूंगा। अग्नि यदि शीतल हो जाय, सभी असंभव बातें संभव हो सकें, तभी शायद मेरी पराजय भी संभव हो अर्थात् मेरी पराजय असंभव है।

52

हे विभीषण ! क्या वास्तव में तुम्हारी बुद्धि भ्रष्ट हो गयी है ? तुम्हारी विचारशक्ति निश्चय ही समाप्त हो गयी है। मुझे तुम्हारे कपटी एवं नीच विचारों का आज पूरा पता लग पाया है। मैं समझ गया हूं कि तुम्हारा हृदय अत्यंत कलुषित है और तुम भ्रातृद्रोही हो। तुम महानीच एवं दुष्ट प्रवृत्ति के व्यक्ति हो। अब यह सब मुझे पूरी तरह स्पष्ट हो चुका है। वास्तव में मेरे प्रति जो बुरी भावनाएँ तुम्हारे मन थीं, वे आज तक मुझसे छिपी रहीं।

मैं स्वयं भ्रम में पड़ा रहा। तुम्हारी बुराइयां आज उभर कर मेरे सामने आ गयी हैं।

53

इससे पहले यदि कोई शत्रु बुद्धिमान एवं शक्तिशाली भी होता था, तो तुम कभी मेरा विरोध नहीं करते थे। मेरी तो सदैव यही धारणा रही है कि तुम साधु–सन्तों की भाँति जीवन व्यतीत करते रहे हो और उन्हीं के समान आदर्शों को अपने जीवन में उतारते रहे हो। अब मुझे पूरी तरह स्पष्ट हो गया है कि तुम एक द्रोही प्रकृति के व्यक्ति हो। किसी भी नारकीय नीच प्राणी से कम तुम्हारे दुष्कर्म नहीं हैं।

54

मुझे पूरी तरह ज्ञात हो गया है कि तुम्हारे विचार साधुजनों की भाँति नहीं हैं। तुम्हारा हृदय भी त्याग एवं साधना रहित है। तुम नीच प्रकृति के व्यक्ति हो। तुम सुख का भोग एवं स्वादिष्ट भोजन ही चाहते हो। तुम्हारी आकांक्षाएं अतृप्त हैं। उन्हीं की तृप्ति तुम्हारा लक्ष्य है। तुम्हारा यह कर्म कभी भी उचित नहीं माना जा सकेगा। इसकी तुमसे कभी आशा भी नहीं की जाती थी। नीति शास्त्र एवं ज्ञान विज्ञान में पारंगत होने पर भी यदि तुम इन क्षुद्र विचारों को इतना महत्व देते हो तो तुम्हारे लिए यही उचित होगा कि साधना के जीवन का तुम पूर्णतः त्याग कर दो। धार्मिक व्यक्ति अथवा भिक्षु की भाँति जीवन व्यतीत करने का स्वाँग छोड़ दो।

55

निर्मल चरित्र वाले राक्षस का चरित्र चन्द्रमा की भाँति उज्जवल माना जाता है। हे विभीषण ! तुम अपने उस निर्मल चरित्र से नीचे गिर गये हो। तुम्हारा कुल–वर्ग श्वेत–स्वच्छ और निर्मल वस्त्र की भाँति है। तुम काले धब्बे के समान उस निर्मलता को कलुषित कर रहे हो।

56

जो मनुष्य मानवों की भाँति जीवन व्यतीत नहीं कर पाते हैं, वे सेवकों तथा दासों की भाँति ही जीवन यापन करते हैं। ये नीच माने जाते हैं तथा सबको लज्जित करते रहते हैं। ऐसे व्यक्ति सदैव ही दूसरों के वश में रहते हुए सेवकों का जीवन व्यतीत करते हैं। तुम भी ऐसा ही जीवन व्यतीत करना चाह रहे हो। तुम शत्रु के प्रति स्वामिभक्ति का पूरा परिचय दे रहे हो। निश्चय ही तुम उनसे बहुत ही प्रभावित हो। मैं तुम्हारी निन्दा करते हुए तुम्हें धिक्कारता हूं। तुम्हारे लिए यही उचित होगा कि तुम मृत्यु का वरण कर सीधे नरक में वास करो।

57

हे नीच विभीषण ! तेरे जीवन को धिक्कार है। तेरे मन में जीवित रहने की उत्कट अभिलाषा है जैसा कि तूने अभी कुछ देर पूर्व स्पष्ट किया है। मेरे नीच शत्रु के पास जाकर तू उससे मिलना चाहता है। क्या तुझे यह ज्ञात नहीं है कि वह शत्रु तेरी आधीनता कभी भी स्वीकार नहीं करेगा। तेरे आश्रय में वह कदापि नहीं रहेगा कभी भी क्या तू उसका आश्रयदाता वन सकता है ? हाँ, यह अवश्य है कि यदि तू चुपचाप यहाँ रहना चाहे तो निश्चय ही जीवित रह सकता है।

58

हे विभीषण ! जब लंकापुरी में आग लग गयी। यह नगर जल कर भस्मीभूत हो गया, तो निश्चय ही तुम्हें अपार प्रसत्रता हुई होगी। अग्निकांड की यह दुर्घटना अभी हाल में ही हुई है। उस समय भी यहाँ पर तुम्हीं एक ऐसे व्यक्ति थे, जिसने उस नीच वानर की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए उसकी वन्दना भी की। यह वही नीच वानर था, जिसने लंका को जला दिया था। यह इस सत्य का स्पष्ट प्रमाण है कि तुम कुलद्रोही हो। तुम नीच, दुष्ट और कलंकी हो।

59

दशमुख विभीषण को अपशब्द कहता हुआ ही राज सिंहासन से उतर कर नीचे आया । वह आगे बढ़ा। विभीषण के मुख पर उसने पद-प्रहार किया। इस प्रहार के पश्चात् वह बहुत प्रसत्र दिखायी देने लगा।

60

स्वतंत्र व्यक्तित्व वाले महान विचारक विभीषण इतना दुर्व्यवहार सहन करने के पश्चात भी मौन ही रहे। उनके हृदय में किसी प्रकार की उथल-पुथल नहीं थी। उनके मुख की कान्ति माधुर्य बिखेर रही थी। उनके विचार पवित्र एवं निर्मल थे। विचारों की स्पष्टता एवं पवित्रता के कारण उनको रावण पर तनिक भी क्रोध नहीं आया। उनका हृदय मणि-माणिक की भाँति निर्मल एवं प्रकाशयुक्त था।

61

वास्तव में सुजनों के चरित्र पवित्रता एवं सौजन्य की आधारशिलाओं पर आधारित होते हैं। चाहे कोई उनका अपमान ही क्यों न करे, उनमें कभी परिवर्तन नहीं दिखायी देता। उनका हृदय इस घोर परिस्थिति में भी शान्त एवं दृढ़ था। उनके हृदय में कटुता का लेशमात्र भी कोई भाव नहीं था। उनक हृदय सागर की भाँति पवित्र था। उस पर किसी प्रकार के कलुष का प्रभाव पड़ना संभव ही नहीं था। इस प्रकार उनका हृदय सदैव ही स्वच्छ एवं शुचितापूर्ण बना रहा।

62

वे किसी भी परिस्थिति में हारने अथवा अपने दृढ़ विचारों का परित्याग करने को प्रस्तुत नहीं थे। यद्यपि रावण ने उनसे नीचतापूर्ण दुर्व्यवहार किया था, फिर भी वे अपने विचारों से डिगे नहीं थे। प्रत्येक परिस्थिति का सामना करने के लिए वे कटिवद्ध एवं उद्यत थे। उनके हृदय में शान्ति तथा सन्तोष का वास था।

63

उनको महापुरुषों के जीवन चरित्रों का ज्ञान था एवं उनके महान अनुशासन प्रिय जीवन की उन्हें पूरी जानकारी थी। उन्हीं के आदर्शों पर चलकर वे अपने हृदय को सदैव ही कलुषता एवं कटुता से बचाते रहे तथा उसको निष्कलुष एवं पवित्र करते रहे। इससे उनका हृदय निर्मलता का प्रतीक बन गया था। उनका व्यवहार मृदु, स्पष्ट तथा सुन्दर था। वे मितभाषी थे। उनके स्वर में मधुरता थी तथा एक विशेष प्रकार का आकर्षण था। वे विचार कर लेने के बाद ही किसी प्रश्न का उत्तर देते थे। पूरी बात सुनकर ही वे मधुर स्वर में अपना विचार प्रकट करते थे।

64

हे राजा रावण! आप अपने क्रोध का परित्याग करने की कृपा कीजिए। अपने मन को पवित्र कार्यों की ओर लगाइए एवं निर्मल तथा स्वच्छ बनाइए। इस प्रकार अपने हृदय को स्वच्छता के प्रकाश से परिपूरित कीजिए। मुझे पूरी आशा है कि आपको सुरक्षा प्राप्त होगी। आपका निश्चय ही कल्याण होगा। मेरा आपसे विनम्र निवेदन है कि चाटुकारिता को आप प्रश्रय न दीजिए। यह ठीक है कि किसी अन्य पुरुष द्वारा सावधान किये जाने पर अधिकतर लोग नाराज ही होते हैं। व्यक्ति को उपदेश देकर समझाना सचमुच सरल नहीं होता है। जिसे उपदेश दिया जाता है, उसके लक्ष्य एवं विचार भी उपदेश देने वाले की अपेक्षा अलग तथा अपने आप में स्वतंत्र होते हैं। इसीलिए उपदेश कभी–कभी अप्रसन्नता उत्पन्न करते हैं। मेरा विचार यह है कि आप अपनी सभी इच्छाओं एवं अभिलाषाओं की पूर्ति करने की पूरी चेष्टा कीजिए। अपने विचारों को भी स्थिर एवं दृढ़ कर लीजिए। अपने दृढ़ निश्चय से कभी भी टस से मस होने की आवश्यकता नहीं होनी चाहिए।

65

जहाँ तक मुझ जैसे सेवक का प्रश्न है, मैं तो केवल आपका एक दास मात्र हूं। मैंने भरसक प्रयत्न किया है कि आपकी सुरक्षा एवं कल्याण के लिए आपके समक्ष अपने उचित विचार प्रस्तुत करु। मैंने चाहा था कि मेरे परामर्श को आप पूरी तरह स्वीकर करें, पर आपका हृदय उनको ग्रहण नहीं कर रहा है। मेरे शब्दों को सुनकर

आपको कष्ट हो रहा है। मेरे शब्द आपको निश्चय ही कर्णप्रिय नहीं लग रहे हैं; अतएव मैंने समझ लिया है कि आपके विचारों को किसी प्रकार कोमल बनाना या उनमें परिवर्तन लाना संभव नहीं है। हो सकता है कि मेरे कुछ शब्द उचित लगें और कुछ शब्द आपको उचित प्रतीत न हों। इस परस्थिति में मेरा यह नम्र निवेदन है कि आप एक कुशल राजा की भाँति उन विचारों पर ध्यान दीजिए तथा उनका परीक्षण अवश्य कीजिए। आपने उनको पूरी तरह सुना है। अपने विचारों से मैं जहां तक सत्य का अन्वेषण कर सकता था, मैंने किया है। मेरी दृष्टि में मेरे वचन आपके लिए कल्याणकारी ही है।

66

आज मेरी स्थिति उस सेवक की भाँति है जो अपने स्वामी का हित करने के लिए भरसक प्रयास करता है। यदि उसका स्वामी ही उन सुझावों अथवा प्रस्तावों पर ध्यान न दे तो इसमें उस सेवक का क्या दोष है। उदाहरण के लिए उस परार्थी व्यक्ति को लिया जा सकता है जो रोग का उपचार करने के लिए किसी रोगी व्यक्ति को औषधि देता है। यदि रोगी दवा का सेवन करने से यह कहकर इन्कार कर दे कि औषधि कटु है तो इसमें उस चिकित्सक का क्या दोष है। आज मेरी दशा उस चिकित्सक की ही भाँति है। मैंने आपको सभी गंभीर परिस्थितियों के प्रति सावधान किया है। अब इससे आगे मैं और क्या कह सकता हूं।

67

मेरे सुझावों एवं प्रस्तावों से आप क्रुद्ध हो उठे हैं। मैंने तो आपके हित को ही ध्यान में रखते हुए सावधान किया है। ऐसा प्रतीत होता है कि आप सही परामर्श पर विशेष ध्यान नहीं दे रहे हैं। हे राजा रावण ! मैं आपका अन्तिम निर्णय जानना चाहता हूं पर आप मौन हैं। मैं अब शान्त हो रहा हूं और इस स्थान से दूर जाने के लिए आपसे आज्ञा ले रहा हूं।

68

अब मुझे ऐसा प्रतीत हो रहा है कि पवित्र धर्म–ग्रन्थों और शास्त्रों में लिखी गयी सभी बातें सत्य पर ही आधारित हैं। वे सभी इस परिप्रेक्ष्य में पूरी तरह देखी जा सकती हैं। यही नहीं, उनकी सत्यता भी स्पष्ट ही प्रमाणित हो रही है। उनमें स्पष्टतः कहा गया है कि यदि किसी राजा को उसकी प्रजा के लोग धोखा देने की योजना बनां रहे हों तो राजा को निश्चय ही अपार क्षति पहुंचेगी। प्रजा यदि राजा की सुरक्षा के प्रति उदासीन हैं तो वह परिस्थिति कुछ ऐसी होगी जैसे कोई व्यक्ति चीते अथवा महाविषैले सर्प के साथ खेल रहा हो। कभी–कभी इस खेल में आनंद भी आ सकता है, फिर भी उससे बहुत बड़ी हानि की आशंका रहती है।

69

कौन साधारण चरित्र का आदमी है और कौन बुरे चरित्र का है, यह जानकारी राजा को रखनी ही चाहिए। उसके लिए यदि राजा उत्सुक हो तथा प्रश्न पूछे, तो उचित ही होगा। किसी सेवक से इस संबंध में अकेले राय नहीं लेनी चाहिए। राजा जब कुमार्ग पर चलकर बहुत सी भूलें कर रहा हो, एक विवेकहीन व्यक्ति की तरह आचरण कर रहा हो और अपने सेवकों को दण्ड देने के लिए अकारण उद्यत हो, तब सभी मंत्रियों को बुलाकर उनसे उचित मंत्रणा करनी चाहिए। प्रत्येक विषय पर सविस्तार विचार किया जाना चाहिए। मंत्रीगण सब परिस्थितियों से भली भाँति परिचित होते हैं, अतः उनके परामर्श को मानना चाहिए।

70

विभीषण ने इन्हीं शब्दों में उत्तर दिया। उसके पश्चात रावण से लौटने की आज्ञा लेकर वहाँ से वे चल दिये। शीघ्र ही वे राज्य-सभा से बाहर निकल आये। उनके मित्र उनका सम्मान करने के लिए उठ खड़े हुए। वे उनके सच्चे स्वामिभक्त थे। एक क्षण भी वे उनसे अलग नहीं रहना चाहते थे, इसीलिए उन्होंने भी विभीषण का अनुगमन किया। विभीषण के प्रति उनके हृदय में अपार प्रेम था।

अध्याय – 15

1

इसके पश्चात विभीषण ने अपनी सेना के साथ वहाँ से प्रस्थान कर दिया। उस समय उनकी यही इच्छा थी कि वे श्री राम से प्रार्थना करें कि वे उन्हें शरण में ले लें। इसके लिए वे आकाश मार्ग से ही राम के पास जाने को उद्यत हो उठे और उत्तर दिशा की ओर चल पड़े। आकाश मार्ग में उड़कर वे पवित्र स्थल महेन्द्र पर्वत के पास आ गये।

2

उन्होंनेआकाश मार्ग से भयानक सागर को सरलता से पार कर लिया। वे अपने मित्रों सहित सागर तट पर आकर खड़े हो गये। सभी वानरों ने जब उनको सागर तट पर देखा, तो उनके आश्चर्य का ठिकाना न रहा। वे सभी संभलकर उठ गये और खड़े हो गये। उन्होंने अनुमान लगाया कि शायद दशमुख ही इस ओर आ रहा है।

3

श्री हनुमान जी ने विभीषण को बड़े ही ध्यानपूर्वक देखा। उन्हें तुरन्त ही सभी बातों का स्मरण हो आया। वे शीघ्र ही उनसे मिलने के लिए गये। प्रसन्नता के साथ वे विभीषण का स्वागत करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने अपने साथियों को बताया कि पहले से ही विभीषण का उनके ऊपर बड़ा ऋण है, जिसका वे बार–बार स्मरण कर रहे हैं।

4

महान व्यक्तियों के चरित्र की सबसे बड़ी विशेषता यह है कि वे सदैव ही अपने प्रति किये गये सज्जनों के सद्व्यवहार को स्मरण रखते हैं। जो लोग उनसे प्रेम करते हैं, उनके प्रति सज्जनों के मन में अपार श्रद्धा भी रहती है। उनके प्रति थोड़ी भी प्रेम–भावना किसी ने प्रकट की हो, तो वे उसे कभी भी भूलते नहीं है। यदि किसी ने बड़े रुप में कोई विशेष अनुग्रह किया है, तो उसके प्रति उनके हृदय में अपार कृतज्ञता रहती ही है। सदैव ही वे अपने हृदय में अच्छी बातों का स्मरण करते रहते हैं।

5

हनुमान मन ही मन सोच रहे थे। विभीषण का पहले का अनुग्रह मुझे भली भाँति याद है। हनुमान जी यह सोच कर विभीषण के प्रति सम्मान प्रकट करने के लिए आगे बढ़े। उन्होंने विभीषण के अनुग्रह को सदैव मान्यता

दी। वे विभीषण के उपकार का बदला चुकाना चाहते थे ; इसीलिए उन्होंने आगे बढ़कर विभीषण का विधिवत स्वागत किया।

6

तत्पश्चात विभीषण ने हनुमान जी से मिलकर प्रार्थना की कि वे उनकी सहायता करने की कृपा करें और श्री राम को पूरा समाचार देने का कष्ट करें। विभीषण ने राम के प्रति अपनी श्रद्धा एवं भक्ति भी प्रकट की। उन्होंने हनुमान जी से कहा कि वे राम के प्रति उनकी स्वामिभक्ति के विषय में सविस्तार सूचित करने का अनुग्रह करें। विभीषण ने वहाँ आने का कारण भी स्पष्ट कर दिया। उन्होंने हनुमान जी से कहा कि वे इस कार्य में उनकी सहायता करें। उसके पश्चात हनुमान जी आगे बढ़े तथा श्री राम के पास आकर उन्हें विभीषण के आने का समाचार दिया। श्रीराम एक महान विजयी योद्धा के रुप में वहाँ उपस्थित थे।

7

विभीषण का राम से परिचय कराते हुए हनुमान जी ने कहा कि हे राजा राम ! यह विभीषण हैं। ये एक महान चरित्रवान एवं सद्विचारों वाले व्यक्ति हैं। आपके श्री चरणों में एक शरणागत की भाँति शरण लेने ये आये हैं। आपकी सेवा में ही ये रत रहना चाहते हैं। यह हर परिस्थिति में सभी बाधाओं का सामना करते हुए आपकी सेवा करेंगे; अतएव इस परिस्थिति में इनकी सहायता करना हम सबका पवित्र कर्तव्य है। एक स्वतंत्र चिन्तन वाले महापुरुष हैं तथा इनमें अनेक गुण हैं। इन्होंने अनेक धर्म–ग्रन्थों एवं शास्त्रों का विधिवत अध्ययन किया है और इसीलिए ये ज्ञान विज्ञान के ज्ञाता हैं; अतएव इनको आश्रय देना उचित होगा।

8

इस प्रकार हनुमान जी ने राम से विभीषण का परिचय कराया। उनके पवित्र विचारों एवं उनके महान चारित्रिक गुणों का विस्तार सहित वर्णन करते हुए उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की। राम ने पहले से सुना था कि विभीषण एक बड़े ही सज्जन एवं महान गुणी हैं। उन्होंने भी विभीषण को अपने हृदय से लगा लिया और अपने साथ रहने की आज्ञा दे दी।।

9

राम बड़े ही चरित्रवान एवं महान पुरुष थे। उन्होंने विभीषण के गुणों का पूरा आदर किया। वे स्वयं गुणवान थे। वे सदैव ही स्थिर बुद्धि के महान योद्धा थे। वे शरण में आने वाले पर अपनी पूरी कृपा दृष्टि रखते थे। सहायता के लिए वे शीघ्र तत्पर हो गये। यदि कोई सेवाभाव से उनकी शरण में जाकर आश्रय चाहता था, तो

श्रीराम निश्चय ही उस पर दयाभाव दिखलाते थे। उसकी सेवा-भावना व्यर्थ नहीं जाती थी। यदि कभी कोई शत्रु भी उनसे जीवन-दान माँगता था, तो वे तुरन्त ही उसे जीवन-दान दे देते थे। वे विष्णु के अवतार थे, यह तथ्य पूर्णरुपेण प्रकट हो चुका था। उनके व्यवहार से भी यह पूरी तरह स्पष्ट था।

10

यदि कोई ऐसा व्यक्ति उनसे सहायता की अपेक्षा रखता हो जो स्वयं अच्छे गुणों वाला हो, ज्ञानी एवं पवित्र विचारों के सार तत्व को पूरी तरह समझता हो, तो श्रीराम उसे अवश्य सहायता देते थे। वह यदि उनसे आश्रय पाने की अभ्यर्थना करता था, तो उसके प्रस्ताव को श्रीराम तत्काल ही स्वीकृति दे देते थे। शरणागत का सदैव ही उनके यहाँ स्वागत किया जाता था। इस कार्य से श्री राम को अपार प्रसन्नता भी होती थी। यही उनकी सबसे बड़ी विशेषता थी।

11

जब हनुमान जी ने श्रीराम से विभीषण का पूरा परिचय करा दिया, तब विभीषण आगे बढ़े। उन्होंने श्रीराम को झुककर प्रणाम किया। राम की उत्तमता एवं गुणों पर वे मुग्ध थे। विभीषण राम की शरण में आकर, उनकी सेवा में तत्पर हो गये। यह दृश्य देखकर निकटवर्ती सागर की गर्जना शान्त हो गयी। शान्त लहरें मानो इस वात की सूचना दे रही हों कि शीघ्र ही श्रीराम को पूर्ण प्रसन्नता प्राप्त होगी।

12

इस मैत्री से परिस्थिति में विशेष परिवर्तन दिखायी देने लगा। विभीषण और राम की मित्रता से राम की स्थिति और भी अधिक सुदृढ़ हो गई। विभीषण से संवाद के समय राम के सुन्दर मुख से मधुर शब्द ऐसे निकलते थे जैसे अमृत टपक रहा हो। उन्हें इतनी प्रसन्नता हो रही थी जैसे उनका कार्य शीघ्र ही पूरा होगा। ऐसा लग रहा था जैसे दो व्यक्ति साथ-साथ चलते-चलते प्रसन्नतापूर्वक किसी गन्तव्य स्थान पर पहुंच गये हों। विभीषण की मैत्री ने राम के ह्रदय को अपार सन्तोष प्रदान किया।

13

विभीषण तो सागर पर करके श्रीराम की शरण में आ गये। राम सागर को पार करने के लिए अनेक प्रकार की योजनाएँ बना रहे थे। उनको समझ में नही आ रहा था कि सागर को कैसे पार किया जाय। निश्चित रुप से इस संबंध में वे कोई निर्णय भी नहीं कर पा रहे थे। उन्हें सागर पार करने का कोई उचित उपाय सूझ नहीं रहा था।

14

इस स्थिति में राम विचार–मग्न थे। उनके मन में भाँति–भाँति के विचार उत्पन्न होने लगे। यह मानवीय चरित्र की विशेषता भी है। लंका पर आक्रमण करने की दिशा में उन्होंने सागर को सबसे बड़ी बाधा के रुप में पाया। सागर एक बहुत बड़ी कठिनाई उपस्थित कर रहा था। सागर ने राम के प्रयाण का मार्ग ही अवरुद्ध कर दिया था।

15

समय–समय पर विद्वानों द्वारा व्यक्त विचार बहुत ही स्पष्ट एवं सराहनीय सिद्ध होते हैं। अपनी अवस्था एवं अनुभव के आधार पर ही वे विचार प्रकट करते हैं। वे उत्तम कोटि के व्यक्ति होते हैं। विरह एवं प्रेम के संबंध में भी उनके विचारों का बड़ा महत्व है, कभी–कभी विरह और प्रेम क्रोध के कारण बन जाते हैं। राम अपनी पत्नी सीता के विरह में व्याकुल होकर बहुत दुःखी जीवन व्यतीत कर रहे थे। उनकी पत्नी सीता सदैव ही उनकी कल्पना में लीन रहती थीं। इसका परिणाम यह हुआ कि राम को सागर पर अत्यन्त क्रोध आ गया। उन्होंने यह अनुमान लगाया कि सागर जानबूझ कर उन्हें निराश कर रहा है; इसीलिए वह उचित मार्ग नहीं दे पा रहा है।

16

राम बहुत ही क्रुद्ध रुप में अकस्मात ही सागर तट पर जा पहुंचे। उनके क्रोध की उष्णता एक सहस्त्र सूर्यों की उष्णता की भाँति थी। वे बार–बार अपने हाथों में धनुष बाण लेते थे। अन्त में वे उठकर खड़े हो गये। उन्होंने धनुषबाण धारण कर लिया। धनुष पर बाण भी उन्होंने चढ़ा लिया।

17

बाण के अग्र भाग से अग्नि की ज्वाला फूट रही थी। उन्होंने कहा :– इस सागर पर मैं बाण मारना चाहता हूं। वे उस समय बहुत ही दुःखी और क्रोधित थे। सागर के प्रति कठोर व्यवहार का निश्चय उन्होंने कर लिया था। सागर अब तक मार्ग नहीं दे पाया था। उन्हें विवश होकर क्रोधपूर्ण व्यवहार अपनाना पड़ा।

18

जब राम ने धनुष पर बाण च ढा लिया तो सागर में हलचल सी मच गई। उसमें कम्पन–सा होने लगा। पृथ्वी पर भी जैसे भूचाल आ गया था। पर्वतों के ढालों पर कम्पन सा दिखायी देने लगा। पाताल लोक भयभीत–सा हो गया। सभी ने सोचा कि अब शीघ्र ही प्रलयकाल आने वाला है और सम्पूर्ण विनाश का समय निकट आ गया है।

19

राम ने जलते हुए बाण को छोड़ दिया। वह बाण सागर तल में प्रवेश कर गया। सभी मछलियाँ भीषण उष्णता का शिकार होने लगीं। यहाँ तक कि भयानक मछलियाँ भी व्याकुल होने लगीं। वे घबरा गयीं तथा उनकी सम्पूर्ण शक्तियाँ समाप्त हो गयीं। वे दुःखी होकर उष्णता के कारण जैसे जली-भुनी जा रही हों, इसलिए वे डर कर इधर-उधर भागने लगीं।

20

समुद्र के मगर, मत्स्य एकत्रित होकर घबरा-घबरा कर भागने लगे। वे अधमरे से हो गये। वे चौंके हुए थे तथा दुःखी होकर चारों ओर घूम-घूम कर शीतलता ढूंढ़ने की चेष्टा कर रहे थे। वे एक दूसरे से आगे बढ़ने के लिए दौड़ने लगे। मछलियों में भागने की जैसे होड़-सी लग गयी हो। वे उछल-उछल कर दौड़ने लगीं। बड़ी-बड़ी मछलियां एक ही स्थान पर दबी पड़ी रहीं। शीघ्र ही घबरा कर वे दलदल में शीतलता पाने के लिए जा घुसीं।।

21

सागर की मछलियों में कुछ ऐसी थीं, जिन मछलियों तक बाण की उष्णता या तो पहुंच नहीं पाई थी या वे उनका अनुभव करने पर भी निष्क्रिय-सी थीं। कुछ ऐसी मछलियाँ भी थीं जो बहुत ही शक्तिशाली एवं सहनशील थीं। शीघ्र ही संघर्ष के लिए वे आगे बढ़ीं। ऐसा लगा जैसे वे शत्रु के आक्रमण का उत्तर देने के लिए प्राणोत्सर्ग करने को उद्यत थीं।।

22

इसके पश्चात् वे सभी स्थान खोजने के लिए वहाँ से सरक गयीं। कुछ ही क्षणों में एक घेरे में आकर बड़ी-बड़ी मूंगे की दीवारों से वे टकराने लगीं। उनके मस्तक फट गये। उनके मुख फूट-फूट कर बहने लगे। उन्हें देखकर ऐसा लग रहा था जैसे मूंगे की दीवारों के किनारों को लाल रक्त से रंग दिया गया हो।

23

सहस्रों, लाखों, हजारों सहस्त्र तथा अगणित संख्या में मछलियाँ मरने लगीं। ऐसा प्रतीत होता था कि सागर की सभी मछलियां उष्णता से मर जाएंगी। समुद्र से सड़ने की उठती हुई दुर्गन्ध सभी ओर फैल रही थी। ऐसाप्रतीत हो रहा था जैसे युद्ध के पश्चात् सड़े शवों की दुर्गन्ध वातावरण में छा गयी हो। यह स्थिति बड़ी ही भयावह थी।

24

राम का बाण सागर तल में जाकर सीधा पृथ्वी में प्रवेश करता चला गया। वह नागों के मस्तकों पर लगा। वे सभी कट–कट कर तथा मूर्च्छित होकर गिरने लगे। बाण से निकली अग्नि की ज्वालाएँ और अधिक भभक–भभक कर भयानक रुप धारण करती हुई आगे बढ़ने लगीं। गर्मी से घबरा कर सर्प जीभें निकाल–निकाल कर लार टपकाने लगे।

25

यहाँ तक कि सर्पराज वासुकि,जो पृथ्वी की रक्षा हेतु मेरुदण्ड से माने जाते है और जिन्हें पृथ्वी का भार वहन करने वाले महाशक्तिशाली साधन के रुप में जाना जाता है,वे भी बाण की भीषण उष्णता के कारण काँपने लगे। स्पष्ट ही अब उनमें इतनी शक्ति नहीं थी कि वे पृथ्वी का महान भार वहन करने में समर्थ हो सकें। बाण की उष्णता से उनका भी शरीर काँप रहा था।

26

उसी समय अन्य दूसरे विशाल सर्प भी घबराकर एकत्रित होने लगे। वे भी प्राणों की रक्षा के लिए इधर–उधर भागने लगे। सागर में लहरें उठ–उठ कर शब्द करती हुई अन्य दूसरी लहरों के साथ मिलकर ऊपर उठती दिखायी देने लगीं। सागर की सम्पूर्ण गतविधियां जैसे पूर्ण रुप से समाप्त हो गयीं थीं। पूरा महाद्वीप थरथराता हुआ हिलने लगा था। पर्वतों के शिखर टूट–टूट कर गिरने लगे थे। इनके गिरने से भीषण शब्द सुनायी देने लगा। बड़े–बड़े मेघ गुरु गंभीर गर्जना करने लगे। सभी दिशाओं में बिजली तड़ित–वेग से चमकने लगी। ऐसा लगा मानो प्रलयकाल आ गया हो और सम्पूर्ण विश्‍व में विनाश की वेला आ उपस्थित हुई हो।

27

समुद्र और भी अधिक उद्वेलित होकर कुछ विचित्र–सा लगने लगा। उसमें एक कम्पन सा उत्पन्न हो गया। यह ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सागर का हृदय धड़कने लगा हो। ऐसा लग रहा था जैसे लहरें उठ–उठ कर भयानक शब्द करती हुई गिर रही हों तथा सागर की दशा को दयनीय बना रही हों। नागों तथा सर्पो की गतिविधियों से सागर में भीषण स्थिति उत्पन्न हो गयी। सभी सर्प डर–डर कर बाहर निकलने और भागने की चेष्टा करने लगे। अग्निज्वाला बिखेरता हुआ राम का बाण उनको भयानक रुप में दिखायी दे रहा था। वे डर कर भौंचक्के–से थे। उस समय जल के देवता वरुण माणिक्य के सिंहासन पर विराजमान होकर आगे आ गये। सागर के मध्य जल के तल पर उनका सिंहासन बारबार डोल रहा था।

28

वरुण देवता का हृदय इस उथल–पुथल की परिस्थिति को देखकर आश्चर्य में पड़ गया। विशेषतया नागों और सर्पो की इस परिस्थिति को देखकर वे भौचक्के रह गये। क्या यह संसार नष्ट–भ्रष्ट होने वाला है–ऐसा ही उन्होंने अपने मन में सोचा। वास्तव में उनका हृदय स्वयं कांँप गया। वे इस समस्या पर गंभीरतापूर्वक विचार करने लगे। उन्होंने पृथ्वी के नीचे पाताल–लोक की भी इतनी भयावह परिस्थिति कभी नहीं देखी थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि कोई महान व्यक्ति अथवा विध्वंसक–शक्ति पाताल लोक में आ गयी हो। राम के बाण ने पाताल लोक में इतना प्रकाश पुंज बिखेर दिया कि सभी चकाचौंध में पड़ गये। भीषण रुप में उससे अग्नि ज्वालाएँ उठ रही थीं। इसे देखकर ऐसा भास होता था जैसे सैकड़ों सूर्य अपनी किरणों से एक साथ ही उष्णता बिखेर रहे हों।

29

वास्तव में जब पाताल के प्राणियों ने बाण को प्रकाश बिखेरते हुए देखा,तो वरुण देवता चौंक गये। उनको और भी अधिक घबराहट हुई। उसके पश्चात् वे शीघ्र ही निकल कर बाहर जाने के लिए प्रस्तुत हो गये। उन्होंने सागर–तट पर असंख्य वानरों को देखा। वे सभी वानर पर्वतों के ढालों पर एक साथ बैठकर शोर मचा रहे थे। सागर तल पर छटपटाती हुई मछलियों को उष्णता के कारण इधर–उधर भागते देखकर वे आनंदमग्न हो रहे थे।

30

सर्वप्रथम वरुण देवता ने वानर सेना को देखा। उसके पश्चात् उनकी दृष्टि श्रीराम पर गयी। वे भी उस समय सागर तट पर खड़े थे। क्रोध के कारण उनका मुख लाल हो गया था। उनकी क्रोधाग्नि भड़कती ही जा रही थी। आगे बढ़कर शीघ्र ही वरुण देवता राम से मिले। उन्होंने सागर–तल पर आकर राम का आलिंगन किया तथा उनका पूर्ण सम्मान किया। शीघ्र ही अपनी अर्चना के पुष्प राम को अर्पित करते हुए उन्होंने बड़े ही मधुर स्वर में निवेदन किया :

31

हे राजा राम ! अब आप कृपया शान्ति धारण करें। अकारण ही आपने समुद्र के जल में अग्नि बाण चला दिया है। सागर का पार करना कोई ऐसी समस्या नहीं है, जिसके लिए आप क्रोधित हैं। सागर को सुखा देना भी आपके लिए कोई कठिन कार्य नहीं है पर आप ऐसा न करें। आपने ही इस सम्पूर्ण विश्व का निर्माण किया है। आप ही इस जगत के संरक्षक हैं। आप ही इस जगत पर नियत्रंण करने वाले हैं। आप ही इसके नियंता भी हैं।

32

इस सारे जगत के आप ही स्वामी हैं। सदैव ही इस संसार की गतिविधियों को आप ही संचालित करते रहे हैं। ऐसी कौन सी कठिनाई है, जिसको आप स्वयं सरलता से पार नहीं कर सकते। कोई भी मार्ग आपके लिए दुस्तर नहीं है। ऐसा कौन सा भीषण सघन वन है, जिसको आप पार नहीं कर सकते। ऐसी कौन सी पर्वतमाला है जो आपके लिए बाधा उपस्थित कर सकती हो और जिसको पार करना आपके लिए कठिन हो। सूर्य को यह महान उष्णता किसने दी है ? केवल आपके ही नियंत्रण में सूर्य की यह सभी गतिविधियाँ हैं। वायु की शक्ति क्या है ? वह तो केवल आपके ही इंगित पर गतिमान एवं प्रवाहयुक्त है। संपूर्ण विश्व आपके रहस्य का ही संकेत देता है। सभी कार्य व्यापार आपकी शक्ति एवं सीमाओं के अन्तर्गत ही आते हैं। वे केवल आपकी आज्ञा का ही पालन करते हैं। आपके संकेतों से ही विश्व गतिशील होता रहता है।

33

क्या आप यह भली भाँति नहीं जानते हैं कि आप स्वयं देवता नारायण के ही एक अंश हैं ? विश्व की सुरक्षा के लिए ही तो इस जगत में आपने अवतार लिया है। यह आपकी अपनी इच्छा है,जिसके कारण इस संसार में आपने साकार रूप धारण किया है। आपने सज्जनों की रक्षा के लिए ही अवतार लिया है। दुष्टों का दलन भी आपका कर्तव्य है। विशेषतया उन दुष्टों का जो इस जगत के लिए आपत्ति का कारण बने हुए हैं। यह सागर भी विष्णु देवता की भाँति आपका ही शयनागार है। यदि आप इसको सुखा देंगे,तो इससे आपको किसी प्रकार का भी कोई लाभ नहीं होगा। आपको इन साधारण बातों पर इतना चिन्तित नहीं होना चाहिए। आप किसी कठिनाई का अनुभव कदापि न करें। कृपा कर इस सागर का शोषण भी न करें। इससे केवल हानि ही होगी। इसकी कोई आवश्यकता नहीं है।

34

यदि आप सागर का पूर्ण शोषण कर भी लें तो क्या यह संभव है कि आपकी वानर–सेना सागर को सरलता से पार कर लेगी। वह मार्ग भी बहुत ही कठिन होगा। दलदल एवं कीचड़ के उत्पन्न हो जाने से मार्ग को पार करना बहुत ही कठिन हो जायेगा। बड़ी–बड़ी भयानक मछलियां भी वहाँ पर होंगी जो एक बार में ही सभी को बड़ी सरलता से निगल सकती हैं। उन मछलियों की संख्या भी अगणित है। वे मूंगे की चट्टानों के पास ही अधिकतर पायी जाती हैं। वे सभी बड़ी चौड़ी एवं भयानक हैं।

35

इस प्रकार के भयानक जीव–जन्तुओं की अगणित संख्या सागर में है। उनका आकार भी बहुत ही बड़ा

है। उनकी अपनी विशेषताएँ भी हैं। यदि वानर–सेना इस मार्ग से जाएगी तो क्या वास्तव में यहाँ से वह आगे बढ़ने में सफल हो सकेगी ? निश्चय ही वे वानर दलदल में फिसल–फिसल कर गिर पड़ेंगे। सागर की बहुत विशाल मछलियाँ मूगें की चट्टानों के पत्थरों की भाँति ही अवरोध उत्पन्न करेंगी। बहुत सम्भव है कि वे मार्ग में अन्य अनेक बाधाएँ भी प्रस्तुत करें। वास्तव में यह स्थिति कष्टदायक होगी। इस अवसर पर सूर्य की किरणें भी वहाँ पर पूरा प्रकाश नहीं कर पाएँ गी; अतएव चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार दिखायी देगा।

36

ऐसा प्रतीत होता है कि खेल–खेल में आप सभी प्राणियों को भयभीत करना चाहते हैं। यह आपके लिए बड़ी साधारण बात है,खेल–खेल में ही आप कुछ भी कर सकते हैं। आप जो कुछ करना चाहते हैं,उसके लिए कोई न कोई माध्यम ढूँढ़ ही निकालते हैं। यह सब जो आप कर रहे हैं, आपके लिए क्रीड़ामात्र है। वास्तव में जैसी आपकी इच्छा होती है, वैसा ही हो जाता है। इसीलिए आप सर्वशक्तिमान हैं। संसार की सभी गतिविधियों पर आपका ही आधिपत्य है। तीनों लोक में जैसे आपका ही खेल चल रहा है इसीलिए इनको आपका क्रीड़ा क्षेत्र माना जाता है।

37

इस सत्य में किसी प्रकार का सन्देह नहीं हो सकता है कि यह वानर–सेना सेतु बनाने में पूर्णतः समर्थ है। यदि आप उनको आज्ञा दें तो उन्हें इस कार्य में कोई कठिनाई नहीं होगी। उनको भी आपकी अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त हैं। इसी वानर सेना के अन्तर्गत ऐसे–ऐसे महान योद्धा उपस्थित हैं जो इस पृथ्वी को कन्दुक की भाँति उछाल कर इससे खेल सकते हैं। यदि उन सबको सागर पर सेतु बनाने की आज्ञा दी जाय, तो यह कार्य शीघ्र ही सम्भव कर दिखाएँ गे। यह सागर तो एक बहुत साधारण वस्तु है। किसी नदी पर जैसे पुल बनाने की योजना को सरलता से कार्यान्वित कर दिया जाता है, उसी प्रकार आपकी वानर सेना सागर पर सरलता से पुल बना सकती है।

38

ऐसा करने से आपका उद्देश्य पूरी तरह सफल हो सकेगा। आपको निश्चय ही अपने शत्रु पर पूर्ण विजय भी प्राप्त हो सकेगी। आप अपने शत्रु का सर्वनाश करने में सफलता पा सकेंगे। आपका बाण मृत्यु देवता की भाँति है,जो उन सभी को नष्ट कर सकता है, जो प्रपंची,छली और कपटी हैं। इस प्रकार धृष्ट एवं नीचों के लिए आपका बाण ही यथेष्ट शक्तिशाली है। ऐसा प्रतीत होता है कि आपकी वानर सेना के सभी वानर योद्धा मृत्यु देवता के सहयोगी बन कर यहाँ आ उपस्थित हुए हैं। अब स्पष्ट है कि सम्पूर्ण लंकानगरी का पूर्ण विनाश हो जाएगा; अतएव हे नारायण के अवतार श्री राम ! आप महान हैं। आपकी विजय निश्चित है। आप हम सब पर कृपा कीजिए।

39

इस प्रकार वरुण देवता ने श्रीराम से जीवन-दान की प्रार्थना की। जब राम ने वरुण की इस प्रार्थना पर विचार किया तो वे भली-भाँति आश्वस्त हो गये। वरुण ने उनके प्रति अपना पूर्ण सम्मान प्रकट करते हुए निवेदन किया था। शीघ्र ही उन्होंने अपने अग्निवाण को लौटा लिया तथा उसकी अग्नि को बुझा दिया। इस प्रकार उनके हृदय की क्रोधाग्नि भी शान्त हो गयी। अब उनके मन में सागर के प्रति किसी प्रकार का सन्देह अथवा भ्रम नहीं था।

40

पाताल के नागभूमि देवता को भी इस परिस्थिति से बहुत आनंद प्राप्त हुआ। सागर में जितने भी प्रधान जीव जन्तु थे,वे फिर प्रसन्न हो गये। अग्निवाण से जिनकी मृत्यु हो गयी थी,वे भी राम की कृपा से पुनर्जीवित हो उठे। इस प्रकार सागर के जीव-जन्तुओं की संख्या में किसी प्रकार की भी कमी नहीं हुई।

41

जब सभी मछलियाँ जीवित हो गयीं तो वे प्रसन्नतापूर्वक सागर के तल पर चारों ओर तैरने लगीं। उनमें नव-जीवन का संचार हो गया। शीघ्र ही वानर सेना को आदेश दिया गया कि वह प्रस्थान करे तथा सागर पर सेतु बाँधने के लिए शिलाखण्ड एवं पत्थरों को एकत्रित करे।

42

वानर-सेना शीघ्र ही इस कार्य के लिए आगे बढ़ गयी। बड़े ही उत्साह से सभी वानरगण आकाश में उछलते हुए शिलाखण्ड एवं पत्थर लाने के लिए चल पड़े। उनके शरीर के रोम-रोम खिल पड़े और उन पर विचित्र आभा सी चमकने लगी। उनका यह रुप ऐसा लग रहा था मानो सभी दिशाओं में ज्योतिपुंज चमक रहा हो। वे ऐसी तीव्र गति से इस कार्य में संलग्न थे जैसे प्रलयकाल में चारों ओर अग्नि की ज्वालाएं विश्व को ध्वंस करने के लिए क्रियाशील हो उठती हैं।

43

सभी वानर उस स्थान को छोड़कर अपने कार्य के लिए प्रस्तुत हो गये। वे वहां से चले गये। उनकी अगणित संख्या के कारण सभी दिशाएं वानर सेना से परिपूरित हो उठीं। सूर्य की किरणें उनके रोमों पर पड़ रहीं थीं। किरणों से उनके रोम-रोम सुन्दर आभा से दीप्तिमान हो रहे थे।

44

वानर सेना का कुछ भाग उत्तर दिशा की ओर गया, कुछ भाग पश्चिम दिशा की ओर गया और कुछ वानर योद्धा पूर्व दिशा की ओर चले गये। बड़ी-बड़ी पर्वत श्रेणियों से शिलाखण्ड लाने के लिए उन्हें सभी दिशाओं में जाना पड़ा। वे बहुत से बड़े-बड़े पत्थरों-लम्बे,चौड़े एवं वर्गाकार आदि भाँति-भाँति के.प्रस्तरों को-लाना चाहते थे।

45

पर्वतों के ढालों पर पहुंचते ही वे भीषण रव करते हुए चिल्लाते थे। इससे वातावरण में भय-सा उत्पन्न होने लगा। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सहस्त्रों सिंह एक साथ ही दहाड़ रहे हों। इस भयंकर गंभीर गर्जना से वातावरण कम्पित हो रहा था।

46

वानर योद्धाओं के वहां पर आते ही सारा सघन वन काँप उठा। वन के सभी जीव-जन्तु भाग-भाग कर इधर-उधर छिपने लगे। यहाँ तक कि सिंह जिसको कभी भी डर नहीं लगता था और जो किसी भी परिस्थिति में भयभीत नहीं होता था,उस भीषण रव को सुनकर काँपने लगा और शरण पाने के लिए छिपने का प्रयास करने लगा। इस प्रकार सिंह भी बड़ी-बड़ी गुफाओं में अन्दर जाकर सुरक्षा के लिए छिपने लगे। वन के अन्य प्राणियों का तो कहना ही क्या था.वे सभी तो भय से थर-थर काँप रहे थे। वे वन्य पशु जिनके बच्चे दुग्ध-पान कर रहे थे, बच्चों की चिन्ता किये बिना ही इस भयानक शब्द को सुनकर अपने शिशुओं को छोड़कर भाग निकले। भ्रमित होकर वे सभी पर्वतों के शिखरों पर जा पहुंचे। वहाँ पर मणि-माणिक्यों को देख उन्हें हर्ष हो रहा था। वे सभी जीव-जन्तु बहुत ही डरे हुए थे।

47

गज भी डर कर सभी दिशाओं में इधर-उधर भागने लगे। लगभग पचास वानर एक निकटवर्ती तालाब में स्नान कर रहे थे। उन वानरों ने गजों पर किसी प्रकार का आक्रामण नहीं किया। गज-समूह मस्ती में आ गया। पत्थरों पर अपने विशाल दन्तों को रगड़कर वे उन्हें तीक्ष्णता प्रदान करने लगे। वास्तव में उनके दाँत बहुत ही शक्तिशाली थे। यद्यपि वास्तविकता इस प्रकार थी,फिर भी वे मस्ती के क्षेत्र में वानरों का अनुकरण कर रहे थे। सभी हाथी भी वानरों के साथ दौड़ने लगे। भारी शरीर होने पर भी वे निस्संकोच भागने लगे तथा वानरों का साथ देने लगे। उन्हें अपने विशालकाय शरीर की तनिक भी चिन्ता न थी। उनके बड़े-बड़े आकारों को देखकर भय उत्पन्न हो रहा था।

48

कुछ ऐसे भी वानर थे,जिन्हें विपत्ति का भी सामना करना पड़ा। वे कुछ हिला-डुला भी नहीं सकते थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वे तप-साधना के कारण अपने मस्तक नत किये हुए हैं तथा चुपचाप खडे हैं। वे वानर सरोवर के किनारे पड़े हुंए विशाल शिलाखण्डों में छेद कर उन्हें उठाने का अथक प्रयास कर रहे थे। वे पूर्णतःसन्तुष्ट थे। वे किसी प्रकार का शोर नहीं कर रहे थे। उसी समय उन्हें ऐसा लगा कि बड़े-बड़े प्रस्तर एवं शिलाखण्ड प्राप्त कर पाना संभव न हो सकेगा। वे छोटे तथा बड़े प्रस्तरों को एक साथ मिलाकर ही उठाना चाहते थे, इसलिए कठिनाई हो रही थी। हाथी अपने दाँत को देखते तो उन्हें लगता मानो शिलाओं की जड़ों की भाँति ही वे दाँत भी श्वेत वर्ण के ही हैं। सभी हाथी निर्मल पानी में स्नान कर रहे थे तथा जलाशय में क्रीड़ा कर रहे थे।

49

जंगली सुअर पत्तों आदि से ढके हुए गन्दे निवास स्थानों से भाग निकले। यह पशु बहुत हीन कोटि का होता है। तीव्रता से दौड़-दौड़ कर आपस में टकराते हुए वे छिपने का स्थान खोज रहे थे। सबसे अधिक दया उन हीन पशुओं पर तब आ रही थी, जब वे भागते हुए उस मार्ग से निकले थे, जहाँ से हाथियों का झुंड भी आ रहा था। उनसे वे टकरा गये। वे बहुत ही भयभीत होकर इधर-उधर भागने लगे। इस स्थिति में हाथी भी भीषण चिंघाड़ मारते हुए दौड़ने लगे थे। वे दोनों पशु साथ ही साथ दौड़ते हुए पर्वत की घाटी में उतर गये। वह घाटी अनेक जंगली सुअरों से भर गयी तथा उनकी सांसों की घुरघुराहट सम्पूर्ण वातावरण में छा गयी।

50

पर्वत की घाटियों और वनों के वन्य-पशु घबराए तथा डरे हुए से इधर-उधर भागने लगे। आपस में टकरा-टकरा कर गिरते पड़ते वे छिपने की चेष्टा करने लगे। उनको किसी भी प्रकार की सहायता प्राप्त नहीं हो पा रही थी। शक्तिशाली वानरयोद्धा इधर-उधर बिखरी हुई पर्वतशिलाओं को मिलाकर उखाड़ने लगे। उनके नख बहुत ही तीक्ष्ण थे, इसीलिए वे बड़ी से बड़ी पर्वतश्रेणी को छेद कर उखाड़ सकते थे। यह ऐसा लग रहा था जैसे सहस्त्रों सिंह गर्जना करते हुए हाथियों के झुंड को विदीर्ण कर उन्हें पृथ्वी पर धराशायी कर रहे हों। वानर योद्धा भीषण सिंहनाद-सा कर रहे थे।

51

वानर सेना में कुछ ऐसे भी वानर थे, जिनके हाथ फौलाद की तरह बहुत ही शक्तिशाली थे। उन्होंने अपने दृढ़ हाथों की शक्ति से ही बड़ी-बड़ी पर्वतमालाओं को तोड़ दिया जैसे चक्र के प्रहार से किसी ने पर्वत श्रेणी

के दो भाग कर दिये हों। उन्होंने एक क्षण में ही भूमि तल से पर्वत को उखाड़ दिया। अत्यन्त शीघ्रता से उसको दूर फेंकने के लिए पूरी शक्ति सें उन्होंने उसे ऊपर उठा कर उड़ा दिया। वह उड़ती हुई शिलाएँ आकाश में ऐसी दृष्टिगोचर हो रहीं थीं जैसे शिकार किये हुए पक्षी शनैःशनै आकाश में गिरते हुए दिखायी देते हों। जैसे वृक्षों की कपास को कोई भी सरलता से पकड़ सकता है, उसी प्रकार वानर योद्धाओं ने शिलाखण्डों को उखाड़-उखाड़कर अपने हाथों पर धारण कर लिया।

52

कुछ ऐसे भी वानर योद्वा थे जो उस समय अपनी शक्ति की चरम सीमा पर थे। वे बहुत बलशाली, उत्तम एवं महान थे। उन्होंने गुफाओं के द्वारों के बड़े-बड़े प्रस्तर-खण्डों को खींच-खींच कर उखाड़ लिया, परन्तु पर्वत श्रेणियाँ पूरी तरह जमी खड़ी रहीं। उसके पश्चात् उन्होंने पर्वत की बड़ी-बड़ी शिलाओं को पूरी शक्ति से उखाड़ लिया। उनकी शक्ति असीम थी, इसलिए वे जिस शिला को चाहते थे, उसी को एक क्षण में उखाड़ लेते थे। उपटे हुए भाग को ले लेने के पश्चात् शेष टूटे भाग को वे नीचे दबाकर कर पाताल लोक में पहुंचा देते थे।

53

उस स्थान पर तब गहरा गर्त बन जाता था। वह गर्त ऊपर से देखने पर बहुत डरावना सा प्रतीत होता था। पाताल-लोक में कई भागों में फेंके गये पत्थर ऐसे प्रतीत हो रहे थे जैसे प्रमुख वानर योद्धाओं ने किसी गुफा को तैयार कर लिया हो। वीर वानरों का यह कर्म संकेत दे रहा था कि निश्चय ही विजय श्री राम को मिलेगी। सभी नीच राक्षस अन्त में सीधे नरक में ही चले जाएँ गे।

54

कुछ शक्तिशाली वानरों ने पैर से टक्कर मारकर पत्थरों को लुढ़काना प्रारम्भ किया। एक-एक योजन की दूरी पर फेंक-फेंक कर उन्होंने पत्थरों का ढेर लगा दिया। उनका स्वर गगनभेदी था। ऐसा लग रहा था मानो भयानक शब्द करते हुए पर्वत श्रेणियाँ टूट-टूट कर गिर रही हों। उनका भयानक स्वर वातावरण को कम्पित कर रहा था। पत्थरों के टकराने से अग्नि-स्फुलिंग चमक-चमक कर बिखर रहे थे। सभी जीव-जन्तु घबराने लगे। उनके कान बहरे-से हो गये थे। उनके कर्ण-कुहरों में भयानक स्वर गूंज रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे सभी पर वज्रपात हो गया हो। उसके आघात से सभी मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर लुढ़क-लुढ़क कर गिरने लगे। वे घबराकर मृत्यु के निकट जा पहुंचे थे।

उन शिलाखण्डों में इतने बड़े-बड़े पत्थरों के टुकड़े थे, जिनकी लम्बाई चौड़ाई छः-सहस्त्र फीट के बराबर थी। इस आकार के विशाल पत्थर आकाश की ओर फेंके जा रहे थे। सचमुच वे बड़े ही विशाल प्रस्तर थे। उनकी गोलाई सूर्य के सदृश विस्तृत थी। इस भयानक दृश्य को देखकर देवतागण भ्रम में पड़ गये। उन्होंने सोचा, काले राहु की भाँति आकाश की ओर कोई राक्षस चला आ रहा है। इन शिलाओं को देखने पर पहले इस प्रकार की ही कल्पना उन्होंने की। चौंक कर वे अपनी सुरक्षा की भी व्यवस्था करने लगे। उन्हें यह डर लगने लगा कि किसी भी समय ग्रहण लग सकता है।

56

वानर सेना आकाश में ऊपर उड़ती हुई बहुत बड़े-बड़े शिलाखण्डों को लाकर एकत्रित करने लगी। शिलाओं को ले-लेकर सभी वानर आने लगे। कोई तीन विशाल पत्थर एक साथ ले आया, तो कोई दो पत्थर उठा लाया। इस प्रकार अपनी-अपनी शक्ति एवं सामर्थ्य के आधार पर सभी वानर पत्थर लाने लगे। दूसरे कुछ वानर पांच अथवा छः शिलाएँ भी एक साथ लाने लगे। इस समय ऐसा प्रतीत होता था जैसे भगवान विष्णु का वाहन गरुड़ उनको अपने साथ लेकर आकाश में उड़ रहा हो। आकाश में सभी नक्षत्र तितर-बितर होने लगे। वानर योद्धा नक्षत्रों के समूह से भी टकराये। जब नक्षत्रों से पर्वत शिलाएँ टकरायीं तो वे सभी अपने स्थान से हटने लगे।

57

कुछ ऐसे वानरगण भी थे जो आकाश में छोटी-छोटी शिलाएं पकड़े हुए थे। यह उन्होंने जान बूझकर किया था। वे मार्ग में खेल करते आ रहे थे। उन छोटी शिलाओं का अपने हाथ में लेना वास्तव में उनके खिलवाड़ का ही एक संकेत था। जो वानर पृथ्वी पर खड़े थे, वे बड़ी-बड़ी शिलाओं को ऊपर उठा-उठाकर आकाश की ओर फेंक रहे थे, जैसे क्रीड़ा करते हुए वे कन्दुक उछाल रहे हों। कन्दुक-क्रीड़ा का यह कार्य वे बड़ी ही सरलता से कर रहे थे। उनको उसमें कोई कठिनाई नहीं हो रही थी। जो वानर आकाश में थे, वे ऊपर की ओर फेंकते हुए शिलाखण्डों को बड़ी ही कुशलता से अपने हाथों में लपक-लपक कर ले लेते थे। कभी भी फेंका गया वह प्रस्तर-खण्ड बिखर कर इधर-उधर नहीं हो पाता था। एक पर्वत श्रेणी वानर योद्धाओं को सरसों के बीज के सदृश छोटी एवं भारहीन लगती थी।

58

एक वानर तो इतना शक्तिशाली था कि उसका घोर रव एवं आकार सब कुछ बड़ा ही भयावह था। वह विचारों में बड़ा ही अभिमानी था। उसको अपनी शक्ति पर इतना विश्वास था कि किसी भी परिस्थिति में वह किसी की सहायता की अपेक्षा नहीं करता था। वह एक पर्वत के ढाल पर चला गया। जब उसने शिला को

उखाड फेंका तो ढाल पर खड़े सभी बड़े-बडे वृक्ष गिरकर अस्त-व्यस्त हो गये। वह विशाल पर्वत शिला भी टक्कर खाकर कई छोटे-छोटे टुकडों में बिखर गयी। इस प्रकार उस वानर ने अपनी अनुपम शक्ति का परिचय दिया।

59

उसके बाद उसी वानर ने एक बहुत बड़ी शिला को उठा लिया। यह बहुत विशाल एवं उंची थी। अपनी शक्ति का प्रदर्शन करते हुए उस वानर ने खिड़वाड़ करना प्रारम्भ किया। थोड़ी देर के लिए भी वह शान्त नहीं रह पाता था। वह पर्वत-शिला उसकी भुजाओं में क्रन्दन करती हुई सुन्दरी की भांति शोभित होती थी। ऐसा लगता था कि उसने अपनी शक्ति से उसे जबरदस्ती अपने पास खींच लिया और भुजाओं में भर लिया है। पर्वत के ढाल पर जितने भी सरोवर थे, उनका जल आन्दोलित होकर उसी प्रकार छलक रहा था, जैसे ऐसी विवश युवती के आँसू छलछलाते हुए बह रहे हों।

60

हंसों के जोड़े इस परिस्थिति को देखकर अत्यन्त दुःखी हो रहे थे। वे सारसों के जोड़ों के साथ ही साथ अत्यन्त भयभीत भी हो रहे थे। शब्द करते हुए भौंरों के समूह भी इधर-उधर पृथ्वी एवं आकाश के बीच जहाँ भी स्थान मिला, अपनी रक्षा के लिए उड़ गये। अन्य दूसरे पक्षी, जिनके छोटे-छोटे बच्चे भी थे, वे भ्रम में पड़कर शोर मचाने लगे तथा रोने चिल्लाने लगे।

61

प्रचंड वायु के तीव्र झोंके शब्द करते हुए गहन गंभीर गुफाओं में प्रवेश करने लगे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वायु की सांस की गति को वानर सेना ने पूरी तरह जकड़ लिया हो। घनघोर गर्जना और भीषण रव करते हुए बादलों के समूह इधर-उधर गतिशील होने लगे। ऐसा लग रहा था जैये ये बादल पर्वतों के वस्त्र हों और फट गये हों।

62

मणि, मोती, भाँति-भाँति के अमूल्य रत्न आदि पर्वतों के ढालों पर चमकते हुए बिखरे पड़े थे। कटि में बाँधने वाली मेखला की भाँति ये प्रकाश की किरणें बिखेर रहे थे। इनकी अनुपम शोभा थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे मणियों की मालाएं टूट-टूट कर बिखर गयी हों। आम्रवृक्षों की पंक्तियाँ वायु के झोंकों से झूम उठती थीं। वटवृक्ष भी वायु के झकोरों से हिलने लगे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे किसी सुन्दरी की केश राशि, जो

बहुत हां सुव्यवस्थित रुप में गूंथी ग़यी थी, ढीली होकर बिखर रही हो और उसके सौंदर्य की एक नई गरिमा प्रस्तुत कर रही हो। इसी प्रकार वायु के झकोरे वृक्षों की केश-राशियों को बिखरा भी रहे थे।

63

सेतु निर्माण के लिए जब वानर सेना को अपेक्षित मात्रा में शिलाखण्ड, प्रस्तर आदि आवश्यक सामग्री प्राप्त हो गयी तो वे शीघ्र ही लौटने को प्रस्तुत हो गये। पर्वत शिलाएं ले जाकर राम की सेवा में उन्होंने प्रस्तुत कर दीं। यह ऐसा लगता था जैसे वे राम की वन्दना कर रहे हों। वानरों ने सभी पर्वत शिलाओं के ढेर लगा दिये। पत्थरों के बड़े ढेरों को देखकर ऐसा लग रहा था जैसे वहाँ पर हिमालय पर्वत खड़ा हो गया हो। उसके पश्चात् शीतलता की कामना से सभी वानर पर्वतों के ढालों पर वृक्षों की सघन छाया में आराम करने बैठ गये।

अध्याय – 16

1

लायी गयी शिलाओं का निरीक्षण करने के लिए प्रसिद्ध शिल्पी विश्वकर्मा के सुपुत्र नल पहले से ही वहाँ उपस्थिति थे। वे चाह रहे थे कि सागर के ऊपर शिलाओं को तैराकर पुल बनाया जाय। वानर सेना में शिल्पी के रुप में वे ही सबसे कुशल निर्माणकर्ता माने जाते थे।

2

उनके निर्देश पर बड़े-बड़े शिलाखण्ड सागर में डाले गये। बड़े शिलाखण्डों को सबसे नीचे रक्खा गया। उसके पश्चात छोटी सी पहाड़ी उस पर प्रस्तुत की गयी। बाद में बड़े-बड़े दृढ़ पत्थर आदि भी लगाये गये। एक के ऊपर एक रखकर पत्थरों का ढेर-सा लगा दिया गया। उनका विधिवत संकलन व समायोजन किया गया था। उसके पश्चात उन पर मिट्टी डाली गयी जिससे समतल मार्ग बनने लगा। अन्त में बालू डालकर उसको एक समुचित मार्ग का रुप प्रदान किया गया।

3

मार्ग को सीधा करके, स्वच्छ, चौड़ा, समतल तथा पूर्णरुपेण आकर्षक बनाया गया। उसे देखने से ऐसा प्रतीत होता था, जैसे किसी ने विधिवत उसका निर्माण किया है। उसके दोनों ओर के किनारों के पास सुदृढ़ पत्थर लगाये गये थे, जो इन्द्रनील पर्वत की भाँति सुन्दर एवं चमकदार थे। वहाँ पर काले-काले सिकता कण चमक रहे थे। इस मार्ग को जानबूझ कर ही अति सुन्दर बनाया गया था। विजय की देवी इस सुन्दर मार्ग से होकर ही राम तक आने वाली थीं।

4

माप के आधार से उसको चौड़ा बनाया गया। यह चौडाई लगभग नौ योजन थी। जहाँ तक लम्बाई का प्रश्न है, वह दक्षिण दिशा की ओर जाती हुई पूर्ण रुप से सौ योजन थी। वह मार्ग बहुत ही सुदृढ़ एवं सुन्दर था। अपने स्थान से वह टस से मस भी नहीं हो सकता था। अपार आश्चर्य है कि नल ने अभूतपूर्व कौशल एवं निर्माण का अनूठा परिचय दिया। उनका कोई भी प्रयास व्यर्थ नहीं गया। उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। उन्होंने सागर पर एक सुदृढ़ सेतु बाँध कर लंका के लिए एक मार्ग प्रशस्त कर दिया।

5

जब उस सेतु का जो एक बहुत विशाल एवं अपूर्व सेतु था, निर्माण पूरा हो गया तो दशमुख रावण को

इसकी सूचना प्राप्त हुई। वह डर गया। उसका हृदय काँप उठा। उसने अपने मन में कल्पना की कि यह सागर बहुत ही भयानक चौड़ा एवं गहरा है। उस पर भी वानरों ने पुल बनाकर अपनी महान शिल्प-कला का अनूठा परिचय दिया है। उसे वानरों के कौशल का पता लग गया। वे सेतु बनाने में पूर्ण कुशल हैं।

6

राजा राम तथा उनके भाई लक्ष्मण ने इस महान कार्य की भूरि-भूरि प्रशंसा की। लक्ष्मण इस कृत्य से विशेष प्रभावित हुए। वानरराज सुग्रीव ने भी इस अनुपम शिल्पकला की खुलकर सराहना की। सभी वानर इस महान शिल्प-कला की प्रवीणता को देखकर मन ही मन नल की प्रशंसा कर रहे थे। उन्होंने वह महत्वपूर्ण निर्माण कार्य करते हुए नल को देखा था। इस शिल्प-कला का उदाहरण पूरे विश्व में दुर्लभ माना गया।

7

राम शीघ्र ही उठ कर खड़े हुए। उन्होंने अपने सभी प्रधान वानर योद्धाओं सहित सेतु के मार्ग से सागर को बड़ी ही सरलता से पार कर लिया। अन्य सभी वानरगण भी उसी मार्ग से उनके साथ चल दिये। कंधे से कंधा मिलाकर कई समूहों में शोर करती हुई वानर सेना आगे बढ़ रही थी। भीषण झंझावात का स्वर-सा गूंज रहा था। बड़े ही उत्साह एवं उल्लास से वे सिंहनाद कर रहे थे। बड़ी ही शक्ति से गंभीर गर्जना करते हुए वे आगे बढ़े चले जा रहे थे।

8

कुछ समय के पश्चात राम के साथ उनकी वानर सेना सेतु के माध्यम से सागर को पार कर बड़ी सरलता एवं सफलतापूर्वक दूसरे किनारे पर जा पहुंची। राम सुवेला पर्वत श्रेणी पर जाकर खड़े हो गये। वह पर्वत श्रेणी श्रीलंका के राजमहल से उत्तर की ओर थी। यह पर्वत श्रेणी अत्यन्त सुन्दर थी। इस पर बड़े-बड़े विशाल एवं सुन्दर वन थे, जो हृदय को बहुत ही आकर्षित करते थे। ऐसा प्रतीत होता था कि देवराज इन्द्र का नन्दन वन पृथ्वी पर आकर वहीं उपस्थित हो गया है। उन वनों का सौंदर्य नंदन-कानन के समान था।

9

मणि माणिक एवं मुक्ता आदि बहुमूल्य रत्न वहाँ पर दिखायी दे रहे थे। भाँति भाँति के बहुमूल्य पत्थर भी वहां थे। वे प्रकाश की किरणें बिखेर रहे थे। उस पर्वत का ढाल चाँदी का था। उससे श्वेत-कान्ति झलक रही थी। उस पर्वत श्रेणी का शिखर स्वर्ण का था। उससे स्वर्णिम आभा चारों ओर अपना प्रकाश बिखेर रही थी। वहां के सिकताकणों में मणियां एवं मोती बिखरे पड़े थे। ये ज्योतिपुंजों की भाँति जगमगा रहे थे। हृदय में

वे अनुपम आकर्षण भर रहे थे। वहाँ पर सुमेरु पर्वत की भाँति मणि–माणिक्य की प्रचुरता थी।

10

उस सुवेला शैल पर देवताओं का निवास था। गन्धर्व, अन्य अलौकिक प्राणी, अप्सराएँ आदि वहाँ पर विहार करते रहते थे। वहाँ किन्नर तथा किन्नरियाँ भी थीं जो सदैव ही बाँसुरी बजाती हुई नृत्य करती और गीत गाती रहती थीं। कुछ किन्नरों के हाथ में मधुर स्वरों वाली बाँसुरियाँ थीं। इस प्रकार सुवेला शैल स्वर्ग की शोभा के समान शोभित था।

11

उस पर्वत श्रेणी की गुफाएँ बहुत ही सुन्दर थीं। ऐसा लगता था, जैसे इन्द्र अपनी नृत्यांगनाओं को लेकर यहीं पर आनन्दोत्सव मनाते रहे होंगे। वहाँ पर विभिन्न बहुमूल्य पत्थर उपलब्ध थे। इनमें सूर्यकान्त मणि तथा अन्य बहुमूल्य मणियाँ प्राप्त थीं। इसी कारण से वहाँ पर प्रकाश–किरणें प्रतिक्षण बिखरी रहती थीं। पारदर्शी मणि, माणिक तथा चन्द्रकान्तमणियों के वहाँ बड़े–बड़े प्रस्तर खण्ड थे। वहाँ का भूमि–भाग बहुत ही समतल था। वह स्थान बहुत ही शीतल तथा सुन्दर था, इसीलिए देवतागण वहाँ पर सदैव निवास करते थे।

12

उसी समय गामलान वाद्य यंत्रों का स्वर आकाश में गूंजने लगा। काव्य का पाठ चारों ओर सुनायी देने लगा। वहां कुछ देवतागण ऐसे भी थे, जो हास–परिहास करते हुए परस्पर आनंद–रस ले रहे थे। कुछ लोग प्रेमालाप में संलग्न थे। प्रेमी–प्रेमिकाएँ प्रणयक्रीड़ा का रस ले रही थीं। सभी लोग चारों ओर घूम–घूमकर आनंदोल्लास मना रहे थे। सुवेला शैल पर आने वालों का मन वहाँ के वातावरण में प्रफुल्लित हो जाता था। उस शैल को देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे अमरावती ही स्वर्ग से उतर कर पृथ्वी पर आ गयी हो।

13

पूर्णता की दृष्टि से सागर अथवा हिमवान पर्वत ही सुवेला शैल के समान माना जा सकता था। उसमें मणि तथा माणिकों की खानें थीं। वहाँ पर त्रिधातुऐं भी उपलब्ध थीं। वहाँ उस प्रकार के पत्थर भी थे, जो अलकावती में पाये जाते थे। इनमें तथा उस पत्थर में कोई विशेष अन्तर नहीं था। मानव मात्र की जितनी अभिलाषाएँ एवं आक्राक्षाएँ संभव हो सकती हैं, सभी की पूर्ति का साधन वहाँ पर था। यह स्थान आशाओं की सुन्दर मणि के समान था। यदि काम देवता का राजमहल भी पृथ्वी पर उतर कर आ जाय तो यह शैलमाला अपने सौंदर्य में उसके समक्ष भी अनुपम ही रहेगी। उससे यह किसी प्रकार भी कम नहीं रहेगी।

14

जब श्री राम उस सुन्दर शैल पर चढ़े तो उन्हें अपार प्रसन्नता हुई। उन्होंने वहाँ पर बहुत ही आकर्षक वनस्पतियों को देखा। भाँति भाँति की सुन्दर बेलें वृक्षों से लिपटी हुई थीं। वे पूर्णतः हरित तथा शीतल दिखायी दे रही थीं। वृक्षराजियाँ छायादार एवं आकर्षक थीं। उन पर सुन्दर पके हुए फलों के गुच्छे लटक रहे थे। बहुत से फल बड़ी संख्या में गदराये हुए थे। सुन्दर-सुन्दर पुष्प खिल रहे थे। उनमें से कुछ गिर कर पृथ्वी पर भी बिखरे हुए थे।

15

सुन्दर मन्दार वृक्ष पर अगणित पुष्प खिल रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे स्वयं मन्दार वृक्ष इस शैल की शोभा बढ़ा रहा हो। मन्द-मन्द सुगन्धित पवन बह रहा था। पवन-स्पर्श से वृक्ष के पत्ते धीरे-धीरे हिल रहे थे मानो वे मस्ती में झूम रहे हों। वायु की मन्द गति का उन पर पूरा प्रभाव पड़ रहा था। वे इतने धीरे-धीरे हिल रहे थे जैसे श्री राम का स्वागत करने के लिए आगे बढ़ रहे हों। भौंरे मदमस्त होकर सुगन्धि का रस लेते हुए गुंजार कर रहे थे। ऐसा लग रहा था मानो वे राम से यह कह रहे हों कि हे राम ! आपका इस सुवैला शैल पर हार्दिक स्वागत है।

16

चन्दन के सुगन्धित वृक्ष अपनी सुगन्धि को वातावरण में बिखेर रहे थे। उनकी सुगन्धि बड़ी ही शुचि एवं मनमोहक थी। कुछ वृक्ष बहुत ही पुराने हो गये थे। उनमें से कुछ तो धराशायी भी हो गये थे। कुछ वृक्ष कठोर शाखाओं के भी थे। अकस्मात ही इनमें से कुछ वृक्ष सूर्यकान्तमणियों पर भी गिरने लगे। वहाँ पर मणियाँ सदैव ही प्रकाश-किरणें बिखेरती रहती थीं। वे सुवैला शैल का पूरा श्रृंगार करती-सी प्रतीत हो रही थीं।

17

कर्पूर के वृक्ष से अत्यधिक सुगन्धि फैल रही थी। उसकी छाल पर श्वेत धब्बे से प्रतीत हो रहे थे। उनका गोंद भी दृष्टिगोचर हो रहा था। सूर्यकान्त मणि के पत्थरों पर वृक्षों से यह गोंद टपक रहा था तथा उन्हें समतल बना रहा था। उसका धूम्र धूप-दीप की भाँति था, जो विपरीत दिशाओं में उड़ रहा था।

18

कारकोलक तथा मधूक वृक्ष एक साथ ही मिलकर फल दे रहे थे। लवंग के पुष्प भी वहाँ अत्यन्त सुन्दर

रुप में विकसित हो रहे थे। उनका सौंदर्य मनमोहक था। उनकी सुगन्धि भिन्न-भिन्न मार्गों से होकर सभी दिशाओं को आकर्षक बना रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे राम का स्वागत करने के लिए वृक्ष अपने पुष्पों की सुगन्धि बिखेर कर वातावरण को सुवासित कर रहे हों।

19

सुवेला पर्वत के ढाल पर विशाल एवं निर्मल जल का सरोवर था। वह जल बहुत स्वच्छ एवं पेय था। उसको देखकर अपार प्रसन्नता होती थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे सरोवर स्वयं लोगों को निर्मल जल पीने का आमंत्रण दे रहा हो। श्वेत कुमुद पुष्पों की कलियाँ विकसित होकर पुष्पों का रुप प्राप्त कर चुकी थीं। वे बहुत बड़ी संख्या में थीं। लगता था वे जानबूझ कर जगह-जगह एकत्रित हो गयी हैं। ऐसा संकेत मिल रहा था, जैसे ये सभी पुष्प राम का सादर अभिनंदन करने के लिए वहाँ प्रस्तुत किये गये हैं।

20

वड़ी-बड़ी मछलियाँ चारो ओर चक्राकार आनन्दपूर्वक घूम रही थीं और विहार कर रहीं थीं। उनके शरीर के ऊपर की खाल का वर्ण हरित था, जो अत्यन्त सुन्दर था। हरित मणियों की भाँति वे चमक रही थीं। उस सुन्दर वातावरण में कलरव करते हुए हंस आनंद-विहार कर रहे थे। उनके स्वरों से ऐसा आभास हो रहा था मानो वे कामना कर रहे हों कि श्री राम इस स्थान पर बहुत समय तक निवास करते रहें।

21

उस सरोवर के तट पर बहुत से ताड़वृक्ष भी थे। उनकी राजियाँ क्रमबद्ध एवं सुव्यवस्थित थीं। उन पर बहुत से फल लटक रहे थे। कुछ फल इस प्रकार पृथ्वी पर गिर रहे थे जैसे ताड़पत्रों से फल तोड़-तोड़ कर कोई पृथ्वी पर गिरा रहा हो। उनका आघात उन हाथियों को लग रहा था, जो उनके नीचे खड़े थे। इस प्रकार मानो वे अपना क्रोध उन वन्य-गजों के प्रति प्रकट कर रहे थे, जो बड़ी संख्या में वहाँ पर सरोवर में स्नान के लिए आते थे। तालाब में खिलने वाले सभी कमल पुष्पों को वे गज जल-विहार करते हुए नष्ट-भ्रष्ट कर देते थे। विकसित होते हुए पुष्पों को तो वे सदैव ही तोड़ डालते थे।

22

सुवेला शैल की शोभा देखने के लिए श्रीराम उसके शिखर पर जाकर खडे हो गये। वहाँ भी अनेक सुन्दर वृक्षों की पंक्तियाँ दिखायी दे रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था मानो वे वृक्ष परस्पर वार्तालाप कर रहे हों और कह रहे हों कि उनके आकर्षण के ही कारण राजाराम इस मनोहर स्थान तक आये हैं। वे सभी वृक्ष एक ही साथ

पुष्पित हो रहे थे। इस प्रकार पुष्पों को धारण किये हुए वे वृक्ष सुवेला पर्वत के शिखरों पर शोभा पा रहे थे।

23

भाँति-भाँति के सभी पुष्पों की शोभा अनुपम थी। बसन्त ऋतु की प्रेमिकाओं सदृश ये पुष्प मानो अपने प्रिय ऋतुराज के आगमन से हर्षित होकर विकसित हो रहे हों।

24

सुन्दर फलवाले असंख्य वृक्ष उस पर्वत श्रेणी पर खड़े थे। उनके साथ ही साथ अनार के वृक्ष भी पुष्पित हो रहे थे। कावेनी वृक्ष पर फूल खिल रहे थे। उनको देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे अग्नि के अंगार लाल पुष्पों के रुप में खिल रहे हों। वास्तव में ये फूल कामाग्नि की भाँति ही थे। फूलों की लालिमा विरहियों के हृदय को विदग्ध करती हुई उन्हें अपार कष्ट दे रही थी। इस वातावरण का प्रभाव अद्‌भुत था। प्रेमी और प्रेमिका के लिए इच्छा पूर्ति का सबसे सुन्दर अवसर यह वातावरण प्रस्तुत कर रहा था, इसीलिए उनके शरीर में काम की अग्निज्वाला जल रही थीं।

25

काम देवता का एक मात्र कार्य ही सारे संसार को विरहाग्नि में झुलसाना है। वे तुरन्त ही अपना पुष्प-धनुष धारण करते हैं। उसको खींच कर लक्ष्य-वेध करने के लिए बाण को प्रत्यंचा पर चढ़ाकर तैयार हो जाते हैं। जो भी उनका लक्ष्य बनता है अथवा जिस पर वे उन बाणों से प्रहार करते हैं, वह प्रेम-सिक्त हो उठता है और विछोह की पीड़ा में जलने लगता है। काम के बाण उन्हीं के हृदय को बेधते हैं, इसलिए वे उन बाणों से बहुत ही भयभीत रहते हैं। काम के बाण निष्फल नहीं जाते, वे निश्चय ही अपने लक्ष्य को वेध कर ही रहते हैं। उनके बाण भी पुष्प ही थे। वे सुन्दर सुमन जो अभी अधखिली कली के ही रुप में विकसित हो रहे थे, प्रेमियों के हृदय को घायल करने में संलग्न थे।

26

स्थान-स्थान पर पत्थरों के किनारों से जल की धाराएँ फूट रही थीं और बहुत शीतल जल के रुप में प्रवाहित हो रही थीं। यह जल बहुत ही स्वच्छ एवं निर्मल था। यह जल स्फटिक की भाँति पारदर्शी होने के कारण चमक रहा था। अकस्मात ही यह शीतल जल गर्म होकर प्रवाहित होने लगा। उसके स्पर्श से उष्णता का अनुभव हो रहा था। इसका दाह उन लोगों को अनुभव हो रहा था जो अपनी प्रेमिकाओं के वियोग में विरही का जीवन व्यतीत कर रहे थे।

27

इस प्रकार विरहीजन उस सुन्दर वातावरण में अत्यन्त दुःखी थे। अपनी प्रेमिकाओं से संयोग के अतिरिक्त उनके प्रेम रोग का अन्य कोई उपचार ही नहीं था। केवल प्रियतमा मिलन ही एक औषधि थी, जो उन्हें अप्राप्य थी। सभी विरहियों की एक सी ही दशा हो रही थी। वे सभी समान रुप से दुःखी थे। कामदेव के पुष्प-बाणों से घायल होकर वे मूर्च्छित हो रहे थे।

28

स्वस्थ विचार एवं वास्तविक जीवन का उनके लिए कोई अर्थ ही नहीं था। इन व्यथित-हृदय प्रेमियों को इनसे कोई मतलब ही नहीं रह गया था। उनके हृदय वियोग से अत्यन्त दुःखी थे। वे सभी विरही जैसे वियोगावस्था में थे। विरह-व्यथा से राम का हृदय भी अत्यन्त दुःखी एवं व्याकुल था। उनके विचारों में भी अनेक भावनाएं उत्पन्न हो रही थीं। वे दुःखी हो उठे थे। कुछ समय तक वे शान्त भाव से वहीं बैठे रहे।

29

सुवेला शैल अत्यधिक सुन्दर एवं आकर्षक था। उसकी रमणीयता में किसी प्रकार की मलिनता नहीं थी। स्पष्ट ही वह शैलमाला सौंदर्य का आगार थी। राम के मुख से स्वतः ही शैल की प्रशंसा के शब्द फूट पड़े। इसी सौंदर्य का अनुभव राम ने भी किया। सुंदरता के इस वातावरण में ऐसा प्रतीत हो रहा, जैसे कामदेव का उपवन इस पृथ्वी पर ही उतर कर आ गया है। प्रेमीजनों के हृदय को यह अपार कष्ट पहुंचा रहा था। जिनका अपनी प्रेमिकाओं से विछोह हो गया था अथवा जिनकी प्रेमिकाएँ उन्हें छोड़कर अन्यत्र चली गयी थीं, वे सभी लोग इससे अत्यंत दुखी थे। इस प्रकार एक भीषण विरह की अनुभूति हो रही थी। राम के हृदय में भी बार-बार सीता के संबंध में मधुर भाव उठ रहे थे।

30

उस शैलमाला की झीलें भी बहुत अधिक गहरी नहीं थीं। वज्र पुष्प वहाँ पर अपना प्रकाश बिखेर रहे थे। उनके तटों पर अनेक पुष्प खिल रहे थे। इन झीलों के तटों पर ही युवक तथा युवतियाँ प्रेमातिरेक के साथ आनंदपूर्वक रात्रि व्यतीत करते थे। वहाँ पर पुष्पों की सुगन्धि बिखर रही थी। वृक्षों पर फल-फूल लदे हुए थे। सरोवर एवं झीलें स्वच्छ तथा निर्मल जल के कारण ऐसी सुशोभित हो रही थीं जैसे नीला एवं स्वच्छ आकाश निर्मलता के कारण शोभा पाता है। उनमें श्वेत कूर्म विहार कर रहे थे। उनकी उपमा आकाश के चन्द्रमा से दी जा सकती है। गोलाई एवं श्वेतवर्ण के कारण वे समान-से दीख रहे थे। वहाँ पर पुष्पों की भाँति नक्षत्र भी आकाश में बिखरे हुए थे। पुष्प-पराग एवं धूलि के कण बादलों के रुप में आकाश पर शोभा पा रहे थे।

32

पुष्पों की सुग्रधि सम्पूर्ण वातावरण को सुवासित कर रही थी। ये पुष्प निरन्तर खिलते ही रहते थे। मन्द-मन्द वायु के शीतल झकोरों से धीरे-धीरे वे हिल रहे थे। गुन-गुन गुंजार करते हुए भ्रमर आनंदमग्न होकर उन पुष्पों के पास सुगन्धि तथा रस लेने के लिए आ रहे थे। इस सुन्दर वातावरण को देखकर राम के हृदय में विरह-व्यथा जाग गयी।

33

रमणीय पुष्प, वृक्षों पर सुशोभित होकर, अपनी सुगन्धि से सम्पूर्ण वातावरण को मधुर बना रहे थे। लताएं वृक्षों पर चढ़ रही थीं। वहाँ पर पदालि वृक्षों से लताएँ इस प्रकार लिपटी हुई थीं जैसे वृक्षों से वे गले मिल रही हों। वृक्ष से वल्लरियों का यह मिलन उसी प्रकार था जैसे प्रेमिका प्रेमोन्मत्त होकर अपने प्रेमी के गले में बाहुपाश डाल कर उससे मिल रही हो।

34

हरी-पीली, सुन्दर वल्लरियाँ वृक्षों पर चढ़ रही थीं। उन्होंने पदालि वृक्ष को चारों ओर अपने घेरे में डाल कर ढक लिया था। उनके बहुत से पुष्प पृथ्वी पर गिर कर बिखर रहे थे।

35

जब विरहीजन काम-फल की ओर दृष्टि डालते थे, तो उनकी दशा और शोचनीय हो जाती थी। हिलते-डुलते हुए वृक्ष परस्पर प्रेम-केलि में डूबे से दिखायी दे रहे थे तथा प्रेमालाप-सा कर रहे थे। भौंरे पुष्पों पर मंडरा रहे थे और उनका रस ले रहे थे। कभी-कभी इन भौंरों को देखकर ऐसा प्रतीत होता था मानो व अपनी प्रेमिका सदृश फूलों को छोड़कर शीघ्र ही भागने का बहाना बना रहे हों। कुछ ही पल में वे फूलों पर लौट आते थे मानो वे प्यार में निमग्न होना चाह रहे हों।

36

मालती के पुष्प विकसित हो रहे थे। इस प्रकार बहुत से पुष्प खिल-खिल कर सौरभ बिखेर रहे थे। सभी अधखिले फूल शनैः शनैः खिल रहे थे। उन्हीं पुष्पों के गुच्छों में आनंद मग्न होकर भौरें विश्राम कर रहे थे। इस मधुर दृश्य को देखकर राम का हृदय वियोग से और भी भारी एवं दुःखी हो रहा था। गुंजार करते हुए भौंरें गुन-गुन करते हुए मानो विरह की गाथा गा रहे हों। इस प्रकार मधुकर-पुंज राम को और विरह-व्यथा

का गहरा अनुभव करा रहे थे।

37

सुन्दर-सुन्दर वृक्षों में नयी-नयी कोपलें फूट रही थीं तथा पत्ते भी भली भाँति उग रहे थे। उन पर सुन्दर फूल खिले हुए थे। इनका आकर्षण मनमोहक था। फूलों के सुवासित गुच्छे भी सुशोभित हो रहे थे। उन पुष्पों में लाल-लाल रंग के भी फूल थे। कुछ अन्य पुष्प श्वेत थे। बहुत से पांडाकाकी पुष्प वृंगाकारी पुष्पों से मिल कर एक अनुपम छवि विखेर रहे थे। उनको देखकर उन पर वड़ी दया भी आती थी। उस सौंदर्य के कारण वहाँ पर वहुत से भ्रमर आ जाते थे। वे पुष्पों के प्रेम में बंध जाते थे। मधुपान में वे मस्त हो जाते थे ।

38

तेज वृक्ष की पत्तियाँ ताम्रपत्र की भाँति थीं। लगता था जैसे उन्हें स्वच्छ करके चमकाया गया हो। उसकी शाखाओं पर भाँति-भाँति के पक्षी विश्राम कर रहे थे। कुछ पक्षी वड़ी ही कठिनाई का भी अनुभव कर रहे थे। इतना होने पर भी सभी पक्षी आनंद एवं उल्लास में डूबे हुए थे। वे वहुत ही उत्साह से अपनी प्रसन्नता व्यक्त करते हुए परस्पर हास-परिहास कर रहे थे। वृक्षों की शाखाओं पर ही उन्होंने अपने घोंसले भी बना रक्खे थे। वे शब्द करते हुए शोर मचा रहे थे। वैओ पक्षी मैना चिड़िया के साथ मिलकर कलरव कर रहे थे। वे वोलने में बहुत ही पटु थे तथा मधुर स्वरों में वोलते थे।

39

सुवेला शैल के ढाल पर शोभित सभी वृक्ष सुन्दर तनों वाले तथा अच्छी लकड़ी वाले थे। उन में सुपारी (पुंगीफल) तथा ताड़ के वृक्ष थे। इनके अतिरिक्त भी फल वाले अनेक वृक्ष थे। फल देने के लिए उनमें फूल आ गये थे। पायांगू वृक्ष फूलों से लदा हुआ था। वह वहुत ही आकर्षक एवं सुन्दर था। वहाँ पर ऊंचे-ऊंचे क्षेत्र भी थे। वे सदैव ही हरियाली से युक्त दिखायी देते थे। वहाँ के पौधे कभी भी मुरझाते नहीं थे। उनके फूल स्वच्छ एवं सुन्दर थे। इनमें से जो श्वेत वर्ण के थे, वे ऐसे प्रतीत हो रहे थे जैसे हर्षोल्लास से हास परिहास करते हुए खिलखिला कर हंस रहे हों। हंसी के कारण ही मानो उनकी श्वेत दन्तपंक्ति स्पष्ट दिखायी दे रही हो।

40

वहाँ हरे-हरे कोमल वेणुवन वायु के झकोरों से हिलते हुए झूम रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे श्री राम का अभिनन्दन कर उनकी वन्दना कर रहे हों, इसीलिए वे अपना मस्तक झुकाये हुए थे। वृक्षों की शाखाएँ उनके हाथ सदृश थीं। लगता था जैसे वन्दना के लिए वे देवांजलि दे रहे हों। वृक्षों के सूखे पत्ते गिर-गिर कर

वायु के झकोरों से आकाश की ओर उड़ रहे थे। वे भारहीन थे। वृक्षों के सूखे पत्ते चारों ओर उड़-उड़ कर बिखर रहे थे। स्थान-स्थान पर उनकी छाया-सी पड़ती दिखायी दे रही थी।

41

राम अपनी वानर सेना के साथ सुवेला शैल के शिखर पर आकर खड़े हो गये। सभी वानर वहाँ आकर उल्लासमय वातावरण के कारण आनंदमग्न हो गये। वे हर्षनाद करते हुए शोर करने लगे। यह शोर ऐसा लगने लगा कि मानो सहस्त्रों सिंह एक साथ मिलकर दहाड़ रहे हों। वानर सेना बड़े ही आक्रमक रूप में पर्वतमाला पर खड़ी थी।

42

सभी वानर एक साथ गुरु गंभीर गर्जना करने लगे। इस प्रकार पर्वत शिखर पर भयानक एवं भीषण रव सुनाई दे रहा था। सभी पक्षी उस शोर एवं भीषण रव को सुनकर चौंक-चौंक कर इधर उधर उड़ने लगे। इसी प्रकार सभी जीव-जन्तु भी उस भयानक शब्द को सुनकर अपने प्राणों की रक्षा के लिए इधर-उधर भागने लगे।

43

सुवेला शैल पर बड़े-बड़े सुन्दर वृक्षों की पंक्तियाँ थीं। उन पर पके फल पूरी तरह से लदे हुए थे। वानर सेना ने पूर्ण तृप्ति से उन फलों का आहार किया। वे आनंदमग्न हो गये। यह सभी वृक्ष उन सज्जन पुरुषों की भाँति थे, जिन्होंने दूसरों के कल्याणार्थ सुवर्ण तथा मणियाँ एकत्रित कर ली थीं। उन्होंने अपने फलों को प्रस्तुत किया और दूसरों को आहार दिया। सज्जनों की भाँति ही उन्होंने भी दूसरों की आवश्यकताओं की पूर्ति का प्रयास किया था। वास्तव में वृक्ष अपने फलों को स्वयं नहीं खाते। वे सदैव दूसरों के लिए ही फल पैदा करते हैं। इसी प्रकार सज्जनों का जीवन भी दूसरों के हित के लिए ही समर्पित होता है।

अध्याय – 17

1

राजा दशमुख के हृदय में सीता के प्रति अपार आकर्षण था। इसीलिए उसका हृदय विरह व्यथा से उद्विग्न हो रहा था। उसके हृदय के इस कष्ट की कोई अन्य औषधि भी नहीं थी। उसके हृदय में सीता को प्राप्त करने की कल्पना सदैव ही जागृत रहती थी। उसको अपार कष्ट का अनुभव हो रहा था, जिससे उसका मन दुःखी होकर निराशा का आगार बन गया था। इस दुःख के असह्य होने के कारण वह अपना प्राण देने को भी उद्यत था। सीता को प्राप्त करने की इतनी उत्कट अभिलाषा उसके हृदय में थी।

2

उसने भोजन करना भी छोड़ दिया। रात्रि के समय उसको नींद भी नहीं आती थी। दुःखी होकर वह अपनी व्यथा का वर्णन करता रहता था। वह घबराया हुआ-सा रहता था। उसके हृदय में निराशा और दुःख का वास था। उसे कुछ भी सुहाता नहीं था। वह रात-दिन सीता का ही स्मरण कर दुःखी होता रहता था। हा ! यह प्रेम कितना कष्टदायक है जो हृदय को अपार पीड़ा पहुंचाता है। यह प्रेम उस विष की भाँति उसके शरीर में प्रवेश कर गया था जिससे मुक्त हो सकना संभव नहीं था।

3

अपने शरीर को वस्त्राभूषणों से वह सुसज्जित करता था। मणियाँ एवं रत्न आदि वह धारण करता था। राजाओं की भाँति पूरी तरह सज-धज कर रावण सदैव सुशोभित रहता था। उसकी धोती अथवा लुंगी उत्तम प्रकार की थी तथा सुगंधियुक्त थी। उस लुंगी पर सुवर्ण की कढ़ाई से साज-सज्जा की गयी थी। वह सुन्दर अंगूठी धारण करता था। उसके नेत्रों से तेज एवं प्रकाश की किरणें फूट रहीं थीं। शरीर पर वह जो मणि-माणिक धारण किये हुए था, वे चमचमाते रहते थे। उसने ऐसा सुन्दर वेष बना रक्खा था कि कोई भी युवती उसके प्रति सहज में ही आकर्षित हो सकती थी। रुप के साथ ही उसने अपने व्यवहार में भी मृदुता का समावेश किया था।

4

उसने सीता को छलछद्म से अपनी ओर आकर्षित करने का सभी संभव प्रयत्न किया। रावण की सेना के प्रवीरों ने राम और लक्ष्मण के मस्तकों के सदृश दो मस्तक रावण को भेंट किये। लाने वाले उन राक्षसों का रुप भयानक था। रावण ने उन्हें सीता के समक्ष रखवाया। बाद में रावण की परिचारिकाओं ने भी सुन्दर-सुन्दर स्वर्णिम वस्त्राभूषणों को वहाँ प्रस्तुत किया।

इस प्रकार रावण विचित्र–विचित्र प्रकार के व्यवहार कर रहा था। वह सीता पर विपत्तियों का पर्वत गिराना चाहता था। वास्तव में सीता ने रावण को कभी भी स्वीकार नहीं किया। इसीलिए रावण की बुद्धि में भाँति–भाँति के भ्रम उत्पन्न होते गये थे। वह सीता को अत्यधिक चाहता था और उनको पाने का अभिलाषी था। इसीलिए वह भाँति–भाँति के प्रयत्न करता रहा।

6

वह शीघ्र ही अशोक वाटिका में आकर उपस्थित हो गया। उसके मन में किसी प्रकार की शंका नहीं थी। उसने सीता को प्राप्त करने का दृढ़ निश्चय कर लिया था। सीता के विषय में वह रात–दिन यही सोचता रहता था कि उन्हें किस प्रकार वह अपने वश में कर ले। अब उसने सीता को छलने का यह नवीन उपाय सोचा। उनको राम–लक्ष्मण के कटे मस्तक दिखाते हुए उसने कहा कि वे दोनों अब युद्ध में मारे जा चुके हैं। इन शब्दों के साथ ही रावण सीता से चाटुकारितापूर्ण मधुर वचन भी बोलने लगा तथा उन्हें वह फुसलाने लगा, निकट आने के लिए सीता को वह विवश भी करने लगा।

7

हे सीता ! इस मस्तक को देखो। क्या यह राम का मस्तक नहीं है ? और यह लक्ष्मण का सिर है। अव उन दोनों का वध किया जा चुका है। अव तुम्हें किसी प्रकार का हठ नहीं करना चाहिए। अब तुम किसकी प्रतीक्षा कर रही हो ? तुम्हें तो अव निस्संकोच मेरा वरण कर लेना चाहिए।

8

तुम सदैव राम की शक्ति की प्रशंसा करती रहती हो। तुम्हारी दृष्टि में उनके समकक्ष इस जगत में किसी को नहीं रक्खा जा सकता। मुझे तो ऐसा लगता है कि उनके समान डरने वाला शायद ही कोई व्यक्ति रहा हो। वह व्यक्ति हीन एवं साधारण कोटि का था। उसमें संघर्ष करने की शक्ति का सर्वथा अभाव था। कलाडी वृक्ष की पत्तियाँ अथवा बल्लरी के पात यदि हंसिए से काटे जायं, तो वे भी अधिक शक्तिशाली प्रतीत होंगे। राम में तो इतनी भी शक्ति नहीं थी। वे तो तरल पदार्थ की भाँति थे। इस कोटि में ही राम तथा लक्ष्मण दोनों को रक्खा जा सकता है।

9

हे सीते ! इसीलिए मैं तुम्हें यह बताना चाहता हूं कि अपने हृदय को शान्त करो। जो शब्द मैंने अभी तुमसे प्रेमपूर्वक कहे हैं, उन पर पूरा ध्यान दो। वास्तव में इस जगत में मुझसे बढ़कर अधिक वैभवशाली कोई भी नहीं है। अब तो राम का प्राणान्त हो चुका है, अतएव अब डरने की भी जरुरत नहीं है।

10

मैं एक महान सम्राट हूं। मैंने सम्पूर्ण विश्व पर विजय प्राप्त की है। मैं पूर्ण रुप से स्वस्थ एवं सुन्दर हूं। मैं वैभवशाली भी हूं। मैं तुमसे अत्यन्त प्यार करता हूं। हे सीते ! तुम मेरे ऊपर अपना पूर्ण आधिपत्य स्थापित कर लो। मैं स्वयं तुम्हें अपने मित्र के रुप में देखने का अभिलाषी हूं। इस प्रकार तुम्हारा जीवन आनंदपूर्वक व्यतीत हो सकेगा। तुम्हारा जीवन मेरे लिए पूज्य होगा।

11

तुम्हें भली–भाँति विदित है कि देवराज इन्द्र भी मेरे आधिपत्य को स्वीकार करते हैं। बड़े–बड़े महान शक्तिशाली सम्राट भी मेरे समक्ष नत–मस्तक हैं। मैं अन्य किसी को इतना महत्व नहीं दे सका जितना तुम्हें दे रहा हूं। तुमने मुझे नहीं अपनाया तो मुझे हार्दिक दुख होगा। यदि मैं तुम्हारा प्रेम पा सका तो इस जगत में मेरी सबसे अधिक प्रतिष्ठा होगी। इस विषय में मैंने अपनी धारणा स्पष्ट कर दी है।

12

अतः, हे सीते ! तुम मेरे सभी वचनों पर ध्यान देकर उन्हें पूरा करो। मैं तुम्हें विश्वास दिलाता हूं कि देवराज इन्द्र की पत्नी इन्द्राणी (शची) भी तुम्हारे समक्ष उपस्थित होकर तुम्हारी सेवा करने में अपार गौरव का अनुभव करेंगी। सभी अलौकिक सौंदर्यमयी विद्याधरियाँ एवं अप्सराएँ तुम्हारे समक्ष अपनी कुशलता का पूरा परिचय देने के लिए सदैव ही प्रस्तुत रहेंगी। तुम्हारे लिए अपनी हस्तकला की वस्तुएं भी भेंट करने में वे प्रसन्नता का अनुभव करेंगी।

13

हे सुन्दरी ! यदि तुम्हें राजा जनक का भय है और तुम सोचती हो कि मुझे वरण कर लेने से उन्हें अप्रसन्नता होगी, तो इसकी चिन्ता भी तुम मत करो। तुम जब भी चाहो मिथिलापुरी जा सकती हो। मेरे पास सुन्दर आकर्षक वस्त्र एवं बहुमूल्य मणि–माणिक भी हैं, तुम उनको भेंट में दे सकती हो। उन्हें देने के लिए जो भी उपहार तुम उनके योग्य समझती हो, मैं उन सभी की व्यवस्था कर दूंगा। जब भी तुम्हारी अभिलाषा हो, तुम्हारे लिए सभी संभव उपहार प्रस्तुत किये जायेंगे। वे सब तुम्हारी इच्छानुसार ही होंगे।

14

तुम्हारी सेवा में रथ आदि वाहन भी उपस्थित हैं। तुम उनको उत्तम से उत्तम वाहन भेंट कर सकती हो अथवा उनकी भेंट के लिए गज, महिष, अश्व, गधे आदि अन्य वाहन भी अपने साथ ले जा सकती हो। वन्य पशु जैसे चीता, गैंडा अथवा सिंहों को पिंजरस्थित करके मिथिलापुरी ले जाना चाहो तो उसकी व्यवस्था भी हो सकती है। जिन पशुओं के लिए बड़े पिंजर की आवश्यकता हो, उनके लिए बड़े से बड़े पिंजर भी तैयार हैं। उनमें उन्हें रखकर सरलतापूर्वक वहाँ ले जाया जा सकता है।

15

भाँति-भाँति की सुन्दर एवं विशाल मछलियाँ भी यहाँ हैं। उनमें भयानक आकृति वाली आक्रामक मछलियाँ, बधिर मछलियाँ, अष्टभुज, हाँगर और सूंस मछलियाँ, गजाकृति, विशालकाय आदि अनेक प्रकार की मछलियां भी हैं। इन्हें तुम राजा को भेंट में दे सकती हो। इस विषय में केवल तुम संकेत मात्र दे दो। बस। सभी प्रकार की मछलियाँ पकड़कर शीघ्र ही भेंट के लिए तुम्हारे समक्ष प्रस्तुत की जा सकती हैं।

16

यदि भाँति-भाँति के ये उपहार भी रुचिकर न हों, तो मुझे शीघ्र ही बतलाइये। मैं इस अभाव को तुरन्त दूर कर दूंगा। मैं जल के देवता वरुण को आदेश दे दूंगा। तुमको इस संबंध में चिन्तित होने की आवश्यकता नहीं है। वरुण शीघ्र ही सागर तल की सम्पूर्ण वस्तुएँ मेरी आज्ञा से तुम्हारी सेवा में उपलब्ध करा देंगे। तुम अपने साथ उन्हें उपहार के रुप में मिथिलापुरी ले जा सकती हो।

17

इसी प्रकार महान वनों में जो अपार सम्पदा है वह सभी तुम्हारी सेवा में प्रस्तुत की जा सकती है। जो पक्षी तुम्हें सुन्दर लगे अथवा सभी वन्य पशु, जो जंगलों में विहार करते हैं, उनको पकड़ कर तुम्हारे समक्ष लाया जायेगा। इस कार्य के लिए मैं देवताओं को आदेश दूंगा। वे मेरी आज्ञानुसार इच्छित वस्तुओं को शीघ्र ही यहाँ ले आयेंगे। उन सबको तुम अपने साथ ले जा सकोगी। अतएव जो भी संकेत हो, उसी के आधार पर सेवा करने के लिए मैं सदैव ही प्रस्तुत हूं।

18

हे सीते ! पक्षियों में सबसे विशाल पक्षी गरुड़ की यदि आपको अभिलाषा हो, तो उसे पकड़कर अभी ही पिंजर स्थित कर दिया जाय, ताकि वह वहीं पर रहे। इनकी अपेक्षा नाग आदि भी हैं, जिनको टोकरियों में बन्द किया जा सकता है। मेरे पास नन्दन-वन का महान वृक्ष पारिजात भी है, जिसको बड़े टोकरे में रख कर ले जाया जा सकता है।

19

स्वर्ण-पुष्पों की भी यहाँ कोई कमी नहीं है। ऐसे पेड़ पौधे हैं, जिनमें सहस्रों भाँति के पुष्प खिलते रहते हैं। इन सभी सुन्दर पुष्पों को आप अपने साथ उपहारस्वरुप ले जाइए तथा राजा जनक की सेवा में अर्पित कीजिए। ये पुष्प अत्यन्त सुन्दर हैं। मेरी समझ से यह भी उचित होगा कि आप सुन्दर फलों को भी ले जाइए। ये सभी फल देवलोक से लाये गये हैं। अब आपको रावण से किसी प्रकार का भय नहीं होना चाहिए। मैं आपकी सेवा में सदैव ही उपस्थित हूं।

20

हे सुन्दरी सीते ! वास्तव में मैं आपके प्रति बहुत आकर्षित हूं। मैं आपसे अत्यधिक प्रेम करता हूं अतएव आप मेरी इस अवस्था को देखकर मेरे ऊपर दया की दृष्टि डालिए। मैं प्रेम से व्यथित हूं। रावण मात्र ही मेरा अस्तित्व नहीं है वरन मैं उससे भी कुछ अधिक हूं। अपनी सम्पूर्ण आत्मा से मैं आपकी पूजा करता हूं। यदि आप मेरी ओर ध्यान देकर मेरे वचनों को न सुनेंगी, मुझे उपेक्षा की दृष्टि से देखेंगी तो मेरे लिए उचित होगा कि मैं अपने प्राण का अन्त कर दूं।

21

इस प्रकार रावण सीता को अपनी ओर आकर्षित करने के लिए भाँति-भाँति के प्रलोभन दे रहा था तथा उन्हें आश्वस्त करने में लगा हुआ था। वह सीता का प्यार पाना चाहता था। इसी दिशा में रावण की सम्पूर्ण अभिलाषाएं एवं इन्छाएँ केन्द्रित थीं। वह सीता को पाने की तीव्र आकांक्षा रखता था। यहाँ तक कि वह लंका के सम्पूर्ण वैभव एवं सम्पदा को सीता पर न्योछावर करने को प्रस्तुत था।

22

जब रावण ने सीता से प्रणय-प्रार्थना की तो वह मौन रहीं और बहुत दुःखी हो गयीं। उन्होंने इतना अधिक कष्ट का अनुभव किया कि वे मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पडीं। राजा राम के प्राणान्त की सूचना पाकर वे

भी मृत्यु का वरण कर लेने को प्रस्तुत हो गयी थीं। राम के पथ का अनुसरण कर प्राण त्याग देने की ही उनकी हार्दिक अभिलाषा थी। मृत्यु के अतिरिक्त उन्हें दूसरा कोई मार्ग सूझ नहीं रहा था।

23

आहें भर कर दुःखी हृदय से वे आर्तनाद करने लगीं। उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। वे किसी वस्तु का स्मरण नहीं कर पा रही थीं। उनकी मूर्च्छा भी नहीं टूट रही थी। उनका पूरा शरीर थर-थर काँप रहा था।

24

कुछ समय पश्चात जब उनकी मूर्च्छा समाप्त हुई, तो उच्च स्वरों में वे विलाप करने लगीं। जैसे ही उन्होंने श्री राम का मस्तक अपनी आँखों से देखा, उन्हें लगा कि राजपुत्र राम अब इस संसार में नहीं हैं। वास्तव में सीता का हृदय पूर्ण-रुपेण पवित्र था। उनके हृदय में इस विश्व में किसी अन्य के लिए कोई भी आकर्षण नहीं था। राम के अतिरिक्त उन्होंने किसी अन्य से प्रेम नहीं किया था।

25

राम अब इस संसार में नहीं है। इस सत्य को सीता ने स्वीकार कर लिया। सीता ने यह अन्तिम निर्णय लिया कि अब सब कुछ समाप्त हो चुका है। अब उन्हें भी अपने जीवन का अन्त कर देना चाहिए। उन्होंने मृत्यु का वरण करने का दृढ़ निश्चय कर लिया। उन्होंने सोचा कि अब उन्हें इस संसार में किसी से डरने की आवश्यकता नहीं है। राम की अपार अलौकिक शक्ति पर उन्हें पूरा विश्वास था। राम के प्रति अब भी उनके मन में अटूट श्रद्धा थी। राम के प्राणान्त की सूचना पर पहले तो उन्हें विश्वास ही नहीं हो रहा था, पर मस्तक देख कर उनका मन काँप उठा। वे प्रलाप करती हुई कहने लगीं :-

26

हे भगवान राम ! तुम तो एक अवतारी पुरुष माने जाते हो। क्या कारण है कि तुम्हारा भी शरीरान्त हो गया। हाय ! मुझे अपने जीवन में कितने महान दुःखों का सामना करना पड़ रहा है। मुझे कितनी पीड़ा भोगनी पड़ रही है। हे राम ! क्या तुम विष्णु भगवान के अवतार नहीं हो ? क्या तुम अपनी इच्छा से इस संसार की सुरक्षा एवं त्राण के लिए शरीर धारण करके इस जगत में अवतरित नहीं हुये हो ?

27

महादेव शंकर अपार शक्तिशाली हैं। इस सम्पूर्ण भुवन के वे राजा हैं। जहाँ तक शक्ति एवं शौर्य का प्रश्न है, हे राम ! तुम शंकर से भी किसी भाँति कम नहीं हो। नीच राक्षसों में तो केवल नीचता ही है। उनमें शक्ति का तो सर्वथा अभाव है, फिर भी यह कैसे संभव हो सका कि राक्षसों ने तुम्हारा वध कर दिया। हे राम ! मैं अपने जीवन में अपार दुःख भोग रही हूं।

28

मुझे आज भी स्मरण है मेरे स्वयंवर का उत्सव था। सभी राजाओं का सम्मेलन आयोजित किया गया था। उस अवसर पर सभी राजागण मिथिला में एकत्रित हुए थे, पर तुम से अधिक शक्तिशाली वहाँ कोई भी नहीं था। शंकर-चाप को केवल तुम्हीं ने चढ़ाया था। शंकर के धनुष पर बाण चढ़ाने की शक्ति इस जगत में तुम्हारी अपेक्षा किसी अन्य में नहीं थी।

29

मुझे भलीभाँति ज्ञात है कि महान ऋषि परशुराम ने पहले तुमको मार्ग में रोका था। उन्हें विश्वास था कि वे विश्व विजयी हैं। इसमें कोई संदेह नहीं कि वे युद्धवीर एवं एक महान योद्धा थे, परन्तु तुमने ही उनसे लोहा लिया था तथा उन्हें युद्धक्षेत्र में परास्त कर दिया था।

30

मैंने सदैव ही महर्षियों को यह कहते सुना है कि सीतापति, दाशरथेय राम ही इन तीनों लोकों के स्वामी हैं। वे ही इस पृथ्वी के शत्रुओं का संहार कर भूभार को उतारने में पूर्ण समर्थ हैं। हे प्रिय ! सभी कहते थे कि आप ही इस जगत में सबके सहायक एवं संरक्षक हैं। जो लोग आपकी आराधना करते हैं, उनका कल्याण आप स्वयं ही करते हैं।

31

मैं भी भलीभाँति जानती हूं कि आप अपार शक्ति संपत्र विष्णु के अवतार ही हैं। भविष्य में भी जब भीषण परिस्थितियां आयेंगी तो आप अवतार लेंगे ही। पहले आपने स्वयं मानव रुप धारण् कर पृथ्वी पर आने की कृपा की। आप ही अकेले चक्रवर्ती सम्राट के रुप में इस जगत का शासन भार संभाले हुए थे। आपने इस भुवन लोक की सदैव ही सहायता एवं रक्षा की हैं। इस जगत को दुख देने वाले सभी दैत्यों का संहार कर आपने विश्व में शक्ति की स्थापना की है।

32

महर्षियों ने सदा आपका गुणगान किया है। दैत्य एवं राक्षस शैतानों की भाँति संसार में उपद्रव मचाये हुए थे और अमृत वचन बोलते थे। इस परिस्थिति से इस जगत में मानव का रहना असंभव-सा हो गया था। महर्षियों के अनुसार तब आपने ही उनकी रक्षा की थी। अब आज जब आपकी मृत्यु हो गयी है, तो मैं त्रस्त हो गयी हूं। इन राक्षसों ने आपका वध करके मेरा घोर अपमान किया है। मुझे उन्होंने अपार दुःख पहुंचाया है।

33

हे राजन ! आप मेरे वचनों को अवश्य सुन रहे होंगे। आज वह दिन याद आ रहा है। उस दिन जटायु जी मेरे आर्तनाद को सुनकर मेरे प्रति अपनी श्रद्धा प्रकट करते हुए मेरी रक्षा के लिए आगे आये थे। उस समय सम्पूर्ण शक्ति से उन्होंने रावण पर आक्रमण भी किया था। रावण की भुजा भी घायल हो गयी थी, परन्तु राक्षस रावण का वध नहीं किया जा सका था।

34

हे राजन ! यह सब होते हुए भी आपकी शक्ति का मुझे भरोसा था। यही कारण है कि अब तक मुझे विश्वास नहीं हो पाया है कि आप इस संसार में नहीं हैं! क्या आप एक महान रणकुशल वीर योद्धा नहीं हैं ? आपके बाणों का प्रभाव क्या समाप्त हो गया है ? क्या अब उनका कोई अर्थ नहीं रहा। जिन बाणों ने त्रिपुर राक्षस को भी परास्त कर दिया, क्या आज वे बिल्कुल शक्तिहीन हो गये हैं ?

35

इन्हीं स्मृतियों के बल पर मैं आशा कर रही हूं कि आप जीवित हैं। इसी आशा से अपने घोर दुःख को भी सहन करने में मैं समर्थ हो सकी हूं। इसी विश्वास के फलस्वरुप मैं आत्महत्या भी नहीं करना चाहती। आत्महत्या तो कायरता और पाप भी है। मुझे विश्वास है कि निश्चय ही आप जीवित हैं। मैं अब भी प्रतिक्षण आपकी ही प्रतीक्षा करती रहती हूं। यदि आप जीवित नहीं है, तो मेरा जीवन भी अर्थहीन है।

36

जहाँ भी आप गये होंगे, मैं भी आपका अनुसरण करुगी। मैं कभी भी आपके चरणों से दूर रह कर हे राजन ! जीवित रहना नहीं चाहती। यदि आप मुझे नरक क्षेत्र में भी लें जायं तो मुझे प्रसन्नता होगी। आप मुझे अपने से अलग मत रखिए क्योंकि जीवन-पर्यन्त मैं आपकी ही सेवा में रत रहना चाहती हूं।

37

इस प्रकार राजपुत्री सीता राम का स्मरण करते हुए विलाप कर रहीं थीं। राम के मस्तक को देखकर उन्होंने अपना मस्तक झुका लिया तथा प्रणाम किया। राजा राम की महानता विश्व में व्याप्त थी। इस सम्पूर्ण जगत के प्रति उनके हृदय में अपार प्रेम था। इस प्रकार बार-बार राम के गौरव और गरिमा का गुणानुवाद करती हुई सीता अत्यन्त दुखी होने लगीं।

38

इस जीवन में भलाई एवं सुकर्मों का भी कोई विशेष अर्थ नहीं है। सत्कर्म मेरे इस अपार कष्ट में मेरी कोई भी सहायता नहीं कर रहे हैं। श्रीराम के विचार अत्यन्त सुन्दर एवं विवेकपूर्ण रहे हैं। उनकी सज्जनता और उनके चरित्र की सभी लोग सराहना करते रहे हैं। उन्होंने सदैव ही अपने जीवन में दूसरों की भलाई की है। उन्होंने किसी को भी कभी कष्ट नहीं दिया है।

39

अब दान करने या परहित में संलग्न होने से भी कोई विशेष लाभ की संभावना नहीं रह गयी है। सत्कर्म रक्षक की भाँति सदा साथ रहते हैं। मुझ अभागिन की वे भी रक्षा नहीं कर पा रहे हैं। श्रीराम सदैव ही दीनों पर दया करने वाले रहे हैं। तप एवं साधना में भी उन्होंने अपना जीवन व्यतीत किया है। उन्होंने दीनों और दुःखियों को दान देकर सदैव ही सन्तुष्ट किया है।

40

मानव के शील एवं सौजन्य का भी इस संसार में कोई मूल्य नहीं है। जीवन में उनका पालन करने से भी कोई विशेष अर्थ सिद्ध नहीं होता है। मेरे कष्ट को दूर करने में शील एवं सौजन्य ने भी मेरी कोई सहायता नहीं की है। श्रीराम सदैव ही बुराइयों से अलग रहे हैं। क्रोध का भाव तो अकारण उनमें कभी उत्पन्न ही नहीं हो सका। उन्होंने सभी विषय-वासनाओं पर भी अधिकार कर लिया। उन्होंने पूर्ण रुप से अपनी इन्द्रियों को भी वशीभूत कर लिया। वे परम सन्तोषी व्यक्ति रहे हैं। वे मेरे लिए आदर्श हैं।

41

वे गुरुओं के प्रति अपार श्रद्धा रखते रहे हैं। देवों की सदैव ही वे उपासना करते रहे है। इन कर्मों का भी कोई सुखद परिणाम नहीं निकला। मेरी राय में यह सभी सत्कार्य व्यर्थ हैं। मुझे पूरा विश्वास है कि मेरे प्रियतम

राम समाधि एवं साधना में ही सदैव अपना जीवन लगाये रहे। वे सभी प्राणियों की मंगल कामना करते रहे हैं। वे सदैव ही पवित्रता के पथ पर अग्रसर रहे। इसी के साथ सत्यव्रत का पालन करते हुए वे सदैव ही धर्माचरण करते रहे हैं।

42

वास्तव में उनका सम्पूर्ण जीवन दूसरों का हित करने में ही समर्पित रहा है। वे दूसरों की आवश्यकताओं को भलीभाँति समझते रहे हैं। महान चरित्रवान एवं दयावान के रुप में उनकी ख्याति रही है। वे संसार भर से प्रेम करते रहे हैं। उनके ये कृत्य भी आज मुझे व्यर्थ से ही प्रतीत हो रहे हैं। उनका कोई फल भी अब तक प्राप्त नहीं हो सका है। इन सबका आज कोई भी अर्थ नहीं निकला। उनके हृदय में अपार करुणा भी रही है। वे ऋषि–मुनियों एवं साधुओं से अत्यन्त प्रेम करते रहे हैं। उनकी बुद्धि सुन्दर एवं विवेकमय रही है। वे सदैव ही अपने ऊपर किये गये उपकारों का बदला भी सहृदयता से चुकाते रहे हैं।

43

हे देवी पृथ्वी, वायु देवता, अग्नि देव, जल के देवता वरुण, स्वशाना, न्याय के देवता धर्मराज, सूर्य देवता तथा चन्द्रदेव आप सभी सम्पूर्ण जगत को जीवनदान देने वाले हैं। हे आठ शरीरों में अवस्थित सभी देवताओं ! आप सभी महान एवं पवित्र हैं।

44

इस विकट परिस्थिति में हे देवताओं ! मैं आप सभी को बहुत साधारण रुप में देख रही हूं। आप लोग मानव के महान चरित्रों की ओर कोई ध्यान नहीं दे रहे हैं। यह राक्षस रावण अत्यन्त नीच बुद्धि है। यह क्रूर एवं दुष्ट है। उसको भी आप पूर्ण विजयश्री दे–दे कर बार–बार अलंकृत कर चुके हैं। उस पर भी आपकी कृपा–दृष्टि बराबर रही है, परन्तु हम सबकी विपत्तियों एवं भीषण परिस्थितियों को देखकर आपके हृदय कभी प्रेम एवं करुणा से द्रवित नहीं हुए।

45

राम एक महान, सहृदय, शील स्वभाव वाले व्यक्ति रहे हैं। उनका चरित्र पवित्रता का प्रतीक है। वे मनु के द्वारा बताये नियमों एवं कर्तव्यों तथा उनके द्वारा लिखित ग्रन्थ मानव धर्म शास्त्र के आधार पर ही सभी नियमों का विधिवत पालन करते रहे हैं। वास्तव में मनु द्वारा बनाये गये नियमों का पालन प्रत्येक मानव का कर्तव्य है। उन नियमों का विधिवत पालन करने के लिए ही शास्त्रों का अध्ययन आवश्यक है। हे देवताओं ! आपके कार्यों

से अब मुझे बहुत आश्चर्य हो रहा है। आप नीच और क्रूर स्वभाव वाले राक्षसों एवं मानवों के प्रति प्रेम भाव प्रदर्शित करते हैं तथा उनकी सहायता करते हैं। कभी-कभी तो नीच प्रवृत्ति वालों को सौभाग्यशाली बना कर आप उन्हें ही पूरा महत्व देते हैं।

46

हे लक्ष्मण ! तुम जीवन में बड़ी सज्जनता एवं पवित्रता से सदैव ही कार्य करते रहे हो। पवित्र कार्यों के प्रति तुम्हारे मन में विशेष अभिरुचि रही है। इस विश्व के प्रति तुम्हारा व्यवहार अत्यन्त मृदु रहा है। तुम बड़े ही सौभाग्यशाली हो। तुम्हारा राम से कभी भी विछोह नहीं हुआ। चाहे राम जहाँ भी गये हों तुमने सदैव ही श्रद्धापूर्वक उनका अनुगमन किया है। इस दृष्टि से मैं बड़ी अभागिनी रही हूं। मृत्यु द्वारा भी मैं उनका अनुगमन नहीं कर रही हूं।

47

राम अपार शक्तिशाली योद्धा माने गये हैं। इस संसार में उनसे बढ़कर कोई नहीं है। राम तथा लक्ष्मण के नाम वीरता में प्रसिद्ध हैं। वास्तव में मैं ही एक साधारण प्राणी हूं और सर्वथा दोषी हूं। तुम्हारी मृत्यु ने मुझे असहाय बना दिया है। मुझे आश्चर्य है कि अकस्मात् ही युद्ध में तुम्हारी पराजय किस प्रकार हो गयी ?

48

हे राक्षसों की प्रजा के राजा रावण ! आप इस परिस्थिति पर ध्यान देते हुए मेरी ओर देखिए। जिन शब्दों को मैं कह रही हूं उन पर पूरी तरह ध्यान देने की कृपा कीजिए। भद्र महिला जीवन में अपने पति की ही अभिलाषा करती है। पति के प्रति ही उसके सभी कर्तव्य होते हैं। अपने पति के प्रति मेरा भी यही कर्तव्य है कि मैं जीवन-पर्यन्त स्वामिभक्त बनी रहूं तथा पतिव्रता नारी की भाँति अपने कर्तव्यों का पालन करती रहूं।

49

आज मैं अपार कष्ट का अनुभव कर रही हूं। आश्चर्य है कि मेरे शरीर से मेरे प्राण नहीं निकल रहे हैं। अब तक मुझे राम से मिलने की अभिलाषा एवं आशा थी। इसीलिए मैं जीवित बची रही। आज जब राम का प्राणान्त हो चुका है तो मेरी आशा भी मिट चली है। अब मेरे लिए यह आवश्यक है कि मैं जीवन पर्यन्त उनके विछोह का कष्ट भोगूं। मेरा जीवन दुःखमय हो उठा है। मैं सभी दुःखों को सहन करु और उनका स्मरण करती रहूं, यही अब श्रेयस्कर है।

50

हे दशमुख ! इसीलिए मैं आपसे आग्रह करते हुए कहना चाहती हूं कि आप मेरे समक्ष कृपया प्रणंय–निवेदन न करें। ऐसा प्रतीत होता है कि आप अतिशयोक्तियों का प्रयोग करते हुए बहुत अधिक वार्ता कर रहे हैं। यह निर्विवाद है कि आप एक महान शक्तिशाली राजा हैं। इसीलिए आपको यह शोभा नहीं देता कि आप किसी पतिव्रता स्त्री से ऐसा दुर्व्यवहार करें।

51

जहाँ तक आपकी दृढ़ता एवं वीरता का प्रश्न है, आपके समकक्ष इस संसार में शायद ही कोई अन्य योद्धा हो। आप एक बड़े प्रतापी राजा हैं। आपकी शक्ति अपार है। यदि आप मेरा प्राण लेना चाहेंगे तो इसमें भी आप सफल होंगे, अतएव आप अपनी तलवार को मेरी ग्रीवा पर चलाकर मेरा प्राणान्त कर दीजिए।

52

आप अपने मन से बुरे विचारों का परित्याग कर दीजिए। अपने जीवन में स्वस्थ दृष्टिकोण को अपनाइए। बड़े–बड़े विशाल राज–प्रासादों का निर्माण कीजिए। अपने जीवन में पूर्ण यश एवं विजय का अर्जन कीजिए। इस प्रकार आपका यश तीनों लोकों में व्याप्त हो जायेगा। यदि आप मेरा वध कर देंगे, तो उसके परिणाम भी आपके लिए बड़े ही सुखद होंगे। अपने प्रताप और शक्ति के कारण सम्पूर्ण संसार को शरण देने वाले एक महान सम्राट के रुप में आप पूरी तरह प्रतिष्ठित हों। इस पृथ्वी पर सभी को पूरा आश्रय दें, यही उचित है।

53

यदि आप अपने अस्त्रों को मेरा वध करके अपवित्र नहीं करना चाहते हैं तो मैं आपको एक दूसरा प्रस्ताव भी देना चाहती हूं। आप पवित्र अग्नि में ही मेरा दाह कर दीजिए। इस प्रकार अपवित्र आचरण के बिना भी मेरा वध हो सकेगा। आप अन्तिम निर्णय स्वयं ही ले लें कि किस साधन से मेरा वध करना चाहेंगे। आपके इस सुकृत्य से प्राप्त मृत्यु के बाद अपने स्वामी राम से मेरा मिलन संभव हो सकेगा, तब मैं शीघ्र ही राम के पास पहुंच कर उनसे भेंट कर सकूं गी।

54

सीता जी ने रावण से दृढ़तापूर्वक सारी बातें कहीं। राम के प्रति अपनी अपार श्रद्धा एवं स्वामिभक्ति का उन्होंने पूरा परिचय दिया। उनकी इस अदभुत शक्ति को देखकर रावण और अधिक प्रतिभ्रम में पड़ गया तथा

घबरा उठा। वह बहुत अधिक निराश भी हो गया। उसका हृदय आन्दोलित होने लगा। लज्जा के कारण उसका मस्तक नीचे झुक गया। वह अत्यन्त क्रुद्ध हो गया तथा कटुता का अनुभव करने लगा। उसकी सभी क्रूर प्रवृत्तियाँ जागृत हो उठीं। उस समय उसकी दशा दयनीय थी। उसके हृदय में सीता के प्रति प्रणय का सागर तरंगें ले रहा था।

55

रावण ने उस असाधारण परिस्थिति को समझते हुए सोचा। सीता ने जो बातें कही हैं उनसे ऐसा प्रतीत होता है कि सीता मृत्यु का निश्चय ही वरण करना चाहती हैं। अतएव इस परिस्थिति में सीता को समझाना एवं अपनी ओर आकर्षित करना भी व्यर्थ ही सिद्ध होगा। मानव जीवन में भाँति-भाँति की कठिनाइयां आती हैं, इसके विषय में शायद सीता का पूरा ध्यान भी नहीं है। कभी-कभी जीवन के अथाह संघर्षों से टक्कर लेने के कारण भी मनुष्य कष्टों एवं कठिनाइयों से प्रभावित नहीं होता है। सीता की स्थिति भी इसी प्रकार है।

56

उसके पश्चात रावण ने सीता को सम्बोधित करते हुए कहा, हे सीते ! तुम्हें पतिव्रता स्त्री के रुप में सभी नियमों का पालन करने की क्या आवश्यकता है। राम से भेंट करने की इतनी तीव्र अभिलाषा भी तुम्हें नहीं करनी चाहिए। अतएव तुम्हारे लिए यही उचित होगा कि तुम जीवित रहो। मेरे साथ जीवन में सम्पूर्ण सुखों का आनंद लो तथा जीवन का रस-भोग करो।

57

क्या मैं इस संसार का सर्वश्रेष्ठ एवं प्रतापी सम्राट नहीं हूं ? इन तीनों लोकों में मैं जिस वस्तु की भी अभिलाषा करु, क्या वह मुझे प्राप्त नहीं हो सकती है ? अतएव मेरे लिए कोई वस्तु अलभ्य नहीं है। लाखों सीताएँ एक ही क्षण मैं यहाँ पर आकर मेरे संकेत मात्र से उपस्थित हो सकती हैं, इसीलिए मैं तुमसे विनम्र निवेदन करना चाहता हूं कि तुम मेरे शब्दों को मान लो।

58

मेरे ये शब्द तुम्हारे लिए बहुत ही उचित एवं उपयोगी हैं। इसी में तुम्हारा कल्याण है। मेरा यह मत है कि तुम व्यर्थ के विचारों को अपने मन में स्थान न दो। उनका अब कोई अर्थ भी नहीं है। तुम्हारा मन भी अत्यन्त दुःखी है। तुम व्यर्थ ही हठ कर रही हो, जानबूझकर जैसे तुम पागलपन का परिचय दे रही हो। तुम्हारी इस कठिनाई

एवं कष्ट को देखकर कोई भी तुमसे सहानुभूति नहीं कर सकेगा। तुम वास्तविकता को समझने से इन्कार कर रही हो। इसलिए मेरा परामर्श है कि तुम मेरी बात स्वीकार कर लो।

59

हे सीते ! तुम्हारे लिए यही श्रेयस्कर है कि तुम मेरे पास आ जाओ। निरर्थक हठधर्मी से तुम्हें कुछ भी प्राप्त नहीं हो सकेगा। तुम्हारे शब्दों को सुनकर मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि तुम मुझ पर भाँति-भाँति के आक्षेप कर रही हो। मुझे तुम अधम व्यक्तियों की श्रेणी में रख रही हो। इतना कह कर रावण ने सेवकों को आज्ञा दी कि वे राम का मस्तक वहाँ से ले आएँ और उसे पास के एक ढेर पर रख देंवे अथवा नाली में फेंक दें।

60

इस समय रावण अत्यन्त क्रुद्ध हो गया था। वह लाल अंगार-सा हो गया था। रावण अपने प्रति सीता के इस व्यवहार को देखकर बहुत दुखी एवं निराश हो गया था। सीता किसी भी रुप में उसे अपना बनाने के लिए तैयार न थीं। उसके पश्चात रावण वहाँ से लौटकर अपने राजमहल में चला गया। वहाँ पर उसने राजनीति के विषय में अपने मंत्रियों से महत्वपूर्ण विचार-विमर्श किया। विस्तारपूर्वक प्रत्येक विषय पर चर्चा की गयी। महत्वपूर्ण बातों पर विशेष ध्यान दिया गया। उसके सभी कार्यों में मिथ्याभिमान की झलक स्पष्ट मिल रही थी।

61

रावण अशोक वाटिका से चला गया, तब सीता ने त्रिजटा को बुलाकर वार्ता की। त्रिजटा पर सीता का विश्वास था। उसका परामर्श लेकर वे मृत्यु का वरण करना चाहती थीं। वे अग्नि में कूद कर अपने शरीर का अन्त करना चाहती थीं। यही उनका अन्तिम उद्देश्य था।

62

इस विचित्र दशा को देखकर त्रिजटा भी बहुत दुःखी हो गयी। वह अपार कष्ट का अनुभव करने लगी। सीता की दशा वास्तव में शोचनीय थी। त्रिजटा को यह जानकर और भी अधिक दुःख हो रहा था कि राजपुत्री सीता किसी न किसी प्रकार अपना प्राणान्त करना चाहती हैं। उनका हृदय अत्यन्त पवित्र है। अपने स्वामी राम के प्रति उनके मन में अपार श्रद्धा एवं भक्ति है। वे राम के प्रति इतनी अधिक भक्ति-भावना रखती हैं कि राम की मृत्यु का समाचार सुनकर वे भी मृत्यु का वरण करने को प्रस्तुत हैं। वे अपना शरीर भी त्यागना चाहती हैं।

63

सीता ने अपने नेत्रों को बन्द कर लिया, जैसे वे ध्यान-मुद्रा में हों। अब वे एक बार भी मूर्च्छित नहीं हुई थीं। उनका पूरा शरीर बहुत ही कृश दिखायी दे रहा था, फिर भी वे सन्तुष्ट एवं प्रसन्न ही दिखायी दे रही थीं। वे हिलडुल भी नहीं रही थीं। उन्हें जैसे अब कुछ भी स्मरण नहीं था। वे केवल यही कहती थीं कि अब मृत्यु ही उनके लिए एकमात्र औषधि है।

64

अर्द्धरात्रि के समय सभी लोग सो रहे थे। कोई राक्षस उस समय इतना सचेत नहीं था जो सीता के शरीरान्त का दृश्य देखता। सभी क्षणदा छाया में मग्न सो रहे थे। उसी समय एक अग्निचिता तैयार करने की योजना बनायी गयी जो जलने पर प्रचण्ड अग्नि का भयानक रुप धारण कर सकती थी। राजपुत्री सीता अग्निदाह के लिए प्रस्तुत हो गयीं। उसी समय ध्यान मग्न होकर वे आराधना में लीन हो गयीं।

65

वास्तव में सीता का सौंदर्य अपार था। वे जैसे सौंदर्य की साकार प्रतिमा हों। वे सर्वश्रेष्ठ उच्च-कुलीन महिला थीं। उनका हृदय अत्यन्त पवित्र था। उनके विचार बहुत ही सुन्दर एवं कलुष-रहित थे। वे श्वेत वस्त्र धारण किये हुए थीं। उनके शरीर से सुन्दर एवं मोहक सुगन्धि आ रही थी। उनके हृदय में गहरा दुःख था। उनकी गहरी अभिलाषा थी कि वे अपने स्वामी राम का शीघ्र ही अनुगमन करें।

66

इस प्रकार का विचार करते हुए उन्होंने राम का स्मरण किया। वे कहने लगीं कि हे राजपुत्र राम ! मुझ पर कृपा कीजिए। उन्होंने शान्तचित्त होकर ध्यानावस्थित हृदय से देवताओं का भी आवाहन किया। उनका ध्यान देवों की ओर तब तक लगा रहा, जब तक कि देवता स्वयं वहाँ आकर उपस्थित नहीं हो गये। अपने इस मनोरथ को पूर्ण करने के लिए राजपुत्री सीता ने देवों के समक्ष प्रतिज्ञा ली। देवों के अनुगह पर उनका विश्वास था और आशा थी कि मरणोपरान्त राजा राम से निश्चय ही उनकी भेंट संभव हो सकेगी।

67

हे देव ! आपको अग्निदेवता के नाम से पुकारा जाता है। मेरी यह इच्छा है कि मैं अग्नि में जलकर अपना शरीरान्त कर दूं। वास्तव में आपने मेरी दशा पर कभी भी दृष्टिपात नहीं किया। आपने कभी भी मुझे वह अवसर प्रदान नहीं किया जिससे मेरा हृदय उल्लासपूर्ण होकर पूर्ण आनन्द का अनुभव करता, अतएव मैं अभागिनी अब दुःखी होकर अग्निदाह करने के लिए प्रस्तुत हूं। दे देव ! मैं अब अपना प्राणान्त चाहती हूं।

68

मेरी मृत्यु का चाहे जो भी फल प्राप्त हो, अबं मैं आप को अपना शरीर अर्पित कर दूंगी। आप मुझे जलाकर रांख की ढेरी में परिवर्तित कर दें तो मेरी सम्पूर्ण अभिलाषाओं की पूर्ति हो जाय। इससे एक बार फिर मैं अपने स्वामी एवं महान व्यक्तित्व वाले राजा राम से भेंट कर सकूंगी। मेरे इस कर्म से मेरे विवाह की पवित्रता फिर से प्रतिष्ठित हो सकेगी। यही मेरी हार्दिक इच्छा है।

69

अग्नि देवता की अर्चना करते हुए राजपुत्री सीता के मुख से यह वाणी निकल रही थी। जब त्रिजटा ने राजपुत्री सीता द्वारा अपने प्राणान्त की योजना को देखा, तो उसके हृदय में अपार कष्ट हुआ। उसके नेत्रों में आँसू भर आये और अश्रुधारा भी अविरल प्रवाहित होने लगी। त्रिजटा प्रयास करने पर भी अश्रुओं को रोक नहीं सकी। वास्तव में त्रिजटा के हृदय में सीता के प्रति अपार प्रेम था। इस दृश्य को देखकर उसकी बुद्धि भ्रमित हो गयी। दुःखी होकर त्रिजटा ने यह कहा :

70 + 71

हे मेरी राजपुत्री सीता ! आपको किसी प्रकार का कष्ट नहीं होना चाहिए था, फिर भी इतना कष्ट मिला, यह दुर्भाग्य ही कहा जाएगा। आपका निर्मल चरित्र तो आदर्श स्वरुप है। काण्ड चरित्र की कथा तथा ऊपाण कथाओं में भी ऐसा कोई उदाहरण नहीं मिलता, जिसको आपकी तुलना में प्रस्तुत किया जा सके। क्या पुराणों में कोई इतनी दुःखद एवं करुण कथा है ? अथवा पर्व पुस्तक में क्या कोई ऐसा दुःखद आख्यान आया है, जिसका दुःख एवं कष्ट आपके समान हो ? मुझे अपार दुःख है। मुझे तो ऐसा अनुभव हो रहा है कि यह सभी देवतागण बड़े ही कठोर हृदय के हैं। इस महान चरित्रवती सती के उच्च चरित्र पर भी उन्होंने कोई ध्यान नहीं दिया है। किसी प्रकार की करुणा से भी द्रवित होकर वे सहायता नहीं कर रहे हैं। उनका व्यवहार निश्चय ही कठोर और अन्यायपूर्ण है।

72

मुझे तो ऐसा लगता है कि चरित्रवान एंव उच्च आदर्श वाले व्यक्तियों का इस जगत में कोई महत्व अथवा मूल्य नहीं है। देवताओं के लिए राजपुत्री सीता का महान पातिव्रत भी कोई अर्थ नहीं रखता। इसकी अपेक्षा जिनका चरित्र बुरा एवं नीच है,जो दुर्बुद्धि हैं, उन्हीं के प्रति देवों की कृपा होती है। उन्हीं से देवों को पूरा सन्तोष प्राप्त होता है।

73

इन गतिविधियों को देखकर मैं देवों को दोषी ठहरा रही हूं। स्पष्ट है कि राम ऐसे चरित्रवान राजा की भी मृत्यु हो गयी। वे कितने महान थे। लोक कल्याण ही इनके जीवन का उद्देश्य था। उनके सभी कार्य पवित्र थे। उनका चरित्र निर्मल एवं महान था। वे दूसरों द्वारा अपने प्रति की गयी किसी भी भलाई को बड़ी विनम्रता एवं कृतज्ञता से स्वीकार करते थे। ऐसे लोगों के प्रति श्रद्धा रखना वे अपना कर्तव्य समझते थे। मुझे अपार दुख है कि राम ऐसे महान चरित्रवान व्यक्ति की ओर भी देवों ने ध्यान नहीं दिया और दुष्टों ने उनका भी वध कर दिया। वास्तव में देवों का यह व्यवहार चरित्रवान व्यक्तियों के प्रति सर्वथा अनुचित है। उनका यह आचरण उनकी कठोरता का ही द्योतक है।

74

राक्षसी त्रिजटा अत्यन्त दुःखी होकर निराशा में डूबी.जा रही थी। वह सहसा चौंक पड़ी। राजपुत्री सीता की ओर उसने दृष्टिपात किया। उस समय उसका बायाँ नेत्र फड़क रहा था। राजपुत्री की ओर देखते ही उसके हृदय में हर्ष की लहर दौड़ पड़ी। उसके पश्चात् उसने राजपुत्री सीता के निकट जाकर उनको समझाते हुए उनसे विनम्र निवेदन किया :

75

हे राजपुत्री सीता ! अब मुझे अच्छे लक्षण दिखायी दे रहे हैं। अब मेरी बाईं आँख फड़क रही है। अतएव हे राजपुत्री !क्या आप बता सकती हैं कि मेरी बाई आँख के फड़कने का क्या अर्थ हो सकता है ? मेरी बाई आँख तीव्रता से फड़क रही है। मैं सोचती हूं कि निश्चय ही इसका परिणाम शुभकारी होगा।

76

मैं कुछ समय के लिए सुवेला पर्वतमाला पर जाना चाहती हूं। मेरी यह अभिलाषा है कि वहाँ पर जाकर पहले मैं अपने पिता से भेंट करू। मुझे आशा है कि अभी भी मेरा पिता जीवित है। मैं केवल अपने पिता को यह सूचना मात्र देना चाहती हूं कि मैं भी राजपुत्री सीता के साथ ही अग्नि में प्रवेश करने जा रही हूं। उन्हीं के साथ मैं भी मृत्यु.का वरण करूगी। यदि उनकी मृत्यु हो गयी होगी.तो मुझे किसी प्रकार की चिन्ता नहीं रहेगी। पिता के अतिरिक्त मेरा अब कौन है जिसके प्रति मुझे इतना आकर्षण हो कि मृत्यु का निर्णय लेने में मुझे सोचना पड़े।

77

हे राजपुत्री सीता ! आपसे मैं निवेदन कर रही हूं कि आप अभी शीघ्र ही अग्नि में कूद कर अपना शरीर त्याग न करें, विशेषतया उस समय जब कि मैं आपके पास उपस्थित न रहूं। अतएव आपसे मेरा यही आग्रह है कि मेरे लौट आने तक आप प्रतीक्षा कीजिए। मुझे आशा है कि आप निश्चय ही मुझ पर दया करेंगी। मैं आपके ही साथ अग्नि में कूद कर मृत्यु का वरण करना चाहती हूं।

78

त्रिजटा ने राजपुत्री सीता से विनम्र निवेदन करते हुए यह आग्रह किया कि वे कुछ समय तक शान्त रहें। उसके पश्चात् त्रिजटा अशोक वाटिका से बाहर चली गयी। वह शीघ्र ही आकाश में उड़ गयी। वह उड़कर सुवेला गिरिमाला पर जा पहुंची। वास्तव में इस पर्वतमाला के पत्थर भी मणि–माणिक से ही बने थे। उस समय वहाँ सम्पूर्ण वानर–सेना अपना डेरा डाले हुए थी। त्रिजटा ने अपने पिता को एक प्रस्तर शिला पर अवस्थित देखा। वे बड़ी ही शालीनता एवं सौजन्यपूर्ण ढंग से सभी के प्रति अपना आदर भाव व्यक्त कर रहे थे। राम भी एक शिलाखण्ड के ऊपर आसीन थे। उनके छोटे भाई लक्ष्मण उनके नीचे की शिला पर बैठे हुए थे।

79

वानर सेना अपने भीषण रुप का प्रतिक्षण प्रदर्शन कर रही थी। वहाँ युद्ध का अभ्यास भी चल रहा था। सभी युद्ध में अपनी निपुणता का परिचय देने के लिए उतावले हो रहे थे। त्रिजटा शीघ्र ही आगे बढ़कर अपने पिता के पास जा पहुंची । उसने अपने पिता को प्रणाम किया। उसने बड़े ही आदर से राजपुत्री सीता की दयनीय दशा का वर्णन करते हुए उनके अपार दुःख का कथन किया। उसने यह भी सूचना दी कि देवी सीता अग्नि में कूद कर आत्मदाह करने को प्रस्तुत हैं। वे अग्नि के ज्वालामुखी में जलकर समाप्त हो जाना चाहती हैं।

80

त्रिजटा ने अपने पिता को सूचित करते हुए कहा कि हे पिता! रावण वास्तव में एक महानीच राक्षस है। वह घृणित, बहुत ही भयानक तथा नीच वृत्तियों वाला है। उसने सीता को यह विश्वास दिलाया है कि महाराज राम की मृत्यु हो चुकी है। यही नहीं उसने यह आज्ञा दी कि राम का मस्तक सीता को दिखाया जाय, जिससे उन्हें निश्चय हो जाय कि राम का देहान्त हो चुका है। यही कारण है कि राजपुत्री सीता ने भी मृत्यु का वरण करने का दृढ़ निश्चय कर लिया है। वे बार–बार यही कहती हैं कि मैं अग्नि में कूद कर प्राणान्त करना चाहती हूं। इसीलिए हे पिता ! आपके पास तक आने की आवश्यकता पड़ी। आपकी आज्ञा लेकर ही मैं राजपुत्री सीता के साथ अग्नि में प्रवेश करुगी। यह मेरा विचार था। मैं भी अग्नि में उनके साथ ही भस्म होना चाहती थी, जिससे मैं राजपुत्री सीता का अनुगमन कर सकूं। अब मुझे बड़ी प्रसन्नता हुई है। मैंने यहाँ आपके साथ ही राम और लक्ष्मण को जीवित देखा है। सचमुच मैं बड़ी भाग्यशाली हूं।

81

हा ! मुझे यह सूचना सुनकर अपार दुःख हो रहा है। हे पुत्री ! तुमसे मुझे यह सूचना प्राप्त हुई है कि राजपुत्री सीता रावण के छल-कपट के कारण अपना प्राणान्त करना चाहती हैं। मेरा मन अब और अधिक दुःखी हो उठा है। मैं इस भीषण परिस्थिति में कुछ भी सोच नहीं पा रहा हूं। अब तो यही सर्वाधिक उचित होगा कि राजा राम सीता को पाने के लिए शीघ्र ही रावण पर आक्रमण करें। इसकी अपेक्षा अब अन्य कोई मार्ग दिखायी नहीं देता। यह कार्य भी बड़ी ही चतुरता एवं धैर्य से सम्पन्न करना होगा। इसका पूरी तरह क्रियान्वयन शीघ्र ही किया जाना चाहिए। अतएव शीघ्र ही यह सभी सूचना राजपत्नी सीता को भी दी जानी चाहिए।इस कार्य को हे पुत्री ! तुम तुरन्त ही करो। सीता के पास जाकर उनको वास्तविक परिस्थिति से पूरी तरह अवगत कराओं। मेरी स्वामिभक्ति का भी पूरा विश्वास उन्हें दिला देना। राजा राम की अपेक्षा ऐसा कोई व्यक्ति नहीं है,जिसके प्रति अपार श्रद्धा से मैं अपनी सेवाएँ अर्पित कर सकूं। हम सभी वास्तव में राम के ही भक्त हैं।

82

हे पुत्री ! तुम शीघ्र ही लंका में राजपुत्री सीता के पास लौट कर चली जाओ। उन्हें वास्तविक परिस्थिति से भलीभाँति अवगत कराओ। सीता एक परम चरित्रवान आदर्श देवी हैं। उनसे यह कहो कि महाराजा राम अभी जीवित हैं। वे सानंद और सकुशल हैं। हम सभी उनके साथ सुखपूर्वक यहाँ पर अपना जीवन व्यतीत कर रहे हैं। पिता की यह बात सुनकर त्रिजटा शीघ्र ही वहाँ से आकाश में उड़ गयी तथा देवी सीता के पास आकर उसने उन्हें विधिवत् प्रणाम किया। बड़े ही उल्लास एवं हर्ष से त्रिजटा ने सीता को यह शुभ समाचार दिया कि राजा राम अभी तक जीवित हैं तथा सानन्द एवं सकुशल हैं। उसका हृदय आनंद एवं उल्लास से थिरक रहा था। उसकी साँसों की गति भी तीव्रतर हो रही थी। आनंद एवं उल्लास के कारण उसका स्वर भी काँप सा रहा था।

83

हे देवी आपकी जय हो। मैं आपकी सेविका हूं। आज मुझे अपार हर्ष हो रहा है। राजा राम अभी तक जीवित हैं। वे सुवेला गिरिमाला पर आर्य लक्ष्मण के साथ आनंदपूर्वक अपना समय व्यतीत कर रहे हैं। सुग्रीव एवं हनुमान भलीभाँति उनकी आज्ञा का पालन कर रहे हैं। मेरे पिता राम की सेवा में सदैव ही तत्पर रहते हैं। उनके निकट ही वे रहते भी हैं। सभी वानर योद्धा राम की आज्ञा का पालन करते हुए सुवेला पर्वत श्रेणी पर निवास कर रहे हैं। बड़े-बड़े शक्तिशाली वानर-योद्धा विधिवत् अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए राम की सेवा में रत हैं। इस प्रकार सम्पूर्ण सुवेला गिरि पर वानर-समूह पूरी तरह एकत्रित है। वे युद्ध की तैयारी कर रहे हैं तथा प्रतिक्षण उसका अभ्यास भी कर रहे हैं।

84

वानर समूह कभी-कभी पर्वत श्रेणी को तोड़ लेते हैं। उसे ऊपर उछाल कर वे फेंक देते हैं। जहां तक उनकी शक्तियों का संबंध है,वे सभी वज्र के समान कठोर, पर सक्रिय हैं। उनका स्वर बहुत ही भयानक है। उसे सुनकर कोई भी कांप सकता है। वह स्वर इस प्रकार गूंजता है, जैसे वह सम्पूर्ण जगत को नष्ट करने की क्षमता रखता हो। उन विशाल वानरों में इतनी शक्ति है कि वे अपनी फूंक मात्र से पर्वत-श्रेणी को आकाश में उड़ा सकते हैं। उनके एक ही प्रहार से पर्वत-श्रेणी चूर-चूर हो कर लुढ़क सकती है। पर्वतों की मालाएं उनके लिए इतनी साधारण हैं कि वे उनको अपने हाथों में उठा भी सकते हैं। उनको न तो किसी प्रकार का भय है, न ही किसी प्रकार का भ्रम है। उनके साथ युद्ध में रावण की पराजय अवश्यम्भावी है। यह बात अब मुझे पूर्ण रुप से स्पष्ट हो गयी है।

85

एक ऐसी भी पर्वत श्रेणी थी जो पहले बहुत ही प्रसिद्ध थी। उसी के माध्यम से समुद्र-मंथन किया गया था। उसका नाम मन्दराचल पर्वत था। वह बहुत ही आश्चर्यजनक एवं विशाल पर्वत-श्रेणी थी। वानर सेना छोटी-मोटी पर्वत श्रेणियों को भारहीन गेंद की भाँति ऊपर उछाल-उछालकर कन्दुक-क्रीड़ा कर रही थी। वे उसे ऊपर उड़ा रहे थे। वे सभी वानर गण सिंहनाद करते हुए भीषण रव से आकाश को गुंजायमान कर रहे थे। शीघ्रता से जैसे वे शत्रु का नाश करने के लिए आतुर हो रहे हों। शत्रु उनके लिए बहुत ही कोमल और निर्बल प्रतीत हो रहा है। उनका अनुमान है कि वे शत्रु को पराजित कर सकने में पूर्णत समर्थ हैं और अपने हाथों से क्षण भर में ही शत्रु का सर्वनाश कर सकते हैं।

86

राम की सेना में जितने भी प्रधान वीर,प्रवीर एवं योद्धा हैं,वे अपनी वीरता के लिए विश्व-विख्यात हैं। वे महाशक्तिशाली हैं। युद्धक्षेत्र में वे शत्रु के विरुद्ध पूर्ण रुप से राम के सहायक बनकर शत्रु से लोहा ले सकते हैं। इसके साथ ही वे राम के प्रति बड़े ही स्वामिभक्त भी हैं। राम की आज्ञा को शिरोधार्य करके शीघ्र ही वे उसे पूरा करते हैं। उन्होंने बड़े-बड़े वृक्षों को समूल उखाड़ लिया है। इनके प्रयोग से वे किसी भी स्थान पर आक्रमण कर सकते हैं। जब भी चाहें किसी भी क्षेत्र को वे अपने अधिकार में ले सकते हैं।

87

कुछ वानरगण वृक्षों को पकड़-पकड़ कर चारों ओर घुमाते रहते हैं। वे वृक्ष बड़े ही विशाल एवं ऊंचे हैं। उनका स्वरुप बड़ी-बड़ी गदाओं की भाँति है। ऐसा प्रतीत होता है कि उन वृक्षों को गदा की भाँति घुमाना

उनके लिए बहुत ही सुकर है। वे बड़ी ही शीघ्र गति से उनको घुमाते हैं। जितनी भी वनस्पतियाँ वहाँ हैं,वानर सेना की गतिविधियों से वे लगभग आधी समाप्त हो चुकी हैं। कभी-कभी वे वानर चक्राकार घूमते दिखते हैं। मैंने इससे पहले कभी नहीं देखा था कि इतने वीर योद्धा इतनी शक्ति का प्रदर्शन इस रुप में करते रहे हों। इनकी तुलना करना एक असाधारण कार्य है।

88

हे राजपुत्री ! क्या कारण है कि आप इतने भीषण कष्ट का अनुभव कर रही हैं। अव तो आपको इतना दुःखी नहीं होना चाहिए वल्कि मन बहलाने की पूरी चेष्टा करनी चाहिए। राजा राम की सभी आज्ञाओं का पूरी तरह पालन कीजिए। अब रावण के छलछद्म का पूरा पता आपको लग चुका है। महाराजा राम सकुशल हैं। उन्होंने मुझे भी देखा है। मैं आपसे स्पष्टतः कह सकती हूं कि मैंने राजा राम को स्वयं भी आपकी भाँति ही विरह व्यथा का गहरा अनुभव करते हुए देखा है। उन्होंने मुझे उसी समय आदेश दिया था कि शीघ्र ही मैं अशोक वाटिका में आपके पास लौट जाऊं तथा आपको अग्नि में प्रवेश न करने दूं। उन्हें भी यह डर था कि कहीं अकस्मात् ही आप अपना प्राणान्त न कर बैठें। उनकी मनःस्थिति उस समय इसी प्रकार की थी।

89

हे राजपुत्री ! इसीलिए आप अपने सुन्दर मुख को जल से धो लीजिए। उस पर निर्मल जल डालकर उसे स्वच्छ कर लीजिए। आपके लिए भाँति-भाँति की सुन्दर पत्तियाँ हैं जिनसे आपकी क्लान्ति एवं श्रान्ति दोनों ही सरलता से दूर हो सकती हैं। अपने दुःखी हृदय को सन्तोष देते हुए आप अपनी सुरक्षा कीजिए। अब प्रसन्नता की देवी स्वयं आपके पास आकर उपस्थित होने वाली हैं। क्या ऐसा आप नहीं समझती हैं ?

90

वास्तविक स्वरुप में आने का अब अवसर आ गया है। अतः अपने सारे कष्टों को इस पवित्र अग्नि की भेंट कर दीजिए। उनको शीघ्र ही भस्मसात कर दीजिए जिससे वे सदैव के लिए ही समाप्त हो जायं। जितना भी कलुष है उसको जलाकर नष्ट कर दीजिए। अपनी सभी कल्पनाओं, आशाओं एवं अभिलाषाओं को राम की ओर हर्षपूर्वक केन्द्रित कर दीजिए।

91

यह सब सुन लेने के पश्चात् देवी सीता ने आराधना में अपना मन लगा दिया। पुष्प, धूप, दीप आदि को पूजा के लिए एकत्रित किया। नैवेद्य आदि पूजा के सभी उपकरण पूरी तरह तैयार किये गये। उन्होंने जप भी किया और प्रार्थना भी की।

92

जब राजपुत्री सीता ने अग्नि को आवश्यक हव्य समर्पित किया, तो अग्नि की ज्वालाएँ शीघ्र ही ऊपर उठने लगीं। उस समय सीता ने एक स्वर्ण प्रतिमा को आराधना का केन्द्र बनाते हुए पूजा की। वास्तव में सीता अपने व्रत एवं नियमों में पूर्ण रुपेण संलग्न थीं। यह निश्चय हो चला था कि उनकी साधना अवश्य ही फलवती होगी। वह कभी भी व्यर्थ नहीं जा सकती। सीता ने प्रार्थना की कि उनके स्वामी राम को युद्ब में पूर्ण विजय प्राप्त हो।

93

हे हूताशन देव ! आप हुतिपति हैं। आप सभी देवों में भी प्रमुख एवं अग्रगण्य हैं। आप सभी को सौभाग्य प्रदान करने वाले हैं। हे देव ! आप किसी भी पदार्थ को समाप्त कर आत्मसात कर सकने की पूर्ण सामर्थ्य रखते हैं। आप विश्व भर को उच्च आदर्शों एवं सुन्दर चरित्र का दान देते हैं। आप पृथ्वी, सागर तथा पर्वतों तक का भार वहन करने में पूर्ण समर्थ हैं।

94

आप एक उत्तम देवता हैं। आप शंकर के मस्तक पर तीसरे नेत्र में भी निवास करते हैं। आपको अष्टवदन भी कहा जाता है। आप एक ऐसे देवता हैं जिनको प्रत्यक्ष रुप में देखा भी जा सकता है। पवित्र, अष्टगुण भी सदैव ही आपके पास रहते हैं तथा त्रिगुण भी आपकी शक्ति के अन्तर्गत आते हैं। इस प्रकार इस जगत में, हे अग्नि देव ! आप सर्वशक्तिमान हैं ।

95

आप एक बहुत बड़े योद्धा भी हैं और एक बड़े शक्तिशाली राजा भी हैं। देव तथा दानव समान रुप से आपकी पूजा करते हैं। सम्पूर्णता को प्राप्त व्यक्ति भी आपकी अर्चना आराधना में लगे रहते हैं। यदि आपकी उपमा ढूंढ़ी जाय तो आपकी किरणें एवं ज्वालाएँ सहस्रों सूर्यों के समकक्ष मानी जा सकती हैं।

96

आपकी कृपा से ही इस जगत की रक्षा संभव है। आप सबके प्रति उदारता और करुणा का भाव रखते हैं। आप सभी को उचित आजीविका प्रदान करते हैं। तपस्वी सदैव ही आपकी उपासना कर अपने लक्ष्य को प्राप्त करते हैं। आपने ही बुद्धिमान एवं चतुर व्यक्तियों को इतनी गरिमा प्रदान की है। आप से प्राप्त गरिमा के ही कारण वे अच्छे तथा बुरे का स्पष्ट रुप से अन्तर बता सकते हैं। इस प्रकार आपने उन्हें विवेक दिया हैं। इसी शक्ति से गुणीजन प्रसन्नता का अनुभव करते हैं।

97

आप सभी पर सदैव ही कृपालु हैं। आप अपने स्वरुप में तुरन्त ही प्रकट भी हो जातें हैं, जिसके कारण सुख एवं प्रसन्नता प्राप्त होती है। आपने सभी मानवों को ज्ञान–विज्ञान का पूरा पाठ पढ़ाया है। इनसे मानव को अपार शक्ति प्राप्त होती है। उसी के माध्यम से मानव इस जगत को सम्पूर्णता की ओर ले जा सकता है।

98

केवल आपकी प्रसन्नता के लिए ही यह आवश्यक है कि आपके द्वारा मानव अपने मल एवं कलुष का परिष्कार करे। वास्तव में अग्नि देवता ही कलुष का हरण कर विश्व में प्रकाश भरते हैं। इससे सम्पूर्ण जगत के प्राणी दोषों एवं कलुषों से पूर्ण मुक्ति प्राप्त कर पाते हैं। स्पष्ट ही आप इस संसार के सभी मानवों से अपार प्रेम करने वाले हैं।

99

इस प्रकार राजपुत्री सीता ने अग्नि देव की पूजा–अर्चना की। वास्तव में देवी सीता एक महान पवित्रात्मा राजपुत्री थीं। अब उन्होंने मृत्यु के वरण का विचार समाप्त कर दिया था। उन्हें त्रिजटा से राम के विषय में पूरी सूचना प्राप्त हो चुकी थी। उन्हें अब पता लग गया था कि राजा राम सानंद सुवेला पर्वतमाला पर विराज रहे हैं। उनको अब यही दुःख था कि वे राम के विरह में व्यथित होकर उनसे मिलने की प्रतीक्षा में ही अपना समय व्यतीत कर रही थीं। उनसे वे कब मिल पायेंगी, इस विषय में उन्हें कुछ भी ज्ञान नहीं था। सुवेला शैल पर निवास करते हुए राम अध्ययन में तल्लीन थे। वे शिला पर लेटे ही लेटें अध्ययन करते रहते थे।

100

त्रिजटा ने बाद में राजपुत्री सीता के लिए भाँति–भाँति के सुस्वादु भोजन एवं व्यंजनों की व्यवस्था की। वे तृप्ति से भोजन कर सकें, यही उसकी इच्छा थी। भाँति–भाँति के मधुर पेय भी त्रिजटा ने सीता के लिए प्रस्तुत किये। सुगन्धित शर्बत, भाँति–भाँति के मेवे, मिष्ठान्न आदि सामने रखे गये। सीता ने

उनको सहर्ष स्वीकार किया। यह जानकर कि राम जीवित हैं, उनको भी अपार हर्ष था। जीवन की नव अभिलाषा उनमें जागृत हो गयी थी।

101

त्रिजटा विविध प्रकार से सीता का मनोरंजन भी करने लगी। उसने उनके साथ तरह–तरह के खेल–खिलवाड़ भी प्रारम्भ कर दिये। वास्तव में त्रिजटा को सीता से अपार प्रेम था। सीता की सेवा में त्रिजटा को अपार आनंद मिलता था। जब वह सीता को विरह कातर देखती थी, तो उसका हृदय करुणा से भर आता था। इसीलिए अवसर पाकर वह सीता का मन बहलाने की चेष्टा करती रहती थी। उनके साथ खेल–खेल कर मधुर स्वरों में वह गीत गाती थी। साथ ही साथ खेलती रहती थी। सीता को प्रसन्न करने के लिए वह भाँति–भाँति के हास–परिहास भी करती थी। इस प्रकार उस रात उन दोनों महिलाओं का समय अत्यन्त आनंदपूर्वक व्यतीत हुआ।

102

प्रातःकाल हुआ तो दिवस का प्रकाश बिखरने लगा। सम्पूर्ण क्षेत्र प्रकाश एवं सौंदर्य से भर गया। सीता ने जल से अपना मुख धोया। उन्होंने पूजा की। वे सत्यव्रत का पालन कर रहीं थीं। वे अपने कर्तव्यों के प्रति पूर्णरुपेण जागरुक थीं। समय से नियमानुसार पूजा करना वे कभी भी भूलती नहीं थीं। वे वास्तव में एक उच्च राजकुलीन महिला थीं। वे प्रतिदिन देवों का बड़ी श्रद्धा से स्मरण एवं आराधना करती थीं।

अध्याय – 18

1

राजपुत्री सीता का दुःख् राम की कुशलता का शुभ समाचार प्राप्त कर कुछ कम हुआ। एक ओर सीता राम की स्मृति में लीन थीं, दूसरी ओर रावण अपने लक्ष्य को पूरा करने के लिए सभी प्रकार के कुटिल राजनीतिक दाँव-पेचों का आश्रय ले रहा था। वह युद्ध में राम पर विजय प्राप्त करने के विविध तरीकों पर विचार कर रहा था। उसे बहुत सी कठिनाइयों का अनुभव हो रहा था। वह अत्यन्त दुःखी भी था। उसके वीरत्व की गरिमा जैसे समाप्त हो रही थी।

2

उसके यहाँ सूका साराना (सुख शरण) नामक एक महान शक्तिशाली योद्धा था। उसको अलौकिक शक्तियाँ भी प्राप्त थीं। वह एक निर्भीक,वीर एवं दृढ़ व्यक्तित्व वाला योद्धा था। युद्ध में अपने सहायक के रुप में उसे अपने साथ लेने में लोग गर्व का अनुभव करते थे। उसकी शक्तियों पर सभी को पूरा विश्वास था। उस वीर से रावण ने सहायता की अपेक्षा की तथा उसे आदेश दिया कि एक गुप्तचर के रुप में छिपकर वह सुवेला पर्वतमाला पर जाय। उसके चारों ओर घूम-घूम कर वह वहाँ की परिस्थितियों का पूरा ज्ञान प्राप्त करे तथा सविस्तार राम की सैन्य व्यवस्था की सूचना दे।

3

वह लौटकर बताये कि राम की सेना में कितने प्रवीर,योद्धा एवं वानर-समूह हैं इससे राम की सैन्य-शक्ति का पूरा अनुमान लगाया जा सकेगा। वे युद्ध में कौन सी गतिविधियों का अनुसरण करेंगे, उनके हृदय में कौन-सी योजनाएँ हैं आदि तथ्यों का पता लगाने का निश्चय हुआ। यह भी कहा गया कि यदि कोई अवसर प्राप्त हो सके तो सुग्रीव का वध कर दिया जाय अथवा कोई ऐसी परिस्थिति उत्पन्न कर दी जाय,जिससे सुग्रीव राम का साथ छोड़कर लंका के पक्ष में आ जाय।

4

रावण ने सुख शरण को समझा-बुझाकर सुवेला पर्वत पर जाने का आदेश दिया। रावण की आज्ञा का पालन करते हुए सुखशरण ने शीघ्र ही सुवेला शैल की ओर प्रस्थान किया। वह सुवेला शैलमाला पर जा पहुंचा। इस उद्देश्य से उसने एक वानर का वेष धारण कर लिया कि वह राम की सेना का पूरा समाचार ज्ञात कर सके।

5

उसे विभीषण ने देख लिया। उन्होंने सुखशरण को बुलाकर बड़े ही कठोर स्वर में उससे कहा "हे सुखशरण, तुम्हें इस स्थान पर आने की क्या अवश्यकता है ? तुमने वानर का वेष क्यों धारण किया है ? तुम बड़े ही नीच हो।"

6

विभीषण ने उससे आगे पूछताछ भी की। सुखशरण इस परिस्थिति को देखकर मौन हो गया। वह बहुत लज्जित भी हुआ। वह सोच रहा था कि वहाँ उसे नहीं आना चाहिए था। बाद में उस गुप्तचर पर आक्रमण किया गया, उसको पहचान लिया गया तथा बन्दी बनाया गया। उसे बांध कर राम के समक्ष उपस्थित किया गया।

7

राजा राम ने उस गुप्तचर को देखा। उन्होंने विभीषण तथा अन्य वरिष्ठ योद्धाओं से कहा "क्या कारण है कि इस वानर को इस प्रकार बाँध दिया गया है ? इसने क्या अपराध किया है ? इसकी इस दयनीय दशा को देखकर मुझे कष्ट का अनुभव हो रहा है ?"

8

हे राजन् ! आपकी जय हो। यह हमारे मित्र पक्ष का वानर नहीं है वरन् यह राक्षसों का एक गुप्तचर है। रावण के आदेश से यहाँ पर जासूसी का कार्य करने यह आया है। इसका नाम सुखशरण है। यह एक जगत प्रसिद्ध योद्धा है। इसने अपना कार्य पूरा करने के लिए वानर वेष धारण कर लिया है। यह हम सबका सर्वनाश करना चाहता है।

9

हे राजन ! अब आप इसके विषय में क्या कहते हैं ? यह एक गुप्तचर है, इसीलिए इसको पकड़कर आपके समक्ष लाया गया है। यही इसका अपराध है। इस पर जासूसी का आरोप है, इसीलिए आपके पास इसे लाकर हम सब यह जानना चाहते हैं कि इसके विषय में आपका निर्णय क्या है ? यदि आप आज्ञा दें तो इसका वध कर दिया जाय अथवा इसको बन्दीगृह में डाल दिया जाय।

10

राम ने आदेश देते हुए कहा कि इस राक्षस का वध करने की आवयकता नहीं है। यदि आप लोग इसको बन्दी बनाये रखेंगे तो यह अपने स्वामी को कृत कार्य की सूचना कैसे दे सकेगा ? इसलिए सर्वप्रथम इसको बन्धन–मुक्त करना चाहिए। यह कार्य भी शीघ्र ही किया जाना चाहिए। ऐसा करने से यह अपने स्वामी रावण के पास शीघ्र जाकर उनको आवश्यक समाचार दे सकेगा।

11

राक्षस सुखशरण को श्री राम का आदेश सुनकर बड़ा सन्तोष एवं हर्ष हुआ। उसने शीघ्र ही आगे बढ़कर उन्हें प्रणाम किया। वह वहाँ से लौट गया और लंका में जा पहुंचा।

12

लंका लौटने के पश्चात् उसके मन में किसी प्रकार का कोई भय अथवा कष्ट नहीं था। वह अपार प्रसन्नता का अनुभव कर रहा था। वह शीघ्र ही रावण के सभामंडप में जाकर उपस्थित हो गया। उसने रावण को वहां का समाचार सुनाया। जिन सैन्य गतिविधियों को उसने सुवेला शैलमाला पर देखा था, उनका सविस्तार वर्णन उसने किया। उसने महाराजा रावण के समक्ष पूरी परिस्थिति स्पष्ट कर दी। वह बोला–

13

हे महाराज रावण ! मुझे आपका यह आदेश प्राप्त था कि मैं सुवेला शैलमाला पर जाकर राम की सेना की गतिविधियों का पूरा पता लगाऊंतथा आपको सभी बातें भलीभाँति स्पष्ट कर दूं। मैं आपको यह सूचित करना चाहता हूं कि सम्पूर्ण सुवेला शैलमाला वानर समूहों से आच्छादित है। यहाँ तक कि पर्वत की घाटियों में नीचे की ओर भी उनको जाकर ठहरना पड़ रहा है। वे सम्पूर्ण शैलमाला पर छाये हुए हैं। वे पूरे पर्वतीय प्रदेश में खचाखच भरे हुए हैं।

14

सभी वानर योद्धा अपार शक्तिशाली हैं। उनकी सामर्थ्य एवं शक्ति की कोई सीमा नहीं है। वे बड़ी–बड़ी पर्वत श्रेणियों को तोड़ रहे हैं। वे विशाल पर्वत श्रेणियां हिमालय पर्वत की श्रेणियों की ही भाँति हैं। उन्होंने एक बड़े विशाल सेतु का भी निर्माण कर लिया है,जो बड़ा ही सुदृढ़ एवं विशाल है। इतना बड़ा सेतु इस जगत में पहले कभी भी किसी ने नहीं बनाया। यह एक महान सेतु है।

15

उनके कार्य विलक्षण हैं। क्षण भर में वे पर्वत श्रेणी के अस्तित्व को सागर का रुप दें देते हैं तथा सागर को विशाल पर्वत श्रेणी के रुप में परिवर्तित कर देते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि इन वानरों के पास अलौकिक शक्तियाँ भी हैं। अतएव उनके लिए कोई भी कार्य कठिन नहीं है। किसी प्रकार की बाधा भी उनकी गतिविधियों को रोक नहीं सकती है। उनके लिए सभी कार्य संभव एवं सरल हैं।

16

वास्तविकता तो यह है कि वानर–सेना अपार शक्तिशाली है। वे सभी राम के प्रति पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय देते हैं। उनके हृदय में पवित्रता, राम के प्रति अपार श्रद्धा एवं भक्ति है। राम के महान भक्त श्री हनुमान के पास विराट कल्पनाओं का भंडार है। वे तो इस दृष्टि से सभी से आगे हैं। वहाँ अंगद भी हैं, युद्धक्षेत्र में पीछे पैर रखने वालों में वे भी नहीं हैं। उनके मन में तो राम के प्रति अपार प्रेम का सागर लहराता रहता है।

17–18

(इन पंक्तियों में वानर सेना के प्रवीर वानरों के नाम दिये गये हैं। वास्तव में उन नामों को वायांग के नामों के साथ मिला दिया गया है, अतएव उनका अलग करना कठिन है। उनको वायांग में जानूलन के नाम से पुकारते हैं)

19

इस प्रकार महान वीर वानरों का अपार समूह युद्ध के लिए प्रस्तुत हो रहा है। उनकी सभी गतिविधियाँ बड़ी ही भयानक प्रतीत होती हैं। उनके मुख के तेज को देखते ही अपार भय उत्पन्न हो जाता है। वे बड़े ही पराक्रमी हैं। ऐसा प्रतीत होता है जैसे वे साक्षात यमराज के ही स्वरुप हों। वे जब अट्टहास करते हैं या कुछ शब्द बोलते हैं,तो भयंक़रता की दृष्टि से बिजली की गर्जना भी उनके समकक्ष नहीं टिक पाती है।

20

सभी वानर इसी प्रकार के हैं। उनमें कोई अपवाद नहीं है। उनके मन में राम के प्रति अपार स्वामिभक्ति है। श्री राम वास्तव में देवताओं के प्रतीक एवं अवतार हैं। राम के संबंध में सम्पूर्ण वानर सेना की यही धारणा है। इसीलिए राम के एक ही संकेत पर वे अपने प्राण देने को भी उद्यत रहते हैं।

21

जहाँ तक मेरा संवंध है। मैं यह कह सकता हूं कि जब वानरों ने गुप्तचर के रुप में मुझे बन्दी बना लिया तो मेरा वध भी अवश्यम्भावी हो गया था। विभीषण ने भी मेरे इस कार्य की घोर निन्दा की थी। राम एक बडे ही सुशील एवं महान व्यक्ति हैं। उन्होंने मेरे वध की आज्ञा न देकर मुझे बन्धन-मुक्त कर दिया। इस प्रकार मुझे जीवन दान दिया। हे महाराज ! मुझे इस प्रकार राम के हस्तक्षेप के कारण ही मुक्ति मिली है,अन्यथा मेरा वध निश्चित था।

22

इसीलिए महाराज रावण ! मैं आपसे स्पष्ट निवेदन करना चाहता हूं। आपके लिए यही उचित होगा कि आप राम के समक्ष अपनी पराजय स्वीकार कर उनसे समझौता कर लें। मेरा दूसरा प्रस्ताव आपसे यह भी है कि आप उनकी मित्रता को स्वीकार कर लें जिससे आपके जीवन में सुख और समृद्धि का वास हो। यही आपके लिए सर्वोचित और आवश्यक है। यह प्रस्ताव मैं इसलिए नहीं कर रहा हूं कि मैं आपके प्रति किसी प्रकार के द्रोह की भावना रखता हूं। मैं आपका सच्चा स्वामिभक्त सेवक हूं अतएव सत्य का उद्घाटन करना मेरा कर्तव्य है। इसी मनोभावना के कारण मैंने उचित प्रस्ताव प्रस्तुत किया है।

23

हे महाराज ! आप केवल शान्ति का मार्ग ही इस विषय में अपनाइए। इससे आपको प्रसन्नता प्राप्त होगी। शान्तिपूर्ण संवंधों को स्वीकार कर जब राम के साथ आप अपने संवंध दृढ़ कर लेंगे, तो आपको परम सन्तोष एवं सुख प्राप्त होगा। इसी से हम राक्षसों का भी कल्याण होगा। अब राजपुत्री सीता को शीघ्र ही ले आइए तथा राम को सौंप दीजिए। सीता के अपहरण के कारण ही इस महान संघर्ष की संभावना उत्पन्न हो गयी है।

24

इस प्रकार सुखशरण ने सबके कल्याण के लिए शान्ति की दिशा में बढ़ने का प्रस्ताव रावण के समक्ष रखा। उसका प्रस्ताव उचित एवं मंगलकारी था। रावण के मन में विजय की कल्पना बलवती हो चली थी। जब रावण को यह शान्ति-प्रस्ताव दिया गया,तो वह अपार क्रोध से उत्तेजित हो गया। रावण ने अत्यधिक क्रोधित होकर सुखशरण से कहा-

25

हे राक्षस ! तुझे धिक्कार है। तू महानीच है। तू एक अच्छा सेवक कभी नहीं हो सकता। तू नाममात्र के लिए ही एक राक्षस है। शत्रु से तू अत्यन्त भयभीत हो गया है। मुझे राम के प्रति भक्ति भावना का तू उपदेश देना चाहता है ? इसमें तुझे तनिक भी लज्जा का अनुभव नहीं होता है ?

26

अब मुझे पूर्ण परिस्थिति स्पष्ट हो गयी है। न तो कोई देवता मेरा शत्रु है, न ही कोई राक्षस मुझसे युद्ध करने आया है। केवल वानर सेना ही मुझसे संघर्ष करने आयी है। उसका कोई विशेष महत्व नहीं है। यह वानर बहुत ही साधारण एवं निम्न कोटि के हैं। जहाँ तक तुम्हारा संबंध है, तुम इस दृष्टि से दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में फंस गये थे। तुम कोई वीर योद्धा भी नहीं हो। तुम्हारे विचार बहुत ही उलझे हुए एवं विवेकहीन हैं। मुझे तो ऐसा लगता है कि शत्रु से तुम्हारी मिली भगत है।

27

एक समय था, जब एक महान योद्धा के रुप में तुम अपार शक्तिशाली थे। आज तुम्हारा वह व्यक्तित्व नहीं रह गया है। तुम बड़े ही डरपोक एवं कायर के रुप में मेरे समक्ष उपस्थित हुए हो। एक गुप्तचर के रुप में तुमने किसी प्रकार की भी प्रतिष्ठा प्राप्त नहीं की। इसीलिए मेरा आदेश है कि तुम शीघ्र ही यहाँ से भाग जाओ और शत्रु की दिशा में ही सीधे चले जाओ। उन दीन-हीन व्यक्तियों से शरण माँगो और सहायता की प्रार्थना करो। विभीषण के मार्ग का तुम भी अनुसरण करो।

28

क्रोध से लाल होकर रावण सुखशरण से कठोर वचन कहने लगा। उस अवसर पर सुखशरण रावण के समक्ष खड़ा था। वह बहुत ही भयभीत था, परन्तु उसने आग्रह करते हुए रावण से एक बार फिर प्रार्थना की कि हे महाराज ! आप मेरे अनुचित वचनों के लिए मुझे क्षमा प्रदान कीजिए। इस प्रकार के स्पष्ट वचन मैंने आपके प्रति प्रेमवश तथा स्वामिभक्ति के ही कारण कहे हैं। वास्तव में इनका और कोई अर्थ नहीं है।

29

हे महाराज ! यदि आपने राम से युद्ध करने का ही अन्तिम निर्णय कर लिया है तथा आपका यही उद्देश्य है तो आपका यह सेवक आपके साथ ही युद्धक्षेत्र में अपने प्राण उत्सर्ग करने को प्रस्तुत है। मैं आपको विश्वास दिलाता हूं कि युद्धक्षेत्र में मेरे प्राण का उत्सर्ग आपके लिए बहुत ही मूल्यवान सिद्ध होगा। आपके मन में मेरे प्रति सदैव ही अपार प्रेम की भावना रही है, फलतः युद्ध में मैं उसके अनुरुप ही आपके पक्ष में आचरण करुगा।

30

अव आप निर्णय ले कर जैसी राजनीति अपनाना चाहें, अपनाएं और विजय-श्री प्राप्त करने का प्रयत्न करें। यह सब शीघ्रातिशीघ्र प्रारम्भ करने की कृपा कीजिए। मैं आपके सेवक के रुप में आपकी सेवा करने के लिए सदैव प्रस्तुत हूं। किसी प्रकार की भी मुझे कोई आपत्ति नहीं होगी। अव आपकी जो भी आज्ञा होगी, उसका पालन करना मेरा कर्तव्य है। मुझे तो वही कार्य करना है जो आप चाहते हैं। यही मेरे जीवन का उद्देश्य भी है।

31

(वास्तव में सुख शरण ने रावण के समक्ष आत्मसमर्पण ही कर दिया) उसके पश्चात् उसने रावण से कहा कि हे महाराज ! जहाँ तक हमारे शत्रुओं का संबंध है उनके विषय में भी अव राजनीतिक दाँव-पेचों तथा अन्य उपायों पर अधिक विचार करने की आवश्यकता नहीं है। आपके शत्रु तो केवल वानरगण ही हैं, जो वहुत ही साधारण माने जा सकते हैं। उनके लिए तो आप शिकारियों का केवल एक दल ही भेज दीजिए,वे वानरों से युद्ध कर लेंगे। उनके अस्त्र-शस्त्र भी साधारण ही होने चाहिए। धनुष, वाण तथा शिकारी कुत्तों का समूह ही इस कार्य को सरलता से कर सकता है।

32

विजय के लिए वस इतना ही करना पर्याप्त होगा। आपके पास जो अन्य शक्तियाँ हैं, उनका प्रयोग वाद में आवश्यकतानुसार ही कीजिएगा। पहले के अभियान में यदि पूर्ण सफलता प्राप्त न हो तव इस विशाल सेना का प्रयोग किया जाना चाहिए।

33

इस प्रकार के स्वामिभक्तिपूर्ण वचन उस समय सुखशरण ने रावण से कहे। रावण अपने विचारों में पूरी तरह दृढ़ था। राम के विषय में ध्यान दिया जाना चाहिए, यही उसका विचार था। इधर राम भी वड़ी ही कुशलता से अपने शत्रुओं का नाश करने के लिए भाँति-भाँति के उपाय सोच रहे थे। विभीषण, सुग्रीव तथा हनुमान राम के अनन्य भक्तों में थे। उनके साथ राम विचार-विमर्श कर रहे थे। किस प्रकार रावण को परास्त किया जाय, इसी विषय पर अव राम का ध्यान केन्द्रित था।

34

राजा राम ने वानर अंगद पर ध्यान दिया। वे अंगद की अपार शक्ति से परिचित थे। वे अन्य किसी वानर योद्धा को इतना महत्व नहीं दे रहे थे। अंगद दृढ़ विचारों वाले बहुत ही शक्तिशाली योद्धा थे। वे एक प्रमुख प्रवीर एवं शूरवीर थे। उनके समकक्ष अन्य किसी योद्धा को नहीं रक्खा जा सकता था। इसीलिए राजा राम ने उनको अपना दूत बनाया। उनसे कहा गया कि वे रावण से लंका द्वीप में मिलें तथा भलीभाँति यह समझाएं कि रावण को भी प्रेम और शान्ति की ही स्थापना में योग देना चाहिए।

35

जब राम ने अंगद से रावण के पास जाने के लिए कहा तो वे अत्यन्त प्रसन्न हुए और प्रस्थान के लिए तैयार हो गये। उनका हृदय राम का दूत बनने के कारण अपार गौरव और हर्ष का अनुभव कर रहा था। उनके हृदय में राम के प्रति अपार श्रद्धा, प्रेम एवं स्वामिभक्ति थी। यही कारण था कि उन्होंने राम का दूत बनकर शीघ्र ही लंका के लिए प्रस्थान कर दिया। वे आकाश मार्ग से उड़कर लंकापुरी गये। वे उछलकर वहाँ जा पहुंचे। उनके वीर वेश एवं कठिन कार्य को देखकर सभी चौंक पड़े। उनके उछलने से वायु में कंपन उत्पन्न हो गया। लंका के सभी लोगों को इस गतिविधि से अपार आश्चर्य हुआ।

36

वायु के कंपन से पताकाएँ टूट-टूटकर पृथ्वी पर गिरने लगीं। यह स्पष्ट ही अशुभ लक्षणों का संकेत था। घनघोर वर्षा होने लगी। प्रचण्ड वायु के झोकों से वातावरण कम्पित हो रहा था। चारों ओर घना अन्धकार छाने लगा, जिसके कारण मन में भय उत्पन्न हो जाता था। इस प्रकार भीषण परिस्थिति-सी उत्पन्न हो गयी थी। पर्वतमालाएँ घोर शब्द करती हुई टूट-फूट रही थीं। वातावरण में चारों ओर भीषण शब्द गूंज रहा था। भयानक तूफानों से दशों दिशाएँ काँप रही थीं। धूल ऊपर उठ-उठ कर आकाश में छा गयी थी। राक्षसगण डर के कारण दौड़-दौड़ कर इधर-उधर भागने लगे थे। वे इतने घबराये हुए थे कि उन्हें कुछ भी नहीं दिखायी दे रहा था।

37

कुछ समय के पश्चात् अन्धकार प्रकाश में परिवर्तित हो गया। सूर्य देवता ने अपनी किरणों का जाल बिखेर दिया था। चारों ओर उजाला ही उजाला दिखायी दे रहा था। रावण के दुर्ग की दीवार पर चढ़कर अंगद ने लंका में प्रवेश किया। वे अत्यन्त वीरता एवं दृढ़ता से वहाँ पर उपस्थित हुए। उनमें लेशमात्र को भी डर नहीं था। उनको किसी प्रकार की कठिनाई का सामना नहीं करना पड़ा। वे सरलता से अपने गन्तव्य पर जा पहुंचे। वास्तव में अंगद के इस अभूतपूर्व कृत्य से रावण को आश्चर्य हुआ। उसे इससे बहुत कष्ट भी हुआ।

38

उस अवसर पर रावण अपनी सेना के साथ सभा–मंडप में बैठा हुआ था। उसकी सेना का बल अपार था। इन सभी अशुभ लक्षणों एवं संकेतों की उपेक्षा नहीं की जा सकती थी,पर उसका हृदय अपनी सेना की शक्ति एवं विशालता से प्रसन्न था। अंगद आगे बढ़े और उसके पास जाकर बैठ गये। उसके बाद उन्होंने रावण से निवेदन किया। वे धीरे–धीरे शान्त भाव से स्पष्ट स्वर में बोल रहे थे। उनकी वाणी स्पष्ट एवं प्रभावोत्पादक थी।

39

हे महाराज दशमुख ! हे उपस्थित सभासदों ! आप सभी मेरी बात पर पूरा ध्यान देने की कृपा कीजिए। आज मैं आप सबके मध्य में उपस्थित हूं। मैं जगत प्रसिद्ध वीर योद्धा बालि का पुत्र हूं। मेरा नाम अंगद है। परम प्रतापी रघुवंशी राजा राम ने,जो सभी भुवनों के स्वामी हैं उन्होंने आप सबके पास मुझे अपना दूत बनाकर भेजा है। यही कारण है कि आज मैं यहाँ उपस्थित हुआ हूं।

40

आज आप सबके लिए यह परम आवश्यक है कि मेरी बात पर विधिवत् ध्यान दें। मैं आपको राम का संदेश देने आया हूं। मेरा आपसे यह आग्रह है कि आप सब अपनी प्रजा के साथ राम के प्रति अपनी श्रद्धा एवं स्वामिभक्ति का परिचय दीजिए। आप उनसे अपने सुखी जीवन एवं कल्याण के लिए मैत्री संबंध भी स्थापित कीजिए,जिससे आपका जीवन सौभाग्यपूर्ण हो सके और सभी प्रकार का सुख आपको प्राप्त हो सके। आपके राजमहल में सभी प्रकार की अमूल्य वस्तुएँ हैं, उन सबको अपने साथ लेकर राम की सेवा में आप चलिए। मणि, माणिक, अमूल्य रत्न आदि के साथ राजपुत्री सीता को भी आप सब राम की सेवा में अर्पित करने का निश्चय कर लीजिए। सीता को लौटाना आपका परम कर्तव्य है।

41

यदि आप मेरे शब्दों की उपेक्षा करते हैं और देवी सीता को अपने साथ लेकर राम की सेवा में उपस्थित नहीं होते हैं,तो परिणाम बहुत भयंकर होगा। संभव है कि राम आप सबका सर्वनाश कर दें। इससे आप सबका अस्तित्व ही समाप्त हो जाएगा। निश्चय ही तब आप सब मृत्यु का वरण कर मिट्टी में मिल जायेंगे और कोई भी राक्षस शेष नहीं रह पायेगा। राम अपार शक्तिशाली योद्धा हैं। एक महान युद्धवीर के रूप में उनकी वीरता की प्रसिद्धि सम्पूर्ण जगत में हो चुकी है। यह दृढ़तापूर्वक कहा जा सकता है कि इस जगत में उनके समान कोई भी अन्य पराक्रमी योद्धा नहीं है।

42

क्या दर्पपूर्ण जीवन व्यतीत करना आवश्यक है ? यह स्मरण रखें कि यह जीवन सदैव ही नश्वर है। युवावस्था भी स्थिर नहीं है। कोई भी व्यक्ति सदैव ही युवावस्था में नहीं रह सकता। जीवन के सभी सुख एक क्षणिक प्रकाश अथवा चमक की भाँति ही हैं। उनकी चमक भी केवल पल भर को ही होती है। वह भी बहुत ही अस्थायी है। व्यक्ति के जीवन में सुख के कितने भी साधन क्यों न हों पर सभी साधन कुछ समय तक ही टिक पाते हैं। किसी भी स्थिर वस्तु से उनकी तुलना संभव नहीं है।

43

हे भ्रमित बुद्धि के राक्षस दशमुख ! तुम सदैव ही शीश उठाकर अपने को बहुत शक्तिशाली मानते रहे हो। जानबूझ कर तुम भ्रमात्मक परिस्थितियाँ उत्पन्न कर रहे हो। हे रावण ! तुम्हारी बुद्धि नष्ट हो गयी है। आश्चर्य है कि तुम परस्त्री का अपहरण करके भी अपने को महत्वपूर्ण मानते हो ? तुम्हारा हृदय नितान्त नीच है और तुम्हारे कार्य मूर्खतापूर्ण हैं। मैं तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूं कि राम के बाण अत्यन्त तीक्ष्ण एवं अग्नि की वर्षा करने वाले हैं। राम एक अनुपम पराक्रमी योद्धा हैं। मुझे ऐसा लगता है कि राम की महानता एवं युद्धयोग्यता से अभी आप भलीभाँति परिचित नहीं हैं, इसीलिए आपका व्यवहार इतना दर्पपूर्ण दिखायी दे रहा है। आपके हृदय में झूठा मद और मादकता है।

44

इस प्रकार सभी राक्षसों तथा महाराज रावण को भलीभाँति सावधान करते हुए अंगद ने उनके समक्ष पूरी परिस्थिति स्पष्ट कर दी। अंगद के दूत बनकर आने का उद्देश्य भी पूरा हो गया। राजा रावण अंगद के वचनों को सुनकर क्रोध से लाल हो गया। क्रोध से उसका शरीर थर–थर काँपने लगा। अब उसने भीषण एवं विकराल रूप धारण कर लिया था। उसकी भौंहें चढ़ गयी थीं। उसके मस्तक पर क्रोध से बल पड़कर कई रेखाएँ सी अंकित हो गयी थीं। इस प्रकार अंगद के स्पष्ट वचन सुनकर उसके क्रोध की सीमा न रही। उसका वेश अब क्रूरतापूर्ण हो चुका था। उसने अंगद से क्रुद्ध होकर इस प्रकार कहा :

45

हे वानर अंगद ! तुझे बढ़–चढ़ कर बातें करने में क्या किसी प्रकार की लज्जा भी नहीं आती ? तू बहुत ही अधम एवं घृणित प्राणी है। यह असंभव है कि मैं तेरे कहने मात्र से अपनी कल्पना अथवा विचारधारा में किसी प्रकार का परिवर्तन कर दूं। मैं अपने निश्चय पर दृढ़ हूं। यद्यपि तू महान योद्धा बालि का पुत्र है, फिर भी बड़ा ही अशिष्ट एवं हठी प्रतीत होता है। तूने बड़े–बड़े सम्भाषण भी किये हैं। क्या बालि की जो दशा हुई थी उसे देखकर तुझे लज्जा का अनुभव नहीं हुआ ? तू निश्चय ही नीचबुद्धि का वानर है। तेरा कर्तव्य है कि

अध्याय – 19

तू अपने से बड़ों का सम्मान कर। आश्चर्य तो यह है कि तू अपने से बड़े एवं शक्तिशाली व्यक्तियों को भी शिक्षा देने का साहस करता है।

46

तू सदा ही मधुर फल खाने की गहरी अभिलाषा रखता है। तू जीवन से निश्चय ही निराश हो चुका है। तू अभागा है। तू उन वस्तुओं को कभी नहीं देखता, जिन पर अन्य व्यक्तियों का अधिकार है। तेरे सभी कार्य तेरी अधम बुद्धि के परिचायक हैं। तू मेरे नीच शत्रु की सेवा में अपना पूरा जीवन अर्पित कर जीवन-यापन कर रहा है ? क्या तेरे पिता की मृत्यु ने अब तक तेरे हृदय को पूर्णरूपेण विदीर्ण नहीं किया ? तेरे ऐसे व्यक्तियों को ही गुरुद्रोही कहते हैं। वास्तव में तू बहुत ही प्रपंची एवं धोखेबाज प्रतीत होता है। तेरा व्यवहार असह्य एवं नीचतापूर्ण दिखायी देता है।

47

इतनी नीचता का परिचय देते हुए भी तू सन्तुष्ट नहीं है ? उसके बाद भी तू उन्हीं लोगों का अनुयायी बनकर उनका अनुसरण कर रहा है, जिनके कृत्य एवं विचार नीचतापूर्ण हैं। मेरी राय में तो तू वज्रमूर्ख वानर है। जहाँ तक मेरा संबंध है,उस विषय में तेरी यह धारणा दिखायी देती है कि मैं विवेकहीन व्यक्ति हूं। क्या मुझे कोई व्यक्ति झूठी चापलूसी करके प्रसन्न कर सकता है ? चाहे देवता भी प्रकट होकर मुझसे कहें कि मैं सीता को ले जाकर राम को समर्पित कर दूं, पर मैं ऐसा कभी नहीं करूंगा। तेरे कहने का तो मुझ पर कोई प्रभाव ही नहीं हो सकता है।

48

अतएव तुम यहाँ से शीघ्र ही लौट जाओ। अपने राजा राम को यह सूचित कर दो कि मैंने तुम्हारी बातों पर तनिक भी ध्यान नहीं दिया। मैं उनकी किसी इच्छा को पूरा नहीं करना चाहता। तुम मेरी ओर से उन्हें स्पष्टतः सूचित कर दो कि अब वे युद्ध की राजनीति को ही अपनाएँ और इसी गतिविधि से आगे बढ़ें।

49

इस प्रकार राम के दूत अंगद से दुर्वचन कहते हुए रावण बार-बार उनका अपमान करने लगा। फिर भी उसके मन में भय तो था ही। अंगद ने एक बार पुनः सचेत किया। वे भी क्रुद्ध होकर उठ खड़े हुए। उन्होंने भी रावण से क्रुद्ध होकर कहा कि हे अधम राक्षस ! तुमने भी मेरे समक्ष मनमाने अपशब्दों का प्रयोग किया है। तुम किसी के कथन पर कोई ध्यान नहीं देते हो। एक बार मैं फिर तुम्हें सचेत करना चाहता हूं। तुम्हारी भाग्य-रेखा अब स्पष्टतः सूचित कर रही है कि तुम्हारा तथा तुम्हारी सेना का सर्वनाश निश्चित है।

50

इस प्रकार अंगद ने रावण को सभी बातें समझा दीं। उन्होंने सब कुछ एक चतुर दूत की भाँति ही किया। उसके पश्चात् वे वहाँ से चले गये। उनके मन में लेशमात्र भी भय का भाव नहीं था। दशमुख रावण तथा उसकी सेना इस भीषण परिस्थिति एवं अंगद की दृढ़ता को देखकर डर और सहम गयी। सभा-मंडप में सभी लोग उपस्थित थे। उनका व्यवहार पूर्व की परम्परा की अपेक्षा बहुत भिन्न था। उनको अब आनंद नहीं आ रहा था। वे पहले की भाँति सभा में आनंद-उल्लास भी नहीं मना पा रहे थे। वे स्वभाव से ही बड़े अभिमानी थे, इसीलिए बनावटी रूप में निर्भय होने का बहाना बना रहे थे। रावण ही एक ऐसा राक्षस था जो वहाँ दृढ़तापूर्वक स्थिर था।

51

अंगद उस शैलमाला पर सीधे ही जा पहुंचे थे। उन्होंने भीतर प्रवेश किया। राम का विधिवत् अभिवादन करते हुए बड़ी ही विनम्रता तथा सेवा भाव से वे उनका अभिनंदन करने लगे। रावण ने जो भी बातें उनसे कहीं थीं, उन्होंने विस्तारपूर्वक राम के समक्ष कहना आरंभ किया।

52

इसी समय लक्ष्मण कुछ आगे की ओर बढ़ते दिखायी पड़े। उन्हें आगे बढ़ते देखकर नल तथा नील भी उनके साथ आगे बढ़ने लगे। उसके पश्चात् सुग्रीव भी वहाँ पर आकर उपस्थित हो गये। हनुमान, सुषेण एवं वीनाता भी साथ में चल पड़े। अंगद द्वारा लाये समाचार को सुनने के लिए सभी लोग उत्सुक थे। अन्य वानरगण भी उनके पास बैठ गये। अंगद ने जब सारी सूचना दे दी तब वानर उछलने-कूदने लगे। वे शोर मचाते हुए आगे बढ़े। आदेश लेकर वे पर्वतमाला के फल वाले वृक्षों से इच्छित फलों को तोड़-तोड़ कर खाने लगे। उस पर्वतमाला पर प्रायः उन्हें आनंदपूर्वक फल खाने का सुअवसर प्राप्त होता रहता था।

1

जब सभी वानरों ने पूर्ण रुप से तृप्त होकर फल खा लिये, तो उनमें आनंद की लहर दौड़ गयी। असंख्य वानर उस शैलमाला पर अवस्थित थे। उनकी गतिविधियाँ भी भाँति-भाँति की थीं। वे सभी बड़े ही भीषण एवं विकराल थे। वे परस्पर सभाएँ करते हुए विचार-विमर्श कर रहे थे। वे शत्रु पर आक्रमण करने के लिए सदैव ही उद्यत थे। यही उनकी गहरी अभिलाषा थी कि शत्रु पर अब आक्रमण कर दिया जाय।

2

रावण के पक्ष में भी राक्षसों का समूह अशान्त था। वे भी युद्ध के लिए आतुर हो रहे थे। उन्हें भी किसी प्रकार का सन्तोष नहीं था। भोजन करते हुए वे भी परस्पर विचार-विनिमय करते रहते थे। इसी प्रकार वे जब आनंदमग्न होकर मदिरापान करते थे, तो भी उनकी चर्चा का विषय वानर सेना पर आक्रमण ही होता था। वे मांसाहार कर रहे थे। उनके शरीर पर मणि-माणिक एवं सुवर्ण के हार शोभित थे। उनके मुख एवं वक्षस्थल पर सुगन्धित वस्तुओं के लेप लगे हुए थे। सभी राक्षस पुष्पों की मालाएं भी धारण किये हुए थे।

3

वीर राक्षस हाथों में तलवारें ले-लेकर खड़े हो गये। उनके हाथों में गदा, कटार, हंसिया, परशु, हथौड़ा, त्रिशूल, बाण धनुष आदि भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्र दिखायी दे रहे थे। निश्चय ही राक्षसगण युद्ध के लिए आतुर हो रहे थे।

4

बाहर निकलकर उन्होंने एक नवनिर्मित दुर्ग में प्रवेश किया। उनके हाथों में पताकाएं थीं तथा भाँति-भाँति के अन्य संकेत भी थे। उन सभी को वे अच्छी तरह धारण किये हुए थे। अश्वों को सजा-सजा कर युद्ध के लिए तैयार किया जा रहा था। हाथियों को भाँति-भाँति के हौदों से सुसज्जित किया जा रहा था। उन्हीं के ऊपर सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्र ले जाने की व्यवस्था की जा रही थी।

5

उसी समय राक्षसों की सेना की ओर से भीषण रव सुनायी दिया। वे सभी उच्च स्वरों में चिल्ला रहे थे। शान्ति एवं चैन का अनुभव वे नहीं कर पा रहे थे। इस स्थिति में भी रावण अनिष्ट की आशंका से घबराया हुआ था। जब उसे यह समाचार प्राप्त हुआ कि राम भी सुवेला शैलमाला पर वानर सेना के साथ ही साथ ही आये हुए

हैं तो वह बहुत चिन्तित हो उठा।

6

रावण ने जादू की कला के प्रभाव से अपना मायावी रुप प्रतिष्ठित किया। अब उसने इस रुप में प्रधान भूमिका निभाने का निर्णय लिया। सीता के प्रति उसका आकर्षण बढ़ गया और प्रणयजन्य लोभ की प्रवृत्ति भी तीव्रतर हो गयी। उसके हृदय में द्वेष का भाव भी आ गया। उसने सोचा कि इस परिस्थिति में तो उचित यही होगा कि मैं सीता का वध कर दूं। न तो सीता मेरे लिए ही चिन्ता का कारण बनेगी, न राम ही उनको प्राप्त कर पायेंगे। बहुत निराश एवं उदास होकर रावण ने ऐसा विचार बनाया।

7

संसार में जितनी भी बुरी कल्पनाएँ संभव हो सकती हैं,दुर्गुणों से उत्पन्न जितनी भी आपत्तियाँ किसी पर ढाई जा सकती हैं,उन सभी नीच व्यवहारों एवं कुप्रवृत्तियों के माध्यम से वह सीता को प्राप्त कर राम पर विजय पाना चाहता था। सुन्दर स्त्रियों की सहायता से भी वह भाँति-भाँति की दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियाँ राम तथा सीता के लिए उत्पन्न करना चाहता था। स्त्रियों के माध्यम से भी बहुत से कार्य संभव थे और उनका प्रयोग भी बड़ा ही महत्वपूर्ण था। उसमें अहंकार था। दर्प के मद में चूर होकर वह दृढ़ता से खड़ा हो गया। उसने पुनः पूरा विचार किया। उसने अन्तिम निर्णय यही किया कि युद्धक्षेत्र में ही वीर की भाँति संघर्ष करते हुए प्राणोत्सर्ग करना सर्वाधिक श्रेयस्कर होगा।

8

उसने शीघ्र ही अपने सभी मंत्रियों को मंत्रणा के लिए एकत्रित किया। उनमें प्रहस्त, महापार्श्व, घटोदर, विरुपाक्ष, विलोहिताक्ष तथा यूपाक्ष छः प्रधान सलाहकार मंत्री थे। उन्हें एक साथ ही बुलाया गया। रावण के समक्ष आने का आदेश उन्हें प्राप्त हो गया।

9

सेना के प्रधान सेनापतियों को भी एक साथ ही उपस्थित होने का आदेश दिया गया। वे सभी सेनाध्यक्ष महान रणकुशल योद्धा थे।

10

रावण का पुत्र देवान्तक भी वहाँ बुलाया गया। नरान्तक आदि भी वहाँ पर निमंत्रित किये गये। रावण के छोटे भाई कुम्भकर्ण के पुत्रों–निकुम्भ तथा कुम्भ को भी बुलाया गया। वे दोनों योद्धा महान पराक्रमी थे। विश्व भर में उनकी वीरता की प्रशंसा थी।

11

सेना के मंत्री आकर उपस्थित हुए। वे सभी प्रवीर योद्धा थे। उनके नीचे सेना के अन्य वरिष्ठ अधिकारी भी बैठे थे। उनके साथ अन्य सहस्त्रों राक्षस योद्धा भी थे। उन सभी ने एक साथ मिलकर सभा में एकत्रित होकर युद्ध की गतिविधियों पर विचार किया। वे सभी युद्ध में बड़े ही कुशल थे। उनके अस्त्र–शस्त्र बड़े ही तीक्ष्ण थे तथा किसी के भी मन में भय उत्पन्न कर सकते थे। उनकी शस्त्र–शक्ति इन्द्र के वज्र की भाँति थी।

12

उसके पश्चात् सभी राक्षसों को यह आदेश दे दिया गया कि वे युद्ध के लिए तैयार होकर युद्ध–स्थल में चलें। उसी समय युद्ध की घोषणा के लिए रण वाद्य बजाये गये। सभी राक्षस युद्ध की भेरियाँ बजाने लगे। यह अनुमान था कि उनकी संख्या हजारों सहस्त्र थी। हो सकता है कि राक्षसी सेना की संख्या इससे अधिक भी रही हो। उनका स्वर बहुत ही डरावना था। लग रहा था, वज्रपात की भाँति रव हो रहा हो। उसको सुनकर हृदय–विदीर्ण हो सकता था। वे भूमि से पाताल तक अपनी आवाज गुंजित करना चाहते थे। उस स्वर को सुनकर सारा संसार डर गया था। भूमि.आकाश तथा सम्पूर्ण वातावरण में वह घोर शब्द प्रतिध्वनित हो रहा था। पृथ्वी का गोलार्द्ध जिसकों अन्धकुण्ड के नाम से पुकारते हैं, भी जैसे भयवश फट कर दो भागों में विभक्त हो गया हो। उसके पश्चात् अपने ही स्थान पर वे स्थिर हो गये।

13

युद्ध के वाद्यों के साथ ही सहस्त्रों ढोल तथा असंख्य अन्य रण वाद्यों का स्वर भी गूंज उठा, जिसको सुनकर मन में भय उत्पन्न हो रहा था। यदि उन यंत्रों को शीघ्रता से बजाया जाता तो उनका स्वर संवर्तक मेघों की भाँति गर्जना करता। पृथ्वी इस भीषण रव से कम्पित हो रही थी। इस कठोर स्वर से मानवों के हृदय विदीर्ण हुये जा रहे थे। उनके शरीर भयातुर होकर काँप रहे थे। उन्हें ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वहाँ पर यमराज का आगमन हो रहा हो। बजते हुए बड़े–बड़े ढोलों का शब्द वातावरण में गूंज रहा था। इस प्रकार अनेक भीषण स्वर वातावरण को प्रकम्पित कर रहे थे। राक्षसों की सेना युद्ध के लिए प्रयाण करने को प्रस्तुत थी।

युद्ध के लिएं प्रस्तुत अनेक अश्व हिनहिनाते हुए शब्द कर रहे थे। वे सभी युद्ध कौशल में पूरी तरह अभ्यस्त थे। जिस पर भी वे आक्रमण करते थे, उसे पूरी तरह नष्ट कर देते थे। मदिरा पिये हुए गज-समूह भी मत्त होकर चिंघाड़ रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि सम्पूर्ण लंकापुरी को जैसे वे नष्ट-भ्रष्ट कर देंगे। उनकी चिंघाड़ वातावरण को प्रकम्पित कर रही थी। जंगलों में रहने वाले वन्य-पशु भी इधर-उधर भय के कारण भाग रहे थे। वे बहुत अधिक घबरा गये थे। वे पृथ्वी पर मूर्च्छित होकर गिर गये थे। उनके मन में गहरा भय बैठ गया था। यह भीषण स्वर केवल गगन-भेदी ही नहीं, वरन हृदय-बेधी भी था। उस कठोर स्वर से पर्वत श्रेणियाँ चूर-चूर होकर नष्ट हो गयी थीं।

15

सभी वीर योद्धा बहुत ही प्रसन्नता का अनुभव कर रहे थे। उन्हें शंख-ध्वनि सुनायी देनी लगी थी। जब सभी शंख तथा रणवाद्य एक साथ बज उठे,तो वातावरण में अनेक स्वर फैल्-फैल कर प्रतिध्वनित होने लगे। उन वाद्य-यंत्रों की संख्या की गणना असंभव थी। इन स्वरों को सुनकर युद्ध में जाने के लिए सभी आतुर हो रहे थे। वहाँ पर कुछ ऐसे योद्धा युद्ध के लिए प्रस्तुत थे जो सिंहनाद कर रहे थे। वे युद्ध की भीषणता का संकेत भी दे रहे थे। उनके हाथों में चमकती तलवारें तथा हंसिए आदि अस्त्र-शस्त्र थे। वे हाथों में बड़े-बड़े लट्ठ लेकर भाँति-भाँति से भय उत्पन्न करने की चेष्टा कर रहे थे। वास्तव में जो योद्धा रणकुशल थे, वे पांच प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के प्रयोग में पूर्ण निपुण थे। वे युद्ध के लिए आगे बढ़ रहे थे। वे आक्रमण के लिए पूर्णतः तैयार थे।

16

जो चतुर वीर हाथी पर सवार थे, वे हाथियों को शिक्षा देकर युद्ध की गतिविधियों के लिएं उन्हें तैयार कर रहे थे। वे सभी उन मस्त-मतवाले हाथियों पर सवार थे। घोड़ों पर सवार योद्धा बड़ी ही कुशलता से हाथों में तलवारें पकड़े हुए थे। इस प्रकार अश्व-पालन विद्या में निपुण अश्व चालक वीर वेश में दिखायी दे रहे थे। जो राक्षस युद्ध-कला में बहुत ही निपुण थे तथा जो अध्ययनशील भी थे, वे बाण विद्या का अध्ययन कर रहे थे। वे सभी रथों पर सवार थे। जिन रथों पर वे सवार थे,उनके सारथी भी बहुत ही कुशल चालक एवं योद्धा थे। वे सभी युद्ध के लिए पूरी तरह तैयार थे।

17

ऐसे राक्षस बड़े ही भयानक लग रहे थे, जिनके हाथों मे मगर को फाँसने वाले पाश भी थे। युद्ध के लिए वे बहुत आतुर थे। उन वीरों के वक्षस्थल बहुत चौड़े थे। उनकी तलवारों पर जड़े हुए पदक नक्षत्रों की भाँति चमक रहे थे। उनके मध्य में स्वर्ण, मणि-माणिकों की आभा एक अनुपम सौंदर्य पैदा कर रही थी। उनका व्यक्तित्व

अनूठा था। उन्हें देखकर आश्चर्य भी होता था। उनके शरीर सिंहों के शरीर की भाँति थे, जिनको देखते ही डर लगने लगता था। यदि यमराज भी उनकी भीषण आकृतियों को देखते, तो उनके मन में भी भय उत्पन्न हो जाता। भय से वे भी अपने नेत्रों को मूंद लेते। यहाँ तक कि यदि काल-देवता भी उन विशालकाय भयानक युद्धवीर योद्धाओं पर दृष्टिपात करते, तो उनको देखकर उन्हें निश्चय ही घबराहट उत्पन्न हो जाती। उनकी भीषणता देखकर काल के मन में भी डर की भावना आ जाती।

18

इस प्रकार वे सभी अपार शक्तिशाली राक्षस योद्धा युद्ध क्षेत्र के लिए प्रस्थान करने लगे। वे अपने शरीर पर लौह-कवच-वस्त्र धारण किये हुए थे। उनकी अपार संख्या के कारण मार्ग जैसे अवरुद्ध-सा हो गया था। हे अग्र भाग पर स्थित सैनिकों ! आगे बढ़कर शीघ्र ही युद्ध के लिए प्रयाण करो तथा अन्य याद्धाओं को आगे बढ़ने का अवसर दो। ये शब्द भीड़ में बार-बार प्रतिध्वनित हो रहे थे। सैनिकों के अस्त्र-शस्त्र तीक्ष्ण धारों के कारण चमक रहे थे। चौड़ी-चौड़ी कुल्हाड़ियाँ पाँच-पाँच फुट लम्बी थीं। पूर्वकाल में जब भी उन्होंने युद्ध में अपने शत्रुओं पर प्रहार किया,तो एक प्रहार में ही शत्रु धराशायी हो गये। कभी भी दो बार प्रहार की आवश्यकता नहीं पडी थी। उनका एक प्रहार ही सर्वनाश के लिए पर्याप्त था।

19

जिस समय वीर योद्धागण युद्ध के लिए प्रयाण कर रहे थे,उस समय उनका स्वर भयानक रुप से वातावरण को प्रकम्पित कर रहा था। सभी लोग उनकी इन गतिविधियों को आश्चर्य से देख रहे थे। पूरे मार्ग भर गामलाम वाद्य यंत्रों का स्वर गूंजता जाता था। वे भाँति-भाँति के बड़े-बड़े शंख बजा रहे थे। वीरों की पत्नियों के हृदय आनंद और उल्लास के साथ साथ गौरव का भी अनुभव कर रहे थे। वे अपने स्वामियों को युद्ध में जाते देखकर प्रसन्नता से हंस रही थी। अपने प्रेमियों के कंधों का सहारा ले कर वे उनके साथ आगे बढ़ रही थीं तथा राजमहल के बाहरी द्वार तक उन्हें पहुंचाने जा रही थीं। इस प्रकार प्रेमियों का उत्साह वे बढ़ा रही थीं। वे मधुर स्वरों में अपने स्वामियों से यह भी कह रही थीं कि हे स्वामी ! आप अपने कार्य को बड़ी कुशलता एवं चतुरता से पूरा कीजिए। युद्ध में विजय प्राप्त कर आपको यश एवं गौरव प्राप्त हो सके, यही कामना है। वे उन वीरों का मनोबल बढ़ा रही थीं।

20

परन्तु यह परिस्थिति सभी स्थानों पर नहीं थी। ऐसी स्त्रियाँ भी थीं जो युद्ध की भीषणता की कल्पना कर बहुत ही डर गयीं थीं। वे डर के कारण रो-रोकर चिल्ला रही थीं। बहुत सी स्त्रियाँ तो इतनी डर गयी थीं कि उनकी घबहराहट उनके मुख से ही प्रकट होने लगी थी। उनके मुख का रंग पीला पड़ गया था। वे अपना मस्तक

नीचे लटकाये हुए बैठी थीं तथा पृथ्वी की ओर चुपचाप देख रही थीं। उनकी दशा भी दयनीय थी। प्रेमियों से प्रेम के कारण उनके विछोह में अब वे सभी विह्‌वल हो रही थीं। वीरों के हृदय में अपनी स्त्रियों की इस दशा से करुणा उत्पन्न हो रही थी। उनके हृदय पर इस दृश्य का बहुत बड़ा प्रभाव पड़ रहा था। प्रेम एवं करुणा के कारण उनक नेत्रों में आँसू छलक रहे थे। वे अपनी प्रेमिकाओं को समझाने के लिए लौट पड़े तथा उनके पास आकर उन्होंने उन्हें आलिंगन में ले लिया। अपने हाथों से ही अपनी पत्नियों की आँखों के आँसू उन्होंने पोंछे तथा सान्त्वना देने का प्रयास किया।

21

बड़े प्यार से अपनी स्त्रियों को सन्तोष एवं सान्त्वना देते हुए उन योद्धाओं ने समझाया। वे सभी स्त्रियाँ विरहाकुल हो रही थीं। उन्होंने अपने पतियों से प्रार्थना की कि हे स्वामी ! कुछ समय के लिए आप और साथ रहें। हम सबको अपार दुःख हो रहा है। हमें ऐसा प्रतीत होता है कि आप हमसे प्रेम नहीं करते। आप हमें छोड़कर युद्धक्षेत्र की ओर क्यों जा रहे हैं ? हम सब आपके प्रेम में व्याकुल हो रही हैं। आप इतनी शीघ्रता से युद्ध क्षेत्र के लिए प्रयाण मत कीजिए। यदि आप ऐसा करेंगे तो हम सब अग्नि की चिता में कूद कर अपने प्राण दे देंगी। यदि आप युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो गये तो हमारे जीवन का कोई अर्थ ही शेष नहीं रह जाएगा। इस प्रकार के वचन उन स्त्रियों ने अपने वीर पतियों से कहे। प्रेम विवश वीरों ने भी उनके कथनानुसार कुछ समय उनके पास ठहरकर प्रतीक्षा की।

22

अभी तक ऐसी बहुत सी सुन्दरियां थीं जो प्रेमियों को युद्ध में नहीं जाने दे रही थीं। बार–बार उनसे मिलकर भी उनकी अभिलाषा की पूर्ति नहीं हो पा रही थी। वे बड़ी ही व्यग्र थीं। वे अत्यन्त सुन्दरी युवतियाँ थी। वे जैसे थकी हुई और उदास –सी लग रहीं थीं। वे अपने प्रेमियों को अपने सम्पूर्ण आकर्षण एवं सौंदर्य से निकट रखने का प्रयास कर रही थीं। मीठे–मीठे शब्दों से वे रुक जाने का आग्रह कर रहीं थीं। उन सुन्दरियों के मुख इस स्थिति में और भी अधिक आकर्षक लग रहे थे। वे इतनी सुन्दर थीं कि कोई भी उनको देखकर उन्हें पाने के लिए व्याकुल हो सकता था। वे इतनी आकर्षक थीं कि उनके सौंदर्य के कारण मन में उनके प्रति तड़प एंव कामेच्छा जागृत हो जाती थी। उनके बड़े–बड़े काले–काले बालों के गुच्छे अत्यन्त ही सुन्दर लगते थे। उनके कोमल कपोलों पर काले–काले तिल भी थे, जो कपोलों के सौंदर्य को और भी अधिक बढ़ा रहे थे। वे मधुर स्वरों पें अपने स्वामियों को वुला रहीं थीं। प्रेमातिरेक वश उनमें खड़े होकर चलने की भी शक्ति नहीं रह गयी थी। उनके घुटने काँप रहे थे। उनके कटि–भाग बहुत ही कोमल थे।इस प्रकार वे सम्पूर्ण यौवन भार से लदी हुई थीं। उनको रास्ता चलने में बड़ी कठिनाई हो रही थी।

23

हे स्वामी ! आप मेरी सहायता कीजिए। मुझे ऐसा लगता है कि यह परिस्थिति मेरे लिए बहुत ही अधिक कठिन है। लगता है आपको मुझसे लेशमात्र भी प्रेम नहीं है। आप मेरे लिए कभी भी व्याकुल नहीं होते हैं। आज जैसी मेरी दशा है, वैसी दशा का अनुभव आप क्यों नहीं करते हैं ? मैं अकेली आपके बिना यहाँ नहीं रह सकती हूं। मैं भी आपके साथ ही युद्धक्षेत्र चलूंगी। आप मुझे अपने चरणों से विलग मत कीजिए। विरह की अग्नि में मुझे मत झुलसाइए। यदि मान लीजिए कि युद्ध में आपकी मृत्यु हो जाती है, तो इस परिस्थिति में मेरा क्या हाल होगा ? मैंने यह निर्णय किया है कि मैं भी आपकी मृत्यु के बाद आत्महत्या कर लूंगी। इस प्रकार आपके साथ ही साथ मैं भी मृत्यु का वरण कर सकूंगी। आपके प्रति अपनी गहरी स्वामिभक्ति का पूरा परिचय मैं दूंगी.जिससे यह स्पष्ट प्रमाण मिल सके कि मेरे हृदय में केवल आपके लिए ही अथाह प्रेम था। आप ही मेरे एकमात्र उपास्य देवता थे।

24

आप मुझे अकेली छोड़कर युद्ध में चले जायेंगे,तो आपकी भाँति मुझे यहाँ पर इतने प्यार से कौन दुलरायेगा। कौन मेरे शरीर का संवर्द्धन एवं रक्षण करेगा ? यदि मेरे ऊपर कोई कठिन विपत्ति आयेगी तो केवल मैं आपका नाम ही पुकारुगी। आपकी भाँति अन्य कोई अंतरंग मित्र भी मेरे पास नहीं है,जो मेरे प्रति इतना प्रेम भाव रखता हो। मेरा कोई भाई भी नहीं है। मेरे माता-पिता मेरे साथ रहना उचित नहीं समझते। यहीं नहीं, वे मुझसे बहुत असन्तुष्ट भी हैं। मैंने उनको धोखा देकर बहुत सी भूलें भी की हैं। मैं उनसे छिप-छिप कर बिना उनकी आज्ञा के सदैव ही आपके पास मिलने आती थी। मैं आपसे अपार प्रेम करने के कारण मिलने के लिए प्रतिक्षण तड़पती रहती थी। इसीलिए कभी भी आपसे मिलने के लिए मैने अपने माता-पिता की आज्ञा नहीं ली। वे मुझसे अब बहुत ही अप्रसन्न हैं।

25

विरह व्याकुल सुन्दरियां अपने स्वामियों से जब प्रेम निवेदन करती हुई प्रार्थना करने लगीं, तब वीर राक्षसों के हृदय प्रेमाधिक्य से द्रवित होने लगे। इसलिए उन वीरों को भी ठहरना पड़ा। यही नहीं, वीरों के लिए और भी मानसिक उलझनें उत्पन्न हो गयी थीं। कुछ वीरों की स्त्रियाँ अभी हाल ही में गर्भवती हुई थीं, अतएव उनका हृदय तो इस कठोर परिस्थिति में और अधिक विदीर्ण हुआ जा रहा था। वे अपनी आँखों के आँसुओं को रोक नहीं पा रही थीं। पत्नियों ने जब अपने पति को उनके प्रेम का स्मरण दिलाया तो वे गंभीर हो गये। इस करुणा एवं प्रेम की गहरी अवस्था में उन वीर राक्षसों के हृदय द्रवित होकर विदीर्ण हुए जा रहे थे।

26

हे मेरी प्रिय पत्नी ! तुम अपने आपको प्रेम क बन्धन में इतना अधिक मत बाँधो। हे प्रियतमे ! तुम घर लौट जाओ। घर के सभी लोग तुम्हारी बेचैनी से प्रतीक्षा कर रहे होंगे। तुम्हारा हृदय भी बड़ा ही कोमल है। मुझसे मिलने की कामना सदैव ही तुम्हारे मन में रही है। आज भी तुम उन्हीं स्मृतियों में खोई हुई हो। तुम्हारे पैर थक कर शक्तिहीन हो गये हैं। जो लोग युद्धक्षेत्र में जाते हैं, वे बड़ी ही भयानक एवं भीषण परिस्थिति में रहते हैं। सदैव ही उनका जीवन मृत्यु की दाढ़ों के बीच में दबा हुआ रहता है। उनका जीवन अत्यन्त कठिन होता है। हे प्रिये ! मैं तुम्हारे ऊपर बहुत करुणा और प्रेम रखता हूं। मैं तुमने आशा करता हूं कि तुम वास्तव में अपने स्वास्थ्य एवं शरीर की पूरी देखभाल करोगी और स्वयं ही उसकी रक्षा करती रहोगी। तुम यह भी ध्यान रखना कि इस समय तुम्हारी गर्भावस्था है, तुम्हें इन सभी बातें पर पूरा ध्यान देना चाहिए।

27

हे प्रियतमे ! मैं तुम्हें विश्वास दिलाना चाहता हूं कि युद्ध में मेरी मृत्यु नहीं होगी। वास्तव में मेरे शत्रु ही मेरे द्वारा युद्ध में धराशायी होंगे। मैं निश्चयपूर्वक यह भी कह सकता हूं कि राम की ही इस युद्ध में पराजय होगी। तुम्हारे राजा रावण तीनों लोकों में सर्वशक्तिमान हैं। तीनों लोकों के लोग रावण के प्रति पूरी स्वामिभक्ति का परिचय अवश्य देंगे। वे सभी लंकापुरी के पूरे हितैषी हैं। हे प्रियतमे ! तुम कुछ समय तक मेरी प्रतीक्षा करो। तुम सदैव ही मुझसे प्रेम करती रहो। मैं जानता हूं कि इसी विश्वास के कारण मैं युद्ध में विजयी हो जाऊंगा। मेरी कभी पराजय नहीं हो सकती। तुम मुझे सहर्ष विदा करो। अब मैं तुमसे बाहर जाने की आज्ञा चाहता हूं। इस प्रकार के शब्द वीरों ने अपनी पत्नियों से कहे। वीर योद्धा इस शब्दों के साथ ही घर से बाहर निकल आये। उनके हृदय में एक विचित्र प्रकार की कसमसाहट-सी थी, जिससे वे अभी भी मुक्त नहीं हो सके थे।

28

जब वीर राक्षसों के छोटे-छोटे बालक उन्हें देखकर करुणा के स्वर में चिल्लाने लगे, तो राक्षस वीरों का मन भर आया। प्रेम के कारण उनका हृदय द्रवीभूत हो गया। उन्होंने शीघ्र ही अपने बच्चों को गोद में उठा लिया। उनका चुंबन करते हुए वे उन्हें प्यार देने लगे। उसके पश्चात् उन्होंने अपने-अपने बालकों को अपनी-अपनी पत्नियों की गोद में दे दिया। उनसे यह भी कहा कि हे प्रियतमे ! इस बालक को अपनी गोद में लो। इसका मन भाँति-भाँति की मधुर बातें से बहलाने की चेष्टा करो। बड़े ही प्यार से इसका लालन-पालन करो। इसके पालन-पोषण पर सदैव ही पूरा ध्यान दो। यह स्पष्ट ही है कि इस भीषण युद्ध में मैं पूरी तरह वीरता का परिचय दूंगा। इस अवस्था में संभवतः प्राणोत्सर्ग भी करना पड़े। इस छोटे बालक को देखकर मेरे मन में इसके प्रति अपार करुणा का भाव जागृत हो गया है। यदि इस को किसी प्रकार का कष्ट हो तो तुम इस बालक को मधुर-मधुर लोरियां गाकर सुला देना।

29

इन शब्दों को कहते हुए वीर राक्षसों ने अपनी पत्नियों को समझाया। यह सब सुनकर उन पत्नियों का हृदय विदीर्ण हुआ जा रहा था। अब वे भ्रम में पड़ी हुई थीं। वे न तो कुछ बोल पा रही थीं और न बालकों को अपनी गोद में उठा ही पा रही थीं। उनका मन दुःखी होने के कारण शरीर में अब कोई शक्ति शेष नहीं थी। उनके नेत्रों से आँसू टपक रहे थे। उनके प्रेम का सर्वनाश उनके सामने ही हो रहा था। उनके सम्पूर्ण शरीर को प्रेम की लहरें आन्दोलित किये हुए थीं। प्रेमावेश में अपने स्वामी के दोनों चरणों का हाथों से वे स्पर्श करने लगीं। बहुत धीमे स्वर में रोने लगीं। वीर राक्षसों में भी अपनी प्रेमिकाओं की यह दशा देखकर गहरी करुणा जागृत हो गयी। उन्होंने अपनी स्त्री का आलिंगन कर लिया। वे आग्रहपूर्व अपनी स्त्री को भवन के भीतर ले गये। उन्होंने कहा–

30

हे मेरी प्रियतमे ! तुम अपने दुःखों को दूर करो। तुम्हें किसी प्रकार के कष्ट का अनुभव नहीं करना चाहिए। प्रेमी तथा प्रेमिका,पति एवं पत्नी की भाँति दुःख उठाने के लिए दाम्पत्य सूत्र में कभी नहीं बंधते हैं। उनका उद्देश्य जीवन को सुखी एवं सार्थक बनाना ही है। हम पति–पत्नी हैं। हमारे तुम्हारे मिलन का जीवन में एक विशेष उद्देश्य है। दुःख एवं कष्ट से तुम्हें जीवन में कभी भी कोई हर्ष अथवा उल्लास प्राप्त नहीं हो सकता है। जीवन के अन्त तक इस मिलन का सुख महत्वपूर्ण है। केवल मेरे प्रति तुम्हारा अपार प्रेम एवं स्वामिभक्ति ही हमारे जीवन को सौभाग्यपूर्ण बना सकते हैं। इसमें तुम्हारा सबसे अधिक महत्वपूर्ण योगदान है। हे प्रियतमे ! तुम से ही मुझे सब सुखों की प्राप्ति संभव है। यदि कोई स्त्री अपने पति के प्रति पतिव्रता के नियमों का पालन नहीं करती है. तो निश्चय ही उसका पति उससे अलग हो जाता है। दुष्चरित्र स्त्री निश्चय ही नरक में जायेगी।

31

इसकी अपेक्षा कुछ लोगों का भाग्य मेरी तरह भी होता है। मैं महाराज रावण के चरणों का एक साधारण सेवक हूं. अतएव सेवा करना ही मेरा कर्तव्य है। उनके प्रत्येक शब्द एवं प्रत्येक आदेश का पूरी तरह पालन करना ही मेरा धर्म है। किसी भी सेवक को स्वामी की आज्ञा सदैव ही शिरोधार्य करनी चाहिए। यदि सेवक स्वामी की आज्ञा का उल्लंघन करेगा. तो अन्त में उसे नरक में तपते तेल के कढ़ावों में उबाला जायेगा। इसीलिए मैं तुमसे आज्ञा लेकर युद्धक्षेत्र में जाने को प्रस्तुत हुआ हूं। अब अपने आपको सन्तुलित करके मैं युद्ध में जाने की तैयारी कर रहा हूं तथा युद्ध क्षेत्र के लिए यहीं से अब मैं प्रस्थान कर रहा हूं।

32

इसके पश्चात् वीर राक्षसों ने भाँति–भाँति के उपदेश देकर अपनी पत्नियों को आश्वस्त किया। धार्मिक

पुस्तकों में व्यक्ति के जो कर्तव्य बताये गये हैं, उनसे उन्हें पूरी तरह अवगत भी कराया। सभी शिक्षाओं के प्रति उन्हें सचेत भी किया। इससे उनकी प्रियतमाओं को कुछ सन्तोष भी प्राप्त हुआ। उनका हृदय प्रसन्न हुआ और उनका रुदन भी समाप्त हो गया। उन्होंने अपने स्वामियों के प्रति पूर्ण स्वामिभक्ति और पतिव्रत का संकल्प लिया। उसके बाद वे एक दूसरे को आलिंगन देने लगे तथा भाँति-भाँति से एक दूसरे का मन प्रसन्न करने लगे। वे एक दूसरे से प्रेम प्रकट करते हुए बाहर निकल गये। इसके पश्चात् उनकी पत्नियाँ भी भय से मुक्त हो गयीं। स्त्रियों ने अपना पूरा साज-श्रृंगार किया। वे उठ खड़ी हुईं। अपने स्वामी के गले में पुष्पों का हार पहनाया तथा उनकी पूजा की।

33

वे वीर राक्षस अपने भवन से युद्धक्षेत्र में जाने के लिए बाहर निकल आये। उस समय उनका स्वर इतना तीव्र था कि मानो गुरु गंभीर गर्जना-सी हो रही हो। प्रधानमंत्री प्रहस्त को रावण की ओर से यह आदेश प्राप्त हुआ कि वे युद्ध के लिए प्रस्तुत हों। उनके लिए यह भी आदेश था कि वे सभी योद्धाओं को अपने-अपने क्षेत्रों में जाने का दिशा-निर्देश करें। प्रहस्त अब काफी वृद्ध हो चुके थे। वे बहुत ही अनुभवी एवं महान सेनापति थे। उन्होंने अपनी पूरी अवस्था युद्धक्षेत्र में ही व्यतीत की थी। वे लंकापुरी के पूर्वी क्षेत्र में अवस्थित थे तथा वहीं से अपनी राजनीतिक गतिविधियों का विधिवत संचालन कर रहे थे।

34

रावण के मंत्री घटोदर को युद्धकला में विशेष गौरव प्राप्त था, इसीलिए उनका बहुत सम्मान था। वे बहुत प्रसिद्ध भी थे। दूसरे मंत्री महापार्श्व एक महान रणकुशल सेनानायक थे। उनको दक्षिणी क्षेत्र के रक्षक के रूप में नियुक्त किया गया था। वे इस क्षेत्र की रक्षा के लिए प्रस्तुत थे। प्रसिद्ध वीर इन्द्रजीत को आज्ञा दी गयी थी कि वे भी इन सेनानायकों की, युद्ध में जहाँ भी आवश्यकता पड़े, संभव सहायता करें। इन्द्रजीत पूरी तैयारी के साथ पश्चिमी क्षेत्र की रक्षा कर रहे थे। उत्तरी क्षेत्र में भी वे राजनीतिक गतिविधियों का भली भाँति संचालन कर रहे थे।

35

मंत्री विरुपाक्ष को राजमहल की सुरक्षा का पूरा भार सौंपा गया था। उनसे कहा गया था कि वे राजमहल की पूरी देखभाल करें। उनके मित्रों को यह भी आदेश दिया गया था कि वे राजमहल में निवास करने वालों पर पूरा ध्यान दें। वहाँ की सुरक्षा के लिए इनका वहीं रहना आवश्यक था। जितने भी अस्त्र-शस्त्रों की आवश्यकता थी, उन्हें वहाँ एकत्रित कर दिया गया। यह निर्देश था कि यदि शत्रु यहाँ आ जाय तो तुरन्त ही उस पर आक्रमण कर दिया जाय। यदि शत्रु बाण वर्षा करे तो किसी को भी युद्धस्थल छोड़ कर कभी भागना नहीं चाहिए।

36

उन मंत्रियों ने सेनापति के रुप में अपने सैनिकों को इस प्रकार आदेश दिया। वे सभी शीघ्र ही राजमहल की रक्षा के लिए प्रस्तुत हो गये। ऐसा कोई भी सैनिक नहीं था जो अस्त्र-शस्त्रों से पूर्णरुपेण सुसज्जित नहीं था। वे सभी शस्त्रों से लैस,अनुशासन का पालन कर रहे थे। वे रक्षा करने की पूरी सामर्थ्य रखते थे। किसी भी सैनिक को पीछे रहने की आवश्यकता नहीं है। सभी को अपने कर्तव्य का पालन करने के लिए आगे बढ़ना चाहिये - इस प्रकार से सभी को आदेश दिया गया। बाद में भीषण शब्द करती हुई पूरी सेना साथ-साथ कई टुकड़ियों में आगे बढ़ी। यह घोर रव बहुत ही भय उत्पन्न कर रहा था।

37

राक्षसों की सेना का क्रोध प्रखर अग्नि की ज्वालाओं की भाँति बढ़ रहा था। वे एक ही आक्रमण में सम्पूर्ण वानर सेना का सर्वनाश करने को प्रस्तुत थे। बड़ी ही क्रूरता से, क्रुद्ध होकर वे बदले की भावना स` आगे बढ़ रहे थे। वे अपना मुंह फाड-फाड़ कर चिल्ला-चिल्ला कर आगे बढ़ रहे थे। इससे भय उत्पन्न हो रहा था। उनका प्रयास था कि राम का शीघ्र ही वध कर दिया जाना चाहिए। युद्ध में निश्चय ही हमारी विजय होगी। यही वाक्य वे बार-बार कह रहे थे। वे महाभिमानी थे और सदैव ही अहंकारपूर्ण बातें करते रहते थे।

38

उनको इस बात का कोई भी ज्ञान नहीं था कि वे अपने सर्वनाश की ओर स्वयं ही आगे बढ़ रहे थे। वे नहीं जान पा रहे थे कि अन्त में कुल वर्ग के सहित उन राक्षसों का संहार हो जायेगा। उनका भय भी तब पूर्ण रुप से समाप्त हो गया था। पथ में उन्होंने जंगली एवं शिकारी कुत्तों को देखा। कागों को भी उन्होंने देखा। उनकी संख्या की गणना करना कठिन था। वे भीषण शब्द करते हुए आगे बढ़े चले आ रहे थे। वे अपनी प्रसन्नता एवं हर्ष प्रकट कर रहे थे। उनकी प्रसन्नता इस बात का पूरा संकेत दे रही थी कि वे सम्पूर्ण नीच वृत्ति के प्राणियों का संहार करने के लिए ही उद्यत हो रहे है। अर्थात् सम्पूर्ण राक्षसों का संहार कराने की दिशा में ही वे आगे बढ़ रहे हैं।

39

इस प्रकार रावण की सम्पूर्ण सेना अपने अस्त्र-शस्त्रों को एकत्रित एवं सुसज्जित कर युद्ध के मैदान में आक्रमण के लिए प्रस्तुत थी। जब श्री राम ने यह समाचार सुना तो उन्होंने अपने छोटे भाई लक्ष्मण को बुलाकर इस परिस्थिति से अवगत कराया। लक्ष्मण एक कुशल एवं चतुर योद्धा थे। वे तुरन्त ही राक्षसों की सेना से संघर्ष करने के लिए तैयार हो गये। वे बड़ी निपुणता से राम के प्रति अपार स्वामिभक्ति का परिचय देते हुए खड़े हो गये। सम्पूर्ण वानर सेना को उन्होंने तत्काल सुसंगठित कर लिया। युद्ध के लिए वे सब तैयार हो गये।

40 + 41

इस प्रकार लक्ष्मण जी के आदेश पर वानर सेना के प्रमुख वीर योद्धा रावण की सेना से संघर्ष के लिए युद्ध क्षेत्र में आ गये।

42

वानर सेना के सेनाध्यक्ष तथा प्रवीर अपने-अपने वानर समूहों को लेकर युद्ध में कूद पड़े। उन्होंने अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने के लिए घोर सिंहनाद किया। सभी अपार प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे। उनके कोलाहल से वातावरण युद्धमय हो उठा था। दूर-दूर तक उनके शब्द सुनायी पड़ रहे थे। पर्वत शिखरों को तोड़-तोड़ कर वे अपने हाथों में ले रहे थे। सुवेला पर्वत के बडे-बड़े शिलाखण्डों को वे अपने अस्त्र-शस्त्र के रुप में प्रयोग करने के लिए ले आये थे। पर्वत पर खड़े वृक्षों को भी उखाड़-उखाड़ कर वे अपने हाथों में ले रहे थे। सुवेला पर्वत माला के सभी वृक्षों को उन्होंने उखाड़ डाला था। वहाँ पर अब कोई भी वृक्ष शेष नहीं रह गया था।

43

कठोर पत्थरों के बड़े शिलाखण्डों तथा तीव्र एवं नुकीले पत्थरों को बड़ी सरलता से काट-काट कर वानर सेना अपने हाथों में उठा रही थी। ये पत्थर ही वास्तव में वानर-सेना के प्रधान अस्त्र-शस्त्र थे, जिनको ले लेकर वानर सेना रावण की राक्षसी सेना से संघर्ष करने को प्रस्तुत थी। वानर सेना की इस तैयारी एवं उनके उत्साह को देखकर सभी को अपार प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था। राम ने देव शतरुद्र (शिव) की पूजा-आराधना की तथा उनकी आज्ञा ले कर ही युद्ध के लिए प्रस्तुत हुए।

44

राम की माता कौशल्या ने देवों की प्रशंसा में आठ सौ प्रार्थनाओं की रचना की थी। आराधना के लिए माता कौशल्या ने उन प्रार्थनाओं को अपने पुत्र राम को दे दिया था। उन प्रार्थनाओं में इतनी शक्ति थी कि उनके द्वारा राम अपनी पूर्ण सुरक्षा कर सकते थे। माता कौशल्या ने यह पूजा की प्रार्थनाएँ उनको बाल्यावस्था में ही सिखा दी थीं। वे शरद्चन्द्र की भाँति पवित्र एवं निर्मल थीं। उनके माध्यम से राम की अवस्था भी लम्बी हो सकती थी तथा वे सदैव ही युद्ध में विजयी हो सकते थे। यह प्रार्थनाएं राम ने देवी की आराधना में समर्पित कीं। उन्होंने अपने मंगल की कामना की। जब प्रार्थना एवं आराधना का कार्य पूरा हो गया तो राम युद्ध के लिए आगे बढ़े।

45

जब राम ने युद्ध के लिए प्रयाण किया तो पृथ्वी हिलने लगी। उसमें कम्पन उत्पन्न हो गया और भूचाल–सा आ गया। सम्पूर्ण मार्ग में रक्त की वर्षा –सी हो रही थी। यह उनकी विजय के लिए शुभ लक्षण थे। क्या वास्तव में अब राम की विजय में किसी प्रकार का कोई संदेह था ? सभी सुन्दर–सुन्दर हिरन मार्ग में उनके बाएं हाथ की दिशा की ओर दौड़ रहे थे। भाँति–भाँति के मधुर शब्दों में कलरव करते हुए पक्षी अपना हर्ष प्रकट कर रहे थे। वे वातावरण को उल्लासमय बना रहे थे।

46

उनके समक्ष भाँति–भाँति के शुभ लक्षण दिखायी देने लगे। वहीं पर अनेक शिकारी कुत्ते दिखायी दिये। वे भौंक–भौंककर शोर मचाते हुए राम की सेना का स्वागत करते–से दीख रहे थे। इस प्रकार अनेक अच्छी और शुभ स्थितियाँ उनके सामने आने लगीं। वे सभी निश्चित रुप से शुभ परिणामों का संकेत दे रही थीं। अपने स्वभाव वश राम संसार के सभी प्राणियों का कल्याण चाहते थे। उनके उच्च चरित्र की सबसे बड़ी महानता यही थी। राम की गतिविधियाँ भी शत्रुओं के मन में भय उत्पन्न कर रही थीं।

47

शुभ तथा अशुभ लक्षणों की विद्या का विभीषण को बहुत सुन्दर ज्ञान था। वे बड़ी विलक्षण बुद्धि से इनकी व्याख्या कर संकेतों को समझ रहे थे। उन्होंने शीघ्र ही राम के पास आकर उनसे – हे रघुकुल तिलक ! हम सबको अब किसी प्रकार का भय नहीं मानना चाहिए। मुझे स्पष्ट दीख रहा है कि अब शत्रु का शीघ्र ही संहार हो जायेगा। आपकी इस युद्ध में निश्चय ही विजय होगी। जो लक्षण मेरे समक्ष प्रकट हो रहे हैं, उनसे स्पष्ट हो रहा है कि शत्रु की हार निश्चित हैं।

48

जब विभीषण ने राम से इतने आशाप्रद वचन कहे,तो राम को अपार प्रसन्नता प्राप्त हुई। वानर सेना के प्रमुख योद्धाओं तथा वानर समूहों में भी आनंद एवं हर्ष की लहर फैल गयी। वे बड़ी ही तीव्रता, आतुरता एवं शीघ्रता से अधम राक्षसों का वध करने को मचल पड़े। वे नीच राक्षसों को नष्ट कर पृथ्वी का भार कम करने के लिए उद्यत थे। विशेष आनंद उनको तब हुआ, जब विभीषण द्वारा बताये गये शुभ लक्षणों के परिणाम के विषय में उनको जानकारी मिली। उन्हें पूरा विश्वास हो गया कि अब विजय उनकी ही होगी।

49

राम की वानर–सेना लंकापुरी में स्थित रावण के राजमहल के पास वाले क्षेत्र तक पहुंच गयी। सभी वानरों

ने एक साथ मिलकर सिंहनाद किया। उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कोई भयानक मृगराज भीषण गर्जना करता हुआ दहाड़ रहा हो। उन वीर वानरों की आँखों में एक विचित्र चमक एवं तेज झलक रहा था। उनकी आँखें जलते हुए अंगारे की भाँति दीख रही थीं। उनके नख बड़े ही तीव्र, तीक्ष्ण एवं कठोर थे। उनके दांत भी बहुत ही पैने थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था, कि वे सभी मृत्यु के देवता यमराज के अन्तरंग मित्र हों तथा राक्षसों के प्राणों का हरण करने के लिए आये हों।

50

वे पश्चिमी क्षेत्र की ओर तीव्रगति से आगे बढ़ते चले गये। उसके पश्चात् उन्होंने अपने क्षेत्रों को बाँट लिया। इस प्रकार वे सभी दिशाओं में विभक्त हो गये। वे स्थान–स्थान पर समूहों में खड़े हुए दिखायी दे रहे थे। उन्होंने पश्चिम तथा दक्षिण दिशाओं वाले क्षेत्रों में बिखर कर उसे पूरी तरह घेर लिया। जो अन्य वानर समूह थे, वे महल के पूर्वी भाग की ओर आक्रमण करने के लिए चले गये। वे पूर्णरुपेण सुव्यवस्थित एवं अनुशासित थे। वे बड़े ही भयानक लग रहे थे। वानरों की उन क्षेत्रों में बाढ़ आ गयी थी। वे भीषण स्वर में कोलाहल मचा रहे थे।

51

सागर के तट पर बिखरे हुए सिकताकणों की गणना इस संसार में कौन कर सकता है ? इसी प्रकार वानर सेना की गणना करना भी संभव नहीं था। वह भी असीम थी। वे लंकापुरी में इतनी अधिक संख्या में प्रवेश कर गये थे कि उनके कारण लंका में कोई स्थान रिक्त नहीं दिखायी दे रहा था। उन्होंने सभी स्थानों को घेर लिया था। वे एक दूसरे को धक्का देते हुए आगे बढ़ रहे थे।वे क्रम से उत्तरी तथा दक्षिणी क्षेत्रों में खड़े थे। इस प्रकार लंका के राजमहल को उन्होंने पूरी तरह से घेर लिया था। चारों ओर से वानर समुदाय राजमहल को ढके हुए था। उन्होंने ऐसा घेरा डाला था कि वृत्ताकार रुप में राजमहल घिर गया था। इस प्रकार लंकापुरी के राजमहल के चारों ओर वानर समूह भरे पड़े थे।

52

आगे बढ़ते हुए वानर–समूह की पंक्तियाँ बिल्कुल सीधी थीं। कहीं भी उन वानरों की इस श्रृंखला में कोई कमी नहीं दिखायी दे रही थी। वे क्रम से आगे बढ़ रहे थे । यह क्रम कहीं भी टूटता दिखायी नहीं दे रहा था। ऐसे बहुत से वानर समूह थे, जिन्होंने अभी तक युद्व के लिए प्रयाण ही नहीं किया था। इस प्रकार सुवेला पर्वत से लेकर वानर सेना का क्रम श्रृंखला की भांति आगे बढ़ रहा था। यह श्रृंखला कहीं भी भंग नहीं हुई थी। कुछ अन्य वानर–समूह सुवेला पर्वत के शिखरों पर अभी तक चढ़े हुए थे। वानर–सेना का समूह निरंतर क्रमबद्व ढंग से आगे बढ़ रहा था तथा लंकापुरी को सभी दिशाओं से घेर रहा था। वे वानर श्वेत चीटियों की पंक्तियों

की भाँति चारों ओर बिखरे हुए थे। कुछ ऐसे भी वानर समूह थे, जो अभी–अभी सागर पार कर उपस्थित हुए थे। वे भी राम के सैन्य–दल का अंग बन गये थे।

53

महेन्द्र पर्वत पर स्थित वानर–समूह अभी तक वहीं थे। उन्होंने युद्ध के लिए वहाँ से अभी तक प्रयाण नहीं किया था। सैकड़ों सहस्त्रों तथा लाखों की संख्या में वानरों की यह सेना वहाँ दिखायी दे रही थी। उसकी गणना करना संभव नहीं था। जो वानर समूह सागर पार करके आये थे, वे प्रतीक्षा में खडे थे। सभी काफी थके हुए थे। वे आश्रय की खोज में थे। उनमें से कुछ वानर श्रान्ति दूर करने के लिए सो गये थे। कुछ इधर–उधर टहल रहे थे। कुछ वहाँ से दूर हट कर आराम कर रहे थे तथा कुछ वहीं पर बैठै हुए नींद के झोंके ले रहे थे।

54

बढ़ते हुए वानरों के पीछे भी बहुत से वानर लगातार आ–आकर उनसे मिल रहे थे तथा उस श्रृंखला को अविच्छिन्न बना रहे थे। वानर सेना के एकत्रित हो जाने पर चारों ओर का वातावरण भयावह होने लगा था। कोलाहल करते हुए वे वानर भीषण निनाद कर रहे थे। उस समय वहाँ पर बहुत बड़ी संख्या में वानरों के कई समूह थे। वहाँ उन्हीं वानरों की गतिविधियाँ दृष्टिगोचर हो रही थीं। उनकी गतिविधियों के कारण मानो पृथ्वी में दरार–सी पड़ रही थी, पर्वत श्रेणियाँ जैसे फूट–फूट कर बिखर–सी रही थीं तथा आकाश जैसे ऊपर से टूट कर पृथ्वी पर गिरा जा रहा था। यह परिस्थिति वानर समूह के भीषण कोलाहल ने लंकापुरी में उत्पन्न कर दी थी।

55

वे सभी वानर युद्ध के लिए तैयार थे। वे केवल आदेश की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे राक्षसों के वंश को ही समूल नष्ट करना चाहते थे तथा बड़े ही विकराल रुप में युद्ध की कामना कर रहे थे। अपने हाथों को बार–बार मसलते हुए वे क्रोध का प्रदर्शन कर रहे थे। वे सभी रावण से उसकी नीचता का बदला लेना चाहते थे। उनके शरीर पर लम्बे–लम्बे रक्त वर्ण वाले बाल थे, जो कोमल एवं आकर्षक थे। उससे वातावरण में लालिमा सी बिखर गयी थी। सभी वानर आनंद एवं उल्लास मना रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था, जैसे अग्नि का रक्त सागर लहराता हुआ आगे बढ़ता चला आ रहा हो तथा राक्षसों को ये अग्नि–ज्वालाऍं निगल जाने के लिए मानो आगे बढ़ रही हों।

56

वानर समूहों की भाँति-भाँति की गतिविधियाँ दिखायी दे रही थीं। उनकी सभी बातें उचित भी प्रतीत नहीं होती थीं। इसका कारण यह था कि युद्ध क्षेत्र में शीघ्र ही राक्षसों से संघर्ष करने के लिए वे उतावले हो रहे थे। वे अपने हाथों तथा उंगलियों को आगे बढ़ा-बढ़ा कर कुछ संकेत कर रहे थे। संघर्ष के लिए वे उद्यत थे तथा अवसर पाते ही युद्ध-क्षेत्र में आगे बढ़कर डट जाने की कामना कर रहे थे। वे परस्पर वार्तालाप भी कर रहे थे। दूसरे वानर समूह भी थे। वे प्रसन्नता से चारों ओर दृष्टिपात कर रहे थे। ऐसा लगता था जैसे दूसरों का ध्यान अपनी ओर आकर्षित कर रहे हों। वानर समूह शत्रुओं को सुन्दर युवतियों की भाँति कोमल मानकर देख रहे थे। उनकी दृष्टि में शत्रुओं से डरने का कोई कारण नहीं था; इसीलिए वानर समूह उनके समक्ष निर्भय होकर खड़े हुए थे।

57

उन सभी वानरों को आदेश दिया गया था कि वे प्रतीक्षा करें। वे पहले आगे बढ़कर आक्रमण न करें। यदि वास्तव में वे सच्चे वीर योद्धा हैं तो उन्हें पहले आक्रमण नहीं करना चाहिए। घायल होकर आक्रमण करने वाले को प्रत्युत्तर स्वरुप मारा जाय, तभी वीरता शोभा देती है। जो युद्ध में सर्वप्रथम दूसरों पर अथवा शत्रु पर अकारण आघात करता है तथा उसे युद्ध में घायल कर देता है, उसे वीर-योद्धा नहीं मानना चाहिए। जो इस प्रकार का व्यवहार करता है और पहले आक्रमण करता है, उसका व्यवहार कभी उचित नहीं माना जा सकता। इस प्रकार प्रवीरों जैसा उच्च स्तर का आचरण बनाये रखना प्रत्येक योद्धा का परम कर्तव्य है।

58

वानरराज सुग्रीव को राम द्वारा धर्म की पूरी शिक्षा दी गयी थी। उनको अच्छाई एवं बुराई का अन्तर पूरी तरह स्पष्ट कर दिया गया था। उन्हें उचित एवं अनुचित का पूरा ज्ञान था। वे सदैव ही धार्मिक शिक्षाओं पर ध्यान देते हुए उचित अथवा अनुचित बातों पर पूरा ध्यान देंगे यह आशा फिर भी नहीं की जा सकती थी क्योंकि उनका वानर शरीर था और उनका व्यवहार भी वानर-प्रकृति के अनुसार उनके मन तथा इच्छाओं पर आधारित था। वे वानर स्वभाव का परिचय भी दे सकते थे। वास्तव में स्वभावतः वानर बुद्धिहीन ही माना जाता है परन्तु सुग्रीव वानर होते हुए भी धर्माचरण करते रहे। उनके सभी कार्य धर्म-सम्मत होते थे। यह सब श्री राम की ही कृपा का फल था। यह राम की ही अपार शक्ति थी कि वे सम्पूर्ण विश्व को धर्म के आचरण का विवेक प्रदान कर रहे थे।

59

सभी वानर समूह सुग्रीव के आदेशों का पूरा-पूरा पालन करते थे। उनके संकेतों पर वे चलते थे। उनकी आज्ञा को टालने की शक्ति किसी में नहीं थी। वानरराज सुग्रीव बहुत प्रसन्नता से आनंदपूर्वक वानरों की सभी

गतिविधियों का निरीक्षण कर रहे थे। उनके विचार शान्त थे। वे स्थिर बुद्वि के वानर थे तथा उचित निर्णय ले सकते थे। वे भी शान्त होकर यह प्रतीक्षा कर रहे थे कि जब राक्षसगण उन पर आक्रमण करें, तभी उनका प्रत्युत्तर देना उचित होगा। उनके हृदय में धैर्य था,परन्तु अन्य वानर–समूह उतावले हो रहे थे।

60

राजा रावण को ज़ब यह सूचना प्राप्त हुई कि वानर सेना ने चारों ओर से लंकापुरी पर घेरा डाल दिया है, तो उसका हृदय और अधिक काँपने लगा। उसे ऐसा अनुभव हुआ कि अब उसे कहीं से भी कोई सहायता प्राप्त नहीं हो सकेगी। उसे बड़ा कष्ट होने लगा और वह डर गया। परन्तु उसे देखने से ऐसा प्रतीत होता था कि उसको किसी प्रकार का भय नहीं है। वास्तव में यह राजाओं के चरित्र के अनुकूल ही है। जो बात उसके हृदय को द ुःखी कर रही थी,उसको उसने अपने हृदय में ही छिपा लिया था। किसी को उसने उसका आभास तक न होने दिया। इस प्रकार यह किसी को पता नहीं चल पाता था कि उसके मन में भय एवं कष्ट भी है।

61

रावण शीघ्र ही उठकर खड़ा हो ग़या। वह निकल कर तुरन्त ही बाहर आया तथा उसने पूरी परिस्थिति का निरीक्षण किया। उसने अपने राजमहल के चारों ओर के क्षेत्र पर दृष्टि डाली। अब न तो वहाँ कोई धान का खेत था, न ही किसी प्रकार का जंगली क्षेत्र ही दिखायी दे रहा था। पर्वतों की घाटियों पर भी उसने दृष्टि डाली। वे भी दिखायी नहीं दे रही थीं। राजमहल के चारों ओर का क्षेत्र वानर समूहों से ढका हुआ था। सभी ओर वानर–सेना भरी पडी थी। सभी वानर एक दूसरे से सट कर खड़े थे। इस प्रकार सम्पूर्ण क्षेत्र जैसे वानरमय हो गया था।

62

रावण का भय अब वास्तविकता का रुप ले चुका था। जब उसने असंख्य वानर सेना को राजमहल के चारों ओर देखा तो उस वानर सेना का उसको कहीं ओर–छोर ही दिखायी नहीं दिया। वह वानर सेना उसको अपार सागर की भाँति दिखायी दे रही थी। उसमें उंची–उंची लहरें उठ रहीं थीं। यदि वानर सेना सागर की भाँति थी, तो वानरगण जिन शिलाखण्डों को अपने हाथों पर उठाये हुए थे,वे मूंगे कीचट्टानोंकी भाँति दिखायी दे रहे थे। वास्तव में छोटी–छोटी पहाडियाँ भी एक विचित्र दृश्य–सा उपस्थित कर रहीं थीं। रावण को उस समय ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसका राजमहल कोलाहल की घाटी में चला गया हो। वानरों का कोलाहल सम्पूर्ण वातावरण को आतंकित क़िए हुए था।

63

उसे उस भीषण परिस्थिति में कोई उपाय भी नहीं सूझ रहा था। उसने इस समस्या पर गंभीरता से विचार किया, पर इस आपत्ति से बचने का कोई मार्ग उसे दिखायी नहीं दिया। अपने झूठे अभिमान के कारण वह वहीं पर स्थिर होकर खड़ा रहा। वास्तव में इन परिस्थितियों में राजाओं का यही चरित्र होता है। अर्थात् अहंकार ही उनकी शक्ति होती है। रावण ने शीघ्र ही अपनी सेना को आदेश दिया कि वे शत्रु पर आक्रमण कर दें तथा युद्व-क्षेत्र में आगे बढ़कर संघर्ष करें। देश की रक्षा में ही उनकी योग्यता का परीक्षण एवं गरिमा थी। युद्वक्षेत्र में प्राणोत्सर्ग करना ही वीरोचित कार्य है।

64

रावण की सेना के प्रमुख वीर इन्द्रजीत के पास जाने के लिए आगे बढ़े। वहाँ इन्द्रजीत की भी शक्तिशाली सेना थी। जिन योद्वाओं को सर्वप्रथम आक्रमण करने का आदेश दिया गया था, उनको युद्वक्षेत्र में संघर्ष करने के लिए पहले एक स्थान पर एकत्रित कर लिया गया था। सभी राक्षस योद्वा उत्तरी क्षेत्र की सुरक्षा के लिए आगे आये थे। वे सभी पूरी तरह अस्त्र-शस्त्रों से लैस थे और युद्व के लिए तैयार थे। उनको आवश्यकतानुसार कई टुकडियों में विभाजित कर दिया गया था। उसके पश्चात् सुव्यवस्थित ढंग से वे आक्रमण के लिए आगे बढ़े। पूर्ण अनुशासन से सन्तुलित होकर उन योद्वाओं ने सभी क्षेत्रों की सुरक्षा का भार संभाला। उनको स्पष्ट आदेश दे दिये गये थे। पृथक-पृथक क्षेत्रों को प्रत्येक सेनानायक को सौंपकर उनके कर्तव्यों के प्रति उन्हें सचेत भी कर दिया गया था।

65

धान आदि के खेतों की भूमि समतल थी। इसीलिए सबसे पहले रथों को आगे बढ़ाया गया। उसके पश्चात् पदाति (पैदल चलने वाले सैनिक) तथा अश्व एवं अश्वारोहियों को रक्खा गया। जो धनुर्धर थे तथा जिनके पास बाण थे,उनसे कहा गया कि वे वन में प्रवेश करें। सेना के सबसे अग्र भाग में गजों को सुरक्षा के लिए रक्खा गया। यदि मार्ग में बड़ी-बड़ी नदियाँ भी आ जायं तो गज-सेना उनको बड़ी सरलता से पार कर सकती थी। नदियों को पार करने के लिए हाथियों की बड़ी आवश्यकता थी। उस मार्ग में गहरी एवं चौड़ी नदियाँ भी थीं। सेना में जो लोग लौह कवच अथवा लौह वस्त्र धारण किये हुए थे, वे सबसे अधिक सुरक्षित एवं शक्तिशाली थे। उनको पर्वतों की घाटियों में सुरक्षा के लिए अवस्थित किया गया था।

66

जो राक्षस खेतों में रथों के द्वारा आये थे, वे भाँति-भाँति के राजनीतिक दाँव-पेंचों से वानर सेना को भ्रम में डालने लगे। उन सबके साथ मध्य भाग में पैदल सैनिक भी थे। उनकी रक्षा के लिए अश्वारोहियों की टुकड़ियाँ भी उनके साथ थीं। पीछे के भागों में भी पदाति सैनिक अवस्थित किये गये थे। वे बहुत ही सुव्यवस्थित ढंग

से अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित थे। उन पैदल सैनिकों की रक्षा की भी पूरी व्यवस्था की गयी थी। इस व्यवस्था को 'मछली के मस्तक की आकृति' की व्यंवस्था कहते हैं। युद्ध के दाँवपेंच एवं निपुणता के अनुसार ही यह व्यवस्था की गयी थी। इसे एक प्रकार की व्यूह–रचना कहा जा सकता है।

67

जितने भी अश्वारोही थे, उनको बड़े ही क्रम से मध्य भाग में स्थान–स्थान पर अवस्थित किया गया था। अश्वारोही सैनिकों को पदाति सैनिकों की सुरक्षा का भार सौंपा गया था। इस प्रकार सेना के सभी अंगों को क्रमवद्ध ढंग से सुरक्षा के दृष्टिकोण से उचित स्थानों पर खड़ा किया गया था। जितने सैनिक रथों पर सवार थे, उनकी संख्या लगभग पाँच सौ थी। वे अन्य सैनिकों की रक्षा के लिए सेना के सभी अंगों के साथ ही साथ चल रहे थे। इस व्यूह रचना को वज्र–पिंजर व्यूह रचना की संज्ञा दी जाती थी। इस सैन्य–रचना से भयानक से भयानक शत्रु पर भी बड़ी सरलता से विजय प्राप्त की जा सकती थी। इस कठिन व्यूह रचना पर शत्रु अधिकार कर सके, यह सर्वथा कठिन था।

68

पदाति सैनिकों को युद्ध करने के लिए मध्य भाग में स्थान दिया गया था, जिससे वे कुशलता से शस्त्रों का संचालन कर सकें। कुछ जगह छोड़ने से उन्हें सरलता से अपनी गतिविधियों को संचालित करने का भी अवसर मिलता था। अश्वारोही सवार उनकी सुरक्षा के लिए ही उनके साथ रक्खे गये थे। वे उनको एक प्रकार से ढके हुए थे। न तो वे पदाति सैनिकों से काफी दूर थे और न उनके बिल्कुल निकट ही थे। रथों के द्वारा अश्वारोहियों की सुरक्षा करने की भी वयवस्था की गयी थी। यह युद्ध–रचना सुई की नोक 'सूचिका का अग्रमार्ग' के नाम से जानी जाती है। इस व्यूह रचना की सदैव ही अपार प्रशंसा की गयी है। वास्तव में भूतकाल में इसी व्यूह–रचना द्वारा रावण सम्पूर्ण पृथ्वी को पराजित कर उस पर अपना आधिपत्य स्थापित कर चुका था।

69

इस प्रकार सेना के अग्रभाग को सुव्यवस्थित ढंग से एक व्यूह रचना के रुप में अवस्थित किया गया था। वह सेना अब तैयार हो चुकी थी और युद्ध के लिए प्रस्तुत थी। वे आक्रमण के लिए शीघ्र ही आगे बढ़े तथा कठोर स्वर में गर्जना करने लगे। उनकी गर्जना सिंह की दहाड़ से किसी भी प्रकार कम नहीं थी। वे बड़े ही भयानक वेष में आगे बढ़ रहे थे। उनको देखकर भय उत्पन्न होता था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे यमराज स्वयं ही युद्धक्षेत्र में आगे बढ़ रहे हों। उनके रोमों के गुच्छे लाल–लाल रंग के दिखायी दे रहे थे। वे काफी उलझे हुए एवं सुगुम्फित से लग रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे लाल अग्नि की लाल लपटें उठ रही हों। चौड़ी, लाल तथा वाहर उभरी हुई उनकी गोल वड़ी–वड़ी आँखें अंगारों की भाँति जल रही थीं। उनसे एक विशेष प्रकार की

चमक प्रकट हो रही थी।

70

उनकी चंचल काली-काली आँखें बिजली के सदृश चारों ओर प्रकाश-पुंज सा बिखेर रही थीं। जब वे कहीं देखते थे, तो भय सा उत्पन्न करते थे। उनकी दाढ़ियाँ वर्षा ऋतु के काले मेघों के समान लग रही थीं। वे काली-काली, उलझी हुई तथा बहुत ही घनी थीं, जिसके कारण उनकी आकृति और भी अधिक भयानक लगती थी। तीव्र गति से बहती हुई वायु अथवा झंझा के झकोरों की भाँति उनकी श्वासों के स्वर गूंज रहे थे। वे अत्यन्त ही भयानक सुनायी देते थे। उनकी साँसों के स्वरों को सुनकर ऐसा आभास होता था जैसे वज्रपात करता हुआ भयानक तूफान आ रहा हो। वे घोर रव करते तथा चिल्लाते हुए चल रहे थे। उनके सिंहनाद से आकाश काँप उठता था। उनका स्वर बिजली की गुरु गंभीर गर्जना की भाँति ही गगनभेदी था, जिससे सम्पूर्ण वातावरण आन्दोलित हो रहा था।

71

तत्पश्चात भीषण रव करते हुए वे आगे बढ़े चले जा रहे थे। राक्षसों की यह सेना मदिरापान करके उन्मत्त हो रही थी। शीघ्र ही युद्ध के लिए वह आगे बढ़ी और भयंकर युद्ध करने लगी। राक्षसों ने भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। कोई हंसिए की भाँति के शस्त्र से आक्रमण कर रहा था, तो कोई फेंक कर भाला मार रहा था। लकड़ी के लट्ठों से कोई प्रहार कर रहा था तो कोई वानरों के शरीरों को फाड़ रहा था। कोईचक्रका प्रहार कर रहा था, तो कोई अन्य शस्त्र से शत्रु को मार रहा था। कोई गदायुद्ध कर रहा था। कुछ राक्षस वानर सैनिकों को पकड़ने की चेष्टा कर रहे थे। बहुत से लोग अस्त्र-शस्त्रों से भीषण प्रहार करने में लगे हुए थे। कुछ राक्षस हाथों में कटार ले-लेकर वानरों के शरीर में भोंक रहे थे। इस प्रकार परस्पर लड़ाई होने लगी। इस अवसर पर राक्षस सेना ने अपने भीषण आक्रमण की गतिविधि तीव्रतर कर दी।

72

रथों के चालक सारथी बड़े ही बलशाली एवं कुशल प्रवीर थे। वे बड़े ही विचित्र ढंग से अपने हाथों में चाबुक लेकर घुमाते थे तथा रथ की गति सदैव ही भली भाँति संचालित करते थे। वह चाबुक लेकर घुमाते थे तथा रथ की गति सदैव ही भली भाँति संचालित करते थे। वह चाबुक सदैव ही उनके बायें हाथ में रहता था। घोड़ों की रासें उनके दाहिने हाथों में थीं। वे शीघ्र ही घोड़ों को अपने ढंग से मोड़ देते थे। उनके अश्व उछल कर आगे बढ़ जाते थे। अश्वो की चाल पर सारथी का पूरा नियंत्रण था। जो योद्धा रथ पर सवार थे, वे फेंक कर मारने वाले भाले की भाँति छोटे-छोटे धारदार हथियार हाथ में लिए हुए थे। इन्हें फेंककर चलाया जा रहा था। ये पेट फाड़ देते थे एवं उनसे गहरा घाव हो जाता था।

73

जो प्रवीर अश्वारोही थे, वे भी बड़ी कुशलता से घोड़ों पर चढ़े हुए युद्ध में आगे बढ़ते चले जा रहे थे। उनका बढ़ना भी कभी व्यर्थ नहीं जाता था। वे शत्रु सेना का संहार करते हुए ही आगे बढ़ रहे थे। उन सबको यह भी विश्वास था कि वानर-सेना का वध करना बहुत ही सरल है। इसी दृष्टिकोण से वे आक्रमण कर रहे थे। वे यह भी भली भाँति जानते थे कि किसका वध करना कठिन है। वे साधारण तथा विकट शत्रु के अन्तर को भली भाँति समझते थे। उन्होंने अपनी सम्पूर्ण शक्तियों को एकत्रित कर वानर सेना पर आक्रमण कर दिया। उनका यह आक्रमण आश्चर्यजनक था। वे विद्युत की भाँति चढ़ पड़ते थे। उनकी गतिविधियों को समझ पाना संभव नहीं था। कभी तो वे प्रहार झेलते थे और कभी प्रहार से लक्ष्य बेधते थे। कभी किसी को पकड़ लेते थे तो कभी पकड़े भी जाते थे। इसके विपरीत यह भी दिखायी दे रहा था कि अवसर प्राप्त होने पर वानर भी गृद्धों की भाँति राक्षसों पर टूट पड़ते थे तथा बड़ी ही शीघ्रता से राक्षसों को पकड़ कर बन्दी बना लेते थे। बाद में उनको अपने साथ खींच कर वे अपने शिविर में ले जाते थे।

74

जो वीर योद्धा लौह-कवच धारण किये हुए थे, वे बहुत ही भीषण रुप में आक्रमण कर रहे थे। उनके लक्ष्यों की सीमा रेखा खींचना भी कठिन था। जब युद्ध करते हुए उनके हृदय में क्रोध का संचार होता था, तो उनके होंठ काँपने लगते थे तथा वे वानरों को दाँतों से काटने लगते थे। वे वानरों की गरदनें भी तोड़ देते थे। इस प्रकार वे सम्पूर्ण वेग से आक्रमण करते थे। वे आगे बढ़कर धक्का देते थे, जिससे वानर सेना का संहार हो रहा था। जहाँ तक वानर-समूहों का प्रश्न था, वे भी लहरों की भाँति आगे बढ़ते जाते थे। छोटी-छोटी लहरों की भाँति नदियों की घाटियों में वे उतर कर युद्ध कर रहे थे, परन्तु उनमें से बहुत बड़ी संख्या ऐसी थी जिसे राक्षसों ने दबा-दबा कर चूर कर डाला था। वे उस समय चीत्कार कर उठे थे।

75

जब बहुत से वानरों को राक्षसों ने दबोच लिया तो वानर समूह को भी बहुत क्रोध आया। उनके बहुत से मित्रों का संहार हो रहा था। उन्होंने शीघ्र ही इसका बदला लिया और आगे बढ़ कर तीव्रता से आक्रमण किया। उन्होंने राक्षसों को पीछे ढकेला। उन पर भीषण प्रहार करते हुए उन्हें दाँतों से काटना प्रारम्भ किया। इसके साथ ही साथ वे अपनी पूंछें घुमा-घुमा कर भी भीषण प्रहार करने लगे। वे राक्षसों की कमर को दोनों हाथों से पकड़ लेते थे। बाद में पूरी शक्ति से उसे वे दबाते थे तथा तोड़ डालते थे। शीघ्र ही उनको पीछे की ओर धक्का देकर वे ढकेल देते थे और फिर उन्हें रगड़ कर मसल डालते थे। उनकी भुजाओं को भी मसल-मसल कर वे तोड़ डालते थे।

76

बहुत से वानरगण अपने बड़े-बड़े भीषण नखों से राक्षसों के शरीर को फाड़ रहे थे। नख भोंकने की उनकी यह क्रिया बहुत ही विचित्र ढंग से होती थी। वे राक्षसों के पेट में गहराई से नख भोंक कर पीठ तक ले जाते थे। उसके पश्चात उनके पीछे के अंगों को दृढ़ता से वे पकड़ लेते थे। कुछ वानर राक्षसों की आँखों में अपने नखों को भोंककर उनकी आँखें फोड़ रहे थे, जिससे राक्षस मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर कर लुढ़क जा रहे थे। इस प्रकार वानर सेना बड़ी संख्या में राक्षसों को धराशायी कर रही थी। उनके मुखों से रक्त के फव्वारे छूट रहे थे। घोर प्रहारों से उनके शरीर चूर-चूर हो चुके थे। भीषण पत्थरों के प्रहारों से बहुतों की मृत्यु भी हो रही थी। वानर समूह पत्थरों से उन्हें कुचल कर मार रहे थे।

77

इस प्रकार जो महाशक्तिशाली वानर थे, वे आगे बढ़ते हुए अश्वों को पकड़-पकड़ कर पीछे फेंक रहे थे। यह भी एक प्रकार का भीषण प्रहार था, जो राक्षसों पर किया जा रहा था। प्रत्येक घोड़ा पकड़ कर वानर फेंक रहे थे और कठोर शिलाखण्डों पर उसे पटक कर पछाड़ रहे थे। वे प्रस्तर खण्ड भी फौलाद की भाँति ही थे। बहुत तीव्र गति से प्रहार के रुप में उनका प्रयोग किया जा रहा था। राक्षसों के गालों को वानरों ने नुकीले पत्थरों से फोड़ दिया था। गहरे-गहरे घावों के होने से राक्षसगण घबरा-घबरा कर इधर-उधर भाग रहे थे। किसी की गरदन टूट गयी थी किसी का हृदय फटकर निकल पड़ा था और किसी की नासिका से अविरल रक्त-धारा प्रवाहित हो रही थी।

78

बड़े-बड़े शक्तिशाली वानर राक्षसों की गरदनों को पकड़-पकड़ कर मरोड़ रहे थे। वे वानर बड़े ही वीर थे। थोड़ा सा भी अवसर पाते ही वे पीछे लौट जाते थे और तुरंत बाद ही छलाँग लगा कर शत्रु पर चढ़ जाते थे। इस प्रकार वे राक्षसों का संहार कर रहे थे। जिन राक्षस योद्धओं की गर्दनें टूट गयीं थीं तथा जिनके मस्तक कट कर कहीं अन्यत्र जा गिरे थे, वे मस्तकहीन होते हुए भी युद्ध में आगे बढ़े चले जा रहे थे। वे भी भाँति-भाँति के पैतरे बदलते हुए वानरों पर तीव्र गति से आक्रमण कर रहे थे। वे बहुत ही क्रुद्ध थे। इस प्रकार के कटे मस्तकों के धड़ वानरों का तीव्रगति से पीछा कर रहे थे। इन कबन्धों का प्रहार बहुत ही भीषण था। वे आगे बढ़ते चले जा रहे थे। ये कबन्ध कभी-कभी तो दौड़ते-दौड़ते गिर पड़ते थे और लुढ़कते-लुढ़कते नीचे की ओर चले जाते थे। वे नदियों में जा गिरते थे। किसी को यह भी अनुमान नहीं हो पाता था कि वे कहाँ हैं। वे मुख्यतः नदियों की घाटियों में ही गिर जाते थे।

79

वीर वानर योद्धा पूरी शक्ति से राक्षसों की टाँगे पकड़ कर उनको घसीट लेते क्योंकि वे अपार शक्तिशाली थे; इसीलिए उनको राक्षसों के प्रहार का विशेष अनुभव भी नहीं हो पाता था। वे राक्षसों की सेना को बड़े-बड़े शिलाखण्डों तक घसीट कर ले जाते थे। उसके पश्चात उनके वक्षस्थलों को चूर-चूर कर देते थे। जहाँ तक वानरों की समझ का प्रश्न था, उनमें साधारण बुद्धि थी। वानर सेना राक्षसों के साथ छोटे बालकों का-सा ही व्यवहार कर रही थी। जब वे किसी राक्षस को पृथ्वी पर गिरा लेते, तो सभी उसके वक्षस्थल पर चढ़ जाते थे तथा उसे नोचने लगते थे। वे राक्षसों की पीठों पर इस प्रकार सवार हो जाते थे जैसे कोई किसी वाहन पर चढ़ गया हो। वे बिना किसी संकोच के कोलाहल करते हुए सम्पूर्ण वातावरण को प्रकम्पित कर रहे थे।

80

कुछ वानरों ने शक्ति का प्रदर्शन करते हुए ऊपर उड़कर तीव्रता से शत्रु दल पर आक्रमण किया। वास्तव में वे भी राक्षसों पर पूरी शक्ति से प्रहार कर रहे थे। राक्षसों के प्रति किसी प्रकार की करुणा उनमें नहीं थी। वे राक्षसों को पकड़-पकड़ कर खींच रहे थे। भाँति-भाँति से राक्षसों को वे कष्ट दे रहे थे। उनके शरीर को वे चूर-चूर कर दे रहे थे। ये वानर आकाश में उड़ कर राक्षसों के पास आ जाते थे और उन्हें काट खाते थे।

81

विशालकाय वानर सिंहों की भाँति राक्षसों पर आक्रमण कर उनके शरीर को फाड़ रहे थे। वे हाथों से मुष्टि-प्रहार करते थे। गाढ़ा, जमा हुआ रक्त उनके हाथों की हथेलियों में चिपक जाता था। उसके पश्चात खरोंचे मारते हुए वे राक्षसों के मुख पर तमाचे भी मार रहे थे। इससे राक्षस बहुत क्रुद्ध हो उठते थे। वे उन वानरों से भिड़ जाते थे। बाद में वे भी उन वानरों को काट खाते थे। वे शीघ्र ही वानरों से बदला लेना चाहते थे। वानरगण राक्षसों की नासाओं पर आक्रमण कर उनको चूर-चूर कर देते थे। वे बार-बार मारने की चेष्टा करते थे। कभी-कभी तो इन संघर्षमयी गतिविधियों से उनके दांतों को भी वे तोड़ देते थे।

82

परन्तु जो वीर राक्षस योद्धा वन-प्रदेश में युद्ध करने के लिए अवस्थित किये गये थे, वे वास्तव में बड़े ही पराक्रमी एवं भयानक थे। उनके धनुष बड़े-बड़े थे। उन धनुषों की समानता बड़े-बडे ताड़ वृक्षों से की जा सकती थी। उनके बाणों के सिरों पर एक बड़ी सी सुपारी का फल लगा हुआ था तथा उनके बाणों का मुख बहुत चौड़ा था। उनका प्रहार बहुत ही भयानक होता था। बाण का अग्रभाग बहुत ही नुकीला एवं तीक्ष्ण था। जब वे प्रवीर राक्षस योद्धा बाणों की वर्षा करते थे तो लगता था जैसे बाणों के रुप में स्वयं मृत्यु के देवता यमराज ही पृथ्वी पर उतर आये हों। उन्होंने वानर सेना का संहार कर डाला।

83

जब वानरों पर भीषण बाणवर्षा हुई, तो वे घबरा गये। उनके मस्तक शरीरों से कट–कट कर पृथ्वी पर लुढ़कने लगे। जिसकी कमर में बाण लगा, उसकी कमर ही बाणविद्ध होकर टूट गयी। इससे वे सभी वानर भयातुर होकर इधर–उधर भागने लगे। इस संघर्ष में जो वानर ऊपर उड़ते थे, उनका शरीर बाणों से कट जाता था अथवा टूट जाता था। वे सभी घबरा कर इस भीषण बाण–वर्षा के विषय में एक दूसरे से कहने लगे। इस प्रकार उनके ऊपर घोर आपत्ति टूट पड़ी थी तथा वे अपने कष्ट को दूर करने का निरन्तर प्रयास कर रहे थे।

84

जो राक्षस अपने धनुष से तीक्ष्ण बाणों की भीषण वर्षा कर रहे थे, वे लक्ष्य–वेध में पूर्णतः निपुण थे। उनके सभी बाण वानरों के शरीर पर ही लग रहे थे। उनके बाण बड़ी ही भयानक अग्नि वर्षा करते थे। जिस वानर के शरीर पर वह बाण लगता था, वही पृथ्वी पर गिर पड़ता था। उनके बाण तीक्ष्ण, नुकीले तथा शक्तिशाली थे। वे भीषण रुप से वानरों के घुटनों को वेध कर उन्हें विदीर्ण कर देते थे। जिस हड्डी में भी उनके बाण लगते थे, वह टूट जाती थी और वे गिर पड़ते थे। इस प्रकार वानरों के शरीर विदीर्ण होने लगे थे। उन राक्षसों के बाणों से बहुत से वानर घांयल हो गये थे। बड़े–बड़े घावों के कारण वे घोर कष्ट का अनुभव कर रहे थे।

85

इस प्रकार शनैः शनैः वानर सेना की शक्ति क्षीण होने लगी। जिनके शरीरों पर बाण लगे थे, वे वानर बहुत घबराये हुए थे तथा युद्ध के लिए असमर्थ से हो गये थे। डर से उनके ह्रदय काँप रहे थे। उनके ढके हुए घावों में विकृति आ गयी थी, जिसके कारण वे घाव भयानक हो गये थे। उन वानरों के शरीरों की हड्डियाँ भी चूर–चूर हो गयी थीं। इस प्रकार बहुत से वानरों की मृत्यु हो गयी थी। जो शेष बचे थे, वे भाग–भाग कर अपने प्राणों की रक्षा करना चाहते थे। वे थक कर गिर पड़ते थे। ताड़पत्र में अपनी रक्षा के लिए अपने को छुपाने का प्रयत्न भी वे कर रहे थे। बहुत से घावों से निरन्तर रक्त बह रहा था। वे दुःखी होकर अपनी करुण कथा कह रहे थे। उनके शरीर की दुर्गति हो गयी थी। वे पीछे लौट–लौट कर भागना चाहते थे, परन्तु वीर राक्षसों के बाण उनका निरन्तर पीछा कर रहे थे।

86

भीषण बाण वर्षा के कारण वानर सेना घबराकर इधर उधर भाग रही थी। राक्षसों के बाण उनको खदेड़ रहे थे। वानर हारे हुए से तितर–बितर हो गये थे। वे भागते तथा चिल्लाते हुए चले जा रहे थे। इस परिस्थिति में छोटे–छोटे साधारण वानर भी डर कर भयभीत हो गये। वे कोलाहल करने लगे। दूसरे वानर–समूह भी घबरा

कर युद्ध में पीछे हट रहे थे। उस समय वानरों को युद्ध से भागते देखकर वन में छिपे हुए धनुर्धर राक्षस उनका पीछा करने लगे। वे क्रुद्ध होकर आक्रमण कर रहे थे। लगता था जैसे सिंह मृगों को देखकर उनका पीछा कर रहा हो।

87

जब वानर राज सुग्रीव ने देखा कि राक्षसों ने बाणों से वानर सेना को खदेड़ दिया है, तो उन्होंने प्रसिद्ध वानर योद्धा नल से कहा–हे वीर नल ! तुम किसी प्रकार की हीनता अथवा पराजय का अनुभव मत करो। जब तुम्हारे मित्र युद्ध में हार रहे हों, तो निश्चय ही तुम्हें उनकी पूरी सहायता करनी चाहिए। राजा सुग्रीव ने वानर नील, महावीर हनुमान एवं अन्य पराक्रमी वानर योद्धाओं को बुलाकर यह आदेश दिया कि वे शीघ्र ही अपने मित्रों की सहायता का कोई मार्ग ढूंढ़ निकालें। सुग्रीव ने उनसे यह भी कहा कि इस भीषण परिस्थिति में शान्त होकर बैठने का अवसर नहीं है। प्रवीर योद्धा युद्ध क्षेत्र से कभी पीछे हटने का नाम नहीं लेते हैं। वे युद्ध के मैदान को छोड़कर कभी नहीं भागते हैं। वे सिंहों की भाँति रणक्षेत्र में सदैव डटे रहते हैं।

88

वानर–राज सुग्रीव की बातें सुनने के पश्चात वे तीनों ही योद्धा युद्ध क्षेत्र में फिर से आगे बढ़े। वे सभी शक्तिशाली एवं दृढ़–प्रतिज्ञ थे। उनके आगे बढ़ने से वानर सेना में नया जोश आ गया। उनमें वीरता की लहर दौड़ पड़ी। फिर वे राक्षसों से भीषण संघर्ष करने के लिए आगे की ओर बढ़ चले।

89

उन तीनों योद्धाओं ने वानर सेना के समक्ष वीरत्व का अर्थ स्पष्ट करते हुए कहा कि हे मेरे वीर वानरों ! तुम वानर सेना के महान वीर सैनिक हो। तुम्हारी दृढ़ता एवं वीरता इस सम्पूर्ण जगत में प्रसिद्ध है। तुम्हारा यश भी चारों ओर प्रकाश–किरणों की भाँति चमक रहा है। क्या तुम सब अपने वीरत्व को कलंकित करना चाहते हो ? हाय यह तो बड़ी ही करुण दशा है।

90

क्या तुम सबने पहले युद्धकला में निपुणता प्राप्त नहीं की है ? क्या तुमने विधिवत युद्ध विद्या नहीं सीखी है ? युद्ध का अनुशासन तुम्हें मानना चाहिए। इस प्रकार व्यर्थ भयभीत होने की क्या आवश्यकता है ? तुम लोग इन बातों को भलीभाँति जानते हो। किसी योद्धा अथवा वीर के युद्धक्षेत्र में जाने का क्या लाभ है, यदि वह डटकर शत्रु से लोहा नहीं ले सकता है।

91

वास्तव में आप सबकी दृष्टि में यह युद्ध किसलिए किया जा रहा है ? यह युद्ध तो इतना महान है कि इसे जीतकर आप सब विजयश्री प्राप्त करने वाले हैं। यह आपकी वीरता ही है, जिसके माध्यम से इस युद्ध की सफलता संभव है। या तो आपको इस युद्ध में विजय प्राप्त करना है अथवा मृत्यु का वरण करना है।

92

यद्यपि स्वभाव से कुछ लोग युद्ध से डरते हैं और युद्ध से बचना चाहते हैं, पर इस प्रकार का दृष्टिकोण उचित नहीं है। इसका परिणाम यह होगा कि सारे जगत में अधर्म एवं नीचता का ही प्रसार एवं बोलबाला हो जायेगा। नीच प्रवृत्तियाँ महत्तवपूर्ण बन जायेंगी। यह तुम्हारी ही शक्ति एवं शस्त्रों की गरिमा होगी कि तुम ऐसा न होने दो। यदि तुम युद्ध से डर गये तो यही शस्त्र तुम्हें समाप्त कर देंगे और दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति उत्पन्न हो जायेगी। इन बुरी परिस्थितियों का फल सबको ही भोगना पड़ेगा।

93

वास्तव में इस युद्ध का कार्य तुम्हीं सब लोगों के कंधों पर है। इस युद्ध को तुम्हीं लोगों ने आरम्भ भी किया है। यह भी ईश्वर की ही इच्छा थी कि युद्ध हो। ईश्वर की इच्छा से ही सभी कार्य सिद्ध होते हैं। यदि तुम प्राकृतिक नियमों एवं ईश्वरीय इच्छाओं के विरुद्ध जाकर अपने कर्तव्य का पालन नहीं करोगे तो निश्चय ही दोषी ठहराये जाओगे। तुम्हारा जीवन इस संसार में व्यर्थ एवं दुर्भाग्यपूर्ण होगा तथा उसका कोई अर्थ भी नहीं होगा।

94

यदि तुम सब युद्ध में दृढ़ नहीं रहोगे, तो राम के सेवक के रुप में तुम्हारी क्या आवश्यकता रह जायगी ? क्या वास्तव में तुम अपने राजा की आज्ञा का पालन प्राणप्रण से करने को उद्यत नहीं हो ? लगता है कि तुम अपने कर्तव्य का पालन नहीं करना चाहते हो। इस प्रकार क्या तुम लोग अपने राजा के कार्य बाधक बनोगे ? इसीलिए अपने राजा के सभी आदेशों का पूरी तरह पालन करो तथा अपने कर्तव्य का विधिवत् पालन करने में दृढ़ रहो।

95

इस प्रकार जब तुम्हारी मृत्यु हो जायेगी, तब इस संसार में तुम्हें यश भी नहीं मिलेगा। इसकी अपेक्षा यदि तुम अपने शत्रु का सर्वनाश कर दोगे, तो निश्चय ही इस जगत में तुम्हारी भूरि-भूरि प्रशंसा होगी। वीरगति पाने

पर यश, सुख तथा भगवान विष्णु का स्वर्गलोक भी तुमको प्राप्त होगा।

96

जो लोग भिक्षु एवं ब्राह्मण हैं, उनका कार्य एवं कर्तव्य विद्याध्ययन है। उसी में अपना पूरा ध्यान लगाने से उनके कार्य की पूर्णता होती है। प्रार्थना तथा पूजा भी उनका कर्तव्य है। क्षत्रिय को एक योद्धा के रुप में सम्पूर्ण शक्तियाँ प्राप्त करनी चाहिए, जिससे वह यश पा सके और अन्याय का प्रतिरोध कर समाज को न्याय दिला सके। वैश्यों का कर्तव्य है कि वे कृषि कर्म करें तथा धान के खेतों में अधिक से अधिक अन्न उपजाएं। तुम सब अपने राजा की सेवा में नियुक्त किये गये हो, इसीलिए जो तुम्हारे स्वामी हैं, उनके आदेशों का भली भाँति पालन करना ही तुम्हारा कर्तव्य है।

97

हे मेरे वानर वीरों तथा सेना के सैनिकों ! हम सब आपसे आग्रह करते हैं कि आप सभी अपनी वीरता का परिचय देते हुए जितना अधिक प्रयास करेंगे, उतनी ही अधिक सफलता आपको प्राप्त होगी। आप सभी मिलकर राक्षसों के आक्रमण का विरोध कीजिए और उन्हें करारा प्रत्युत्तर दीजिए। अपने शत्रुओं को युद्ध-क्षेत्र में पराजित कर आप उनका प्राणान्त कर दीजिए। क्या यह कार्य उन लोगों के लिए कठिन है जो पूरी शक्ति से शत्रु पर आक्रमण करने का प्रयास करते हैं ? वास्तव में वीर योद्धाओं की जो भी अभिलाषा होती है, वह निश्चय ही पूर्ण होती है।

98

उन वीरों के लिए जो दृढ़ प्रतिज्ञ एवं प्रयत्नशील हैं, सागर तथा आकाश की चौड़ाई कुछ भी अर्थ नहीं रखती है। घने-घने भयानक जंगल उन्हें नहीं डरा सकते हैं। उनके लिए तो वे सबसे सुन्दर क्षेत्र वन जाते हैं। उन वीरों के लिए संसार के सबसे ऊंचे पर्वत हिमालय के शिखर भी बहुत नीचे प्रतीत होते हैं। इस प्रकार जिन वीरों का आत्म विश्वास दृढ़ है तथा जो किसी भी कार्य को करने का अथक प्रयत्न करते हैं, उन्हें निश्चय ही सफलता प्राप्त होती है।

99

वीर किसी भी परिस्थिति में भयभीत नहीं होते हैं। उनके शत्रु यदि पाताल में जाकर छिपने का प्रयत्न करें या अतल गहराइयों, सिंह की गहरी गुफा अथवा अन्यत्र कहीं जाकर कर शरण चाहें, तो भी वीर पुरुष कभी पीछे नहीं हटते हैं और उस शत्रु का वध कर ही देते हैं।

100

हमारे शत्रु तो राक्षस हैं जो जन्म से ही अधम होते हैं। उनका व्यक्तित्व भी हम सबको ज्ञात है। उनको युद्ध में पराजित करना ही चाहिए। उन सबकी शक्ति क्षीण की जाय, यही उचित है। उनका शीघ्र ही संहार कर दो। यही तुम्हारी वीरता एवं शौर्य की पूरी परिभाषा होगी। आज वह परिस्थिति आ गयी है, जिसमें या तो तुम लोग विजयी होकर-विश्व में प्रतिष्ठा प्राप्त करो अथवा मृत्यु का वरण कर लो। तुम्हारे लिए यही श्रेयस्कर होगा। अतएव राक्षसों पर विजय पाने का प्रयास तुम सबका परम कर्तव्य है।

101

वानर सेना को युद्ध के लिए हनुमान जी ने प्रेरित किया। उन्हीं के साथ नल एवं नील ने भी सभी वानरों को उनके कर्तव्यों का स्मरण दिलाया। उन्हें उन लोगों ने सचेत भी किया। उसके पश्चात् सभी वानरगण राक्षसों से संघर्ष करने के लिए पूरी तरह तैयार हो गये। उन्होंने स्वयं यह अनुभव किया कि वीरों एवं योद्धाओं का चरित्र ऐसा ही होना चाहिए।

102

वीरतापूर्ण वचनों को सुनकर सभी वानरों के मन में युद्ध करने की अभिलाषा जागृत हो गयी। वे सभी आनंदमग्न होकर प्रसन्नता का अनुभव करने लगे। उनमें नयी स्फूर्ति एवं शक्ति का संचार हो गया। उनको ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उनके हृदय को किसी ने अमृत से सींच दिया हो। उनमें वीरत्व की भावना का फिर संचार हो गया। उस समय ऐसा लग रहा था जैसे उनका भय समाप्त हो गया हो तथा पुनः प्राप्त नवीन स्फूर्ति एवं शक्ति ने उनके हृदय से डर नाम के भाव को निकाल दिया हो।

103

सभी वानरों ने फिर एक बार अपने अस्त्र–शस्त्रों को संभाला और उनको धारण कर युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये। कुछ वानर इतने आवेश एवं उत्साह में आ गये कि वे शीघ्र ही पर्वत–शिखर पर चढ़ गये तथा अपनी तीव्रता एवं गतिविधियों का स्पष्ट परिचय देने लगे। उन्होंने पर्वतमाला के बड़े–बड़े वृक्षों को जड़ से उखाड़ लिया। उन वृक्षों के पुष्प टूट – टूट कर पृथ्वी पर गिर पड़े। वे पुष्प भाँति–भाँति के रंगों के थे तथा अत्यन्त सुन्दर लग रहे थे।

104

जब वानर सेना ने अपनी पूरी तैयारी कर ली तो वे आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। उनके इस भीषण आक्रमण के शस्त्र बड़े – बड़े वृक्ष थे। उन्हीं वृक्षों के तनों से वे आक्रमण कर थे। अन्य अस्त्र–शस्त्र के मुकाबले वे इन वृक्षों को ही प्रमुखता दे रहे थे। उनमें ताड़, नारियल आदि भाँति–भाँति के लम्बे तने वाले वृक्ष भी थे। बहुत से वानर नारियल के वृक्षों को अपने अस्त्र–शस्त्रों की भाँति प्रयोग में ला रहे थे अर्थात् प्रक्षेपास्त्र की भाँति वृक्षों को ही वे फेंक कर आक्रमण कर रहे थे। पर्वतों की चोटियों से शाखाओं तथा वृक्षों को ला लाकर वे राक्षसों कोलक्ष्य बना रहे थे।

105

राक्षसों के जो सैनिक वन से शर–संधान कर रहे थे, वे भी वानरों का यह भीषण युद्ध देखकर निराश हो गये। भय से उन्हें भी क्लांत होना पड़ा। उन्होंने अपने धनुषों को तोड़कर फेंक दिया। शीघ्र ही वे युद्ध क्षेत्र से लौट पड़े। वानरों ने आक्रमण से उनकी भुजाएं भी वेध दीं। कुछ योद्धा ऐसे थे, जिन्होंने नये धनुषों का प्रयोग किया तथा धनुष पर तीक्ष्ण बाण चढ़ाये। वानरों ने आगे बढ़–बढ़ कर इन धनुषबाणों को हाथों से पकड़ने की चेष्टा की। राक्षसों के हाथों से वानरों ने धनुष बाण छीन लिये। उनको टुकड़े–टुकड़े करके उन्होंने बड़ी दूर फेंक दिया। इस प्रकार राक्षसों को अपार हानि एवं कष्ट पहुंचाते हुए वानरों ने युद्ध में परास्त कर दिया।

106

उनमें से बहुत से राक्षस वानरों की इस अपार वीरता को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। कुछ राक्षस पीछे की ओर ढकेल दिये गये थे। कुछ अन्य राक्षस मुंह के बल पृथ्वी पर गिर पड़े थे। कुछ राक्षसों पर वानर सेना की भीड़ टूट पड़ी और उन्हें नीचे दबा लिया। ऐसे बहुत से राक्षस थे, जिनको चारों ओर से घेर लिया गया था। इस प्रकार घिर जाने के कारण वे हिल–डुल नहीं सकते थे तथा अधमरे और मूर्छित से होकर पृथ्वी पर गिर रहे थे। उनके अंग–प्रत्यंग वानरों के आक्रमण से ढीले होकर शक्तिहीन हो गये थे। उनमें कुछ ऐसे भी थे जो डर के कारण चिल्लाते हुए रो रहे थे। उनको किसी बात का भी स्मरण नहीं था। उन राक्षसों पर वानरगण एक बार में दोहरा प्रहार कर रहे थे। उनकी दृष्टि में एक वानर का आक्रमण केवल एक राक्षस के लिए कम प्रतीत हो रहा था। वानर सेना राक्षसों पर पत्थरों से प्रहार कर रही थी। पत्थर लगने से उनके मस्तिष्क फट – फट कर बाहर निकल रहे थे तथा रक्त की धाराएं फव्वारों की भाँति निकल रही थीं।

107

कुछ राक्षस ऐसे भी थे जो पागलों की तरह इधर–उधर दौड़ रहे थे तथा गुप्तचरों का कार्य भी करने की चेष्टा कर रहे थे। उनकी गतिविधियाँ व्याघ्र से मिलती जुलती थीं। वास्तव में अभी तक वे काल के गाल में जाने से बचे हुए थे, इसलिए अत्यंत क्रुद्ध होकर वे वानर सेना पर भीषण आक्रमण कर रहे थे। वे वानरों से भिड़ रहे

थे। वानरों के बहुत निकट आकर और उनको पकड़ कर मुंह से काटने का वे प्रयास कर रहे थे। इस परिस्थिति को देखकर विशाल शरीर वाले वानर शीघ्रता से उन पर आक्रमण कर देते थे तथा उनसे गुंथ जाते थे। वे उनकी गरदन तोड़ देते थे। राक्षसों के मस्तक कोलक्ष्य करके वे वानर पत्थरों का प्रहार कर रहे थे।

108

जब धनुर्धारी राक्षसों तथा वानर सेना का भीषण युद्ध प्रारम्भ हो गया, तो राक्षसों ने अपने धनुषों से वानरों पर प्रहार करना शुरु कर दिया। उन्होंने अपने धनुषों को वानरों के शरीर में भोंका और उन्हें वेध डाला। कुछ राक्षसों ने विषैले बाणों से वानरों को वेधना प्रारम्भ किया। इस प्रकार धनुष एवं बाण दोनों को लेकर राक्षस वानर-सेना का संहार करने लगे। उन्होंने अपने धनुषों से भीषण शब्द करते हुए वानरों पर आक्रमण कर दिया। राक्षस योद्धा अब युद्ध में अपने पूरे बल का प्रदर्शन कर रहे थे; परन्तु वानर सेना ने भी उनसे पूरा लोहा लिया। बड़ी ही दृढ़ता और शक्ति से उन्होंने डटकर राक्षसों का मुकाबला किया। उन्होंने उछल-उछल कर शीघ्रता से राक्षसों के धनुषों को छीनना प्रारम्भ कर दिया। बहुत से राक्षस इस संघर्ष में धराशायी होने लगे क्योंकि उनके धनुष वानरों ने छीन लिए थे। वानर उनके ही अस्त्रों का उन्हीं पर प्रयोग करने लगे। इससे राक्षसों की सेना का संहार होने लगा।

109

राक्षसों की संख्या धीरे-धीरे बहुत कम होने लगी। बहुतों को तो युद्ध में वानरों ने पकड़ लिया तथा भीषण प्रहार कर मार डाला। बहुत से राक्षस बड़ी संख्या में इस भीषण युद्ध से घायल भी हो गये, फिर भी वे युद्ध में किसी प्रकार डरे नहीं। सभी राक्षसों ने मिलकर फिर आक्रमण किया। संघर्ष को भीषणतर बनाने का उन्होंने गंभीर प्रयास किया। उन्होंने आपस में बैठकर इस समस्या पर विचार विमर्श किया। शत्रु सेना अर्थात् वानर समूहों का किस प्रकार सर्वनाश किया जाय, यह वे सोचने लगे। अब वे धनुषों और बाणों का प्रयोग नहीं कर रहे थे। उनके अस्त्र-शस्त्र के रुप में परशु एवं कटारों का प्रयोग प्रारंभ हो गया था। उनके हाथों में छोटे-छोटे शक्तिशाली लट्ठ भी थे। मगर तथा घड़ियालों को फाँसने वाले दृढ़ शक्तिशाली जालों को भी फेंकना राक्षसों ने प्रारम्भ किया। वे हंसिये की भाँति छोटे शस्त्रों, हलों आदि से वानरों का वध करने लगे।

110

इस प्रकार आक्रमण करने के लिए राक्षसों की सेना फिर युद्ध-क्षेत्र में आगे बढ़ी। वे छुरियों से वानरों पर प्रहार करने लगे। वे पूरी शक्ति से प्रहार करते हुए आगे बढ़ने लगे। उन्होंने वानरों को खदेड़ना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार अपनी शक्ति का वे पूरा प्रदर्शन कर रहे थे। वानर सेना भी युद्ध मे पीछे नहीं हटी। वे भी डटकर राक्षसों से टक्कर लेने लगे। यही नहीं, उन्होंने राक्षसों की सेना पर अपनी ओर से एक नवीन आक्रमण भी प्रारम्भ कर दिया। वानरों ने केवल राक्षसों के आक्रमण को ही नहीं रोका वरन् डटकर उन पर आक्रमण करने के लिए एक

नया अभियान भी प्रारम्भ किया। उन्होंने प्रत्युत्तर में राक्षसों पर घोर प्रहार किया तथा बड़े भीषण रुप में राक्षसों को दाँतों से काटना प्रारम्भ कर दिया। अपने बड़े, कड़े एवं नुकीले नखों से वानरों ने राक्षसों के शरीर चीर डाले। राक्षसों ने फिर वानरों को धनुषों से मारना प्रारम्भ कर दिया। यही नहीं, उन्होंने लट्ठों से वानरों पर घोर प्रहार किये। उन्होंने वानरों पर कठोर जाल डालकर उन्हें फाँसना प्रारम्भ कर दिया। इस प्रकार वे वानरों से गुंथ कर युद्ध करने लगे।

111

जिन वानरों को राक्षसों ने अपने जालों में बाँध लिया था, उनको वे धान कूटने वाले मूसलों से मार–मार कर पीटने लगे। वे लकड़ी के लट्ठों से भयानक प्रहार करने लगे तथा वानरों को पकड़ने के लिए बार–बार जाल डालने लगे। राक्षसों ने वानरों का पेट भी फाड़ना प्रारम्भ कर दिया। वानरों को पकड़–पकड़ कर वे फेंकने लगे। राक्षसों ने लट्ठों से उन पर प्रहार किया तथा उनको मार–मार कर गिरा दिया। वानर भी कम चतुर नहीं थे, वे भी बड़ी ही सावधानी एवं निपुणता से राक्षसों पर प्रहार कर रहे थे। उन्होंने राक्षसों के आक्रमण का डटकर उत्तर दिया। इसीलिए राक्षस उनको पूरी तरह नष्ट करने में असफल रहे।

112

युद्ध की भीषणता बढ़ती गयी। राक्षस तथा वानर दोनों ही सेनाएं अत्यन्त क्रुद्ध होकर एक दूसरे पर आक्रमण करने लगीं। इस प्रकार युद्ध ने और भी अधिक भीषण रुप धारण कर लिया। एक दूसरे को आगे पीछे ढकेलते हुए वे लड़ रहे थे और पकड़ने का प्रयास कर रहे थे। दोनों पक्षों ने दोनों ओर से सैनिकों को पकड़ना प्रारम्भ कर दिया। अब युद्ध में वे एक दूसरे के आक्रमणों का उत्तर दे रहे थे तथा नये–नये अभियान भी प्रारम्भ कर रहे थे। बाद में वानरों तथा राक्षसों में आपस में गुंथ कर भीषण युद्ध होने लगा। जैसे सिंह एवं व्याघ्र एक दूसरे से परस्पर संघर्ष करते हैं और बराबर की शक्ति का प्रदर्शन करते हैं, उसी प्रकार वे भी लड़ रहे थे। दोनों ही सेनाएं समान रुप से शक्तिशाली थीं। ऐसे अवसरों पर हार–जीत का निर्णय भी कठिन हो जाता है। वे दोनों ही पक्ष ऐसी दृढ़ता से अपनी जगह पर डटे हुए थे जैसे पर्वत मालाएं अपने स्थानों पर अटल रहती हैं। दोनों पक्ष अपने–अपने स्थानों पर विशाल शिलाखण्डों की भांति अडिग खड़े थे और युद्ध कर रहे थे।

113

यही परिस्थिति उन भयानक गजों के साथ भी थी, जो एक प्रकार का लौह कवच धारण किये हुए थे। उनके लम्बे–लम्बे दाँत बहुत ही तीक्ष्ण एवं घातक थे। उनकी दन्त–पंक्ति सीधी एवं तीव्र थी। वे बड़ी भीषणता का प्रदर्शन करते हुए चिंघाड़ रहे थे। वे ऐरावत हाथी की भाँति सुशोभित हो रहे थे। उनमें इतनी शक्ति थी कि वे चाहते तो आकाश को भी अपने मस्तक पर धारण कर लेते।

114

यह हाथी दलदलों में फंस जाने पर भी भीषण युद्ध में निपुण थे। खुले क्षेत्रों तथा उंचे-उंचे टीलों पर ये युद्ध के लिए काम में लाये जा सकते थे। इस प्रकार प्रत्येक स्थान पर गज सेना का प्रयोग संभव था। कुछ सैनिक गजों को लेकर गड्ढों एवं घाटियों में संघर्ष कर रहे थे। हाथियों की सेना वनों में हो रहे युद्ध में भी भाग ले रही थी। इस प्रकार पूरा विशाल वन क्षेत्र हाथियों से भरा हुआ था। उनकी गणना करना भी संभव नहीं था क्योंकि वे असंख्य थे।

115

इस भीषण युद्ध में दोनों पक्षों के सैनिकों का संहार हो रहा था। युद्ध के प्रथम चरण मे दोनों पक्षों ने अपनी-अपनी शक्ति का पूरा प्रदर्शन किया तथा दोनों पक्षों ने एक दूसरे पर भीषण आक्रमण किये। बड़े-बड़े एवं विशाल शरीर वाले वानरों ने बादलों की भांति आक्रमण किया एवं शत्रु सेना पर वे टूट पड़े। सभी वानर इस बात से सहमत थे कि गजों पर अवश्य ही अधिकार कर लिया जाना चाहिए।

116

बड़े-बड़े दण्डों तथा लट्ठों को हाथों में लेकर दोनों पक्ष आपस में भिड़ गये। आगे बढ़ते हुए एक दूसरे पर वे भीषण प्रहार करने लगे। कुछ वानर राक्षसों पर बड़े -बड़े प्रस्तर खण्ड फेंकने लगे। आकाश में उड़ने वाले वानर योद्धाओं ने ऊपर से पर्वत श्रेणियों के शिलाखण्डों की वर्षा आरंभ कर दी।

117

जो बहुत शक्तिशाली वानर थे, वे उछल-उछल कर हाथियों पर सवार हो गये। उन हाथियों को पलटने का प्रयास करते हुए वे उनकी रीढ़ को दबा कर उन पर खड़े हो गये। उनके शरीर के नीचे के हिस्से को भी वानरों ने पूरी शक्ति से दबा-दबा कर चोटिल कर दिया। इस प्रकार उन्होंने उन गजों की दुर्गति कर दी। बार-बार उनको टक्कर मार कर वे उन्हें इधर-उधर ढकेलने लगे। कुछ वानर ऐसे थे जो हाथियों के मस्तकों तथा गरदनों को तोड़ कर उन्हें भूमि पर धराशायी कर रहे थे।

118

कुछ ऐसे वानर भी थे जो आगे बढ़कर फिर लौट आते थे तथा राक्षसों पर भीषण प्रहार करते थे। उन्होंने बड़े-बड़े प्रचण्ड गज-शुण्डों को पकड़कर उन पर प्रहार किया और उन शुण्डों को तोड़ दिया। उनके दन्तों

को भी बानरों ने उखाड़ दिया। उन्हौंने उनकी आंखें नोच डाली। हाथियों को संहार करने में वे जुटे हुए थे।

119

घबरा कर गजों की सेना पीछे की ओर मुड़ गया और भागने लगी। सैनिक डर गये थे तथा रणक्षेत्र में विचलित हो उठे। भागते हाथियों को भी मार कर सेना को वानरों ने पछाड़ना प्रारम्भ कर दिया। उनके लौह कवच भी टूट-टूट कर नष्ट हो गये क्योंकि वानर सेना की शक्ति अपार थी।

120

अपने बल का प्रयोग करके वानरों ने गजों को मार डाला और उनकी हड्डियाँ तोड़-तोड़ कर उन्हौंने पृथ्वी पर बिखेर दी । हाथियों के विशाल शरीर से रक्त की तीव्र धाराएं बह निकलीं। उनकी खालें खिंच गयी थीं और वानरों ने क्रुद्ध होकर उन पर इतने भीषण प्रहार किये कि हाथियों का दल मूर्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। इस प्रकार राक्षसों की भागती हुई गज सेना का भी वानरों ने संहार करना जारी रखा।

121

कुछ ऐसे हाथी थे, जिनको वानरों ने पृथ्वी पर पछाड़ दिया था और उनके पैर ऊपर की ओर उठा दिये थे। कुछ हाथियों को पीठ के बल गिराकर पछाड़ा गया था। उनके मस्तकों, गालों तथा गर्दन पर हंसिये एवं अंकुश से प्रहार किये गये थे। बाद में बहुत से गज तो ऐसे थे कि जिनके शरीर के अग्र भाग तथा मस्तकों को बुरी तरह कुचल दिया गया था और उन्हें अधमरा बना कर पृथ्वी पर गिरा दिया गया था। उनकी शुण्डों को इस प्रकार मरोड़ा गया कि वे कई टुकड़ों में टूट गयीं और उनके चार-चार भाग हो गये।

122

हाथियों पर भीषण आक्रमण कर वानरों ने उनको नोच डाला। चोट खाये हुए हाथी घुटने के बल बैठ जाते थे और फिर गिर पड़ते थे। इस प्रकार वानरों ने गजों की दुर्गति कर दी। उनके श्वेत दाँतों को वानरों ने ऐसे तोड़ डाला जैसे किसी ने कोमल श्वेत पुष्पों को तोड़-तोड़ कर उनकी पंखुड़ियां बिखेर दी हों।

123

यद्यपि युद्ध क्षेत्र में आगे बढ़ने वाले तथा भागने वाले हाथियों को वानरों ने मार कर धराशायी कर दिया तथापि उनकी संख्या किसी प्रकार भी कम नहीं हुई। उनकी संख्या पहले से ही बहुत अधिक थी। आक्रमण के लिए उन्हें निरन्तर आगे बढ़ाया जा रहा था। वे सुव्यवस्थित ढंग से बढ़ रहे थे। कुछ ऐसे भी हाथियों को

समूह थे, जो गहरी-गहरी नदियों में घुस कर युद्ध की गतिविधियों को तीव्रतर कर रहे थे। बड़े-बड़े हाथियों के समूह पानी के अन्दर घुस कर युद्ध करने के अभ्यासी थे। वे पानी में भी पूर्ण सफलता से संघर्ष कर रहे थे।

124

इस प्रकार जब दोनों सेनाएं-राक्षस एवं वानर-परस्पर युद्ध में लगी हुयी थीं, उनमें भीषण संघर्ष हो रहा था। इस युद्ध में कहीं भी कोई शिथिलता नहीं आ पा रही थी। अपार कष्ट सहने पर भी सैनिक किसी प्रकार का भय नहीं मान रहे थे। इस युद्ध में दोनों पक्षों की अपार क्षति हो रही थी। इस प्रकर चारों और विनाश ही विनाश दिखायी दे रहा था। दोनों पक्ष मतवाले हो होकर एक दूसरे पर आक्रमण कर रहे थे। युद्ध में उत्तर प्रत्युत्तर का क्रम निरन्तर चलता ही जा रहा था। कुछ ऐसे भी सैनिक थे, जिनकी तत्काल ही मृत्यु हो जाती थी। कुछ ऐसे भी थे, जो मृत्यु के काफी निकट थे और लगभग मर ही चुके थे। मरणासन्न होने पर भी इन वीरों में विजयी होने की इच्छा बनी हुई थी।

125

मरणासन्न योद्धाओं की आंखे पलट गयी थीं। कुछ की जिह्वा भी बाहर निकल आयी थी। कुछ सैनिकों की आँते फटकर बाहर निकल आयी थीं। उनके शरीर से रक्त के फव्वारे छूट रहे थे तथा रक्त की धाराएं बह रही थीं। युद्ध में रक्त की नदियां बह रही थीं। उनके कपोलों पर जो प्रहार किये गये थे, उनके कारण कपोल भी फूट गये थे। उनकी गर्दनें टूटी हुई थीं। उनके हाथ कांप रहे थे। इस दशा को प्राप्त होने पर भी उनके पैर हिल-हिल कर मानो कह रहे थे कि वे आक्रमण के लिए आगे बढ़ना चाह रहे हैं। उनके वक्षस्थल भी टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। उनके शरीर में अस्त्र-शस्त्र भोंक कर उन्हें पूरी तरह वेध दिया गया था। सारा शरीर छलनी हो गया था तथा उन पर गहरे घाव परिलक्षित हो रहे थे।

126

राक्षसों की लम्बी-लम्बी सुंगठित उंगलियों को वानरों ने दाँतों से काट-काट कर इस प्रकार चीर डाला जैसे भगवान ने नृसिंह अवतार लेकर हिरण्यकश्यप का पेट अपने नखों से विदीर्ण कर डाला हो। राक्षसों ने अपने शरीर को निर्मल बनाने के लिए दुग्ध का प्रयोग किया। उनका विश्वास था कि दूध से त्वचा कोमल होती है। जो राक्षस घायल होकर पीठ झुका कर चल रहे थे, उन पर वानरों ने पद प्रहार किया। अपने पैरों से उन्हें उन्होंने कुचल दिया। उनकी पीठों एवं रीढ़ों को भी कठोर पदाघातों से तोड़ दिया। उनके शरीर को खरोंच-खरोंच कर वानरों ने उन्हें विदीर्ण कर दिया तथा उनके घुटनों को अपने बड़े नखों से बेध डाला।

127

कुछ योद्धा आहत होकर कराह रहे थे। उनको वानरों ने गहरी चोटें पहुंचाई थीं। उनको बडी ही कठोरता से उठाकर खड्ड में फेंक दिया गया था। वे एक ऐसी परिस्थति में पड़ गये थे कि उनका बाहर निकलना ही संभव नहीं था। उस स्थिति में उन्हें अपार कष्ट हो रहा था। वहाँ सहायता का भी कोई साधन प्राप्त नहीं हो रहा था। कुछ राक्षस अत्यधिक भयभीत हो गये थे। वे पलट–पलट कर वानर सेना की ओर देखते हुए भाग रहे थे। वे बड़े ही दुःखी होकर पश्चाताप कर रहे थे। वे कह रहे थे कि जो लोग इस युद्ध में अत्यधिक भयभीत हो गये थे, क्या वे सभी वीरगति को प्राप्त हो चुके हैं ? उनमें फिर नयी चेतना आ जाती थी और वे अपने उद्देश्यों की पूर्ति के लिए पुनः नया अभियान शुरु कर देते थे।

128

अपने हाथों में परशु धारण किये हुए बड़े–बड़े भयानक राक्षस योद्धा युद्ध में आगे बढ़ रहे थे। वे राक्षस–सैनिकों के संरक्षक थे। वे विशेष बलशाली योद्धा थे। उनकी कुशलता एवं निपुणता की कोई सीमा नहीं थी। वे युद्ध–कला में पूर्ण निपुण थे। वे तीव्र वायु के वेग की भाँति आक्रमण करते थे। उनके इन भीषण आक्रमणों के परिणामस्वरुप असंख्य वानर युद्ध क्षेत्र में धराशायी हो गये थे। उस समय सैकडों वानरों की गर्दनें टूट गयी थीं। इस प्रकार वानरों की केवल गरदनें ही नहीं टूटीं, वरन उनके मस्तक भी भूमितल पर कट–कट कर लुढ़कने लगे। राक्षस सेना ने उन पर भीषण प्रहार किया था। इसप्रकार राक्षसों ने भी घोर युद्ध किया।

129

इस युद्ध में अत्यधिक योद्धा हताहत हुए थे। उनके शवों एवं अस्थि पंजरों के ढेर चारों ओर लगे हुए थे। अगणित संख्या में दोनों ओर के सैनिक इस भीषण युद्ध में मारे गये थे। इन योद्धाओं के रक्त की धाराएं प्रबल वेगवती नदी की भाँति बहने लगीं। रक्त–नदी की धारा में गज, रथ, पदाति सैनिक आदि बिखर–बिखर कर बहने लगे। कटे हुए घोड़े भी उसी प्रवाह में बहते दिखायी पडे।

130

यह रक्त–प्रवाह बहुत ही भयानक एवं हृदय विदारक था। युद्ध क्षेत्र की सम्पूर्ण पृथ्वी लाल रक्त के कारण लाल रंग की हो गयी थी। पृथ्वी यमराज के सरोवर जैसी लग रही थी। इस वीभत्स दृश्य के साथ ही साथ वहाँ की गंदगी, दुर्गन्ध एवं सड़न ने जुगुप्सा का भाव उत्पन्न कर दिया था। उसी रक्त–धारा में काले तथा लाल ध्वज फेन–सदृश उतराते हुए दृष्टिगत हो रहे थे।

131

प्रवीर योद्धाओं के टूटे मस्तक युद्ध भूमि में फैले हुए थे। उनकी आँखें फट कर निकल पड़ी थीं। वे इस प्रकार दिखायी दे रही थीं जैसे इस रक्तधारा के मध्य रक्त कमल खिल रहे हों। योद्धाओं की आंतें निकल–निकल कर बाहर आ गयीं थीं। उनकी समानता वृक्षों की बिखरी जड़ों से की जा सकती है। इस युद्ध–क्षेत्र की समानता एक ऐसे रक्त सरोवर से की ज़ा सकती थी, जिसमें रक्तकमल सदृश वीरों के शव तैरते हुए दिखायी पड़ रहे थे।

अध्याय – 20

1

उस भीषण युद्ध में ऐसा भयानक दृश्य उपस्थित हो गया था मानो ज्वालामुखी पर्वत अपनी सम्पूर्ण शक्ति से लावा उगल कर प्रलय का दृश्य प्रस्तुत कर रहा हो। युद्ध का यह ज्वालामुखी पर्वत लावा न उगल कर रक्त उगल रहा था। उसी रक्त से रक्त की नदियाँ प्रवाहित हो रही थीं और पर्वतमाला के मध्य में बह रही थीं। हाथियों तथा मृत घोड़ों के शव इस रक्त की नदी में बहते हुए चले जा रहे थे। वे भयानक विशालकाय शव नदी में लुढकते-लुढ़कते वह रहे थे तथा बड़े-बड़े प्रस्तर खण्डों की भाँति दिखायी दे रहे थे।

2

उसके देखने से जुगुप्सा का भाव उत्पन्न होता था। फिर भी वह नदी तीव्र गति से शब्द करती हुई आगे बढ़ी चली जा रही थी। उसमें मांस एवं कटे मस्तक फेन के सदृश उतराते चले जा रहे थे। यही कारण था कि वह दृश्य वास्तव में बड़ा ही भयावह था। उस नदी को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वैतरणी ही पृथ्वी पर उतर कर आ गयी हो।

3

गण, भूतप्रेत तथा शैतान आदि सभी वहाँ पर आनंदमग्न होकर नृत्य कर रहे थे। जहां दृष्टि जाती थी, भूत-प्रेत आदि ही दृष्टि गोचर हो रहे थे। युद्ध-क्षेत्र में वे सभी रक्त पान करते हुए मांसाहार कर रहे थे। वे रक्त पीकर पूर्णरुपेण तृप्ति का अनुभव कर रहे थे। सभी हर्षपूर्वक शोर मचा रहे थे। उनके मुख सिंहों की भाँति अत्यन्त भयानक थे। उन्हें देखते ही भय उत्पन्न हो जाता था।

4

इस प्रकार रक्त की सरिता बहती चली जा रही थी। पूरी पृथ्वी रक्त से भरी हुई थी। धीरे-धीरे युद्ध की भूमि का रक्त सूख रहा था।

5

सभी सैनिक भीषण युद्ध के कारण अत्यधिक श्रान्त हो चुके थे। वे बहुत समय तक भीषण युद्ध करते रहे । एक दूसरे पर प्रहार करते एवं झेलते हुए थक कर अब वे चूर हो गये थे। सभी एक दूसरे से अलग-अलग होकर लौट रहे थे। राक्षसों की सेना के सैनिक दुखी होकर परस्पर पीछे युद्ध की भयानकता पर बात कर रहे थे।

6

वही परिस्थति वानर सेना की भी थी। इधर–उधर बिखर कर वे स्थान–स्थान पर ठहर गये थे तथा अत्यन्त श्रांति का अनुभव कर रहे थे। सभी अपने स्वेद कणों को सुखा रहे थे।

7

इस भयानक युद्ध से थक् कर सैनिक विश्रान्ति के कारण पीछे तो लौट रहे थे परन्तु अग्रभाग की सेना के वीर युद्ध में आगे वढ़ंते ही चले जा रहे थे। बड़े–वड़े महान योद्धा युद्ध मे अब भी अपना कौशल दिखा रहे थे। पृथ्वी पर संघर्ष करने का उन्हें अच्छा अनुभव था। इस प्रकार वे वीर, योद्धा एवं रणकुशल थे।

8

वज्र वहुत ही कठोर एवं तीक्ष्ण शस्त्र माना जाता है। यही उसका स्वभाव भी है। यदि वज्र का प्रहार किया जाये, तो शत्रु का सर्व–संहार हो जाता है। इसीलिए वज्र की इतनी प्रसिद्धि इस जगत में है और उसको शक्ति जंवा भी माना जाता है।

9

उन योद्धाओं के शरीर लम्बे, चौड़े, सुगठित एव शक्तिशाली थे। उनके बदन कठोर तथा बलशाली थे। कभी युद्ध में वे गिर भी जाते थे तो पलट कर तुरंत खड़े हो जाते थे। इस प्रकार किसी भी कठिनाई का प्रभाव उन पर नहीं पड़ता था। उनकी शक्तियाँ आश्चर्यजनक थीं। वे युद्ध में बड़ा ही विकराल रुप धारण करते थे। भयंकरता में वे व्याघ्र की भाँति लगते थे। उनके ह्रदय बडे ही कठोर थे तथा अपनी वंश परम्परा के आधार से भी वे महान योद्धाओं के ही वंशज थे।

10

सम्पाती नामक वानर योद्धा युद्ध के लिए आगे वढ़ा। वह बहुत ही यशस्वी एवं शक्ति–सम्पन्न था। एक महान योद्धा के रुप में उसकी ख्याति थी। वह शक्तिशाली शत्रु की शक्ति को भी भलीभंति समझ लेता था। इसीलिए वह शीघ्र ही शत्रु की गति को रोक भी लेता था। युद्ध क्षेत्र में उसके विचार बड़े ही दृढ़ रहते थे। वह कभी भी विचलित नहीं होता था।

11

सम्पाती युद्ध में मानो नृत्य करता हुआ सा आगे बढ़ा। सभी ने देखा कि वह योद्धा युद्ध के लिए आतुर था। वह अपनी गदा को बार-बार ऊपर की ओर उछाल रहा था। उसकी गदा बहुत विशाल थी जिसकी माप भी कठिनाई से ही हो सकती थी। वह पीछे की ओर लौट कर नृत्य करने लगा। उसकी पूंछ बहुत ही सुन्दर लग रही थी। वह बार-बार कम्पायमान होती हुई सी हिल रही थी।

12

शीघ्र ही सम्पाती की शत्रु से मुठभेड़ हो गयी। वह बहुत ही सचेत तथा युद्ध में कुशल था। बड़ी चतुरता से उसने शत्रु को धोखा देने वाली चालों का पता लगाया। अपने किसी भी छल-बल से शत्रु सम्पाती पर सफलता प्राप्त न कर सका। शत्रु के सभी छलबल असफल हो गये। बाद में सम्पाती बिजली की भाँति लपक कर शीघ्रता से एक ओर उछल गया तथा प्रजंघा राक्षस के पैरों के पास जा पहुंचा।

13

सम्पाती की भाँति ही राक्षस प्रजंघा ने भी बड़ी ही कुशलता का परिचय दिया। जब आक्रमण का पूर्ण अवसर आ गया तो वह बड़ी ही तीव्रता से उछल गया। इस प्रकार वे दोनों योद्धा युद्ध में एक दूसरे को खदेड़ने लगे। एक दूसरे को पीछे हटाते हुए और एक दूसरे की शक्तियों का मूल्यांकन करते हुए वे युद्ध करने लगे। वास्तव में वे दोनों योद्धा इतनी चतुरता से युद्ध कर रहे थे कि उनमें से किसी एक को भी किसी प्रकार कमजोर नहीं माना जा सकता था।

14

युद्ध की यह गतिविधियाँ काफी समय तक चलती रहीं। बाद में राक्षस प्रजंघा अपने लक्ष्य का सन्तुलन न होने के कारण विचलित हो गया। उसका अनुमान ही ठीक नहीं लग पाया। इसी बीच सम्पाती ने उस पर पद-प्रहार किया। वह राक्षस इस प्रहार से पृथ्वी पर गिर कर लोटने लगा। उसका मस्तक टूट कर बिखर गया। सम्पाती ने उस पर दो बार आक्रमण कर उसे तोड़ दिया था। उसके बाद उस राक्षस के शरीर से रक्त की धारा बह निकली तथा उसका प्राणान्त हो गया।

15

स्पहतयाक्षि नामक राक्षस युद्ध में पूर्ण निपुण था। उसके साथी दूसरे राक्षस का नाम प्रतापनाक्षि था। वे दोनों ही साथ-साथ युद्ध में आगे बढ़े। दोनों ही राक्षस एक दूसरे के परम मित्र थे। देखने से ही वे बड़े विषैले

जन्तुओं की भाँति थे। जब वे दोनों राक्षस अपने शत्रु पर दृष्टिपात करते थे तो उनकी दृष्टि से शत्रु जलकर भस्म हो जाता था।

16

--उनकी आँखों से अग्नि की लाल ज्वालाएं प्रस्फुटित होती थीं। जब वानर सेना ने उनकी ओर देखा, तो वानरों की सम्पूर्ण शक्ति जैसे समाप्त-सी हो गयी। वानरों के शरीरों की रोमराजि उन राक्षसों के दृष्टिपात से झुलसने लगी।

17

इस भीषण परिस्थिति के कारण वानर-सेना घबरा कर तथा एक दूसरे से टकरा कर इधर-उधर भागने लगी। इस विकट परिस्थिति को देखकर शत्रु के आक्रमण का शीघ्र उत्तर देने के लिए वीर वानर नल आगे बढ़े। उनका अस्तित्व ऐसा था मानो वे स्वयं ही अग्नि के स्वरुप हों। उनके इस स्वरुप को देखकर ही उनका नाम नल रखा गया था।

18

राक्षस स्पह्नतयाक्षि का उन्होंने पूरी शक्ति से आलिंगन कर लिया। उन्होंने शीघ्र ही उसके मुख पर मुष्टि-प्रहार किया, जिससे तुरन्त उसका प्राणान्त हो गया। उसके बाद नल ने राक्षस प्रतापनाक्षि का भी पीछा कर उसको खदेड़ा और उस पर आक्रमण कर दिया। अन्त में वह राक्षस भी नल का प्रहार नहीं झेल पाया और वह चोट खाकर नल के पैरों पर आ गिरा।

19

नल के पद-प्रहार से वह राक्षस आकाश में जा पहुंचा। उसको अब किसी भी प्रकार का स्मरण नहीं था। वह अब मूर्च्छित अवस्था में था। अधमरा होकर वह राक्षस अपनी सम्पूर्ण शक्तियाँ खो बैठा। जब फिर एक बार वह पृथ्वी पर आ गिरा, तो उसकी मूर्च्छा भंग हुई। यह स्थिति भी क्षणिक ही थी। उसके पश्चात उसकी स्मरण-शक्ति कुछ समय के लिए कम-सी हो गयी थी। ऐसा लगता था जैसे सर चकरा रहा हो। कुछ देर बाद दम घुट जाने से उसकी भी मृत्यु हो गयी।

20

बड़े–बड़े, महान राक्षस योद्धाओं की युद्ध क्षेत्र में मृत्यु हो गई। अनेक वीर धराशायी हो गये। शक्तिशाली योद्धा राक्षसों की सेना से समाप्त होने लगे। वीरगति को प्राप्त ये योद्धागण बड़े ही रणवीर थे। प्रतिक्षण वे युद्ध के ही अभिलाषी रहते थे। वे युद्ध में कभी भी पीछे पैर नहीं रखते थे। उनके हृदय में यह दृढ़ निश्चय था कि युद्ध क्षेत्र में कभी भी उनकी मृत्यु नहीं हो सकती है। यही इस बात का स्पष्ट संकेत था कि वे सच्चे युद्धवीर सैनिक थे। उनके हृदय पूर्णरुपेण दृढ़ तथा वीरतापूर्ण थे। उन्हें युद्ध में किसी भी प्रकार का भय नहीं था। उसी समय जैसे स्वर्ग के द्वार उन सबके लिए खुल गये थे। स्वर्गलोक भी उस परिस्थिति में डोल –सा गया था। सभी परिस्थितियाँ उन वीरों के स्वर्गारोहण के कारण ही उत्पन्न हुई थीं।

21

सभी किन्नर तथा किन्नरियों के समूह अपार प्रसन्नता से आनंदित हो उठे। अप्सराओं और देवताओं के जोड़े साथ ही साथ उल्लासमग्न हो रहे थे। देवता तथा देवांगनाएँ भी इस सुअवसर की प्रतीक्षा में थे। सभी लोग हर्षपूर्वक पाँच प्रकार की सुस्वादिष्ट भोजन सामग्रियाँ लेकर उपस्थित हो गये थे। स्वर्गलोक में स्वागत करने की यही परम्परा है। अतएव इस परिस्थिति में यही सब शोभनीय भी था।

22

देवतागण, ऋषियों की हार्दिक अभिलाषा थी कि इस अभूतपूर्व दृश्य को देखा जाय। सभी एक साथ एकत्रित होकर उल्लसित भाव से उच्च स्वरों में वार्तालाप कर रहे थे। आकाश में इतने अधिक देवता एवं ऋषि एकत्रित थे कि सम्पूर्ण गगन–मंडल उनसे आच्छादित था। इन युद्ध के परिणाम को देखकर ऋषियों के हृदय बहुत ही प्रसन्न थे। इस सब ऋषियों के अध्यक्ष के रुप में देवर्षि नारद भी वहाँ उपस्थित थे। उनके साथ तूमबूरु ऋषि एवं गौतम ऋषि भी थे। सभी की इच्छाओं की जैसे पूर्ति हो रही हो।

23

राक्षसों तथा वानरों का जहाँ पर युद्ध हो रहा था, उस स्थान पर तुमुल कोलाहल हो रहा था। जो भी इस दृश्य को देखता था, उसको बार–बार उसे देखने की अभिलाषा होती थी। दोनों ही पक्ष समान रुप से आक्रामक रुख धारण किये हुए थे। वीरता एवं शौर्य में कोई भी पक्ष किसी से भी किसी प्रकार कम नहीं था। वे सभी प्रवीर थे तथा उनके हृदय में अपार दृढ़ता थी। वे आगे बढ़कर आक्रमण करते थे। सभी युद्धक्षेत्र में सिंह–गर्जना कर रहे थे। उनके स्वर बड़े ही भयानक एवं डर उत्पन्न करने वाले थे। उनको सुनकर मन में एक विचित्र सा भय उत्पन्न हो जाता था। उनके भीषण रव सभी दिशाओं में गूंज–गूंज कर प्रतिध्वनित हो रहे थे।

24

जम्बुमाली नामक एक महान राक्षस योद्धा ने आगे बढ़कर प्रत्युत्तर के लिए आक्रमण किया। यह राक्षस एक अद्वितीय पराक्रमी योद्धा था। वह युद्धक्षेत्र में कभी भी पीछे नहीं हट सकता था। उसने अपने कुल वर्ग क आंधार से ही अपार पराक्रम एवं शौर्य का परिचय दिया था। युद्ध में उसने अभूतपूर्व सफलताएँ अपने अपार पराक्रम से प्राप्त की थीं. उसका व्यक्तित्व वीरतामय था। उसके अनुपम पराक्रम के समकक्ष किसी अन्य योद्धा को नहीं रक्खा जा सकता था। हंसिया ही उसका सबसे तीक्ष्ण अस्त्र था। उसी से उसने असंख्य वानरों का संहार कर दियां था। हंसिये से आक्रमण करके वह वानरों के शरीर को विदीर्ण कर देता था। इस भीषण परिस्थिति को देखकर हनुमान जी आगे बढ़े। उन्हींने अपने एक ही कठोर प्रहार से जम्बुमाली को धराशायी कर दिया। हनुमान जी ने एक विशाल शिलाखण्ड गिराकर प्रहार किया था दसलिये वह पृथ्वी पर गिरते ही मृत हो गया।

25

राक्षस मित्रन्घ तथा विभीषण एक दूसरे से युद्ध करने के लिए युद्धक्षेत्र में आगे बढ़े। वे टोनों ही योद्धा बड़े ही विकराल रुप में दिखायी दे रहे थे। वे दोनों ही गदा युद्ध में पूर्ण निपुण थे। पारस्परिक संघर्ष करने हुए वे एक-दूसरे पर प्रहार करने लगे। मित्रन्घ की शक्ति क्षीण होती सी दिखायी देने लगी। उसी समय विभीषण ने उस पर गदा का घोर प्रहार कर उसे धराशायी कर दिया। तत्काल उस राक्षस की मृत्यु हो गयी। आर्य विभीषण की इस शौर्य-गरिमा को देखकर सभी आश्चर्यचकित रह गये। सभी वानर इस सफलता पर मग्न होकर हर्षोल्लास के साथ तुमुल ध्वनि करने लगे।

26

इसके पश्चात प्रघासा नामक प्रवीर आगे बढ़ा। वह शत्रु की कमियों से पूरी तरह लाभ उठाना जानता था। उसके हृदय में डर नाम की कोई भावना नहीं थी। वह पूर्णरुपेण निर्भीक था। सुग्रीव ने उसको आगे बढ़ते देखा तो वे प्रसन्नतापूर्वक उससे भिड़ने के लिए आगे बढ़े। दोनों गदायुद्ध करने लगे। बाद में दोनों की गदा टूट कर चूर-चूर हो गयी। अब दोनों ही योद्धा पृथ्वी पर खड़े होकर परस्पर भिड़ गये। सुग्रीव ने प्रघासा को दूर फेंक दिया, जिससे उसका वक्षस्थल फट गया। उसे सुग्रीव ने अपने बाएँ हाथ से विदीर्ण कर दिया।

27

इस राक्षस का वध देखकर सभी को अपार प्रसन्नता हुई। ऋषिगण, देवता एवं गन्धर्व सुग्रीव की अपार युद्ध-कुशलता को देखकर आश्चर्यचकित हो गये। उन्होंने देखा कि वानरराज सुग्रीव महान प्रवीर एवं रणकुशल थे। उन्होंने एक महान शक्तिशाली एवं वीर राक्षस को युद्ध में परास्त किया था। वे सभी इस परिस्थिति को देखकर बहुत संतुष्ट हुए तथा सुग्रीव की जय जयकार करने लगे। सुग्रीव को महान योद्धा एवं वीर कहकर तीव्र

स्वरों में वे उनकी प्रशंसा करने लगे। उन्होंने स्वर्ग से धूप तथा अन्य सुगन्धियुक्त पुष्पों की वर्षा की। सुग्रीव की गरिमा का अभिनन्दन करते हुए देवतागण पुष्प-वृष्टि करने लगे।

28

युद्ध में वीरगति पाने वाले वीरों के प्रति ऋषिगणों ने अपना पूर्ण सम्मान प्रकट किया। उन्होंने उनकी भूरि-भूरि प्रशंसा की। जो वीर युद्ध में अपने प्राणों का उत्सर्ग करते हैं उनकी इस जगत में सदैव ही प्रशंसा होती है। वे ही सच्चे प्रवीर माने जाते हैं जो प्राणों का बलिदान युद्ध स्थल पर करते हैं। यही कारण है कि वीरों को युद्ध के लिए प्रोत्साहित करते हुए उनसे सभी ने आशा की है कि वे युद्ध में कभी पैर पीछे नहीं रक्खेंगे। एक वीर योद्धा की भांति ही युद्ध के प्रांगण में प्राणोत्सर्ग करना योद्धाओं को शोभा देता है।

(दूसरी एवं अन्तिम पंक्ति में कलाकार ने सभी से आग्रह करते हुए यह प्रार्थना की है कि पाठक उस युग के वीरों की भाँति अपने जीवन में आचरण करें तथा उस युद्ध में प्रयाण करने के लिए प्रस्तुत हो जायें जो उस समय जावाद्वीप में हो रहा था। रामायण के महाकवि का संकेत रहा है कि युद्ध भी राम-कथा के प्रवाह का एक प्रधान अंग है। कलाकार ने इससे पहले जावाद्वीप के इस महान युद्ध का कोई भी संकेत कहीं नहीं किया, अतएव जावाद्वीप की किसी भी कथा की श्रंखला में उसको समुचित स्थान देकर प्रस्तुत करना कठिन-सा ही प्रतीत होता है। यहाँ पर यह भी पूरी तरह स्पष्ट नहीं हो पाता है कि महाकवि ने किस युद्ध का संकेत किया है जो जावाद्वीप में हुआ था। कब और किन परिस्थितियों में यह युद्ध लड़ा गया, इसकी भी सूचना कहीं नहीं दी गयी है।)

29

वज्रमुष्टि नामक राक्षस अट्टहास करते हुए युद्ध के लिए आगे आया। वह क्रोधानल से प्रज्वलित हो रहा था। उसके आकार की भीषणता यमराज के समान थी। उसकी मुष्टि का प्रहार वज्र के सदृश था। उसके एक ही प्रहार से शत्रु धराशायी हो जाता था और उसी समय उसकी मृत्यु हो जाती थी। इस प्रकार किसी भी शत्रु का पूर्ण संहार करने में वह समर्थ था। सांग माइंद (मयंद) का युद्ध में वज्रमुष्टि से सामना हो गया। वे दोनों योद्धा युद्धक्षेत्र में परस्पर एक दूसरे से संघर्ष करने लगे। बाद में माइंद ने उस राक्षस का मस्तक पकड़कर पूरी शक्ति से मरोड़ दिया। उसकी गरदन उसने तोड़ दी। उसके पश्चात माइंद उछलकर उस स्थान से अलग हट गये तथा राक्षस का मस्तक उन्होंने अपने हाथ में ले लिया।

30

वहाँ पर एक युवा शक्तिशाली राक्षस भी खड़ा था। उसका नाम अनिकुम्भ था। शीघ्र ही आगे बढ़ कर आक्रमण का प्रत्युत्तर देने का उसने प्रयास किया। उसकी बाहर को निकली हुई रक्तवर्णी आँखें बड़ी ही भयानक थीं। स्वर्ण की कटोरी की भाँति उसकी गोल-गोल आँखें अंगारों-सी जल रही थीं।

31

उसके पश्चात शक्तिशाली वानर नील प्रसन्नतापूर्वक युद्ध में आगे बढ़े। उनको अपनी शक्तियों पर पूरा विश्वास था। उनके हाथों में अस्त्र-शस्त्र के रुप में कोई भी वस्तु न थी। इसी बीच अनिकुम्भ राक्षस ने अपनी बाँहें बढ़ाकर पूरी शक्ति से नील को पकड़ लिया। ऐसा लगा जैसे उसने नील का आलिंगन कर लिया हो। उसके पश्चात उन पर प्रहार करते हुए उसने भीषण रुप धारण कर लिया। नील को धराशायी करने का प्रयास भी उसने किया।

32

वीर वानर नील ने राक्षस के आक्रमण को पूरी तरह झेल लिया। वे अपने स्थान से टस से मस न हुए। दृढ़तापूर्वक अपने ही स्थान पर वे डटे रहे। जैसे उन पर उस प्रहार का कोई प्रभाव हीं नहीं पड़ा। नील ने उछलकर अनिकुम्भ की गर्दन पकड़ ली। नील ने उसकी गर्दन को काट-काट कर नष्ट कर दिया।

33

राक्षस विरुपाक्ष ने इस परिस्थिति में निश्चय किया कि वे भी अपने स्थान पर अब स्थिर नहीं रहेंगें। उनको रावण के राजमहल की सुरक्षा का कार्यभार सौंपा गया था और उनकी नियुक्ति उसी स्थान पर की गयी थी। वहाँ से कूद कर विरुपाक्ष शीघ्र ही युद्ध के मैदान की ओर बढ़े और उन्होंने वानर सेना से युद्ध करने का दृढ़ निश्चय किया।

34

उसके पश्चात राम की सेना की ओर से लक्ष्मण जी दृढ़ संकल्प सहित आगे बढ़े। उनके हृदय में अपार दृढ़ता थी। लक्ष्मण ने तीव्र बाण का संधान किया। बाण लगते ही विरुपाक्ष घायल होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसके पश्चात शीघ्र ही अशानिप्रभा ने आगे बढ़कर आक्रर्मण का प्रत्युत्तर दिया, परन्तु द्रविड़ ने उस पर भीषण प्रहार कर दिया। इससे उसका प्राणान्त हो गया।

35

इस प्रकार सभी प्रधान राक्षस योद्धा युद्ध–क्षेत्र में हताहत हो गये। अब स्वयं इन्द्रजीत युद्ध क्षेत्र में आ गया। उसका रथ तीव्रगति से बढ़ा आ रहा था। उसने अपनी गदा को चारों ओर घुमाकर आक्रमण का संकेत दिया। वह भाँति–भाँति के अस्त्र–शस्त्र धारण किये हुए था। अंगद उस समय एक विशाल लकड़ी कें लट्ठे को घुमाते हुए निर्भीक होकर शत्रु का सामना करने के लिए आगे बढ़े। अंगद ने इन्द्रजीत के रथ पर आक्रमण किया, जिससे उसका रथ टूट गया। अंगद ने इन्द्रजीत के रथ में जुते हुए घोड़ों को अपना लक्ष्य बनाया था। इस प्रकार अंगद के भीषण प्रहार से इन्द्रजीत के रथ एवं अश्व नष्ट हो गये।

36

श्रीराम, लक्ष्मण तथा सुग्रीव ने अंगद के इस महान शौर्य से प्रसन्न होकर उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की। सबने उल्लसित होकर कहा– श्रेष्ठ बालिपुत्र अंगद की वीरता को देखो। विभीषण को अंगद की अपार शक्ति पर बहुत आश्चर्य हुआ। वे बहुत ही प्रसन्न हुए। वानर सेना के सभी वानर हर्षोल्लास व्यक्त करते हुए करतल–ध्वनि करने लगे।

37

आकाश मार्ग में भी सभी देवतागण प्रसन्न होकर इन्द्रजीत एवं वानरों का युद्ध देख रहे थे। उन्हें ऐसा लग रहा था जैसे इन्द्रजीत को अपने बराबर के योद्धाओं से जूझना पड़ रहा हो। अतएव देवतागण भी इस अवसर पर अपना हर्ष व्यक्त कर रहे थे। इसीलिए आकाश में कोलाहल सुनायी दे रहा था। इस भीषण परिस्थिति को देखकर सभी राक्षसों के मन में बहुत डर उत्पन्न हो गया। इन्द्रजीत का मुख पीला पड़ गया। अत्यन्त लज्जित होकर वह पीछे लौट गया।

38

इन्द्रजीत को इसके पहले युद्ध में कभी भी इतनी भीषण पराजय का सामना नहीं करना पड़ा था। कभी भी वह युद्ध में हारा नहीं था। सदैव ही उसने अपने शत्रुओं पर विजय प्राप्त की थी। जिन योद्धाओं से भी उसका संघर्ष हुआ था, उन सभी को उसने परास्त कर दिया था। यहाँ तक कि एक बार देवराज इन्द्र को भी उसने युद्ध में पराजित कर बन्दी बना लिया था। तभी से इन्द्रजीत के रुप में उसका यश सम्पूर्ण पृथ्वी तल पर व्याप्त हो गया था।

39

इन्द्रजीत की शक्ति एवं वीरता को देखते हुए सभी के मन में यही धारणा थी कि वह अजेय था। इस पराजय के कारण उसका यश प्रभावित हो उठा था। उसके यश का ह्रास हो गया था। उसका रथ अब टूट चुका था। उसके अश्व मार डाले गये थे। यह दशा देखकर उसे लज्जा का गहरा अनुभव हो रहा था।

40

इन्द्रजीत युद्ध से परास्त होकर लौट आया। अब राक्षसों की सेना में ऐसा कोई भी वीर योद्धा शेष नहीं था जो इन्द्रजीत की भाँति राक्षसी-सेना का विधिवत संचालन कर सकता। लगभग सभी वीर राक्षस योद्धा युद्ध में धराशायी हो चुके थे। राक्षसों की सेना की सुरक्षा करने वाला कोई भी योद्धा युद्धस्थल में शेष नहीं रह गया था। राम शत्रुओं का संहार करने के लिए प्रस्तुत थे। उनको पूरा रण-कौशल प्राप्त था। राम ने बार-बार अपने तीव्र बाणों से राक्षसों की सेना पर भीषण प्रहार किया। ऐसा प्रतीत होता था जैसे बाणों की वर्षा सी हो रही हो।

41

उनके बाण एक छत की भाँति आकाश पर छा कर उसको पूरी तरह ढके हुए थे। आकाश में बाणों के घनत्व के कारण गहरा अन्धकार छाया हुआ था। कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं हो पा रहा था। बिना लक्ष्य निर्धारित हुए भी जब राम बाण चलाते थे, उनका बाण निश्चय ही किसी न किसी अज्ञात लक्ष्य पर अवश्य ही लगता था। इस प्रकार सम्पूर्ण राक्षसी सेना का राम ने संहार कर डाला।

42

उस समय ऐसे भी राक्षस योद्धा युद्ध में धराशायी दिखायी पड़ रहे थे, जिनके मस्तक धड़ से अलग होकर पृथ्वी पर लोट रहे थे। ऐसा लगता था जैसे चक्र के प्रहार से उनके वक्षस्थल विदीर्ण हो गये हों तथा चक्र ने मस्तक को धड़ से काट कर अलग कर दिया हो। धराशायी कुछ अन्य राक्षसों के शरीर को बाणों ने बेध कर जर्जर कर दिया था। उनके शरीर कई खण्डों में बिखर गये थे। ऐसा लग रहा था कि उनके शरीर के टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। वे सभी युद्ध क्षेत्र में मारे गये थे। राक्षसों की सेना का राम ने पूर्ण संहार कर दिया था।

43

उन राक्षसों की दशा तो और भी अधिक शोचनीय थी जिन पर भाँति-भाँति के अस्त्र शस्त्रों से प्रहार किया गया था। अस्त्र-शस्त्र के भयानक आघात से राक्षसों का प्राणान्त हो जाता था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे श्वेत-चीटियों की पंक्ति रेंगती हुई अग्निकुण्ड में जाकर गिर रही हो और तत्काल जलकर भस्मसात हो रही हो। राक्षसों की सेना का संहार भी इसी प्रकार हो रहा था।

44

राम का बाण लगते ही भीषण आघात से सैकड़ों शव तत्काल धरती पर दिखायी देने लगते थे। कुछ ऐसे वीर राक्षस भी थे जिनके मुख बाणों से राम ने भर दिये थे। इस प्रकार उनके मुख बाणों से बिद्ध हो गये थे। उस समय उनके मुख ऐसे लग रहे थे जैसे अनेक बाण किसी तरकश में शोभा पा रहे हों।

45

ऐसे भी वीर योद्धा थे जिनके शरीर राम के वाणों से विंधकर जर्जर होकर बुरी तरह घायल हो गये थे। राम ने इन्हें अनायास ही छोड़ा था, पर वे राक्षसों के शरीर में आकर विंध गये थे। राम के बाण निश्चय ही किसी न किसी राक्षस को अपनालक्ष्य बनाते थे। वे अनेक राक्षसों को घायल कर रहे थे। उनके घावों से रक्त की धाराएँ प्रवाहित हो रही थीं। उनके शरीर बाणों से छलनी हो गये थे। इस प्रकार राक्षसों की सेना का सर्वसंहार हो रहा था।

46

राक्षसों की सम्पूर्ण सेना राम के बाणों के कारण घबराकर विक्षिप्त सी हो गयी थी। उनमें कोई भी राक्षस ऐसा नहीं था ज़िसकी मानसिक अवस्था इस भीषण परिस्थिति में असन्तुलित न हुई हो। ऐसे बहुत से राक्षस सैनिक थे, जो युद्ध में बहुत ही भयभीत हो गये थे। वे बार–बार यही सोच रहे थे कि मुंह छिपाकर युद्ध क्षेत्र से भाग निकला जाय। वे भागने का प्रयास कर रहे थे।

47

घनघोर युद्ध के कारण नष्ट–भ्रष्ट एवं आतंकित होकर राक्षसों की सेना अपनी सम्पूर्ण शक्ति खो बैठी थी। राक्षस सेना किसी भी प्रकार अब अपनी शक्ति का प्रदर्शन करने में सक्षम नहीं हो पा रही थी। राम, राक्षसों की सेना पर निरन्तर बाणों की वर्षा कर रहे थे। उनके बाण ही सम्पूर्ण अस्त्र–शस्त्रों के प्रतीक थे। राक्षसों के शरीर के सभी अंगों को राम के बाण निरन्तर वेध रहे थे। उनकी पीठ के पीछे के भागों की भी सुरक्षा इस भीषण परिस्थिति में संभव नहीं थी। भय से उनके रोम–रोम कटीली झाड़ियों की भाँति खड़े हो गये थे। राक्षसों की सेना राम के बाणों से पूरी तरह भयभीत हो उठी थी।

48

राक्षसों की सेना में ऐसा कोई राक्षस सैनिक शेष नहीं बचा था जो राम के बाणों से घायल न हो गया हो। सभी राक्षसों के शरीर पर सैकड़ों घाव हो गये थे। उनके घावों से टपटप रक्त की बूंदें टपक रही थीं। वे सभी

घबराकर और निराश होकर बहुत दुःखी हो रहे थे। वे थककर चूर हो गये थे। अपार शक्ति–हीनता का वे अनुभव कर रहे थे। कुछ राक्षस ऐसे भी थे, जो भाग निकलने में असमर्थ थे, अतएव वे वहीं युद्धभूमि में गिर पडे। राक्षस सेना बुरी तरह हताहत हो रही थी किन्तु वानर सेना हर्षपूर्वक तुमुल ध्वनि करती हुई निरन्तर आक्रमण कर रही थी।

49

राक्षस सेना को आगे बढ़ने से रोक कर वानरों ने नष्ट–भ्रष्ट कर दिया था। सभी राक्षस युद्ध से त्रस्त हो चुके थे। अतएव किसी में भी अब इतनी शक्ति नहीं थी कि प्रत्युत्तर के लिए आगे बढ़ता। सभी दुर्ग की ओर भाग–भाग कर शरण पाने का प्रयास कर रहे थे। दिन चढ़ चुका था। दोपहर ढल चुकी थी। शीघ्र ही सूर्य देवता अस्ताचल की ओर जाने वाले थे। उन्हें छिपते देखकर ऐसा लगता था जैसे वह भागती हुई राक्षसी सेना के प्रति अपनी पूर्ण उदासीनता व्यक्त कर रहे हों। यही नहीं यह भी प्रतीत हो रहा था मानो वे अपनी घृणा भी प्रदर्शित कर रहे हों।

50

शीघ्र ही सूर्य देवता अस्ताचल की ओर जाकर छिप गये। वे तुरन्त ही अपने स्थान पर चले गये। इसके पूर्व शनैः शनैः उनकी किरणों की प्रखरता एवं उष्णता भी कम होती जा रही थी। कुछ समय पहले उनका प्रकाश चारों ओर बिखरा हुआ था। अब सूर्य की किरणें पश्चिम दिशा में लाल–लाल होकर लालिमा बिखेर रहीं थीं। इस प्रकार सन्ध्या की वेला होने लगी। पश्चिम दिशा में सायंकाल की लालिमा ऐसी लग रही थी जैसे सूर्य युद्ध के मैदान की परिस्थिति एवं रक्त की लालिमा को आकाश पर अंकित कर रहे हों। आकाश पर शोभित लालिता रक्त की भाँति ही दिखायी पड़ रही थी।

51

सन्ध्या वेला भी धीरे–धीरे व्यतीत हो गयी और उसका अवसान हो गया। सारे जगत में अंधकार का पूर्ण साम्राज्य छा गया था। सघन अंधेरे के कारण कहीं भी कुछ दिखायी नहीं देता था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे अंधकार का सम्पूर्ण तत्व ही सिमट कर सामने आ गया हो। उस अवसर पर प्रवीर योद्धाओं को ऐसा लग रहा था जैसे अन्धकार की अधिकता के कारण युद्ध सदैव के लिए ही समाप्त हो गया हो।

52

प्रतिकूल परिस्थितियों को देखकर इन्द्रजीत को अत्यन्त क्रोध हो आया। उसके क्रोध का एक कारण यह भी था कि उसका रथ तोड़ दिया गया था और अश्वों को मार डाला गया था। अंगद की इन गतिविधियों को देखकर उसके मन में गहरी निराशा हो रही थी। इसके पश्चात् वह मन्दिर में पूजा के लिए गया। वहाँ पर वह अपने अस्त्रों की विधिवत् अर्चना करना चाहता था। उसका वह अस्त्र नागपाश के नाम से विख्यात था।

53

उसने अपने नागपाश नामक अस्त्र की पूजा समाप्त कर ली तब य़ोग से प्राप्त जादू विद्या की शक्ति को भी उसने जागृत किया। उसकी यह सभी शक्तियाँ अदृश्य थीं। उसका शरीर आकाश की भाँति कोमल हो गया था तथा दिखायी नहीं देता था। यह सब उसकी जादू की ही शक्ति थी,जिसके कारण उसने अज्ञात एवं अदृश्य शक्तियों को अपने में समाहित कर लिया था। योग एवं माया से उसने यह शक्तियाँ प्राप्त की थीं।

54

जव उसकी योग माया पूर्ण रुपेण सफ़ल हो गयी और उसने शक्तियों को साकार कर लिया तो उसके मन में दृढ़ निश्चय की स्थिति आ गयी। वह यह अनुभव करने लगा कि युद्ध में अब उसकी विजय निश्चत है। उसने शीघ्र ही अपना धनुष संभाला। यह धनुष अत्यंत विशाल था। धनुष एवं बाण मिलकर अभूतपूर्व शक्ति का संकेत देते थे। इन्द्रजीत के बाण तो मानो शक्ति के प्रतीक हों, ऐसा स्पष्ट था।

55

इन्द्रजीत युद्व क्षेत्र में युद्व करने के लिए आया। भीषण शब्द करते मेघ के नाद की भाँति उसने गंभीर गर्जना की। उसके स्वर में गहरी क्रूरता थी। उसका घोर रव बहुत ही भयावह था। उसके स्वर में गहरी कठोरता भरी हुई थी। पृथ्वी उसके स्वर से कम्पित होने लगी थी। उसका रव सम्पूर्ण आकाश पर छा गया। इसके बाद उसने सम्पूर्ण वातावरण को कम्पित कर दिया। इन्द्रजीत का नाम मेघनाद भी था। मेघनाद का अर्थ ही है मेघों का–सा गंभीर स्वर। सम्पूर्ण जगत में वह इस नाम से प्रसिद्व था।

56

मेघनाद के गुरुगंभीर गर्जन को सुनकर सभी वानर सेना निराश–सी हो उठी। सभी वानर भ्रम में पड़कर चौंक से उठे। उनको यह भी आभास नहीं हो पा रहा था कि यह स्वर कहाँ से आकर वातावरण को प्रकम्पित कर रहा है। वह स्वर बहुत ही भयानक था और मन को डरा रहा था। सभी वानर भ्रम में पड़कर इधर–उधर देखने

लगे। उन्हें कोई भी कहीं दिखायी नहीं दे रहा था। चारों ओर गहरा अन्धकार छाया हुआ था। सारा विश्व ही अन्धकार की गहरी कालिमा से पूरी तरह आच्छादित था।

57

अपूर्व शक्तियें को प्राप्त कर इन्द्रजीत ने अपने शरीर को संर्वशक्तिमान बना लिया था, साथ ही छिपा भी लिया था। केवल उसका भयानक सिंहनाद हीं वातावरण में गूंज रहा था। उससे सभी के मन में भय उत्पन्न हो रहा था। वानर सेना उसके भयानक स्वर को बार-बार सुनकर और भी अधिक भयभीत होती जाती थी। उसका स्वर वानरों के हृदय को विदीर्ण कर रहा था। वानरों की समझ में कुछ भी नहीं आ रहा था। वे सोच ही नहीं पा रहे थे कि उन्हें इस भीषण परिस्थिति में क्या करना चाहिए। उन्हें यह भी दिखायी नहीं दे रहा था कि उनका शत्रु कहाँ छिपा हुआ है।

58

जव मेघनाद घोर स्वरों में गर्जना कर रहा था, सभी वानर डर के कारण चिल्लाने लगे। वे सभी किंकर्तव्यविमूढ़ हो गये थे। इन्द्रजीत नें उसी अवसर पर अपना धनुष चौड़ा करके फैलाया। वह हर्षोन्मत्त था। उसने नागपाश से वानर सेना पर बाण-वर्षा की। उसके सभी बाण सर्पों का स्वरुप धारण कर वानर सेना पर टूट पड़े।

59

लम्बे चौडे तथा विभित्र रुपों में उन सर्पो ने अपने मुखों एवं फणों से आक्रमण किया। उन सर्पो के मुख चौड़े-चौडे तथा फैले हुए थे। वे बड़े भयानक थे। उनके दाँत एवं आँखें अंगारों की भाँति जल रही थीं। उनके मुखों से सदैव ही विष निकल रहा था। सर्पों का विकराल रुप धारण करके बाण वानर सेना पर बरस रहे थे। इससे सम्पूर्ण वानर सेना में भय का वातावरण उत्पन्न हो गया था।

60

रावण पुत्र मेघनाद के बाणों ने एक विचित्र भयानक परिस्थिति उत्पन्न कर दी थी। अनगिनत संख्या में वानर सेना को नागपाश ने लपेट कर बाँध लिया। सभी वानर जब नागपाश में बंध गये, तो वे डर से जोर-जोर से चीत्कार करने लगे। वे मुक्ति का प्रयास करने लगे। एक-एक बन्धन में चार-चार वानर बद्ध हो गये थे। नागपाश से मुक्त होने के लिए सभी वानर चिल्ला कर प्रयत्न कर रहे थे। चिल्लाते हुए वे सभी गहरी निराशा एवं दुःख कर अनुभव कर रहे थे।

61

राम तथा उनके अनुज लक्ष्मण भी मेघनाद के नागपाश प्रहार से बच नहीं सके। उसने नागपाश से राम तथा लक्ष्मण पर घोर आक्रमण किया। उसका वह अस्त्र व्यर्थ नहीं गया। एक ही वार में राम तथा लक्ष्मण दोनों ही एक साथ नागपाश में बंध गये। उनकी तीव्र वाहों आदि सभी अंगों पर उसने आक्रमण किया। यहाँ तक कि उनके पैरों को भी उसने नागपाश में लपेट लिया। उनके शरीर के अंग प्रत्यंगों को नागपाश ने वाँधकर शिथिल कर दिया। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उनके शरीर मसल डाले गये हों।

62

राम तथा लक्ष्मण मूर्च्छित होकर अधमरे की भाँति पृथ्वी पर गिर पड़े। उस समय उनके शरीर भी पूर्णतः शक्तिहीन हो गये थे। उनको ऐसा अनुभव हो रहा था जैसे उनकी सम्पूर्ण शक्तियाँ समाप्त हो गयी हों। उनको उस राक्षस की क्रूर आँखों की शक्तियों का भी पूरा स्मरण नहीं रहा। उनकी ऐसी परिस्थिति हो गयी थी जैसे वे मरणासन्न हों। उनके मुखों की कान्ति क्षीण हो गयी थी। जैसे दिवस में चन्द्रमा पूर्णरुपेण कान्तिहीन हो जाता है या वेणु वृक्ष की पत्ती सूख कर भूमि पर गिर जाती है उसी प्रकार राम और लक्ष्मण भी निस्तेज हो उठे थे।

63

जब राम पृथ्वी पर नागपाश मं बंधकर गिर पड़े,तो वानर सेना भयभीत हो कर चिल्लाने लगी। उनके चीत्कार के स्वर शनैः शनैः और तीव्रतर होते जा रहे थे। वे अत्यन्त दुःखी होकर अपार कष्ट का अनुभव कर रहे थे। उनके शरीर भी नागपाश में बंधे हुए थे तथा उनकी सभी शक्तियाँ भी क्षीण हो गयी थीं। वानरों के दुःखी होने का कारण अपना नागपाश में बंधा होना तो था ही, एक अन्य स्पष्ट कारण भी था। उनके राजा राम भी उस नागपाश में बंधे हुए थे, जिनके प्रति उन्हें अपार प्रेम था। इसीलिए वे अत्यधिक व्याकुल हो रहे थे।

64

हे राजा रघुकुल तिलक राम ! आप हम सब वानरों के देवता हैं। आपकी कृपा से ही हम सबके जीवन में सुख आया है। आपकी अपेक्षा इस जगत में हम सबकी सहायता करने वाला अन्य कोई व्यक्ति नहीं है। हम सबके प्रति आपके अनेक उपकार हैं। आपने हमारी भलाइयाँ की हैं। अपनी कृतज्ञता प्रकट करने के लिए ही हम सब इस युद्धक्षेत्र में शत्रु केविरुद्धआपका साथ दे रहे हैं। हमारी यही कामना रही है कि हमारे कष्ट दूर हो सकें। परन्तु हे राजा राम ! हमारी भावनाएँ पूरी तरह साकार न हो सकीं। हम सब आपके प्रति अपने कर्तव्य को पूरी तरह निभा न सके। आज इस जगत में हम सबके जीवन व्यर्थ सिद्ध हुए हैं। आपने हम सबको पूरी प्रसन्नता प्रदान कर अपार सुख समृद्धि भी दी है, पर आपको हम शायद पूरी सहायता नहीं दे सके हैं।

65

हे राम ! केवल आप ही एक ऐसे उत्तम राजा हैं, जो अन्य व्यक्तियों की आवश्यकताओं की पूर्ति को कर्तव्य मानते हैं। भिक्षुओं , ऋषियों, पवित्र पुरुषों तथा अन्य सज्जनों की सुरक्षा का उत्तरदायित्व भी आप अपने ही कं ध ों पर लिए हुए हैं। आप ही इन तीनों लोकों के भार को उतारने वाले हैं। हम सबकी आशाओं एवं आकांक्षाओं के आप ही प्रतीक हैं। हम सब आशा करते हैं कि आप ही हमारे दुःखों का नाश करेंगे। हे राम ! आपके सदृश इस संसार में कौन हो सकता है ? आपकी तुलना के योग्य कोई है ही नहीं। आपके सदृश चरित्रवान एवं महापुरुष इस जगत में अन्य कोई नहीं है।

66

हे राम ! आप सभी पर कृपा करने वाले हैं तथा प्राणी मात्र के प्रति आपके मन में अपार प्रेम है। जो प्राणी इस संसार में अनेक विपत्तियाँ झेल रहे हैं,जो लोग किसी प्रकार की सहायता किसी व्यक्ति से प्राप्त न कर पाने के कारण असहाय हैं,जो दृष्टिहीन और अन्धे हैं तथा जो सहायता के अभिलाषी या प्रार्थी हैं, वे सभी आपके पास आकर सहायता की प्रार्थना करते हैं। आप पूरा ध्यान देकर उनकी सहायता अवश्य ही करते हैं। आप कभी भी पक्षपात नहीं करते हैं। आपका हृदय शुचि एवं निर्मल है। आप अपने महान शत्रु के प्रति भी सदैव ही सहानुभूतिपूर्ण दृष्टिकोण अपनाते हैं।

67

वानर सेना श्री राम का गुणानुवाद करते हुए भाँति – भाँति से विलाप कर रही थी। उसे असहनीय दुःख का अनुभव हो रहा था। वे सभी राम की गौरव गाथा का वर्णन कर रहे थे। उनके नेत्रों से अश्रु प्रवाहित हो रहे थे। आँसुओं की बूदें निरन्तर टपक रही थीं। इस प्रकार अश्रु–जलधारा रोकने से भी नहीं रुक रही थी। सभी वानर फूट–फूट कर रो रहे थे तथा राम के महान आदर्श चरित्र का रो–रोकर बखान कर रहे थे। राम भलाई के प्रतीक थे। इसीलिए वानरों ने रम की कृपा एवं महान गौरव–गाथाओं का बार – बार उल्लेख किया। राम का चरित्र उनके लिए आदर्श था तथा सभी के लिए अनुकरणीय भी था।

68

वहाँ पर ऐसे वानर भी थे,जो महान पराक्रमी,अपार शक्तिशाली,रणकुशल योद्धा एवं दृढ़ विचारों वाले थे। वे नागपाश में बंधने के पश्चात् भी दृढ़ संकल्प रहे । उनकी आँखों से एक बूंद अश्रुकण भी नहीं टपका। वे बड़े ही भीषण शूरवीर योद्धा थे। उन्होंने पृथ्वी पर लोट कर नागपाश को विच्छिन्न करके उससे मुक्त होने का पूरा प्रयास किया। वे राक्षसों से बदला लेने की दृढ़ प्रतिज्ञा किये हुए थे, इसीलिए अत्यन्त क्रुद्ध भी थे। वे क्रूरता

का परिचय देने के लिए भी पूर्णरुपेण उद्यत थे। यद्यपि उनके नेत्रों से भी अश्रुधारा प्रवाहित होती हुई उनके गालों तक आ जाती थी,फिर भी वे अपनी अपार सहनशक्ति का पूरा परिचय दे रहे थे। उनके हृदय शत्रु मे बदला लेने के लिए अंगारों की भाँति प्रज्जवलित हो रहे थे।

69

कुछ वानरों ने सोचा कि इस शरीर को जीवित रखने का अब कोई अर्थ ही नहीं है। अब इसमें किसी भी प्रकार की शक्ति शेष नहीं बची है। इस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में रहने की अपेक्षा मृत्यु ही अधिक उचित प्रतीत होती है। वे सब अपने आपको धिक्कार रहे थे। अपने लिए वे अपशब्दों का भी बार-बार प्रयोग कर रहे थे। उनकी शक्तियों का जैसे ह्रास हो चुका था। वे सभी स्वयं को बहुत अभाग्यशाली मान रहे थे। वे अपने सबसे बड़े शत्रु मेघनाद का संहार करने में पूर्ण असफल हो चुके थे।

70

हा! हम सवका यह जीवन कैसा है ? इसमें सौभाग्यपूर्ण स्थिति तो कम ही है, दुःखपूर्ण स्थिति अधिक है। दुखपूर्ण इस स्थिति को सहन कर पाना कठिन हो रहा है। क्या कभी अपने जीवन में हम सबने कोई ऐसा पाप किया था जो हिमालय पर्वत के समान बड़ा था ? क्या उसी के फलस्वरुप हमें जीवन में आज यह दिन देखना पड़ा ? हे देव ! यह कैसी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति है। इस प्रकार के शब्द कई वानर कह रहे थे। सभी की बुद्धि भ्रम में पड़ी हुई थी,अतएव इस विषम परिस्थिति में उन सबने परमात्मा की महान शक्ति पर ही विश्वास करना उचित समझा।

71

कुछ वानरगण नागपाश की चपेट में नहीं आ पाये थे। वे भी इस परिस्थिति को देखकर क्रन्दन कर रहे थे। वे सब घबरायें हुए थे और भ्रमित हो उठे थे। राम की सहायता करने में वे असमर्थ थे। उन्हें ऐसा लग रहा था कि निश्चय ही अब राम तथा लक्ष्मण की इस दशा में मृत्यु हो जायेगी। वे सभी कह रहे थें कि इस संबंध में वे कर ही क्या सकते हैं ? वे सभी घबरा-घबरा कर चारों ओर देखते हुए अपनी विवशता सूचित कर रहे थे।

72

वे प्रलाप करते हुए कह रहे थे- वास्तव में हमारे शत्रु ने तो हमें भली-भाँति देख लिया है और जान भी लिया है, अतएव हम सब अपने कर्तव्य के प्रति दृढ़ हों तथा दृढ़ता से ही युद्ध करें। युद्धक्षेत्र में कभी भी पीछे पैर न हटायें। युद्धक्षेत्र में ही हम अपने प्राण उत्सर्ग कर दें। हमारे सबके लिए यही उचित है। ऐसा करने से हमें

मुक्ति प्राप्त हो जायेगी। प्राण न्योछावर कर देने पर ही हम अपना कर्तव्य पूरा कर सकते हैं अतएव हमारी मृत्यु ही हमारे जीवन को मुक्ति प्रदान कर सकती है। अपनी आँखों में बहते हुए अश्रुओं को रोकते एवं पोंछते हुए सभी वानर अपने–अपने विचार व्यक्त कर रहे थे।

73

वानरराज सुग्रीव अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपने ओठों को चबा रहे थे। वे ओठों को काट रहे थे और मौन खड़े थे। आर्य विभीषण अपनी आँखों से आँसू पोंछते हुए आगे बढ़े। विभीषण ने देखा कि इन्द्रजीत आकाश में दिखायी दे रहा था। वह स्पष्ट रुप में वहीं पर उपस्थित था। विभीषण ने अपने हाथों में एक भीषण एवं तीव्र शूल ले लिया। उसको शीघ्र ही लक्ष्य बनाकर उन्होंने उस पर चला दिया। वह शूल प्रकाश पुंज की भाँति ऊपर आकाश की ओर चला गया।

74

जब इन्द्रजीत ने उस शूल को अपनी ओर आते हुए देखा तो उसने शीघ्रता से उसको बीच में ही रोक दिया। उसके पश्चात् इन्द्रजीत पृथ्वी पर लौट आया और उसने शूल को पीछे लौटा दिया। सभी गतिविधियों की विधिवत् सूचना देने के लिए इन्द्रजीत रावण के पास गया। उसने रावण से कहा कि मैंने शत्रु को युद्ध में हरा दिया है। हमारे शत्रु नागपाश में बंध कर मारे गये हैं तथा वे कुछ भी कर सकने में पूर्णतः असमर्थ हैं। राम तथा लक्ष्मण बहुत दयनीय दशा में हैं। उनमें अब नाममात्र की भी दृढ़ता शेष नहीं है।

75

इन्द्रजीत ने रावण को यह सूचना दी कि राम नागपाश से बंध कर लाचार स्थिति में पड़े हुए हैं। इन्द्रजीत महाभिमानी था। इस समाचार को सुनकर रावण प्रसन्न हो उठा। इन्द्रजीत की प्रशंसा करते हुए उसने अपना हर्ष व्यक्त किया। रावण ने कहा,हे मेरे यशस्वी पुत्र ! तुम महान योद्धा हो। तुम्हारा प्रयास कभी व्यर्थ सिद्ध नहीं हो सकता। तुम्हारे जैसे महान योद्धाओं के लिए यह युद्ध तो खेल की भाँति है।

76

अपने पराक्रमी पुत्र इन्द्रजीत की प्रशंसा करते हुए रावण ने बहुत कुछ कहा। वह इस विजय से इतना उल्लसित हुआ कि आगे बढ़कर उसने शीघ्र ही अपने पुत्र का आलिंगन कर लिया। जो भी सूचना इन्द्रजीत ने रावण को दी थी ,उस पर रावण को कभी भी कोई सन्देह नहीं हो सकता था। उसकी अभिलाषा की पूर्ति हो गयी

थी। उसको अपने पुत्र की अलौकिक शक्तियों पर पूरा विश्वास था। इसीलिए उसकी विजय के प्रति रावण पूर्णतः आश्वस्त भी था।

77

इस शुभ समाचार को सुनकर रावण ने इन्द्रजीत को प्रसन्न करने के लिए उसके सम्मानार्थ बहुत ही अमूल्य मणि माणिक्य एवं सुवर्ण की वस्तुए भेट स्वरुप प्रस्तुत कीं। ये सभी भेंट की वस्तुएं इन्द्रजीत की विजय के उपलक्ष्य में उसके स्वागत के लिए तैयार की गयी थीं। इन्द्रजीत सभी उपहार प्राप्त कर शीघ्र ही राजमहल से बाहर आ गया। वहाँ पर आकर उसने भी अपने सभी साथियों को विजयश्री के उपलक्ष्य में सम्मानित किया। उसने भी लोगों को उपहार भेंट किये। उपहार देकर उसने अपना हर्ष प्रकट किया।

78

रावण की सम्पूर्ण राक्षस-सेना इस समाचार को सुनकर बहुत ही हर्षित हुई। युद्धक्षेत्र में विजयश्री इन्द्रजीत के हाथ में रही। यह समाचार सुखदायी था भी । वानर सेना की घोर पराजय हुई। इस शुभ समाचार से रावण दल के सभी लोगों ने आनंदमग्न होकर आहार किया। मदिरापान से उत्सव मनाया गया। वार्तालाप एवं विजय के उल्लास पर हर्ष व्यक्त करते हुए रात व्यतीत की गयी। सभी प्रकार की प्रसन्नता के सूचक आयोजन किये गये थे। नवीन एवं उत्तम आयोजनों से सबका मन प्रसन्न था। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उन सबके मन की सभी अभिलाषाओं की पूर्ति हो गयी हो।

79

पुष्प, सुंगधित द्रव्य, सुन्दर वस्त्राभूषण, इत्र आदि सुवासित वस्तुएं, स्वर्णासन तथा सुन्दर चटाई आदि भेंट की गयीं। इस प्रकार भाँति-भाँति की सुन्दर चटाइयाँ प्रस्तुत की गयी थीं। सुन्दर-सुन्दर युवतियाँ उन सभी वस्तुओं की सुरक्षा के लिए उपस्थित थीं। यह कार्यभार अलौकिक सुन्दरियों को ही सौंपा गया था। अपूर्व सुन्दरियाँ, विद्याधरियाँ, देवांगनाएँ आदि भी उसी सेवा कार्य में रत थीं। वे अपूर्व सुन्दरी युवतियाँ थीं। उनके स्वरों में अनुपम मिठास थी। वे सभी हास-परिहास की कलाओं में पूर्ण पारंगत थीं।

80

राक्षसों की सेना के योद्धाओं को इस विजय पर अपार उल्लास का अनुभव हो रहा था। वे रातभर सोये नहीं। उन्होंने प्रसन्नतापूर्वक जागरण किया। अपने कुल वर्ग के लोगों से भाँति-भाँति के वार्तालाप करते हुए उन्होंने

रात्रि आनंदपूर्वक व्यतीत की। कुछ अन्य राक्षस अपनी प्रेमिकाओं से पारस्परिक प्रेमालाप एवं केलिक्रीडा में आनंद मनाते रहे। उनके हृदय में प्रेमिकाओं के प्रति अपार आकर्षण एवं कामेच्छा थी।

अध्याय – 21

1

इस प्रकार राक्षसों की सेना ने सम्पूर्ण रात्रि आनंद एवं उल्लास मनाते हुए व्यतीत की। वे सभी अपार सुख का अनुभव कर रहे थे। उन्होंने आदेशानुसार देवी सीता को भी सूचना दी। वे सीता को स्वर्ण के यान में उड़ाकर युद्धक्षेत्र में ले आये। वहाँ पर वानर सेना एवं राक्षसों में युद्ध हो रहा था।

2

राम के प्रति इन्द्रजीत ने घोर अन्याय किया था। सीता को यह भी दिखाया गया कि नागपाश में राम को किस प्रकार बन्धन में बाँध लिया गया था और वे युद्ध-क्षेत्र में नागपाश के प्रहार से किस प्रकार ग्रस्त हो कर मूर्च्छित से पड़े हुए थे। सीता ने आर्य राम को युद्धक्षेत्र में मूर्च्छित अवस्था में पड़े देखा। वे नागपाश के बन्धन में लिपटे पड़े थे। दुःख से वे चीत्कार कर रहे थे। उस समय उनके वस्त्र भी अस्त-व्यस्त एवं फटे हुए से दिखायी दे रहे थे।

3

उस स्वर्ण यान पर ही सीता राम की इस दयनीय दशा को देखकर मूर्च्छित होकर गिर पड़ीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उनके शरीर में रक्त ही न हो। वे पीली पड़ गयी थीं। अत्यन्त दुःखी होने के कारण उन्हें कुछ भी स्मरण नहीं आ रहा था। वे एक शव की भाँति स्थिर हो गयीं। वे मौन एवं स्तब्ध थीं। उनके शरीर में तनिक भी स्पन्दन नहीं था।

4

सीता का मुख कान्तिहीन होकर पीला पड़ गया था। उनकी आँखें उनकी व्यथा बता रही थीं। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उनका शरीर निष्प्राण हो गया हो। उनके कंधे उनकी ग्रीवा का बोझ भी उठाने में असमर्थ थे। उनके हाथ स्थिर होकर जैसे निर्जीव-से हो गये थे। उनके सम्पूर्ण शरीर की सभी शक्तियों का पूर्ण ह्रास हो चुका था।

5

सीता जी स्वर्णयान में मूर्च्छित पड़ी हुई थीं। राक्षसी त्रिजटा उनके चरणों पर लोटती हुई क्रन्दन करने लगी। उसने देवी सीता के चरणों को पकड़कर हृदय से लगा लिया। देवी सीता के चरण स्वभावतः बहुत ही मृदुल एवं कोमल थे। वे कोमल चरण एकदम इतने कठोर रुप में क्यों परिवर्तित हो गये ? यह बड़े ही आश्चर्य की

बात थी, परन्तु स्पष्ट ही सीता का शरीर शुष्क काष्ठ की भाँति होकर रह गया था।

6

त्रिजटा ने राजपुत्री सीता को जगाने का पूरा प्रयास किया। इस प्रकार शनैःशनैः वे जागृतावस्था में भी आ गयीं। हे राजपुत्री ! आपकी दशा इस प्रकार क्यों हो रही है ? आप शीघ्र ही जागने की कृपा कीजिए तथा सभी बातों का स्मरण कीजिए। मैं आपकी सेविका एवं दासी की भाँति हूं। मैं आपकी इस अवस्था को देखकर अपार दुःख का अनुभव कर रही हूं। आप निश्चय ही मेरी सहायता करने की कृपा कीजिए। आपकी यह दयनीय दशा देखकर मुझे अपार कष्ट हो रहा है।

7

हे देवी! जो शब्द आपने मुझसे पहले कहे थे,उनसे आपका क्या अभिप्राय था ? आपने मुझसे कहा था कि हे त्रिजटा ! हे बहिन ! मेरे शब्दों पर पूरी तरह ध्यान दो। यह कहते हुए ही आपने पूछा था-अब मैं कहाँ जाऊं? अब मैं कह रही हूं कि आप भी मुझसे कभी अलग न हों। मेरे लिए यह संभव नहीं है कि मैं कभी भी आपके बिना रह सकुंगी। आपसे वार्तालाप न करु,यह भी असम्भव है।

8

मुझे तो आज ऐसा प्रतीत हो रहा है कि आपके शब्द केवल मुझे बहलाने वाले ही शब्द थे। आज वे सत्य सिद्ध नहीं हो पा रहे हैं। आपने न तो विदा लेने का कोई संकेत मुझे दिया, न हीं मुझसे आपने विधिवत् विदा ली है। मैं आपसे दूर स्थान पर भी नहीं थी, मैं तो सदैव ही आपके साथ थी। आपने मुझ पर पूरा विश्वास क्यों नहीं किया ? इसका क्या कारण है कि मैं अब तक आपका विश्वास प्राप्त न कर सकी ? मैं अपने स्वप्न में भी कभी आपको किसी प्रकार का धोखा नहीं दे सकती हूं। मुझ पर प्रत्येक परिस्थिति में आपको पूरा विश्वास करना चाहिए।

9

इस अवसर पर आपने स्वयं अपनी एक निकटतम बहिन तथा उसके विश्वास को खो दिया है। आप मुझे बिना किसी प्रकार की सूचना दिये हुए ही यहाँ से चली गयीं। आप जो कुछ भी मुझसे कहती थीं, उससे सदैव ही आपका प्रेम स्पष्ट होता था। निश्चय ही मेरे प्रति आपको अपार प्रेम भी था। मेरे लिए भी कभी यह संभव नहीं था कि मैं आपके शब्दों पर समुचित ध्यान न देती अथवा उनकी उपेक्षा करती।

10

जहाँ तक प्रेम के मापदण्ड का प्रश्न है, अपने माता-पिता के प्रति मेरा प्रेम सर्वाधिक रहा है। मेरा यह प्रेम भी इस सीमा तक कभी नहीं था, जिस सीमा तक आपके प्रति है। अपने सम्पूर्ण प्रेम का केन्द्र मैं आपको ही स्वीकार करती रही हूं। आप ही मेरे लिए मेरे पिता एवं माता के तुल्य थीं तथा आप ही मेरी परम पूजनीया पवित्र देवी भी थीं। आप ही मेरी आशा-मणियों की प्रतीक थीं तथा मेरी सम्पूर्ण इच्छाओं एवं अभिलाषाओं के कल्पतरु की भाँति थीं।

11

मैंने अपने जीवन में आपकी ही सेवा का व्रत लिया है। इस संसार में आपसे अधिक अन्य कोई भी नहीं है जो मुझे आश्रय प्रदान करे। मेरे जीवन की सम्पूर्ण आशाएँ आप पर ही केन्द्रित रही हैं। यदि आप इस संसार में नहीं रहेंगी तो मैं अन्य किसके प्रति अपना प्रेम अर्पित करुगी। हे राजपुत्री सीता ! मैं यह भलीभाँति समझती हूं कि अन्य लोग मुझसे प्रेम नहीं करते वरन् मुझे हेय दृष्टि से देखते हैं। वे लोग मेरा अपमान भी करते हैं।

12

सभी राक्षसियाँ सभी रुपों में आपको कष्ट पहुंचाने का निरन्तर प्रयास करती रही हैं। केवल मैं ही ऐसी थी, जो किसी न किसी रुप में आपको धैर्य एवं सन्तोष प्रदान करने का प्रयत्न करती रही। यद्यपि वास्तव में मुझे भी अधिक समय तक आपके चरण-कमलों में रहकर आपकी सेवा का पूरा अवसर प्राप्त नहीं हो पाया है तथापि मैंने जितना संभव हो सका आपकी सेवा की है। आप मुझे अपनी कृपा और करुणा का सम्वल दीजिए। मेरी ओर देखकर मेरी दशा पर आप कृपा कीजिए।

13

यदि इस समय आप अपने प्राणों का त्याग ही करने का दृढ़ निश्चय कर चुकी हैं तो मैं भी आपसे एक क्षण पीछे रहने वाली नहीं हूं। मैं भी शीघ्र ही आपका अनुसरण करना चाहती हूं। हे देवी ! इसीलिए आप सदैव ही इस बात का स्मरण रखिए कि आपको मेरी भी प्रतीक्षा करनी है। मैं सदैव ही आपके चरण कमलों की सेवा में अपने को अर्पित करना चाहती हूं तथा एक क्षण भी आपसे विलग रहना मेरे लिए संभव नहीं है।

14

देवी सीता के लिए त्रिजटा दुःखी थी। भाँति-भाँति से वह उनका गुणानुवाद करती हुई विलाप कर रही

थी। उसके मन में सीता के प्रति अपार प्रेम एवं श्रद्धा की भावना थी। बहुत देर तक राजपुत्री सीता को होश नहीं आया। वे कुछ भी स्मरण न कर पा रही थीं। यह देख कर त्रिजटा उनके वियोग में व्याकुल हो गयी। वह अत्यधिक संतप्त होकर रुदन करने लगी।

15

दुःख के भार से अत्यधिक दबे होने के कारण सीता कुछ भी स्मरण नहीं कर पा रही थीं। वे मूर्च्छित अवस्था में पड़ी थीं। शनैः शनैः उनका शरीर कुछ गतिशील हुआ तथा राजपुत्री सीता को कुछ स्मरण हो आया। अभी भी उनको पूरी चेतना प्राप्त नहीं हो सकी थी। उनका मन बहुत ही दुःखी था। उनका कण्ठ सूख रहा था। इसलिए उन्हें बहुत प्यास लगी हुई थी। सीता के महान दुःख की कोई सीमा नहीं थी।

16

उनका हृदय जैसे विदीर्ण हो चुका था। उनकी सभी शक्तियाँ लगभग समाप्त हो चुकी थीं। उनके मुख तथा कपोलों पर अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। उनकी आँखें रुदन के कारण सूजकर लालवर्ण की हो गयी थीं। उनके आंसू रुकते ही नहीं थे। एक बार फिर उनके मुख से चीत्कार निकली। उसके पश्चात् उन्होंने सहायता की प्रार्थना की।

17

राजपुत्री सीता ने कहा, यह प्राण भी कैसा है ! न जाने इसमें कितनी सहनशक्ति है कि इतने महान दुःखों के पड़ने के पश्चात् भी यह मेरे शरीर को नहीं छोड़ रहा है। ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे इस शरीर से इसे अपार प्रेम है। यह दुर्भाग्यपूर्ण ही है कि मेरा प्राणान्त नहीं हो रहा है और मैं अपार दुःख उठा रही हूं।

18

मेरा हृदय भी मुझे धोखा देकर सदा ही बहलाता रहा है। मेरा प्रेम भी कभी मुझे पूर्ण सन्तोष नहीं दे पाया। मेरा प्रेम केवल मेरी भावनाओं तक ही सीमित रहा। कभी भी उसकी कोई साकार कल्पना मेरे समक्ष नहीं हो पायी। अपने प्रेमी राम से मेरा मिलन संभव नहीं हो पा रहा है। मेरे प्राण प्रिय का वियोग सहन करके भी मेरे शरीर में ही स्थित हैं। उन्होंने अब तक मेरे शरीर का त्याग नहीं किया है। आज यह परिस्थिति है कि राजा राम का युद्ध में प्रायः वध सा हो गया है। हा ! मुझे धिक्कार है ! अपने प्रिय – प्रेम को मैं क्या कहूं। प्रिय–वियोग में प्राण का न निकलना तो इस पर प्रश्नचिन्ह सा लगा रहा है।

19

एक समय था जब अपने प्रेम, श्रद्धा तथा उसके साथ ही साथ गहरे आकर्षण का अनुभव मुझे सदैव ही होता रहता था। वक स्थिति भी असाधारण ही थी। यद्यपि मैं राम से अथाह प्रेम करती रही परन्तु उनकी मृत्यु पर मैं उनका अनुसरण नहीं कर पा रही हूं। हे राजा राम ! क्या वास्तव में मेरा हृदय आज लौह एवं पत्थर की भाँति कठोर हो गया है ? आज आपकी मृत्यु के पश्चात् भी वह चूर – चूर क्यों नहीं हो पा रहा है। हे राजा राम ! यह कितनी बड़ी विडम्बना है। मैं क्या करु, क्या न करु, मुझे तो कुछ भी समझ में नहीं आ रहा है।

20

मुझे भली भांति ज्ञात है कि आपने मुझे वन में खोजने के अथक प्रयत्न किये। उस सघन भीषण वन में आपने अनेक कष्ट एवं कठिनाइयाँ झेलते हुये मुझे पाने का पूर्ण संभव प्रयास किया। उसके पश्चात् जब आपको पता लगा कि मैं लंका में हूं, आपने सभी संभव साधन जुटाकर मेरे प्रति अथाह प्रेम के कारण लंका पर चढ़ाई की। यह सभी बातें मेरे प्रति आपके गहरे प्रेम की प्रतीक हैं।

21

मुझे भली भाँति ज्ञात है कि आपने सदैव ही मर्यादा का पूरा पालन करते हुये सभी कार्य किये हैं। आपने सदा ही मुझे प्रेम दिया है। सदैव आपने मुझे प्रिया रुप में ही देखा है। मुझे पाने के लिए आपको राक्षसों एवं दुष्टों का संहार करने हेतु बाध्य होना पड़ा। इसी अभियान के क्रम में सर्वप्रथम आपने वानर बालि का वध किया। क्या यह सभी कार्य मुझे प्राप्त करने के लिए नहीं किये गये थे ? मुझे पाना ही आपका एकमात्र उद्देश्य था। मैं भलीभाँति जानती हूं कि इसके अतिरिक्त आपका अन्य कोई लक्ष्य नहीं था।

22

असंख्य वानरों ने आपके इस महान अभियान एवं कष्ट में आपका पूरा सहयोग किया। उन्होंने आपके सभी दुःखों में पूरी तरह आपका साथ निभाया। वे सभी आपके साथ सागर को पार कर लंका पर आक्रमण करने के लिए आये हैं। यह सब निश्चय ही महान दुस्तर कार्य था, जिसको आपने बड़े साहस एवं उत्साह से किया है।

23

वानर सेना ने अथाह सागर को पार कर लेने के पश्चात् अपनी सम्पूर्ण शक्ति को युद्ध की गतिविधियों

में लगाया। इस प्रकार अपने प्राण की आहुति देने के लिए भी वे सब प्रस्तुत हो गये। मैं भली भाँति जानती हूं कि आपका लक्ष्य मुझे बन्धन मुक्त कराना ही था। इसके अतिरिक्त कोई लक्ष्य आपका था ही नहीं। आपकी कल्पना में सदैव ही मुझ हतभागनी का स्वरुप था, जिसके कारण आपने इतना बड़ा अभियान किया था। आपने मुझे खोजने का हर संभव प्रयास किया तथा विरह वेदना में आप निरन्तर दग्ध होते रहे।

24

आपका प्रेम, प्रेम की सभी संभव सीमाओं को समेटे हुए था। यहाँ तक कि आप मेरे लिए अपने प्राण का उत्सर्ग करने को भी सदैव ही प्रस्तुत थे। आज आपका शरीरान्त हो गया है, फिर भी मैं अभागिन जीवित हूं। आप मुझे अकेला छोड़कर चले गये हैं। आपकी मृत्यु ने मुझे आपसे अलग कर दिया है। हे राजा राम ! मैं प्रेम के नियम का पालन भी नहीं कर पा रही हूं। यह कैसी विडम्बना है। प्रेम में मैं प्राणोत्सर्ग नहीं कर सकी। यह कैसी विवशता है ?

25

मैंने अभी तक अन्य कोई ऐसा व्यक्ति नहीं देखा जो पूर्ण रुप से स्वामिभक्त हो। अपने स्वामी के प्रति इतना अधिक प्रेम करता हो कि उसके न रहने पर प्राण त्याग दे। आपके वियोग में प्राण छोड़ देना ही आपके प्रति मेरी भक्ति होती, पर यह नहीं हो सका। इस दृष्टिकोण से मेरे पिता राजा जनक ही विश्वसनीय हैं। वे कुछ ही क्षण आपके वियोग को सहन कर सकते हैं। उनका मोह लगभग समाप्त हो गया है। वे भी आपसे मिलने की सदैव ही अभिलाषा रखते थे।

26

मैंने आज स्वयं ही आपकी मृत्यु को अपनी आँखों से देखा है। मैं आपका अनुसरण नहीं कर पा रही हूं। अब तक मेरा जीवन बड़ी ही निर्लज्जता से, आपकी यह अवस्था देखने के लिए बचा हुआ है। स्पष्ट है कि अपनी स्वामिभक्ति का पूरा परिचय देने में मैं सर्वथा असफल रही हूं। इसीलिए मेरी स्वामिभक्ति पर पूरा विश्वास नहीं किया जा सकता। पत्नी के रुप में भी मैं अपने कर्तव्यों का विधिवत् पालन करने में सफल नहीं हो सकी हूं। मुझे धिक्कार है।

27

यहाँ पर आपके आगमन की मैं केवल प्रतीक्षा ही कर रही थी। बहुत सी कठिनाइयों को झेलते हुए तथा अपने पर पूर्ण विश्वास करते हुए मैंने अपनी स्वामिभक्ति एवं प्रेम का पूरा परिचय देने का प्रयास किया, परन्तु

मैं आपके साथ प्राण का उत्सर्ग नहीं कर सकी। हाय ! अब यह संभव नहीं है। मुझे पतिनिष्ठ और विश्वासपात्र माना जाय क्योंकि ऐसा होता तो मैं भी अब तक जीवित बची न रहती।

28

हे मेरे शरीर ! तुझे धिक्कार है। इस शरीर के कारण ही मुझे इतनी लज्जा का अनुभव करना पड़ रहा है। मैं अपने स्वामी राम के प्रति अपनी स्वामिभक्ति का पूरा परिचय नहीं दे सकी हूं। मुझे क्लेश है कि मेरा शरीर अब भी इन भीषण परिस्थितयों में प्राणवन्त है। राजा राम को तो सदैव ही मुझसे अपार प्रेम रहा है। उनका प्रेम उनके हृदय की गहराई का प्रतीक है। दोषी तो मैं ही हूं, जो अब तक जीवित हूं।

29

सीता के प्रलाप को त्रिजटा ने सुना। उससे चुप न रहा गया। वह बोली, हे सीता ! आप वास्तव में बहुत ही अभाग्यशालिनी हैं। आप द्वारा इस प्रकार का स्वयं को कष्ट देते रहना बहुत ही दुर्भाग्यपूर्ण है। यह शोभा नहीं दे रहा है कि आप साधारण स्त्री की भाँति आचरण करें। आपके साथ जो कुछ हुआ है, उसे सदा ही एक दुर्भाग्यपूर्ण घटना के रुप में माना जायेगा।

30

यह दुर्भाग्यपूर्ण घटना आगे आने वाले भविष्य में भी दुर्भाग्यपूर्ण ही मानी जायेगी। इस परिस्थिति का परिज्ञान कर सम्पूर्ण जगत को अपार दुःख होगा। इसने सारे विश्व को दुःखी किया है। जीवन-पर्यन्त आपने अपने शरीर पर जो कष्ट झेला है, उसको अनेक जन्मों तक लोग स्मरण करते रहेंगें। इस प्रकार भविष्य की सन्तानों के लिए आपका जीवन आदर्श माना जा सकता है। पर हर बात की अति बुरी होती है। आपने भी कष्ट झेलने में अति की है जो क्षम्य नहीं है, इस प्रकार सीता को दोषी ठहराते हुये त्रिजटा विलाप कर रही थी।

31

हे मेरे शरीर ! तुम भी अब तक प्राणयुक्त हो। इससे मेरा नाम भी कलंकित होगा। हे देवी ! यह निश्चित है कि आपका दुःख शीघ्र ही समाप्त होगा। अवश्य ही एक दिन आयेगा जब सभी कठिनाइयों का अन्त हो जायेगा। मुझे अपार कष्ट है कि विधाता ने आपको अपार दुःख दिया। आपके दुःख की सीमा ही नहीं है। मेरा मन भी आपके दुख से दुःखी हो रहा है। आप पर जानबूझ कर घोर अन्याय किया गया है।

32

त्रिजटा ने अत्यन्त दुःखी होकर ये शब्द कहे। उसने स्वयं अपने भाग्य तथा कर्मों को भी अच्छा नहीं माना। उसके लिए उसने स्वयं को ही दोषी ठहराया। उसका हृदय जैसे विदीर्ण हो उठा हो। वह सीता की विषम परिस्थति को देखकर बहुत दुःखी थी। वह अनेक दुःखों की कल्पना करके बार-बार काँप उठती थी।

33

इस प्रकार सीता का स्मरण करती हुई त्रिजटा भाँति-भाँति से विलाप करने लगी। वह दुःखी होकर तीव्र स्वर में रुदन करने लगी। उसका मन बहुत ही व्यथित था। उसका कोमल मन दुःख से भर गया था। उसका कंठ सूखने लगा था। सूखेपन के कारण जैसे कंठ अवरुद्ध हो गया हो। वह अंगड़ाई लेती हुई दुःखी होकर पृथ्वी पर गिर पड़ी। उसकी दशा दयनीय थी। उसके मुख से शब्द भी नहीं निकल पा रहे थे।

34

दुःख की गंभीरता के कारण त्रिजटा जैसे भ्रमित हो गयी थी। कष्ट के बोझ से वह पूरी तरह दब गयी थी। अब वह इतना घबरा गयी थी कि उसका रुदन भी मौन में परिवर्तित हो गया था। उसका शरीर जैसे अत्यधिक श्रान्त हों गया हो। उसकी आँखें भी झपक नहीं रही थीं। उसका शरीर हिलता-डुलता भी नहीं था। उसकी चिन्तन-शक्ति जैसें पूर्णरुपेण समाप्त हो गयी थी। लगता था उसके पूरे शरीर को दुःख ने जकड़ कर बाँध लिया है। वह अब चित्रवत् बन गयी थी। उसकी समानता किसी मूर्ति अथवा प्रस्तर प्रतिमा से की जा सकती थी।

35

उसकी व्यथा करुणापूर्ण एवं गहरी थी। अग्नि की भीषण लपटों के समान वह भयावह थी। व्यथा की ज्वालाएं उसके हृदय की उष्णता को तीव्रतर बना रही थीं। उसका हृदयं अग्नि की उस ज्वाला में जलकर भस्मसात् हो गया था। ऐसा लग रहा था जैसे किसी वृक्ष को किसी ने काटकर पृथ्वी पर गिरा दिया हो। त्रिजटा ऐसी ही दशा में वहाँ उपस्थित थी।

36

देवी सीता फिर एक बार मूर्च्छित होकर पृथ्वी पर गिर पड़ीं। दुःख ने उनके हृदय को जलाकर भस्म कर दिया था। ऐसा लगता था जैसे उनका जीवन ही समाप्त हो गया हो। त्रिजटा सीता की इस दशा को देखकर बहुत दुःखी हुई। वह फिर तीव्र स्वरों में रुदन करने लगी।

37

मूर्च्छितावस्था में किसी भी प्रकार की चेतना थी ही नहीं। त्रिजटा ने देवी सीता को उठाकर स्वर्णयान में बैठा लिया। शीघ्र ही आकाश मार्ग से उड़ाकर उनको अशोक वाटिका में वह ले आयी। वहाँ लाकरं उन्हें उनके स्थान पर बैठा दिया। फिर त्रिजटा ने देवी सीता को अशोक-वाटिका में ही एक स्वणपर्यक पर लिटा दिया। वह पर्यंक बहुत ही सुन्दर तथा पवित्र था।

38

त्रिजटा ने उनकी सुरक्षा पर पूरा ध्यान दिया। देवी सीता का शरीर अब बहुत ही क्षीण हो चुका था। त्रिजटा ने देवी सीता का मुख भी पोंछा तथा उनके मुख-कमल पर जल छिड़का। त्रिजटा को ऐसा लग रहा था जैसे देवी सीता में प्राण-वायु ही नहीं है। उन्होंने सीता के हृदय के ऊपर अच्छी तरह अपना हाथ रख उसको विधिवत् सहला कर चेतना लाने का प्रयास किया, परन्तु उनका शरीर अब भी जड़वत् ही बना हुआ था। सीता की इस दशा को देखकर त्रिजटा फिर तीव्र स्वरों में रुदन करती हुई विलाप करने लगी।

39

हे राजपुत्री सीता ! मेरी दशा पर आप ध्यान दीजिए। आप कहाँ चली गई हैं। अब अपनी चेतना को आप फिर प्राप्त करें तथा अपने हृदय को पूर्ण सान्त्वना देकर शान्त करें। हम सबको फिर भली भाँति पहचानने का कष्ट करें। हा ! मुझे अपार दुःख हो रहा है। ऐसा लगता है, जैसे आपने अपने हृदय से करुणा एवं प्रेम को निकाल दिया है। शायद इसीलिए आपने मृत्यु को वरण करने का निश्चय किया है। आपने मुझ पर किसी प्रकार की करुणा नहीं की। कृपया ऐसा न कीजिए।

40

हे देवताओं ! आप सभी मुझ पर कृपा कीजिए। करुण भाव से मेरी शीघ्र ही सहायता कीजिए। मेरी आपसे यही प्रार्थना है कि आप राजपुत्री सीता को शीघ्र ही जीवित कर दीजिए। देवी सीता जी मेरी उपासना की वह प्रतिमा हैं जो अब भग्न-प्राय हो चुकी है। उसका नव निर्माण करने के लिए आपको राजपुत्री सीता को जीवित करना होगा। राजपुत्री की मृत्यु से मेरे ऊपर की वह छाया समाप्त हो जायगी जो उनसे मुझे मिलती थी। वे वट-वृक्ष सी मुझे छाया देती रही हैं। यदि राजपुत्री जीवित न हुई तो मेरा आश्रय समाप्त हो जायेगा।

41

इस प्रकार त्रिजटा सीता के लिए करुण स्वर में विलाप करने लगी। इसी बीच सीता ने त्रिजटा के क्रन्दन का स्वर सुना। उन्हें फिर चेतना प्राप्त हुई। त्रिजटा की यह दशा देखकर वे करुणा से भर गयीं। उनके शरीर में कुछ–कुछ स्पंदन सा हुआ। उनकें हाथों में भी कुछ शक्ति आयी परन्तु उनकी आँखों में पूर्ण चमक नहीं आ पायी थी। वे स्पष्ट रुप से देख भी नहीं पा रही थीं।

42

हे त्रिजटा ! मैं तुम्हें कभी कष्ट देना नहीं चाहूंगी। इसकी कभी कल्पना भी मत करो। विशेषतया उस समय तक, जब तक कि मैं जीवित हूं। अपार दुःखमय परिस्थिति के कारण ही जीवित रहने की अभिलाषा शेष नहीं रह गयी। मेरे जीवन का इस संसार में अब कोई विशेष अर्थ भी नहीं है। अब इस जगत में कोई ऐसा व्यक्ति, राम के सिवा, नहीं है जो मुझे आश्रय प्रदान कर सके। हे भगिनी त्रिजटा ! ईश्वर पर विश्वास करके धैर्य धारण करो। मुझे अपने प्राण के बंधन से मुक्त होने दो।

43

आज मेरे जीवन का इस जगत में कोई अर्थ नहीं है। श्री राम की भी अब मृत्यु हो चुकी है। अतएव मेरे लिए अब अपनी किसी भी अभिलाषा को पूरा कर पाना असंभव है। मेरे स्वामी राम अब इस लोक में नहीं हैं। मैं आज तक उन्हीं के जीवन की मंगलकामना करते हुए उनकी प्रतीक्षा कर रही थी । केवल इसी आशा एवं विश्वास पर मैं अपने प्राण की रक्षा किये हुए थी। अब जीवित रहने की कोई इच्छा शेष नहीं है।

44

अब मेरे जीवन का सूत्र टूट चुका है। इस प्रकार मेरा जीवन असहाय हो चुका है। मेरा जीवन अब पूर्णरुपेण नष्ट हो चुका है। अब शीघ्र ही मैं अपने जीवन का अंत करना चाहती हूं। राम ही वह प्रधान सूत्र थे, जिसमें मेरा जीवन बंधा हुआ था। उनके ही कारण मैं जीवित रहने की अभिलाषा रखती थी। यही सूत्र मेरे प्राण एवं जीवन को रक्षित किए हुए था। यही कारण था कि मैं अब तक जीवित रह सकी। उस सूत्र के अभाव में मेरा जीवन असंभव है।

45

इस भीषण परिस्थिति में भी यदि मैं अपने जीवन को धारण किये रहती हूं तो यह बड़े ही दुर्भाग्य का विषय होगा। मैं जीवित रहना नहीं चाहती हूं, फिर भी, अब तक प्राण धारण किये हुए हूं। मैं शीघ्र ही अपने शरीर का अन्त करना चाहती हूं। मैं अपने आपको अपार कष्ट देकर अपने प्राण का अन्त करने का निश्चय कर चुकी

हूं। मैं अपार कष्ट से पीड़ित हूं। हाय, आज मैं कितनी अधम सिद्ध हो रही हूं।राम के प्राणान्त के बाद भी मैं जीवित हूं, यह कितना कष्टकर है।

46

मेरा जीवन मुझे बहुत ही प्रिय लगता रहा है। सदैव ही मैंने जीवन की मधुरता का पूरा अनुभव किया है। मैं आनंदपूर्वक अपना जीवन व्यतीत कर रही थी इसीलिए मुझे जीवन की गहरी अभिलाषा भी थी। भाग्य बदल गया। देखो, आज मुझे क्या प्राप्त हो रहा है ? केवल दुःख, कष्ट एवं सांसारिक यातनाएँ ही मुझे मिल रही हैं। मेरे जीवन के सम्पूर्ण रस को समय ने सुखा दिया है। इसीलिए मैं सोचती हूं कि मेरे इस प्राण का कोई अर्थ नहीं है। मैं केवल मृत्यु का ही वरण करना चाहती हूं। मेरे लिए अब एक यही मार्ग शेष है। यही श्रेयस्कर भी है।

47

मैं ऐसा प्रयास करना चाहती हूं कि मेरा जीवन व्यर्थ न होने पाये। हे बहिन त्रिजटा ! यदि आज यह संभव नहीं हो पा रहा है तो और बात है, परन्तु निकट भविष्य में मेरे कष्टों का उपचार अग्नि देवता की कृपा से ही संभव है और वे ही मेरी व्यथा की औषधि भी हैं। हे त्रिजटा ! तुम मुझ पर करुणा करो तथा मेरे लिए अग्नि प्रज्वलित करो।

48

इस प्रकार देवी सीता ने त्रिजटा से कहा। मृत्यु को वरण करने का दृढ़ निश्चय उन्होंने कर लिया। अब उनके मन में अन्य कोई भी विचार नहीं था। इस विषम स्थिति से त्रिजटा अत्यन्त दुःखी एवं निराश हो उठी। त्रिजटा ने देवी सीता से प्रार्थना करते हुए कहा :

49

हे राजपुत्री सीता ! यह कार्य असंभव है। आपको यह कृत्य कभी भी नहीं करना चाहिए। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरे प्रति आपके मन में करुणा का सर्वथा अभाव हो गया है। आपको यह क्या हो गया है कि आज आप आत्मघात जैसा पाप करने के लिए प्रस्तुत हो रही हैं और इस संबंध में दृढ़पूर्वक पूरा निर्णय भी कर चुकी हैं। क्या आपने मुड़कर अन्य किसी ओर देखा है या विचार किया है ? लगता है मुझ पर आपका न तो किसी प्रकार का विश्वास रह गया है, न प्रेम। आप मेरी ओर लेशमात्र भी ध्यान नहीं दे रही हैं। जब आप भी मुझे अकेला छोड़ देंगी, तो मुझसे अधिक अभागिन एवं दुःखी इस जगत में कौन रह जायेगा ? इस संसार में आपके सिवा अब और कौन मुझे आश्रय दे सकता है।

50

अभी तक पूरी तरह यह भी स्पष्ट नहीं हो सका है कि वास्तव में राजा राम का प्राणान्त हो चुका है। यह संभव नहीं है कि नागपाश में बंधकर इतनी सरलता से उनकी मृत्यु हो सके। नागपाश के बन्धन में श्री हनुमान जी भी पहले एक बार आ गये थे, परन्तु उनकी उस बन्धन से मृत्यु नहीं हुई। बन्धन–मुक्त होकर वे अभी तक जीवित हैं तथा उन पर नागपाश का कोई प्रभाव दिखायी नहीं दिया। अतएव राम पर भी इसका प्रभाव असंभव है।

51

राघव राम की भी स्थिति हनुमान की ही तरह हो सकती है। मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि जानबूझ कर उन्होंने इस बंधन को स्वीकार किया है। हो सकता है कि यह उन्होंने इसलिए किया हो कि शत्रु अत्यन्त प्रसन्न होकर विजयोल्लास का अनुभव कर सके। जब शत्रु सीमा से अधिक प्रसन्न हो जायेगा तो स्पष्ट है कि प्रसन्नता के कारण उसकी शक्तियाँ एवं गतिविधियाँ शिथिल होकर समाप्त हो जायेंगी और युद्ध में उसकी पराजय हो सकेगी।

52

मैं इस अनुमान के आधार पर आपसे अनुरोध करना चाहती हूं कि अभी आप भ्रम में मत पड़ें। अपने हृदय को प्रसन्नतापूर्व आनंदित रखिए। आपको दुःखी नहीं होना चाहिए। यह जीवन बहुत ही अमूल्य है तथा मानव शरीर बड़ी कठिनाई और बड़े भाग्य से ही प्राप्त होता है। यह भी निश्चित है कि इसका अमर होना संभव नहीं है क्योंकि सदैव ही इसको बचाकर रक्खा नहीं जा सकता। यदि आप भ्रम में पड़कर अपने प्राण का अन्त कर लेती हैं और राम जीवित रह जाते हैं तो क्या होगा ? इसलिए आवश्यक है कि ऐसा कठिन निर्णय लेने के पूर्व वास्तविकता का पता लगा लिया जाय।

53

अभी तक आपको निश्चित रुप से स्पष्ट नहीं हो पाया है कि राम जीवित हैं अथवा नहीं। इस दृष्टिकोण से भी आपको सत्य का पता लगाना चाहिए। वस्तुस्थिति का पूरा ज्ञान प्राप्त करने के लिए मैं शीघ्र ही युद्धक्षेत्र में जाऊंगी। मैं अभी पता लगाती हूं कि सत्य क्या है। जब यह बात स्पष्ट हो जायेगी कि राम का प्राणान्त हो चुका है तो आप जो भी उचित समझेंगी, करेंगी। मैं आपकी सेविका के रुप में सभी कार्य करने को प्रस्तुत हूं। मैं भी किसी प्रकार आपसे पीछे नहीं रहूंगी तथा सदैव ही आपका अनुसरण करुगी।

54

जब यह भली भाँति ज्ञात हो जायेगा कि राम युद्ध में धराशायी हो चुके हैं तो मैं अपने पिता विभीषण से आज्ञा लेकर फिर आपके पास वापस लौट आऊंगी। कहीं ऐसा न हो कि मेरे पिता विभीषण को यह पता भी न चल पाये कि मैंने भी आपके साथ प्राण त्याग दिया है, इसलिए सर्वप्रथम मैं वास्तविकता का पता लगाने के पक्ष में हूं।

55

त्रिजटा ने देवी सीता से इस प्रकार वचन कहे। उन्हें वास्तविकता का पता लगाने के लिए त्रिजटा ने सचेत भी किया। उसके पश्चात वह वहाँ से प्रस्थान कर

उड़ती हुई युद्ध क्षेत्र की ओर चली गयी। युद्ध-क्षेत्र में आकर त्रिजटा ने अपने पिता विभीषण को प्रणाम किया। युद्ध-क्षेत्र में भी उसका व्यवहार कौटुम्बिक जीवन की भाँति ही था। त्रिजटा अपने पिता के प्रति अत्यधिक प्रेम एवं भक्ति भाव रखती थी।

56

उसके नेत्रों से अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। अश्रु बह-बह कर उसके कपोलों पर ढुलक रहे थे, जो उसके हृदय की निर्मलता का संकेत दे रहे थे। वह अश्रु कण ही उसके नेत्रों में अब अमृत-कणों की भाँति शोभा पा रहे थे।

57

त्रिजटा ने विभीषण से कहा कि निश्चय ही मैं आपकी एक अभागी पुत्री हूं। इसके अपेक्षा मैं और कुछ भी नहीं हूं। इस समय मैं आवश्यक कार्य से आपके पास आयी हूं। आप इस समाचार को सुनकर दुःखी न हों। वास्तव में मैं अपना प्राणान्त करना चाहती हूं। इसीलिए आपसे आज्ञा लेने के लिए मैं आपके पास आयी हूं।

58

वास्तव में राजपुत्री सीता की दशा देखकर मैं बहुत ही दुःखी हूं। उनको कुछ समय पूर्व युद्धक्षेत्र में लाया गया था। जब देवी सीता को यहाँ लाया गया, तो वे रुदन कर रही थीं। वे यान में ही गिर पड़ीं तथा तीव्र स्वरों में आर्तनाद करने लगीं। उन्होंने यह भी देखा कि राम नागपाश के बन्धन में बंधे हुए हैं। नागपाल के कारण वे बन्दी से बने हुए हैं।

59

उसके पश्चात् राजपुत्री सीता वायुयान में हीं गिरकर मूर्च्छित हो गयीं। वे अधमरी युवती के सदृश हो गयीं। वे एक पतिव्रता सती नारी हैं। वे महान पवित्र हैं एवं राम के प्रति अपार प्रेम करने वाली हैं। उन्होंने जब राम को नागपाश में बंधे हुए देखा तो उनके दुःख की सीमा न रही। नागपाश रुपी सर्प – अस्त्र ने उनको युद्धक्षेत्र में बन्दी–सा बना लिया है।

60

वे बहुत समय तक मूर्च्छित अवस्था में पड़ी रहीं। उनमें किसी प्रकार की कोई चेतना नहीं थी। उनकी स्मरण–शक्ति भी समाप्त हो गयी थी। उनके बिना जाने हुए ही मैंने उनको अशोक–वाटिका में वापस लौटा दिया था। उनको इस तथ्य की जानकारी भी नहीं हो सकी थी। जब उनको बोध हुआ, तो उन्होंने मुझसे सभी बातें कहीं और अपने प्राण का अन्त करने के लिए प्रस्तुत हो गयीं। इसका कारण स्पष्ट ही है। राम के प्रति उनके हृदय में अथाह प्रेम है और राम के बिना उनका जीवन संभव नहीं है।

61

इस समय इसी आवश्यकता वश मैं आपके पास उपस्थित हुई हूं। आप मेरे लिए बिल्कुल दुःखी न हों। मैं तो राजपुत्री के साथ ही अग्नि की चिता में कूद कर अपना प्राणान्त करने की आपसे आज्ञा लेने आयी हूं। मैं राजपुत्री सीता का अनुसरण करना चाहती हूं। ऐसा करने पर ही मैं उनसे कभी भी विलग न हो सकूंगी तथा सदैव ही उनके साथ रह सकूंगी।

62

इस प्रकार त्रिजटा ने, अपने पिता विभीषण से प्रार्थना करते हुए, यह समाचार दिया। जब विभीषण ने सारी बातें सुन लीं तो अपनी पुत्री को उन्होंने उत्तर दिया। वे त्रिजटा से बड़ा प्रेम करते थे। उन्होंने कहा – हे मेरी पुत्री त्रिजटा ! तुम्हारी बुद्धि इस समय ठीक नहीं है, इसीलिए तुम्हारा व्यवहार भी विचित्र सा ही लग रहा है। तुम स्वयं यह कह रही हो कि तुम मृत्यु का वरण करना चाहती हो। यह अकस्मात ही निर्णय तुमने क्यों ले लिया ? क्या मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम समाप्त हो गया है ?

63

तुम भ्रम में पड़कर विक्षिप्त व्यक्तियों की भाँति किसी बात पर ध्यान दिये बिना ही ऐसी बातें कर रही हो। तुम्हें क्या हो गया है ? तुम्हारे मन में क्या आ गया है ? तुम्हारे शरीर में क्या शैतान अथवा यक्ष प्रवेश कर गया है ? क्या बुरे नक्षत्रों का पूरा प्रभाव तुम पर पड़ गया है ? जादू अथवा भूत–प्रेतों का प्रभाव तो कहीं तुम

पर नहीं पड़ गया है ? क्या इन्हीं कारणों से इस अवसर पर तुम इतनी घबराई हुई एवं भ्रम में पड़ी हुई दिखायी दे रही हो ?

64

तुम्हारे शब्दों से स्पष्ट हो रहा कि राम का युद्ध में प्राणान्त हो गया है। क्या यह संभव है कि राम युद्ध – क्षेत्र में धराशायी हो जायें ? हे मेरी पुत्री ! चाहे सम्पूर्ण संसार नष्ट – भ्रष्ट हो जाये, पृथ्वी चूर–चूर होकर रसातल को चली जाये, फिर भी श्री राम युद्धक्षेत्र में परास्त होकर धराशायी नहीं हो सकते हैं।

65

इस संसार के लिए सबसे अधिक दुर्भाग्यपूर्ण दिवस वही होगा, जब श्री राम का वध राक्षसों द्वारा कर दिया जायेगा। वास्तव में श्री राम भगवान विष्णु के ही साकार स्वंरुप हैं। क्या इस तथ्य पर किसी को संदेह हो सकता है ? वे सम्पूर्ण विश्व में अस्त्र–शस्त्र विद्या के सर्वोच्च ज्ञाता और प्रयोक्ता है। वे महानतम योद्धा हैं।

66

मेरा तो इस संबंध में यह दृढ़ विश्वास है कि राम को कभी कोई योद्धा धराशायी नहीं कर सकता। हे मेरी प्रिय पुत्री ! तुम प्रसन्नता प्राप्त करो । राम अभी तक जीवित हैं। अतएव दुःखी होने का कोई कारण ही नहीं है। तुम आनंदपूर्वक अशोक वाटिका में लौट जाओ। हे पुत्री ! अशोक–वाटिका में जाकर राजपुत्री सीता देवी को सूचना दो तथा जो तथ्य मैनें तुम्हें बतलाए हैं, उसके विषय में उन्हें सविस्तार समझा दो। ऐसा करोगी तब देवी सीता को सारी परिस्थिति स्पष्ट हो जायेगी। श्री राम अभी जीवित हैं इसलिए राम के लिए देवी सीता को दुःखी नहीं होना चाहिए।

67

तुम देवी सीता के पास जाकर उन्हें पूरी तरह सान्त्वना देते हुए सभी बातें बतला दो और समझा दो। वे अपने को अब और अधिक दुःखी न करें। यदि देवी सीता का प्राणान्त हो गया, तो निश्चय ही राम अपने प्राणों का त्याग कर देंगे। जब राजा राम का शरीरान्त हो जायगा, तो यह जगत भी उनके साथ ही नष्ट हो जायगा। इसका अस्तित्व भी समाप्त हो जायगा। मैं भी राम के प्राणान्त होते ही स्वयं उनका अनुसरण करुगा तथा अपने प्राण का अन्त कर लूंगा।

68

राम का चरित्र महान एवं आदर्श है। वे अन्य चरित्रवान व्यक्तियों के प्रति भी पूर्ण सहानुभूति रखते हैं। उन्हें पहचान कर वे उनका पूरा सम्मान करते हैं। यही कारण है कि मैं राम का साथ देना अपना कर्तव्य समझता हूं। वे एक ऐसे महान पुरुष हैं, जो दूसरे व्यक्तियों से अत्यन्त प्रेम करते हैं। वे मानवीय भावना एवं भले कार्यों से पूरी तरह परिचित हैं। राम स्वभाव से ही परोपकारी हैं।

69

उनका प्राणान्त हो जाने पर इस जगत में कोई भी ऐसा व्यक्ति नहीं रहेगा, जो मुझसे इतना प्रेम करेगा, जितना राम करते हैं। मेरे गुणों के पारखी एवं पूरी तरह उनका मूल्यांकन करने वाले श्री राम ही हैं। उनके सिवा और कौन ऐसा हो सकता है जो मेरा इतना सम्मान करे। उनके न रहने पर मेरी दशा तो उस विशाल वृक्ष की भांति हो जायगी जो अकेला खड़ा रहता है। यदि ऐसे वृक्ष में फल–फूल भी लगे हों तो भी इसका कोई प्रयोग नहीं होगा और उसका सभी सौंदर्य व्यर्थ ही सिद्ध होगा।

70

इस संसार में राम ही सर्वाधिक महत्वपूर्ण व्यक्ति हैं। उनकी अपेक्षा कोई अन्य व्यक्ति इतना महत्वपूर्ण मेरी दृष्टि में नहीं है। जब राजपुत्र राम ही इस विश्व में नहीं होंगे, तब मेरे लिए तो यह संसार ही व्यर्थ हो जायगा। अतएव हे मेरी प्रिय पुत्री ! अब तुम धैर्य एवं विश्वास के साथ वापस लौट जाओ तथा राजपुत्री सीता की सुरक्षा करो। उन्हें मेरी कही हुई सभी बातों से अवगत कराओ।

71

विभीषण ने अपनी पुत्री त्रिजटा को भली भाँति समझाया। अब त्रिजटा के ह्रदय में लेशमात्र भी सन्देह नहीं था। उसका दुःख भी दूर हो गया था। बड़े सम्मान एवं श्रद्धापूर्वक वह अपने पिता विभीषण के सामने बैठी हुई थी। अपने पिता से प्रार्थना करते हुए उसने लौटने की आज्ञा माँगी तथा युद्ध–क्षेत्र से अशोक–वाटिका के लिए प्रस्थान किया । वह लंका में स्थित अशोक वाटिका में देवी सीता के पास लौट आयी।

72

त्रिजटा से विभीषण ने यह भी कहा था कि वह सीता को राम के विषय में सब कुछ बता दे। उन्होंने कहा था कि सीता से कह देना कि नागपाश के प्रहार के कारण उठ बैठने मे राम असमर्थ अवश्य हैं पर चिन्ता की कोई बात नहीं। उनके शरीर के सभी अंगों में भयानक पीड़ा भी हो रही है, परन्तु इन विषम स्थितियों में भी प्रसन्न दिखायी देते हैं। नागपाश को हटाकर उससे सरलता से बन्धन मुक्त होना उन्हें कठिन लग रहा है पर वे शीघ्र ही

मुक्त हो जायेंगे।

73

विभीषण ने त्रिजटा को समझाते हुए कहा था-- यद्यपि राम की दशा इस समय शोचनीय है, फिर भी देवी सीता को उनके विषय में पूरी तरह सूचना देते हुए सभी बातों से अवगत कराना। यह कहानी कहते हुए विभीषण का भी कंठ भर आया था। सभी कष्टों की कल्पना कर उनका शरीर भी काँपने लगा था। उनका मुख भी लाल वर्ण का हो गया था तथा उनके शरीर के रक्त का प्रवाह भी तीव्रतर होने लगा था, फिर भी धैर्य धारण करते हुए प्रसन्नतापूर्वक उन्होंने सभी बातों का वर्णन त्रिजटा से किया।

74

त्रिजटा तो चली गयी पर विभीषण की चिन्ता बढ गयी। उन्हें अंधेरा ही अंधेरा दिखायी पड़ रहा था। जहाँ भी वे दृष्टि डालते थे, उन्हें सब कुछ अंधकारपूर्ण लगता था। केवल उनकी विचार-शक्ति ही पूर्ववत थी और वह पूर्णतः जागृत थी। शरीर से तो वे पूर्णरुपेण शक्तिहीन से हो गये थे। उनका प्राण एवं उनकी चेतना ही उनके शरीर में शेष रह गयी थी।

75

विभीषण ने राम के पास जाकर उनको जगाते हुए कहा कि हे आर्य राम ! आप अब जाग जाइए। यह शब्द कहते हुए विभीषण राम के निकट जा पहुंचे। उनको देवी सीता का समाचार उन्होंने दिया। राम के पास जाने का विभीषण का यही उद्देश्य भी था। वे राम के निकट उपस्थित हो गये तथा उनसे वार्तालाप करने लगे।

76

जब राम ने विभीषण से यह समाचार सुना कि देवी सीता को युद्धक्षेत्र में लाया गया था तो उन्हें अपार दुःख हुआ। उन्होंने कहा कि निश्चय ही मुझे अर्द्धमृत अवस्था में देखकर सीता किसी भी प्रकार जीवित रहना उचित नहीं समझेंगी। मुझे अवश्य ही उन्होंने मूर्च्छितावस्था में देखा होगा।

77

हे प्रेममयी सीता ! तुम्हारे सोचने का ढंग ठीक ही है। उसे कभी भी अनुचित नहीं कहा जा सकता है। तुमने जो कुछ भी सोचा होगा, वह ठीक ही होगा। युद्धक्षेत्र में मेरा इतना घोर अपमान देखकर तुम्हारा शरीर त्याग

करने का विचार स्वाभाविक ही है। तुम कभी भी इस सीमा तक मेरा अपमान सहन नहीं कर सकती थीं। अपने सबसे बड़े शत्रु का वध कर सकने में मैं पूर्णतः असफल रहा हूं।

78

हे प्रेयसी सीते ! यदि तुम इस संसार में जीवित हो, तो समझ लो कि मेरे लिए पूरा जगत ही जीवित है। तुम्हारा चरित्र बहुत ही महान एवं आकर्षक है। उसकी सबसे बड़ी विशेषता उसकी अपार गरिमा है। चाहे सम्पूर्ण संसार के गुणों के सम्पूर्ण सार तत्व को एक स्थान पर एकत्रित किया जाय, तो भी मेरी प्रेमिका सीता के गुणों के समकक्ष उन सबको नहीं रक्खा जा सकता। देवी सीता गुणों का आगार है एवं उनका चरित्र आदर्श है।

79

देवी श्री (लक्ष्मी), कामदेव की पत्नी रति, कमल नेत्री उमा आदि देवागंनाएं महानता एवं सौंदर्य की प्रतिमाएं हैं, परन्तु यदि देवी सीता तुम से उनकी तुलना की जाय, तो तुम्हारा व्यक्तित्व उन सभी से अधिक आकर्षक एवं गौरवपूर्ण है। ऐसी मेरी अपनी व्यक्तिगत धारणा है। निश्चय ही तुम सभी देवागंनाओं से भी अधिक गरिमामयी हो।

80

यदि सीता के गुणों की गरिमा का वर्णन किया जाय तो उनके सभी गुणों की गणना कर पाना संभव नहीं है। उनके अलौकिक गुण वर्णनातीत हैं। उनकी माप किसी प्रकार संभव नहीं है। सागर के असंख्य रत्नों की गणना कर पाना जैसे सरल नहीं है वैसे ही सीता के सदगुणों को भी गिन पाना असंभव है। यही कारण है कि गुणों की राशि होने के कारण मैंने सीता को अपनी जीवन-संगिनी के रुप में स्वीकार किया था तथा बड़े प्रयत्नों से मैंने देवी सीता को प्राप्त किया था। हे मेरी प्रेमिके सीते ! मैं सदैव ही तुम्हारा स्मरण करता रहता हूं।

81

मुझे भी ऐसा ही प्रतीत होता है कि मैं अपने जीवन में सौभाग्यशाली नहीं हूं। हे प्रेमिके ! दैव सदैव ही हम सबके विपरीत रहा है। वह कभी भी हम सबको प्रसन्न एवं आनंदित नहीं देखना चाहता है। मैं तुमसे मिलने के लिए निकट तक आ पहुंचा था। अकस्मात् ही फिर नयी बाधाएं आकर उपस्थित हो गयीं। मुझे युद्धक्षेत्र में न तो विजय-श्री ही प्राप्त हो सकी, न किसी प्रकार की सफलता ही मिल सकी।

82

हे प्रपंची दैव ! तुझे धिक्कार है। यह दैव सदैव ही हमारे विपरीत रहा है। हमारे विरुद्ध ही यह कार्य करता रहा है, इसी के कारण हम सब पर विपत्तियों के बादल टूट पड़े हैं। दैव को हमारी दशा पर कभी भी करुणा नहीं आयी। उसी दैव ने तुम्हारे साथ भी घोर अन्याय किया है। हे सीते ! क्या यह एक वास्तविकता नहीं है ? क्या जब दैव ने तुम्हें इतने कष्ट दिये तो उसको कभी तुम पर दया आयी ? वह दैव कितना क्रूर और नीच है ! प्रेमियों को एक दूसरे से विलग करके तड़पाने में उसको बहुत आनंद आता है।

83

यही दैव अथवा भाग्य अपनी इच्छानुसार जो भी चाहता है, वही करता है। वह हम सबको अपार कष्ट दे रहा है। पतिव्रता स्त्री का अपने सद्गुणों और सुमार्ग पर दृढ़ रहना भी उस दैव के लिए कोई अर्थ नहीं रखता है। जो लोग सभी प्रकार से सद्व्यवहार करके पवित्र जीवन व्यतीत करते है तथा जिनका चरित्र उत्तम है, जिन्होंने तुम्हारी तरह उच्च आदर्शो का पालन किया है, उन सबको भी इस प्रपंची दैव के कारण अपार दुःख ही झेलना पड़ा है। क्या भाग्य के दुर्व्यवहार के बिना यह सभी बातें संभव हो सकती हैं ? हम दोनों को विरह की इस दशा तक क्या भाग्य नामी प्रंपची दैव के सहयोग बिना पहुंचाया जा सकता है ?

84

मैं भली भाँति जानता हूं कि तुम्हारे सदृश चरित्रवान आदर्श महिला दूसरी नहीं है। तुम्हारा व्यंवहार बहुत ही मृदु है। तुम्हारे कर्तव्य–पालन एवं कार्यों में किसी प्रकार की भी कमी कभी संभव नहीं हो सकती है। क्या यह उचित है कि तुम जैसी चरित्र–संपन्न महिला को विरह –व्यथा का इतना अधिक कष्ट उठाना चाहिए ? विरह व्यथा का पूरा भार तुम्हें ही झेलना पड़ा है। वास्तव में भाग्य हम दोनों के साथ उसी प्रकार खेल खेल रहा है जैसे छोटे–छोटे बच्चे खेल–खेल में ही सब कुछ करते रहते हैं।

85

हे सीते ! तुम्हारा ह्रदय भी मणि माणिक्यों की भाँति उज्ज्वल एवं निर्मल है। तुम्हारी श्रद्धा एवं भक्ति सदैव मेरे लिए ही रही है। कभी भी तुमने पर–पुरुष की कामना नहीं की। सदैव ही तुम मेरी प्रेमिका रही हो। तुम अपने ह्रदय में मेरे प्रति दृढ़ विश्वास लेकर प्रेम–पथ पर अडिग रही हो। आकाश मार्ग से जब रावण तुम्हारा हरण कर तुम्हें रथ पर ले जा रहा था उस समय भी तुम्हारा व्रत एवं पतिव्रता का स्वरुप दृढ रहा। सदैव ही तुम्हारा आचरण आदर्श रहा है। तुम किसी भी परिस्थिति में कभी अपने पातिव्रत–धर्म से विचलित नहीं हुई।

86

अतएव हे देवी सीते ! तुम कुछ ऐसा करो जिससे हम दोनों की भाग्य रेखा बदल सके। ऐसा होने पर ही भविष्य में हमारी परिस्थितियां बदलेंगी तथा सुख का अवसर भी आ सकेगा। मुझे पूरी आशा है कि मेरा तुमसे भविष्य में मिलन संभव हो सकेगा। तुम्हारे पतिव्रता के सभी गुण निश्चय ही तुम्हें शुभ फल देंगे, जिसके कारण हम दोनों को ही पूर्ण मिलन-सुख प्राप्त हो सकेगा।

87

मैं तो सदा ही तुम्हारे साथ जीने और मरने की कामना रखता रहा हूं। तुम आज मेरे पास नहीं हो, पर लक्ष्मण मेरे निकट सदा ही बने रहते हैं। वे स्वामिभक्ति के प्रतीक हैं। उनकें जैसा भाई और अनन्य सेवक कोई और मेरी दृष्टि में नही है। लक्ष्मण अपनी भक्ति एवं दृढ़ता के लिए सर्वप्रसिद्ध हैं। वे मेरे प्रति पूर्णरुपेण भक्तिभाव संपत्र हैं। उनकी आत्मा परम पवित्र है। उनका चरित्र आदर्श एवं अनुकरणीय है। उनकी भक्ति दृढ़ है। वे आपत्ति में भी कभी पथभ्रष्ट नहीं हो सकते। जहाँ मैं जाता हैं, वहीं मेरे साथ रह कर वे मेरा अनुसरण करते हैं।

88

हे मेरे भाई लक्ष्मण ! मैंने स्वयं को तुम्हें समर्पित कर दिया है। तुम सदैव ही मेरे चिर सहचर एवं अनुगामी रहे हो। कभी भी और किसी भी परिस्थिति में तुमने मेरा साथ नहीं छोड़ा। कभी भी तुमने किसी प्रकार की कोई आपत्ति नहीं की। हे सीते ! शीत, उष्ण, भूख, प्यास, थकान तथा अन्य प्रकार के अनेक कष्ट लक्ष्मण को तथा तुमको मेरे ही कारण सहने पड़े हैं, अतएव तुम दोनों के महान त्याग को मैं भलीभाँति समझता हूं। मैं उनका प्रशंसक हूं।

89

हे प्रियतमे ! मेरी पत्नी के रुप में तुम्हारा जीवन निश्चय ही सार्थक है। मेरे प्रति तुम्हारा प्रेम अथाह है। प्रेम के सार तत्व के रुप में ही उसको स्वीकार किया जाना चाहिए। तुमने अपनी आत्मा को इस प्रेम की बलिवेदी पर न्योछावर कर दिया है। जीवन में तुम्हारा अन्य कोई उद्देश्य ही नहीं था। केवल पतिव्रता की भाँति तुमने अपने धर्म एवं नियमों का ही पवित्रता से पालन किया है।

90

मैं कभी भी तुम्हारे महान बलिदानों एवं प्रेम का उचित मूल्य तुम्हें नहीं चुका सकूंगा। तुम्हारे इस ऋण से उऋण होना भी मेरे लिए कठिन है। तुम्हारे सुकार्यों के परिणामस्वरुप तुम्हें मैने तो केवल दुःख, कष्ट एवं आपत्तियां ही दी हैं। हाँ ! मैं केवल अवस्था में ही तुमसे कुछ अधिक बड़ा अवश्य हूं। इसके अतिरिक्त मेरे में

कोई बड़प्पन नहीं है। किसी भी प्रकार से तुम्हारी सहायता या सेवा करने में मैं सफल नही हो सका। तुम्हें सुखी बना पाने में मैं सदैव ही असमर्थ रहा हूं।

91

मैं कभी भी तुम्हें सुख एवं प्रसन्नता प्रदान नहीं कर पाया। वास्तव में तुम्हें सुखी बनाना ही मेरा कर्तव्य था परन्तु मेरे कारण तुम्हें भाँति-भाँति के दुःख ही उठाने पड़े। आज स्थिति यहाँ तक पहुंची है कि तुम मृत्यु का वरण करना चाहने लगी हो। इस परिस्थिति में मुझे एवं मेरे जीवन को धिक्कार है। तुम्हारे प्रति मैं कभी किसी प्रकार की भलाई न कर सका। सदैव ही तुम्हें मैं विपत्तियों में डालता रहा। मेरे कारण ही वीरों को आज प्राणोत्सर्ग करने के लिए विवश होना पड़ा है।

92

मैंने तुम्हारे समकक्ष तीनों लोकों में किसी भी नारी को नहीं पाया। तुम्हारा जीवन आदर्श है। तुम दृढ़ निश्चय वाली, प्रवीरा, सहृदय, शान्त, चतुर तथा वास्तविकताओं के प्रति पूर्ण रुप से जागरुक हो। तुम्हें परोपकार एवं सद्गुणों का पूरा ज्ञान है। तुम्हारा चरित्र भी आदर्श है। तुम्हारी बुद्धि अत्यन्त तीक्ष्ण, सद्व्यवहारपूर्ण, सुजनतापूर्ण तथा सभी रुपों में श्रेष्ठ है। तुम एक सच्ची पतिव्रता नारी हो।

93

तुम्हारी बुद्धि विलक्षण एवं विवेकपूर्ण है। किसी भी अनुचित कार्य को करने में तुम्हें सदैव ही भय लगता है। उचित कार्य कोलक्ष्य मान कर तुम करती रही हो। उचित एवं अनुचित का विवेक ही तुम्हारे सभी कार्यो का आधार है। तुम्हारे मधुर वचन सदैव ही मित्रता का सूत्र बन जाते हैं। तुम्हारे शब्द प्रिय तो होते ही है, सत्य पर वे आधारित भी होते हैं। अपने अतिथियों, मित्रों एवम् कुल वर्ग के सभी सदस्यों के प्रति तुम्हारा व्यवहार सदैव आदर्शपूर्ण रहा है।

94

तुम अनेक अमूल्य गुणों से संपन्न हो। वास्तव में तुम्हारी गरिमा और गुणों की गणना करना संभव नहीं है। उन पर बहुत चर्चा करना भी अर्थहीन ही रहेगा। तुम्हारे गरिमामय व्यक्तित्व का उदाहरण केवल एक पवित्र पर्वत श्रेणी से ही दिया जा सकता है। वह पर्वत श्रेणी है मलय गिरि। मलय गिरि पर चन्दन वृक्ष उगते हैं, जिनकी सुगन्धि पवित्रता एवं आनंद का प्रतीक होती है। उसी प्रकार तुम्हारे गुण भी चन्दन वृक्ष की ही भाँति हैं। उनकी सुगन्धि वातावरण में व्याप्त हो जाती है।

95

तुम्हारा व्यक्तित्व अपार गरिमामय एवं महान है। अपनें गुणों के कारण तुमने सदैव ही जगत का कल्याण किया है, परं तुम्हें लेशमात्र भी इसका कोई अभिमान नहीं हो सका है। अपने यश को भी तुमने अपने व्यक्तित्व में भली भाँति संजोया है, इसीलिए किसी प्रकार की गर्व की भावना भी तुम्हारे मन में नहीं है। तुम्हारा प्रेम एवं भक्ति आज भी मेरे प्रति उसी रुप में है जैसी पहले थी। जिस सेवा भाव से तुमने मेरी सेवा की है, वह किसी भी सेवक की सेवा से किसी प्रकार कम नहीं है।

96

तुम्हारी सेवाओं के लिए मैं तुम्हारा सदा ही ऋणी रहूंगा। मैंने तुम्हें एक सच्चे स्वामिभक्त सेवक की भाँति नतमस्तक होकर आज्ञा का पालन करते देखा है। वास्तव में हिमालय पर्वत के समान तुम्हारे ऋण का भार मैं अपने ऊपर लिये हुए हूं। हे सीते! मैं तुम्हारी सेवाओं को कभी विस्मृत नहीं कर पाता हूं। यदि मैं इतने बड़े ऋण को सहस्त्रों वर्ष तक लौटाने का प्रयास करु, तो भी शायद तुम्हारे महान ऋण से उऋण होना मेरे लिए संभव नहीं हो पायेगा।

97

मैं सदैव ही तुम्हें अपनी प्रेयसी की दृष्टि से देखता हूं। जब तुमने इस संसार में जन्म लिया, उस समय भी तुम मेरी अपनी प्रेयसी की ही भाँति थीं। अतएव कभी भी तुम मुझसे बिछुड़कर मत रहो, यही मेरी अभिलाषा है। मैं तुम्हारी गरिमा के समक्ष तुमसे छोटा ही बना रहना चाहता हूं। मैं चाहता हूं कि मैं भी आपकी भाँति आपकी सेवा सुश्रुषा कर सकूं तथा आपकी अपार सेवाओं से प्राप्त ऋण चुका सकूं।

(वायाड़ के छाया चित्रों में एक प्रकार से यह विश्वास किया जाता है कि श्री लक्ष्मण, जो राम के छोटे भाई थे, उन्होंने बाद में बलदेव के रुप में अवतार लिया था तथा राम ने कृष्ण के रुप में अवतार धारण किया था। इस प्रकार कृष्ण के रुप में राम बलदेव के छोटे भाई बन कर प्रकट हुए थे।)

98

तत्पश्चात राम ने भावावेश में अपने मित्र विभीषण को संबोधित करते हुए कहा, हे विभीषण! आप भी अपनी गौरव–गरिमाओं के कारण ही मेरे अत्यन्त निकट आ गये हैं। मैंने अनेक भूलें की होंगी। उनके लिए आप मुझे क्षमा करने की कृपा कीजिए। यद्यपि आप एक शरणागत की भाँति मेरी शरण में आये थे, परन्तु आप

भी मेरे पास आकर सौभाग्यशाली न बन सके। वास्तव में आपकी सेवाएँ सराहनीय हैं। आप सदैव ही मेरे प्रेमपात्र बनने के सर्वथा योग्य हैं। आप बड़े ही श्रेष्ठ एवं सज्जन है। आपका चरित्र महान है तथा अनेक गुणों एवं गरिमाओं से भरपूर हैं। आप सत्कर्मों के करने में सदैव ही अग्रणी रहे हैं। पूरी शक्ति एवं वीरता से आपने भले कार्यों को किया है। मैं भलीभाँति जानता हूं कि आप बुरे कर्मों से बहुत डरते हैं; इसीलिए आप उनसे दूर भी रहते हैं।

99

परोपकार और भलाई के प्रति आपका सदा आकर्षण रहा है। आपके कार्य दूसरों के हित के लिए ही होते रहे हैं। आप बुरे कार्य करने की ओर कभी प्रवृत्त नहीं हुए। झूठा एवं प्रपंचपूर्ण कार्य आप कभी भी नहीं कर सकते हैं। आप जो भी कार्य करते हैं, उसमें विवेक एवं मानवीयता की गरिमा होती है। आपने वीरतापूर्ण कार्य भी किये है। ऐसे कार्यो को करते समय अस्त्र-शस्त्रों की शक्ति से आपने अपनी वीरता का परिचय दिया है। नीच कार्यों को करने में आपने कभी रुचि नहीं ली है। सज्जनों की भाँति आप सदा ही अच्छे कर्मों में प्रवृत्त रहे हैं।

100

आपके अपार गुण हैं। अभी आपकी कुछ विशेषताओं का मैंने उल्लेख किया है। वास्तव में अपनी सज्जनता के कारण आप का व्यक्तित्व एवं कृत्य प्रशंसनीय है। आपके ह्रदय में गुणों का ही निवास है तथा आपके ह्रदय में अनेक गरिमाएँ समाहित हैं। आपमें इतनी विशेषताएँ देखकर भी मैं अब तक आपको किसी प्रकार की प्रसन्नता न दे सका। मैं इस दिशा में पूर्ण असफल रहा हूं। इस जगत के भार स्वरुप एवं सभी बुराइयों के प्रतीक अपने शत्रुओं को अभी तक मैं पराजित भी नहीं कर सका हूं।

101

राजा रावण यद्यपि आपके अपने बड़े भाई हैं, परन्तु उनके प्रति आपके मन में किसी प्रकार की श्रद्धा का भाव अथवा प्रेम नहीं है। आपका ह्रदय सदैव ही परोपकार एवं मानवीयता की भावना से परिपूर्ण रहा है। दूसरों की सहायता करना आप अपना कर्तव्य समझते हैं। आपकी यह गहरी अभिलाषा रही है कि यह सम्पूर्ण जगत सुख एंवं समृद्धि का आगार हो जाय तथा सभी लोग इस संसार में शान्ति एवं प्रसन्नता का जीवन व्यतीत कर सकें।

102

हे विभीषण ! आपने अपने बच्चों, मित्रों, भाइयों अथवा स्त्री की ओर कभी भी ध्यान नहीं दिया। यहाँ तक कि कुटुम्ब के लोगों के प्रति भी आपके मन में कोई आकर्षण नहीं है। इस प्रकार इन सभी की आपने कोई

चिन्ता नहीं की वरन सम्पूर्ण विश्व की मंगल–कामना के लिए ही आपने प्रयास किया है। इस संसार की सुरक्षा एवं हित ही आपकी कल्पना का निरन्तर आदर्श रहा है।

103

आप यह भली भाँति जानते हैं कि इस जगत में जो कुछ भी दिखायी दे रहा है, वह अस्थिर एवं अस्थायी है। यह वस्तुएँ चिरकाल तक रहने वाली नहीं हैं। इसी प्रकार मानव जीवन एवं सुख भी इस जगत में अस्थायी एवं क्षणिक ही हैं। यह पूर्ण विश्व ही क्षण–भंगुरता का द्योतक है। यह सांसारिक सुख एक लहर अथवा प्रकाश–किरण की चमक की भाँति ही प्रतीत होता है। यह पल पर भी स्थिर नहीं पाता है। इसकी सीमाएँ बहुत अधिक हैं। यह सब उसी भाँति शीघ्रता से समाप्त हो जाता है जैसे तीव्रगामी अश्व देखते ही देखते दृष्टि से ओझल हो जाता है।

104

यही कारण था कि सब कुछ त्याग कर आप मेरी शरण में आ गये थे। सम्पूर्ण संसार के मंगल की कामना आपमें थी। आप इस जगत को शान्तिमय एवं सुखी देखना चाहते थे। जनहित की कामना आपके हृदय में सदैव ही रही है। यह कामना ही आपको अनुपम प्रेरणा प्रदान करती रही है।

105

समयानुसार लोग किसी न किसी की शरण में जाते ही हैं। सभी को जीवन में किसी न किसी प्रकार की सहायता की आवश्यकता भी होती ही है। अपने शत्रुओं का संहार करने, स्वयं शक्ति प्राप्त करने तथा जीवन में अपार आनंद मना पाने के लिए व्यक्ति यथा अवसर दूसरों से सहायता लेता ही है। यदि किसी की शरण में जाने पर भी कोई अभिलाषा पूर्ण न हो सके, तो शरण देने वाले के लिए लज्जा का कारण उत्पन्न हो जाता है। किसी व्यक्ति को शरणागत के रुप में स्वीकार करना उसके लिए अर्थहीन हो जाता है।

106

अतएव स्पष्ट ही है कि जो लोग शरणागत होकर मेरी सहायता प्राप्त करने की आशा से मेरे पास आये थे, उनको मेरे साहचर्य से कोई भी विशेष उपलब्धि नहीं हो सकी। मेरी विवशता यह है कि मेरे जीवन में अनेक दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियाँ एवं विपत्तियाँ ही सदैव आती रही हैं। उन कठिनाइयों की तुलना भी किसी से नहीं की जा सकती है। मुझे अपार दुःख भोगने पड़े हैं। ये दुख अतुलनीय हैं। हा ! मेरे जीवन को धिक्कार है। मैं

(राम) अत्यन्त ही हीन हूं। मैंने सदैव ही आप सबको निराश किया है, परन्तु मैं जानता हूं कि आप सब फिर भी मुझसे प्रेम ही करते रहे हैं। यह असंभव ही लगता है कि मैं कभी भी आप सबकी इच्छाओं की पूर्ति करने में समर्थ हो सकूंगा। आज मेरी सीमाएँ अपार हो उठी हैं।

107

मेरी बाधाएँ एवं विपत्तियाँ किसी पर्वत श्रेणी की विशालता से कम विशाल नहीं हैं। उन विपत्तियो की चरम सीमा आज इस युद्ध में मेरी घोर पराजय एवं अपमान के रुप में प्रकट हुई है। मुझे आज अपार लज्जा का अनुभव हो रहा है। जिन लोगों ने मेरा साथ देकर मुझे शरण दी है, मैं उनके कष्टों को दूर करने या उनकी सहायता करने में असमर्थ रहा हूं।

108

हे वानरराज सुग्रीव, अंगद, हनुमान ! अब मैं आप सबसे विनम्रतापूर्वक विदा लेने की प्रार्थना करता हूं। आप सब मेरे इस प्रस्ताव को सुनकर दुःखी न हों। अब आप सभी अपने-अपने स्थानों को विधिवत लौट जाएँ। आप सबने अपने कर्तव्यों का पूरी तरह पालन किया है। अपने पूर्ण सहयोग से आपने अपनी विनम्रता प्रकट करते हुए मेरे प्रति अपनी भक्ति का पूरा परिचय भी दिया है।

109

आपने सभी संभव प्रयत्न कर कठिन से कठिन मार्गों को पार किया है। राजपुत्री सीता की खोज भी आप सबने कर ली है। अथाह एवं अपार सागरों को भी पार कर लिया है, जो एक अत्यन्त दुष्कर कार्य था। ऐसी कोई नदी, सघन, वन अथवा विशाल उंची पर्वतमाला नहीं थी, जिसे आप पार न कर सके हों। सभी दिशाओं में कोई ऐसा क्षेत्र नहीं था, जिसको आप सबने हर्षपूर्वक अपनी अपार शक्ति का परिचय देते हुए पार नहीं किया है। अन्धकारपूर्ण एवं सघन वनों को लांघते हुए आप सब यहां तक आये हैं।

110

चारो ओर से एकत्रित होकर वानर सेना लंका पर आक्रमण करने के लिए आयी है। इस प्रकार वानर सेना सम्पूर्ण पृथ्वी तल पर छा गयी है। सीता की खोज के लिए वानर सभी दिशाओं में बिखर गये थे। अन्त में उन्होंने सीता को खोज निकाला था। इस प्रकार हम सबको राजपुत्री के विषय में पूरा पता लगा। उसके पश्चात वानर सेना ने सेतु का निर्माण किया। आप सब ने इस महान कृत्य को करके विश्व में अपार यश अर्जित किया।

111

सारांश यह है कि अथाह सागर की अपार जल राशि को वानर सेना ने पुल बनाकर पार किया। उसके पश्चात पारस्परिक विचार–विमर्श कर युद्ध के लिए सभी लोग तत्पर हो गये। युद्ध की गतिविधियों को तीव्रतर कर दिया गया। आप सभी ने अपने पूर्ण प्रयास से युद्ध में आगे बढ़कर महान सफलताएँ प्राप्त की हैं। आपने युद्ध–क्षेत्र में कभी भी पैर पीछे नहीं रक्खा। आप सब यह युद्ध करके किसी ऋण से उऋण–से हो रहे थे। सभी वानरों का युद्ध–कौशल सराहनीय रहा है।

112

इस संबंध में अब इतना ही कह सकता हूं कि आप सबने अपनी सामर्थ्य के अनुसार अपने कर्तव्यों का विधिवत पालन किया है। आप सबने कर्तव्यनिष्ठा से अपनी अभिलाषाओं की पूर्ति की है। अपने कर्तव्य के प्रति कभी भी आपके मन में किसी प्रकार का भ्रम नहीं था। आपका लक्ष्य आपके समक्ष स्पष्ट था। आपने मेरे प्रति अपने अपार प्रेम का परिचय दिया है। आपके इन कार्यों के प्रति मैं बहुत ही कृतज्ञता का अनुभव करता हूं। कभी आपके प्रेम कें ऋण से मैं मुक्त नहीं हो सकता हूं। यदि आप अपने स्थान को अब वापस जाना चाहें तो प्रसन्नतापूर्वक लौट सकते हैं। इस संबंध में मेरी पूरी अनुमति है।

113

ऐसा कहते हुए श्री राम ने उन सबको वापस लौटने की आज्ञा दे दी। उनके समक्ष अब कोई भी विचार शेष नहीं था। वे केवल अपने प्राण का ही अन्त करना चाहते थे। इस करुण दृश्य को देखकर वानरराज सुग्रीव का हृदय पिघल उठा। उनके नेत्रों से आंसू की बूंदें टपकने लगीं। यह अविरल अश्रुधारा बह कर उनके वक्षस्थल को भिगोने लगी।

114

हा राजा राम ! अभी आप कुछ समय तक और प्रतीक्षा कीजिए। हम सब आपके सेवक हैं तथा सदैव ही आपकी सेवा के लिए तत्पर हैं। आप कृपा करके हम सबकी भक्ति भावना का पूरा परीक्षण कीजिए। अपनी सेवा का एक और अवसर हमें प्रदान कीजिये। हम सबके प्रयास से आपको इतना तो स्पष्ट हो ही रहा होगा कि हम सभी आपकी सेवा के लिए तत्पर हैं। आप जानते हैं कि हम सबकें हृदय में आपके प्रति पूर्ण विश्वास हैं।

115

इसीलिए हे राजा राम ! मैं आपसे करबद्ध प्रार्थना करते हुए निवेदन कर रहा हूं कि आप हम सबकी बात स्वीकार करें। कुछ समय तक आप और प्रतीक्षा करने की कृपा करें। वास्तव में हम सब आपके शत्रु का संहार करने के लिए ही प्रस्तुत हैं। यदि हमारा शत्रु हम सबसे अधिक शक्तिशाली सिद्ध होता है, तो यह बड़े दुःख एवं दुर्भाग्य की ही बात होगी। ऐसी परिस्थिति में हम सब विवश हो सकते हैं। यह तो हम सबका दृढ़ निश्चय है कि हम सब आपके लिए अपने प्राण भी दे देने को सदा प्रस्तुत रहेंगे। आपके सभी सेवक आपकी सेवा के लिए तत्पर हैं। चाहे हम सबको मृत्यु का वरण ही क्यों न करना पड़े, पर हम डिगेंगे नहीं।

116

जब हम सबका पूर्णरुपेण संहार हो जायेगा, तभी आपके लिए मृत्यु का निर्णय उचित होगा। उस भीषण परिस्थिति में यदि आप मृत्यु का वरण करेंगे, तो आपको कोई रोक भी न सकेगा। क्या आप हमें असफलता के साथ ही वापस लौट जाने देंगे ? क्या आपके हृदय में हम सबके प्रति प्रेम का लेशमात्र भी नहीं है ?

117

यदि इस भीषण परिस्थिति में आप हम सबका परित्याग कर देते हैं तो इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि हम सब आपके प्रति पूर्ण स्वामिभक्ति का परिचय नहीं दे सके हैं। विवेकी व्यक्ति जब इस परिस्थिति को देखेंगे तो निश्चय ही वे हम सबको दोषी ठहरायेंगे। इस रुप में सभी हमें घृणा की दृष्टि से देखेंगे, अतएव हम सबके लिए यह स्थिति लज्जाजनक हो जायगी। सभी हम सबके प्रति घृणा भी करने लगेंगे। वे यह कहेंगे कि वानर नीच पशु होते हैं। वे वास्तव में नीचता का ही परिचय दे रहे हैं। वे संसार के विषय में एवं अपने कर्तव्यों के प्रति पूर्ण रुपेण उत्तरदायी भी नहीं हो पाये हैं। कर्तव्यहीनता उनकी नीचता का स्पष्ट प्रमाण है। यह सोचकर भविष्य में आने वाली पीढ़ियाँ भी हम सबकी निन्दा करेंगी।

118

ऐसा ही हम लोगों के साथ होगा, यह हम सबको पूर्णरुपेण स्पष्ट है। अतएव हम सबको भली भाँति विचार करना चाहिए। आप अपना जीवन सुरक्षित रक्खें। आपका जीवित रहना ही हम सबका परम सौभाग्य होगा। हम सब आपको विश्वास दिलाकर आश्वस्त कर रहे हैं कि हम सबका सर्वप्रथम कर्तव्य यही होगा कि हम आपके शत्रु का सर्वनाश कर दें। हमारी दृष्टि केवल इसी ओर है तथा अपना लक्ष्य हमें स्पष्ट रूप से दृष्टिगोचर हो रहा है।

119

हम शत्रु का सर्वसंहार करने में पूर्ण सफल हो सकेंगे और रावण–कुल में कोई भी शेष नहीं बचेगा। सबसे पहले हम सब दशमुख रावण का वध करेंगे तथा उसके मस्तक को आपके समक्ष प्रस्तुत करेंगे। हम सब आपकी अर्चना करते हुए अपनी स्वामिभक्ति का परिचय देंगे।

120

इन शब्दों का यह अर्थ कदापि नहीं है कि हम सब आपके समक्ष दर्पपूर्ण बातें कर रहे हैं। यह दृढ़ विचार केवल इस वास्तविकता का ही स्पष्ट प्रमाण हैं कि हम आपके प्रति पूर्ण निष्ठावान हैं। आपके शत्रु का संहार करना ही हमारा दृढ़ निश्चय है। हे राजा राम ! हम सबको आप अपने चरणों से कभी विलग न करें। हम सभी आपके चरणों की सेवा में ही रत हैं। अपने जीवन–पर्यन्त आपकी सेवा करने में हम सबको अपार गौरव एवं हर्ष का अनुभव होगा। हम सब सदैव ही आपकी सेवा करते रहेंगे।

121

वानर राज सुग्रीव ने राम के समक्ष स्पष्ट शब्दों में अपनी भावना प्रकट की। उनका हृदय निर्मल था। राम के प्रति उनके मन में अपार श्रद्धा तथा स्वामिभक्ति का भाव था। वे भविष्य में आने वाले भीषण युद्ध से कभी भी पीछे हटने की कल्पना नहीं कर सकते थे। उन्हें अपने प्राण के प्रति भी कोई मोह नहीं था। वास्तव में ऐसे महान व्यक्तियों का चरित्र आदर्श एवं अनुकरणीय है।

122

सुग्रीव ने राम के समक्ष अपने दृढ़ विचारों एवं भावनाओं को स्पष्ट प्रकट कर दिया। कुछ क्षण के लिए वे मौन होकर वहीं खड़े रहे। वे बार–बार अपने आँसुओं को पोंछ रहे थे। उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। उनके आसपास खड़े हुए सभी वानर भी स्तब्ध एवं मौन थे। उनमें से कोई उच्च–स्वर में रुदन नहीं कर पा रहा था। उनका दुःख अतीव गहरा था। वे चित्रवत खड़े थे। उनकी जीवन की सभी गतिविधियाँ समाप्त–सी हो गयी थीं।

123

वह रात का समय था। वानर सेना मौन होकर राम के पास खड़ी थी। उस समय रात्रि का सन्नाटा बढ़ता

जा रहा था। प्रचंड वायु बहती हुई घोर रव कर रही थी। रात्रि के अवसर पर ओसकण पृथ्वी पर बिखर रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि रात्रि भी वानर सेना के साथ, उनके दुःख में सम्मिलित होकर, सहानुभूति प्रकट करती हुई ओस कणों के रुप में आँसू टपका रही हो।

124

रात्रि का गहन अंधकार शनैः शनैः प्रकाश किरणों के रुप में प्रकट हो रहा था। दिवस भी आगे बढ़ रहा था अर्थात प्रातःकाल की वेला आ रही थी। पक्षी भी उठ–उठ कर अपने नीड़ों में मधुर रव में कूजने लगे थे। ऐसा लग रहा था कि इस दारुण दुःखमय परिस्थिति को देखकर उनके स्वरों में भी करुणा का ही स्वर गूंज रहा हो। कमल–पुष्पों पर भौंरे गुंजार करते हुए करुण स्वरों में अपना दुःख प्रकट कर रहे थे।

125

श्री राम मौन थे। उस समय आकाश मंडल पर ऋषियों का समूह उच्च स्वरों में पूजा–अर्चना की ध्वनि से गगन–मंडल को ध्वनित कर रहा था। वे भगवान की पूजा करते हुए उनकी प्रशंसा में स्तुति कर रहे थे। पूजा–अर्चना में भगवान की अपार अलौकिक शक्तियों का ही वे वर्णन कर रहे थे। वे विष्णु की भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे। यह उस अवसर पर बहुत ही आवश्यक भी था क्योंकि वे सभी राम को उनकी अलौकिक शक्तियों का स्मरण दिला रहे थे। राम ही वास्तव में विष्णु के अवतार थे।

126

हे मधुसूदन राम ! आप पूर्ण प्रयास करने की कृपा कीजिए। हे देव ! आप अपनी वास्तविकता को कभी मत भूलिए। आपके इस शरीर ने विष्णु का अवतार धारण किया है। आपकी आत्मा परमात्मा का स्वरुप है। इसीलिए आप सर्वशक्तिमान एवं महान हैं। आपके शरीर में सदैव ही सत्य एवं गरिमा का निवास है। आपका शरीर कभी भी नाशवान नहीं है। ऐसा प्रतीत होता है कि आप भी भ्रमित हो रहे हैं, परन्तु आपकी महानता एवं शक्ति अक्षुण्ण है। इस सम्पूर्ण जगत की गतिविधियाँ आप ही के संकेत से परिचालित हैं। इसीलिए आप सर्वशक्तिमान हैं।

127

इस जन्म से पहले के जन्मों में आप कभी भी इतने भ्रमित नहीं हुए थे। इससे पहले पुरातन युग में जब इस जगत का निर्माण किया गया था, तो आपने मत्स्य के रुप में मत्स्यावतार धारण किया था। क्या यह एक सत्य

एवं वास्तविकता नहीं है ? उसके पश्चात आपने कूर्म के रुप में अवतार लिया था। इस प्रकार कूर्म के अस्तित्व में जंगत की आपने रक्षा की थी। वन में वराह के रुप में अवतार लेकर आपने विचरण किया था। आपने ही नरसिंह (नृसिंह) अवतार धारण किया था। आप ही विष्णु हैं। वामन तथा जामदग्नि आप ही थे तथा अन्तिम अवतार के रुप में आप ही राम देव के रुप मे प्रकट हुए हैं।

त्रा स 128

यह सभी अवतार आपके ही स्वरुप हैं। आपकी आवश्यकता भी जगत को इसीलिए पड़ती है कि आप इस संसार की रक्षा करके उसका पोषण करते हैं। जनसाधारण आपकी छत्रछाया में आश्रय पाते हैं। अपने सभी अवतारों में विभिन्न रुपों को धारण कर आप विश्व का मंगल करते रहे हैं। भविष्य में भी जो अवतार आप धारण करेंगे उससे जगत का निश्चय ही कल्याण होगा। आप एक महामानव के रुप में अवतरित हो चुके हैं। आपका अवतार जनकल्याण का प्रतीक है यद्यपि आपके वास्तव में अनेक अवतार हैं, फिर भी आप साधारण मानवों का हित करना कभी नहीं भूलते हैं। हम सभी सदैव ही आपकी गरिमाओं का गान करते हुए आपका स्मरण करते रहते हैं। आप कभी हम सब से दूर एवं अज्ञात नहीं हैं। आपकी शक्तियाँ सदैव ही हम सबकी रक्षक हैं। सदैव ही वे हम सबके साथ हैं।

129

आपकी महिमा सम्पूर्ण विश्व में व्याप्त है। आप ही संसार के सभी प्राणियों के प्राण–स्वरुप हैं। आप ही सर्वप्रथम एेसे व्यक्ति हैं जो सभी संघर्षों के मध्य में स्थित होकर मृत्यु के भय को समाप्त कर सकते हैं। आपकी कृपा से ही यह तीनों लोक स्थिर दृष्टिगोचर हो रहे हैं। आपकी शक्ति ही इन तीनो लोकों मे व्याप्त है। आप ही इस जगत का विनाश एवं पोषण करने में पूर्ण समर्थ हैं। आपने ही बड़े–बड़े सम्राटों एवं देवों को अपार शक्ति एवं अलौकिक गरिमाएँ प्रदान की हैं। अतएव आप ही स्वयं दैवी शक्तियों एवं अलौकिक गुणों के प्रतीक हैं।

130

इस विश्व में जो प्रकाश की किरणें चारों ओर दृष्टिगोचर होती हैं और सम्पूर्ण जगत को प्रकाशमय बनाती हैं, उन किरण जालों के रुप में आप ही सर्वाधिक प्रकाशयुक्त सूर्य के सदृश हैं। आप ही संसार को ज्योतिर्मय करते रहते हैं। जहाँ तक ज्ञान–विज्ञान का क्षेत्र है, आप उसमें सामवेद के सदृश हैं। सभी महान देवों के मध्य आप देवराज इन्द्र की भाँति सुशोभित हैं। इन्द्रियों के मध्य में आप विचारशक्ति के सदृश हैं। इस प्रकार आपका व्यक्तित्व महानता का प्रतीक है। सभी रुद्रों के मध्य में आप महादेव शंकर की भाँति हैं, जो इस संसार में शान्ति की स्थापना करते हैं।

131

सभी यक्षों एवं राक्षसों के मध्य में आप वैश्रवण के सदृश हैं। मानवों के मध्य में आप राजा हैं। आपके यश की किरणें सम्पूर्ण विश्व को आलोकित कर रही हैं। ऊंची वस्तुओं के मध्य आप सुमेरु पर्वत शिखर की भाँति सबसे उच्च हैं। इस जगत में जितने भी जड़ स्वरुप हैं, उनमें आप हिमालय पर्वत की भाँति हैं। जो गहरी वस्तुएँ एवं गहन पदार्थ हैं, उनमें आप उस सागर की भाँति हैं, जिसकी गहराई अतल है। सभी वृक्षों के मध्य आप बोधिवृक्ष के सदृश हैं। इस प्रकार आप विश्व में सम्पूर्ण महानताओं एवं गरिमाओं के प्रतीक हैं।

132

धनाढ़्य बड़े-बड़े राजाओं के मध्य आप शिव के उस नन्दी की भाँति हैं जो सम्पूर्ण इच्छाओं एवं अभिलाषाओं की पूर्ति करने में पूर्ण समर्थ हैं। जितने भी गगनचारी पक्षी हैं, उन सब में आप गरुड़ पक्षी की भाँति हैं। आपके समकक्ष इस जगत में दूसरा कोई नहीं है। सभी पशुओं में मृग-राज सिंह की भाँति आप शोभित होते हैं। छोटी-छोटी मछलियों में आप एक महत्वपूर्ण, बड़ी एवं सुन्दर मछली की भाँति हैं। बड़ी-बड़ी एवं विशालकाय मछलियों में आप उनके राजा के स्वरुप हैं। जल के देवता वरुण की भाँति आप पूजनीय हैं।

133

विशालकाय नागों के मध्य में आप जगत प्रसिद्ध नाग अनन्त भोग की भाँति हैं। अन्य सभी सर्पों में आप सर्वप्रसिद्ध सर्प वासुकि की भाँति हैं। बड़ी-बड़ी महान सरिताओं में आप उस देव नदी गंगा की भाँति हैं, जो पवितत्रता की प्रतीक हैं और सदैव ही लोगों को पाप से मुक्ति देती रहती हैं। उन सभी के मध्य में जिनकी तीव्र गति है तथा जो सदैव ही गतिमय रहते हैं, आप झंझावात अथवा प्रभंजन की भाँति हैं।

134

जो जंगम इस जगत में स्थित हैं, उनमें भी आप सबसे महान हैं। जहाँ तक दृष्टि जाती है, आपके समकक्ष कोई अन्य दिखायी नहीं देता है। बारह चन्द्रमाओं एवं चन्द्रकलाओं के मध्य में आप मार्ग-शीर्ष अथवा पंचम मास के चन्द्र एवं चन्द्र-कला की भाँति हैं। इस जगत में जितनी भी ऋतुएँ एवं मास हैं उनमें आप मधुऋतु एवं मधुमास हैं। ऋतुराज बसंत का आगमन कामदेव को अत्यन्त प्रसत्रता देने वाला होता है। कामदेवता का पूर्ण आधिपत्य इस ऋतु में सम्पूर्ण विश्व पर छा जाता है। कामदेव ही सृष्टि का निर्माण कर ने के उद्देश्य से मानवों में सन्तान की उत्पत्ति की क्षमता प्रदान करता है। इस दृष्टि से आपका स्थान जगत-सृष्टा ब्रह्मा की भाँति है। ब्रह्मा के संकेत से ही इस जगत की रचना होती है।

135

इस सम्पूर्ण सृष्टि के मानवों के महान पूर्वजों में आपका स्थान अर्यमा की भाँति है। वे ही मानव के महान पूर्वज हैं। सभी के मंगल एवं कल्याण के लिए आप प्रार्थना के मन्त्रों की भाँति हैं। ये मंत्र बहुत ही उत्तम एवं पवित्र होते हैं। अलौकिक शब्दों के मध्य में आप ओ३म की भाँति हैं। अक्षरों के मध्य में आपका अस्तित्व 'अ' अक्षर की भाँति है। जीवन के चारों सोपानों अथवा आश्रमों मे आपका अस्तित्व गृहस्थ आश्रम की भाँति है।

136

आप ऐसे महान नियमों एवं शिक्षाओं के प्रतीक हैं जिनसे जीवन में बड़े-बड़े अपूर्व फल प्राप्त होते हैं। आप जब किसी उद्देश्य अथवा लक्ष्य की प्राप्ति के लिए अग्रसर होते हैं, उस समय आपका अस्तित्व तर्कशक्ति से पूर्ण एवं अधिकार की भाँति होता है। धार्मिक कृत्यों को सम्पन्न करने की जो गतिविधियाँ हैं अथवा धार्मिक नियमों का पालन करने के लिए जो साधन हैं, आप उन सबके स्वरुप हैं। जहाँ तक मानव के व्यवहारों एवं आचारों का संबंध है, उसमें आप सज्जनता एवं विनम्रता के प्रतीक हैं।

137

रहस्यों के मध्य में आप मौन देवता की भाँति हैं। आप चतुर वाक्पटुओं के मध्य में विवेकपूर्ण शब्दों की भाँति हैं। जो लोग महत्वपूर्ण नेता बनने की विशेषताएँ रखते हैं, उनके लिए आप उनकी सफलता की भाँति हैं। आप किरणों में एक महत्वपूर्ण प्रकाश किरण की भाँति हैं, जो सम्पूर्ण विश्व को प्रकाशित किये हुए है। आप उन लोगों की विजयश्री की भाँति हैं जो महान युद्ध में अभूतपूर्व विजय प्राप्त करते हैं। आप शक्ति के प्रतीक हैं तथा शक्तियों की शक्ति हैं। मेधावी एवं बुद्धिमान व्यक्ति की बुद्धि के आप प्रतीक हैं।

138

महान मुनीद्रों में आप भगवान व्यास की भाँति हैं। महान कवियों एवं कलाकारों में आप शुक्राचार्य की भाँति हैं। सिद्ध ऋषियों में आप कपिल ऋषि की भाँति हैं। आपके समान अन्य कोई नहीं है। देवर्षियों के मध्य में आप सर्व प्रसिद्ध देवर्षि नारद हैं, जो सदैव ही युद्ध के अपार प्रेमी रहे हैं। ब्रह्मर्षियों के मध्य में आप महर्षि भृगु की भाँति हैं, जिनके सभी शब्द अलौकिकता एवं महानता के प्रतीक हैं।

राजनीति–कुशल नेताओं के मध्य में आप बृहस्पति की भाँति महत्वपूर्ण हैं। बृहस्पति बड़े ही प्रसिद्ध एवं गौरव–गरिमाओं से सम्पन्न रहे हैं। शक्तिशाली देवों अर्थात सबसे अधिक कठोर दण्ड देने वाले देवों के मध्य आप यमराज की भाँति हैं। अतएव आप यमाधिपति की सम्पूर्ण शक्तियों के प्रतीक हैं। आपका शरीर वज्र की भाँति है। आप अस्त्र–शस्त्रों में वज्र की भाँति हैं। ऐसे उत्तम अस्त्रों के लिए, जो नष्ट नहीं किये जा सकते है, आप एक महान धनुर्धारी योद्धा के रुप में हैं। जो वीरता के प्रतीक हैं और जिनकी युद्ध–कुशलता केवल साधारण खेलों की भाँति ही प्रतीत होती है, उनके बीच आप राम के रुप में स्वयं उपस्थित है। युद्ध कौशल आपके लिए एक ीड़ा–मात्र है।

140 गये थे।

आकाश के ज्योतिर्मय नक्षत्रों के मध्य में आप चन्द्रमा की भाँति प्रकाशयुक्त हैं। महान अश्वों के मध्य में आप सागर–मन्थन से प्राप्त उच्चैःश्रवा अश्व की भाँति हैं। युद्ध के महान सेनापतियों में आप कुमार स्वामिकार्तिकेय की भाँति अपार कुशल योद्धा हैं। जहाँ तक ज्ञान, विज्ञान एवं शास्त्रों का संबंध है, आप अध्यात्म विद्या के प्रतीक हैं। गन्धर्वों के मध्य में आप प्रसिद्ध गन्धर्व चित्ररथ हैं। विशालकाय एवं पराक्रमी दैत्यों के मध्य में आप भक्त प्रहलाद की भाँति हैं। भाँति–भाँति के मधुर शब्दों को व्यक्त करने वाले शब्दों में आप माधुर्यवं भिक शब्द के सदृश हैं। आप महान गुण् गरिमा सम्पन्न, प्रातः स्मरणीय, प्रसिद्ध, धैर्यवान, शान्त, दृढ़ निश्चयी बुद्धिमान, प्रखर, क्षमाशील एवं विचक्षण मस्तिष्क वाले हैं।

141

वसुओं के वर्ग में आप पवित्र अग्नि की भांति हैं। आप वसत स्वाहा हैं। सभी को दानशील के रुप में आप दान देते हैं। आप उस गायत्री मंत्र के समान हैं जो अत्यन्त पवित्र एवं उत्तम है। आप सभी मंत्रों में उसी गायत्री मंत्र की भांति महत्वपूर्ण हैं। कवियों ने जितने भी मंत्रों की सर्जना की है, उनमें गायत्री मंत्र का रुप आपको ही प्राप्त है। सभी समासों अथवा समस्त पदों में द्वंद्व समास की भाँति आप महत्वपूर्ण हैं। द्यूत के खेल में आप खेल के उपकरण की भाँति हैं। विशाल गजों में आपका स्थान इन्द्र के हाथी ऐरावत की भाँति है। आपका गुरु गर्जनामय स्वर सिंह की दहाड़ की भाँति भीषण एवं भयावह है। उस समय जब आप सिंह–गर्जना करते हुए युद्ध के लिए प्रयाण करते हैं तब यह स्वर सुनकर बड़ों–बड़ों की छाती दहल उठती है। तब आपकी गंभीर गर्जना खेल–खेल में क्रीड़ा करते हुए सिंह की गर्जना के सदृश लगती है।

142

आप वृष्णि वंश के योद्धाओं एवं सम्राटों में भविष्य में कृष्ण के अवतार स्वरुप होंगे। क्या यह सत्य नहीं

है ? दैत्य कंस एवं अन्य दुष्टों का दलन करने के लिए ही आपका अवतार होगा तथा दूर्वा की भाँति आप उनका संहार कर उन्हें कुचल देंगे। पाँचों पाँडवों के मध्य में आप वीर अर्जुन की भाँति होंगे। वह अर्जुन आनन्द और उल्लास सहित युद्ध की क्रीड़ा में सहर्ष प्रवृत्त होगा। भविष्य में दुष्ट प्रवृत्ति एवं नीच चरित्र वाले अभिमानियों का संहार आपके संकेत से ही होगा। भावी युग में दुर्योधन की कोटि के दुष्ट व्यक्ति आपके संकेत से ही नष्ट होंगे।

143

आपके विभिन्न व्यक्तित्व हैं। आपके अनेक स्वरुप हैं। जब वे स्वरुप अलग–अलग होकर कई अवतारों में आते हैं तो संसार में शान्ति होती है तथा दुष्टों का दलन होता है। यद्यपि आपके शरीर के अनेक भाग संभव नहीं हैं, फिर भी आपका सम्पूर्ण विराट व्यक्तित्व तीनो लोकों पर छाया हुआ है। आप सम्पूर्ण जगत के प्राणिमात्र के प्राणों की भाँति हैं। सभी पशुओं तथा वनस्पतियों में आप ही प्राण का संचार करते हैं। चाहे कोई वस्तु बड़ी हो अथवा छोटी, सभी जड़ एवं चेतन आपकी महिमा से ही पोषण पाते हैं।

144

यदि इस जगत में आपके अपार व्यक्तित्व की छाया न होती, तो सृष्टि के प्राणी भी इस जगत में जीवित नहीं रह पाते। आप ही उनके प्राण हैं। आपका अस्तित्व भी उन्हीं से प्रकट होता है। सभी प्राणियों की आत्मा आप ही हैं। यहाँ तक कि दूर्वादल में भी आप ही प्राण स्वरुप हैं। आप ही इस जगत के प्राणियों के प्राण–सूत्र हैं। आप ही उनकी वृद्धि तथा उनका विवेक हैं।

145

हे महात्मन् ! आपके विषय में हम सबकी यही धारणा एवं दृढ़ विश्वास है। आपके विराट् स्वरुप में आपके शरीर की विशालता का दर्शन होता है। आपका व्यक्तित्व महान एवं अलौकिक है। महर्षिगण जानबूझ कर आपके विराट व्यक्तित्व को अपने हृदय में छिपाये हुए हैं। इस प्रकार अपने कम से कम शब्दों में मैं अपनी भावना एवं अपने विचारों को व्यक्त कर सका हूं। मेरे शब्द मंत्र की भाँति कम शब्दों में ही आपकी अपार गरिमा का संकेत दे रहे हैं।

146

वास्तव में आपका व्यक्तित्व अपरिमेय और अज्ञात है। विचारों के माध्यम से उसकी कल्पना करना संभव नहीं है। ऋषि मुनि भी उन रहस्यपूर्ण तत्वों को समझने में पूर्णतया असमर्थ रहते हैं। प्रतिक्षण इसी रहस्य को

जानने के लिए वे विचारों में निमग्न रहते हैं। महर्षियों का यह कथन है कि यदि किसी मानव में आत्मिक शक्ति एवं बल है तो उसके चिन्तन एवं विचारों में भी अभूतपूर्व दृढ़ता होगी। वह व्यक्ति अलौकिक शक्तियों से सम्पन्न होगा तथा महान व्यक्तित्व वाला होगा। अतएव ऐसी आत्मा को महान आत्मा की संज्ञा देते हुए उसकी गौरव–गरिमा की ही प्रतिष्ठा की जाती है।

147

हे अवतारी पुरुष ! आपके अनेक गुणों एवं शक्तियों की महिमा का ऊपर वर्णन किया जा चुका है। आपकी अपेक्षा अन्य कोई वस्तु इस जगत में महत्वपूर्ण नहीं है। आपकी शक्ति से ही संसार का कल्याण होता है और अधमों एवं दुष्ट प्रवत्ति के प्राणियों का संहार होता है। पवित्र विचारों वाले सज्जन पुरुष आनन्दमय जीवन व्यतीत कर सकें तथा उनको चिर प्रसन्नता प्राप्त हो सके, इसी धारणा से आप सब काम करते हैं। आपकी महिमा बसंत ऋतु एवं मधुमास की भाँति कुछ मासों तक ही सीमित नहीं रहती है। बसंत ऋतु के पुष्प कुछ सीमित समय तक ही खिलते हैं। इसी प्रकार कुछ वृक्ष भी मधु ऋतु में ही पल्लवित होते हैं।

148

ऋषियों का यह स्वर गगन–मंडल को गुंजित कर रहा था। वे सभी श्रीराम की महिमा का गुणगान करते हुए उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा कर रहे थे। इस अर्चना में देवतागण भी ऋषियों के साथ थे। सिद्धगण एवं चारण "जय जय" शब्द का उद्घोष कर रहे थे। वातावरण में पूजा का स्वर मुखरित हो रहा था। आकाश से सुगन्धित सुमनों की वृष्टि हो रही थी। भाँति–भाँति की सुगन्धित वस्तुओं इत्र आदि की वर्षा की जा रही थी। इस प्रकार भगवान राम की प्रशंसा करते हुए ऋषि एवं देवता उनके ऊपर पुष्प वर्षा कर रहे थे।

149

तत्पश्चात् राम को शीघ्र ही सभी बातों का स्मरण हो आया। चारों ओर उनकी प्रशंसा का स्वर ही उन्हें सुनायी दे रहा था। ऋषि एवं देवता अनेक रुपों में उनका गुणानुवाद कर रहे थे। इसी मध्य नागपाश के सभी बन्धन टूट गये तथा उसके टुकड़े–टुकडे होकर बिखर गये। नागपाश सहस्त्रों टुकड़ों में बिखर कर नष्ट–भ्रष्ट हो गया। उसका कोई भी भाग अब शेष नहीं बचा था। ठीक यही दशा उस पाश की भी हुई, जो वानर समूहों को अपने में पूरी तरह लपेट कर बाँधे हुए था। गरुड़ पक्षी की गति से झंझावात का–सा स्पर्श पाते ही नागपाश छिन्न–भिन्न हो गया था। विष्णु वाहन गरुड़ ने आकाश से उतर कर नागपाश पर भीषण प्रहार किया था।

गरुड़ पक्षी ने शीघ्र ही श्रीराम के समक्ष खड़े होकर आदर भाव से उनकी वन्दना की। राम विजय एवं गौरव के प्रतीक थे। गरुड़ देवता ने आर्य लक्ष्मण की भी वन्दना की। उनके हृदय में इन दोनों वीरों के प्रति अपार प्रेम था। प्रसन्नता के अतिरेक से उन्होंने राम के चरणों का आलिंगन कर लिया तथा उनकी चरण रज को मस्तक पर धारण किया। राम और लक्ष्मण का शरीर पूर्ववत् हो शक्तियुक्त दिखायी देने लगा। किसी प्रकार का परिवर्तन नहीं हुआ था। उनके शरीर में किसी प्रकार का कम्पन भी नहीं था।

151

दोनों आर्य वीर राम तथा लक्ष्मण जब नागपाश के बन्धन से मुक्त होकर सुरक्षित हो गये,तो गरुड़ युद्ध क्षेत्र से वापस लौट गये। विभीषण को यह विचित्र सफलता देखकर अपार आश्चर्य हुआ। वानरराज सुग्रीव एवं युवराज अंगद भी इस दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित हो गये। हनुमान,नल तथा नील सभी को अपार हर्ष का अनुभव हुआ। सभी ने देखा कि राजपुत्र राम आप ही आप पूर्णरुपेण बन्धन मुक्त हो चुके हैं और नागपाश छिन्नभिन्न हो चुका है।

152

इसी प्रकार जितने बड़े-बड़े अन्य वानर योद्धा थे, वे सभी बन्धन-मुक्त होकर पूर्ववत् युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये। उन सबको इस अद्भुत गतिविधि से आश्चर्य भी हुआ। वे सभी विचार करने लगे कि इतना सुदृढ़ एवं भयानक नागपाश इतनी सरलता से कैसे छिन्न-भिन्न हो गया। उन्होंने स्वयं अपनी आँखों से देखा था। नागपाश का बन्धन कई टुकड़ों में बिखरा पड़ा था। यही कारण था कि इस दृश्य को देखकर वे सभी आश्चर्यचकित थे। ऐसा लग रहा था, जैसे वे स्वप्न देख रहे हों। इन्द्रजीत एवं उसकी जादूगरी का कोई दृश्य जैसे उनके समक्ष उपस्थित हो गया हो और वह समाप्त भी हो गया हो।

153

वे सभी भली भाँति जान गये थे कि पक्षिराज गरुड़ की सहायता के कारण ही उनके प्राणों की रक्षा संभव हो सकी थी। गरुड़ के प्रेम ने ही उनको प्राण दान दिया था। अब उनके मन में किसी भी प्रकार का कोई भय शेष नहीं था। सभी हृदय से प्रसन्न दृष्टिगोचर हो रहे थे। उनके हृदय की भक्ति भावना राम के प्रति दृढ़तर होती जा रही थी। उनके हृदय में असीम एवं अपार श्रद्धा उत्पन्न हो गयी थी। उन्होंने श्री राम के इस अलौकिक प्रभाव को देखा था। राम की महिमा पर उन्हें दृढ़ विश्वास हो गया था।

154

उनको स्पष्टतः प्रकट हो गया कि श्री राम देवता विष्णु के ही साक्षात् अवतार थे। उन्होंने नर–लीला के लिए ही मनुष्य का स्वरुप धारण कर लिया था। इसीलिए अब उनका अस्तित्व मानव के रुप में दिखायी दे रहा था। उनकी पताका पर गरुड़ का चिन्ह भी सुशोभित था। निश्चय ही भगवान विष्णु ने आर्य राम के रुप में पृथ्वी पर अवतार धारण किया था। अब किसी को इसमें तनिक भी सन्देह नहीं था कि तीनों लोकों का सबसे भयानक शत्रु अब पृथ्वी तल से शीघ्र ही नष्ट होकर सदैव के लिए समाप्त होने वाला है। वे सभी एक स्वर में पुकार कर कहने लगे कि हे राजा राम! आप हम सबकी प्रार्थना को स्वीकार करने की कृपा कीजिए। आप इस सम्पूर्ण विश्व के राजा एवं रक्षक हैं। हम सब उसके कल्याण की मंगल–कामना एवं प्रार्थना कर रहे हैं।

155

अपार प्रसन्नता एवं उल्लास की तरंगों में खेलते हुए सभी वानर राम की प्रशंसा तथा उनकी मंगल–कामना करने लगे। उसके पश्चात् वे सभी उठकर खड़े हो गये। भीषण स्वरों में वे सिंहनाद करने लगे। जब वे बन्धन एवं कष्टों से मुक्त हो गये, तो अपनी प्रसन्नता प्रकट करने के लिए वे उछलने लगे। उनका ह्रदय अब आनन्द–मग्न था। वे फिर युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये तथा युद्धक्षेत्र में अपने प्राण का उत्सर्ग करने के लिए उनके हृदय में गहरी लालसा जागृत हो उठी।

156

रात्रि का अवसान हुआ। ऊषा की लालिमा प्रातःकाल का संकेत देने लगी। अब सूर्यदेवता का पूर्व दिशा में उदय भी हो रहा था। सम्पूर्ण वानर सेना अपने अस्त्र–शस्त्रों से सुसज्जित हो रही थी, युद्धक्षेत्र में शत्रु का विनाश करने के लिए वह अब आगे बढ़ी। वानर सेना लंकापुरी के बाहर के क्षेत्र में प्रविष्ट हो गयी। वानर सेना घोर रव करती हुई कोलाहल कर रही थी। वानर सैनिकों के कठोर शब्द सम्पूर्ण गगन–मंडल में प्रतिध्वनित हो रहे थे तथा सम्पूर्ण आकाश उन शब्दों के कोलाहल से भर गया था।

157

रावण उस भीषण रव एवं कोलाहल को सुनकर चौंक पड़ा। वह शीघ्र ही अपने राजमहल में प्रविष्ट हो गया। इसी बीच सूचनावाहक ने उसके पास आकर सूचना दी। रावण की सेना एवं स्वयं रावण को इस नागपाश के भंग होने का अपार दुःख था। उनका चरित्र–बल भी अब लगभग समाप्त हो चुका था। अब तक तो वह बड़ा प्रसन्न था। अपनी सेना पर उसे पूर्ण विश्वास था, इसीलिए वह उससे अपार प्रेम भी करता था। यह सूचना पाकर उसके ह्रदय में भय उत्पन्न हो गया। उसकी बुद्धि भ्रमित हो गयी। वह चौंक कर निराश होने लगा। इस घोर निराशा की परिस्थिति में उसको अपार कष्ट हो रहा था।

158

उसके मुख की कान्ति मलिन हो गयी थी। उसका तेज आप ही आप समाप्त हो चुका था। अब उसको सन्देह एवं भ्रम ने घेर लिया था। उसका हृदय धड़क रहा था। उसे अपार कष्ट एवं निराशा का अनुभव हो रहा था। उसका धैर्य एवं शक्ति अब समाप्त हो चुकी थी। रावण के हृदय में भय उत्पन्न हो जाने के कारण उसका शरीर शिथिल हो उठा था। वह अब बुद्धिहीनता का आगार-सा बनता जा रहा था। भय ने उसके हृदय की वीरता को पूर्णरुपेण आच्छादित कर लिया था। उसका झूठा दर्प अब चूर-चूर हो उठा था।

159

युद्धक्षेत्र में अपनी विजय पर अब रावण को सन्देह हो गया था। वह समझ गया था कि अब उसकी पराजय निश्चय है। उसकी हार उसको स्पष्ट ही दृष्टिगोचर हो रही थी । उसने महान योद्धा धूम्राक्ष को युद्धक्षेत्र में जाने की आज्ञा दी। वह औरों के समक्ष अपना भय प्रकट नहीं करना चाहता था। अपने भय को अपने हृदय तक ही सीमित रख सके इसलिए उसने भय की स्थिति में भी धूम्राक्ष को आदेश दिया। उसके दुःख एवं पराजय के विष्य में किसी को भी किसी प्रकार का आभास न हो सका।

160

राक्षस योद्धा धूम्राक्ष अत्यन्त बलशाली एवं महान पराक्रमी था। उसके हृदय में अपार दृढ़ता थी। उसकी शक्तियां असाधारण थीं। रावण की आज्ञा को उसने अपने हृदय में धारण कर लिया। वह रावण के शब्दों को अपने प्राण की भाँति महत्व देता था। उसके हृदय में एक ही अभिलाषा थी कि युद्ध क्षेत्र में वह अपने स्वामी के लिए अपना प्राण उत्सर्ग कर सके। उसके हृदय में रावण के प्रति अपार स्वामिभक्ति थी। उसके हृदय में अपने स्वामी रावण के प्रति अपार प्रेम भी था।

161

अपनी विशाल सेना को उसने सुसंगठित किया। राक्षस योद्धा धूम्राक्ष वानर सेना से टक्कर लेने के लिए प्रस्तुत हो गया। उसकी सेना के गज, रथ, अश्व तथा पदाति सैनिक सुव्यवस्थित रुप से आगे बढ़ रहे थे। उसकी सेना में बड़े-बड़े रथ थे। उसका अपना रथ बहुत ही प्रसिद्व था। उसका नाम था सिंह-मुख। उसकी सेना की रचना उसकी शक्ति की प्रतीक थी। उसके अश्व का नाम "वृकोदरमुख" था जो उसके रथ सिंहमुख को खींच रहा था। उस रथ को नष्ट करना किसी के लिए संभव नहीं था।

162

धूम्राक्ष की रणवाहिनी युद्ध के लिए प्रयाण कर रही थी,तब भय के कारण बड़े-बड़े पक्षी कोलाहल करने लगे थे। वे भय से काँप रहे थे। काग-गण चौंक-चौंक कर काँव-काँव करते हुए चिल्ला रहे थे। धूम्राक्ष के रथ की पताका तीव्र वायु के झोकों से इधर-उधर लहरा रही थी। झंझा के झोंके ने उसकी पताका को उखाड़ दिया। उसे अनेक अशुभ लक्षण मिल रहे थे। इन अशुभ लक्षणों को भी देखकर वह किसी प्रकार की चिन्ता अथवा भय से ग्रस्त नहीं हुआ। उसे अपने शरीर से भी मोह नहीं था। वह युद्धक्षेत्र में अपने प्राण का उत्सर्ग करना आवश्यक समझता था। इसीलिए वह अबाध गति से अपने लक्ष्य की ओर बढ़ता चला जा रहा था।

163

जो व्यक्ति अपने कर्तव्यों को पूरा करने के लिए दृढ़ प्रतिज्ञ एवं वचनबद्ध होते हैं उनको किसी प्रकार का भय डिगा नहीं पाता है। यही उसकी मान्यता थी। वास्तव में उसके राजा रावण ने उसकी सभी अभिलाषाओं की पूर्ति की थी, अतएव उसकी आत्मा सभी सुखों से पूर्णतः तृप्त थी। रावण ने सदैव ही उसको भाँति-भाँति के सुन्दर वस्त्राभूषण प्रदान किये थे। उसको मणि-माणिक भेंट में देकर रावण ने उसे सभी प्रकार से सन्तुष्ट और प्रसन्न कर रखा था। उसको सभी प्रकार के संभव अधिकार भी प्राप्त थे। उसकी अभिलाषा के अनुकूल सभी वस्तुएँ उसको दी जाती थीं। उसकी सेवा एवं सुख के लिए बहुत सी अप्सराएँ भी उसे प्रदान की गयी थीं। वे अप्सराएँ सदैव ही सुगन्धित पुष्पों की मालाएँ धारण किये हुए उसकी सेवा सुश्रूषा में लगी रहती थीं।

164 39

राक्षस धूम्राक्ष वीरता और विश्वास के साथ युद्ध की कामना से आगे बढ़ रहा था। उसका हृदय पूर्ण रुप से निर्मल था। उसके हृदय में अपने स्वामी रावण के प्रति अपार श्रद्धा एवं प्रेम था। उसके हृदय में किसी भी प्रकार का भय नहीं था। रावण की सभी आज्ञाएँ शिरोधार्य करना वह अपना कर्तव्य समझता था।

165

जब राक्षस धूम्राक्ष नगर से बाहर आक्रमण करने के लिए आया, उसे चारों ओर वानरों की विशाल सेना दृष्टिगोचर होने लगी। वे वानर बड़ी उत्सुकता से शत्रु की प्रतीक्षा कर रहे थे। वे अत्यन्त क्रुद्ध थे तथा भीषण शब्द करते हुए कोलाहल मचा रहे थे। सभी ने धूम्राक्ष पर आक्रमण कर दिया।

166

राक्षस धूम्राक्ष के अन्य सभी साथी राक्षस योद्वा भी युद्व में आगे बढ़े। उनके शरीर विशाल भूधराकार थे और बड़े ही भयावने थे। उनमें से बहुत से राक्षस तो अपनी अपार क्रूरता के लिए भी प्रसिद्व थे। उनके विशाल शरीर वर्षाऋतु के काले-काले मेघों की भाँति थे। उनकी कृपाणें विद्युत की भाँति चमक रहीं थीं। वे कपृाणें वज्र की भाँति कठोर और प्रखर थीं।

167

राक्षस सेना युद्व के लिए आगे बढ़कर वानरों पर आक्रमण करने लगी। हाथों में तीक्ष्ण नंगी तलवारें चमक रहीं थीं। हंसिये की भाँति दिखने वाली कृपाणें विष से बुझाई हुई थीं। स्वच्छ, तीक्ष्ण एवं भयानक लम्बे-लम्बे भाले एवं अन्य अस्त्र-शस्त्र भी उनके हाथ में थे। उन्हें देखते ही भय उत्पन्न हो जाता था। वे तलवारों एवं भालों से भीषण आक्रमण कर रहे थे।

168

युद्व क्षेत्र में जो राक्षस योद्वा अपने हाथ में भाले लेकर प्रहार कर रहे थे, वे यमराज की भाँति भयानक रुप धारणा कर वानर सेना का संहार कर रहे थे। सावधान हो-होकर वानर उछलते थे। उछलते समय ही राक्षस उनका वध कर देते थे। उनके भाले का प्रहार बहुत ही भीषण था। इससे वानरों की गरदनें टूट जाती थीं तथा वृक्ष की कटी शाखा की भाँति वानर पृथ्वी पर गिर पड़ते थे। राक्षसगण इन वानरों को अत्यंत साधारण समझ रहे थे। बहुत से वानरों के पैर तोड़ कर राक्षसों ने उन्हें अपंग कर दिया था। वानरों की पीठों पर आक्रमण कर उन्हें भयानक रुप से राक्षस सेना ने घायल कर दिया था।

169

युद्व की इस भीषण परिस्थिति को देखकर बहुत से वानर-योद्वा आश्चर्यचकित और स्तब्ध -से दिखायी देने लगे। वानर भी रण-कुशल महान योद्वा थे। वे भी रुके नहीं। उनका उद्देश्य भी राक्षसों पर प्रहार करना ही था। अतः आक्रमण को सहते हुए भी वे युद्व-क्षेत्र में डटे रहे। उनके पेट पर राक्षसों ने हंसिये से प्रहार किया। रक्त की धारा फूट पड़ी। राक्षसों के हंसियों का प्रहार जिस पर भी हो जाता था, वही वानर लहूलुहान होकर पृथ्वी पर गिर पड़ता था।

170

इस प्रकार अनेक वानर राक्षसों के भीषण आक्रमणों से युद्व में घायल हो कर गिरने लगे। वे अपार कष्ट झेल रहे थे। राक्षसों ने भाँति-भाँति के जालों में उनको फाँस लिया था। बहुतों के अंग भी उन्होंने काट डाले थे। कुछ वानरों पर भालों का प्रहार किया गया था। कई अन्य प्रकार से भी राक्षस वानरों पर भीषण प्रहार कर रहे थे। जब राक्षस वानरों को रौंद-रौंद कर कुचल रहे थे, वानर तीव्र स्वर में चीत्कार कर रहे थे। वे राक्षसों के आक्रमण से दब गये थे। इस प्रकार राक्षसों के भीषण प्रहार ने वानरों को हतोत्साहित कर दिया था। वे निराशा के गर्त में डूबे जा रहे थे। वानर सेना अत्यंत दुखीः हो उठी थी। राक्षस निरन्तर उन पर आक्रमण कर रहे थे। इस भीषण युद्व में बहुत से वानर मूर्च्छित और मृत होकर धराशायी हो गये थे।

171

राक्षसों के आक्रमण की गतिविधियां तीव्रतर होती जा रही थीं। जिस पर भी वे घोर प्रहार करते, वही नष्ट भ्रष्ट हो जाता था। इस परिस्थिति को देखकर शक्तिशाली वानर योद्वा भी युद्व में राक्षसों से जूझने के लिए आगे बढ़े। वे सभी वानर रण कुशल तथा वीर योद्वा थे। युद्व करते समय वे उछल कर आक्रमण करते थे। उसके बाद अपने आक्रमण की गति को वे तीव्र कर देते थे। राक्षसों के साथ भी उन्होंने यही किया। उन्होंने राक्षसों को तीव्रतर प्रत्युत्तर दिया। उनका भीषण आक्रमण पूर्णतः सफल हुआ। उन वानर-योद्वाओं ने भीषण प्रहार किये तथा राक्षसों के मुख को फाड़ डाला।

172

वानरों ने बड़ी ही तीव्रगति से बड़े-बड़े प्रस्तर खण्डों को गिरा-गिरा कर प्रहार किया। राक्षस उस आक्रमण से धराशायी होने लगे। उन्होंने राक्षसों की भुजाओं को तोड़ डाला। राक्षस भी डर कर भयभीत दिखायी देने लगे। बहुत से राक्षस वानरों के भीषण प्रस्तर प्रहारों से घबरा कर युद्व से पलायन करने लगे। पत्थरों से उनके शरीर चूर-चूर हो गये थे। उनके ऊपर वानर-योद्वाओं ने पर्वत-शैलों को उखाड़-उखाड़ कर फेंका था, जिससे वे दब गये थे।

173

राक्षसों के शव प्रस्तर प्रहारों से टूट-टूट कर सैकड़ों टुकड़े-टुकड़े हो गये थे। वानरों ने शीघ्र ही तीव्र आक्रमण किया तथा अनेक पत्थरों के बड़े-बड़े खण्डों से राक्षसों पर प्रहार किया। नागपाश में बन्दी होने के कारण पहले से ही वे अत्यन्त क्रुद्ध हो गये थे। अतएव वे पूरी शक्ति से भीषण प्रहार कर रहे थे। उन्हें इससे पहले

की रात की घटना का पूरा स्मरण था। इसीलिए वे घोर आक्रमण कर रहे थे। वे अपार शक्ति का परिचय देते हुए उस रात की घटना का बदला चुका रहे थे।

174

वानर राक्षसों से पूरी तरह बदला लेना चाहते थे। उनके हृदय में किसी प्रकार का डर नहीं था। वे राक्षसों को प्रत्याक्रमण का कोई अवसर ही नहीं दे रहे थे। इस प्रकार उनके आक्रमण की गतिविधियाँ बड़ी तीव्र थीं। वे राक्षसों के शरीर पर अपने नखों को भाले की भाँति भोंक देते थे। राक्षसों के शरीर वे फाड़े डाल रहे थे। जब वे नखों से प्रहार करते तो उनका क्रोध बढ़ जाता। आक्रमण की तीव्रता को वे और अधिक बढ़ा देते थे। वानरों क आक्रमण से भयभीत होकर राक्षस पीछे हटने लगे तथा युद्ध के मैदान से भागने लगे। उन्हें पूरी तरह कुचल दिया गया था। इस प्रकार राक्षसों की सम्पूर्ण शक्ति नष्ट हो गयी थी। वानर–सेना ने उनको पीछे खदेड़ दिया था।

175

जब राक्षस धूम्रक ने राक्षसों की सेना का विनाश होते देखा तो उसको अत्यन्त दुःख हुआ। अपने रथ को वह युद्धक्षेत्र में आगे बढ़ाने लगा। तीव्रगति से आगे बढ़ते हुये रथ के पहिये भीषण शब्द करने लगे। सिंहरथ नामक उस रथ के जुते हुए घोड़े अर्थात व्रकोदरमुख घोर रव कर रहे थे। वे घोड़े कभी भी युद्ध में पीछे नहीं हटते थे। जब वानर उछल–उछल कर भागने की चेष्टा करते तो शीघ्र ही वे घोड़े उनको पकड़ कर चीर डालते थे।

176

राक्षस धूम्रक अपने हाथ में गदा धारण किये हुए था। वह गदा को ऊपर की ओर उठाकर सेना का संचालन कर रहा था। वह अपनी शक्ति का पूरा प्रदर्शन करते हुए अपने रथ पर ही सवार था। अनेक वानरों को कुचलता हुआ उसका रथ आगे बढ़ने लगा। वानर डर कर इधर–उधर भागने लगे। वे चारों ओर बिखरने लगे तथा पीछे हटने लगे। वानर सेना को पीछे हटता देखकर उत्साह बढ़ाने के उद्देश्य से हनुमान जी युद्धक्षेत्र में आ गये। वे इस शत्रु से लोहा लेना चाहते थे। इस संघर्ष के लिए दोनों ही योद्धा अब प्रस्तुत थे। वे प्रसन्नता से आगे भी बढ़ रहे थे। हनुमान जी धूम्रक राक्षस को देखकर उस पर इस प्रकार झपटे जैसे केकी किसी छोटे सर्प पर आक्रमण कर रहा हो।

177

हनुमान जी के हृदय में आक्रमण का उल्लास था। उन्होंने एक पर्वत की चोटी उखाड़कर हाथ में ले लिया।

वह शैलमाला बड़ी ही कठोर एवं विशाल थी। उसके पश्चात् उन्होंने सीधे हाथ पर उसको शनैः-शनैः उठाकर ऊपर की ओर खड़ा कर दिया तथा बाएँ हाथ से उसे घुमाया। उनकी भुजाएँ विशाल एवं लम्बी थीं। पर्वत खण्ड को वे इस प्रकार हिलाने लगे जैसे वृक्ष के पल्लव को कोई आन्दोलित कर रहा हो।

178

राक्षस धूम्रक ने भी तीव्रता से आक्रामक किया। तीव्र गति से उछल कर वह आगे बढ़ा। उसने अत्यन्त कुद्ध होकर हनुमान जी पर भीषण प्रहार किया। उसके पश्चात् वह अपने रथ पर वापस जाकर बैठ गया। उसके आक्रमण का हनुमान जी पर कोई प्रभाव नहीं पड़ा। वे न तो चौंकें और न अपने स्थान से पीछे ही हटे। उनके मुख-मंडल पर भय की कोई रेखा भी नहीं थी।

179

धूम्रक ने दूसरी बार हनुमान जी पर घोर प्रहार किया। इस बार हनुमान ने उलट कर उस पर भीषण आक्रमण कर दिया। उन्होंने शिलाखण्ड से प्रहार किया। राक्षस धूम्रक ने भी हनुमान जी को लक्ष्य बनाकर प्रहार किया था। वह आघात हनुमान जी पर पूरा बैठा परन्तु उन्होंने उसकी कोई चिन्ता नहीं की। वे अपने स्थान पर दृढ़ एवं अडिग खड़े रहे। ऐसा लगा जैसे वे क्रीड़ा करते हुए उसका आनंद ले रहे हों। जब हनुमान पर प्रहार हुआ तो उनका हृदय हर्ष से फूल उठा। वे राम के कार्य में यश प्राप्त करने के अभिलाषी थे। जानबूझ कर युद्ध के मैदान में वे डटे रहे। उन्होंने पीछे हटने की कल्पना भी नहीं की।

180

राक्षस धूम्रक ने हनुमान जी पर फिर गदा से प्रहार किया। बार-बार वह गदा से ही उनको हताहत करने का प्रयत्न कर रहा था। इन प्रहारों को हनुमान जी ने सहजता से झेल लिया। स्वंय को बड़ी ही दृढ़ता से वे संभाले रहे। इसके पश्चात् वे आगे बढ़े और उन्होंने राक्षस धूम्रक पर भीषण आक्रमण किया। उन्होंने राक्षस धूम्रक पर पर्वत शिला से प्रहार किया था। वह आघात उसके वक्षस्थल पर लगा। राक्षस अब अपने स्थान पर दृढ़ न रह सका। वह डर कर भागा। शरीर पर हुए भीषण आघात को वह सह नहीं पाया।

181

अब धूम्रक युद्ध के मैदान से भाग निकला तो हनुमान ने उसके रथ पर प्रहार कर उसको भी चूर-चूर कर डाला। उस प्रहार से उसका रथ राख की भाँति बिखर गया। उसके रथ का अश्व भी टुकड़े-टुकड़े हो गया।

उसका वृकाय अश्व भी मारा गया।

182

अब राक्षस धूम्रक विरथ हो गया था। अत्यन्त क्रुद्ध होकर वह बड़ी क्रूरता से हनुमान जी पर प्रहार करने के लिए आगे बढ़ा। उसने भीषण अस्त्र-शस्त्रों से प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। क्रोधातुर होकर हनुमान जी पर शीघ्रातिशीघ्र प्रहार करने का उसने पूरा प्रयत्न किया। अब उसकी एक ही भुजा शेष थी। उसका कटि भांग भी आहत हो चुका था। उसके हृदय में अब केवल क्रूरता ही शेष थी।

183

हनुमान जी पर अन्ततः धूम्रक ने घोर आक्रमण कर ही दिया। हनुमान जी इस आक्रमण को भी झेल गये और अपने स्थान पर अडिग खड़े रहे। उनको किसी प्रहार का कोई भय नहीं था। वे युद्व क्षेत्र में और आगे बढ़े। उन्होंने किसी प्रकर के प्रमाद एवं आलस्य का परिचय नहीं दिया। वे कहने लगे- क्या इस हीन-शक्ति नीच राक्षस का अन्त अभी तक नहीं हो पाया है ? उन्होंने सोचा कि शीघ्र ही इसका संहार कर इसको मौन एवं शान्त कर देना चाहिए। यह शब्द कहते हुए हनुमान जी ने धूम्रक राक्षस का पैर पकड़कर उसे अपनी ओर खींच लियां।

184

पैर को पकड़ने के पश्चात् उन्होंने पूरी शक्ति से उसे चारों ओर घुमा दिया। इस स्थिति में धूम्राक्ष शैल खंड से टकरा गया। उसके मुख की अस्थियाँ चूर-चूर हो गयीं। उसका कंठ फट गया। उसकी गरदन टूट गयी तथा उसका ह्रदय भी विदीर्ण हो गया। रक्त की धारा उसके मुख-गुहर से फूट-फूट कर बहने लगी।

185

उसी क्षण राक्षस धूम्रक का प्राणान्त हो गया। इंस प्रकार उसकी जीवन-लीला समाप्त हो गयी। राक्षसों का समुदाय उसकी मृत्यु से शोकाकुल होकर चिल्लाने लगा। वे घबरा-घबरा कर इधर-उधर भागने लगे। आकाश-मंडल पर प्रसन्नता व्यकत करने हुए देवतागण हर्ष-ध्वनि करने लगे। उनके मुख से "वीर वीर" शब्द निकल रहा था। गगन-मंडल पर बहुत से देवता आकर उपस्थित हो गये। वे सभी इस दृश्य को बड़े ही उल्लास एवं उत्साह से देख रहे थे।

186

राक्षस धूम्रक के पृथ्वी पर गिर जाने से एक दुष्ट तथा नीच बुद्दि राक्षस का अन्त हो गया। उसके अन्य राक्षस साथी परस्प्र बहुत दुःखी हो गये। थोड़ी ही देर में उसके कुछ अन्य मित्रों का भी हनुमान जी ने वध कर दिया। वानर योद्धाओं ने भी हनुमान जी की भाँति ही अपार पराक्रम का पूरा परिचय दिया। उन्होंने अधम राक्षसों का संहार कर डाला। वे राक्षस नीचता के प्रतीक थे। इस बार वानरों ने पूरी शक्ति से क्रूर राक्षसों पर प्रहार किये थे। उन्हें अब किसी प्रकार का भय नहीं था। वानर बड़े शौर्य के साथ आक्रमण कर रहे थे। लगता था जैसे वे सम्पूर्ण जगत को ही नष्ट कर डालेंगे और राख की ढेरी के रुप में उसे परिवर्तित कर देंगे। राक्षस तो उनकी गणना में कुछ भी नहीं थे। उनके समक्ष राक्षसों की शक्ति नगण्य-सी थी। राक्षसों का विनाश तो अब वानरों के हाथों से निश्चित हो गया था। वानरों ने उनको युद्धक्षेत्र से खदेड़-खदेड़ कर उनका सहार कर डाला। भाग कर जो राक्षस जीवित चले गये थे, उन्होंने रावण को पूरी परिस्थिति का परिज्ञान कराया।

187

जब रावण को राक्षसों की इस दुर्गति एवं संहार का समाचार प्राप्त हुआ ,तो उसे अपार कष्ट हुआ। उसे अपनी प्रजा से अथाह प्रेम था। यह जानकर कि धूम्रक ऐसा यशस्वी योद्धा युद्ध में धराशायी हो चुका है, वह पीडित हो उठा। धूम्रक की मृत्यु से रावण के मन में निराशा का संचार हो गया। उसके पश्चात् उसने तुरन्त अकम्पन नामक राक्षस योद्धा को बुलाकर आज्ञा दी कि वह युद्व-क्षेत्र में जाकर सफलता प्राप्त करने का सभी संभव प्रयास करे। वह तब तक युद्व-क्षेत्र से वापस न लौटे जब तक शत्रु की सम्पूर्ण सेना का सर्वनाश न हो जाय और सभी वानरों का निश्चित रुप से वध न कर दिया जाय। अकम्पन ने पूरी तरह आश्वस्त करते हुए रावण को यह विश्वास दिलाया के हे राजा ! मुझे पूरी आशा है कि मैं शत्रुओं का पूरा संहार कर दूंगा। ऐसा न हुआ तो युद्वक्षेत्र में अपना प्राणोत्सर्ग कर दूंगा। अकम्पन महान पराक्रमी योद्धा था और युद्व में सफलता प्राप्त करने की उसकी गहरी अभिलाषा थी।

188

रावण से विचार-विमर्श करने के पश्चात् अकम्पन ने रावण की आज्ञाओं को शिरोधार्य किया। उसने शीघ्र ही युद्व स्थल की ओर प्रस्थान कर दिया। उसके लिए एक विशाल एवं चौड़ा रथ पहले से ही सजा खड़ा था। उसने उस रथ में बाणों को सुव्यवस्थित ढंग से रख लिया। इस प्रकार के कई बाणों के ढेर, उसके रथ में प्रस्तुत किये गये। उसका धनुष विशाल था। उस पर बहुत लम्बी प्रत्यंचा चढ़ायी गयी थी। लगता था,जैसे किसी बड़े से लट्ठे पर किसी डोरी को अवस्थित किया गया हो। उसकी डोरी भी वृक्ष के तने के सदृश थी।

189

जब राक्षस अकम्पन ने युद्ध के लिए प्रयाण किया तो उसकी बायीं भुजा फड़कने लगी। इससे वह चौंक पड़ा। भीषण वायु के झोकें घोर रव करते हुए चलने लगे। इससे किसी के भी मन में भय उत्पन्न हो सकता था। पागल कुत्ते बड़े भयावने स्वरों में एक साथ झुण्डों में एकत्रित होकर भौंक रहे थे। वातावरण में एक विचित्र सा भयानक स्वर गूंजने लगा था। इस प्रकार के सभी अशुभ लक्षण अभियान के प्रारम्भ करने से पहले ही अकम्पन को होने लगे थे। वीर योद्धा अकम्पन ने बड़ा धैर्य रखा। उन अशुभ लक्षणों की भी उसने कोई चिन्ता नहीं की। यद्यपि सम्पूर्ण मार्ग में अपशकुन हो रहे थे परन्तु अकम्पन ने इन बातों की ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। स्वभाव से वह एक महाभिमानी राक्षस था। चिन्तित होने पर उसकी क्या दशा होगी,इसको वह भली भाँति जानता था। अभिमान एवं दर्प का प्रदर्शन करने के लिए ही वह यह अभियान कर रहा था। वह भ्रमित बुद्धि, मूर्ख एवं क्रूर राक्षस था।

190

जैसे ही राक्षस अकम्पन ने युद्ध–क्षेत्र में प्रवेश किया,सभी वानरों ने उस पर घोर आक्रमण कर दिया। उसने भी अपना धनुष–बाण संभाला तथा चलाने के लिए बाणों को प्रत्यंचा पर चढ़ाकर खींचा। तीक्ष्ण बाणों से वानर सेना प्र उसने भीषण प्रहार प्रारम्भ कर दिया। उसके सहस्त्रों बाणों ने आकाश को ढक लिया। सम्पूर्ण वातावरण में गहरा अन्धकार छा गया। चारों ओर कुछ भी दृष्टिगोचर नहीं हो पा रहा था। पृथ्वी से आकाश तक सम्पूर्ण वातावरण को अकम्पन के बाणों ने आच्छादित कर लिया था। बाणों के प्रहारों से वानर समूहों के टुकड़े–टुकड़े होते जा रहे थे। उनका सर्व संहार हुआ जा रहा था। उन प्रहारों से तथा उसके आघात से कोई भी वानर बच कर भाग निकलने में समर्थ नहीं हो सकता था।

191

हनुमान जी ने जब यह भयानक परिस्थिति देखी तो उनके हृदय में क्रोध उमड़ पड़ा। उन्होंने शीघ्र ही एक ताड़ वृक्ष तोड़ लिया। उनका लक्ष्य उस राक्षस अकम्पन को कुचल डालना था। उस वृक्ष को ही उन्होंने अपने शस्त्र के रुप में ले लिया। अत्यन्त तीव्रगति से कन्दुक–क्रीड़ा करते हुए उन्होंने उसे चारों ओर घुमाया। हनुमान जी को उस वृक्ष को चारो ओर घुमाने में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई। यह कार्य उनके लिए बहुत ही सरल था। इसी बीच बड़ी कुशलता एवं तीव्रता से हनुमान ज़ी के आक्रमण से बचने के लिए अकम्पन ने हनुमान जी पर बाणों से प्रहार किया। हनुमान जी ने अकम्पन के सभी बाणों को तोड़ डाला और उसका आक्रमण विफल कर दिया। उन्होंने अपने प्रत्युतर से उसके बाणों को पीछे फेंक दिया। उसके बाण निरर्थक होकर लौटने लगे। उसके बाणों को तोड़ भी दिया गया। इस प्रकार हनुमान जी ने उसके तीक्ष्ण बाणों के टुकड़े–टुकडे कर दिये।

192

हनुमान जी ने उस पर घोर प्रहार किया। उन्होंने अबकी बार राक्षस अकम्पन पर स्वेच्छा से आक्रमण किया था। हनुमान जी में भीषण प्रहारों को झेलने की भी बड़ी शक्ति थी। वे इन कार्यों में पूर्ण पटु एवं रण कुशल थे। राक्षस अकम्पन ने बड़ा प्रयत्न किया कि वह हनुमान को युद्ध में पीछे ढकेल दे। उसने उनको विधिवत् घेरा भी। उनका मार्ग भी उसने अवरुद्ध किया। बार – बार भीषण बाणों से उन पर अकम्पन ने प्रहार किये परन्तु न तो हनुमान जी के शरीर पर कोई घाव ही हो सका और न बाणों का प्रहार ही उन पर कोई प्रभाव डाल सका। उनके शरीर पर अकम्पन का कोई बाण लगा ही नहीं। हनुमान जी ने अवसर पाकर अकम्पन पर आक्रमण किया। उसके पश्चात् उन्होंने अपने नख भोंक दिये,जिससे अकम्पन धराशायी हो गया। हनुमान जी को दूसरी बार आक्रमण करने की आवश्यकता ही नहीं हुई। एक ही प्रहार में अकम्पन का प्राणान्त हो गया। उसके विशाल वक्षस्थल से रक्त की धाराएँ बह निकलीं। उसका वक्षस्थल फट चुका था। हनुमान जो ने उसका पूरा शरीर फाड़ डाला था। उन्होंने उसकी भुजाओं के टुकड़े–टुकड़े कर डाले थे।

193

अकम्पन के अन्य सभी राक्षस साथी डर के कारण युद्धक्षेत्र से इस प्रकार भाग निकले जैसे व्याघ्र के आक्रमण के डर से हिरन अथवा बारहसिंघे भाग जाते हैं। जिस प्रकार बाघ मृगों को वन में खदेड़ देता है, वही दशा हनुमान के समक्ष राक्षसों की थी। सभी राक्षस अपने प्राण की रक्षा करने का यथासंभव प्रयास कर रहे थे। वे अपनी सम्पूर्ण शक्ति से भाग निकले। शीघ्र ही रावण के पास जाकर उन्होंने अकम्पन की मृत्यु की सूचना दी। रावण इस समाचार को सुनकर बहुत दुःखी हुआ। उसे अपार कष्ट का अनुभव होने लगा। अपनी दयनीय अवस्था का भी उसे आभास होने लगा। उसके हृदय में दुःख एवं निराशा की गहरी छाया प्रवेश कर गयी थी। भयानक विपत्ति के कारण रावण का ह्रदय बहुत दुःखी एवं चिन्तित था। पहले रावण के सोचने का ढंग बहुत ही दर्पपूर्ण था, पर अब रावण मौन होकर ही रह जाता था। अब उसके ह्रदय का झूठा दर्प चूर–चूर हो चुका था।

194

अकेले शान्त बैठना भी उसके लिए संभव नहीं था। उसके ह्रदय में हर समय एक विचित्र–सी घबराहट रहने लगी। वह सिंहासन पर उठकर खड़ा हो गया। उसने लंकापुरी के चारों ओर घूम कर राक्षसों को युद्ध के लिए प्रेरित किया। उसने अपने मंत्री प्रहस्त से युद्धक्षेत्र में जाकर सेना का संचालन करने का आग्रह किया। उसने मंत्री प्रहस्त से यह भी कहा कि राजमहल के प्रहरी राक्षसों को भी युद्धक्षेत्र में ले जाने की व्यवस्था करें तथा उन्हें सैनिकों के रुप में युद्ध में भेजें। स्वयं मंत्री प्रहस्त राक्षसों की सेना का युद्धक्षेत्र में संचालन करने का कार्यभार अपने ऊपर लें तथा राक्षस योद्धाओं की रक्षा करें,यह निर्देश भी रावण ने दे दिया।

रावण ने कुछ अन्य निर्देश भी राक्षस सेवकों के द्वारा भेजे। सभी राक्षस दौड़कर प्रहस्त के पास गये। उन्होंने रावण का आदेश व निर्देश सूचित कर दिया। प्रहस्त शीघ्र ही रावण की आज्ञा का पालन करने के लिए उनकी सेवा में उपस्थित हो गया। उन्होंने रावण को विधिवत प्रणाम किया। दशमुख रावण ने अपने मंत्री से कहा कि हे पिता ! सभी प्रहरियों को सुगठित कर उन्हें युद्व में ले जाइये तथा आप सभी जाकर युद्व क्षेत्र में युद्व कीजिए। आपको यहाॅ बुलाने का मेरा एकमात्र यही उद्देश्य है।

196

रावण की बातों को सुनकर प्रधानमंत्री प्रहस्त्र ने उत्तर दिया। हे महाराज ! युद्व के विषय में डरने की अब तनिक भी आवश्यकता नहीं है। समझ नहीं पा रहा हूं कि क्या कारण है कि आप इतने दुःखी एवं चिन्तित दिखायी दे रहे हैं? हे महाराज ! आप अपने हृदय में दृढ़ता धारण कीजिए। डर को अपने मन में स्थान न दीजिए। आपकी अवस्था देखकर मुझे आभास हो रहा है कि आप बहुत भयभीत हैं। क्या बहुत से राक्षसों की सेना आपकी सुरक्षा के लिए प्रस्तुत नहीं है ? क्या कारण है कि हे महाराज ! आप अकस्मात् ही अपार कष्ट का अनुभव कर रहे हैं।

197

रावण की सुरक्षा के लिए महामंत्री प्रहस्त ने पूरी व्यवस्था कर दी। बहुत से प्रहरी राजमहल की रक्षा के लिए प्रस्तुत कर दिये गये। महामंत्री प्रहस्त अहर्निशि अपने महाराज रावण की कल्याण कामना एवं सुरक्षा की कल्पनाओं में लीन रहते थे। उनके समक्ष इससे अधिक महत्वपूर्ण अन्य कोई कार्य नहीं था। वे सदैव ही रावण की मंगल-कामना करते रहते थे। उनको धन का कोई लोभ नहीं था। उसे पाने के लिए वे कभी प्रयत्नशील नहीं रहे। अपनी स्त्री से भी उनका कोई विशेष लगाव नहीं था। वे स्वेच्छा से रावण का हित चिन्तन करते हुए शीत काल के कष्टों को भी सह लेते थे। उन्हें गर्मी एवं थकावट की भी कोई चिन्ता नहीं रहती थी। वे एक बहुत बड़े योद्वा, कर्मशील व्यक्ति तथा रणकुशल सैनिक थे। अहर्निशि सचेत रहकर वे रावण की सुरक्षा को उद्यत रहते थे। जीवन में अनुशासन को वे सबसे अधिक महत्वपूर्ण स्थान देते थे।

198

महामंत्री प्रहस्त ने यथायोग्य उचित व्यवस्था कर दी। वहाँ रहने वाले राक्षसों तथा मंत्री को अब किसी प्रकार का भय नहीं था। उसके पश्चात् महामंत्री प्रहस्त रावण से आज्ञा लेकर युद्वक्षेत्र में जाने को प्रस्तुत हो गये। युद्वक्षेत्र में भीषण संघर्ष करके विजय या वीरगति प्राप्त करने की उन्हें अभिलाषा थी। उन्होंने यह भी कहा कि मेरी भाँति अन्य व्यक्तियों का भी आवश्यक कर्तव्य है। सभी को यह चाहिए कि स्वामी की आज्ञा का पालन

करते रहें और सफलता के साथ युद्धक्षेत्र में अपने प्राण की बलि चढ़ा दें। महाराज रावण ने हम सबका बड़े ही उल्लास एवं आदर से पालन पोषण किया है। अतएव युद्ध में प्राणों की आहुति देना ही हम सबका परम कर्तव्य है। यदि हम सब युद्ध में शत्रुओं का सर्वनाश न कर सकें, तो हमें युद्ध में प्राणोत्सर्ग की देना चाहिए।

199

रावण कीं आज्ञा को शिरोधार्य करते हुए प्रहस्त उठकर खड़े हो गये। उन्होंने पवित्र कार्यों के रुप में दान आदि देने की व्यवस्था की। सभी प्रकार की उत्तम वस्तुएँ ब्राह्मणों, गुरुओं एवं पवित्र व्यक्तियों की सेवा में अर्पण करने के लिए सजाई गयीं। सुवर्ण तथा मोती आदि बहुमूल्य मणियाँ भी रखी गयीं थीं। मणि, माणिक्य, मुक्ताओं, उत्तम नीलमों आदि रत्नों को दान स्वरुप भेंट करने के लिए लाया गया था। इन बहुमूल्य वस्तुओं को बड़े व्यापक रुप में प्रस्तुत किया गया। रेशमी वस्त्रों,बैल,अश्व,गज,उत्सवों के आभूषण तथा परिचारिकाओं के रुप में युवतियों को भी भेंट में दिया गया। वे सुन्दरियाँ सुगन्धित पुष्पों की मालाएँ धारण किये हुए थीं।

200

दान–दक्षिणा का कार्यक्रम विधिवव् संपत्र हुआ। उसके पश्चात् महामंत्री प्रहस्त को मंत्रों के द्वारा शक्ति प्रदान की गयी। सभी गुरुओं एवं पवित्रजनों ने मन्त्रोच्चार करके महामंत्री को मन्त्रों की शक्ति से सम्पत्र किया। सभी ने प्रार्थना करते हुए आशीर्वाद भी दिया। महामंत्री प्रहस्त युद्ध में सुरक्षित रहें तथा युद्ध में विजयी होकर लौटें, यही उनकी प्रार्थना का सार था। महामंत्री की ओर से मन्दिरों में नियमों एवं परम्परा के अनुसार देवताओं की प्रार्थना की जा रही थी। देवताओं का गुणानुवाद किया गया तथा उनकी गरिमाओं की प्रशंसा की गयी। अस्त्र–शस्त्रों के देवताओं की वन्दना करते हुए उनका वार–वार स्मरण किया गया। देवों की शक्ति को महामंत्री प्रहस्त्र के सभी शस्त्रों में समाहित किया गया।

201

प्रहस्त के सभी राक्षस योद्धा मदिरा पान करके उन्मत्त हो उठे। वे भीषण स्वरों में भयंकर गर्जना करने लगे। वे सभी अपने शरीर पर सुगंधित लेप लगाए हुए थे। उन्होंने सुगन्धियुक्त इत्र आदि भी लगा रखा था। वे सुन्दर–सुन्दर वस्त्राभूषणों को धारण किये हुए थे। वे मणियों जड़ित कर्ण कुंडल धारण किये हुए थे। स्वर्ण के बने कड़े उनके हाथों को सुशोभित कर रहे थे। पैरों में भी वे कड़े पहले हुए थे तथा वस्त्र धारण किये हुए थे। वे शरीर पर सुन्दर बनियान आदि वस्त्र पहने हुए थे। उनके हाथों में कृपाणें थीं जिसको वे कभी छोड़ते नहीं थे। सभी के हाथों में हंसिये के आकार का एक भयानक शस्त्र भी था।

202

इसके पश्चात् उन राक्षसों ने युद्ध के लिए प्रस्थान किया। उनमें कुछ सैनिक अश्वारोही थे, कुछ रथों पर सवार थे और कुछ पदाति सैनिक थे। वे भयानक शब्द कर रहे थे तथा पीतल के रण वाद्य-यंत्रों को बजा रहे थे। कुछ सैनिक वाद्यों को लकडी के लट्ठों से पीटते हुए चले जा रहे थे। इस प्रकार दसों दिशाओं में बड़े -बड़े ढोलों का स्वर मुखरित हो रहा था। महामंत्री प्रहस्त को अपार हर्ष हो रहा था। तेल डालकर सहस्त्रों दीपक प्रज्वलित किये जा रहे थे। उन्होंने अग्नि देवता की भी पूजा-अर्चना की। महामंत्री प्रहस्त युद्धक्षेत्र में जाने के लिए विधिवत् बाहर निकले।

203

महामंत्री तीव्रगति से शीघ्रता से अपने रथ पर सवार हो गये। उनका रथ एक पर्वत की चोटी की भाँति ऊंचा, लम्बा एंव चौड़ा था। उस पर स्वर्ण निर्मित वस्तुओं से सजावट की गयी थी। स्वर्ण से पूरी तरह सजाया गया महामंत्री का रथ अत्यन्त सुन्दर लग रहा था। उससे प्रकाश की किरणें निकल रही थीं। चमचमाती हुई वे प्रकाश किरणें सौंदर्य बिखेर रही थीं। स्वर्ण एवं रत्नों के किरण - जालों से रथ की शोभा और भी अधिक बढ़ गयी थी। स्वर्ण - किरणों से उसका मस्तक रश्मिमाला की भाँति प्रकाशवान था। ऐसा प्रतीत होता था जैसे उदयाचल पर्वत पर सूर्योदय का प्रकाश बिखर रहा हो।

204

राक्षसों की सेना का सुसंगठित व्यूह देखकर महामंत्री प्रहस्त को हार्दिक प्रसन्नता का अनुभव हो रहा था। पंक्तिवद्ध राक्षस-सेना वड़े ही अनुशासन से युद्ध के लिए प्रयाण कर रही थी। सभी सैनिक गंभीर स्वरों में भीषण गर्जना कर रहे थे। मार्ग में जाते हुए उनका स्वर ऐसा लग रहा था जैसे सागर की लहरें गुरु गंभीर गर्जना कर रही हों। उनके हाथों में अनेक पताकाएँ फहरा रहीं थी। ऐसा लग रहा था जैसे सम्पूर्ण युद्धक्षेत्र एक क्रीड़ा क्षेत्र बन गया हो। जिस प्रकार जल के तल पर मछलियाँ प्रसन्न होकर एक दूसरे से होड़ लेती हुई आगे बढ़ती हैं,उसी प्रकार युद्धक्षेत्र में उनके अश्व तीव्रगति से भागे चले जा रहे थे। उनके हंसिए की आकृति के शस्त्र उन तिर्यक मछलियों की भाँति थे, जो बार-बार घूम कर जल में क्रीड़ा कर रही थीं।

205

मार्ग में कई अशुभ संकेत मिल रहे थे। उनसे स्पष्ट हो रहा था कि महामंत्री प्रहस्त की युद्ध में निश्चय ही मृत्यु होगी। जव महामंत्री प्रहस्त ने युद्ध के लिए प्रस्थान किया था उसी समय उन्होंने देखा था कि जंगली

कुत्तों के झुण्ड के झुण्ड भौंकते हुए रो रहे थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे प्रहस्त की मृत्यु की प्रतीक्षा कर रहे हों। इन श्वानों ने प्रहस्त को युद्धक्षेत्र में आते ही चारों ओर से घेर लिया था। पृथ्वी में कम्पन हो रहा था। भीषण रुप से रक्त की वर्षा हो रही थी। उनकी पताका टूट कर भूमितल पर गिर गयी थी, अतएव ऐसा लग रहा था कि मृत्यु के सभी लक्षण प्रकट हो गये हैं। ये सब महामंत्री प्रहस्त की मृत्यु की भविष्यवाणी कर रहे थे। यह भली भाँति स्पष्ट हो गया था कि ये सभी लक्षण अशुभ थे। जो भी दिखायी दे रहा था वह अपशकुन ही था।

206

महामंत्री प्रहस्त ने अपने हृदय में पूरी दृढ़ता धारण कर उन सभी अशुभ लक्षणों को देखा। उन्होंने उनकी पूर्ण उपेक्षा भी की। उनके मन में लेशमात्र भी भय का भाव नहीं था। ऐसी कोई भी वस्तु नहीं थी जो उनके हृदय में चिन्ता उत्पन्न करती अथवा उन्हें किसी प्रकार का कष्ट पहुंचाती। उनकी धारणा थी कि मानव या राक्षस शरीर का सबसे महत्वपूर्ण प्रयोग यही हो सकता है कि युद्धक्षेत्र में संघर्ष करते हुए वह वीरगति प्राप्त करे। उनके लिए युद्ध में प्राण का विसर्जन ही सबसे अधिक महत्वपूर्ण था। वे यह मानते थे कि यदि कोई वीरगति प्राप्त नहीं करता तो स्पष्ट ही उसे नरक में जाना पड़ता है। उसका यश भी सदैव के लिए समाप्त हो जाता है। पूर्ण शान्त एवं शक्ति से पूजा–उपासना करते हुए युद्ध में मृत्यु का वरण करने वाला निश्चय ही पूर्णता प्राप्त करता है और सभी दोषों से मुक्त हो जाता है।

207

महामंत्री प्रहस्त में युद्ध के प्रति दृढ़ विश्वास था। उनके हृदय में अपार दृढ़ता थी। उनको अपनी शक्ति पर भरोसा था। युद्धक्षेत्र में आने के पश्चात् उन्होंने सर्वप्रथम आक्रमण के लिए वानर–सेना का आह्वान किया, जबकि उनके मित्र सभी राक्षसों ने पहले ही आक्रमण कर दिया था। उनकी राजनीति का दाँव – पेंच भी भिन्न प्रकार का था। अर्द्धचन्द्र की भाँति अर्द्धवृत्ताकार स्वरुप में उनकी सेना आगे बढ़ी। मध्य में दो भागों में बंट कर वह आगे बढ़ती चली गयी। इस प्रकार सन्तुलित, अनुशासित एवं सुसम्बद्ध व्यूह रचना करके राक्षस–सेना आक्रमण कर रही थी। वानर सेना इस समय बिखरी हुई थी तथा विधिवत् सुसंगठित भी नहीं थी। उनकी सेना अनुशासनपूर्ण ढंग से युद्ध की गतिविधियों को प्रस्तुत नहीं कर पा रही थी।

208

अब प्रधान सेनापति महामंत्री प्रहस्त अपनी सेना सहित वानर सेना पर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़े। युद्धक्षेत्र में संघर्ष के लिए उन्होंने सैनिकों को प्रेरित किया। महान राक्षस योद्धा तीव्रगति से आगे बढ़ते हुए दौड़े। वे अपनी अपार वीरता का पूरा परिचय देने के लिए परस्पर होड़ सी लेने लगे। युद्धक्षेत्र में सम्पूर्ण शक्ति

एवं स्वामिभक्ति का परिचय देते हुए वे युद्ध कर रहे थे। जब वे युद्ध के मैदान में आगे बढ़े तो उन्होंने भीषण संघर्ष किया। वानरों से भिड़कर वे घोर युद्ध करने लगे। अपने प्रहारों से वानर सेना में खलबली पैदा करते हुए उन पर उन्होंने घोर प्रहार किये। युद्ध करते हुए एक दूसरे को खदेड़ने लगे। वानर समूह भी राक्षसों पर प्रहार कर उन्हें खदेड़ने लगे। वे एक दूसरे पर आक्रमण कर अपनी पूरी शक्ति का प्रदर्शन कर रहे थे। भाँति-भाँति के अस्त्र-शस्त्रों के प्रहार से वे सभी अपनी रण-कुशलता का परिचय दे रहे थे तथा अपने साथी सैनिकों को संघर्ष की प्रेरणा दे रहे थे। वे उछल-उछल कर इधर-उधर भाग जाते थे। इस प्रकार वानर समूह राक्षसों से किसी भाँति भी संघर्ष में पीछे न था। वे राक्षसों को भ्रम में डाल देते थे। इस प्रकार वे पूर्ण सफलता प्राप्त कर रहे थे।

209

राक्षसगण वानर सेना पर भाँति-भाँति के शस्त्रों से प्रहार कर रहे थे। वे हंसिए की भाँति के शस्त्र चला-चला कर वानरों का संहार कर रहे थे। वानरों पर आक्रमण कर उनको वे मृत्यु के घाट उतार रहे थे। वे कृपाणों से मार रहे थे, जालों में फाँस रहे थे, भाले से आक्रमण कर रहे थे तथा अस्त्रों - शस्त्रों को वानरों के शरीरों में भोंक-भोंक कर क्रूरता से उनका वध कर रहे थे। वानर -समूह भी प्रत्युत्तर में भीषण संघर्ष कर रहे थे तथा राक्षसों से भिड़ कर पूरी तरह टक्कर ले रहे थे। वे वीरता से राक्षसों को लज्जित भी कर रहे थे। वे भी शत्रुओं को दाँतों से काट-काट कर भयभीत कर रहे थे। उनके शरीर में अपने तीव्रनखों को वे भोंक रहे थे तथा उनसे भिड़ रहे थे। इस प्रकार दोनों ही सेनाएँ परस्पर भीषण संघर्ष में लीन थीं और एक - दूसरे को नष्ट करने को उद्यत थीं। सैनिक एक दूसरे से संघर्ष करते हुए वीरता प्रदर्शित कर रहे थे,एक दूसरे का वे वध कर रहे थे तथा एक दूसरे पर भीषण प्रहार भी कर रहे थे। दोनों पक्षों के सैनिक इस संघर्ष में घायल हो रहे थे। दोनों पक्षों को अपार क्षति उठानी पड़ रही थी परन्तु दोनों ओर के सैनिकों में डर का लेशमात्र भी अनुभव नहीं हो रहा था। सभी दृढ़ एवं पूर्ण शक्ति से इस संघर्ष में गतिशील थे। निडर होकर एक दूसरे पर वे प्रहार कर रहे थे। उनके हृदय में संघर्ष की ज्वाला जल रही थी। एक दूसरे से वे बदला लेना चाहते थे।

210

ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे व्याघ्र एव सिंह परस्पर युद्ध कर रहे हों। ऐसा लगता था मानो सैकड़ों की संख्या में भयानक जन्तुओं का संघर्ष वातावरण को आन्दोलित कर रहा हो अथवा बड़े-बड़े नागराज एक दूसरे से गुंथकर परस्पर फणों से एक दूसरे को काट रहे हों। राक्षस सैनिकों तथा वानर समूहों के बीच ऐसा ही घोर युद्ध हो रहा था। उनमें कोई किसी से कम सिद्ध नहीं हो पा रहा था। सभी सैनिको को अपनी शक्तियों एवं रण-कौशल पर पूर्ण दर्प एवं अभिमान था। दोनों पक्षों के सैनिक महान योद्धा थे। वे युद्ध में अपनी शक्तियों का प्रदर्शन कर रहे थे। शक्तिशाली राक्षस योद्धा वानरों को संघर्ष में पीछे ढकेल रहे थे। वे तीव्रगति से बिजली की भाँति टूट पड़ते थे तथा वानर समूह को पैरों के तले रौंद देते थे। सामने आकर भीषण रुप में वानरों पर वे आक्रमण कर रहे थे

परन्तु वानर समूह भी राक्षसों से पूरी तरह डटकर टक्कर ले रहे थे। उनकी गतिविधियाँ भी वीरतापूर्ण थीं। वे शत्रुओं का सर्वनाश करने पर तुले हुए थे तथा उछल–उछल कर राक्षसों पर भीषण प्रहार कर रहे थे। उन्हें युद्ध में वे धराशायी भी कर रहे थे।

211

राक्षसों की सेना जैसे यमराज की सेना का स्वरुप बन गयी हो। उनके शरीर विशालकाय और कृष्णवर्ण के थे। कुछ ऐसे भी राक्षस थे, जिनके शरीर के अर्द्धभाग काले तथा आधे भाग श्वेत वर्ण के दृष्टिगोचर हो रहे थे। जब वे किसी पर आक्रमण करते थे, तो उसे पूर्णरुपेण नष्ट कर देते थे। उनके आक्रमण के समक्ष कोई भी ठहर नहीं सकता था। वे तुरन्त ही शत्रु के मस्तक को धड़ से विच्छत्र कर देते थे। वानर सेना भी अपनी गतिविधियों में बहुत ही कुशल थी। जब राक्षस उनको लक्ष्य बनाकर कृपाण से प्रहार करते थे, वानर उछल जाते थे। धोखा देकर अपनी रक्षा करने में वे पूर्ण सफल सिद्ध होते थे। इस प्रकार वे राक्षसों के साथ जैसे लुका–छिपी का खेल खेल रहे हों। राक्षस जिन अस्त्र–शस्त्रों का प्रयोग वानरों पर करते थे, वानर उनको असफल कर देते थे। राक्षस भी पटुता से प्रहार करते थे परन्तु उनके शस्त्र निरर्थक होकर झटके के साथ पृथ्वी पर गिर जाते थे।

212 81

कुछ राक्षस जालों को फेंक–फेंक कर वानरों को उनमें फाँसने की चेष्टा कर रहे थे। जब वानर उस जाल में फंस जाते थे, तो वे उन वानरों को अपनी ओर खींचकर नष्ट कर देते थे। बाद में वानरों ने भी उसी जाल को पकड़ कर अपनी ओर खींचना प्रारम्भ कर दिया। यह देखकर राक्षसों को बहुत आश्चर्य हुआ। वे स्वयं अपने फेंके हुए जाल में ही फंस गये। वे अपार कष्ट का अनुभव करते हुये पृथ्वी पर गिरने लगे। इस विचित्र गतिविधि से उन्हें अपार कष्ट हो रहा था। उनके हाथों से सभी जाल भी शनैः शनैः वानरों ने छीन लिये। इस प्रकार जितने भी जाल उन्होंने वानरों पर फेंके थे, वे सभी वानरों के हाथों में आ गये। उसी समय वानरों ने बहुत से राक्षसों का वध कर डाला। स्वयं अपने जालों में फंसकर राक्षसों को मृत्यु के मुंह में जाना पड़ा। वानरों ने अपने तीक्ष्ण नखों से राक्षसों के पेट फाड़ डाले। उनके पेट में गहरे घाव हो गये और रक्त प्रवाहित होने लगा। पेट फटने से उनकी आँतें भी बाहर आ गयी थीं। इस प्रकार अनेक राक्षस धराशायी हो गये थे।

213

राक्षसों की शक्ति का सर्वनाश–सा हो गया था। वे अपनी पराजय का अनुभव करने लगे थे। कुछ राक्षस अब भी वानर–समूह पर आक्रमण करते हुए आगे बढ़े। वानरों ने उनका मस्तक काट लिया। इस असफलता को देखकर महामंत्री प्रहस्त अत्यन्त दुःखी हुए। वे क्रुद्ध हो गये। वे अपनी पूरी शक्ति का प्रयोग करने के लिए आगे

बढ़े। उन्होंने शीघ्र ही अपने रथ की गति को तीव्र कर दिया तथा अपने विशाल धनुष की प्रत्यंचा पर भीषण बाण चढ़ा लिया। उनके बाणों में भी अपार शक्ति थी। सम्पूर्ण तैयारी से उन्होंने शर-संधान करना प्रारम्भ कर दिया। वानरों के मस्तकों को काट-काट कर वे पृथ्वी पर बिखराने लगे। उनके तीक्ष्ण बाणों ने वानरों पर भीषण प्रहार किया जिसके कारण अनेक वानरों का वध होने लगा। प्रहस्त के तीक्ष्ण बाणों ने वानरों के शरीर वेध दिये।

214

इस प्रकार सहस्त्रों वानरों का संहार एक साथ ही होने लगा। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वानरों का सर्वनाश हो जायेगा। बहुत से वानरों को प्रहस्त ने बाण-वर्षा कर घायल कर दिया। उनकी नाक उनकी ठोढ़ी से टूटकर अलग हो गयी। उनके वक्षस्थल बाणों से फट गये। उनकी कमर की रीढ़ें टूट कर बाहर निकल आयीं। उनकी भुजाऐं, बाहें और शरीर की अन्य हड्डियाँ टूट टूट-कर बिखरने लगीं। वानरों के शरीरों से रक्त की धाराऐं फूट-फूट कर बह रहीं थीं। यद्यपि बहुत से वानरों की ठोढ़ियों की हड्डियाँ टूट चुकीं थीं, फिर भी वे दृढ़ता से राक्षसों को मुंह से काटने में लगे हुए थे।

215

जब प्रहस्त ने दूसरी बार बाणों से घोर प्रहार किया, तो सहस्त्रों वानर उन बाणों के आघात से घायल होकर धराशायी हो गये। उनके बाणों के साथ ही, दूसरे अन्य बाण भी उन्हीं बाणों से निकल कर, आघात कर रहे थे। उन बाणों के भीषण आक्रमण से दसों दिशाओं में हाहाकर मच गया। जीवन की गति जैसे अवरुद्ध हो गयी हो। एक बाण से ही अनेक बाण निकल कर वातावरण को आच्छादित कर रहे थे। वे बाण वानर समूहों पर लगते थे। वानर सेना छित्र-भित्र होकर नष्ट-भ्रष्ट हो रही थी। बाण चूकते नहीं थे वरन सफल प्रहार करते थे। इस प्रकार बडे ही सन्तुलित ढंग से प्रहस्त ने बाण-वर्षा की और वे तीव्रगति से वानरों का संहार करने लगे।

216

इस प्रकार युद्धक्षेत्र में वानरों के शवों का ढेर लग गया। यह एक असाधारण युद्ध की स्थिति थी। उनकी इस दशा को देखकर सभी के ह्रदय में अपार करुणा का भाव जागृत हो रहा था। जो बाण वानरों के शरीर पर लगे हुए थे, उनके व्रण - चिन्ह वानरों के शरीर पर स्पष्ट दिखायी दे रहे थे। जब वानर राज सुग्रीव ने वानर सेना को इस प्रकार पराजित होते देखा, तो उनके ह्रदय में दया उमड़ आयी। उन्होंने उसका उत्तर भी सोच लिया। सुग्रीव ने शीघ्र ही नील को संकेत देकर प्रेरित किया। उन्होंने बड़ी कोमलता से अपने हाथों को ऊपर उठाकर वानर नील को सचेत किया तथा बडे ही मधुर शब्दों में उनसे कहा :

217

हे नील ! यह शान्त एवं चुपचाप रहने का अवसर नहीं है। वानर सेना के एक बहुत बड़े भाग का विनाश हो चुका है। वानरों पर भीषण् रुप से आक्रमण भी किया जा चुका है, अतएव इस आक्रमण को रोकने के लिए तुम शीघ्र ही प्रहस्त से लोहा लो। वे रावण के प्रधान मंत्री हैं, वे अच्छे बुरे कर्मों के भेद को भी भली भाँति जानते हैं, परन्तु इस समय वे युद्ध में वानरों का संहार कर रहे हैं।

218

यह सब बता कर वानर राज सुग्रीव ने शीघ्र ही वानर योद्धा नील को आदेश दिया कि वे तुरन्त ही आक्रमण कर दें। सुग्रीव के संकेत को समझकर नील ने महामंत्री प्रहस्त पर घोर आक्रमण कर दिया। उन्होंने अपने हाथों में लकड़ी का डंड ले लिया था। यह विशाल वृक्ष की एक शाखा थी। उसकी लम्बाई लगभग दस हाथ थी।

219

महामंत्री प्रहस्त निरन्तर बाणों की वर्षा कर रहे थे। उन्होंने असंख्य वानरों का वध कर डाला था। वानर योद्धा नील ने अपार शक्ति एवं गत्यात्मकता का परिचय दिया। उन्होंने प्रहस्त के बाणों को तोड़-तोड़ कर नष्ट कर दिया। इस प्रकार प्रहस्त के बाणों के सभी आक्रमणों को नील ने असफल कर दिया।

220

नील की इस गतिविधि को देखकर प्रहस्त ने उस पर घोर बाण-वर्षा की। नील को कोई भी बाण नहीं लग सका। शरीर में घाव होने का तो कोई प्रश्न ही नहीं उठता था। नील युद्धकला एवं आत्म-रक्षा में पूर्ण निपुण थे। उनको अपनी सुरक्षा के कई प्रकार के उपाय ज्ञात थे। प्रहस्त के सभी प्रहारों को उन्होंने बड़ी सहजता से असफल सिद्ध कर दिया।

221

वास्तव में यह युद्धक्षेत्र एक सागर की भाँति लम्बा, चौड़ा तथा विशाल था। उस विशाल सागर में महामंत्री प्रहस्त के बाण जल की भाँति थे। नील उसमें बड़वानल के उस छिद्र की भाँति थे, जो सागर की भीषण अग्नि से उस जल को सुखा रहा था। उसका डंड उस अग्नि की ज्वाला की भाँति था, जो सभी बाणों के प्रहार को नष्ट कर रहा था।

222

सम्पूर्ण विश्व को भस्मसात करने की क्षमता महामंत्री प्रहस्त के बाणों में थी। उनके बाण अत्यन्त तीक्ष्ण एवं अग्नि की ज्वालाओं की भाँति थे। जिस वानर पर भी वे प्रहार करते थे, वही जलकर राख हो जाता था। योद्धा नील एक संवर्तक काले मेघ की भाँति थे। उनका डंड वर्षा की भाँति था। वह उन बाणों की अग्नि को शीतलता में परिवर्तित कर रहा था। महामंत्री प्रहस्त के बाण अग्नि की भाँति होते हुए भी इसी कारणवश शीतल हो जाया करते थे और उनका प्रभाव नष्ट हो जाता था।

223

अब महामंत्री प्रहस्त ने पहले की अपेक्षा सैकड़ों गुना तेज शक्ति वाले बाणों की भीषण वर्षा शुरु की, परन्तु वीर योद्वा नील को वे किसी प्रकार का भी आघात पहुंचाने में पूर्णतः असफल रहे। नील एक महान योद्वा थे। यद्यपि कभी-कभी उन्हें भी युद्व में पीछे हटना पड़ा परन्तु प्रहस्त के बाण उनका अनिष्ट न कर सके। वे बाण वानरों के प्रति अवश्य घातक सिद्व हो रहे थे। उनसे वानर हताहत हो रहे थे, पर नील अपनी रण कुशलता के कारण पूर्णतः सुरक्षित थे।

224 (रव कर

उनके डण्ड की गतिविधि विलक्षण थी। उसको घुमाते हुए कोई देख नहीं पा रहा था। उसकी गति इतनी तीव्र थी कि केवल उसका अस्तित्व एक लकड़ी के गोल एवं चौड़े लट्ठे की भाँति ही दिखायी दे रहा था। उनके हाथों की कुशलता एवं गति का पता लगाना भी संभव नहीं था। उसको देखकर प्रहस्त सहित सभी राक्षस योद्वा आश्चर्यचकित रह गये। सभी यह कह रहे थे कि किसी योद्वा को इस रुप में इतनी गतिमयता से युद्व करते उन्होंने कभी नहीं देखा था।

225

अपनी असफलता का अनुभव करते हुए उन्होंने (प्रहस्त ने) अपने शरों का संधान करना बन्द कर दिया। उन्होंने बाणों को एक ओर फेंक दिया और वे पीछे की ओर लौट पडे। बाद में नील का एक दण्ड - प्रहार महामंत्री प्रहस्त के वक्षस्थल पर लगा। यह प्रहार मानो एक विवेकपूर्ण उत्तर था जो उस व्यक्ति को दिया गया था जो ज्ञान-विज्ञान का अच्छा ज्ञाता था। इसीलिए इस विवेकी व्यक्ति पर ही जानबूझकर नील ने आक्रमण किया। उनके प्रहार का लक्ष्य अब केवल महामंत्री प्रहस्त ही थे।

226

बहुत अधिक श्रान्त होने के कारण महामंत्री प्रहस्त शक्तिहीन-से हो गये। उन्होंने अपनी ओर से पूरा प्रयत्न किया। वे पूरी शक्ति से फिर वानर सेना पर आक्रमण करने में समर्थ हो सकें, यह उनका प्रयास था। परन्तु अब यह उनके लिए संभव नहीं था। इसीलिए उन्होंने फिर अपने बाणों से वानर-सेना को नष्ट करने का प्रयत्न आरंभ किया। वास्तव में वे युद्ध में इतने थक चुके थे कि उनके बाण अपनी उष्णता एवं तीक्ष्णता को भी खो चुके थे। इसीलिए उनके बाण व्यर्थ सिद्ध हो रहे थे। वीर योद्धा नील अब युद्ध-क्षेत्र में उनके बहुत निकट आ पहुंचे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे अपनी गतिविधियों को युद्ध में तीव्रतर करते जा रहे थे।

227

सर्वप्रथम नील ने प्रहस्त के रथ के एक घोड़े पर भीषण प्रहार किया, जिससे उसके मुख का अग्रभाग फट गया। उसकी ग्रीवा मुड़ी हुई दृष्टिगोचर हो रही थी। नील ने उसे पकड़ कर तोड़ डाला। उन्होंने प्रहस्त के रथ पर भी आक्रमण कर उसे नष्ट-भ्रष्ट कर डाला। नील ने प्रहस्त के रथ पर दो बार आक्रमण किया। इस प्रकार इस प्रमुख वीर वानर नील ने अद्भुत रण-कौशल का अच्छा परिचय दिया।

228

महामंत्री प्रहस्त भी एक रण कुशल योद्धा थे। रथ के नष्ट होते ही वे शीघ्र ही उछल कर अलग जा खड़े हुए। उन्होंने अपने हाथ में वज्र की भाँति कठोर मूसल धारण कर लिया। अपने रथ के नष्ट होने पर भी न तो उनके मन में किसी प्रकार के भय की भावना थी, न वे भ्रमित एवं चौंके हुए से दीख रहे थे। उनका हृदय आत्मविश्वासपूर्ण एवं दृढ़ था। उनमें अभिमान एवं दर्प भी बहुत था। अभिमानी होने के कारण ही उनके विचारों में अपार दृढ़ता थी।

229

उन्होंने अपने शस्त्र मूसल को ऊपर उठा कर आक्रमण किया। उसी अवसर पर नील ने भी अपने डंड को सीधा कर उन पर प्रहार करने की योजना बनायी। दोनों ही योद्धा अपने-अपने लक्ष्यों को पूरा करने के लिए कटिबद्ध थे। क्रोधावेश में दोनों योद्धाओं ने एक-दूसरे पर भीषण प्रहार किये। कोई भी वीर अपनी पराजय स्वीकार करने को तैयार नहीं था। दोनों ही अपार शक्तिशाली थे। उन दोनों के शरीर फौलाद की भाँति कठोर थे।

230

महामंत्री प्रहस्त का कवच रबड़ का था। जब नील ने उन पर आक्रमण किया, तो वे उछलकर एक ओर जा खड़े हुए। ऐसा प्रतीत होता था कि योद्धा नील का शरीर जैसे लौह का शरीर हो तथा उसकी शक्ति भी अपरिमित थी। जब प्रहस्त ने उन पर मूसल के आकार की गदा से प्रहार किया, तो वे बड़ी प्रसन्नता से उसे झेल गये। उनको घबराहट नहीं हुई। वे अपने स्थान पर स्थित रहे।

231

वास्तविकता यही थी कि दोनों ही योद्धा समान रुप से शक्तिशाली थे। भीषण युद्ध के पश्चात् भी वे एक दूसरे को घायल न कर सके। एक दूसरे पर आघात करने में कोई भी किसी से पीछे नहीं था। वे पूरी शक्ति से परस्पर संघर्ष कर रहे थे। दोनों योद्धा भयानक और क्रूर व्यक्तियों की भाँति युद्ध कर रहे थे। वे दोनों ही रण–कुशल तथा प्रवीर थे। दोनों क्रोधाग्नि में जलते हुए परस्पर प्रहार कर रहे थे। अवसर पाकर वे दोनों संभलने के लिए कुछ क्षणों को पीछे भी हट जाते थे और अलग–अलग हो जाते थे। वे दोनों ही योद्धा अपने–अपने शस्त्रों–मूसल तथा डंड – को बार–बार घुमाते थे।

232

महामंत्री प्रहस्त की गति ऐसी थी जैसे वे नृत्य कर रहे हों। उनका शरीर काफी लचीला था। वे महान योद्धा, दृढ़ प्रतिज्ञ, शक्ति–संपन्न लौह पुरुष की भाँति कठोर थे। वे साहस–पुंज थे तथा उनकी कटि एवं रीढ़ का भाग सीधा एवं सुन्दर था। उनका सम्पूर्ण व्यक्तित्व आकर्षक था।

233

वानर नील का शरीर भी गठा हुआ, स्वस्थ एवं सुन्दर था। वे भी जैसे नृत्य ही कर रहे थे। वे बड़ी सुगमता से उछल जाते थे। वे बड़े ही अनुशासित ढंग से आगे बढ़ते थे। उनकी पूंछ भी बहुत ही सुन्दर एवं आकर्षक थी। उनकी गतिविधियाँ बहुत ही तीव्र एवं गतिमय थीं। ऐसा लगता था जैसे वायु के झोंके किनारों को प्रभावित करते हुए उनका स्पर्श करते हों।

234

इस प्रकार नर्तन करते हुए दोनों योद्धा एक दूसरे पर भीषण आघात कर रहे थे। प्रहस्त एवं नील दोनों ही

भयानक रुप से संघर्षरत थे। पूर्ण गति से दोनों योद्धा पैतरे बदल-बदल कर घोर युद्ध कर रहे थे। कभी पास-पास आकर वे भिड़ जाते थे, उसके पश्चात् अलग-अलग होकर दोनों योद्धा पुनः युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाते थे। वे एक दूसरे पर भीषण प्रहार कर रहे थे तथा एक दूसरे की शक्ति को देखकर आश्चर्यान्वित हो रहे थे। कोई किसी पर भीषण रुप से जब आक्रमण कर देता, तब दूसरा भी उतना ही कठोर उत्तर देता था। इस प्रकार इन दोनों महान योद्धाओं का युद्ध निरन्तर चल रहा था।

235

वे एक दूसरे का पीछा करते हुए कभी-कभी उन्हें काफी पीछे लौटा देते थे। चक्र की भाँति वे चारों ओर घूम रहे थे। वायु भी जैसे शब्द करती हुई उनके साथ ही चल रही थी। पत्तियाँ एवं फूल वायु के तीव्रगति से चलने के कारण उड़ रहे थे तथा इधर-उधर बिखर रहे थे। बाद में वातावरण इतना धूमिल हो गया कि वे दोनों वीर स्पष्टतः दृष्टिगोचार भी नहीं हो पा रहे थे।

236

ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे मन्दराचल पर्वत के माध्यम से समुद्र मन्थन हो रहा हो और ओसकण तथा मेघ एक ही साथ उसको ढके हुए हों। प्रधान वानर योद्धा नील तथा महामंत्री प्रहस्त परस्पर युद्ध करते हुए गुंथ गये थे। आपस में एक दूसरे को खदेड़ने तथा शस्त्रों के घुमाने आदि से बहुत अधिक धूल उड़ रही थी। इससे सम्पूर्ण वातावरण आच्छादित था।

237

ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे परस्पर एक दूसरे का पीछा करते हुए वे दोनों वीर चक्र की भाँति घूम रहे हों। वे ऐसे घूम रहे थे जैसे रथ के पहिए घूम रहे हों। कभी ऊपर की ओर जाते थे तो कभी नीचे की ओर। दोनों ही अपनी-अपनी गतिविधियों में बेजोड़ थे। वे आत्म-रक्षा करते हुए संघर्ष कर रहे थे। एक के बाद एक वे एक दूसरे का पीछा करते थे। वे दोनों अपनी-अपनी वीरता सिद्ध करने का पूर्ण प्रयास कर रहे थे तथा किसी न किसी रुप में अपनी दृढ़ता का परिचय दे रहे थे।

238

नील बहुत ही सचेत होकर आक्रमण कर रहे थे। वे सदैव ही शत्रु को धोखा देते हुए एक विचित्र परिस्थिति में डाल देते थे। शीघ्र ही प्रहस्त का पीछा करते हुए वे ऊपर आकाश में उड़ जाते थे तथा प्रहस्त

को नीचे ही छोड़ देते थे। ऐसा लग रहा था जैसे वे दोनों योद्धा एक झूले पर झूला झूल रहे हों। जब महामंत्री प्रहस्त ऊपर की ओर जाते, तो नील नीचे की ओर आ जाते थे। इस प्रकार विभिन्न प्रकार से दोनों योद्धा अपने-अपने रण कौशल का परिचय दे रहे थे।

239

जब नील आकाश से पृथ्वी की ओर आते थे तो वे राजनीतिक दाँव-पेंचों की कुशलता का भी परिचय देते थे। वे तुरन्त एक विशाल शिलाखण्ड अपने हाथों में ले लेते थे। यह फौलाद की भांति कठोर होते था। जिस समय वे अपने हाथ में शिलाखण्ड लेते थे तो वह औरों को स्पष्ट दिखायी नहीं देता था। वे अत्यन्त तीव्रगति से उसे चलाते थे। इसके साथ ही साथ ऊपर उड़ने में भी वे बड़ी ही चतुरता का परिचय देते थे। वे प्रहस्त का निरन्तर पीछा कर रहे थे।

240

जब महामंत्री प्रहस्त नीचे की ओर होते, तो नील उंन्हें खदेड़ कर और भी नीचे कर देते थे। वहीं पर प्रहस्त धोखा खा जाते थे। नील ने एक बार उनके ऊपर बड़े शिलाखण्ड से प्रहार किया। उस शिलाखण्ड के गिरने के उसके नीचे प्रहस्त दब गये। उनकी गरदन पर भी भीषण आघात हुआ। प्रहस्त का मस्तक विदीर्ण हो गया। उनकी आँखें निकल पड़ीं तथा वे दूर जा गिरीं।

241

प्रहस्त की कमर टूट गयी। उनका स्वर्ण-कवच भी टूट कर नष्ट हो गया। उनके शरीर से रक्त की धाराएँ बह निकलीं। रक्त के उस रंग की उपमा उस तपाये हुए लौह से दी जा सकती है, जो जलकर लाल रंग का हो जाता है। ।

242

जब प्रहस्त का वध नील ने कर दिया, तब अत्यधिक भयभीत होकर राक्षस-गण इधर-उधर भागने लगे। वे भय के कारण आत्मरक्षा का प्रयत्न कर रहे थे। वे युद्धक्षेत्र को छोड़ कर फिर पीछे लौट आये थे और प्राण-रक्षा के लिए भागने लगे थे। वीर वानर नील ने उनका पीछा किया। वे उनको धक्के दे-देकर धराशायी कर रहे थे। पैरों के तले उन्हें रौंदते हुए नील चले जा रहे थे। यह दृश्य ऐसा था जैसे मदमाता सिंह जंगली पशुओं पर आक्रमण कर रहा हो और उसको रोक पाना असंभव हो।

243

लगता था मानो राक्षस प्रचण्ड वायु के वेग में उड़ गये हों। उनकी सम्पूर्ण शक्तियाँ समाप्त हो चुकी थीं। वे सभी युद्धस्थल को छोड़कर भाग निकले। किसी भी राक्षस योद्धा में इतनी सामर्थय नहीं थी कि वह नील से टक्कर लेता। सभी राक्षस थके एवं हारे हुए से दिखायी दे रहे थे। वे राजमहल की ओर दौड़े चले जा रहे थे। ऐसा प्रतीत होता था कि जैसे उन्हें किसी ने लूट लिया हो। वे राजमहल में आकर रुदन करने लगे। रावण को उन्होंने विस्तार सहित पूरा समाचार दिया।

शक्ति एवं दृढ़ता थी। वे एक क्रूर पराक्रमी योद्धा की भाँति गर्जना करने लगे।

अध्याय – 22

1

प्रधानमंत्री प्रहस्त युद्ध क्षेत्र में धराशायी हो गये। यह सूचना दशमुख रावण को दी गयी। उसका हृदय इस भीषण घटना को सुनकर काँप उठा। उसके मन में डर की भावना उत्पन्न हो गयी। वह दुःखी एवं त्रस्त होकर लंकापुरी के प्रधान द्वार पर जाकर खड़ा हो गया। उसकी आभा पीतवर्ण की हो गयी थी। उसके पश्चात् उसने कहा :

2

हे राक्षस गण ! आप सब मिलकर मेरे छोटे भाई कुम्भकर्ण को जागृत करने की कृपा करें। वह कुछ भी स्मरण नहीं रखता और सदैव सोता ही रहता है। उसके समक्ष अच्छी बातों एवं विचारों का कोई महत्व नहीं होता है। वह महिष की भाँति है। वह सदैव ही भ्रमित रहता है। इसका उसको दुःख भी नहीं है क्योंकि वह सभी बातों के प्रति अन्धा एवं अनभिज्ञ सा बना रहता है।

3

जब दशमुख रावण ने इस प्रकार का आदेश दिया तो सभी राक्षसगण शीघ्र ही उठकर खड़े हो गये। वे कुम्भकर्ण के निकट आकर ढोल आदि भाँति–भाँति के वाद्य–यंत्र बजाने लगे। कुछ अन्य राक्षगण रण वाद्य के रुप में भेरी बजाने लगे। वे ढोल, मंजीर, ताशे, गामलान आदि मधुर स्वरों वाले वाद्ययंत्र एवं भीषण नाद करने वाले रण वाद्यों को भी बजाने लगे। यही कारण था कि ढोल आदि वाद्यों के स्वर वातावरण में गूंज रहे थे तथा भाँति–भाँति के वाद्य यंत्रों का मिश्रित स्वर चारों ओर सुनायी दे रहा था।

4

अन्य वाद्य यंत्रों के साथ गामलान वाद्य का स्वर भी सुनायी दे रहा था। यह स्वर प्रतिध्वनित हो रहा था। इनके भीषण रव से सारा वातावरण ही गुंजित हो उठा था। उद्घोषक वाद्ययंत्रों का यह स्वर वज्रपात – सदृश भयानक था। यद्यपि चारों ओर घोर रव मुखरित हो रहा था, फिर भी जिस योद्धा को जागृत करने के लिए यह सब किया जा रहा था, उसके कर्णकुहरों पर इसका कोई प्रभाव ही नहीं पड़ रहा था। इसीलिए उसकी निद्रा भी भंग नहीं हो पा रही थी। आलस्यपूर्ण एवं थकी हुई उंगलियों से वे लोग वाद्य – यंत्र बजा –.बजा कर कुम्भकर्ण को जगा रहे थे।

5

जो लोग कुम्भकर्ण को जगाने का प्रयास कर रहे थे,वे भ्रम में पड़े हुए थे। जिस व्यक्ति को जागृत किया

जा रहा था उसकी निद्रा नहीं टूट रही थी। इस स्थिति में सभी राक्षसों ने अपनी-अपनी बुद्धि से कार्य करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ राक्षस उसके शरीर को अपने दाँतों से काटने लगे। कुछ ऐसे भी थे, जो अपने बड़े-बड़े कठोर नखों को उसके शरीर में चुभो रहे थे,परन्तु कुम्भकर्ण का शरीर इतना कठोर एवं शक्तिशाली था कि उनके नखों के किनारे ही टूट-टूट कर नष्ट हो गये। उसे जगाने के लिए कुछ राक्षस जाल डाल कर उसे खींच रहे थे। ऐसा करने से उनका जाल भी नष्ट-भ्रष्ट हो गया था।

6

कुछ ऐसे भी प्रवीर थे जो अश्वारोहियों की भाँति तीव्र गति से आगे भागे जा रहे थे। वे कुम्भकर्ण का शरीर कुचलते एवं रौंदते हुए उसके शरीर के ऊपर दौड़ लगा रहे थे या वेगपूर्ण गति से चल रहे थे। उन्होंने लगभग पाँच सौ हाथियों से कुम्भकर्ण का विशाल शरीर कुचलवाया। उन सबका विचार था कि जब तक कुम्भकर्ण का शरीर हाथियों द्वारा रौंदा नहीं जायेगा,तब तक वह जागृत नहीं हो सकेगा।

7

एक बहुत विशाल रथ भी वहाँ पर लाया गया। कुम्भकर्ण के शरीर को राजमार्ग की भांति मान कर वह रथ उस पर चलाया गया। उसके शरीर को यह अनुभव कराया जा रहा था कि उस पर रथ के पहिये चल रहे हैं और वह दबाया जा रहा है। गामलान वाद्ययंत्रों के गुरुगंभीर स्वर भी उसको सचेत नहीं कर पाये अतएव वह प्रयास भी व्यर्थ ही गया। राक्षसगण क्रुद्ध होकर कुम्भकर्ण की निद्रा भंग करने का प्रयत्न करते रहे, फिर भी उनको सफलता प्राप्त न हो सकी।

8

उनके सभी प्रयास व्यर्थ सिद्ध हुए। कुम्भकर्ण को जगाने का यह उपाय उचित नहीं था। उसे ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उसके प्रति घोर अन्याय किया जा रहा था। अतएव जब उसकी निद्रा भंग हो गयी और वह जागृत होकर बैठ गया तो उसे राक्षसों का आचरण विचित्र सा लगा। उसने अपनी आंखों को पोंछा। जगने के बाद उसने यह कहा :

9

ऐसी क्या विशेष आवश्यकता पड़ गयी थी कि मेरी निद्रा भंग की गयी ? उसके इस प्रश्न को सुनकर जितने भी राक्षस वहाँ पर उपस्थित थे, वे अत्यन्त प्रसन्न हो गये। कुम्भकर्ण से प्रार्थना करते हुए उन्होंने निवेदन किया। हे महाराज ! यह सब कार्य राजा रावण की आज्ञानुसार ही किया जा रहा है । उन्होंने आदेश दिया है कि

आपको शीघ्रातिशीघ्र जगाया जाय। शत्रु ने हम सब पर भीषण आक्रमण कर दिया है। हमारे महामंत्री,जो प्रधान सेनानायक भी थे,इस भीषण युद्ध में धराशायी हो चुके हैं।

10

इन्हीं शब्दों में राक्षस सेना के सैनिकों ने कुम्भकर्ण से निवेदन किया कि वे राजमहल में जाकर महाराज रावण से भेंट करने की कृपा करें। उसके पश्चात् कुम्भकर्ण ने अपने मुख को विधिवत् जल से धोया तथा अपने शरीर की सज्जा के लिए वस्त्राभूषण आदि धारण किये। अपने वस्त्रों को बदला तथा भाँति-भाँति के पुष्प और सुगन्धित वस्तुओं से अपने शरीर को सुवासित किया। उसके पश्चात् वह अपना कलेवा करने के लिए आगे बढ़ा। निद्रा से उठकर वह सदैव ही कलेवा किया करता था। पकाकर उसको ढेर का ढेर भात परोसा गया। उसने एक ही बार में उसे खा लिया।

11

भाँति -भाँति की सब्जियाँ, फल, सिंह का माँस तथा बड़े-बड़े गजों का माँस उसके भोजन के लिए पकाया गया। सभी सामग्री विधिवत् प्रस्तुत की गयी। सभी वस्तुएँ उसके पास रक्खी गयीं। ने सैकड़ों घड़े एक साथ ही पी लिये। कुछ ही क्षणों में सम्पूर्ण पेय पदार्थों को भी उसने समाप्त कर दिया।

12

जब कुम्भकर्ण ने विधिवत् अपना कलेवा समाप्त कर लिया, वह राजमहल में रावण से मिलने के लिए चला गया। भीतर प्रवेश करने के पश्चात् वह अपने बड़े भाई रावण के समक्ष उपस्थित हुआ। उस समय रावण बहुत दुःखी एवं चिन्ताग्रस्त अवस्था में महल में बैठा हुआ था। उसका मन बहुत व्याकुल हो रहा था। उसके मुख की कान्ति पीली पड़ गयी थी। वह त्रस्त-सा बैठा हुआ था। उसका हृदय भय से धड़क रहा था। इन बातों से स्पष्ट संकेत मिल रहा था कि रावण बहुत ही भयभीत एवं घबराया हुआ है। उसके शब्द भी अब धीरे-धीरे ही निकल रहे थे। कठोर,घोर कर्कश वाणी समाप्त हो चुकी थी।

13

हे छोटे भाई ! आजकल एक बड़ी विकट परिस्थिति में हम सब फंस गये हैं। तुम्हें भी यह सुनकर आश्चर्य एवं भ्रम उत्पन्न हो सकता है कि हम सब पर एक भीषण विपत्ति आ गयी है। तुम तो सदैव ही निद्रामग्न रहते हो। कभी भी तुम्हें किसी बात का स्मरण नहीं रहता है। यह एक विचित्र स्थिति है। क्या तुम्हें इस बात का पता नहीं है कि तुम्हारा शत्रु तुम्हारे द्वार पर खड़ा है ? उस शत्रु के साथ असंख्य वानरों की एक विशाल

सेना भी है।

14

उस शत्रु ने हमारे बहुत से योद्धाओं एवं सैनिकों का वध कर डाला है। मित्रघ्न, कुम्भ, धूम्राक्ष, विरुपाक्ष, अकम्पन, प्रहस्त आदि अनेक योद्धा युद्ध में धराशायी हो चुके हैं।

15

हमारे सभी प्रधान तथा वीर राक्षस योद्धा युद्ध में मारे जा चुके हैं। उनके साथ ही शक्तिशाली सैनिकों को भी वीरगति प्राप्त हो चुकी है। यद्यपि उन्होंने अपने प्राणों का युद्ध में उत्सर्ग कर दिया है, फिर भी हमें कोई सफलता प्राप्त नहीं हो सकी है।

16

इस परिस्थिति में केवल तुम्हीं मेरे ऐसे शक्तिशाली छोटे भाई हो, जिससे सहायता की आशा की जा सकती है। तुम अपने अतुलित बल के कारण निश्चय ही मेरी पूरी सहायता करने में समर्थ हो। मेरे सभी शत्रुओं का सर्वनाश तुम्हारे द्वारा ही संभव है। राम एक नीच व्यक्ति है। आक्रमण करके तुम एक बार में ही राम का वध कर सकते हो। इस प्रकार राम,लक्ष्मण तथा सुग्रीव को धराशायी करने में तुम पूर्णतः सक्षम हो।

17

आज वह अवसर आ गया है जब बड़े भाई के प्रति तुम्हारे प्रेम का पूरा परिचय मिलना चाहिए। जब तुम मेरे शत्रुओं का संहार कर दोगे तो मैं तुम्हारे बड़े भ्राता के रुप में अपने को धन्य समझूंगा। तुम मेरे शत्रुओं को समूल नष्ट कर दो और मेरे मन को निर्मल एवं आनंदित कर दो। इससे युद्ध–क्षेत्र में तुम्हारे अपार शौर्य का परिचय भी प्राप्त हो सकेगा। सम्पूर्ण विश्व में तुम्हारे यश का प्रकाश भी बिखर जायेगा।

18

तुम्हारे साथ युद्ध में राम की पराजय निश्चित है। तुम्हारा व्यक्तित्व एवं चरित्र ही विजय का प्रतीक है। भूतकाल में भी इसे स्पष्टतः देखा जा चुका है। क्या तुम्हें स्मरण नहीं है कि देवतागण भी तुम्हारे प्रति स्वामिभक्ति रखते हैं ? तीनों लोक के लोग तुम्हारा सम्मान करते हैं। सभी तुम्हारे पराक्रम के कारण तुमसे भयभीत रहते हैं।

19

रावण की सभी बातों को सुनकर कुम्भकर्ण ने उत्तर दिया " मैं कुछ नहीं समझ पा रहा हूं कि वास्तव में आप मुझसे क्या कहना चाहते हैं। यह भी समझ नहीं पा रहा हूं कि मुझे इस समय क्या कहना चाहिए। मैं स्वयं भ्रम में पड़ गया हूं। इस भीषण परिस्थिति में क्या करना चाहिए, इसे मैं समझ नहीं पा रहा हूं।

20

इस विषय में आपको परामर्श देना ही उचित है और मुझे ऐसा लगता है कि आपके द्वारा कही सभी बातों को स्वीकार करना संभव नहीं है। अब तो इतनी देर भी हो गयी है कि परामर्श देना भी व्यर्थ ही है। आपको अपने पर बहुत अधिक गर्व है। यह झूठा घमंड आपके सम्पूर्ण व्यक्तित्व पर छाया हुआ है और उसे ढके हुए है।

21

इस समय बहुत सी ऐसी उचित बातें कही जा सकती हैं,जो बहुत ही लाभ दायक होंगी। सम्पूर्ण कुलवर्ग की सुरक्षा के लिए भी वे सभी बातें बहुत ही आवश्यक हैं। आज राम के विरुद्ध युद्ध में आपके अनेक शक्तिशाली प्रवीर योद्धा धराशायी हो चुके हैं। इस संबंध में तो कुछ किया नहीं जा सकता है। अब शोक या दुःख प्रकट करने का भी कोई अर्थ नहीं है।

22

इससे पहले भी आपको उचित एवं विचारपूर्ण राय दी गयी थी। उसे मानकर आप अपनी सुरक्षा की दिशा में बढ़ सकते थे। जब आपने मंत्रणा के लिए सभा का आयोजन किया था, तब भी आप भ्रम में ही पड़े हुए थे। उस समय आपको उचित बातों का स्मरण दिलाया गया था,उनको आपने बहुत हेय दृष्टि से देखा व सुना था। जितनी उचित राय एवं शिक्षाएँ आपको दी गयीं वे आपने अनुसुनी कर दीं तथा उनके प्रति आप उदासीन रहे। आप सदैव ही उनका मजाक उड़ाते रहे।

23

आपने कभी भी किसी उचित बात पर कोई ध्यान नहीं दिया। इसके विपरीत सभी औचित्यपूर्ण बातों का आप सर्वथा विरोध ही करते रहे हैं। बधिर मछली की भाँति आपको अपने पर सदैव ही अत्यधिक गर्व रहा है इसीलिये किसी भी उचित बात को आप सुनने को तैयार नहीं रहे। आपके कर्ण–कुहर वास्तव में किसी उचित राय को सुनने के लिए उद्यत नहीं थे।

24

आपके हितैषी एवं छोटे भाई विभीषण ने कई परिस्थितियों के प्रति आपको सचेत किया था। उन्होंने आपसे यह भी कहा था कि भविष्य में आपको भीषण संघर्षो का सामना करना पड़ेगा। अब तो आपके अस्तित्व को भी सुरक्षा की आवश्यकता है। इसके प्रति उन्होंने आपको पहले से ही सावधान कर दिया था, उनके शब्दों पर भी आपने कभी कोई ध्यान नहीं दिया। वास्तव में अपने बड़े भाई के रुप में उन्होंने आपको उचित शिक्षाएँ ही दी थीं।

25

कई प्रमाण प्रस्तुत करते हुए उन्होंने आपको स्पष्ट संकेत दिये थे। आपने उनको समझने से पूरी तरह इन्कार कर दिया। आपके प्रति प्रेम के कारण ही उन्होंने यह सब आपसे कहा था। वास्तव में उनके वे शब्द अमृतमय थे और आपको अमरत्व प्रदान कर सकते थे, परन्तु बड़े दुःख का विषय है कि आपने उनको अलग कर दिया। वे सभी उपदेश आपके हृदय के अभिमान में डूब गये और मूल्यहीन हो गये।

26

आप बताइये कि क्या विभीषण एक अनुभवी व्यक्ति नहीं हैं ? क्या किसी पवित्र एवं उच्च चरित्र वाले व्यक्ति के उचित शब्दों का आदर नहीं करना चाहिए ? क्या विभीषण को धर्म अथवा पवित्र कृत्यों का वास्तविक ज्ञान नहीं है ? वास्तव में उनको इस विषय का पूर्ण ज्ञान है,परन्तु बड़े ही आश्चर्य का विषय है कि आप सभी बातों को भली भाँति जानते हुए भी उनकी अवहेलना करते रहे हैं।

27

वास्तव में विभीषण का गौरवमय व्यक्तित्व आँख की कोर की भाँति महत्वपूर्ण है। उनके विचारों का सदैव ही स्वागत किया जाना चाहिए था। समाज में उनकी व्यापक प्रतिष्ठा रही है। अधिकतर लोगों की यही अभिलाषा थी कि उनके परामर्श को मान लिया जाय। विभीषण आपके सहोदर भाई हैं,कोई बाहरी व्यक्ति नहीं हैं। यदि आप उनकी उचित बात पर ध्यान देते तो आपको शत प्रतिशत लाभ होता। निश्चय हीं उनकी सभी बातों को स्वीकार करना आपका कर्तव्य था।

28

परन्तु आपने अपने किसी भी पूज्य अथवा अनुभवी व्यक्ति की बात पर कभी कोई विचार नहीं किया।

आपने उस व्यक्ति का सम्मान कभी भी नहीं किया, जिसके प्रति आपके मन में सदैव ही आदर की भावना होनी चाहिए थी। जो योग्य एवं उचित है, उसका आपने सदैव ही निरादर किया है। इसके विपरीत बुरे विचारों एवं कठोर शब्दों के प्रति आपके मन में अपार आकर्षण रहा है। उन्हीं का आपने अनुसरण किया है। अब अपने कर्मों का फल आपको प्राप्त भी हो रहा है। अब आप उसका पूरा रस भी लीजिये।

29

आपको अभी तक पता नहीं है कि आप सागर की अतल गहराइयों में डूब चुके हैं। आपका अभिमान बहुत ही व्यापक है तथा आपके लोभ में सदैव ही सागर की भाँति लहरें उठती रहती हैं। आपकी रुचियाँ एवं इच्छाएँ उस सागर की विशाल लहरें हैं।

30

आपकी प्रसन्नता तीव्र चंचल लहर की भाँति है। आपका सोचने का ढंग अभिमानपूर्ण है। वह एक मूंगे की चट्टान की भाँति है। आपका क्रोध एक प्रचण्ड तूफान की भाँति है जो सभी को रौंदता हुआ निकल जाता है। आपका भ्रम एक काले मेघ की भाँति है जो सभी को आच्छादित किये हुए है।

31

आपके शब्द बड़े ही कठोर एवं अरुचिपूर्ण होते हैं। एक घातक मछली की भाँति दूसरों से घृणा करने में आपको अपार हर्ष का अनुभव होता है। आप जैसे व्यक्ति की उपमा एक विषैली मछली से दी जा सकती है। ईर्ष्या एवं द्वेष आपके हृदय में मकर की भाँति हैं जो भयानक मुद्रा में मुंह बाये सदैव ही दूसरों का भक्षण करने को प्रस्तुत रहते हैं। आपको दूसरों का अपमान करने में सुख प्राप्त होता है। आप एक विषैले सर्प की भाँति हैं।

32

आपकी करुणा तथा दया की भावना समाप्त हो चुकी है। आपकी करुणा की नौका टूट-फूट कर नष्ट-भ्रष्ट हो गयी है। आपकी विचक्षणता एंव आपका विवेक समाप्त हो चुका है अर्थात आपने उनको गिरवी रखकर खो दिया है। ईश्वर के प्रति आपका विश्वास इस प्रकार विनष्ट दिखायी देता है जैसे सहारे की लकड़ी टूट-टटू कर टुकड़ों-टुकड़ों में बिखर गयी हो। उच्च चरित्र एवं आदर्श भी आपके जीवन से समाप्त हो चुके हैं। किसी नौका के पाल सदृश वे टूट-फूट कर चूर-चूर हो गये हैं।

33

आपकी पवित्रता एवं सत्य के प्रति कोई निष्ठा नहीं है। उन सबको आपने त्याग दिया है, इसीलिए वे सभी आपसे दूर चली गयी हैं। आपकी प्रार्थना एवं ईश्वर–प्रेम उस अथाह धन–राशि की भाँति है, जो नष्ट हो गयी है। आपके मन का प्रेम भी आपसे अलग हो गया है। यह आपकी करुणापूर्ण स्थिति है। आपकी यह करुण स्थिति उस बड़वाग्नि की भाँति है,जो लंका के वैभव रुपी सागर के सम्पूर्ण जल को सोख रही है।

34

आपके अन्य सभी मित्रगण चाटुकार और स्वार्थी हैं। वे अनेक विपत्तियों एवं कष्टों को उत्पन्न करने का कारण बने हुए हैं। दूसरों को हानि पहुंचाने में ही उनको आनंद आता है। इस प्रकार आप सभी लोग इस संसार की शान्ति भंग कर उसका विनाश करना चाहते हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि अब आपकी शक्तियों का इस जगत में ह्रास होता जा रहा है। अब यह स्पष्ट हो गया है कि आप निश्चय ही अपने को नरक की ओर ढकेल रहे हैं।

35

आप लोग इस विश्व में पूरी तरह मनमानी करते रहे हैं। जैसा भा आपको रुचिकर लगता रहा है,निरंकुश होकर वैसा ही आपने किया है। इससे ही अपने को आप प्रसन्न करते रहे हैं। आपकी विजय पताका विश्रृंखल समाज का प्रतीक बन कर रह गयी है। आपकी उच्छृंखलता का विरोध जब भी होता है, आप लोग डट कर भीषण संघर्ष करने लगते हैं। आपका व्यवहार दुष्टतापूर्ण है। आप लोग सदैव ही निर्दोष व्यक्तियों पर अपराध करते रहे हैं।

36

कुम्भकर्ण ने धनाढ्य व्यक्तियों पर भी आक्षेप किया। रावण पर भी उसने यही दोषारोपण किया। धनी व्यक्तियों को केवल स्वर्ण की ही पिपासा रहती है। सुवर्ण प्राप्त करना ही उनके जीवन का एकमात्र लक्ष्य होता है। उनके हृदय में अन्य लोगों की कुशलता खटकती रहती है। जो बुरी वृत्तियों के व्यक्ति हैं,उनसे ही उन्हें अपार प्रेम होता है।

37

सज्जन अपने स्वभाव के अनुसार शान्त रह कर सभी का सम्मान करते हैं। वे दूसरों के समक्ष नतमस्तक रहते हैं परन्तु आपके राक्षस मित्रगण जानबूझकर उन सज्जनों का अपमान करते हैं। यदि कोई उनका विरोध करता है अथवा उनकी बात को मानने से इन्कार करता है तो आपके मित्र क्रुद्ध होकर उन पर भीषण प्रहार करते है। वे उनके साथ दुर्व्यवहार करते हैं।

38

यद्यपि प्रत्यक्ष रुप में आप स्वयं अपनी आँखों से इन अधम कृत्यों को देख रहे हैं, फिर भी उन पर अंकुश नहीं लगाते। आपको तो अपार प्रसन्नता ही होती है। अमानवीय व्यवहारों के प्रति आपके मन में कोई घृणा का भाव नहीं है। आप कभी भी बुरा कार्य करने से किसी दुष्ट को नहीं रोकते हैं। वास्तव में आपका चरित्र भी उन्हीं लोगों की भाँति है। अपने दुष्कर्मो का फल अब आपके सामने आ गया है।

39

अब दुःखी होकर अपनी मृत्यु की कामना आपको नहीं करनी चाहिए। सभी अस्त्र-शस्त्रों एवं युद्ध के साधनों की आपके पास बहुलता है। इसी लिए आपके माध्यम से ही यह संघर्ष की अग्नि प्रज्वलित हुई। आपकी भ्रमात्मक कल्पनाएं तथा आपके बुरे विचार स्पष्ट परिणाम प्रस्तुत कर रहे हैं। इस समय छः प्रकार के शत्रु आपके हृदय को घेरे हुए हैं! निरन्तर आपके हृदय में घृणा की अग्नि प्रज्जवलित होती रहती है।

40

जिस वर्ग में भ्रमित विचारों, गतिविधियों अथवा झूठे दर्प को स्थान प्राप्त होता है, वह नष्ट हो जाता है। चाहे उस वर्ग में यक्षों का समुदाय हो, राक्षस अथवा देवताओं का समूह हो या फिर कोई अन्य हो, निश्चय ही उसका पूर्ण विनाश होता है। झूठे अभिमान की अग्नि की लपटें विनाश का संकेत देती हैं।

41

इस प्रकार रावण के छोटे भाई कुम्भकर्ण ने उससे सभी बातें स्पष्ट रुप से कह दीं। रावण के दुष्कर्मों पर उसे बहुत कष्ट हो रहा था। रावण अपने छोटे भाई के इन विचारों को सुनकर बहुत दुःखी एवं क्रुद्ध हुआ। वह बोला- हे कुम्भकर्ण ! तुझे धिक्कार है। तू एक महानीच प्राणी है। सभी तुझे वीर योद्धा की संज्ञा से विभूषित करते हैं और मेरी भी तुम्हारे प्रति सदैव यही कल्पना रही है। मुझे ऐसा लगता है कि तू अपनी सीमाओं का अतिक्रमण कर रहा है। तुझे बार - बार मुझे सभी बातों के स्मरण दिलाने की कोई आवश्यकता नही है। क्या करना चाहिए अथवा क्या नहीं करना चाहिए, इस संबंध में मुझे उपदेश देने की कोई आवश्यकता नहीं है। यदि वास्तव में तुम एक वीर योद्धा हो तो युद्धक्षेत्र में आगे बढ़ो। यदि वास्तव में मेरे प्रति तुम्हारे मन में इतना क्रोध है तो मुझसे संघर्ष करो।

42

पिछली बातों को बार – बार स्मरण कराने की इतनी क्या आवश्यकता है ? मैं समझता हूं कि इन बातों का अब कोई अंर्थ नहीं है। केवल उन बातों को सोचकर उन पर पश्चाताप करने अथवा दुःखी होने का कोई अर्थ नहीं है। बहुत अधिक बातें करने से लक्ष्य प्राप्त नहीं होता है। इसलिए विदूषक की भाँति लम्बी चौड़ी बातें करते जाना किसी वीर को शोभा नहीं देता। किसी योद्धा की सबसे बड़ी विशेषता उसकी महान शक्ति है, जिसका प्रदर्शन उसे युद्धक्षेत्र में करना चाहिए। बहुत अधिक उपदेश अथवा वाचालता उचित नहीं है। तुमने मुझे वर्तमान परिस्थिति के प्रति सजग एवं सचेत करते हुए सभी बातों का स्मरण दिलाने की चेष्टा की है। मुझे भली भाँति विदित है कि तुम वह व्यक्ति हो जो सबसे अधिक निद्रामग्न रहते हो। तुम एक ऐसे व्यक्ति हो जिसकी सोने की गतिविधियों से सभी ऊब चुके हैं। सब लोग तुमसे घृणा भी करते हैं।

43

इस प्रकार क्रुद्ध होकर रावण ने कुम्भकर्ण को उत्तर दिया। कुम्भ्कर्ण उसके समक्ष बड़ी दृढ़ता धारण किये हुए एक योद्धा की भाँति अडिग खड़ा रहा। उसके हाथों में अस्त्र – शस्त्र भी थे। वह घोर शब्द करता हुआ चिल्लाने लगा। उसने भीषण सिंहनाद किया। इससे आकाश गूंज उठा। उसके स्वर को सुनकर सभी भयभीत होने लगे। उसकी गुरु गंभीर गर्जना बड़ी ही भयानक थी। सभी चौंक–चौंक उसके भीषण स्वर को सुन रहे थे और भयभीत हो रहे थे। सभी देवतागण भय से काँपने लगे तथा आतंकित होकर घबराने लगे। यहाँ तक कि काल देवता भी सशंकित हो उठे। महादेवी काली भी चौकन्नी सी दिखायी देने लगीं। वे चौंक कर मौन हो गयीं। सम्पूर्ण वातावरण में भय व्याप्त हो गया था।

44

सम्पूर्ण विश्व में खलबली मची हुई थी। जब कुम्भकर्ण ने युद्ध के लिए प्रयाण किया,तो सभी आतंकित से दिखायी देने लगे। पृथ्वी हिलने लगी। वह कम्पित हो उठी। सभी अपने–अपने स्थान पर स्थिर हो गये। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे प्रलय होने वाली हो अथवा विनाश की वेला निकट आ गयी हो। हिमालय पर्वत की श्रेणियाँ भी हिल उठीं। सुमेरु पर्वत डोल गया। सागर में बड़ी–बड़ी भीषण लहरें गंभीर गर्जना करने लगीं। सम्पूर्ण जगत में भय व्याप्त हो गया। सभी घबराये हुए एवं चौंके हुए से थे। वे डर रहे थे। सावधानी से अपने अस्तित्व की रक्षा के लिए सभी चिन्तित थे। नाग अनंतभोग आश्चर्यान्वित होकर यह सोचने तथा अनुमान लगाने लगे कि अब कोई विषम परिस्थिति उत्पन्न होने वाली है। उन्हें आभास नहीं हो पा रहा था कि अब क्या होने जा रहा है।

45

युद्ध में प्रस्थान के उद्देश्य से कुम्भकर्ण ने स्वर्ण एवं रत्न जड़ित आभूषणों से युक्त वस्त्र धारण किये।

इनकी किरणें प्रकाश पुंज की भाँति चारों ओर प्रकाशित हो रही थीं। उनका प्रकाश इस प्रकार चारों ओर बिखर रहा था जैसे ज्वालामुखी पर्वत की लपटों से प्रकाश की किरणें फूट रही हों। कुम्भकर्ण का अस्तित्व एवं व्यक्तित्व बहुत ही भयावह था। सभी ने उसके नेत्रों से अग्नि की ज्वाला की भाँति लपटें निकलते देखीं। उसकी आँखें उसकी क्रूरता का प्रदर्शन कर रही थीं। इस भीषण दृश्य को देखकर सभी स्तब्ध रह गये। उसकी गरिमा एवं प्रकाश के समक्ष सूर्यदेवता की प्रकाश-किरणें भी गौण-सी प्रतीत हो रही थीं। सूर्य की किरणें जैसे कान्तिहीन हो गयी थीं। लग रहा था मानो सूर्य ने लज्जित होकर अपनी किरणें समेट ली हों।

46

इस प्रकार कुम्भकर्ण के व्यक्तित्व ने सम्पूर्ण विश्व में भय का भाव उत्पन्न कर दिया था। वह भगवान भैरव की भाँति गौरवशाली रुप में पृथ्वी पर चल रहा था। उसका शरीर भी महाभैरव की भाँति ही दृष्टिगोचर हो रहा था। भय उत्पन्न करने में उसका व्यक्तित्व महाभैरव के सदृश ही था। यदि ऊंचाई एवं विशालता में उसके स्वरुप का मूल्यांकन किया जाय तो वह सुमेरु पर्वत शिखर के समान बड़ा एवं ऊंचा दिखायी दे रहा था। उसके अस्तित्व एवं सुमेरु पर्वत के शिखर के अस्तित्व में कोई अंतर नहीं था। संसार को नष्ट भ्रष्ट करने के लिए वह बढ़ रहा था। उसकी उष्णता सूर्य की प्रचण्डता से किसी भी प्रकार कम न थी। उसकी आँखों से निकलती हुई ज्वालाऍं सूर्य की उष्णता की भाँति थीं। उसका मुख भी मृत्यु के देवता यमराज के मुख की भाँति था। बहुत तीव्र बड़े-बड़े दन्त भी दृष्टिगोचर हो रहे थे। उन्हें देखने से ही भय उत्पन्न हो जाता था।

47

उसकी नासिका बहुत चौड़ी एवं गहरी थी। नासिका की गहराई की उपमा गुफा से दी जा सकती थी। उसकी साँस की गति किसी झंझावात अथवा तूफान की हलचल या गति से कम न थी। ऐसा लगता था जैसे तूफान अपनी सम्पूर्ण शक्ति का प्रदर्शन करता हुआ आगे बढ़ रहा है और वृक्षों की पंक्तियों तथा शाखाओं के टुकड़े-टुकड़े करता हुआ तीव्रगति से निकला जा रहा हो। उन स्थानों पर उपस्थित सिंह डर कर इधर-उधर छिपने का प्रयत्न करने लगे तथा अन्य वन्य पशु गुफाओं की ओर भाग कर जाने लगे। वे वहाँ पर शरण लेकर अपने प्राणों की रक्षा करने को आतुर हो उठे।

48

जब कुंम्भकर्ण युद्ध के लिए प्रयाण कर रहा था, तब भी अशुभ लक्षण ही दिखायी दे रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि निश्चय ही युद्ध में वह धराशायी होगा। ऐसे अशुभ संकेत प्रकट हो रहे थे जिनसे उसकी मृत्यु की पूर्व सूचना मिल रही थी। उसके ऊपर लाल वर्ण के भीषण मेघ थे तथा निरन्तर उन बादलों से लाल-लाल रक्त की वर्षा हो रही थी। मांस तथा निकली हुई आँतें भी वहीं पर दिखायी दे रही थीं। काक पक्षी चारों ओर भीषण

भयावह शब्द करते हुए शोर मचा रहे थे तथा एकत्रित हो होकर अशुभ लक्ष्णों का संकेत दे रहे थे। भीषण उल्कापात भी होता दिखायी देने लगा। अचानक ही कुम्भकर्ण की आँखें स्पन्दित होने लगीं तथा बायीं आँख फड़कने लगी। बाँयी भुजा भी चंचल हो उठी। यह सभी अशुभ लक्षण ही थे।

49

इन अशुभ संकेतों से न तो कुम्भकर्ण को कोई आश्चर्य हो रहा था, न उसको कोई बाधा दिखायी दे रही थी। अपने चारों ओर अशुभ लक्षण देखने पर भी अपनी सुरक्षा एवं मंगल कामना की उसके मन में तनिक भी अभिलाषा जागृत नहीं हुई। उसके लिए उसने कोई प्रयास भी नहीं किया। वह बड़ी ही तीव्रगति से आगे बढ़ता हुआ वानर सेना की ओर दृष्टिपात करने लगा। वानर सेना ने भी उसको ध्यान से देखा। जब वानर समूहों ने कुम्भकर्ण को अपनी ओर आता देखा तो वे सभी एकत्रित हो गये तथा उसके शरीर पर चढ़ने के लिए परस्पर होड़ मचाने लगे। इस प्रकार कुम्भकर्ण के पूरे शरीर को वानरों ने ढक लिया। वानरों ने कुम्भकर्ण के शरीर को जब चारों ओर से आच्छादित कर लिया,तो ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे किसी पर्वत श्रेणी पर मेघों के समूह आकर एकत्रित हो गये हों। उन्हीं मेघों ने उस पर्वत श्रेणी को आच्छादित कर लिया हो।

50 (क)

इस प्रकार वानर सेना ने आक्रमण कर कुम्भकर्ण को चारों ओर से घेर लिया। वे अपार उल्लास एवं प्रसन्नता का अनुभव करने लगे। वे कुम्भकर्ण पर बड़े-बड़े शिलाखण्डों से प्रहार कर रहे थे और उन शिलाखण्डों को उसके शरीर पर गिरा रहे थे। वे भीषण रुप से आक्रमण करते हुए युद्ध की गतिविधि को तीव्र करते जा रहे थे। शिलाएँ उपाट-उपाट कर उस पर वे फेंक रहे थे। वानर गण कुम्भकर्ण के शरीर को अपने नखों से वेध रहे थे तथा पत्थरों एवं फौलाद से भी उसे फाड़ने का प्रयत्न कर रहे थे। वे यह भी प्रयास कर रहे थे कि कुम्भकर्ण की नासिका पर तमाचा मार कर उसको नष्ट कर दिया जाय। भीषण प्रहार से वे अपनी शक्ति का परिचय दे रहे थे। वे पद-प्रहार भी करते थे। कभी नीचे की ओर झुककर उसे धक्का देते हुए वे ढकेलते थे और कभी उसे पकड़कर अपनी ओर खींचने का प्रयत्न करते थे। भाँति-भाँति के उपायों से वे कुम्भकर्ण को धराशायी करना चाहते थे। उसके शरीर को दांतों से वे बार-बार काट रहे थे तथा नखों को भोंक-भोंक कर उसका शरीर नोच रहे थे। तीक्ष्ण नखों के कोनों को वेध कर उसकी आँखें निकालने का भी वानरगण प्रयास कर रहे थे।

50 (ख)

यद्यपि वानर सेना कुम्भकर्ण को धराशायी करने के लिए अनेक प्रकार के प्रयत्न कर रही थी, फिर भी उसके शरीर को वे घायल नहीं कर पा रहे थे। उसने उनके प्रस्तर-प्रहारों को असफल कर दिया। सभी पत्थर

चूर-चूर हो गये। पर्वत-शिलाओं को उसने नष्ट कर दिया। वानरों के हाथों में जितने लकड़ियों के लट्ठे थे, उनको भी कुम्भकर्ण ने नष्ट-भ्रष्ट कर दिया। कुम्भकर्ण ने वानर सेना को कड़ा जवाब देते हुए घोर संघर्ष किया। उसने असंख्य वानरों का भक्षण कर डाला। अपने दोनों हाथों को बदलते हुए वानरों की जंघाओं और घुटनों पर आक्रमण कर उसने कई वानरों को मार डाला। सभी दिशाओं में वानरों को घेर-घेर कर उसने मारना प्रारम्भ किया तथा कुछ वानरों के शरीर के टुकड़े-टुकड़े कर दिये। उनके शरीर को फाड-फाड़ कर उनका विनाश कर दिया। उनकी आँतें निकाल-निकाल कर बाहर कर दीं। वानरों के मस्तकों को परस्पर टकरा-टकरा कर फोड़ दिया। कुछ अन्य वानरों के शरीर से रक्त की धाराएँ बह निकलीं, जिसको उसने चाटना और चूसना प्रारम्भ कर दिया।

50 (ग)

कुछ वानरों को उसने अपने शरीर के नीचे दबा दिया। अब वे हिलने-डुलने में भी असमर्थ थे। उनके वक्षस्थलों को भींच कर उन्हें उसने निष्प्राण कर दिया तथा गदा के भीषण प्रहार से उनके शरीर को चूर-चूर कर दिया। बहुत से वानरों पर तो कुम्भकर्ण ने लोहे के शूलों से आक्रमण किया। वानर-गण पृथ्वी पर धराशायी हो गये। कुछ वानरों की जीभें बाहर निकल आयीं। वे मूर्च्छित हो होकर पृथ्वी पर गिरने लगे। कुम्भकर्ण ने बहुत से वानरों को पछाड़ कर पृथ्वी पर दूर तक फेंक दिया। उसने उन पर भीषण आक्रमण किया और वानर-सेना का सर्वनाश करना प्रारम्भ कर दिया। कुछ वानरों को उसने रौंद डाला। कुछ वानरों को अपने हाथों में पकड़ कर कुम्भकर्ण ने चारों ओर घुमाया और फिर उन्हें पृथ्वी पर पछाड़ दिया। उसने वानरों को खींच-खींच कर उन पर भीषण प्रहार किया। वानर सेना में इतनी शक्ति नहीं थी कि वह कुम्भकर्ण के आक्रमण को पूरी तरह झेल सकती, परन्तु फिर भी वे बार-बार कुम्भकर्ण पर आक्रमण कर रहे थे। कुम्भकर्ण उनको पैरों के नीचे रौंद रहा था। वह तीव्रगति से उनको कुचलता हुआ उनका संहार कर रहा था। उनकी पूंछों को पकड़ कर सरलता से वह ऊपर के चर्म को नष्ट कर देता था। उनको दबा-दबा कर चूर-चूर करते हुए कुम्भकर्ण ने युद्धस्थल में भीषण प्रहार किये। उसके प्रहार ने वानरों को धराशायी कर दिया।

5 0(घ)

शनैःशनैः युद्ध की गतिविधि को तीव्रतर करते हुए कुम्भकर्ण ने वानरों का संहार करना शुरु कर दिया था। उसने अब भीषण रुप धारण कर लिया था। वह बड़े ही पराक्रम से युद्ध कर रहा था। उसकी क्षुधा भी शान्त नहीं हो पा रही थी। जो भी वानर उसके समक्ष आक्रमण करने के लिए आता था, वह उसका आहार बन जाता था। उसकी भूख प्रति क्षण बढ़ती ही जा रही थी। उसका सम्पूर्ण उदर वानरों से भरा हुआ था। एक ही क्षण में वह अनगिनत वानरों का संहार कर रहा था। असंख्य वानरों का भक्षण करके वह निरन्तर उनकी संख्या कम कर रहा था, परन्तु उसकी क्षुधा शान्त नहीं हो पा रही थी। उसकी क्षुधा तो अग्नि की भाँति प्रचण्ड थी। उस समय उसके

उदर की जठराग्नि भीषण रुप से प्रज्वलित हो उठी थी। जो भी उसके पेट में जाता था, वह बच पाता था। जठराग्नि के प्रकोप से पेट में ही वह भस्म हो जाता था।

51 (क)

उस समय युद्ध-क्षेत्र में ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे काल देवता सम्पूर्ण सृष्टि का संहार करने में प्रवृत्त हो रहे हो या फिर सृष्टि को समाप्त करने का समय आ गया हो। लगता था जैसे काल देवता वानरों के शवों की ढेरी पर नृत्य कर रहे हों या फिर शवों को रौंद-रौंद का एक वीभत्स दृश्य उपस्थित कर रहे हों। कुम्भकर्ण रक्त में सना हुआ था। उसकी ग्रीवा पर अनेक वानरों के मस्तक झूल रहे थे। महाकाल के लिए मानो एक प्रकार की भेंट प्रस्तुत की जा रही हो। ऐसी ही स्थिति स्पष्ट हो रही थी। उसने (कुम्भकर्ण ने) आँतों को कंधों की पेटिका की भाँति धारण कर लिया मानो उसने ब्रह्मसूत्र धारण कर लिया हो। उसकी सजावट महाकाल की भाँति थी। रक्त से सना हुआ कुम्भकर्ण सभी वानरों का भक्षण कर रहा था।

51 (ख)

अत्यंत भयानक एवं भीषण रुप धारण कर कुम्भकर्ण "गिरिराज" की भाँति सुशोभित हो रहा था। उसका मुख सभी वानरों के भक्षण से रक्तरंजित होकर लाल दिखायी दे रहा था। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे कुम्भकर्ण के मुख से लाली बिखर रही हो। उसका मुख उसके पर्वताकार शरीर में एक विशाल गुफा की भाँति लग रहा था। उसके विकराल रुप को देखकर वानर-समूह भय से ग्रस्त हो उठा था तथा उसकी ओर देखने में भी असमर्थ हो गया था। वानर उसके पास भी नहीं जाते थे। भय के कारण उनकी यह कल्पना थी कि यह मुख कुम्भकर्ण का नहीं, कोई गहरी विशाल गुफा है। भय के कारण वानर समूह घबरा-घबरा कर चौंक रहे थे। उनको कुछ भी स्मरण नहीं आ रहा था। उनके विचार से यह जगत अंधकारपूर्ण था। वे सभी वानर अपने शरीर से प्रेम करते हुए उनकी रक्षा की व्यवस्था करने में लग गये। वे घने जंगलों की ओर भाग-भाग कर जाने लगे और अपने प्राणों की रक्षा करने लगे।

51 (ग)

कुछ वानर ऐसे थे जो पर्वत शिखरों पर जाकर चढ़ गये। वे छिपने के लिए गुफाएं ढूंढ़ने लगे। उनको अपने प्राण से अपार मोह था। यही कारण था कि अपने प्राण की रक्षा के लिए वे प्रयास करने लगे थे। पर्वत-घाटियों की गुफाओं में वे छिपने लगे थे। कुछ अन्य वानरगण बड़े-बड़े वृक्षों पर चढ़ गये। वहाँ पर विशाल पाकड़ वृक्ष,रसाल तथा अन्य भाँति-भाँति के बड़े पेड़ थे। वे सभी वानर उन वृक्षों पर जाकर छिप गये। कुछ देर बाद वे वृक्षों को हिलाने लगे। ऐसा लग रहा था जैसे वृक्ष उनकी उस क्रीड़ा से अप्रसन्न हो रहे थे।

उनकी प्रार्थना को स्वीकार करने में वे वृक्ष मानो संकोच कर रहे हों। वे वानर हीन कोटि के थे क्योंकि युद्ध क्षेत्र में पीठ दिखाकर प्राण की रक्षा के लिए वे भाग निकले थे।

51 (घ)

वे सभी वानर हिलते–डुलते तथा भय से कांपते हुए वृक्षों पर अस्थिर–से बैठ गये थे। जिन वृक्षों पर वे बैठे हुए थे, वे सभी हिल रहे थे। वे उछल–उछल कर एक वृक्ष की शाखा से दूसरे वृक्ष की शाक्षा पर चले जाते थे और वहीं पर जाकर अवस्थित हो जाते थे। दूसरे अन्य वानर भी भय से व्याकुल हो रहे थे। जहाँ पर भी वे जाते थे, काँपते हुए तथा भयभीत से दिखायी दे रहे थे। कुछ अन्य वानर विशाल वृक्षों पर चढ़कर आश्रय की खोज कर रहे थे। वे अपने शरीर को समेट कर वृक्ष के कोने में छिप जाते थे। इस प्रकार अपने को वे सुरक्षित समझते थे। वहाँ भी वृक्ष हिल रहे थे और उनको भली भाँति बैठने नहीं दे रहे थे। उनसे मित्रता का व्यवहार वे नहीं कर रहे थे इसीलिये उन वानरों को नीचे उतरने के लिए विवश होना पड़ा। वृक्षों पर उन्हें ऐसा लगता था जैसे वृक्ष उन्हें कष्ट दे रहे हों। यह उनके लिए असह्य था।

52 (क)

जो वानरगण वृक्ष के नीचे थे, उनका कोलाहल चारों ओर सुनायी दे रहा था। उनका स्वर अवरुद्ध था। वे जैसे नष्ट–भ्रष्ट हो चुके हों। लगता था जैसे सुवेला पर्वतामाला के ऊपर शरण लेने की अभिलाषा से वे वहाँ पर आये हों। वे सभी बड़ी देर तक उसी स्थान पर घोर शब्द करते हुए सारे वातावरण को गुंजित करते रहे। वे विनाश से बचने के लिए वहाँ शरण लेने आये थे। वे अत्यन्त दुःखी दिखायी दे रहे थे। धीरे–धीरे लुढ़कते हुए वे आगे बढ़ रहे थे। वे चिल्लाते हुए कभी–कभी भीषण शोर भी मचाते थे। वे लज्जा के कारण दुःखी होकर इधर – उधर छिपने का प्रयास कर रहे थे। जब दूसरे अन्य वानर उन्हें कुचलते हुए आगे बढ़ते थे तो नीचे दबने वाले वानर चिल्ला कर अपना रोष प्रकट करते थे। पर्वत ढाल एवं घाटी पर कोई भी स्थान शेष नहीं था। पर्वत की पूरी घाटी वानरों से भरी हुई थी। बाद में वे सभी सागर में उतर गये। वे सभी शोर मचाते हुए सागर तट पर खड़े वृक्षों पर चढ़ने के लिए दौड़ पड़े।

5 2 (ख)

परस्पर एक दूसरे को दबाते रौंदते हुए वे वानर इधर–उधर भाग रहे थे। वे गिरते–पड़ते किसी प्रकार धीरे–धीरे आगे बढ़ते जा रहे थे। वे एक दूसरे से सट कर परस्पर झुके हुए थे तथा उनके शरीर आपस में टकरा रहे थे। अन्य दूसरे वानरगण, जो सागर तट के वृक्षों पर जाने के अभिलाषी थे, वे सागर की लहरों पर भी उतरने लगे तथा समुद्र में गिरने लगे। बाद में वे दया के पात्र भी बन गये। वे लहरों के साथ डूबते – उतराने लगे। इस

परिस्थिति में जो भी अन्य वानर थे, उनकी दशा देखकर किसी भी सहृदय व्यक्ति की आँखों से अश्रुधारा प्रवाहित हो सकती थी। वानर समूह लहरों से टकरा-टकरा कर इधर-उधर जल में क्रीड़ा कर रहे थे। उनमें बहुत से ऐसे भी थे, जिनके मस्तक कुम्भकर्ण के प्रहारों से फट गये थे। सागर की भीषण तीव्र लहरें उनको दूर-दूर फेंक कर झूला सा झुलाती हुई हिला डुला रही थीं। उनकी रीढ़ों की हड्डियाँ टूटी हुई थीं। वे झुक-झुक कर चल पाते थे। उनकी रीढ़ एवं कमरें टूट गयी थीं।

52 (ग)

भय के कारण वानरों की गतिविधियाँ निराशाजनक प्रतीत हो रही थीं। ऐसा लगता था जैसे वे फिर संघर्ष करने के लिए युद्धक्षेत्र में जाने को तैयार नहीं थे। महेन्द्र पर्वत पर जो वानर समूह शरण लेने आया था उसकी स्थिति तो कुछ ऐसी ही प्रतीत हो रही थी। वे गहन गुफाओं में ही बैठना और अपनी सुरक्षा करना अधिक श्रेयस्कर समझते थे। उन्हें इस बात का भी ध्यान नहीं था कि गुफा में बाघ भी हो सकते हैं। भय के कारण वे भ्रमित हो गये थे। कुछ वानर ऐसे भी थे जो काँटेदार बाँसों के मध्य में छिप गये थे। वे मार्ग खोजने में व्यस्त थे परन्तु उन्हें मार्ग कठिनाई से ही प्राप्त हो पा रहा था। उनके शरीर पर घाव भी हो गये थे। कंटीले बाँसों के काँटे उनके शरीर में चुभ गये थे। वास्तविकता तो यह है कि जो लोग अपने शरीर से अत्यधिक प्रेम कर अपने प्राण की रक्षा करना चाहते हैं, उन्हें सदैव ही अपार कठिनाइयों का सामना करना पड़ता है तथा कष्ट झेलने पड़ते हैं।

52 (घ)

इस निराशाजनक परिस्थिति को देखकर वीर योद्धा अंगद को अपार दुःख हुआ। जब उन्होंने देखा कि वानर सेना पराजय का अनुभव कर रही है, तो वे बड़े दुःखी हुए। उन्होंने सोचा कि वानरों का यह व्यवहार जंगली जानवरों से कम नहीं है। उन सभी वानर योद्धाओं में केवल अंगद ही एक मात्र ऐसे योद्धा थे जो अपने चरित्र की दृढ़ता के लिए विख्यात थे। वे युद्ध में सदैव ही अडिग रहे। यदि उनको युद्ध में अकेला भी छोड़ दिया जाता, तो भी वे युद्ध की पताका की भाँति अकेले ही डटे रहते और सेना की गरिमा के प्रतीक बने रहते । अकेले ही वे राक्षसों के भीषण प्रहारों से टक्कर लेने में पूर्ण समर्थ थे। वे संघर्ष करने के लिए सदैव ही प्रस्तुत थे। जब तक शत्रु उनका लोहा न मान ले, वे उसे छोड़ते नहीं थे। वे अपने सम्मान की पूरी रक्षा करते थे। वे कभी भी अपने वीरत्व को खोने की कल्पना नहीं कर सकते थे। इसीलिए धार्मिक शिक्षा की पुस्तकों के महान वाक्यों का स्मरण दिलाते हुए उन्होंने वानरों को युद्ध के लिए प्रेरित किया। प्रेरित करते हुए उन्होंने कहा कि योद्धाओं के विचार युद्ध-क्षेत्र में सदैव ही दृढ़ रहते हैं; अतएव हे वानरों ! आप सभी वीरों को भी उन्हीं आदर्शों का अनुकरण करना चाहिए। हे वानरगण ! दृढ़तापूर्वक युद्ध के लिए प्रस्तुत हो जाइये।

53 (क)

क्या वास्तव में यह युद्व ईश्वर की ही एक उपासना की भाँति नहीं है ? युद्व तो वीरों की उपासना के रुप में मान्य हैं। यह विचार उन्हीं महान वीरों एवं योद्वाओं के हैं जो वास्तव में युद्व-क्षेत्र में अपार दृढ़ता का परिचय देते रहे हैं। उनके दृढ़ विचार उन्हें कभी भी अपनी वीरता के मार्ग से विचलित नहीं होने देते। एक सच्चा सैनिक एवं दृढ़ प्रतिज्ञ वीर युद्व क्षेत्र में अपनी अपार दृढ़ता का निश्चय ही परिचय देता है। वह अपने दृढ़ निश्चय तथा वीरता से महानता की चरम सीमा को छू लेता है। उसे किसी भी शत्रु की कभी कोई चिन्ता नहीं होती। कोई अवरोध उसके मार्ग की बाधा नहीं बन पाता है। चाहे उस वीर के साथ उसका अन्य कोई रक्षक हो अथवा न हो,वह भीषण परिस्थितियों में भी अकेले ही संघर्ष करता है। वह अकेला ही विजय के पथ की ओर बढ़ता जाता है। वह अन्य व्यक्तियों के निराशापूर्ण विचारों से कभी प्रभावित नहीं होता। उसके हृदय की दृढ़ता उसे सदैव ही मृत्यु का वरण करने के लिए प्रेरित करती रहती है। इसीलिए वीरों के विचार अडिग होते हैं। वे युद्वक्षेत्र में आक्रमण करने के लिए भी अग्रसर रहते हैं। उनकी सदैव ही अभिलाषा होती है कि वे विजयी हों। अतएव हे वीर वानरों ! आप सबके लिए भी शत्रु से संघर्ष करना ही उचित होगा।

53 (ख)

इस संसार में जीवधारी के अस्तित्व का फल वास्तव में क्या हो सकता है ? युद्व में विजय या वीरगति प्राप्त करना ही तो उसका सुफल है। पूजा करना एवं युद्व में प्रतिष्ठा प्राप्त करना ही वीरों का कर्तव्य है। युद्व क्षेत्र ही वीर के लिए वास्तविक कार्य-क्षेत्र होता है। शत्रु तो केवल अग्नि के ही सदृश है। शत्रु के अस्त्र-शस्त्र जो भीषण तीव्रता से चमकते हैं, वे भी अग्नि की ज्वालाओं की ही भाँति हैं। आपकी वीरता उस अग्नि में पवित्र हव्य की भाँति होती है। वास्तव में जो भेंट उस यज्ञ में आप देवों को चढ़ाते हैं, वह आपके प्राण की बलि ही होती है। आपका शरीर पूजा की भेंट की ही भाँति है। इस प्रकार युद्व के भी पाँच उत्सव होते हैं। यज्ञ आदि धार्मिक कृत्यों का विधि विधान भी यही होता है। संकेत यह है कि युद्व क्षेत्र में सभी अस्त्र-शस्त्रों का पूर्ण कशुलता से परिचय देना ही वीरों का परम कर्तव्य है।

53 (ग)

यदि आप अपने शत्रु का युद्वक्षेत्र में संहार करने में समर्थ हों, उसे पूर्ण रुप से नष्ट कर दें, तो आपको उपासना का पूरा फल प्राप्त हो जायेगा। यह बड़े ही दुःख का विषय होगा कि आप अपने मूल नियमों एवं कर्तव्यों का विधिवत् पालन न करें। अपनें संकल्पों एवं विचारों को पूरा करने में सदा दृढ़ रहना चाहिए। तुम्हारे यह दृढ़ संकल्प वास्तव में पवित्र होने चाहिए। युद्वक्षेत्र में आप सबको सदैव ही महावीर भद्रेश्वर देवता की अर्चना करनी चाहिये। यह उसी प्रकार करना चाहिए जैसे पूजा करते हुए कोई ईश्वर की आराधना कर रहा हो। यज्ञ के लिए आप सबको लकडी की समिधाएँ प्रस्तुत करनी चहिए जो सदैव ही शत्रुओं के शवों के रुप में होंगी। यही आप सभी वीरों की आराधना का एक महत्वपूर्ण एवं सम्पूर्ण स्वरुप होगा। इसी से देवता को भेंट पूरी तरह प्रस्तुत

की जा सकेगी। इस रुप में शत्रु का रक्त एवं मस्तक देवता को चढ़ायी गयी भेंट का एक स्वरुप होगा।

(ऊपर के खण्ड में कवि ने शब्दों का अनुपम प्रयोग किया है। उसकी विधिवत् व्याख्या भी यहाँ प्रस्तुत की गयी है। ऊपर स्पष्ट किया जा चुका है कि युद्व के वीरों की उपमा पूजा–अर्चना करने वाले साधकों से दी गयी है। सांग रुपक अलंकार के प्रयोग से पूरी परिस्थिति स्पष्ट की गयी है।)

53 (घ)

क्या युद्व में वीरता का परिचय देते हुए अपने कर्तव्य का पालन करना किसी पूजा से किसी भी प्रकार कम है ? क्या वास्तव में इसको पूर्ण योग की संज्ञा नहीं दी जा सकती है ? युद्व–क्षेत्र में पराक्रम एवं उत्तेजना, घोर रव तथा आप सबकी भीषण गर्जना, युद्व के देवता महासिंहनाद की पूरी अर्चना सदृश है। युद्व के देवता की आराधना करने से वे प्रसन्न हो जाते हैं। यहाँ तक कि युद्व में वीर गति पाने वालों को वे प्रसन्न होकर सीधे स्वर्ग में स्थान देते हैं। इससे आपके कुलवर्ग के लोगों को भी अपार प्रसन्नता होगी। स्वर्ग में उचित स्थान दिलाने में आपकी वीरता एवं आपका शौर्य ही सबसे अधिक सहायक सिद्व होता है। इससे आपके दृढ़ निश्चय एवं संकल्प की गरिमा भी बढ़ती है। आपके सैनिक जीवन की गुरुता की प्रतिष्ठा भी इसी से बढ़ती है। इस परिस्थिति में निश्चय ही अपार यश प्राप्त होता है। उसी की आपको अभिलाषा एवं आशा करनी चाहिए। ऐसे कार्य से ही भविष्य में आप महान योद्वाओं की उपाधियों से विभूषित किये जा सकेंगे। तभी आपकी सर्वत्र प्रशंसा होगी।

54

इन शब्दों को कहते हुए वीर वानर अंगद ने अन्य सभी वानरों को प्रेरित किया। उनमें नई शक्ति एवं स्फूर्ति का उन्होंने संचार किया। वे फिर युद्व के लिए प्रस्तुत हो गये। सभी वानर नई जागृति एवं चेतना से अभिभूत होकर उठ खड़े हुए। वे युद्व में वीरता एवं शौर्य का परिचय देने के लिए तैयार हो गये। उनका भय पूर्ण रुप से समाप्त हो चुका था। उन्हें अब अपने प्राण से भी कोई मोह नहीं था। इसीलिए शत्रु पर आक्रमण करने की अभिलाषा से वे फिर आगे बढ़े। शब्द करते हुए असंख्य वानर एक दूसरे से सटते हुए चले जा रहे थे। अनुशासित ढंग से वे युद्व क्षेत्र में ऐसे आगे बढ़े रहे थे, जैसे धीर, गंभीर एवं शान्त सागर।

55

वे क्रोध एवं उत्तेजना से भीषण कोलाहल करने लगे। उनका स्वर इस प्रकार गूंज रहा था जैसे वज्रपात एवं उल्कापात का घोर गर्जन सुनायी दे रहा हो। जैसे आकाश में चपला चमकती है, उनके ह्रदयों में भी अपार प्रसन्नता की चमक थी। वे सभी अनेक झुण्डों में साथ ही साथ आगे बढ़ रहे थे। अभी अंगद ने उनको बहुत शिक्षाप्रद उपदेश दिये थे। अब वे सभी अपने प्राण का उत्सर्ग करने को भी उद्यत थे। चाहे जैसी भी भीषण परिस्थिति

क्यो न हो, वे उसका सामना करने के लिए तैयार थे। वे परस्पर वार्ता कर रहे थे। उनके घने एवं रक्तिम बालों एवं रोमों का भी सौंदर्य निखर रहा था। अनेक वानरों के शरीर रोमांचित एवं शौर्य से पुलकित दिखायी दे रहे थे।

56

सभी योद्धागण् युद्ध की प्रतीक्षा कर रहे थे इसीलिए वे उठकर शीघ्र ही खड़े हो गये। बहुत से वानर तो पहले से ही प्रस्तुत थे। उनकी संख्या भी गणनातीत थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वानर सेना सागर की भाँति विशाल हो। उत्तर एवं पूर्वी दिशाएँ उनसे भरी हुई थीं। पश्चिमी एवं दक्षिणी दिशाओं में भी वानर सेना आक्रमण के लिए प्रतीक्षा कर रही थी। सभी युद्ध के लिए पूर्ण रुप से सुसज्जित थे। उन्होंने अपने हाथों में वृक्षों एवं उनकी बड़ी-बड़ी शाखाओं को धारण कर रखा था। आम्रवृक्षों की शाखाओं को तोड़ कर उन्होंने अपने अस्त्र-शस्त्रों की भाँति धारण कर लिया था।

57

उन्होंने भाँति-भाँति के वृक्षों को उखाड़कर अपने हाथ में पकड़ लिया। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वे पर्वतों को अपने हाथों पर धारण किये हुए थे। सभी वानर योद्धा युद्ध में आगे बढ़े। वे अपने साथी वानरों को देखकर जैसे काँप रहे थे। उन्होंने सभी वृक्षों को हिलाना-डुलाना प्रारम्भ कर दिया। राक्षस कुम्भकर्ण ने जब सांस लेना प्रारम्भ किया तो एक प्रकार की विचित्र परिस्थिति उत्पन्न हो गयी। जब वह अपनी नाक से साँस ले रहा था, तो उसका स्वर बहुत ही भयानक था। उसकी साँस से जैसे आँधियाँ चल रही हों। सदैव ही उसकी साँस भीषण स्वरों में भयानक तूफान की भाँति प्रतीत होती थी।

58

वानर नील, ऋषभ आदि योद्धा युद्ध भूमि में उपस्थित थे। इस प्रकार सभी पुमुख वानर योद्धा युद्धक्षेत्र में कुम्भकर्ण से संघर्ष करने के लिए गये थे।

59

सभी वानर योद्धा शिलाएं उपाट-उपाट कर ऊपर की ओर उठा कर फेंक रहे थे। कुछ अन्य वानर राक्षसों पर भीषण प्रहार करने के लिए विशाल शिलाखण्डों को अपने हाथों में लिये हुए थे। आनंदमग्न होकर वानरगण बड़े-बड़े वृक्षों को उखाड़ कर अस्त्र-शस्त्र की भाँति धारण किये हुए थे। सभी आक्रमण करने के लिए भीषण रव करते हुए आगे बढ़ रहे थे। उन्होंने मिलकर एक साथ पूर्ण शक्ति से आक्रमण किया। कुछ वानर

नखों से कुम्भकर्ण पर प्रहार कर रहे थे और कुछ उसके ऊपर शिलाएं फेंक रहे थे। फेंके गये पत्थर टकराकर अग्नि उत्पन्न कर रहे थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे पत्थरों के साथ अग्नि की ज्वालाएँ भी बरस रही हों।

60

वानरों के इन भीषण प्रहारों से कुम्भकर्ण के शरीर पर न तो कोई व्रण हुआ और न उसके शरीर को कोई विशेष आघात ही पहुंचा। उसने उन पत्थरों के आक्रमण को पूर्ण रुप से असफल सिद्व कर दिया। जब भी उस पर प्रहार होता था, वह उस आक्रमण को सरलता से सहन कर लेता था और आघात बचा लेता था। जितने भी पत्थर एवं शिलाखण्ड उस पर डाले गये, वे सभी उसके शरीर से टकराकर चूर–चूर हो गये, परन्तु उस पर उन प्रहारों का कोई प्रभाव नहीं पड़ा। यही नहीं, वानरों की सभी पर्वत शिलाएँ टूट–टूट कर धूलिकणों मे परिवर्तित हो गयीं। उनकी धूलि के कण वातावरण में ऊपर उड़ने लगे। आकाश में अंधकार–सा छा गया। पृथ्वी डोलने लगी तथा उसके फटने का–सा स्वर चारों ओर सुनायी देने लगा। शीघ्र ही भीषण वर्षा तथा धूलि की आँधियाँ (कुम्भकर्ण की शक्ति एवं पराक्रम के परिणाम स्वरुप) दृष्टिगोचर होने लगीं।

61

जब कुम्भकर्ण सांस ले रहा था तो उसका भयानक स्वर वातावरण को कम्पित कर रहा था। इस परिस्थिति में भयभीत होकर वानर सेना चिल्लाने लगी तथा इधर–उधर बिखर कर भागने लगी। उन्हें युद्व क्षेत्र भी भली भांति दिखांयी नहीं दे रहा था। चारों ओर अंधकार ही अंधकार था। सभी वस्तुओं का पता केवल उनको टटोलने से ही लग पाता था। क्रोधाग्नि में जलते हुए बड़ी क्रूरता से कुम्भकर्ण ने भीषण आक्रमण किया। ऐसा लगता था मानो मदमाता हाथी भयंकर रुप धारण कर सभी को रौंद रहा हो। कुम्भकर्ण ने रौंद–रौंद कर वानर–सेना का संहार कर डाला। जब उन्हें कुचला जाता था, वे भीषण स्वर में चिल्लाते थे। जिस पर भी वह आक्रमण करता था, उसे नष्ट कर देता था। यही नहीं, चार–चार वानरों को एक बार में ही वह कुचल कर मार डालता था।

62

कुछ वानरों का कुम्भकर्ण ने भक्षण कर लिया। कुछ का उसने चर्वण कर डाला। कुछ वानरों को उसने दबा कर कुचल दिया। उनके मस्तकों को चूर–चूर कर उसने फोड़ दिया। उनकी आँखें बाहर निकल पड़ीं थी। उसने वानरों की गरदनें मरोड़ दी थीं। कुछ वानरों को उसने आकाश की ओर फेंक दिया था। उसकी नाक की साँस से निकलने वाली वायु ने कई वानरों को नष्ट कर डाला। बहुत से वानरों को उसने नासिका की साँस से खींच कर मार डाला। साँस की तीव्र गति से वे सभी नाक के भीतर प्रवेश कर गये। वे नाक के अन्दर जाकर मृत प्रायः हो गये। उन पर उसने ऐसा कठोर प्रहार किया मानो वे भीषणं शिलाखण्ड पर पटक दिये गये हों।

63

कुम्भकर्ण ने असंख्य वानरों को अपने दाँतों से चबा डाला तथा कुछ ऐसे भी वानर थे जिनको उसने अपने मुख से काट खाया। उसने वानरों का वध कर दिया। ऐसा कोई वानर नहीं दिखायी पड़ रहा था जो उसके शरीर को किसी प्रकार की चोट पहुंचा पाता। यहाँ तक कि वानर यह भी निर्णय नहीं कर पाते थे कि उन्हें कुम्भकर्ण पर किस प्रकार का आक्रमण करना चाहिए। उधर कुम्भकर्ण बड़ी सरलता से उनका वध कर रहा था। उसने अपने हाथों को आगे बढ़ा कर वानरों के शरीर की त्वचा नोच ली थी। वानरों के शरीर से अविरल रक्त की धाराएं बह रही थीं। भय के कारण कुछ वानरों के शरीर पीतवर्ण के हो रहे थे। कुछ वानरों को उसने बड़े शिलाखण्डों के नीचे दबा दिया था। कुछ वानरों को कुम्भकर्ण ने अपने पैरों के नीचे कुचल दिया था और उनका प्राणान्त कर दिया था।

64

अब कुम्भकर्ण के आक्रामक स्वरुप के कारण वानर इतने अधिक भयभीत हो गये थे कि वे उसके आक्रमण का उचित उत्तर ही नहीं दे पाते थे। वे डर कर अपने हदय में बहुत ही दुःख का अनुभव कर रहे थे। उन्होंने यह देखा कि उनके अन्य सभी वानर–मित्रों को कुम्भकर्ण ने मार डाला था। जो भी आक्रमण के लिए आगे बढ़ता था,कुम्भकर्ण उसी को नष्ट कर देता था। कोई भी जीवित वापस नहीं लौट पाता था। इस प्रकार वानरों की दृष्टि में कुम्भकर्ण केवल एक भयानक राक्षस ही नहीं था वरन उनके प्राणों का अपहरण करने वाला एक भयानक योद्धा था। उसकी भीषण गतिवधियों को देखकर वानर सेना डर कर युद्ध से पीछे मुड़ गयी। वह पराजित होकर भागने लगी। पीछे हटकर वानर निराश–से हो रहे थे। उन वानर योद्धाओं में इतनी शक्ति नहीं थी कि वे कुम्भकर्ण से संघर्ष कर उसको युद्ध में पराजित कर सकें।

65

युद्ध से त्रस्त होकर वानर सेना भ्रमित और हताश होकर इधर–उधर भाग रही थी। उसके एक विशाल भाग को कुम्भकर्ण ने नष्ट–भ्रष्ट कर दिया था। उस समय उस परिस्थिति को देखकर विभीषण ने श्री राम से यह कहा– हे राजा राम ! अब आप युद्ध की गतिविधियों का संचालन स्वयं करने की कृपा करें। अब आपके लिए शान्त होकर बैठे रहने का अवसर नहीं है। यह भीषण संघर्ष वानरों के लिए अत्यन्त भयावह सिद्ध हो सकता है। अब स्पष्ट हो चुका है कि कुम्भकर्ण ने वानर सेना के एक बहुत बड़े भाग को नष्ट कर डाला है। अभी तक आपने अपने रण–कौशल का परिचय नहीं दिया है।

66,

वास्तव में यह राक्षस कुम्भकर्ण तीनों लोकों में सर्वप्रसिद्व एक महान योद्वा है। इसकी शक्ति के समक्ष देवराज इन्द्र भी अपनी पराजय स्वीकार कर चुके हैं। देवराज की भाँति ही अन्य देवता– वरुण, वैश्रवण तथा यमराज भी कुम्भकर्ण के रण कौशल से भयभीत रहते हैं। उसकी शक्ति भयानक तूफानों की भाँति ही हैं तथा वह सारे विश्व को नष्ट करने में पूर्ण समर्थ है। जिस पर भी कुम्भकर्ण ने आक्रमण किया है, उसको युद्व में पराजित कर दिया है। अब वानर सेना पर भी कुम्भकर्ण ने आक्रमण कर अपनी अपार शक्ति का परिचय दिया है। इस स्थिति में अब आप उससे युद्व करने की कृपा करें।

67

विभीषण ने राम को यह राय दी और उन्हें युद्व के लिए प्रेरित किया। उन्होंने वानरराज सुग्रीव को भी प्रेरणा दी कि वे युद्व क्षेत्र में कुम्भकर्ण से संघर्ष करने के लिए आगे बढ़ें। सुग्रीव स्वयं भी युद्व में भीषण संघर्ष करना चाहते थे। वे वीर का–सा यश अर्जित करने के अभिलाषी थे। अब तो अपने आप जैसे यह अवसर उन्हें मिल गया था। इससे उनके हृदय में अपार हर्ष हुआ।

68

राम की आज्ञा लेकर वानरराज सुग्रीव ने एक विशाल वृक्ष को उखाड़ लिया। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वह वृक्ष सैकड़ों हाथ लम्बा हो। उसकी लम्बाई देखकर सभी को आश्चर्य हो रहा था। वहं वृक्ष लम्बा–चौड़ा और अत्यन्त वृहदाकार था। उसका तना फौलाद की भाँति था और वह वैसा ही कठोर भी था।

69

सुग्रीव ने उस विशाल वृक्ष को पकड़ कर अपने हाथों में धारण कर लिया। एक प्रकार के सन्तुलन से उसकी शाखाओं को भी उन्होंने सुव्यवस्थित कर लिया। उसको कई भागों में तोड़ दिया तथा अपनी ओर खींचते हुए उसे समूल उखाड़ लिया। उसकी सम्पूर्ण वनस्पति जैसे पीतवर्ण की हो गयी हो। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे उस वृक्ष के पत्ते भी भय से पीले पड़ गये हों।

70

सुग्रीव ने उस वृक्ष को बार–बार ऊंचा उठा कर संभाला। उस समय उनका स्वरुप विकराल था। वह नागराज तक्षक की भाँति हो गये थे। उस वृक्ष की जड़ें जैसे सर्प की गिद्वाएं हों। जड़ों की बहुत सी शाखाएं भी दिखायी दे रही थीं। उस वृक्ष की जड़ों के जो विशाल बिखरे हुये आधार थे, वे काफी चौड़े थे। वे ऐसे प्रतीत हो रहे थे,जैसे वह सर्प अपना मुख फैला रहा हो तथा जम्हाई ले रहा हो।

71

उस वृक्ष की छाल भी नष्ट–भ्रष्ट होकर व्यर्थ हो गयी थी। वह छिलकों की भाँति खुरदरी एवं अर्थहीन सी हो गयी थी। इस प्रकार भयानक रुप से वह कठोर थी। उस वृक्ष की जड़ों में मिट्टी लगी हुई थी जो धूलिकणों के रुप में परिवर्तित हो गयी थी। उन उड़ते हुए धूलिकणों का स्वरुप विषैले सर्प की विषपूर्ण फूत्कार की भाँति था। यही इसकी सबसे सुन्दर उपमा हो सकती थी।

72

वानरराज सुग्रीव के आक्रमण की गरिमा का वर्णन कर पाना कठिन था। उन्होंने पूरी शक्ति से राक्षस कुम्भकर्ण पर भीषण प्रहार किया। उनका प्रहार उस विशाल वृक्ष के तने द्वारा ही किया गया था, जो गरुड़ के भीषण आक्रमण से कम नहीं था। उस आक्रमण की गतिविधि बड़ी ही भयावह थी। ऐसा प्रतीत होता था जैसे सुग्रीव ने एक बड़े पर्वत पर एक नागराज को फेंक दिया हो। वृक्ष के तने से उन्होंने कुम्भकर्ण पर भीषण प्रहार किया।

73

वानरराज सुग्रीव देवराज इन्द्र की भाँति थे। उस वृक्ष का तना उनके हाथ में इन्द्र के वज्र की भाँति शोभित था। कुम्भकर्ण पर्वतराज हिमालय की भाँति था। उस पर वह प्रहार किया जा रहा था। इस स्थिति में भी वह दृढ़ होकर अचल की भाँति अपने स्थान पर ही स्थिर रहा। उसमें कोई परिवर्तन दिखायी नहीं दिया।

74

महान राक्षस योद्धा कुम्भकर्ण पर जबरदस्त आक्रमण किया गया था, पर उसने किसी प्रकार के कष्ट का तनिक भी अनुभव नहीं किया। उस पर सुग्रीव के आक्रमण का कोई प्रभाव ही नहीं पड़ा। वह अपने स्थान से टस से मस नहीं हुआ। उसके पश्चात् वानरराज सुग्रीव ने शीघ्र ही उस विशाल वृक्ष के तने से उस पर फिर प्रहार किया। इस प्रहार के लिए उन्होंने विशेष रुप से उस तने को चुना जो बहुत ही कठोर था। परन्तु उस तने के प्रहार से भी कुम्भकर्ण के शरीर पर किसी प्रकार का ब्रण नहीं हुआ। यह आघात भी असफल सिद्व हुआ। वह वृक्ष का तना उसके शरीर से टकरा कर चूर–चूर हो गया और सुग्रीव के पास ही लौट कर आ गया।

75

इस घटना से अत्यन्त क्रुद्व होकर सुग्रीव ने भीषण विकराल रुप धारण कर लिया। उन्होंने अपनी आँखों

को घुमाया। उनकी भौंहें कुटिल होकर चढ़ गयीं। वे बहुत ही उत्तेजित होकर आक्रमण को प्रस्तुत हो गये। कोई भी उनके इस रुप को देखकर आश्चर्यचकित हो सकता था। वे अब एक पांव पर खड़े हो गये थे। उनका मुख खुला हुआ था। उनके दाँतों की पंक्ति बिजली की भाँति चमक रही थी।

76

उसी समय उन्होंने अपनी लम्बी एवं विशाल पूंछ को उल्लासपूर्वक हिलाया। उस पूंछ के घुमाने पर जो भी वृक्ष उसकी चपेट में आ गये, वे टूट-टूट कर धराशायी हो गये। उसके पश्चात् जितने भी वृक्ष उखड़ कर गिर गये थे, उन सबको उन्होंने एकत्रित किया तथा कुम्भकर्ण पर अपने प्रहार की गतिविधि को अधिक तीव्र कर दिया। अपने दायें एवं बायें दोनों ही हाथों में वृक्षों को घुमा-घुमा कर अनवरत गति से कुम्भकर्ण पर वे प्रहार करने लगे।

77

कुम्भकर्ण पर इतने भीषण प्रहार किये जा रहे थे,पर उनका कोई प्रभाव उस पर दृष्टिगोचर नहीं हो पा रहा था। कुम्भकर्ण ने उन आक्रमणों को बड़ी ही सरलता से सहन कर लिया था। उनको रोककर उनसे अपनी रक्षा कर ली थी। अपने पराक्रम एवं शक्ति का पूरा परिचय देते हुए उसने भयानक रुप धारण कर लिया था। वह अग्नि की ज्वाला की भाँति प्रज्वलित हो रहा था। उसके उस भयानक स्वरुप को देखकर अत्यन्त तीव्र भय की भावना उत्पन्न हो जाती थी। वह क्रूरता का प्रतीक बना हुआ था। युद्ध क्षेत्र में वह अग्नि की ज्वालाओं की तरह धधक रहा था। जो भी उसके समक्ष आ जाता, वह उसी का सर्वनाश कर देता था।

78

भीषण प्रहार झेलते-झेलते उसकी शक्ति अब कम हो चली थी। उस पर निरन्तर ही घोर आक्रमण किये जा रहे थे। उन प्रहारों के आधिक्य ने उसकी शक्ति का ह्रास कर दिया था। उसके पश्चात खेल-खेल में ही उसने अपने भीषण शस्त्र, तीक्षण गदा, कों धारण कर लिया। उसकी गदा बहुत ही भयानक थी। उसका लौह बहुत ही कठोर था। उसका वजन हजारों लाख मापदण्डों में माना जा सकता था। उस विशाल गदा पर सुवर्ण की कई पर्तें चढ़ी हुई थीं। उसकी सुन्दरता को निखारा गया था।

79

उस गदा के दन्त जैसे कठोर फौलाद से बनाये गये हों। जब कुम्भकर्ण उस गदा को घुमाता था तो प्रकाशपुंज बिखर उठता था। उस समय उस गदा के दन्त ऐसे लग रहे थे मानो महाकाल की दन्त पंक्ति हों और महाकाल

अपना मुंह फाड़कर सम्पूर्ण जगत को अपने ही में लीन कर रहे हों।

80

कुम्भकर्ण ने अपने भीषण भाले को घुमाकर उससे भी प्रहार किया। वह भाला अग्नि की भाँति लपटें बिखेर रहा था। उसके कवच की किरणें भी चारों ओर प्रकाश फैला रही थीं। उस दृश्य को देखकर ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे एक युग की समाप्ति पर बारह सौ प्रचण्ड सूर्यों की किरणें हिमवान पर्वत (हिमालय) को किरण-जाल में डूबो गयी हों। चारों ओर प्रकाश ही प्रकाश दिखायी दे रहा हो,ऐसा प्रतीत हो रहा था।

81

अब कुम्भकर्ण विकराल रुप धारण कर आक्रमण करने के लिए उद्यत हो गया। तीव्रता से उसने भीषण अस्त्र शस्त्रों का प्रयोग करना प्रारम्भ कर दिया। उसने सुग्रीव के उदर को ही अपना लक्ष्य बनाया। वानर राज सुग्रीव वानर सेना के अग्रगण्य योद्धाओं में थे, इसीलिए कुम्भकर्ण ने उन पर आक्रमण कर दिया। वह अस्त्र वानर योद्धा सुग्रीव के पास तक जा पहुंचा। उस अवसर पर हनुमान जी ने अद्भुत पराक्रम एवं तत्परता का परिचय दिया। वे शीघ्र ही ऊपर आकाश में उड़ गये।

82

उन्होंने उस भाले को बीच में ही पकड़ लिया। वह भाला भीषण शब्द करता हुआ अत्यन्त तीव्रता से आकाश में बढ़ता दृष्टिगोचर हो रहा था। हनुमान जी ने उस भाले की सभी गतिविधियाँ समाप्त कर दीं। वह भाला बहुत ही बड़ा था, इसीलिए हनुमान ने उसको अपनी गोद में स्थिर कर लिया और दोनों हाथों से पकड़ लिया। उसके पश्चात् वे आकाश की ओर उड़ गये। उन्होंने मार्ग में जाते समय उस भाले को तोड़ दिया। वह भाला कई खण्डों में टूट कर टुकडे-टुकड़े हो गया। हनुमान ने उसको पूरी शक्ति से दबा कर तोड़ा था। उन्होंने उस भीषण भाले को अपने घुटनों के मध्य में दबा कर नष्ट कर दिया था।

83

इस महान सफलता को देखकर सभी वानर गण आश्चर्यचकित हो उठे। वे भीषण स्वरों में कोलाहल करने लगे। वे बार-बार हनुमान जी की प्रशंसा कर रहे थे। उन सभी ने हनुमान की भूरि-भूरि सराहना की और कहा कि यदि वास्तव में युद्धवीर कोई योद्धा हो तो उसको हनुमान जी के समान ही होना चाहिए। हनुमान जी के पराक्रम की गरिमा किसी भी योद्धा को प्राप्त नहीं हो सकती। आकाश में महान सिद्धों और ऋषियो ने हनुमान जी की बहुत प्रशंसा की। उनके मुख से बार-बार एक शब्द "वीर" ही निकल रहा था। "वीर" की ध्वनि सम्पूर्ण गगन मंडल

में प्रतिध्वनित हो रही थी।

84

देवराज इन्द्र तथा अन्य देवतागण भी महावीर जी के इस महान वीरतापूर्ण कृत्य से अत्यन्त संतुष्ट दृष्टिगोचर हो रहे थे। हनुमान जी की वे प्रशंसा भी कर रहे थे। उनके मुख से बार – बार जो शब्द निकल रहे थे, वे थे–अत्यन्त सुन्दर" "महान सफलता" आदि। पहले वे सभी देवतागण कुम्भकर्ण से पराजित हो चुके थे। वे कुम्भकर्ण के अस्त्र–शस्त्रों से इतने भयभीत थे कि वे अपने प्राण की रक्षा के लिए सहायता की प्रार्थना करते रहते थे, इसीलिए कुम्भकर्ण की असफलताओं को देखकर उनके हृदय में अपार हर्ष हो रहा था।

85

सम्पूर्ण वातावरण में कोलाहल एवं हर्ष ध्वनि प्रतिध्वनित हो रही थी। महान राक्षस योद्धा कुम्भकर्ण को घोर निराशा हुई। कुम्भकर्ण भी वास्तव में बड़ा ही दुष्ट राक्षस था। अपनी असफलता के कारण उसे लज्जा का अनुभव हो रहा था। सभी देवताओं एवं वानरों को इस प्रकार हर्षध्वनि करते देखकर उसका हृदय उनके प्रति घृणा से भर गया। अत्यन्त क्रुद्ध होकर उसने एक बड़ी शैलमाला को उखाड़ लिया।

86

बड़ी शीघ्रता एवं तीव्रगति से उसने उस शिलाखण्ड से वानरराज सुग्रीव को लक्ष्य बनाकर भीषण प्रहार किया। इससे सुग्रीव घायल होकर मूर्च्छित हो गये। वे पृथ्वी पर गिर पड़े। उनका शरीर झुका हुआ था। उन्हें अब इतना भी बोध नहीं था कि राक्षस कुम्भकर्ण उनको अपनी बाहों से उठाकर युद्धक्षेत्र से बाहर ले जाने एवं पकड़ने का प्रयत्न कर रहा था। कुम्भकर्ण की सहायता के लिए प्रधान राक्षस योद्धा भी सुग्रीव को उठाने आ पहुंचे थे।

87

जब सभी वानर योद्धाओं ने सुग्रीव को कुम्भकर्ण द्वारा उठाकर ले जाने का प्रयास करते हुए देखा, तो वे वानर भ्रमित होकर एवं घबराकर इधर–उधर भागने लगे। वे अत्यन्त दुःखी थे। उनकी परिस्थिति ऐसी हो गयी थी जैसे वे युद्ध में परास्त किये जा चुके हों। उनके राजा वानर राज सुग्रीव कम से कम अर्द्धपरास्त तो हो ही चुके थे, परन्तु इस कठिन अवसर पर भी हनुमान ने अपार दृढ़ता एवं विचार शक्ति का पूरा परिचय दिया। उन्होंने सुग्रीव को उठाकर ले जाने वाले कुम्भकर्ण का पीछा किया। उसको खदेड़ने की उन्होंने चेष्टा की। हनुमान जी के नेत्र शंकर भगवान के प्रलयंकर तृतीय नेत्र की भाँति क्रोध की ज्वालाओं से धधक रहे थे। उनके हृदय में अपार

शक्ति एवं दृढ़ता थी। वे एक क्रूर पराक्रमी योद्धा की भाँति गर्जना करने लगे।

88

जब वानरराज सुग्रीव मूर्च्छा से जागे तो उन्हें सब कुछ शीघ्र ही स्मरण हो आया। उन्होंने अपने विचारों को सन्तुलित किया। उन्होंने बहाना बनाते हुए अपने नेत्रों को बन्द कर लिया। कुछ ही क्षणों में उनकी विचार–शक्ति जागृत हो उठी। पूरी परिस्थिति उन्हें स्पष्ट हो गयी। वे उछल कर फिर युद्ध के लिए तैयार हो गये। उनका वह उछलना भी व्यर्थ सिद्व नहीं हुआ। उछलते–उछलते उन्होंने कुम्भकर्ण की नासिका को दाँतों से काट लिया। यह भीषण कार्य भी उनकी अपार शक्ति एवं रण–कौशल का परिचायक था। उन्होंने अपने दोनों हाथों से उसके कानों को पकड़ कर अपने नखों से घोर प्रहार किया। उनके नख बहुत ही तीक्ष्ण, तीव्र एवं भयानक थे। उनका यह प्रहार अत्यन्त कौतुकपूर्ण था।

89

जब सुग्रीव ने अपनी रक्षा करते हुए कुम्भकर्ण की नासिका को तोड़ दिया और उसे अपने हाथों में ले लिया, तो कुम्भकर्ण नासिका विहीन होकर अपार लज्जा का अनुभव करने लगा। अब उसकी मुखाकृति भी पूरी तरह नष्ट–भ्रष्ट हो चुकी थी। अब वह केवल नासिका विहीन ही नहीं था वरन सुग्रीव ने उसके कानों को भी नखों से विदीर्ण कर दिया था। अब वह बहुत भ्रमित हो उठा। एक विक्षिप्त की भाँति वह व्यवहार करने लगा। जब उसने आक्रमण को रोकने का प्रयास किया तो वह पूर्णतः असफल हुआ। उसका रुप विकृत हो ही चुका था,अब उसको गहरी निराशा का भी अनुभव हो रहा था। उसने सोचा कि इस स्थिति की अपेक्षा तो मृत्यु ही अधिक श्रेयस्कर होगी। वह शीघ्र ही आक्रमण के लिए प्रस्तुत हो गया। कुम्भकर्ण ने विकराल रुप धारण कर लिया। उसने भीषण आक्रमण किया। इस बार भी उसने असंख्य वानरों का भक्षण किया। वह क्रूरतापूर्वक उनका रक्तपान करने लगा।

अध्याय – 23

1

स्पष्ट ही है कि जब कुम्भकर्ण वानरों की सेना का भक्षण करने लगा,तो वानर सेना परास्त–सी हो गयी। उसने सभी योद्धाओं को आश्चर्यचकित एवं स्तम्भित कर दिया। राक्षस कुम्भकर्ण का मुख बाड़व–मुख की भाँति था। इतने भीषण शत्रु का वध राजा राम के हाथों ही होना चाहिए। वे ही इस राक्षस का वध करने में पूर्ण समर्थ हैं। यह विभीषण का विचार था। वे चाहते थे कि राम ही इस क्रूर राक्षस का हनन करें। विभीषण को सम्पूर्ण जगत से प्रेम था और उनके ह्रदय में सम्पूर्ण विश्व की मंगल–कामना थी।

2

उस समय श्री राम तथा लक्ष्मण साथ ही साथ अपने–अपने धनुष पर बाण चढ़ाये हुए युद्व के लिए सन्नद्ध खड़े थे। सर्वप्रथम लक्ष्मण ने अपने बाण का प्रहार कुम्भकर्ण पर किया। उनका बाण अत्यन्त शक्तिशाली था। उसमें से अग्नि की ज्वालाएँ फूट रही थीं। बाण के लगने से कुम्भकर्ण का कवच नष्ट हो गया। उसी प्रहार से उसका स्वर्ण मुकुट भी चूर–चूर होकर पृथ्वी पर गिर पड़ा। कुपित होकर कुम्भकर्ण ने युद्व में और अधिक भीषण रुप धारण कर लिया। उसने अपार पराक्रम का परिचय दिया। वह अत्यन्त क्रुद्व हो गया था। उसको मृत्यु का लेशमात्र भी भय नहीं था।

3

राम ने भी अपने ह्रदय में निर्णय कर लिया कि उन्हें प्रहार करना है। उन्होंने यह भी देखा कि कुम्भकर्ण का कवच पूर्णरुपेण नष्ट–भ्रष्ट हो चुका है। उन्होंने अमोघ बाण का प्रहार करने का निश्चय किया। इस बाण का वे पहले कई बार सफलता पूर्वक प्रयोग कर चुके थे। उन्होंने कुम्भकर्ण पर उसी बाण को चला दिया। वास्तव में उसी बाण से राम ने खर, दूषण, त्रिशिरा आदि राक्षसों का वन में वध किया था। कुछ समय तक लक्ष्य को विधिवत् साध कर उन्होंने तत्काल कुम्भकर्ण पर अमोघ बाण से भीषण प्रहार कर दिया।

4

उसकी दोनों बड़ी–बड़ी लम्बी टाँगों पर राम ने बाण से प्रहार किया था,जिससे उसकी दोनों टाँगें टूट गयीं। अब वह घुटनों के बल सरक–सरक कर चल रहा था। उसका चलना ऐसा प्रतीत हो रहा था, जैसे कोई बहुत नाटा व्यक्ति धीरे–धीरे चल रहा हो। उसने अपनी विशाल गदा को प्रहार करने के लिए ऊपर उठाया। उसका भारी एवं भीषण फौलादी स्वरुप अग्नि की लंपटें सी बिखेर रहा था। उसकी इस गदा की चौड़ाई इतनी अधिक थी कि कोई भी व्यक्ति केवल उसको अपनी गोद में ही धारण कर सकता था। कुम्भकर्ण ने उस गदा से आक्रमण करने का निश्चय किया। उसने सोचा कि शीघ्र ही वह राम के बाणों के प्रहार को गदा से असफल कर देगा।

5

बाण के प्रहार से उसकी दाहिनी भुजा भी कटकर शरीर से अलग हो गयी। अब केवल उसकी बायीं भुजा ही शेष थी। इस प्रकार अब उसका एक ही हाथ शेष रह गया था। उसने उसी हाथ में एक विशाल वृक्ष पकड़ लिया। उस वृक्ष को उसने गदा की भाँति धारण कर लिया परन्तु उसका यह प्रयास भी व्यर्थ रहा। राम ने दूसरे बाण से कुम्भकर्ण की बायीं भुजा को भी काट डाला। अब कोई भुजा शेष नहीं थी। केवल उसका शरीर तथा सिर ही शेष रह गया था।

6

यद्यपि राम ने उसे भुजाओं से विहीन कर दिया था,फिर भी वह और विकराल रुप धारण कर आक्रमण करने के लिए आगे बढ़ा। उसकी आँखों से क्रोधाग्नि ज्वालाओं की भाँति निकल रही थी। उसके बड़े–बड़े दाँत तीक्ष्ण एवं भयानक थे। वे बिजली की भाँति चमक रहे थे। वह अपने मुख को फाड़ कर भीषण रव से निरन्तर गर्जना कर रहा था। उस समय उसकी उपमा भयानक भूत–प्रेतों अथवा शैतान के भीषण स्वरुप से दी जा सकती थी। इसीलिए उसे देख कर अपार भय उत्पन्न हो रहा था।

7

जब कुम्भकर्ण अपना मुख फाड़कर राम के सामने आया,तो राम ने बाणों की बौछारों से उसका मुख भी भर दिया। उसका मुख बन्द हो गया और उसका दम घुटने लगा। वह अब मुंह से एक शब्द भी बोल नहीं सकता था। उसके पश्चात् राम ने फिर भीषण बाणों की वर्षा की। उन्होंने अब केवल कुम्भकर्ण को ही अपना लक्ष्य बनाया। कुम्भकर्ण उन बाणों के लक्ष्य से बच नहीं सका। सभी बाण उसके शरीर में प्रवेश कर गये। उसके हृदय को बाणों ने वेध दिया। इस प्रकार राम ने कुम्भकर्ण को धराशायी कर दिया।

8

राम के सभी बाण उसके वक्षस्थल में प्रवेश कर गये थे। इन बाणों ने उसका पूरा शरीर ही बेध डाला। कुम्भकर्ण के शरीर से रक्त निकल कर बहने लगा। उसके मुख से रक्त की धाराएं फूट निकलीं। उसकी नासिका से भी रक्त बह रहा था और अब तो उसके अंग–प्रत्यंग से रक्त के फव्वारे छूटने लगे थे। उसके कानों से भी रक्त निकल रहा था। उसके पश्चात् कुम्भकर्ण पृथ्वी पर नीचे गिरकर काँपने लगा। यह ऐसा लग रहा था जैसे किसी पर्वत की चोटी पर वज्रपात हो गया हो और उस पर विचित्र–सा कम्पन हो रहा हो। बहुत से वानर उसके गिरने से ही दब गये और कुचल कर चूर हो गये। यह ऐसा लगा जैसे किसी ने धान कूट दिया हो। अनेक वानर मर कर ढेरों में पड़े हुए थे। कुछ मृतक से दिखायी दे रहे थे। वे कुम्भकर्ण के विशाल शरीर के नीचे दबे हुए थे।

देवताओं के समूह गगनमंडल पर अवस्थित होकर जयजयकार करने लगे। उनका घोर स्वर सम्पूर्ण वातावरण में गूंज रहा था। हरि, हर, यम, वरुण, कुबेर, निरीति तथा अन्य ऋषिगण प्रसन्न होकर राम का गुणगान कर रहे थे। उनको कुम्भकर्ण की मृत्यु से अपार हर्ष हो रहा था। सम्पूर्ण जगत में यह राक्षस उपद्रव का एक प्रधान कारण बना हुआ था। पृथ्वी भी संकेतात्मक ढंग से कंपन प्रकट कर रही थी। उस अवसर पर जैसे भूकम्प–सा आ गया हो। यह कंपन पृथ्वी के उल्लास को प्रकट कर रहा था। सागर अत्यन्त आनंदपूर्वक लहरा रहा था मानो वह नृत्य कर रहा हो। उसकी लहरें चंचल गति से उठ रही थीं। ऐसा लगता था जैसे वे खेल, खेल रहीं हों। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे लहरें प्रसन्नता पूर्वक हाथ उठा कर अपने उल्लास का परिचय दे रही हों।

10

महान शक्तिशाली योद्धा कुम्भकर्ण ने राम के हाथों वीरगति पाई है, यह समाचार पाने पर रावण रो पड़ा। उसके दुःख की अब सीमा नहीं थी। भय के कारण उसकी विचार–शक्ति लगभग समाप्त हो चुकी थी। इन्द्रजीत मेघनाद के साथ अन्य सभी राजपुत्र कुम्भकर्ण के वध का बदला लेने के लिए रावण के समक्ष उपस्थित हो गये। राजपुत्र राक्षस त्रिशिरा अवस्था में सबसे बड़ा था । उसके पश्चात् नरान्तक का स्थान था। एक और अन्य राजपुत्र था, जिसका नाम त्रिकाय था।

11

अब तक बचा देवतान्तक रावण का चौथा पुत्र था। वे सभी अपार शक्तिशाली तथा वीर योद्धा थे। उनकी अवस्थाएँ भी बहुत अधिक नहीं थीं। उनके दो राक्षस चाचा सदैव ही युद्धक्षेत्र में उन सभी राजपुत्रों की रक्षा करते रहते थे। वे युद्धक्षेत्र में उनके साथ सदैव रहते थे। उन राक्षसों के नाम मत्तक एवं मत्त थे। वे युद्धकला में पूर्ण निपुण थे। उनकी प्रसिद्धि भी बहुत अधिक थी। वे साथ ही साथ भीषण शब्द करते थे, मदिरापान करते थे और तृप्त होकर बाद में युद्धक्षेत्र में अपना रण–कौशल दिखाते थे। एक बार उन्होंने अपने सम्पूर्ण शत्रुओं को परास्त कर दिया था। यह सभी गतिविधियाँ निकट भूतकाल में ही हुई थीं।

12

तत्पश्चात् दशमुख रावण के सभी राजपुत्र युद्ध में प्रयाण करने के उद्देश्य से आगे बढ़े। उनके पराक्रम के कारण वानर सेना नष्ट–भ्रष्ट हो गयी। वानर सेना को जैसे उन्होंने फूंक से उड़ा दिया हो। अभी कुछ समय पूर्व तक उन पर आक्रमण नहीं हो रहे थे। अब फिर राक्षसों ने उनसे नया संघर्ष छेड़ दिया। वे भीषण कोलाहल एवं युद्ध की गतिविधियों से त्रस्त हो उठे। अनेक वानर तो धराशायी भी हो गये थे। उस अवसर पर वीर वानर योद्धाओं ने उन वानरों की भयावह परिस्थिति को देखा। अंगद अपने हाथ में गदा धारण किये हुए थे। उनका हृदय क्रोधाग्नि से प्रज्वलित हो रहा था। उनकी दृष्टि राजपुत्र नरान्तक की

ओर गयी। अगंद ने उस पर भीषण प्रहार का उसका संहार कर दिया। इस प्रकार राजपुत्र नरान्तक की मृत्यु हो गयी।

13

इस भीषण परिस्थिति में वीर योद्धा त्रिशिरा एवं त्रिकाय ने अपनी पूरी शक्ति से वानरों पर आक्रमण करके बदला लेने का निश्चय किया। वे दोनों ही बड़े शक्तिशाली योद्धा थे। पराक्रम एवं क्रूरता की चरम सीमा का प्रदर्शन करते हुए वे दोनों युद्ध में आगे बढ़े। उनके साथ उनका छोटा भाई देवतान्तक भी था। युद्ध में उनकी सहायता करने के लिए वह भी आ गया था। उसने आते ही आते अंगद पर आक्रमण कर दिया परन्तु अंगद ने बड़ी कुशलता से अपनी रक्षा की। उसका आक्रमण असफल रहा। वे युद्ध-कला में पूर्ण पारंगत थे। उन्होंने उस आक्रमण को बड़ी दृढ़ता से असफल किया था। वास्तव में शत्रु से सुरक्षा और आत्म् रक्षा करने के दाँवपेंचों का उन्हें पूर्ण ज्ञान था। उन्होंने राक्षसों को पीछे ढकेल दिया। वे दृढ़ एवं स्थिर होकर वहीं डटे रहे। एक क्षण में उन्होंने शत्रु का आक्रमण विफल कर दिया।

14

इस भयंकर परिस्थिति को देखते ही नील तथा हनुमान जी शीघ्र ही अंगद की सहायता के लिए आ गये। उन्होंने एक पर्वत शिखर को उखाड़ कर प्रहार की योजना बनायी। पहले के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग करने पर उन्हें कभी भी पूर्ण सफलता प्राप्त नहीं हो सकती थी। इस बीच त्रिशिरा ने तीक्ष्ण एवं उत्तम बाणों से भीषण प्रहार किया। वास्तव में उसके अस्त्र-शस्त्र युद्धक्षेत्र में कभी भी नष्ट नहीं हुए थे, परन्तु इस बार उसके बाण टूट गये। उनकी तीक्ष्णता समाप्त हो गयी थी। वे पीछे की ओर पर्वत शिखर से टकराकर लौट आये। इतने विशाल एवं कठोर शिला खण्ड से टकराते ही वे सभी अस्त्र विफल हो गये थे।

15

राजपुत्र देवतान्तक की गदा बड़ी ही विशाल एवं प्रखर थी। उससे जैसे एक विशेष प्रकार की प्रकाश किरणें-सी निकल रहीं थीं। जिस शत्रु पर उस गदा का प्रहार होता, वह संभल नहीं पाता था। देवतान्तक ने पूरी शक्ति से उस गदा का प्रहार किया। उसके मन में किसी प्रकंर की दया का भाव नहीं था। गदा-युद्ध के किसी भी नियम का वह पालन नहीं कर रहा था। वह सभी की जॉघों पर प्रहार कर रहा था तथा वानरों की हड्डियों को चूर-चूर करने में लगा था। गरदन पर भी वह अवसर पाते ही प्रहार करता था। उसे मर्यादा का कोई ध्यान नहीं था। उसने हनुमान जी से भीषण संघर्ष किया। हनुमान जी ने देवतान्तक को पकड़कर अपनी ओर पूरी शक्ति से खींच लिया। उसके पश्चात् भाँति-भाँति से कष्ट देकर उसने आघात पहुंचाने का प्रयास किया। अन्त में उसको हनुमान जी ने दबोच लिया और उसका संहार कर दिया। यह कार्य उन्होंने इसलिये नहीं किया था कि देवतान्तक

का प्राणान्त हो जाय। यह उनका लक्ष्य भी नहीं था। वे तो केवल उससे छेड़छाड़ कर उसे कष्ट पहुंचा रहे थे,परन्तु इन्हीं गतिविधियों में उसकी मृत्यु हो गयी।

16

उनके चाचा राक्षस मत्त का वध भी शरभ नामक वानर ने कर दिया। राक्षस समरमत्त ने गदा द्वारा प्रहार किया, परन्तु वह भी विफल कर दिया गया। समरमत्त पर वानर नील ने सम्पूर्ण शक्ति से शिलाखण्ड से प्रहार किया। इस प्रहार से वह धराशायी हो गया। राजपुत्र त्रिशिरा ने अपार पराक्रम का परिचय देते हुए अपनी महान शक्ति का प्रदर्शन किया। वह चाहता था कि उसे विजय श्री प्राप्त हो सके,परन्तु ऐसा न हो सका। उन्होंने अपने खड्ग एवं हंसिए को चारों ओर घुमाया। वे चमचमा रहे थे। हनुमान जी ने तीव्रगति से आगे बढ़ कर उन अस्त्रों को उसके हाथों से छीन लिया। उसके पश्चात् उसी के अस्त्र से उन्होंने त्रिशिरा का वध कर दिया।

17

अब केवल राक्षस अतिकाय ही युद्ध में शेष बचा था। वह भीषण युद्ध कर रहा था। अपने सभी शस्त्रों को घुमाते हुए वह घोर आक्रमण कर रहा था और अपनी रणकुशलता का परिचय दे रहा था। उसका रथ भी एक पर्वत शिखर की भाँति विशाल था। उसके उस महान रथ को एक सहस्र अश्व उस समय एक साथ खींच रहे थे। उस विशाल रथ के पहियों के नीचे दबकर असंख्य वानर मृतप्राय हो गये थे। वह स्वयं भी वानरों पर घोर प्रहार कर रहा था। अनेक वानरों को उसके घोड़ों ने अपनी टापों से कुचल डाला था अथवा उनको मुखों से काट कर धराशायी कर दिया था। वे पृथ्वी पर गिर-गिर कर लुढ़क रहे थे। युद्ध से डर कर वे बचने का प्रयास कर रहे थे।

18

इस भीषण परिस्थिति को देखकर राजपुत्र लक्ष्मण के मन में करुणा का भाव जागृत हो गया। वानरगण दुःखी और निराश हो रहे थे। उन पर राक्षसों के भीषण प्रहार हो रहे थे, अतएव लक्ष्मण ने शीघ्र ही राक्षस अतिकाय से लोहा लिया। उन्होंने वीर अतिकाय पर भीषण आक्रमण किया। दोनों वीर बाण विद्या में कुशल थे। लक्ष्मण एवं अतिकाय के बाण एक दूसरे से टकराये। टक्कर लगने से दोनों के बाणों में भीषण संघर्ष हुआ। दोनों ही योद्धा अपनी-अपनी बाण विद्या की निपुणता का परिचय दे रहे थे। एक दूसरे पर वे तीव्रगति से आक्रमण कर रहे थे। यह संघर्ष आकाश में हो रहा था। अनेक बाण आकाश में छाने लग गये थे, परन्तु किसी भी योद्धा को कहीं चोट नहीं आयी। बाणों से अग्नि वर्षा ही होती रही।

19

उनके पास भाँति-भाँति के तीक्ष्ण बाण थे। इनमें सोरांबाण, महेन्द्र, ईशीका तथा अग्नि बाण भी थे। इस प्रकार इन भीषण योद्धाओं के बाण एक दूसरे के बाणों से टकरा रहे थे। अतिकाय एवं लक्ष्मण दोनों के बाण परस्पर टकरा तो रहे थे, पर वे किसी को घायल नहीं कर सके। उसी समय राजपुत्र लक्ष्मण को कमलयास्त्र शस्त्र का स्मरण हो आया, जो सदैव ही शत्रुओं को युद्ध में पराजित कर देता था। इसी बाण के प्रहार से अन्त में लक्ष्मण ने अतिकाय राक्षस का वध कर दिया। इस अस्त्र के समक्ष अतिकाय शक्तिहीन-सा हो गया तथा लक्ष्मण ने उसका वध सरलता से कर लिया।

20

जब दशमुख रावण के सभी पुत्र युद्धक्षेत्र में अन्य संबंधियों के साथ हताहत हुए तो रावण को स्पष्ट हो गया कि अब उसका काल भी समीप ही आ गया है। अब उसको अपनी मृत्यु का पूरा आभास होने लगा था। अब विजय अथवा पराजय की कोई कामना उसमें शेष नहीं रह गयी थी। उसका हृदय दुःखी था। उसके समक्ष मृत्यु की कल्पना ही शेष रह गयी थी। उसके सभी राजपुत्र वीरगति को प्राप्त हो चुके थे। केवल एक ही राजपुत्र जीवित था। वह था इन्द्रजीत मेघनाद।

21

उसने अपने पिता रावण से कहा कि हे पिता जी ! अब आप मुझे अपना कर्तव्य पूरा करने का अवसर दीजिए। मैं आपकी सेवा के लिए अपना प्राणार्पण करने को उद्यत हूं। आपका शत्रु विजयी होने की कल्पना कर रहा है। मुझे पूरी आशा है कि मैं सहस्रों रामों का अकेले ही सामना कर सकता हूं। मैं राम को नष्ट करके युद्ध में उनका वध कर दूंगा। यहाँ तक कि मैं उनका पूर्ण संहार भी कर दूंगा। मैं असंख्य वानरों का पहले ही संहार कर चुका हूं। इस बार फिर रण-क्षेत्र में जाकर मैं उन सभी वानरों को धराशायी कर दूंगा। वे वानर राम के मित्र हैं तथा स्वभावतः महानीच है। मैं उन पर इसलिए आक्रमण करना चाहता हूं कि मैं उनका सर्वनाश कर उनको धराशायी कर सकूं। चाहे वे पर्वतमाला की भाँति ही शक्तिशाली क्यों न हों, मेरे समक्ष वे नगण्य-से हैं। मुझे अब मनुष्यों से युद्ध करना है क्योंकि मनुष्य निकृष्ट एवं साधारण प्राणी होता है अतः उनका वध करना आवश्यक है।

22

राम की समानता तो किसी पतले शक्तिहीन मृग से की जा सकती है। इन मनुष्यों का जीवन तो शशक की भाँति है। बिना किसी अस्त्र-शस्त्र के प्रयोग के ये मनुष्य तपस्या का दिखावा करते हैं। वे बहुत ही नीच एवं कुटिल वृत्ति के हैं। वे बगुला भगत बने हुए नीचता एवं कुटिलता का परिचय देते हैं। वे बनावटी ढंग से सज्जनों का सा स्वरुण धारण किये रहते हैं। उस रुप में दूसरों का वध करने में उन्हें अपार आनंद का अनुभव होता है। वे पंडितों की भाँति व्यवहार करते हैं,यद्यपि उनका स्वरुप उन अंडों की भाँति है,जो बाहर से तो श्वेतवर्ण के

दृष्टिगोचर होते हैं पर भीतर का भाग एवं तत्व चिपकने वाला होता है। वह भाग दुर्गन्धियुक्त तथा लसदार भी होता है। राम का व्यक्तित्व आडम्बरपूर्ण है। उनके आन्तरिक एवं बाह्य रुप में बहुत अन्तर है। सभी का उनके प्रति यही विचार है कि वे तपस्वी हैं, परन्तु स्पष्ट ही उन्होंने अनेक प्राणियों का वध किया है। वे निरन्तर इस प्रक्रिया में लगे रहते हैं; इसीलिए राम का वध निश्चय ही किया जाना चाहिए।

23

इन्द्रजीत ने भीषण सिंहनाद किया। जब वह युद्ध के लिए प्रस्तुत होकर खड़ा हुआ तो उसके हृदय में अपार दृढ़ता थी। उसका स्वरुप भयानक एवं पराक्रमी योद्धा की भाँति था। जब रावण ने इन्द्रजीत मेघनाद के इतने उच्च मनोबल को देखा तो उसका दुःख बहुत कुछ कम हो गया। मेघनाद का स्वरूप अब मृगराज सिंह की भाँति लग रहा था। वह शीघ्र ही युद्ध क्षेत्र में जाने के लिए उद्यत था। मेघनाद ने पूजा -अर्चना की। उसको एक विशाल रथ दिया गया तथा ऐसे तीक्ष्ण बाणों से सुसज्जित किया गया, जो लगते ही स्मरण शक्ति को पूर्ण रुपेण समाप्त कर देते थे। इस प्रकार के सभी अस्त्र-शस्त्र इन्द्रजीत मेघनाद को देवों द्वारा भेंट के रुप में प्राप्त हुए थे।

24

जब इन्द्रजीत मेघनाद ने युद्धक्षेत्र में प्रयाण किया, उस समय सूर्यास्त हो रहा था। दसों दिशाओं में रवि का द्रुतगामी रथ घूम कर लौट पड़ा था। उसके फलस्वरुप अन्धकार का साम्राज्य बढ़ता जा रहा था। चारों ओर अन्धकार ही अन्धकार छाया हुआ था। बड़ी ही शक्ति एवं साधना से इन्द्रजीत ने मन्त्रों का उच्चारण करना प्रारम्भ कर दिया। उसने ऐसी अलौकिक शक्तियाँ प्राप्त कर ली थीं कि वह स्वयं तो सबको देख सकता था परन्तु उसको कोई भी देख नहीं सकता था। उसने ऐसी शक्तियों का मायावी जाल बिछा दिया था, जिससे उसकी उपस्थिति का किसी को कोई भी आभास नहीं हो सकता था। सर्वप्रथम उसने युद्ध में सभी वानरों पर विमोह-बाण का भीषण प्रहार किया। सभी वानरगण उस बाण के प्रयोग से ही निद्रामग्न हो गये और पृथ्वी पर लेट गये।

25

मायावी अस्त्र के प्रयोग के कारण वानर-सेना घोर निद्रा में लेटी पड़ी थी। उसकी नींद समाप्त ही नहीं हो रही थी। इस परिस्थिति को देखकर मेघनाद को अपार हर्ष हुआ। उसने अपने मायाजाल की सफलता को प्रत्यक्षतः देखा। उसे ऐसा लगा जैसे उसने सम्पूर्ण वानर-सेना पर अधिकार कर उसे परास्त कर दिया है। उसको अब किसी भी प्रकार का भय नहीं था। जो वानर संघर्ष के लिए आता था, मेघनाद द्वारा सरलता से उसका वध कर दिया जाता था। वह छिप कर चोरी-चोरी असंख्य वानरों का वध कर रहा था तथा युद्ध के किसी भी नियम का पालन नहीं कर रहा था। उसका व्यवहार बहुत ही निम्न कोटि का था। उसने अनगिनत वानरों का निर्भयता से वध कर दिया था। वह बिना किसी निर्णय एवं लक्ष्य-साधना के निरन्तर

बाणों की वर्षा कर रहा था। राम से अधिक दूरी पर रहने वाले वानर मारे गये थे। अब उनमें से कोई जीवित नहीं बचा था।

26

वे वानर जो योद्वा थे,रण कुशल थे और युद्व में भीषण संघर्ष करते थे, श्री राम के आसपास ही उनकी सुरक्षा के लिए इस समय उपस्थित थे। वहीं से वे युद्व कर रहे थे। राम के आसपास होने के कारण उनके प्राण की रक्षा भी हो रही थी। उनकी आँखों में गहरी निद्रा-सी प्रतीत हो रही थी। वे गहरी नींद में सोने के अभिलाषी थे। उनके ऊपर भी जादू अथवा माया-विद्या का पूरा प्रभाव पड़ चुका था। मेघनाद के जादू के प्रभाव से उन सबको गहरी नींद आ रही थी। यहाँ तक कि श्री राम भी उस जादू के कारण निद्रा के प्रभाव से बच नहीं सके थे। मोहन-अस्त्र ने उनको भी पूरी तरह अपने प्रभाव में ले लिया था। नींद के झोंके के कारण राम मौन-से खड़े थे। सोचने की शक्ति उनमें भी नहीं रह गयी थी। युद्वक्षेत्र में ही छोटे भाई लक्ष्मण के साथ वे भी निद्रा के वशीभूत होकर लेट गये।

27

जब श्री राम तथा लक्ष्मण पर मोहन अस्त्र का पूरा प्रभाव दिखायी दिया, तो शीघ्र ही मेघनाद एक चोर की भाँति पीछे की ओर हटकर भागने लगा। उसको भय था कि यदि विभीषण ने इस वास्तविकता को जान लिया तो उसका पूरा रहस्य खुल जायेगा। विभीषण शीघ्र ही जादू के अस्त्र का उचित उत्तर भी दे सकेंगे। वास्तव में विभीषण पर इस मोहन अस्त्र का कोई भी प्रभाव परिलक्षित नहीं हो रहा था। वे सोये ही नहीं थे। वे अपनी आँखों को बार-बार पोंछ कर खोलने का प्रयास करते थे। उनकी आंखों में निद्रा का लेशमात्र भी संकेत नहीं था। वे पूर्ण जागृत अवस्था में थे और बड़ी ही चतुरता एवं कौशल से अपने कर्तव्य का पालन कर रहे थे।

28

विभीषण के पास एक दूसरी शस्त्र विद्या थी जिसको "मशाल" के नाम से पुकारा जाता था। वह विद्या नींद लाने वाली जादू-विद्या से अधिक महत्वपूर्ण थी और उसको भी परास्त कर सकती थी। यह विद्या विभीषण के पास थी, इसे मेघनाद जानता था। इसी विद्या के कारण विभीषण के ऊपर नींद के बाण का लेशमात्र भी प्रभाव नहीं पड़ सका। उन्हें किसी प्रकार का विभ्रम भी नहीं हुआ, जैसा कि अन्य योद्धाओ को हुआ था। वे बार-बार अपनी विद्या का स्मरण कर रहे थे। किसी प्रकार का भी निर्णय वे नहीं ले पा रहे थे। अतएव उन्होंने ईश्वर से प्रार्थना प्रारम्भ कर दी। उन्होंने समझ लिया कि इन्द्रजीत बहुत ही दुष्ट एवं निम्न कोटि का राक्षस है। यही कारण है कि युद्वक्षेत्र में उसने एक तस्कर की भाँति व्यवहार किया है और छिप कर धोखा देने के लिए ही उसने मोहन-अस्त्र का प्रयोग किया है।

29

निश्चय ही छल कपट एवं जादू करने के लिए इन्द्रजीत यहाँ आया होगा। विभीषण ने तुरन्त ही इस वास्तविकता को समझ लिया। उन्होंने (विभीषण ने) इन्द्रजीत की ओर अपनी जादू-विद्या का प्रयोग क़िया। जब विभीषण ने राम की ओर देखा, तो वे उन्हें इस रुप में दिखायी दिये जैसे कोई व्यक्ति शैतान के चंगुल में फंस गया हो और शैतान ने उस व्यक्ति की दुर्गत-सी कर दी हो। मेघनाद के जादू के प्रभाव के कारण राम के मुख से फेन सा निकल कर गिर रहा था। उनकी आँखें जैसे पलटी हुई हों। घबराहट के कारण उनके मुख से लार सी टपक रही थी। उनकी बुद्धि भी उचित ढंग से सोचने की सामर्थ्य खो बैठी थी। वे इस प्रकार सोचते थे, जैसे वे किसी राक्षस के अधिकार में आकर बन्दी हो गये हों। विभीषण ने राम के पास जाकर उनको जगाया और उनसे आग्रह किया कि वे जल से अपना मुख धोने की कृपा करें। उसी समय राम को चेतना प्राप्त हुई। उन्हें सभी बातों का विधिवत् स्मरण हो आया। अब उनको नींद नहीं सता रही थी।

30

विभीषण ने वानरराज सुग्रीव को भी उनके पास़ जाकर जगाया। इसी प्रकार उन्होंने हनुमान,नील और अंगद को नींद से उठाया। वे सभी चेतन अवस्था में आकर आश्चर्यचकित हो गये। अभी वे पूरी तरह विचार नहीं कर पा रहे थे। वे लोग घबराये हुए थे। उन्होंने जादूगरी के द्वारा निद्रा का यह भीषण प्रकोप देखा था। बाद में सभी उठकर खड़े हो गये। उन्होंने शीघ्र ही अपनी पूर्ण चेतना प्राप्त कर ली। जब विभीषण ने यह देखा कि असंख्य वानरों का मोहन अस्त्र से वध किया जा चुका है, तो उन्होंने भी अपनी शस्त्र विद्या एवं जादूगरी का जाल बिछाया। चारों ओर उन्हें मृतक वानरों के ढेर ही ढेर दिखायी दे रहे थे। इन्द्रजीत ने युद्धक्षेत्र में चोरी से छिपकर उन सभी वानरों का वध कर दिया था।

31

जब राम ने मृत वानरों के समूह को पृथ्वी पर इस दयनीय अवस्था में देखा तो उनका हृदय व्यथित हो उठा। वानरों के प्रति अपार करुणा से वे भर उठे। वानरों के प्रति उन्हें अत्यधिक दया हो आयी। उनकी यह मृत्यु युद्ध में वीरगति प्राप्त करने वाले योद्धा की मृत्यु नहीं थी वरन् उन सबको छल-प्रपंच एवं चोरी के द्वारा प्राणहीन किया गया था। उसके पश्चात् हनुमान जी से उन्होंने आग्रह किया कि वे महोषधि प्राप्त करने के लिए जाएं। उस औषधि का रस अमृत तुल्य था। संजीवनी बूटी की भाँति वह क़िसी को भी जीवित कर सकता था। उसी औषधि के प्रयोग से मृत-वानरों को पुनः जीवित किया जा सकता था। उस महोषधि की पत्तियों से यह उपचार संभव था। वह औषधि बहुत ही प्रभावशाली थी।

32

इस उत्तम औषधि (महोषधि) को प्राप्त करने का स्थान हिमालय पर्वत का शिखर था। इस औषधि का पौधा तथा उसकी पत्तियाँ स्वास्थ्य–लाभ के लिए अत्यन्त प्रसिद्ध थीं। उसमें इतनी शक्ति थी कि मृतक को भी वे जीवित कर सकती थीं। किसी भी प्रकार के घाव को पूरित कर वे ठीक कर सकती थीं। इसी महोषधि को प्राप्त करने के लिए हनुमान जी से आग्रह किया गया था। इसी औषधि को ढूंढ़ने की उन्हें आज्ञा दी गयी थी। बिना किसी संकोच के हनुमान जी ने उस औषधि को लाने के उद्देश्य से प्रस्थान किया। वे आकाश में उड़ गये और हिमगिरि पर जा पहुंचे।

33

वास्तव में महावीर हनुमान जी को औषधि के विषय में पूरी जानकारी नहीं थी। वे उस बूटी के पत्रों को भली भाँति पहचानते भी नहीं थे। वे अत्यन्त दुःखी होकर भ्रम में पड़े हुए थे तथा मौन होकर औषधि के विषय में विचार कर रहे थे। अन्त में उन्होंने उस पर्वत–शिखर को ही उपाट लिया तथा उसे लेकर आकाश में उड़ गये। कुछ ही क्षणों में वानर सेना के मध्य आकर वे उपस्थित हो गये। उनके हाथों में पर्वत शिखर था, जिस पर सभी प्रकार की बहुमूल्य जड़ी बूटियाँ थीं। इस प्रकार वे अपने साथ उस महान औषधि को भी ले आये। उस शिखर पर बहुत सी औषधियाँ थीं। राम ने शीघ्र ही उन औषधियों को पहचान लिया। उन्हीं के सेवन से मृत वानरों को पुनः जीवित किया जा सकता था और उनका विधिवत् उपचार भी हो सकता था।

34

मृत वानरों पर वह औषधि छिड़की गयी तो वे सभी एक साथ ही जागृत होकर उठ बैठे। वे सभी भ्रमित एवं आश्चर्यचकित थे। सभी ने अंगड़ाइयाँ लेकर अपने मुखों एवं आँखों को जल से धोया। उनको देखने से ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे गहरी निद्रा से वे सोकर उठे हों। वानरों ने अब थोड़ा–सा अमृत भी चाट लिया। वे इससे अत्यन्त प्रसन्न हो गये। सभी युद्ध के लिए उद्यत होकर सिंहनाद कर रहे थे। वे शीघ्रातिशीघ्र रण क्षेत्र में जाने के लिए उतावले–से हो रहे थे। उनके हाथों में हंसिये एवं हथौड़े थे जिनसे वे प्रहार करना चाहते थे।

35

वे सभी अत्यन्त क्रुद्ध थे। राक्षसों ने उनका वध निद्रा की अवस्था में किया था। इसी का बदला लेने के लिए वानरों ने लंका में आग लगा दी। रावण का सुन्दर नगर जल कर भस्मसात हो गया। अग्नि की उष्ण लपटें चारों ओर उठने लगीं। भीषण रुप में संहार का दृश्य उपस्थित हो गया। उनकी उष्णता से सम्पूर्ण वातावरण जैसे प्रज्वलित हो रहा हो। रावण की राक्षस–सेना इस भीषण अग्निकाण्ड को देखकर आश्चर्यचकित रह गयी। वे राजमहल को जलते देखकर विस्मय में पड़ गये। इन्द्रजीत चिन्तित होकर पीला पड़ गया था। उसका तेज और कान्ति जैसे समाप्त हो गयी थी। उसको स्वयं अपने ऊपर ही तरस आ रहा था। उसके कृत्यों का प्रत्युत्तर शीघ्र

ही उसे प्राप्त हो गया था। वह कान्तिहीन होकर इस भीषण दृश्य को देख रहा था।

36

कुम्भ एवं निकुम्भ नामक दो राक्षस भाई-भाई थे। वे शीघ्र ही वानरों के आक्रमण का उत्तर देने के लिए रण-क्षेत्र में आये। पीतल अथवा ताम्र के कटोरों की भाँति उनकी भयावनी आकृति लाल-लाल, चौड़ी तथा गोल बड़ी-बड़ी आँखें भी आग उगल रही थीं। कुम्भकर्ण ने उन दोनों वीरों को अपने पुत्रों के रुप में स्वीकार किया था। उनके शरीर विशालकाय पर्वत श्रेणियों के समान थे। इससे पहले जब वे युद्धक्षेत्र में युद्ध करने आये, तो उन्होंने वीरोचित कार्यों को पूरा किया। चरित्रवान व्यक्तियों की भाँति उन्होंने अपना परिचय दिया। वास्तव में ऐसा कोई योद्धा नहीं था, जो उनसे संघर्ष कर उन्हें पराजित कर सकता।

37

उनके साथ अन्य वीर राक्षस योद्धा भी थे, जिनके नाम अकम्पन तथा कम्पन थे। वे बड़े ही रण-कुशल थे। प्रजंघा, विलोहिताक्ष आदि अन्य राक्षस योद्धा भी बड़े ही पराक्रमी तथा प्रसिद्ध थे। कई अन्य और वीर राक्षस थे, जिनमें ध्वजाक्ष का नाम बहुत ही विख्यात था। वे सभी निकुम्भ तथा कुम्भ की रक्षा में तत्पर थे। वे उनकी शक्ति बढ़ाते हुए सहायता कर रहे थे। वे सभी वानर-सेना को परास्त करना चाहते थे। यही उन सबकी कामना थी। उनको युद्ध क्षेत्र का गहरा अनुभव था। इससे पहले जब भी युद्ध क्षेत्र में गये थे, निश्चय ही उन्हें विजय-श्री प्राप्त हुई थी।

38

वे जिस योद्धा से भी संघर्ष करते थे, उसकी मृत्यु निश्चित हो जाती थी। वे युद्ध में दृढ़ रहते थे। कभी भी पीछे मुड़कर वे देखना नहीं जानते थे। उनका आक्रमण अग्नि की ज्वालाओं की भाँति भीषण होता था। उनसे उत्पन्न अग्नि की लपटें शिकार खेलती-सी लगती थी। वे केवल वानरों की सेना का ही शिकार करती रहीं। वानर सेना के जिस किसी भी योद्धा पर उन्होंने आक्रमण किया, उसी को उन्होंने धराशायी कर दिया। चाहे वह वानर योद्धा कितना भी शक्तिशाली क्यों न हो। वीर से वीर सेना रक्षकों को भी पीछे हटाने में वे सदैव ही समर्थ थे। वे आक्रमण करके किसी को भी भ्रमित कर सकते थे तथा सभी को एक ओर हटा कर वे अपनी शक्ति का परिचय देते थे। सेना के वीरों को वे इस प्रकार समेट कर अलग-अलग कर देते थे जैसे सागर अपनी लहरों को शनैः शनैः समेटता है तथा पूरे रुप में कभी स्थिर नहीं रह पाता है।

39

इस प्रकार आक्रमण् करने वाले इन भयानक राक्षसों का वध करने हेतु राम ने आदेश दिया। मृगया की भाँति होने वाली इन गतिविधियों को श्री राम ने भली भाँति पहचान लिया। इस अवसर पर अंगद से अधिक उपयुक्त एवं पराक्रमी योद्धा इस कार्य के लिए कोई दूसरा नहीं हो सकता था। राक्षसों को उनके भीषण आक्रमणों का कठोर उत्तर अंगद ही देते थे। उनकी स्वामिभक्ति अटल थी। राम के स्वामिभक्त अनुचर उनकी सेवा में सदैव ही प्रस्तुत रहते थे। राम के प्रति उनके अपार प्रेम की कोई सीमा नहीं थी। उन्होंने कभी भी इस बात पर ध्यान नहीं दिया कि राम ने उनके पिता बालि का वध किया था। क्या यह कभी संभव था कि अपने व्यवहार अथवा कार्यो में अंगद किसी नीच एवं मन्द-बुद्दि व्यक्ति की भाँति सामने आते ? उनका व्यवहार राम के प्रति कभी भी निम्न कोटि का नहीं हो सकता था। उन्हें राम से असीम प्रेम था।

40

राम ने भी अंगद को एक राजपुत्र एवं युवराज का पद देकर पूर्ण रुपेण सम्मानित किया था। इस प्रकार अंगद को उन्होंने पूर्ण शक्ति प्रदान की थी। वे सदैव ही राजा की भाँति राजसुख भोगने के अधिकारी थे। यही कारण था कि उन्होंने युद्वक्षेत्र में एक महान पराक्रमी योद्वा के रुप में अद्‌भुत रण कौशल का परिचय दिया। राक्षसों को पराजित करने का पूर्ण प्रयत्न उन्होंने किया। उनका यह प्रयास उस अभित्र मित्र के प्रयास की ही भाँति था, जो मित्रता के प्रेम को पूरी तरह निभाना जानता था। वे सदैव ही अपने को राम के प्रेम का ऋणी मानते थे। अपने ह्रदय में वे कृतज्ञ भाव धारण किये रहते थे। राम के इस ऋण को चुकाना वे अपना कर्तव्य समझते थे। लगता था जैसे उनका व्यक्तित्व एक विशाल मन्दिर की भाँति हो और राम उस मन्दिर में माणिक्य की मूर्ति की भाँति प्रतिष्ठित हों। वे सदैव ही राम की मूर्ति की पूजा करते रहते थे।

41

इस प्रकार राम के प्रति अंगद के ह्रदय में दृढ़ भक्ति थी। उन्होंने युद्व क्षेत्र में राक्षस अकम्पन को उसी प्रकार धराशायी कर दिया जैसे कोई किसी महिष का वध कर रहा हो। राक्षस कम्पन को युद्वक्षेत्र में ही बन्दी बना लिया गया। उन्होंने भीषण प्रहार कर उसे दूर फेंक दिया। यद्यपि इसी बीच शिलाखण्ड से टकरा कर उसके मुख चूर-चूर हो गया तो भी उसको कठोर पत्थर पर पछाड़ा गया और निरन्तर ही उस पर भीषण प्रहार किये जाते रहे। राक्षस प्रजन्घा पर बायें हाथ से अंगद ने भीषण प्रहार किया,जिससे उसकी आँखें बाहर निकल पड़ीं। उसके मुख पर भी भीषण प्रहार किया गया। उसकी नासिका चूर-चूर हो गयी। रक्त-रंजित उसकी फटी हुई नासिका बाहर निकल पड़ी।

42

युवराज अंगद ने राक्षस ध्वजाक्ष के हाथ से पताका छीन ली। उनके प्रहार से वह राक्षस पृथ्वी पर गिर

पड़ा। उस समय अंगद ने उसकी पताका से ही भीषण प्रहार कर उसे धराशायी कर दिया। उन्होंने उसकी रीढ़ के मध्य भाग से उसकी कमर को तोड़ दिया। उन्होंने उसकी गरदन को तीव्रता से घुमाया तथा तोड़ कर धड़ से अलग कर दिया। इस प्रकार उसका मस्तक शरीर से दूर जा गिरा। इसी बीच प्रसिद्ध वानर योद्धा द्विविध ने युद्ध में अभूतपूर्व कौशल का परिचय दिया। द्विविध का वक्षस्थल चौड़ा,शक्तिशाली एवं विशाल था। उन्होंने एक भीषण दण्ड से राक्षस विलोहिताक्ष पर घोर प्रहार किया। इस प्रकार उन्होंने अद्भुत पराक्रम का परिचय दिया। विलोहिताक्ष भी एक वीर,पराक्रमी योद्धा था। उसने उनके प्रहार को असफल कर दिया। तक्षक नागराज की भाँति उसने भी विकराल रुप धारण किया। उसने पूरी शक्ति से द्विविध पर आक्रमण किया,परन्तु द्विविध ने हथौड़े से आक्रमण कर उसको धराशायी कर दिया।

43

वीर वानर मयन्द ने भी अपनी रण – कुशलता का पूर्ण परिचय दिया। उन्होंने अपनी गदा को तीव्र गति से घुमाते हुये युद्ध में भाग लिया तथा अपार शौर्य का प्रदर्शन किया। राक्षस कुम्भ ने उनपर भीषण प्रहार किया,जिससे उनके वक्षस्थल पर आघात पहुंचा। बाणों के प्रहार से उनको उस राक्षस ने लगभग धराशायी –सा ही कर दिया था। युद्ध करते – करते उनकी शक्तियाँ लगभग क्षीण–सी हो चुकी थीं, इसीलिये वे शत्रु के आक्रमण को पूरी तरह झेलने में असमर्थ थे। फिर भी उन्होंने पूरी शक्ति से शत्रु से लोहा लिया। अपनी गदा को घुमाते हुये अपने गदा–कौशल का उन्होंने प्रदर्शन किया। स्वयं पर हुए आघात का उन्होंने कोई अनुभव नहीं किया।

44

जब अंगद ने अपने चाचा मयंद को इस भीषण परिस्थिति में देखा तो यह अनुभव किया कि वे शक्तिहीन हो चुके हैं। उसी समय उन्होंने एक भीषण शिला उपाट कर पूरी शक्ति से ऊपर की ओर उठा लिया। उस पर्वत शिखर को उन्होंने अपने हाथों पर इस प्रकार धारण कर लिया जैसे कोई व्यक्ति किसी कन्दुक को क्रीड़ा करते – करते हाथों में उठा लेता है। उनको इस कार्य में किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हुई। अंगद ने राक्षस कुम्भ के मुख को लक्ष्य बनाकर उस पर घोर प्रहार किया। पर्वत शिखर उस राक्षस पर गिराया गया। अंगद ने अनुमान लगा लिया था कि शिखर–प्रहार के अतिरिक्त अन्य किसी विधि से पराक्रमी राक्षस कुम्भ का वध करना संभव नहीं था।

45

राक्षस कुम्भ भी शत्रु का संहार करने में अत्यन्त कुशल था। उसके अस्त्र का नाम प्रतीपान था,जो विशेष रुप से शत्रुओं का संहार करने के लिए ही बनाया गया था। उसने शीघ्र ही अंगद पर उसी अस्त्र से आक्रमण किया। अंगद के पर्वत शिखर के प्रहार को उसने असफल कर दिया और उस शिलाखण्ड को अंगद की ओर ही

वापस लौटा दिया। इस भीषण परिस्थिति के कारण अंगद घोर संकट में फंस गये। उनमें भी इतनी शक्ति शेष नहीं थी कि वे उस राक्षस के प्रहार का पूरी शक्ति से समाना कर पाते। उनके हाथ अब संघर्ष करते-करते थक चुके थे। फिर भी वे कुम्भ के आक्रमणों को असफल कर दे रहे थे। वे सभी प्रहारों से बच कर उन्हें पीछे लौटा देते थे। जो शिलाखण्ड उनके पास लौट कर वापस आ गया, उसको भी उन्होंने पूरी शक्ति से लौटाया। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे शिलाएँ परिक्रमा - सी कर रही हों तथा आनंद उल्लास में मग्न होकर कन्दुक क्रीड़ा-सी कर रही हों।

46

जब वानर राज सुग्रीव ने अंगद की यह दशा देखी,तो उन्हें अपने सौतेले पुत्र पर दया आ गयी। उन्हें लज्जा का भी अनुभव हुआ। वे पीछे लौट पड़े। यद्यपि परिस्थिति भीषण थी,फिर भी अपनी शक्ति से वे राक्षस कुम्भ का वध करने में पूर्णतः सफल हुए। उन्होंने घोर प्रहार कर कुम्भ को धराशायी कर दिया। उसी समय उसकी मृत्यु हो गयी। सुग्रीव ने उसके मस्तक को विनष्ट कर दिया। इस गतिविधि को देखकर कुम्भ के बड़े भाई निकुम्भ ने बदला लेने का निश्चय कर प्रत्युत्तर दिया। उसने प्रहार करने के लिए एक भीषण अस्त्र का प्रयोग किया। हनुमान ने उसी समय उस पर गिद्ध की भाँति आक्रमण कर दिया। उन्होंने निकुम्भ की गदा उसके हाथ से छीन ली और उसे तोड़ डाला।

47

सिंह की भाँति हनुमान जी ने निकुम्भ की गरदन पर आक्रमण कर उसे विदीर्ण करने का प्रयास किया। सिंह किसी हाथी पर आक्रमण कर उसका मस्तक ही विदीर्ण करता है। हनुमान जी सिंह की भाँति थे,राक्षस निकुम्भ गज की भाँति था। हनुमान जी ने उसके मस्तक को विदीर्ण कर उसे धराशायी कर दिया। उस राक्षस की वास्तव में बड़ी ही दयनीय दशा हुई। इस प्रकार कुम्भ एवं निकुम्भ दोनों ही युद्धक्षेत्र में धराशायी हो गये। लंका की प्रजा को जब उनकी मृत्यु का समाचार मिला,तो वे अत्यन्त दुःखी हुए। उन्हें ऐसा लगा जैसे उनका सर्वनाश हो गया हो। वे अनुभव करने लगे कि उनकी मृत्यु व्यक्तिगत क्षति के सदृश दुखदायी थी। लंका की जनता ने उन राक्षस योद्वाओं का जो सेनानायक के रुप में तो थे पर भाग आये थे, विरोध किया। उन्हें जनता ने खदेड़ा भी। वे सभी दुष्ट प्रवृत्ति के राक्षस थे। वे अत्यन्त क्रूर भी थे। वानरों के आक्रमण के कारण युद्ध के मैदान से वे भाग निकले थे। अपने प्राणों की रक्षा वे भागकर कर रहे थे।

48

दशमुख रावण इन भीषण असफलताओं के कारण अत्यधिक आतंकित हो गया था। उसकी दशा अब दयनीय थी। अब वह अकेला ही रह गया था। अब उसको पूरा आभास हो गया था कि निश्चित रुप से मृत्यु ही

उसका वरण करने वाली है। जब उसके सभी वीर योद्धा एक – एक कर इस संघर्ष में वीरगति को प्राप्त हो गये, तब वह भी बच नहीं सकता है। उसने इस भीषण परिस्थिति पर पूरी गहराई से विचार किया। उसका मनोबल गिर गया। सदैव ही उसको यह आभास होने लगा कि उसकी सम्पूर्ण शक्ति का अब ह्रास हो चुका है; अतएव इस कल्पना से वह चौंक उठा। उसको अपनी शक्तिहीनता का पूरा अनुमान होने लगा। अब वह पूरी तरह से सचेत था। इस दुःखमय दयनीय स्थिति को देखकर वह रो पड़ा।

49

रावण आहें भर–भर कर कहने लगा कि अब मुझे सांसारिक भोग–विलास एवं सुखों के विषय में नहीं सोचना है। इनके बारे में सोच–सोच कर बहुत दुःखी होने की भी अब कोई आवश्यकता नहीं है। उनके निरन्तर स्मरण से कोई लाभ भी नहीं है। महानताओं और गौरव गरिमाओं को भी एकत्रित करने की अब कोई आवश्यकता नहीं है। ये वस्तुएँ और भावनाएँ व्यक्ति में झूठा दर्प उत्पन्न कर देती हैं। बाद में जब उनका भोग करने का अवसर आता है, तो उनका रस ही समाप्त हो जाता है। अब मुझे भली भाँति स्पष्ट हो गया है कि इच्छाओं की पूर्ति के पीछे लगे रहने से कोई लाभ नहीं होता है। उनका परिणाम किसी विष की कड़ुवाहट से कम नहीं होता है। व्यक्ति का अन्त में यह सर्वनाश ही करता है। वास्तव में जो लोग जगत में जन्म लेते हैं और जीवित रहते हैं,वे सब लोग अन्त में मृत्यु को ही प्राप्त होते हैं। ऐसा कौन सा व्यक्ति इस जगत में है जो मृत्यु से बच सकने में पूर्ण समर्थ है ?

50

भाँति–भाँति के अन्य विचारों में मानसिक रुप से वह उलझा हुआ था। उस समय उसके मुख से ये शब्द निकल पड़े। उसके मन में एक विचार यह भी आया कि उसको किसी का भय नहीं होना चाहिए। यह भावना भी बार–बार उसके हृदय में दृढ़ होती जा रही थी। वास्तव में जब किसी नये व्यक्ति पर विपत्तियां एवं असफलताओं के पर्वत टूट पड़ते हैं तो उसका सम्पूर्ण पराक्रम एवं शक्ति अचानक ही नष्ट हो जाती है। वह तेजहीन होकर अपनी सभी गरिमाएँ खो बैठता है। इस स्थिति में उसे देखकर राजपुत्र इन्द्रजीत ने उसको स्मरण दिलाते हुए ढाढ़स दिलाया। उसने समझाया कि उसे अपने विचारों को दृढ़ रखना चाहिए। युद्धक्षेत्र में शत्रुओं से संघर्ष करने के लिए जाने पर अपने पौरुष एवं पराक्रम का पूरा परिचय देना ही उचित होता है।

51

रावण ने अपने को दृढ़तापूर्वक सन्तुलित कर लिया। अब इन्द्रजीत ने फिर अपनी जादूगरी की विद्या "मौन" का जाल वानर सेना पर फैलाया। रावण युद्ध के लिए प्रस्तुत हुआ। अब उसको मृत्यु का भी कोई भय नहीं था। वह भीषण शब्द करता हुआ चिल्लाया। उसने अपने अपार पौरुष एवं पराक्रम की शक्ति को फिर से प्राप्त

कर लिया था। वह युद्ध करने और शत्रु का सर्वनाश करने के लिए आगे बढ़ा। उसका यह भी लक्ष्य था कि वह शत्रु को कड़ा प्रत्युत्तर दे। वानर सेना के आक्रमणों और सफलताओं ने उसको आतंकित कर दिया था। वह शत्रु का पूर्ण संहार करने के लिए उद्यत था। हार अथवा जीत का उसकी दृष्टि में कोई विशेष महत्व नहीं था। हार–जीत का क्रम तो चक्र की भाँति घूमता रहता है,अतः उसके प्रति वह निर्लिप्त–सा था।

52

इन्द्रजीत ने भी युद्ध की पूरी तैयारी कर ली थी। वह एक यशस्वी वीर योद्धा था। बड़े–बड़े युद्धों में उसने अभूतपूर्व सफलताएँ प्राप्त की थीं। रावण के साथ भेटं करने के पश्चात् वह सभा से निकल कर बाहर आया। उसके साथ एक विशाल सेना एवं सुन्दरी युवतियों का समूह था। वे कभी भी इन्द्रजीत से अलग नहीं की जा सकती थीं। वे युवतियाँ इन्द्रजीत के आकर्षण का केन्द्र थीं, इसीलिए वह सदैव ही उन्हें अपने साथ रखता था। ये स्त्रियाँ अत्यन्त रुपवती एवं अपार सौंदर्य की प्रतिमाएँ थीं। यह सभी इन्द्रजीत की पत्नियाँ थीं, जिनके रुप की तुलना में अन्य सुन्दरियाँ नहीं रखी जा सकती थीं। वे सभी अप्सराओं की सन्तानें थीं, जो अपनी गरिमाओं एवं सौंदर्य में बेजोड़ थीं। उनकी अपार सुन्दरता सभी के लिए आकर्षक थी।

53

उन्होंने अपने निकट संबंधी की भाँति इन्द्रजीत को मानकर बड़ी दृढ़ता से उसका अनुसरण किया। इन्द्रजीत के शौर्य के कारण उन युवतियों के मन में हर्ष की भावना थी। उनके विचार पवित्र थे। वे सदैव मृत्यु का वरण करने के लिए प्रस्तुत थीं। वे निरन्तर ही इन्द्रजीत की पत्नियों की भाँति पतिव्रत धर्म का पालन करती रहीं। उनके नियम एवं व्रतों में कभी किसी प्रकार की बाधा नहीं आयी। वे स्पष्ट ही उच्चकुलीन कुटुम्ब की गरिमामयी स्त्रियाँ थीं। उनके विचार निर्मल एवं पवित्र थे। स्वर्ग में जाकर फिर से देवांगनाओं के भोग–विलास पूर्ण जीवन का रस लेने की उनकी गहरी अभिलाषा थी,अतः मृत्यु को वे स्वर्गारोहण की सीढ़ी मानती थीं।

54

सभी वीर सक्षम योद्धा अपनी –अपनी सेनाओं को सुव्यवस्थित एवं सन्तुलित कर युद्ध के लिए प्रस्तुत हो गये। वे फिर युद्ध में आ रहे थे। गज सेना, रथ सेना तथा वीर रथवाहक,जो संकेत से आज्ञा का पालन करते थे तथा भली भाँति जानते थे कि युद्ध में उन्हें रथ का संचालन कैसे करना चाहिए,आगे बढ़ रहे थे। उनके रण कौशल और उनकी निपुणता पर पूरा विश्वास किया जा सकता था। उनमें से कुछ युद्धक्षेत्र में भोजन की व्यवस्था करने में भी पूर्ण पटु थे। भोजन व्यवस्था सबसे आवश्यक व्यवस्था मानी जाती है। इस पर भी पूरा ध्यान दिया गया था। इन लोगों के शरीर छोटे–छोटे परन्तु शक्तिशाली थे। उनकी दाढ़ियाँ काफी लम्बी एवं उलझी हुई थीं। उनके पैर भी छोटे–छोटे थे। वे दृढ़ता से स्थिर रहते थे।

55

उसके पश्चात् दोनों सेनाओं ने एक दूसरे पर प्रक्षेप्यास्त्रों से भीषण प्रकार किये। घोर युद्व आरंभ हुआ। चारों ओर घूम – घूम कर वानर सेना ने शत्रुओं को देखा। वे डटकर युद्व करने लगे। राक्षसों ने वानर सेना को पीछे ढकेल दिया। दोनों सेनाएं एक दूसरे पर भीषण प्रहार कर रही थीं। अपने शत्रु के पीछे जाकर राक्षसों ने मार्ग अवरुद्ध कर दिया। वानर सेना की सम्पूर्ण गतिविधियाँ समाप्त कर दी गयीं। वानर भय के कारण दुःखी होकर कोलाहल करने लगे थे। इसी बीच अवसर पाकर राक्षसों ने उन पर आक्रमण कर दिये। वानरों को वे धराशायी कर रहे थे। वानर सेना में पूरी तरह भगदड़ मची हुई थी। वानर सेना पीछे की ओर घूम रही थी और राक्षस उन्हें घेर–घेर कर मार रहे थे। कुछ वानर योद्वा उनसे टक्कर भी ले रहे थे,परन्तु बाद में उनको भी पीछे हटना पड़ता था।

56–59

(इन भागों को छोड़ दिया गया है। इनकी विशेष आवश्यकता भी नहीं है। स्पष्ट रुप से वे जोड़े हुए अंश प्रतीत होते हैं।)

60

इस प्रकार इन्द्रजीत की शक्तिशाली राक्षस सेना वानरों का संहार करती हुई अत्यन्त दृढ़ता से आगे बढ़ी चली जा रही थी। वह सेना की गतिविधियों को और तीव्र करने का प्रयास कर रहा था,जिससे सम्पूर्ण वानर सेना का संहार शीघ्रातिशीघ्र किया जा सके। उसे नष्ट कर वह तत्काल उन्हें पराजित करना चाहता था। उस समय राजपुत्र लक्ष्मण,इन्द्रजीत से संघर्ष करने के लिए प्रस्तुत हुये थे। वे उसके शौर्य एवं शक्ति को चुनौती दे रहे थे। दोनों ही योद्वा अस्त्र–शस्त्र विद्या में समान रुप से प्रवीण थे। वे दोनों वीर धनुर्धर भी थे। उन दोनों योद्वाओं को उष्ण एवं शीतल सभी प्रकार के बाणों का प्रयोग करना भली भाँति आता था।

61

सर्वप्रथम महान वीर योद्वा राजपुत्र लक्ष्मण ने इन्द्रजीत पर अपने बाण से प्रहार किया। इस प्रकार लक्ष्मण ने "वरुण" अस्त्र का प्रयोग किया। यह बाण के रुप में ही था। उसका अस्तित्व जल का प्रतीक था। उस बाण की शक्तियाँ भी जादूविद्या की ही भाँति थीं। उसमें यह शक्ति थी कि भू भाग को वह सागर के रुप में परवर्तित कर सकता था। उस बाण के प्रयोग से इन्द्रजीत की सेना जलमग्न हो गयी। उसकी सम्पूर्ण शक्तियाँ समाप्त हो गयीं। शक्तिहीन होने के पश्चात् उसकी सेना का बहुत बड़ा भाग नष्ट हो गया।

62

इन्द्रजीत ने प्रकाशयुक्त अग्नि की ज्वालाओं को बिखेरता हुआ एक बाण छोड़ा। यह बाण अग्नि की लपटों को समेटे हुए धधक उठा। इसका नाम आग्नेय बाण था। इस बाण ने वरुण अस्त्र से टक्कर ली। चारों ओर की भूमि सूखी- सी दिखायी

देने लगी। उष्णता की तीव्रता से झुलसते हुए सभी वानर इधर-उधर भागने लगे। पानी पूरी तरह सूख गया। अग्नि वर्षा से ही इस बाण का उत्तर दिया जा सकता था। उस अग्नि के लिए सूखी लकड़ी की भी आवश्यकता नहीं थी,इसीलिए इन्द्रजीत के आक्रमण को असफल नहीं किया जा सका।

63

इन्द्रजीत ने फिर बाण से घोर प्रहार किया। उस बाण के प्रयोग के साथ ही कई प्रकार के अस्त्र शस्त्र स्वतः उस बाण से निकल पड़े और सम्पूर्ण वातावरण में बिखर गये। उस प्रसिद्ध अस्त्र का नाम "असुर" था। उसमें से अनेक तलवारें, हंसिये, हथौड़े, कुल्हाड़ी, गदा, त्रिशूल आदि शस्त्र निकलने लगे। इसके साथ ही उसमें लिपटी हुई अग्नि की भीषण वर्षा भी होने लगी। कोई भी वस्तु उस वातावरण में स्पष्ट दृष्टिगोचर नहीं हो पा रही थी। तीव्र आँधी के साथ पत्थर तथा धूल उड़ रही थी। बाण अग्नि उगल रहा था। इससे आग की भाँति ही उष्णता फैल रही थी।

64

इस भीषण परिस्थिति में लक्ष्मण ने सोचा कि इन्द्रजीत को किस प्रकार परास्त किया जाय; अतएव "महेश्वर" नामक अस्त्र को चुना। यह अस्त्र निश्चय ही उनकी पूरी सहायता कर सकता था। यह वह बाण था जो सभी अस्त्रों-शस्त्रों को समाप्त कर सकता था। इस प्रकार इन्द्रजीत के उस बाण से निकले हुए सभी अस्त्र - शस्त्रों को नष्ट करने का यही एक मात्र साधन था, अतएव युवक लक्ष्मण ने शीघ्र ही "महेश्वर" नामक शर का संधान किया,जिसने इन्द्रजीत के असुर बाण से उत्पन्न सभी अस्त्र-शस्त्रों को क्षण भर में नष्ट कर दिया। इन्द्रजीत की शक्ति के प्रतीक सभी अस्त्र-शस्त्र अब समाप्त हो गये थे। जो शस्त्र शेष बचे थे, वे भी इधर - उधर उछल कर जा गिरे और नष्ट हो गये।

65

इन्द्रजीत की शक्तियों को समाप्त कर लक्ष्मण ने उससे अधिक शक्तिशाली होने का परिचय दिया। अब लगा जैसे इन्द्रजीत थककर हार गया हो। उसके हृदय में क्रोध था। लक्ष्मण ने पुनः उस पर बाणों की भीषण वर्षा

प्रारम्भ कर दी। उसने तब सोचा कि वह बहुत अधिक लज्जा का अनुभव कर रहा है। एक समय ऐसा भी था जब वह अपार शक्तिशाली था। आज ऐसा प्रतीत हो रहा है कि जैसे उसमें किसी प्रकार की कोई शक्ति नहीं रह गयी है। इन्द्रजीत के सभी गजों,अश्वों तथा रथों को लक्ष्मण ने अपना लक्ष्य बनाया। लक्ष्मण ने इन्द्रजीत की सेना का सर्वनाश कर डाला। अब वहाँ कोई भी शेष नहीं बच सका था। इस भीषण परिस्थिति में केवल इन्द्रजीत ही अपने प्राण की रक्षा करने में समर्थ सिद्व हुआ।

66

अब उसके साथ उसका कोई अगंरक्षक भी नहीं था। वह अब अकेला ही युद्व कर रहा था। उसने आगे बढ़ कर घोर संग्राम करते हुए अपने शौर्य का परिचय दिया। इस प्रार लक्ष्मण एवं इन्द्रजीत दोनों ही योद्वा परस्पर संघर्ष करने के लिए आगे बढ़े। इन्द्रजीत के पास अब रथ भी नहीं था। उसका सारथी भी अब जीवित नहीं बचा था। केवल इन्द्रजीत ही युद्वक्षेत्र में संघर्ष कर रहा था। इस अवसर पर लक्ष्मण ने इन्द्रजीत को लक्ष्य करके उस पर इन्द्र–बाण तथा रुद्रबाण चलाये। उनके लगने से दशमुख के पुत्र इन्द्रजीत मेघनाद का मस्तक धड़ से अलग हो गया। उसकी गरदन कट गयी थी। वह धराशायी हो गया।

67

इन्द्रजीत तथा उसकी सभी पत्नियों को एक साथ ही युद्व में मार गिराया गया। उसकी पतिव्रता पत्नियों ने भी अपने पतिव्रत धर्म का पूरा पालन किया। उन्होंने अपने धर्म का विधिवत् पालन किया। जब ऋषियों ने उनकी मृत्यु को देखा, तो उनके त्याग एवं तपस्या की उन्होंने भूरि–भूरि प्रशंसा की। भाँति–भाँति की सुगन्धित वस्तुएँ, इत्र, पुष्प आदि की वर्षा कर महर्षियों ने अपना हर्ष व्यक्त किया। मेघनाद की पतिव्रता पत्नियों के प्रति ऋषियों ने अपना आदर प्रकट किया और उन पर उन्होंने पुष्प बिखेरे।

68

जब इन्द्रजीत की मृत्यु हो गयी, तो आकाश में "जयजय" की ध्वनि गूंजने लगी। आकाश से देवों ने वीर प्रवर लक्ष्मण की प्रंशसा की। लक्ष्मण ने उस दुष्ट राक्षस को धराशायी कर दिया था जो देवताओं को सदैव घोर कष्ट पहुंचाता रहता था। देवताओं को वह हार्दिक दुःख पहुंचाता रहता था, इसीलिए देवताओं के ह्रदय हर्ष मे आनंदित हो उठै थे। वे बहुत ही प्रसन्न हो गये थे और लक्ष्मण के प्रति अपनी कृतज्ञता प्रकट कर रहे थे। उन्होंने सुगन्धित द्रब्यों की वृष्टि की, जिसकी भीनी एवं सुखकर सुगन्धि सम्पूर्ण वातावरण को सुवासित करने लगी।

69

इन्द्रजीत की मृत्यु से रावण और अधिक दुःखी हुआ। अब उसके लिये इस जगत में ऐसा कोई नहीं था जो संघर्ष की भीषण परिस्थिति में उसकी सहायता करता। इन्द्रजीत की अपार शक्ति पर उसको पूरा विश्वास था। वह पूरी तरह उससे आश्वस्त था। अब उसके सभी राजपुत्र एवं सेना के सभी बलशाली योद्धा युद्ध में वीरगति को प्राप्त हो चुके थे। रावण की गति अब उस वृक्ष की भाँति थी, जिसकी सभी शाखाएँ काट कर नष्ट कर दी गयी हों। अब उसका तना ही शेष बचा था। रावण अपने सभी योद्धाओं को खोकर अब अकेला ही जीवित बचा था। वह सोचने लगा कि अब यदि वह जीवित रहता है तो उसका जीवन अपार दुःख का ही आगार बना रहेगा। उसको ऐसा लग रहा था मानो वृक्ष को काटने वाली कुल्हाड़ी का अन्तिम प्रहार अब उसको ही धराशायी करने जा रहा है। अब वह इसलिए पूर्णतः प्रस्तुत भी था। उसके लिए अन्य कोई मार्ग अब शेष नहीं था।

70

अब ऐसा कोई उपाय नहीं था जिससे उसकी रक्षा संभव हो पाती। युद्ध क्षेत्र में जाना अब अनिवार्य हो गया था। उसने निश्चय किया कि युद्ध करना ही उसके लिए अब श्रेयस्कर होगा। अब मृत्यु के प्रति गहरी चेतना का वह अनुभव कर रहा था। मृत्यु की स्पष्ट छाया सदैव ही उसके समक्ष बनी रहती थी। उसे पूरी तरह ज्ञात हो गया था कि अब शीघ्र ही वह मृत्यु का वरण करने वाला है। वह जान चुका था कि इस युद्ध का स्पष्ट परिणाम उसकी मृत्यु ही है। अब उसको कोई विशेष दुःख नहीं था। उसने अपने हृदय को धैर्य दिलाया और अपनी शक्ति का सन्तुलन किया। अब वह किसी बात को कोई विशेष महत्व नही दे रहा था। वह फिर एक बार प्रसन्नचित्त दिखायी देने लगा। उसको अब मृत्यु का लेशमात्र भी भय नहीं था। वह पहले की भाँति ही दर्प एवं अभिमान का अनुभव कर रहा था।

71

वह विधिवत् शंकर जी की आराधना कर उन्हें प्रसन्न करने के लिए शिव के मन्दिर में गया। वह मन्दिर देवताओं की उपासनां का पवित्र स्थान था। बातारा गुरु के रुप में उसने भगवान शंकर की पूजा की। शंकर का भैरव स्वरुप बहुत ही भयानक था। उसने बार – बार शंकर के भैरव स्वरुप का स्मरण किया। उसके पश्चात् रावण शिव मन्दिर से बाहर निकल कर मन्दिर के क्षेत्र में ही खड़ा हो गया। वहाँ पर प्रमुख विद्वान ब्राह्मण भी उपस्थित थे। वे सभी खड़े होकर उसकी मंगल–कामना के लिए ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे। उसकी शुभ–कामना के लिए वे ईश्वर के आशीर्वाद के अभिलाषी थे। यह सभी बातें रावण को भली भाँति सूचित की गयीं।

72

ढोल, भाँति–भाँति के वाद्य यंत्रों तथा शंख की ध्वनि वातावरण में उत्साह और प्रसन्नता की लहर उत्पन्न

कर रही थी। गामलान वाद्ययंत्रों का स्वर भी अन्य वाद्य–स्वरों के साथ ही धीरे–धीरे ध्वनित हो रहा था। गामलान, ढोल, शंख वाद्ययंत्र आदि एक साथ ही प्रतिध्वनित हो रहे थे। उस समय सभी के हृदय उस ध्वनि से आनंद –विभोर हो रहे थे। जब दशमुख रावण ने उस ब्राह्मणों को "जयजय" शब्द का उच्चारण करते हुए सुना तो उसको अपार सन्तोष एवं हर्ष हुआ। उस अवसर पर उसने ब्राह्मणों को हृदय खोलकर दान दिया तथा सभी ब्राह्मणों के प्रति अपना पूरा सम्मान प्रकट किया। उसने उनकी वन्दना भी की।

73

रावण की सशस्त्र सेना बाहर खड़ी हुई अपने राजा की प्रतीक्षा कर रही थी। युद्व के लिए सभी प्रकार के सामान सजाये गये थे। सेना पूर्णतः सुसज्जित होकर युद्व के लिए प्रस्तुत हो गयी थी। रावण ने भी सुन्दर वस्त्र धारण किये। उसका स्वर्ण–मुकुट स्वर्ण और मणियों से बना हुआ था। उसकी उज्जवल प्रकाश–किरणें रक्तिम वर्ण की दृष्टिगोचर हो रही थीं। ऐसा लगता था जैसे उसके हृदय की लालिमा उसके स्वर्ण मुकुट में प्रतिबिम्बित हो रही हो।

74

पूर्ण रुप से सुसज्जित होकर रावण एक विशाल रथ पर आसीन हो गया। वह सम्पूर्ण रथ स्वर्ण से ढका हुआ था। उसकी साज–सज्जा सुवर्ण से ही की गयी थी। उसका रथ ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे हिमगिरि का स्वर्णमय शिखर प्रकाश–किरणें बिखेर रहा हो। इस प्रकार वह स्वर्ण रथ,स्वर्ण–शिखर की भाँति ही प्रतीत हो रहा था। उसके अश्व बहुमूल्य रत्नों की भाँति चमक रहे थे। रावण जाज्वल्यमान मार्त्तण्ड की भाँति उस विशाल रथ पर खड़ा था।

75

उसकी सेना के सभी योद्धा भाँति–भाँति के भारी एवं सुन्दर वस्त्रों से सुसज्जित थे। वे अपने शरीर पर सुवर्ण जड़ित वस्त्रों को धारण किये हुये थे। वे सभी एकत्रित होकर रावण के रथ के आसपास ही चल रहे थे। उनके वस्त्रों को भी हाथी–दाँत से सजाया गया था। उन पर याक बैल के रोयें भी लगाये गये थे। इस प्रकार उन वस्त्रों को लाल–लाल रंगों से सजाया गया था। उस समय उनकी शोभा ऐसी लग रही थी जैसे मेघ मंडित आकाश में सूर्य की किरणें लालिमा बिखेंर रही हों।

76

उनके वस्त्रों पर सुवर्ण की धारियाँ चमक कर निर्मल प्रकाश की किरणें बिखेर रही थीं। उनकी जगमगाहट

वातावरण को सुन्दर बना रही थी। उनके रणवाद्य भी भीषण रव करते थे। उनसे दशों दिशाएँ प्रतिध्वनित हो रही थी। उनकी पताका भी बनावटी इन्द्रधनुष की भाँति चारों ओर इन्द्रधनुषी प्रभा बिखेर रही थीं। वायु के झोंकों के साथ वह लहरा रही थी। उनके बाणों की धार भी बहुत ही तीक्ष्ण थी। उसमें अनुपम उष्णता थी। उनकी तीव्रता भी घोर वर्षा की भाँति ही थी।

77

इस प्रकार वानर सेना से युद्ध करने के लिए रावण की सेना तैयार हो गयी। वे सभी भीषण रुप से आक्रमण करने लगे। वे विशाल मुखों को फाड़ते हुए अपने क्रोध का प्रदर्शन कर रहे थे और भीषण कोलाहल करते हुए आगे बढ़ रहे थे। श्रीराम की वानर सेना भी युद्व-क्षेत्र में आगे बढ़ रही थी। वे आक्रमण करते हुए नृत्य कर रहे थे। रावण की सेना की भाँति ही वानर-सेना भी शौर्य एवं पराक्रम का परिचय दे रही थी। राक्षसों की सेना और वानर सेना की मुठभेड़ हो गयी। दोनों ही सेनाएँ अपनी-अपनी ओर से दृढ़ता एवं शौर्य का अभूतपूर्व परिचय देने लगीं। दोनों सेनाएँ जब अभियान के लिए आगे बढ़ रही थीं तो पृथ्वी काँप रही थी। उन दोनों सेनाओं की युद्व की गतिविधियाँ तीव्रतर होती चली जा रही थीं।

78

धूलिकण उड़-उड़ कर चारों ओर आकाश में छा गये थे। इससे युद्ध क्षेत्र में गहरा अन्धकार दिखायी दे रहा था। कोई भी अपने शत्रु को स्पष्ट रुप से नहीं देख पा रहा था। दोनों सेनाओं के सैनिक अपने-अपने स्थान पर डटे हुए खड़े थे। अन्धकार में ही संघर्ष हो रहा था। दोनों पक्षों के योद्वा आगे बढ़कर अपने शत्रुओं को खदेड़ रहे थे,परन्तु अन्धकार के कारण वे शत्रु को पहचान नहीं पा रहे थे। उस अन्धकार में यदि किसी शत्रु का आभास उन्हें होता था तो वे योद्वा अपनी तलवार खींचकर उस शत्रु का वध कर देते थे।

79

"मै वानर हूं" इस प्रकार वानर सेना के सैनिक एक दूसरे को अपना शीघ्र परिचय दे रहे थे। प्रयास करके वे प्राण-रक्षा कर रहे थे । इसी प्रकार " मै राक्षस हूं" यह कहकर राक्षस अपना परिचय देते थे और तभी राक्षसों के प्रहार से वे जीवित बच पाते थे। वे एक दूसरे से यह भी आग्रह करते थे कि उनकी रक्षा की जानी चाहिए। सभी सैनिक परस्पर कह रहे थे यह कैसी विचित्र परिस्थिति है ? जिस सैनिक को पकड़ लिया जाता था, उसका वध भी निश्चित-सा मान लिया जाता था। कभी-कभी तो सैनिक यह कहते सुने जाते थे कि सारे संसार की मृत्यु तो एक दिन निश्चय ही होगी, अतएव इस सत्य को समझ कर अब दुःखी होने की आवश्यकता नहीं है।

80

जब वानर तथा राक्षस एक दूसरे की गरदन पकड़ते थे तो वे भीषण स्वर में चिल्लाते थे। उनमें से कुछ मुंह फाड़-फाड़ कर अंगड़ाई लेते हुए संघर्ष के लिए आगे बढ़ रहे थे। वे एक दूसरे के आक्रमणों को बड़ी ही कठिनाई से रोक पाते थे। कुछ ऐसे भी राक्षस थे,जिनकी गरदनों से वानरों नें अपनी पूंछें उलझा दी थीं। इससे राक्षसों के गले में फाँसी-सी लगी जा रही थी। उनकी दाढ़ों एवं ठोढ़ियों की हड्डियाँ तथा जबड़े भी वानरों ने तोड़ दिये थे। बहुत से राक्षसों को दाँतों से उन्होंने काट लिया था। उनके दाँत में भी घाव कर दिये थे। या तो उन्हें नीचे गिरा कर पृथ्वी पर धराशायी कर दिया गया था या कुचल कर मार डाला गया था। एक क्षण में ही वानर समूह राक्षसों के शरीर पर प्रहार कर उन्हें घायल कर देते थे।

81

इस प्रकार दोनों पक्षों के सैनिक संघर्ष करते हुए बड़ी संख्या में वीरगति को प्राप्त हो रहे थे। जो मर जाते थे, उनका रक्त धाराओं की भाँति बहता था। उस रक्त के फव्वारों से धूलिकण दब रहे थे। अब युद्ध एकाएक बन्द-सा हो गया था और अन्धकार भी लगभग समाप्त-सा ही हो गया था। भीषण रक्तपात के कारण धूल नीचे बैठ गयी थी। वातावरण स्वच्छ हो गया था। वास्तव में इस युद्ध में जितने भी प्रधान राक्षस योद्धा आये थे, वानरों ने एक-एक कर सबका वध कर डाला था। क्रूर एवं दुष्ट राक्षसों का संहार हो गया था। लगभग एक सहस्त्र राक्षसों को श्री राम ने अपने प्रखर बाणों से धराशायी कर दिया था।

82

दशमुख अपनी सेना के इस संहार को बड़ी ही सावधानी एवं धैर्य से देख रहा था। उसकी सेना का प्रधान भाग युद्धक्षेत्र में धराशायी हो चुका था। उसने अपने रथ को तीव्रगति से युद्धक्षेत्र में आगे बढ़ाया, परन्तु वानरों की भीषण गतिविधियों को देखकर अपनी रक्षा के लिए वह पीछे लौटने के लिए विवश हो गया। इस बात का स्पष्ट संकेत मिल रहा था कि अब रावण का इस युद्ध में विजय पाना संभव नहीं है। यह सभी बातें उसकी पराजय की सूचक थीं। उसी समय भीषण वायु के झोंके आने लगे। कागों के समूह एकत्रित होकर भीषण स्वर में काँव-काँव करने लगे। कई प्रकार के अपशकुन दिखाये पड़ने लगे।

83

रावण इन संकेतों से चौका नहीं। उसको किसी प्रकार का दुःख भी नही हुआ। वह महानीच एवं दुष्ट राजा था। दर्प में वह उन्मत्त रहता था, इसीलिए वास्तविक परिस्थिति को भी पहचान पाना उसके लिए संभव नहीं था। उसने अपनी सेना के सभी सैनिकों को आदेश दिया कि वे युद्ध को और अधिक भीषण स्वरुप प्रदान करें

तथा शत्रु की सेना क़ो समाप्त कर दें। रावण के आदेशानुसार राक्षस–योद्धा विरुपाक्ष युद्ध के लिए आगे बढ़ा। वह गज पर आसीन होकर आगे आया। उसके हाथों में तीव्र छोटे–छोटे दण्ड तथा अंकुश की भाँति अस्त्र–शस्त्र थे। उसने अपार पराक्रम का परिचय देते हुए अपने प्रहारों को तीव्र कर दिया। बाद में उसका संघर्ष वानरराज सुग्रीव से हो गया। वे युद्धक्षेत्र में उसके सामने आ गये। सुग्रीव के भीषण प्रहार से वह धराशायी हो गया। उसकी शक्तियाँ समाप्त हो गयीं और वह गिर पड़ा।

84

इस भीषण परिस्थिति में धूम्राक्ष ने आगे आकर संघर्ष करना प्रारम्भ किया। वे सुग्रीव के आक्रमण का प्रत्युत्तर देना चाहते थे, इसीलिए उन्होंने सुग्रीव पर घोर प्रहार किया,परन्तु उन्हें सफलता प्राप्त न हो सकी। उसको भी सुग्रीव ने भीषण शिलाखण्डों के प्रहार से धराशायी कर दिया। पत्थरों की निरन्तर वर्षा से उसका शरीर चूर–चूर हो गया। इन पत्थरों के प्रहारों के क्षेत्र में आने वाले शत्रु की मृत्यु निश्चित हो जाती थी। इस गतिविधि से क्रुद्ध होकर महोदर ने भीषण सिंहनाद किया। युद्ध में विजय श्री प्राप्त करने की इच्छा से वह आगे बढा। उस अवसर पर अंगद ने आगे बढ़ कर उससे लोहा लिया और भीषण प्रहार कर उसके मस्तक को विदीर्ण कर दिया। उसका मस्तक धड़ से अलग हो गया। उसी समय उसका प्राणान्त हो गया।

85

रावण के तीनों महामन्त्रियों– विरुपाक्ष, धूम्राक्ष तथा महोदर ने युद्ध में वीरगति प्राप्त कर ली। रावण को अब पूरी तरह स्पष्ट हो गया कि चाहे जो भी हो, अब निश्चित ही उसकी मृत्यु युद्धक्षेत्र में होगी। मृत्यु ने मानो रावण को अपनी शक्ति का परिचय देते हुए संकेत दे दिया था कि वह अब मृत्यु के वश में है। रावण महान पराक्रम का परिचय देता हुआ आगे बढ़ा। उसने उन्मत्त योद्धा की भाँति वानर सेना पर भीषण आक्रमण किया। बड़े–बड़े वानर योद्धाओं की भी शक्ति उसने नष्ट कर दी। उसका शौर्य एवं उसकी वीरता उस समय अपनी चरम सीमा पर थी। वह दृढ़तापूर्वक युंद्ध में गतिशील हुआ। युद्ध में कभी पीछे हटने का प्रश्न ही नहीं उठा। वह अपनी सम्पूर्ण शक्तियों से युद्ध में प्रवृत्त हुआ था। उसका पराक्रम उस समय देवता रुद्र के ही समान था।

अध्याय – 24

1

उस अवसर पर युद्धक्षेत्र में दशमुख रावण यमराज के रुप में दिखायी दे रहा था। आक्रमण करने के लिए वह भयानक रुप में उन्मत्त हो रहा था। उसी समय उससे लोहा लेने के लिए श्री राम आगे बढ़े। उनके साथ श्री लक्ष्मण जी भी थे। राम के साथ गुणवान विभीषण भी थे। इन तीनों योद्वाओं ने साथ ही साथ अपने धनुषों पर बाण चढ़ा लिये। उनमें लेशमात्र भी भय नहीं था। वे गुणशील व्यक्तियों की गरिमाओं से युक्त थे। उनमें बुद्विमत्ता की चरम सीमा थी। वे सभी योद्वाओं में वीर –शिरोमणि थे। वे वीरता तथा शौर्य के प्रतीक थे।

2

वे तीनों वीर योद्वा युद्वक्षेत्र में स्पष्ट ही त्रिपुरुष देव की भाँति दिखायी दे रहे थे। वे एक साथ युद्धक्षेत्रः में आगे बढ़े। उनके तेज की उपमा केवल अग्नि–देवता से ही दी जा सकती थी। वे तीनों ही स्वयं में अग्नि की ज्वालाओं की भाँति तेजपूर्ण एवं शौर्य की गरिमाएँ समाहित किये हुए थे। उनका ह्रदय भी अग्नि की ही भाँति प्रज्वलित हो रहा था। उसकी ज्वालाएँ कभी भी शान्त नहीं हो पा रही थीं। उन तीनों योद्वाओं के ह्रदय भी उष्णतापूर्ण थे। लंका के क्रूर राजा रावण का मन भी दृढ़ था। वह संकल्प के साथ युद्व में स्थिर था। उसके अभिमान और झूठे दर्प की कोई सीमा नहीं थी। इन तीनों योद्वाओं से युद्व करने में उसे किसी प्रकार का भय अथवा संकोच नहीं था। उसने प्रचण्ड अभिमान के वशीभूत होकर तीनों ही योद्वाओं पर अपने तीक्ष्ण बाणों से प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। उसके ह्रदय में अपार दर्प था और वह महान अभिमानी था।

3

जब रावण ने भीषण शरों का संधान किया तो उन बाणों की अत्यधिक प्रचण्डता के कारण युद्वक्षेत्र में भयानकता छा गयी। उसके भीषण बाणों से सिंह, बाघ तथा भयानक विषैले सर्प उत्पन्न होने लगे। उसने राक्षस–बाण प्रयोग किया था, जिससे एक भयंकर परिस्थिति उत्पन्न हो गयी थी। उसके प्रभाव से भाँति–भाँति के शिकारी कुत्ते भी भीषण रुप से भौंकते हुए दिखायी देने लगे थे। उन श्वानों को देखने से ही भय उत्पन्न होता था। उसके बाणों से इसी प्रकार के भीषण जंगली जीव–जन्तु प्रकट होने लगे। राम ने रावण के भीषण बाण के उत्तर में आग्नेयास्त्र अर्थात अग्नि बाण का प्रयोग किया। रावण के बाण से उत्पन्न भीषण परस्थितियों एवं सभी जीव जन्तुओं को एक ही बाण से उन्होंने नष्ट कर दिया।

4

इसके पश्चात् रावण ने भी अपने बाणों की गतिवधियों को तीव्र कर दिया। उसने भीषण अस्त्रों से क्रूरतापूर्वक प्रहार किया। उसके बाणों ने गदा, त्रिशूल, खड्ग,जाल आदि अन्य शस्त्रों को उत्पन्न कर दिया था। यह कार्य

केवल उसने अपने बाण की एक कोर से ही किया था, इससे पत्थर तथा भाँति-भाँति के अन्य आघात करने वाले अस्त्र भी निकल कर सामने आ रहे थे। जिस पर भी उन शस्त्रों का आघात होता था, वह पृथ्वी पर गिर कर मूर्च्छित हो जाता था। राम ने गन्धर्व अस्त्र का प्रयोग किया जो बहुत शक्तिशाली एवं प्रभावपूर्ण था। उसके प्रयोग से रावण के सभी अस्त्र-शस्त्र पूर्णतः असफल हो गये। उनका प्रभाव समाप्त हो गया।

5

जब दशमुख रावण के सभी अस्त्र-शस्त्र असफल सिद्व हो गये और राम ने उसकी सम्पूर्ण शक्तियों को समाप्त कर दिया, तो आकाश से ऋषियों के समूह ने राम की प्रशंसा में जय-जयकार किया। इस प्रकार आकाश में एक भीषण स्वर गूंज उठा। रावण ने इस स्वर को सुना, पर उसे चिन्ता नहीं हुई। यद्यपि "पराजय पराजय" शब्द बार-बार उसे सुनायी दे रहा था परन्तु बिना किसी भय के पूरी शक्ति से वह युद्वक्षेत्र में आगे बढ़ रहा था। उसके आचरण में किसी प्रकार का भी कोई परिवर्तन दृष्टिगोचर नहीं हो रहा था। उसकी पताका अस्त्र-शस्त्रों के लगने से टूट कर नीचे गिर गयी थी, पर वह दृढ़ था।

6

विभिन्न प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों के आघात से रावण के रथ के अश्व भी शक्तिहीन हो गये थे। उनके पैर टूट गये थे। उसके सारथी में भी अब कोई शक्ति शेष नहीं रह गयी थी। उन सबका जैसे विनाश-सा हो गया था। राम के बाणों की वर्षा के कारण उसका रथ भी नष्ट भ्रष्ट हो गया था, परन्तु दशमुख रावण के ह्दय में इसका लेशमात्र भी दुःख नहीं था। उसने छोटे-छोटे शक्तिशाली भाले के दण्डों को उठाया तथा उन्हें फेंक- फेंक कर भीषण आक्रमण किया।

7

रावण के तीव्र अस्त्रों के प्रहार प्रभावपूर्ण थे। राम के आसपास तक के क्षेत्र में वे अपनी भीषणता दिखा रहे थे। राम पर भी उसका प्रहार हो रहा था, परन्तु लक्ष्मण जी ने बड़ी सावधानी से उसके आक्रमण को असफल कर दिया। वे युद्वकला में पूर्ण दक्ष थे। युद्वक्षेत्र में वे सदैव ही शान्त एवं स्थिर चित्त होकर संघर्ष करते थे; इसीलिए उन्होंने रावण के बाण को असफल कर दिया और उसे तोड़कर उसके टुकड़े-टुकड़े कर दिये।

8

जब रावण ने यह देखा कि उसका भाला तोड़ कर फेंक दिया गया है, तो वह क्रोध से अंगार हो गया। उसने अपने हाथ में दूसरा भीषण भाला लिया और राम से कहा कि अब वे अपनी रक्षा करने के लिए पूरी तरह

सॅभल जॉय। उसने राम को सम्बोधित करते हुए कहा, हे राम !आप इस भाले को देखिए और पूरी कुशलता से इसके प्रहार को झेलिये। आप अपनी रक्षा पर भी पूरी दृष्टि रखिये। मुझे आपके छोटे भाई लक्ष्मण को भी देखकर दया आती है। निश्चय ही इस प्रहार से लक्ष्मण का वध हो जायेगा। यह वह अस्त्र है जो कभी भी असफल नही हो सकता। इससे बचना किसी प्रकार भी संभव नहीं है।

9

रावण ने उस अवसर पर भीषण प्रहार करते हुए यह सब कहा। अपने लक्ष्य को निश्चित करते हुए उसने भाले से भीषण प्रहार किया। उसके आक्रमण से लक्ष्मण न बच सके। उसके आघात से लक्ष्मण के पेट में घाव हो गया तथा वे पृथ्वी पर मूर्च्छित होकर गिर पड़े। राम लक्ष्मण की इस परिस्थिति को देखकर रो पड़े। सुग्रीव भी अत्यन्त दुःखी होकर क्रन्दन करने लगे। सभी वानरों के हृदय में गहरा डर बैठ गया। जब लक्ष्मण को मूर्छित अवस्था में वानरों ने पृथ्वी पर गिरा हुआ देखा तो वे भयभीत हो उठे। वे देवतागण जो आकाश में युद्ध की इन गतिविधियों को देख रहे थे, चौक पड़े। उनके हृदय में इस दृश्य से करुणा का भाव उमड़ आया।

10

उस परिस्थिति में विभीषण ने अभूतपूर्व कुशलता का परिचय दिया। वे सबसे अधिक अनुभवी एवं पटु थे। उन्होंने शीघ्र ही लक्ष्मण को उठा लिया। पीछे लौट कर उन्होंने रावण के प्रहार से अपनी भी रक्षा की। उन्होंने शीघ्र ही लक्ष्मण जी के पेट से भाला निकाल लिया और औषधि लाकर उनका उपचार किया। उन्होंने लक्ष्मण के घाव पर औषधि छिड़की। इससे उनका घाव ठीक हो गया। लक्ष्मण शीघ्र ही अपनी मूर्च्छा से उठकर खड़े हो गये। उन्होंने विभीषण की विधिवत् प्रशंसा करते हुए वन्दना की। अभी कुछ क्षण पहले जो क्रन्दन कर रहे थे,वे आनन्दमग्न् होकर प्रसन्न हो उठे। किसी को भी अब कोई दुःख नहीं था। हाँ इतना अवश्य हुआ कि सभी वानर क्रोधाग्नि से जलने लगे। वे सभी रावण पर भीषण आक्रमण की तैयारी करने लगे।

11

वे वीर हनुमान ! आप महान हैं। आपने हम सबकी मृत्यु के भय को भी समाप्त कर दिया है। आपने औषधि के पत्तों को लाकर वह साधन प्रस्तुत कर दिया है, जिससे हम सबका सदैव ही कल्याण होता रहेगा। आपका महान यश अत्यन्त निर्मल है। आप अपने गुणों के कारण परोपकार के प्रतीक हैं। आप सम्पूर्ण गुणों की निधि हैं। सदैव ही आपके कार्य अनुकरण करने के योग्य हैं। सभी को आपका अनुसरण करना चाहिए। आपके द्वारा इस सम्पूर्ण जगत के प्राणियों के प्राण की सदैव ही रक्षा होती रहेगी। इस प्रकार हनुमान जी की भूरि-भूरि प्रशंसा करते हुए सभी वानरों ने प्रसन्नता से उनकी वन्दना की। उन्होंने देखा कि लक्ष्मण को हनुमान द्वारा लायी गयी औषधि से नवजीवन प्राप्त हुआ है। मूर्च्छा से वे फिर जागृत हो उठे हैं। राम ने अत्यन्त प्रेम के वशीभूत होकर लक्ष्मण का

आलिंगन कर लिया। उन्हें लक्ष्मण से अपार प्रेम था। लक्ष्मण को जीवित एवं जागृत देखकर उनके हर्ष की सीमा न रही।

12

इतना भीषण आक्रमण करने के पश्चात् भी रावण अपने उद्देश्य की पूर्ति में सफल न हो सका उसे पीछे लौटने के लिए विवश होना पड़ा। उसने शीघ्र ही अपने लिए एक दूसरा रथ प्रस्तुत करने का आदेश दिया। यह भी आदेश दिया कि उस रथ का चालक एक ऐसा निपुण सारथी होना चाहिए जो युद्व में धैर्य एवं शक्ति का परिचय दे सके। शीघ्र ही रथ आ गया और वह अपने नवीन रथ पर सवार हो गया। वह अब अत्यन्त शीघ्रता से वानरों का वध करने में जुट गया। युद्व की सफलता के लिए अपने प्राण की भी उसको कोई चिन्ता नहीं थी। अब वह अपने प्राण का उत्सर्ग करने के लिए प्रस्तुत था। यही उसका लक्ष्य था। अब उसके समक्ष किसी अन्य उद्देश्य को चुनने का कोई प्रश्न ही नहीं था। जब उसने फिर आक्रमण किया तो वह निर्णय ले चुका था कि युद्व ही उसका प्रधान और अंतिम लक्ष्य है। उसने तीव्रगति से अपने रथ को युद्वक्षेत्र में बढ़ाया। उसकी गतिविधियों को देखकर सभी योद्वा उसकी वीरता की प्रशंसा करने लगे। रावण के रथ के घोड़े तीव्रगति से आगे बढ़ रहे थे और भयंकर संघर्ष चल रहा था।

13

इस परिस्थिति को देखकर देवराज इन्द्र ने यह अनुमान लगाया कि इस युद्व में विजय-श्री प्राप्त करने के लिए राम को निश्चित ही अपार कष्ट उठाना पड़ रहा है। उनकी इस युद्व में पराजय भी संभावित हो सकती है। देवराज इन्द्र ने बड़ी ही चतुरता एवं सावधानी से राम की सेवा में "गुह्य विजय अस्त्र" समर्पित कर दिया। यह अस्त्र उन्हें ब्रह्मा जी से प्राप्त हुआ था। इस अस्त्र के साथ देवराज ने राम को रथ भी प्रदान किया। उस अस्त्र के साथ ही ब्रह्मा ने यह रथ भी उन्हें दिया था । इस रथ का सारथी भी कुशल चालक मातलि था। उससे भिन्न अन्य कोई व्यक्ति इसका चालक नहीं हो सकता था। देवराज ने मातलि को यह आज्ञा भी दी थी कि वे सदैव ही राम की सुरक्षा के प्रति जागरुक रहें। राम सहर्ष उस रथ पर सवार हो गये। वह रथ मणि माणिक्यों से सजा हुआ था। वह जगमगाता हुआ प्रकाश-किरणें बिखेर रहा था। श्री राम के साथ उस रथ पर लक्ष्मण भी आसीन हो गये।

14

देवराज इन्द्र द्वारा प्रदान किये हुए रथ पर श्रीराम को विराजमान देखकर ऋषियों ने अपार प्रसन्नता प्रकट की। उन्होंने शीघ्र ही आकाश से सुगन्धित वस्तुओं एवं पुष्पों की वृष्टि की। रावण आश्चर्यचकित होकर इस विचित्र दृश्य को देख रहा था। अब उसको स्पष्ट होने लगा था कि इस युद्व में राम की विजय निश्चित है।

यह जानकर भी वह वहीं डटा रहा। वास्तव में रावण एक महान दृढ़-निश्चयी एवं वीर योद्धा था। जन्म से ही वह एक पराक्रमी शूरवीर था। वह युद्व में कभी पीछे नहीं हटा। वह आगे ही बढ़ता चला गया। वह स्वयं को धोखा नहां दे सकता था। वह एक युद्ववीर था।

15

उसने आगे बढ़कर अपने बाणों से राम पर घोर आक्रमण किया। दोनों वीरों-राम एवं रावण- ने अपने-अपने बाणों से विभिन्न रुपों में रण कौशल का प्रदर्शन किया। सभी प्रकार के अस्त्र-शस्त्रों का प्रयोग दोनों ही पक्षों से किया जा रहा था। सर्वप्रथम राजा राम ने भगवान शंकर द्वारा प्रदान किये गए एक बाण का प्रयोग किया। यह बाण एक पाश की भाँति था। उस बाण के प्रयोग से त्रिशूल ही त्रिशूल युद्वक्षेत्र में दिखायी देने लगे। वह बाण त्रिशूल उत्पन्न करने की शक्ति रखता था। इसी के उत्तर में दशमुख रावण ने उस भीषण शस्त्र का प्रयोग किया, जिसका नाम सर्पपाश था। राम के सभी बाणों को निगलने में वह पूर्ण समर्थ था। इससे श्री राम को भी अपार क्रोध हो आया। शीघ्र ही उन्होंने भीषण बाणों की वर्षा आरम्भ कर दी, जिससे सम्पूर्ण आकाश आच्छादित हो गया। वातावरण में एक घुटन सी उत्पन्न हो गयी।

16

राम के भीषण बाणों के आघात से दशमुख रावण घायल हो गया। उसका वक्षस्थल विदीर्ण हो गया। उसके गहरे घावों से रक्त बह निकला। वह अद्धमूर्च्छितावस्था में हो गया और गिर पड़ा। जब रावण के सारथी ने रावण की यह दशा देखी तो वह अत्यन्त भयभीत हो गया। वह अपने प्राण एवं शरीर की रक्षा के लिए दौड़कर कहीं छिप गया। इस प्रकार उसने अपने स्वामी रावण से घोर विश्वासघात किया। जब कुछ समय पश्चात् रावण को चेतना प्राप्त हुई और मूर्च्छा से जागा तो वह शीघ्र ही उठकर खड़ा हो गया। उसके ह्दय में अपार दृढ़ता थी। उसने अपनी रक्षा का पूर्ण प्रयास किया। इस भीषण परस्थिति को देखकर उसका नीच सारथी भ्रम में पड़ गया। वह फिर रथ पर आकर उसका संचालन करने लगा। वह रावण से बहुत भयभीत हो गया था। उसे भय था कि भाग कर छिप जाने का रहस्य प्रकट न हो जाय।

17

उसके पास एक अत्यन्त तीक्ष्ण एवं तीव्रगति से प्रहार करने वाला अस्त्र था जिसे त्रिशूल कहते हैं। देवों ने इसे दशमुख रावण को भेंट स्वरुप प्रदान किया था। रावण सदैव ही उसकी पूजा किया करता था। उसमें से किरणों की चमक प्रतिक्षण फूटती रहती थी और अग्नि की भाँति ज्वालाएँ निकलती रहती थीं। उस अस्त्र से अग्निवर्षा भी होती थी। राम ने शीघ्र ही अपने धनुष को चढ़ाकर एक बाण का संधान किया। राम का बाण मंत्रों की शक्तियों से विभूषित था। वह इन्द्र के वज्र की भाँति कठोरता का प्रतीक था। इस प्रकार दोनों ही योद्धाओं ने

एक दूसरे पर भीषण प्रहार करना प्रारम्भ कर दिया। जब राम तथा दशमुख ने परस्पर बाणों का संधान किया, दोनों ओर से जैसे अग्नि की ज्वालाएँ फूट पड़ीं। उसकी उष्णता से लगता था, सभी कुछ जल कर राख हो जायेगा।

18

वे दोनों ही युद्धवीर योद्धा युद्धक्षेत्र में समान रुप से शक्तियों का प्रदर्शन कर रहे थे। वे दोनों ही महान पराक्रमी योद्धा थे। उसके पश्चात् उन दोनों योद्धाओं ने एक दूसरे पर भाँति-भाँति के भीषण अस्त्र-शस्त्रों से प्रहार किया। वे शस्त्रों को बदल-बदल कर उनका प्रयोग कर रहे थे; इसीलिए आक्रमण की गतिविधियों को भी वे तीव्रतर करते जाते थे। कुछ शस्त्र ऐसे थे,जो यमराज द्वारा प्रदान किये गये थे। अन्य देवताओं-निरेति, वरुण आदि ने भी शस्त्र देकर उन योद्धाओं को अनुगृहीत किया था। इस प्रकार देवताओं ने उनको रहस्यमय अस्त्र-शस्त्र दिये थे। वे अस्त्र-शस्त्र दिखायी भी नहीं देते थे। वे राक्षसों के अस्त्र थे।

19

दोनों ही योद्धा और अधिक दृढ़तापूर्वक संघर्ष करने में प्रवृत्त हो गये। किसी योद्धा की शक्तियों में किसी प्रकार की कमी नहीं थी। वे दोनों एक दूसरे पर आक्रमण कर रहे थे। एक दूसरे के आक्रमणों को वे असफल भी कर रहे थे। वे एक दूसरे को खदेड़ते हुए बहुत निकट आ पहुंचे थे। परस्पर उन्होंने भीषण आक्रमण किया। एक दूसरे के प्रहारों को सहन करने की पूर्ण सामर्थ्य उनमें थी। दोनों ही रण-कुशल योद्धा थे। चक्र की भाँति घूम-घूम कर वे एक स्थान से दूसरे स्थान तक चले जाते थे और परस्पर भीषण युद्ध करते थे। एक दूसरे से टकरा कर वे संघर्ष कर रहे थे और अपने अपार शौर्य का परिचय दे रहे थे। कभी-कभी वे अलग-अलग भी हो जाते थे। संघर्ष करते हुए वे थकते नहीं थे। उनमें से कोई भी किसी से कम शक्तिशाली सिद्ध नहीं हो रहा था। यद्यपि बहुत अधिक समय तक युद्ध होता रहा, फिर भी कोई थकावट का अनुभव नहीं कर रहा था। भीषण संघर्ष ने उनकी क्षमता को और अधिक बढ़ा दिया था।

20

उन दोनों महान योद्धाओं के शरीर सुगठित और बलशाली थे। वे बहुत ही भारहीन प्रतीत होते थे। वे वायु की गति से उड़ सकते थे। बड़ी ही तीव्रगति से वे घूम जाते थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वे क्रीड़ा कर रहे हों। झाडू की तीलियों की भाँति जहाँ भी चाहते थे, मुड़कर वे आक्रमण कर देते थे। उनकी गति इतनी विलक्षण थी कि उनको देख पाना सम्भव नहीं था। केवल उनकी गोलाकार गति का आभास मात्र ही हो पाता था। इस प्रकार एक दूसरे को चारों ओर से घेरते हुए वे परिक्रमा-सी कर रहे थे। लगता था मानो देवता यमराज का कोई चक्र हो तथा मृत्यु देवता ही स्वयं युद्ध की इन गतिविधियों में भाग ले रहे हों। इस प्रकार वे दोनों योद्धा भीषण युद्ध कर रहे थे।

21

यदि कोई उस संघर्ष के मध्य में आ जाता था तो उसकी मृत्यु निश्चय ही हो जाती थी। दोनों योद्धाओं के भीषण रथों की गतिविधियों से अनेक सैनिक कुचले जा रहे थे। रथ भी तीव्र गति से आगे बढ़ते थे। जब युद्ध की गति तीव्र होती थी,तो रथों की गति निश्चित रुप से बढ़ जाती थी। ऐसा लग रहा था जैसे भूमि उलट–पलट जायेगी। पृथ्वी हिलडुल कर कम्पित हो रही थी। पर्वतराज के शिखर भी युद्ध की भीषणता से काँप रहे थे। ऐसा लग रहा था कि वे टूट–टूट कर पृथ्वी पर गिर पड़ेंगे। इस प्रकार वातावरण कुछ अजीब सा हो गया था। भीषण शब्दों से आकाश गूंज रहा था। वह स्थिति अत्यन्त भयावह थी। आकाश में बादलों के समूह अपने–अपने स्थान की खोज में थे। वे आकाश में छितरा कर घूम रहे थे,जैसे उन्हें किसी ने बाहर फेंक दिया हो। इस प्रकार आकाश में बादल बिखरे–बिखरे से दृष्टिगोचर हो रहे थे।

22

इस भीषण परिस्थिति में सूर्य की किरणों का ताप बहुत कम हो गया था। वे जैसे कुम्हला सी गयी हों। समुद्र में विचित्र प्रकार की तीव्र लहरें उठ रही थीं। इस प्रकार हिलती–डुलती हुई लहरें निरन्तर आगे बढ़ती चली जा रही थीं। आकाश में देवतागण अपने ग्रहों को विधिवत धारण किये हुए थे। वे घोर कष्ट का अनुभव करते हुए तथा डरते हुए प्रत्येक कार्य को बडी कुशलता से कर रहे थे। जब चारों ओर कम्पन का संकेत मिलने लगा, तो उन सभी के मन में भय उत्पन्न हो गया। सम्पूर्ण पृथ्वी काँप सी रही थी। इन गतिविधियों से भयंकर श्रेणी का स्पन्दन हो रहा था। आकाश में ग्रह एवं नक्षत्र भी इस भीषण परिस्थिति में एक स्थान पर स्थिर न रह सके। यहाँ पर यह संकेत देने एवं कहने की कोई विशेष आवश्यकता नहीं है कि वानरगण अत्यन्त भयभीत दिखायी दे रहे थे, वे वृक्षों की शाखाओं में उलझ–उलझ कर प्राणों की रक्षा के लिए छिपने लगे थे, अथवा अपने प्राणों की रक्षा के लिए वे पृथ्वी पर लेट गये थे।

23

पत्थरों अथवा बड़े–बड़े शिलाखण्डों पर वानर–समूह खड़े थे। वे अपने हाथों में छोटे अथवा बड़े प्रस्तर–खण्डों को लिए हुए थे। वे हाथों से उनको दृढ़तापूर्वक पकड़े हुए थे। कुछ अन्य ऐसे भी वानर योद्धा थे जो आश्चर्यचकित होकर भ्रम में पड़े थे। देवों के रथ का उत्तम सारथी मातलि एक महान शक्तिशाली व्यक्ति था। इस भीषण परिस्थिति में उसको यह अनुभव हो रहा था कि उसकी भी शक्तियाँ कम हो रही हैं।वह तृषा से व्याकुल होने लगा। प्यास की अधिकता से उसे मूर्च्छा–सी आने लगी। उसके हृदय की गति धड़क–धड़क कर तीव्रतर होती जा रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था जैसे वायु के भीषण थपेडे उसे निर्बल बना रहे हों। उसने बडी ही कठिनाई से अत्यन्त दुःखी होकर श्रीराम से विनम्र निवेदन किया कि वे शीघ्र ही इस युद्ध को समाप्त

करने की कृपा करें। उसने कहा–प्रभु ! इस भीषण युद्ध की क्या आवश्यकता है ? इसके निरन्तर आगे बढ़ते रहने से हम सबको श्रान्ति का ही तो अनुभव होगा ?

24

हे राजा राम ! आप अपनी महान करुणा से जगत की रक्षा कीजिए। उस पर आप कृपा कीजिये। यदि भूमि इसी प्रकार डोलती रही तो सम्भव है कि कई भीषण आघातों के पश्चात् चूर–चूर होकर फट जाये। आप अपने शत्रु के प्रति उदासीन से प्रतीत हो रहे हैं। आपका अनुमान है कि वह आपके प्रति कुचेष्टाएँ नहीं कर रहा है और शान्त है; इसलिए आप उस पर भी कृपालु दिखायी दे रहे हैं। यह दृष्टिकोण बहुत उचित प्रतीत नहीं हो रहा है; इसीलिए ऐसा नहीं करना चाहिए। आप शीघ्र ही चतुरतापूर्वक राजनीति के दाँव पेचों से इस भीषण शत्रु का विनाश करने की कृपा कीजिए। जब शत्रु का विरोध करते हुए उस पर बार–बार आक्रमण किया जाता है तो वह भी अपनी सुरक्षा के सभी संभव उपाय खोज लेता है, और पूरी निपुणता का परिचय देने लगता है। रावण क्रूर एवं धृष्ट है। वह सदैव ही आपकी नरमी और कमी का लाभ उठाना चाहता है। उसी के माध्यम से वह आप पर प्रहार करना चाहता है। वह आपको सुषुप्तावस्था में ले जाना चाहता है, जिससे आप जागृत होकर पूरी चेतनता से संघर्ष न कर सकें और प्रत्येक कार्य की उपेक्षा करते रहें। आपकी यह दशा शत्रु के लिए महत्वपूर्ण सिद्व होगी।

25

यदि आप शत्रु की कुटिलता की ओर ध्यान नहीं देंगे, तो संभव है कि इस युद्व में विजय श्री पाने की बजाय आपको पराजय ही मिले। दीपक की ज्योति तभी प्रज्वलित होती है, जब उसमें तेल होता है। उसका तेल समाप्त हो जाय तो दीपक भी लगभग समाप्तप्राय ही हो जाता है। तेल की अधिकता से जो दीपक निरन्तर जलता रहता है, वह अपने आप कभी नहीं बुझता है। उसको बुझाया जाता है। उपमा के रुप में दुष्टों के प्रति यही बात मानी जा सकती है। युद्व में वे पूरी तरह प्रज्जवलित होते हैं; इसीलिए इस धृष्ट शत्रु के प्रति सचेत रहने की मैं करबद्व प्रार्थना करता हूं। शीघ्र ही आप इस शत्रु का वध कर दीजिए। इसका वध कर अब युद्व समाप्त कीजिए। इस क्रूर राक्षस ने तीनों लोकों को त्रस्त कर दिया है।

26 (क)

आपके बाण में ही यह सामर्थ्य है कि रावण के बाणों से उत्पन्न सम्पूर्ण उष्णताओं को वे शान्त कर सकते हैं। आप अपने तीक्ष्ण बाणों का शत्रु पर प्रयोग कब करेंगे ? आप शीघ्र ही गुह्य विजय–अस्त्र को अपने हाथ में धारण कर लीजिए। उस अस्त्र के समकक्ष अन्य कोई अस्त्र नहीं रखा जा सकता है। उसकी विशेषता स्वसन है, क्या यह एक वास्तविकता नहीं है ? वह अपार अलौकिक शक्तियों से विभूषित है। वह सुमेरु पर्वत की भाँति

भारी है। उसकी ये विशेषताएँ विन्ध्याचल एवं हिमवान पर्वत की भाँति हैं। भारीपन में वह इन्हीं पर्वतों के समकक्ष है। यदि उसकी उपमा दी जाय तो निश्चय ही वह महान पर्वतों के समान है। भयंकर तूफान एवं झंझावात उसके किनारों अथवा छोरों की भाँति हैं। उसकी उष्णता भीषण अग्नि की ज्वालाओं की भाँति है जो सरलता से किसी भी वस्तु को भस्मसात कर सकती है। इस प्रकार इस भीषण बाण की तीक्ष्णता एवं इसका तेज, प्रचण्ड मार्तण्ड की भाँति हैं।

26(ख)

उसके रोम गरुड़ पक्षी के रोमों की भाँति हैं, मूलभूत स्वरुप से वह रुद्र का ही एक रुप लगता है। तीव्र वायु के झोकों–प्रभंजन आदि के विषय में भी यह कल्पना संभव नहीं हो सकती। उसकी भीषणता वज्रपात की भाँति है। विघुत की घोर गर्जना तथा तूफान जैसे उसके साथ ही मिल कर वातावरण को और भी अधिक भयावह बना रहे हों। इस प्रकार भीषण वज्र की भाँति उस बाण की गतिविधि दृष्टिगोचर होने लगी है। उसकी अग्नि से शत्रु समूह जलकर राख के ढेरों में परिवर्तत हो जायंगे। उनके शवों के भी ढेर दिखायी देने लगेंगे। इसके चलते ही शत्रुओं के शरीर चूर–चूर होकर पृथ्वी पर बिखरे होंगे। इस प्रकार हे राजन् ! आप ऐसे तीक्ष्ण बाणों का प्रयोग कीजिए जिससे कि दशमुख रावण की आत्मा शरीर में अवरुद्ध होकर न रह जायें। अतएव आप उसका वध करने की कृपा कीजिए।

27

मातलि ने युद्धक्षेत्र में रथ को आगे ले जाते हुए श्री राम से यह निवेदन किया। उन्होंने लौह–चाबुक का प्रयोग कर अपने अश्वों को और आगे बढ़ाया। आर्य राम भी बाण चलाने के लिए उद्यत हो गये। उन्होंने अपने धनुष को विधिवत् धारण कर लिया। उसके पश्चात् प्रत्यंचा पर उन्होंने बाण चढ़ाया। केवल कुछ शब्द ही इस संबंध में उनके मुख से निकले। एक ही क्षण में शीघ्र ही उन्होंने अपने तीक्ष्ण शर का संधान किया, जो किसी को भी कभी दृष्टिगोचर नहीं हो पाया। उस बाण के चलने का अनुमान भी बड़ी देर में हो पाया। किसी की भी दृष्टि उस पर नहीं पड़ी। दशमुख् रावण की ग्रीवा पर वह बाण लगा, जिससे उसकी गरदन कट गयी आर उससे रक्त की धाराएँ बह निकलीं। उसके दशों शिर एक साथ ही कट कर पृथ्वी पर गिर पड़े तथा सभी ओर वे लुढ़कने लगे।

28

इस प्रकार दशमुख रावण पृथ्वी पर गिर पड़ा। उसकी मृत्यु हो गयी। वानर सेना सागर की भाँति आनंदोन्मत्त होकर भीषण गर्जना करने लगी। उनका घोर रव आकाश में गूंजने लगा। प्रसन्न होकर वे नृत्य करने

लगे। हर्षध्वनि करते हुए वे तालियाँ बजाने लगे। वे सभी अत्यन्त प्रसन्न थे। वे हर्षपूर्वक राम की प्रशंसा बार-बार कर रहे थे। वे छोटे-छोटे बालकों की भाँति उछल-उछल कर अपना हर्ष व्यक्त कर रहे थे।

29

अब वायु भी मन्द-मन्द गति से बह रही थी। ऐसा लगा जैसे सम्पूर्ण जगत का वातावरण शान्त हो गया हो और विश्व में पूर्ण शान्ति की स्थापना हो गयी हो। दिशाओं में चारों ओर जैसे किसी ने स्वर्ण धूलि बिखेर दी हो और उसकी सुगन्धि से सम्पूर्ण वातावरण महक रहा हो। धूप एवं यज्ञ की समिधाओं का धूम्र सदैव ही वातावरण को आच्छादित कर रहा था। क्या इस अवसर पर देवताओं को किसी भी प्रकार के कष्ट का अनुभव हो सकता था ? अब उनको सताने वाला उनका शत्रु रावण संसार से उठ चुका था; अतएव सभी देवतागण आनंद एवं उल्लास में निमग्न हो गये।

30

ऋषि वर्ग एवं सिद्व ज्ञानी वर्ग को भी रावण के वध से अपार प्रसन्नता हो रही थी। वे ईश्वर से बार-बार प्रार्थना कर रहे थे। वे आकाश-मार्ग में खड़े होकर अपना हर्ष व्यक्त कर रहे थे, यद्यपि स्पष्ट रुप से सबकी दृष्टि के समक्ष वे उपस्थित नहीं हुए। वे आकाश से ही पुष्प- वृष्टि कर रहे थे। इस प्रकार वे राम के प्रति अपना अपार सम्मान व्यक्त कर रहे थे। यह दृश्य बहुत ही आकर्षक था। बिखरते हुए पुष्पों से लुब्ध भ्रमर उन पर गुंजार कर रहे थे। सम्पूर्ण वातावरण आनंदमग्न हो गया था।

31

रावण -वध के इस भीषण दृश्य को देखकर विभीषण को हार्दिक दुःख हुआ। वे निराश होकर अत्यन्त दुःखी होने लगे। जब उन्होंने अपने बड़े भाई रावण की यह दशा देखी,तो उनका हृदय करुणा से आप्लावित हो गया। वे वास्तव में रावण से बहुत प्रेम करते थे। जब रावण की मृत्यु उन्होंने देखी तो उनका हृदय विदीर्ण हो गया। मानवीय भावना की कोमलता एवं करुणा से उनका हृदय भर आया। उनके हृदय में रावण के प्रति अपार प्रेम उमड़ आया। वे अपने आँसुओं के प्रवाह को रोक नहीं पाये। उनकी आँखों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित होने लगी। उन्होंने प्रेम-विभोर होकर अपार दुःख का अनुभव करते हुए अपने बड़े भाई रावण के चरणों में अपनी श्रद्वा के पुष्प बिखेर दिये। उन्होंने रावण के शव पर फूलों की वर्षा की। उस अवसर पर विभीषण ने रावण का पद-वन्दन करते हुए उसको पूरा सम्मान दिया एवं पुष्प मालाएँ उसके शव पर चढ़ायीं।

32

हे दशमुख रावण ! आप मेरे बड़े भाई हैं। आज आपकी यह दशा देखकर मुझे अपार दुःख हो रहा है। वास्तव में मैने आपकी इस परिस्थिति को पहले ही देख लिया था। अब आप मुझे क्षमा कर दीजिए जिससे कि मुझे किसी प्रकार का दोष न लगे। मैने आपको पहले ही अनुचित कार्यों से रोका था, इसीलिए अन्त में मुझे आपको छोड़कर परहित करने वाले श्रीराम की शरण में आना पड़ा। यह महान गौरव प्राप्त करना मैं अपना कर्तव्य समझता था। सभी परिस्थितियों को भली भाँति समझ कर ही मैं स्वतंत्र व्यक्तित्व वाले महान योद्धा राम की सेवा के लिए उद्यत हो गया। वास्तव में श्रीराम के हृदय में सम्पूर्ण जगत के प्रति अपार प्रेम है।

33

यह भी एक नितान्त नीचतापूर्ण कृत्य है कि जो व्यक्ति स्वयं किसी दुष्ट व्यक्ति को किसी कार्य से रोके, वह भी कभी न कभी किसी नीच व्यक्ति के साथ हो जाय। इस दृष्टि से भी मैंने पूरा विचार कर राम की शरण में जाने का उचित ही निर्णय लिया था। यदि मैं भी नीच कार्यों में प्रवृत्त रहता तो आपको छोड़ कर जाने से लाभ ही क्या था ? केवल मैं आपका द्रोही बनने की संज्ञा ही पाता। मैं सम्पूर्ण जगत के प्रति अपार करुणा की भावना से अभिभूत हूं, इसीलिए श्री राम की शरण में जाना मेरा कर्तव्य था। मैं सम्पूर्ण विश्व की सुरक्षा का भार अपने कन्धों पर लेने के लिए सदैव ही प्रस्तुत हूं, इसीलिए मेरी आत्मा में भी दृढ़ शक्ति है। अपने उद्देश्यों की पूर्ति के हेतु ही मैंने आपसे अलग रहना स्वीकार किया था।

34

यद्यपि आज मेरे हृदय में अपार दुःख हो रहा है, फिर भी स्पष्ट है कि आपकी मृत्यु का एकमात्र कारण आपके कुकृत्य एवं निकृष्ट विचार ही थे। सदैव एक पथभ्रष्ट व्यक्ति की भाँति आप अपने जीवन की गतिविधियाँ संचालित करते रहे हैं। मैंने पहले ही आपसे ऐसा न करने हेतु एक बहुत बड़े सम्मेलन में निवेदन किया था, पर आपने उस पर ध्यान नहीं दिया। सदैव ही उसकी पूर्ण उपेक्षा करते हुए आपने मनमानी की। आपने प्रहस्त के शब्दों पर विचार कर उनको ही महत्व दिया। यह सभी दुष्परिणाम उन्हीं कार्यों और विचारों के फलस्वरुप हैं। आज ये परिणाम सामने आ गये हैं। आज मृत्यु आपके समक्ष उपस्थित है।

35

आप स्वयं जानते हैं कि धर्म के प्रति सदैव ही मेरा दृढ़ विश्वास रहा है। मैंने अपनी आँखों से आज देख लिया कि संसार में दुष्टों को उनके बुरे कार्यों के फल शीघ्र ही प्राप्त हो जाते हैं। मुझे आशा है कि दूसरे जन्म में आप उत्तम विचारों से अभिभूत होकर जीवन यापन करेंगे, तो कभी भी आपको कष्ट एवं दुःख नहीं भोगना पड़ेगा। अब आपका अस्तित्व इस ज़गत से समाप्त हो चुका है। आपने धर्म एवं जीवन के महान मूल्यों की सदैव ही उपेक्षा की है, इसीलिए अन्त में आपको मृत्यु का ही वरण करना पड़ा।

36

जो लोग जानबूझकर अपने लक्ष्यों एवं कार्यों के विषय में अधिक स्पष्टीकरण प्राप्त करना चाहते हैं, उनका यह कर्तव्य है कि वे विधिवत् भले एवं बुरे विचारों की तुलना करें तथा सद्गुणों को ढूंढ़ने का प्रयास करें। ऐसा करने से उन्हें सद् और असद् के परीक्षण के आधार पर जीवन के सत्य का भली भाँति ज्ञान हो सकेगा। वे अन्त में उचित बातों एवं सद्गुणों को ग्रहण कर सकेंगे। उचित एव अनुचित का पूरा ज्ञान हो जाने पर ही विचार–विमर्श की पूर्ण सफलता सिद्व होगी। उसके निकले हुए सभी निष्कर्षो का पालन करना विवेकी पुरुष का कर्तव्य है। वास्तव में बिना विधिवत परीक्षण किये किसी कार्य को करते जाना और सद्गुणों की उपेक्षा कर किसी भी मार्ग की ओर अग्रसर हो जाना उचित नहीं है, इसीलिए सदैव ही किसी बात को स्वीकार करने से पहले विचार कर लेना चाहिए।

37

हे भाई रावण ! आपने सदैव ही कुमार्ग का अनुसरण किया। उस महान सभा में मैं आपसे बहुत ही निराश हो गया था। आपने आशा की बजाय मुझे पूर्ण निराशा दी। मेरे जो भी उचित सुझाव थे, जिनसे जीवन में आपको सौभाग्य प्राप्त होता, आपने उनकी ओर कोई ध्यान ही नहीं दिया। आप द्वारा मेरे सुझावों को स्वीकार करने का तो प्रश्न ही नहीं उठता था। मेरी केवल यही कामना थी कि सदैव ही आपका हित एवं कल्याण हो,जिससे आपका जीवन सुखी और आनंदपूर्ण रहे। इसीलिए मैंने बार–बार आपके मंगल की शुभकामना करते हुए ही आपके समक्ष उचित प्रस्ताव किये थे, परन्तु आपका ह्रदय उनके विपरीत गया। आपको रणोन्मत्तता ने एक महान योद्धा की भाँति उन्मत्त कर दिया था। आप अपने रण–कौशल से सम्पूर्ण जीवन की उपलब्धियाँ प्राप्त करने के उत्कट अभिलाषी थे।

38

जहाँ तक मेरा प्रश्न है, मैं आपसे अवस्था में छोटा हूं। आपसे प्रेम के वशीभूत होकर ही मैंने उचित सुझाव देने का साहस किया था और पूरी परिस्थिति स्पष्ट करने का प्रयत्न किया था। आपके लिए यह आवश्यक नहीं था कि आप मेरी सभी बातों का पालन करते परन्तु हे मेरे बड़े भाई ! निश्चय ही उन बातों पर आपको थोड़ा बहुत ध्यान अवश्य ही देना चाहिए था। मैं सदैव ही एक रक्षक की भाँति आपकी पूजा करता रहा हूं। जिन लोगों ने आपकी सुरक्षा एवं शुभकामना का भाव लेकर आपको परामर्श या उपदेश दिया, वे आपके हितैषी ही थे। आपको आपके कल्याण के मार्ग की ओर ही वे ले जा रहे थे। वास्तव में मेरे रक्षक श्रीराम के शब्दों पर भी ध्यान देना चाहिए था। उसके औचित्य पर आपको विचार करना चाहिए था। ऐसा करते हुए विचारों में आपको परिवर्तन लाना चाहिए था। राम के ह्रदय में इस सम्पूर्ण जगत की मंगल–कामना है,परन्तु मेरी उचित बातें आपको

कठोर एवं खटकने वाली प्रतीत हुई। आपने किसी की कोई भी उचित बात नहीं सुनी।

39

आपके झूठे अभिमान एवं हठी स्वभाव के कारण ही श्रीराम को अपार दुःख सहना पड़ा। वास्तव में आपको उपदेश देने से भी कोई विशेष अर्थ नहीं निकला। जिनके हृदय में अग्नि की भाँति क्रोध उमड़ता है, उनको सदुपदेश देने से कोई विशेष लाभ नहीं मिलता। आपको सभी बातों का बार बार-स्मरण दिलाया गया। अनेक भाँति के उदाहरण भी दिये गये। उन सभी बातों को शीघ्र ही आपको ग्रहण कर लेना चाहिए था। उन उचित शब्दों को मान लेना ही श्रेयस्कर था। उसी से आपके सभी कार्य सफल हो सकते थे, परन्तु जो भी हितकारी बातें थीं, उन पर आपने कभी भी विचार नहीं किया। वास्तव में उचित तो यही था कि आप औचित्यपूर्ण बातों पर ध्यान देकर उनका पूरी तरह पालन करते। राम एक महान विवेकी व्यक्ति हैं, परन्तु आपने उनको कोई महत्व नहीं दिया। उनकी किसी भी बात को आपने स्वीकार नहीं किया।

40

आपका मिथ्याभिमान भी अत्यधिक बढ़ गया था। इन्हीं कारणों से जब राम ने देखा कि आपके सोचने का ढंग इतना दर्पपूर्ण है, तो उन्होंने स्वयं अपमान का अनुभव किया। सभी व्यक्ति आपको समझा कर असफल हो गये और उन्हें वापस जाना पड़ा। राम तथा उनके दूतों को भी आपके व्यवहार से गहरी निराशा हुई। वे राम से प्रेम करते थे। वे आपको उचित मार्ग पर लाने का सभी संभव प्रयास कर रहे थे। मैंने भी आपको बार-बार स्मरण दिलाया और आपको सचेत किया था। मैंने पूरा प्रयत्न किया कि आपको विस्तारपूर्वक समझाकर मैं पूरी परिस्थिति स्पष्ट कर सकूं। आपने मेरा घोर अपमान भी किया। अन्त् में आप अत्यन्त क्रुद्ध होकर अपशब्द कहने लगे। मुझ पर अपना क्रोध व्यक्त करते हुए जानबूझ कर मेरे मुख पर आपने चोट पहुंचाई।

41

हा! मुझे अत्यन्त दुःख है कि सदैव ही बुरे विचार आपके हृदय में प्रतिष्ठित रहे। आपको मतिभ्रम हो गया था। स्मरण दिलाने पर भी किसी बात पर आपका ध्यान नहीं जाता था। आप स्वयं जानते हैं कि आपने किसी के उचित परामर्श पर कभी भी ध्यान नहीं दिया। उन लोगों की उचित बातों पर तो आपने गौर ही नहीं किया जो आपको सचेत करते रहे और सदैव आपकी मंगल कामना करते थे। अपनी महानता एवं दर्प के कारण प्रजाजनों के प्रति भी आपके हृदय में कोई प्रेम नहीं था। आपमें सदैव ही क्रोध का आधिक्य रहा। जब मैं इन सभी बातों पर ध्यान देता हूं तो मुझे अपार दुःख होता है। मैंने दोबारा भी आपके दुर्व्यवहारों एवं बुरे विचारों के प्रति सचेत करते हुए आपसे निवेदन किया था कि कृपा करके आप सद्गुणों की ओर प्रवृत्त हों। आप विवेकी पुरुषों की बातों पर कभी भी ध्यान नहीं देते थे, जबकि उचित बातों पर ध्यान देने में ही आपका हित था।

42

इस विषय में मेरा अनुमान ठीक उतरा। आज आपको इतनी दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति का सामना करना पड़ा है। आपने चतुर व्यक्तियों की राय को कभी भी नहीं माना। वास्तव में जो लोग बुद्धिमान एवं विवेकी व्यक्तियों के प्रति सम्मान प्रकट नहीं करते, वे उचित उपदेशों की अवहेलना ही करते हैं। उनके हृदय में सदैव ही अभिमान एवं क्रोध की ज्वालाएं उठती रहती हैं, जिसके परिणाम–स्वरुप उनका हित अहित में परिवर्तित हो जाता है। उनके लिए कल्याण की कामना भी नहीं की जा सकती। उनको इसीलिए अपार कष्ट प्राप्त होता है। उनको मृत्यु से जूझना पड़ता है तथा भांति–भांति की बड़ी विपत्तियों का सामना भी करना पड़ता है। हे भाई रावण ! आज आपकी यह दशा देखकर मुझे अपार दुःख हो रहा है। आज आप दुःखों के बोझ से दबे हुये हैं। ऐसा प्रतीत होता है कि सभी आपत्तियाँ आपके ऊपर एक बार ही टूट पड़ी हैं।

43

इस प्रकार विभीषण ने अपने बड़े भाई की दुर्दशा देखकर घोर विलाप किया। उसके पश्चात श्री राम ने वहाँ आकर कहा, हे विभीषण ! अब आप बहुत दुःखी होकर विलाप न करें। दशमुख रावण को युद्ध में वीरगति प्राप्त हुई है। उनकी मृत्यु भी व्यर्थ नहीं मानी जा सकती। उन्होंने एक वीर योद्धा की भाँति युद्ध में अपने प्राण का उत्सर्ग किया है।

44

जब भूतकाल में रावण ने भीषण तपस्या की थी, तो उनकी भूरि–भूरि प्रशंसा की गयी थी। वे इस जगत में एक महान राजा की भाँति विख्यात थे। यद्यपि उनका युद्ध में प्राणान्त हो गया, फिर भी उन्होंने कभी वीरत्व के व्रत को नहीं तोड़ा। वे युद्ध में कभी पीछे नहीं हटे। जो व्यक्ति युद्धक्षेत्र में वीर की भाँति वीरगति प्राप्त करता है, उसकी आत्मा को पूर्णता प्राप्त होती है।

45

अब उनके विषय में सोच–सोच कर दुःखी नहीं होना चाहिए। एक वीर योद्धा की भाँति वे युद्धक्षेत्र में संघर्ष करते हुए धराशायी हुए हैं। अब आप रावण के स्थान पर लंकापुरी के राजा बनकर यहाँ का राज्य–भार संभालने की कृपा कीजिये। आपके मन में सदैव ही लोक–कल्याण की भावना रहती है और आपका चरित्र भी निर्मल तथा पवित्र है, अतएव आप इस कार्य के लिए सर्वथा उपयुक्त हैं।

46

आप लंकापुरी के नव निर्माण की ओर विशेष ध्यान दीजिए। एक बार फिर सम्पूर्ण नगरी को उसकी गौरवमय गरिमा से सम्पन्न कीजिए। यह आवश्यक है कि राक्षस ही आपके सेवक हों। आपके व्यक्तित्व के प्रभाव से उनकी बुराइयाँ भी दूर हो सकेंगी, इसलिए राक्षसों के ह्रदय को समझने के लिए आपको भी उनकी सेवा का भाव ही अपनाना होगा। बुरे विचारों वाले राक्षसों में सद्‌गुणों की प्रतिष्ठा करनी होगी। आपका व्यक्तित्व वास्तव में एक निर्मल दर्पण की भाँति गौरवपूर्ण है। उसके प्रभाव से निश्चय ही राक्षसगण धर्माचरण में प्रवृत्त हो सकेंगे, ऐसा मेरा दृढ़ विश्वास है।

47

वास्तव में आप ऐसे धर्मपरायण एवं गुणी सज्जन को राजा के कर्तव्यों के प्रति विधिवत सचेत करने की मुझे कोई आवश्यकता नहीं है। आप स्वयं राजनीति–कुशल योग्य व्यक्ति हैं। राजा के कार्यो से भली–भाँति आप परिचित भी हैं। आप गुणों तथा शालीनता के प्रतीक हैं। उन्हीं मानव–मूल्यों के आधार पर आप जीवन–यापन करते रहे हैं, परन्तु कुछ आवश्यक बातों की ओर निश्चय ही मैं आपका ध्यान आकर्षित करना उचित समझता हूं। आप सदैव ही अपने ह्रदय में दृढ़ता बनाये रक्खें। राज्य कार्यभार संभालने के लिए भी दृढ़ता की बहुत बड़ी आवश्यकता है।

48

समाज एवं प्रजा की सुख समृद्धि को प्रमुखता देकर राजा को नीति निर्धारण करना चाहिए। सर्वप्रथम आपको भलाइयों तथा सद्‌गुणों के प्रति जागरुक रहना होगा। जब आप स्वयं धर्माचरण करते हुए दृढ़ता से अपने कर्तव्यों का पालन करने लगेंगे तो आपके राज्य के उच्च अधिकारी एवं मंत्री भी निश्चय ही आपका अनुकरण करेंगे।

49

राज्य के जो उच्च अधिकारीगण राज्य शासन कार्यभार संभालते हैं, उनको आज्ञा दीजिए कि वे राज्य के प्रति अपनी स्वामिभक्ति का परिचय दें। राज्य के सभी कर्मचारी अपने–अपने कार्यो को करते हुए प्रजाजनों के प्रति शील एवं सौजन्य का परिचय दें। यह आवश्यक है। उनके परिवार के जन भी सभी से सद्व्यवहार करना सीखें, जिससे कि उनके बच्चे भी उचित व्यवहार ओर शील सौजन्य का पूरा परिचय देना सीख सकें। वे सदैव ही दुर्व्यवहार से अलग रहें। जन–कल्याण के कार्यो एवं सुरक्षा में प्रजाजन भी राजा एवं उच्च अधिकारियों का साथ दें।

50

एक राजा को सदैव ही अपने व्यवहार के प्रति सचेत रहना चाहिए। इस बात पर उसको विशेष ध्यान भी देना चाहिए। उसके लिए यही उचित है कि जन साधारण के लिए अपने सद्व्यवहार से वह उदाहरण प्रस्तुत करे और प्रजा उसका अनुकरण करे। यदि राजा का ही व्यवहार अनुचित एवं अशोभनीय होगा तो प्रजाजनों को भी अपार कष्ट होगा। इसका एक कारण यह भी है कि प्रजाजन अधिकतर राजा का ही अनुकरण करते हैं।

51

ऐसे ही गुणी एवं सद्व्यवहार पूर्ण व्यक्ति को राजा बनने के लिए कहा जा सकता है। उसके व्यक्तित्व में स्थान–स्थान पर देवों का निवास होता है। इस प्रकार राजा के शरीर में आठ देवताओं का निवास है। वे आठों देवता ही जैसे राजा के व्यक्तित्व एवं शरीर के प्रतीक हैं, इसीलिए राजा के व्यक्तित्व पर उनका पूरा प्रभाव होता है, जिसकी तुलना किसी से भी नहीं की जा सकती।

52

आठ देवताओं के नाम हैं– इन्द्र, यम, सूर्य, चन्द्र, वायु, कुबेर, वरुण तथा अग्नि। वे सभी देवता मिलकर राजा के शरीर का निर्माण करते हैं, इसीलिये राजा को सदैव ही अष्टव्रत का पालन करना चाहिए। राजा के लिए यही आज्ञा है।

53

इस प्रकार राजा को देवराज इन्द्र के व्रत का पालन करना चाहिए। वे पृथ्वी पर वर्षा करते हैं। इससे जगत को सन्तोष होता है। जल से पृथ्वी पर धन–धान्य की उपज होती है,अतएव उनके व्रत का आपको पूरा अनुकरण करना चाहिए। आपका वर्षा का व्रत संसार भर को जल प्रदान करे, जिससे संसार का अस्तित्व गतिमय हो सके तथा इस जगत का कल्याण हो सके।

54

यमराज का भी कल्याणकारी व्रत यह है। दुष्टों तथा कुप्रवृत्तियों वाले नीच जनों का संहार कर संसार में शांति की प्रतिष्ठा के लिए वे उचित वातावरण प्रस्तुत करते हैं। वे उन पर प्रहार कर इतना कठोर दण्ड देते हैं कि उनकी मृत्यु हो जाती है,इसीलिये आपका प्रहार भी दुष्टवृत्ति के अधर्मी जनों पर होना चाहिए, विशेषतया उन नीचों पर जो चरित्रहीन हैं। जो व्यक्ति इस जगत में अशान्ति उत्पन्न करने का प्रयास करते हैं, उनका वध अवश्य करना चाहिए।

55

देवता सूर्य की किरणें संदैव ही जल का शोषण करती हैं, परन्तु उसका आभास नहीं हो पाता है। यह कार्य शनैः शनैः होता है, इसीलिये उसकी गतिविधि शीघ्र स्पष्ट नहीं हो पाती है। इसी प्रकार आप भी प्रजाजनों से शनैः शनैः कर के रुप में धन प्राप्त कीजिए, जिससे उन्हें किसी कठिनाई का आभास न हो सके। यह कार्य अत्यन्त शीघ्रता से नहीं किया जाना चाहिए। इस व्रत को सूर्यव्रत के नाम से पुकारा जाता है।

56

चन्द्रमा का व्रत चन्द्रव्रत कहलाता है। इससे सम्पूर्ण जगत को प्रसन्नता प्राप्त होती है। चन्द्र किरणें संसार पर शीतलता की वृष्टि करती हैं। उसी प्रकार आपका व्यवहार भी होना चाहिए। मित्र एवं प्रजाजनों के प्रति आपका व्यवहार सहानुभूतिपूर्ण तथा शालीनतामय हो। जब भी कोई व्यक्ति आप के व्यवहारों को देखे,तो उसे उसमें एक मधुरता का संकेत मिले। आपकी मुस्कुराहट इतनी मधुर होनी चाहिए कि जन साधारण को उसमें अमृतरस की-सी मधुरता का आभास हो। आपके सम्पर्क में आकर आपसे मिलने वाला व्यक्ति निश्चय ही आपसे प्रभावित हो, यह ध्यान रखना चाहिए। इस प्रकार आपका व्यवहार सुन्दर तथा सर्वसुखकारी होना चाहिए। आप सभी का आदर करने में कभी भी न चूकें।

57

वायु व्रत का पालन भी आपके लिए आवश्यक है। जब आप भेदिये की भाँति संसार के लोगों के विचारों अथवा उनकी गतिविधियों का पता लगाने का प्रयास करें तब इस व्रत का सहारा अवश्य लें। आप जिन बातों का भी पता लगाएँ, उनका किसी को आभास नहीं होना चाहिए। अतएव यह कार्य गुप्तचर विभाग द्वारा सम्पन्न किया जाना चाहिए। इस प्रकार महान चरित्रवान के रुप में सभी से मृदु व्यवहार करते हुए आप अपने राज्य-शासन की गतिविधियों को आगे बढ़ाइये। यह व्रत ही वायुव्रत की संज्ञा पाता है।

58

आप संसार के सभी रसों का पूर्ण आनंद लीजिये तथा आनंद और उल्लास से जीवन कों सुखी बनाइये। इस प्रकार सुख और समृद्धि के रस से जीवन में प्रसन्नता का संचार होता है। आप अपने को केवल सुस्वादु भोजन अथवा मधुर पेय पदार्थों तक ही सीमित न कीजिए वरन आप अपने शरीर पर सुन्दर-सुन्दर वस्त्र भी धारण कीजिए। भाँति-भाँति के आभूषण धारण करना भी राजा के लिए वांछनीय है। इस प्रकार अपने शरीर की साज-सज्जा पर भी यथेष्ट ध्यान दीजिए। यह व्रत धनधान्य के देवता कुबेर का है,अतएव सुख-समृद्धि का रस लेने के लिए कुबेर-व्रत का अनुसरण करना चाहिए।

59

वरुण देवता के पास बड़े–बड़े एवं विषैले अस्त्र–शस्त्र हैं। वे अस्त्र नागपाश आदि के रुप में प्रसिद्ध है। शत्रु को फाँसने में ये सबसे अधिक शक्तिशाली सिद्ध होते हैं। नागपाश की भाँति ही सभी को अपने आधिपत्य में ले लेने के व्रत का भी आपको पालन करना चाहिए, इसीलिए यह व्रत भी अनुकरणीय है। संसार के सभी दुष्टों के लिए आप नागपाश–व्रत का प्रयोग कर उन्हें बाँध लीजिए।

60

अग्नि देवता का व्रत अग्नि व्रत कहलाता है। यह अपनी उष्णता एवं तीव्रता से सदैव ही शत्रुओं को भस्मसात कर देता है। आपकी भीषणता एवं पराक्रम सदैव ही शत्रु के लिए भयावह होनी चाहिए। जैसे अग्नि की ज्वालाएँ अपनी प्रखरता से सभी वस्तुओं का नाश कर देती हैं, उसी प्रकार आप भी शत्रुओं का अपने पराक्रम से नाश करने में समर्थ हो सकें। जिन पर भी आप आक्रमण करें, उनका सर्वनाश करने में आप पूर्ण समर्थ हों तथा अपनी अपार शक्ति से संहार की गतिविधियों को तीव्रतर कर सकें। इसी व्रत को वास्तव में अग्निव्रत की संज्ञा दी जा सकती है।

61

इस संसार की सुरक्षा एवं कल्याण कामना से प्रेरित होकर महान चरित्रवान व्यक्ति की भाँति आपको सभी कार्य करने चाहिए। इस जगत में आपका व्यक्तित्व सर्वकल्याणकारी होना चाहिए। सदैव ही आपको अपने मन में लोकमंगल की कामना रखनी चाहिए। उसी के विषय में निरन्तर विचार–विमर्श करना चाहिए तथा उस पर पूरा ध्यान देना चाहिए। इस सभी सद्गुणों का पालन करना आपका परम कर्तव्य होना चाहिए। आपकी यह विशेषता आपकी शोभा बढ़ाने वाली मणि एवं माणिक्य की माला की भाँति होगी, जिसको धारण करना आपका कर्तव्य है। उससे आपकी शोभा और भी अधिक बढ़ेगी। इस प्रकार आप सदैव ही अनुपम गुणों एवं शील सौजन्य को वस्त्राभूषणों की भाँति धारण कीजिए।

62

आपका सुन्दर एवं मृदु व्यवहार, वास्तव में आपकी साज–सज्जा के आभूषणों में, कर्णफूल की भाँति होना चाहिए। इस व्यवहार के प्रति दृढ़ रहना आपका कर्तव्य होना चाहिए। आपमें उच्च विचारों की प्रतिस्पर्द्धा होनी चाहिए परन्तु इस सीमा तक नहीं कि विवश होकर उनका परित्याग करना पड़े। अतएव सदैव सीमाओं में रहना ही उचित होगा। आप अपने गुरु के प्रति सदैव ही सेवा–भाव और आदर रखिए। आपको सदैव शिव की आराधना करनी चाहिए। मणि माणिक्य से भी आपका आकर्षण होना चाहिए क्योंकि उनके धारण करने से जीवन में

आशा की लहर आती है और जीवन को नवीन स्फूर्ति एवं नयी जीवनी शक्ति प्राप्त होती है। मणि एवं माणिक्य जीवन में आशा का संचार करते हैं तथा व्यक्ति की शोभा बढ़ाते हैं।

63

जो व्यक्ति वास्तव में सत्यव्रत धारण करने वाला है एवं सम्पूर्ण जगत की मंगल–कामना करते हुए विश्व का हित –चिन्तन करता है, वही सज्जन कहलाता है। आपको सदैव ही अपने क्रोध पर अधिकार कर उसको सीमाओं में रखना चाहिए। इस प्रकार आपका हृदय पवित्र होगा। आपको सदैव ही आनन्दप्रद बातों के लिए प्रयत्नशील रहना चाहिए। इससे आपका चित्त प्रसन्नता का अनुभव करता रहेगा। किसी वस्तु को प्राप्त करने की तीव्र अभिलाषा या गहरा आकर्षण राजा में कभी नहीं होना चाहिए। विशिष्ट राजमुकुट को अपने मस्तक पर धारण कीजिए, जिससे आपके हृदय की छल–कपट आदि की निकृष्ट भावनाएँ सदैव के लिए समाप्त हो सकें।

64

आप समाधिस्थ होकर ध्यान लगाने के लिए सदैव ही तत्पर रहिए तथा समाधि को मुद्रिका की भाँति धारण कीजिए। इससे आपका चित्त सदैव ही निर्मल रहेगा। साधना तथा जप में आपको लीन रहना चाहिए और उन्हीं की ओर चित्त भी लगाना चाहिए, जिससे आपका हृदय शान्त होकर आनंदमग्न हो सके। सज्जन लोग वास्तव में नेत्रों के अंजन की भाँति होते हैं। सज्जनता के अंजन से विश्व में सौंदर्य की गरिमा प्रतिष्ठित होती है। सज्जन सदैव सुगन्धित वस्तुओं की भाँति होते हैं। विचार के लिए वे सन्तोष एवं शान्ति रुपी चटाई पर आसीन रहते हैं। इसी आसन पर योगी भी आसीन होते हैं। इसका वर्ण मणियों की भाँति श्वेत एवं आकर्षक होता है।

65

आपका राजमहल उन सभी गतिविधियों का केन्द्र होना चाहिए, जिनसे सम्पूर्ण संसार का कल्याण संभव हो सके। आपके आसन एवं सिंहासन को, जहां आप विराजमान होते हैं, स्थिरता एवं दृढ़ता का प्रतीक होना चाहिए। उसके स्थायित्व से सभी का विश्वास दृढ़ होता है। वास्तव में जनहित की इच्छा ही राजतंत्र का दृढ़ दण्ड है। जन –जन का मंगल, मानव कल्याण की भावना का आधार है। सभी के प्रति करुणा एवं दया का भाव उस आधार की शिला है। इन्हीं आदर्शों पर राजतंत्र टिका रहता है।

66

राज्य के बड़े–बड़े विशाल भवन शासन के न्याय के प्रतीक हैं। मधुर शब्दों का प्रयोग जीवन की मधुरता

का संकेत है। राजा को दूसरों की आवश्यकता एवं उनके हितलाभ के लिए सदैव ही तत्पर रहना चाहिए। जन-कल्याण ही राज्य-शासन का मुख्य उद्देश्य है, अतएव दूसरों के कार्य को करना तथा परहित साधन आवश्यक है। उसको राज्य की मूल्यवान बिछी हुई दरी अथवा सुन्दर गलीचे की संज्ञा दी जा सकती है। इनसे इच्छित फलों की उपलब्धि हो सकती है। छत्र की भांति ये गुण धारण किये जा सकते हैं। वह राजा जो सम्पूर्ण जगत का हित चिन्तन करते हुए सभी को आश्रय देने एवं उनकी सुरक्षा करने का अभिलाषी हो, इन गुणों को अवश्य धारण करे, यही सर्वमान्य मत है।

67

यही वह अमूल्य वस्त्राभूषण है, जिनको एक राजा के रुप में आपको अपने शरीर पर धारण करना चाहिए। तभी आपका राजा होना सार्थक सिद्ध होगा। यह सभी सद्गुण जीवन के वे महान मूल्य हैं, जो मणि और माणिक की भाँति जीवन को प्रकाशित करते हैं। ये कभी भी भार नहीं बनते हैं। इनको कोई चोर चुरा भी नहीं सकता है। इसकी सुरक्षा कर इसे बढ़ाया जाता है। यह अमूल्य धन सदैव ही आपकी सुरक्षा करेगा।

68

सुवर्ण के आभूषण ही सभी लोगों के अमूल्य आभूषणों के प्रतीक माने जाते रहे हैं। वे ही साज - सज्जा के सबसे महत्वपूर्ण उपकरण हैं। वास्तव में जो लोग अलंकरण को ही जीवन में महत्व देते हैं, स्वर्ण उनके लिए प्रधान वस्तु है और अमूल्य राशि है, परन्तु इसी के कारण उनको जीवन में अनेक कठिनाइयाँ भी उठानी पड़ती हैं। कुछ ऐसे लालची लोग भी होते हैं, जो सेवकों की खरीद करते हैं। इसके लिए वे सागर की लम्बी-लम्बी यात्राएँ करते हैं। वे सेवक गुलामों की भाँति उनके खेतों में काम करते हैं और उनके लिये धान उत्पन्न करते हैं। धन धान्य एवं वस्त्राभूषणों के आकर्षण ने मानव के मन में अनेक इच्छाएँ एवं गहरी अभिलाषाएँ उत्पन्न कर दी हैं, जिससे वह भौतिक सुखों एवं साज-सज्जा की ओर उन्मुख हो उठा है।

69

किसी राजा के लिए सुवर्ण की राशि एकत्रित करना कभी भी सर्वाधिक महत्वपूर्ण नहीं हो सकता है। उसके लिए सुवर्ण राशि समाज एवं जन साधारण के जीवन के साधनों को प्रस्तुत करने का एक साधन मात्र होती है। इससे लोक-कल्याण संभव होता है। वास्तव में एक राजा को अच्छे विचारों वाला तथा महान चरित्रवान व्यक्ति होना चाहिए। उसे सदैव अच्छे चरित्र का पालन करना चाहिए। इस महान गुण से अनेक अच्छाइयाँ उत्पन्न होती हैं। वह राजा जीवन में कभी सन्मार्ग से विचलित नहीं होता। उसके किसी कार्य में कभी भी बाधा नहीं आती।

70

वास्तव में राजा के गुणों का महत्व उसके अपने जीवन काल में ही संभव है। जब किसी भी राजा की मृत्यु हो जाती है, तो उसके सद्गुणों का सदैव ही अनुकरण नहीं किया जाता है। यह सभी विशेषताएं राजा के जीवन के साथ ही संबद्ध होती हैं।। अपनी शक्ति से वह उनका विधिवत् संचालन करने में समर्थ हो सकता है, अतएव इन्हें सामयिक ही कहा जा सकता है। राजा के जीवन–काल तक ही इनकी पूर्ति सम्भव रहती है। राजा की मृत्यु हो जाने पर यदि कुप्रवृत्तियों वाला राजा राज्य–शासन का भार संभाल लेता हैं तो कुछ समय पश्चात् निश्चय ही पूर्व काल के राजा द्वारा प्रतिष्ठित की हुई सभी परम्पराएँ नष्ट हो जाती हैं। जिन मूल्यों को आप अपने चरित्र की गरिमा से धारण किये हुए हैं, वे सभी मूल्य आपका ही अनुसरण करते हैं और आपके साथ ही साथ समाप्त हो जाते हैं।

71

वास्तव में जीवन के अपार कठिनाई भरे मार्गों एवं दुष्कर कार्यों में राजा के चारित्रिक सद्गुण ही उसकी सुरक्षा करते हैं। जीवन सागर को पार कर जाने में वे नौका की भाँति एक साधन बनकर सहायता देते हैं । इसी शक्ति से वह मानव जीवन–सागर का सरलता से सन्तरण कर सकता है। मानव के सद्गुण एवं चरित्र की शक्ति वह जलती हुई मशाल है, जो शाश्वत रहती है। जब तक इस विश्व का अस्तित्व है, उसका महत्व सदैव ही बना रहेगा। इस प्रकार राजा के महान चारित्रिक गुण ही उसे उसके जीवन की महान सफलताओं एवं पूर्णता की ओर ले जाते हैं।

72

यदि उपर्युक्त बातों का सदैव ही स्मरण रखते हुए उनको जीवन के व्यवहारों में परिवर्तित किया जाए, तो उसका परिणाम बहुत ही सुन्दर होगा। इससे किसी भी मनुष्य का कभी भी अपमान संभव नहीं है। जितनी भी डरावनी एवं भयावह शक्तियाँ हैं वे इनके प्रयोग से समाप्त हो जाती हैं। सबको भयभीत करने वाले लोगों के मन में भी तब भय उत्पन्न हो जाता है, जब वे यह देखते हैं कि जिस व्यक्ति को वे भयभीत करना चाहते हैं वह एक महान चरित्र वाला है। वे ऐसा समझ लेने पर स्वयं उसके समक्ष शक्तिहीन हो जाते हैं। उन्हें तब स्वयं ही डर लगने लगता है। अभी कुछ समय पूर्व कठोर एवं दुर्व्यवहार की ओर प्रवृत्त होने वाला व्यक्ति उसके चरित्र से प्रभावित होकर स्वयं भी बदल जाता है। उसके आचरण में भी एकाएक परिवर्तन दिखायी देने लगता है। उसके हृदय में भी चरित्रवान के प्रति प्रेम की भावना उत्पन्न हो जाती है। चरित्रवान व्यक्ति का प्रभाव अवश्य पड़ता है। उसका चरित्र ही उसका अलंकरण है।

73

मोह और लोभ की प्रवृत्ति सबसे अधिक आकर्षक होती है। चाहे आप पर विष का कोई प्रभाव न पड़े पर इनका प्रभाव पड़ता है। उपकरण जो आपकी इच्छाओं तथा कामवासना को शान्त करने के लिए प्रस्तुत किये जाते हैं, आप पर भले ही कोई विशेष प्रभाव न डाल सकें परन्तु मोह एवं लोभ की प्रवृत्ति प्रभावी हो जाया करती है। अतएव इस लोभ को आप श्वान की भांति भगा दीजिए। अपनी पत्नी के प्रति भी आपको पवित्र भावना तथा अच्छे चरित्र का परिचय देना चाहिए। अपने प्रेम का केन्द्रीकरण अपनी पत्नी में ही करना चाहिये। उसके प्रति अपना प्रेम तथा आकर्षण केन्द्रित करना चाहिए। प्रेम एवं आकर्षण से उसके साथ एक गहरा सूत्र जोड़ना चाहिए। अपनी भार्या का पोषण आपका कर्तव्य है।

74

आपके जीवन का लक्ष्य आपको भली भाँति स्पष्ट होना चाहिए। यह लक्ष्य आपकी कल्पना तथा विचारों में स्पष्ट रुप से दृष्टिगोचर हो तथा सदैव ही प्रकाश-किरणों की भाँति आपके सामने निरन्तर जगमगाता रहे। इस प्रकार वह एक ऐसा निरन्तर प्रकाश देने वाला दीपक हो जो शान्त एवं मौन होकर भी प्रकाश-किरण बिखेरता रहे। उस पर तीव्र वायु के झकोरों का भी कभी प्रभाव न पड़े। अंधकार के समूह को दबाना ही उस दीपक का प्रधान लक्ष्य हो। चाहे बुराइयों के ढेर ही क्यों न एकत्रित हो जायें, उस दीपक को जलता रहना चाहिए तथा बुराइयों के ढेर को समाप्त कर देना चाहिए।

75

व्यक्ति को अंधकार का स्वरुप ही सर्वप्रथम दिखाई देता है। उसको ध्यानपूर्वक देखना चाहिए। आपकी उन्मत्तता की भी बहुत से लोग प्रशंसा कर सकते है, परन्तु आप सदैव ही इस बात का स्मरण रखिए कि आपका शौर्य एवं वीरता ही आपकी सबसे बड़ी शक्ति है। उन्मत्तता का कारण तो केवल वैभव एवं धन-सम्पत्ति ही हो सकता है। वह उन्मत्तता भी लोभ के द्वारा ही उत्पन्न होती है। उसकी सराहना निन्दनीय है।

76

जब आप युद्धक्षेत्र में युद्ध के लिए प्रस्तुत हों तो आपका पराक्रम एवं भयानक स्वरुप ही आपको शोभा देगा। प्रवीर को क्रूर भी होना पड़ता है। आप सदैव ही जीवन में चतुरता एवं कुशलता का परिचय दीजिए। ऐसा अनुभव होना चाहिए मानो आप विष के गर्त में गिर गये हों। इस स्थिति में निरन्तर उससे बाहर निकलने का प्रयास कीजिए। युवावस्था में सौंदर्य एवं आनंद उल्लास की कामना रहती है। वही एक प्रकार का मद है। आपकी सुन्दरता एवं शक्ति भी आपको उन्मत्त-सा ही करती है।

77

यही अंधकार है। वह व्यक्ति को पथभ्रष्ट कर देता है; अतएव अन्धकार एवं अज्ञान का विनाश करने के लिए सतत् प्रयत्नशील रहना चाहिए। तृष्णा भी अनेक आकर्षणों के साथ जीवन में लग जाती हैं। उससे बचना कठिन हो जाता है, अतएव उसके पूर्ण अस्तित्व का ही विनाश करना चाहिए। सदैव उससे दूर रहना चाहिए। केवल साधना एवं आराधना ही वे प्रकाशपुंज हैं, जो इस संसार को निर्मल कर ज्योतिर्मय कर सकते हैं।

78

आपके शरीर में स्थित शत्रुओं का जब पूर्ण संहार हो जायेगा, तभी आप विजयी होंगे। आपकी कुप्रवृत्तियाँ भी तभी परास्त हो जायेंगी। उसके पश्चात् निश्चय ही आप अपने बाहरी शत्रुओं पर पूर्ण सफलता प्राप्त कर सकेंगे, इसमें कोई सन्देह नहीं है। इस प्रकार जीवन के सभी क्षेत्रों में आपको अभूतपूर्व विजय प्राप्त हो सकेगी! जो व्यक्ति इस प्रकार अपनी सामर्थ्य का परिचय देता है वही वास्तव में शक्तिशाली होता है। वही युद्धक्षेत्र में एक प्रवीर योद्धा भी माना जाता है। वे सभी योद्धा प्रशंसनीय हैं, जो कुवृत्तियों को अपने से दूर कर देते हैं तथा बर्बरता और नीचता को समाप्त कर देते हैं। वे ही जीवन में पूरी सफलता पाते हैं।

79

ऐसा आप करेंगे तो सभी शत्रु आपके समक्ष अपना मस्तक झुकाकर आपका आधिपत्य स्वीकार करेंगे। सभी आपसे भयभीत रहेंगे। इस प्रकार आपको आंतरिक एवं बाह्य दोनों ही क्षेत्रों में पूर्ण शान्ति प्राप्त होगी। सम्पूर्ण विश्व आपकी वन्दना करते हुए आपके समक्ष नत मस्तक होकर प्रार्थना करेगा। आपके प्रति स्वामिभक्ति का परिचय देगा। आपको कभी भी किसी से किसी वस्तु की आवश्यकता नहीं होगी। आपका प्रत्येक स्थान पर आदर होगा। मुझे दृढ़ विश्वास है कि स्वयं भगवान शिव आपके प्रति अपना सम्मान प्रकट करेंगे। ईश्वर भी अपने भक्तों द्वारा वन्दना करने पर स्वयं उन्हें आदर देने उनके पास आते हैं। वे भक्तों को अपने से अधिक महत्व देते हैं।

80

देवी पृथ्वी का व्रत बहुत ही महत्वपूर्ण एवं कठिन है। आपका प्रेम सम्पूर्ण विश्व के प्रति समान रुप से ही होना चाहिए। चाहे इस जगत में कोई बुरा हो अथवा भला, आपको सभी व्यक्तियों को अच्छा ही समझकर व्यवहार करना चाहिए। आपके लिए सभी समान हैं। प्रेम ही आपका स्वभाव एवं चरित्र होना चाहिए। चाहे कोई विशाल पर्वतमाला ही क्यों न हो या उसके सदृश कोई महान कार्य ही क्यों न हो, उन सबको झेलना और निभाना चाहिए।

81

आपको ऐसे प्रयत्न करने चाहिए जिनके अनुकरण से सज्जन व्यक्ति उन सब कार्यों के प्रति उत्तरदायित्व का अनुभव करें जो इस संसार में हो रहे हैं। जब सद्गुणों वाले व्यक्ति उत्तरदायी हो जायेंगे तो संसार की सभी गतिविधियाँ सुचारु रुप से सम्पन्न हो सकेंगी। इसी स्थिति में पवित्रजन उनका पूर्ण अनुकरण कर उनके पद-चिन्हों पर चल सकेंगे। सदैव धन की ही इच्छा नहीं होनी चाहिए। जीवन की छोटी - छोटी क्षणिक प्रसन्न करने वाली बातों के पीछे भी नहीं जाना चाहिए। यश की कोई अभिलाषा भी व्याप्त नही होनी चाहिए। वास्तव में सज्जन पुरुषों की यही शक्तियाँ होती हैं, इसीलिए सदैव ही वे जीवन के महान मूल्यों की रक्षा करते रहते हैं।

82

आप इस जगत में एक आदर्श राजा की भाँति जब व्यवहार करेंगे, तो निश्चय आपको सभी लोग एक आदर्श के रुप में ग्रहण करेंगे। वे आपका निश्चय ही अनुकरण करेंगे। आप निरन्तर ऐसी चेष्टा करते रहिए, जिससे मानवधर्म शास्त्र में बताये गये मनु के नियमों का इस जगत में विधिवत् पालन किया जा सके। मनु के ये सिद्धान्त ही मानव जीवन की गतिविधियों का विधिवत संचालन करते हैं तथा उनकी सुरक्षा करते हैं। दुष्टों का दलन करने के लिए इस संसार में यह सभी बातें बहुत ही आवश्यक हैं और इसी के द्वारा जनसाधारण की सहानुभूति भी बड़ी सरलता से प्राप्त की जा सकती है। इनके अनुसरण से राज्य-शासन का भार प्रेमपूर्वक उठाया जा सकता है।

83

उन्मत्त व्यक्ति एक अंधकारमयी गुफा की भांति है। वह केवल कामेच्छा, सुख, कुमार्ग तथा बुरी प्रवृत्तियों की ओर ही जाने का अभिलाषी रहता है। यह बुरी प्रवृत्तियाँ भीषण सर्पो की भांति होती हैं, जिनमें अत्यधिक विष होता है। मनुष्य अपने विवेक एवं इच्छानुसार ही गहरे खड्ड अथवा सरिता का पता लगा सकता है। वास्तव में सभी महान ग्रन्थों में ऐसे उपदेश दिये गये हैं, जो मानव हृदय को ज्ञान के प्रकाश से परिपूर्ण कर सकते हैं।

84

चिंतन किरणों का प्रकाश ही शालीनता अथवा साधना का वह कारण बनता है जो व्यक्ति को जीवन के महान मूल्यों के प्रति सचेत करता है और सम्पूर्णता की प्राप्ति कराता है। उसके पश्चात् मानव को चिन्तन ही उस भाव भूमि पर ले जाता है, जहाँ पर वह पवित्रता का अनुभव करता है। यद्यपि जीवन में ऐसी स्थिति भी आती है जब बुराइयाँ प्रत्यक्ष दृष्टगोचर होती हैं, परन्तु वे कुप्रवृत्तियाँ गुणी व्यक्ति को उसी भाँति प्रभावित नहीं करतीं, जैसे विषैला सर्प उसे काटता नहीं है बल्कि पास से ही चुपचाप निकल जाता है। वह पालतू जन्तु की भाँति कुछ भी बिगाड़ नहीं पाता है। इसी प्रकार सज्जन व्यक्ति कभी भी यश के पीछे नहीं रहते। वे उसको सबसे अधिक महत्व भी नहीं देते हैं। वे तो एक तपस्वी की भाँति साधना करते हैं और जीवन में पूर्णता प्राप्त करते हैं।

वीर वानर योद्धा पूरी शक्ति से राक्षसों को

85

इस संसार में कुप्रवृत्तियाँ एवं बुराइयाँ भी निर्मलता एवं पवित्रता के साथ एक जोड़े की ही भाँति चलती हैं, परन्तु बुराइयाँ एवं अपवित्रता का प्रभाव उन्हीं व्यक्तियों पर होता है, जो स्वयं भी नीच प्रवृत्ति के होते हैं अन्यथा सज्जनों पर बुरी बातों का कभी भी कोई विशेष प्रभाव नहीं पड़ता। जादूगरी का प्रयोग उन्हीं पर सफल होता है जो स्वयं जादू के प्रति आकर्षित होते हैं। बुराई भी जादू की तरह ही प्रभाव डालती हैं। जीवन में दो पक्ष हैं– एक अच्छाई तथा दूसरी बुराई। इनका प्रभाव व्यक्तिगत आधार पर ही पड़ता है। सद्‌गुणों वाले व्यक्ति को पवित्रता प्राप्त होती है और दुष्ट वृत्ति वाले लोग बुराइयों के प्रति आकर्षित होते हैं। सज्जन का कार्य इस जगत को सुख शान्ति से सम्पन्न बनाना है। ऐसा करने से वह सद्‌कार्यकर्ता सम्पूर्णता को प्राप्त होता है। वह आवागमन के बन्धन से पूर्णतः मुक्त हो जाता है।

86

सभी योग्य व्यक्तियों को जीवन में ज्ञान–विज्ञान की खोज करनी चाहिए और उनका सामंजस्य करना चाहिए। यही कर्तव्य होना चाहिए। बिना किसी पक्षपात या निर्णय के उन्हें सभी की सुरक्षा करनी चाहिए। जीवमात्र का कल्याण ही श्रेयस्कर है। सदैव ही अन्य सभी व्यक्तियों का हित–चिंतन करना चाहिए। दूसरे व्यक्तियों की आवश्यकताएँ भी इस संसार में बहुत ही महत्वपूर्ण स्थान रखती हैं, इसीलिए उनकी पूर्ति की भी इस विश्व में आवश्यकता है। इस संसार में सदैव उन शब्दों की प्रतिष्ठा होगी, जो मानव जीवन को पवित्र बनाते हैं। उन बातों को सदैव ही ध्यानपूर्वक सुना जायेगा, जो मानव जीवन में उच्च–चरित्र की गरिमा को प्रतिष्ठित करती हैं और जीवन को पवित्र बनाती हैं।

87

उस अवसर पर श्रीराम ने विभीषण से इस प्रकार अपने सुन्दर एवं उच्च विचार व्यक्त किये। उन्होंने विभीषण को सभी आवश्यक बातों के विषय में पूरी तरह समझाया। उन्हें विभीषण से अपार प्रेम था। विभीषण का हृदय उन शब्दों से और भी अधिक दृढ़ एवं स्थिर हो गया। वे राम के मृदु वचनों से बहुत प्रभावित हुए। उन्होंने उनके शब्दों को पूर्ण रुप से ग्रहण किया। राम ने उचित शिक्षाएँ देते हुए विधिवत् उनका दिशानिर्देश किया।

88

पृथ्वी की स्थिति ग्रीष्म ऋतु में सूर्य के ताप के पश्चात् कुछ दूसरे ही प्रकार की हो जाती है। उष्णता के कारण पृथ्वी फट जाती है। उसमें दरारें पड़ जाती हैं। जैसे ही उस पर वर्षा की बूंदे गिरती हैं, वह पृथ्वी उस जल को सोख लेती है अथवा पी जाती है। उसकी समानता विभीषण के ह्रदय से की जा सकती है। राम के सामयिक मधुर उपदेश उनके ह्रदय में सीधे ही प्रवेश कर गये। उन्होंने राम के प्रति अथाह प्रेम के कारण उनके शब्दों को अपने मन की गहराइयों में पूरी तरह उतार लिया।

89

अन्त में विभीषण ने अपने बड़े भाई रावण का उचित रुप से दाह–संस्कार किया। उसके पश्चात् उन्होंने अपने शरीर को मृतक–संस्कार के बाद पवित्र किया। रावण के स्थान पर उनको राम ने लंका की राजगद्दी पर बैठाया। विभीषण लंका के राजा हो गये। वे एक महान पवित्र आत्मा थे। राज्याभिषेक के गौरवमय क्षणों में भी वे विनम्रता की प्रकाशपूर्ण किरणों से मंडित हो रहे थे। वे राज्य सिंहासन पर सुशोभित हुए। उस समय उनके मुख की कान्ति अत्यन्त आकर्षक थी तथा उनका व्यवहार मृदुल था।

90

विभीषण के राज्याभिषेक के अवसर पर ऋषियों ने अपना हर्ष व्यक्त किया। उन्होंने अपनी पूर्ण सहमति प्रकट की। देवताओं ने भी उन्हीं के विचारों का अनुमोदन किया। वे सभी अत्यन्त प्रसन्न थे क्योंकि धर्मात्मा विभीषण को लंका का राजा बनाया गया था। राजा विभीषण तीनों लोकों के रक्षक एवं उनके छत्र की भाँति थे। सभी लोग इस राज्याभिषेक से बहुत प्रसन्न थे। इसे देखकर विभीषण को भी अपार प्रसन्नता का अनुभव हुआ। उनका ह्रदय आनंदोल्लास से धड़क रहा था। बाद में सम्पूर्ण लंका को उसके वास्तविक स्वरुप में प्रतिष्ठित करने के लिए देवताओं ने अमृतवर्षा की। इस प्रकार आकाश से अमृत की वृष्टि हुई।

91

इस दृश्य को देखकर देवराज इन्द्र को बड़े गौरव का अनुभव हुआ। उन्होंने शीघ्र ही अपने व्रत का पालन किया। उन्होंने भेंट के रुप में वर्षा को प्रस्तुत किया। वर्षा की अधिकता से बाढ़–सी आने लगी। जो भी बुरी वृत्तियाँ थीं अथवा बुराई के स्वरुप में जो कुछ था, वह सब बाढ़ में बहकर समाप्त हो गया। कोई भी बुराई अब पृथ्वी पर शेष नहीं थी। जो पवित्र था, वही शेष बचा था। पृथ्वी अपार सौंदर्य का स्वरुप धारण करने लगी तथा चारों ओर सुन्दरता की गरिमा–सी दिखायी देने लगी।

92

सभी लंका के राजमहल में प्रवेश कर गये। उसी समय पवित्र एवं अमूल्य अमृत की पुनः वर्षा हुई। शनैः शनैः लंका का सौंदर्य भी पूर्णरुपेण निखरने लगा। वह नगरी फिर पूर्ववत् सुन्दर हो गयी। लंका की सभी वस्तुएँ पहले की भाँति हो गयीं। वे प्रकाश पुंज की भांति जगमगाने लगीं थीं। अब वे ऐसी सुशोभित हो रही थीं जैसी वे रावण द्वारा निर्मित होने पर थीं। उस समय महेन्द्र पर्वत शिखर की शोभा अपनी चरम सीमा पर थी। वर्षा ऋतु के आगमन ने सभी प्रकार से इस पर्वतमाला के सौंदर्य को निखार दिया था। लगता था जैसे अब वह पूर्व की भाँति हरे-हरे आंचल लहरा रही हो। जो भी वस्तुएँ अथवा वनस्पतियाँ नष्ट भ्रष्ट हो गयी थीं, वे सभी देवराज इन्द्र की कृपा से वर्षा के जल से सींच दी गयी थीं। उन पर अमृत - सिंचन किया गया था। इन्द्र ने भी अच्छे कार्यों की प्रशंसा की एवं भलाइयों के बदले उन्होंने अमृत-वृष्टि की तथा अपना हर्ष व्यक्त किया।

93

उस अमृत वृष्टि से केवल लंका का क्षेत्र ही सुन्दर नहीं हो गया वरन् जो वानर युद्ध क्षेद्ध में धराशायी हुए थे, उनको भी इस अमृत वृष्टि ने नव जीवन प्रदान किया। इससे राम की सेना में भी कोई कमी नहीं हो पायी। जिन वानरों का युद्ध में वध कर दिया गया था,. वे पुनः अमृत-वर्षा के कारण जीवित हो उठे थे। जो वानर धराशायी हो चुके थे, वे शीघ्र ही अमृत की बूंदों का स्पर्श पा कर उठ गये मानो जैसे निद्रा से वे जाग उठे हों। उन सभी ने अमृतपान कर लिया था। उन्हें स्वयं अपार आश्चर्य हो रहा था कि वे किस प्रकार पुनः जीवित हो सके हैं। अभी कुछ समय पहले तक वे मृत्यु की गोद में थे। उनको ऐसा प्रतीत हुआ जैसे वे प्रगाढ़ निद्रा में ही सोकर जागृत हो गये हैं और अब तक स्वप्न की अवस्था में लेटे रहे हैं।

94

जो वीर युद्धक्षेत्र में मारे गये थे, उन सबको वीर-लोक में स्थान दिया गया था। वहाँ पर भी उन्होंने भांति - भांति के उत्तम सुखों और आनंद का रसास्वाद किया। इस प्रकार उन वीरों ने वीर-लोक का भी आनंद उठाया। उनको स्वर्ग में भाँति-भाँति की सुन्दर अप्सराएँ भी प्राप्त हुईं। भोजन के लिए भाँति-भाँति के सुस्वादु मधुर व्यंजन उनको प्राप्त हुए तथा वस्त्र एवं अलंकरण के लिए अत्यन्त मूल्यवान मणि और माणिक उपलब्ध हुए। इस प्रकार उन सभी प्रवीरों को स्वर्ग प्राप्त हुआ। वे उसका सुख भोग रहे थे। वह स्थान अत्यन्त पवित्र एवं आनंदमय था।

95

जब राज्याभिषेक की सम्पूर्ण तैयारियाँ पूरी कर ली गयीं, तब रावण के उत्तराधिकारी के रुप में विभीषण लंका के राजा हुए। वे एक महान पराक्रमी राजा थे। देवताओं के अंश के रुप में विभीषण को देखकर देवों के समूह आश्चर्य में पड़ गये। वे अभा-अभी राजा के रुप में प्रतिष्ठित हुए थे। ऐसा लगा जैसे देवगण निद्रा से

जागृत होकर उनको देखने लगे हों। लगता था मानो आकाश, वायु, अग्नि, जल तथा क्षिति सभी उनके साथ – साथ यह दृश्य देख रहे हों। ये ही पंचतत्व हैं। इस सुखमय स्थिति को देखकर अनुमान होता था कि विभीषण के राजतिलक के लिए ईश्वर की आज्ञा प्राप्त हो गयी है। उसके पश्चात् सुगन्धित वस्तुओं का धूम्र शीतल – सा हो गया। वातावरण बड़ा ही सुन्दर लग रहा था।

96

तीनों लोकों में सुगन्धित वायु सुरभि बिखेरती हुई दशों दिशाओं के वातावरण को सुवासयुक्त कर रही थी। देवी श्री (लक्ष्मी) ने बड़ी सुन्दरता से अपनी बाहों को लम्बा करके फैला लिया था। उन्हें शनैः शनैः हिलाते हुए उन्होंने संकेत दिया कि वे फिर निवास करने के लिए लंकापुरी में आ रही थीं। पृथ्वी पर उनका अवतरण विश्व के कल्याण का सूचक था। देवी–श्री को अपार प्रसन्नता थी कि इस जगत में फिर एक बार सुख एवं शान्ति का युग वापस लौट आया है। जब उन्हें सुवासित सुगन्धि युक्त वातावरण का आभास हुआ, तो देवी श्री स्वयं पृथ्वी पर आने के लिए प्रस्तुत हुई। वे राज्य के सुख एवं समृद्धि की प्रतीक थीं। वे उस वृक्ष की भाँति थीं जो नव पल्लवों में विकसित हो रहा था,अतएव देवी–श्री के आगमन से सभी वनस्पतियाँ तथा उद्यान पुष्पित एवं फलित हो उठे।

97

यह श्लोक स्पष्ट ही एक क्षेपक है।

98

राजा विभीषण के विचार बहुत ही उच्च एवं पवित्र थे। वे वास्तव में सही अर्थों में एक महान राजा थे। वे उच्चतम चरित्र से विभूषित एवं गरिमामय व्यक्तित्व के थे। उनके राजा होते ही लंका के उद्यानों के वृक्ष फलों से लदने लगे। भाँति–भाँति के बहुत से फल वृक्षों पर सुशोभित हो रहे थे। अकस्मात् ही शीघ्रातिशीघ्र सभी फल परिपक्व होने लगे। वास्तव में राजा विभीषण के महान तप का ही यह फल था। डूरीयांन नामक फल की सुगन्धि वातावरण में चारों ओर बिखरने लगी। परम्परा के अनुसार डूरीयान का रस कभी भी मधुर मिष्ठान्नों के समकक्ष नहीं हो सकता वरन् उनसे अधिक मधुर होता है क्योंकि मिष्ठान्नों में मक्खन आदि मिलाकर उन्हें स्वादिष्ट किया जाता है। इस प्रकार के मधुर एवं आकर्षक फलों को देखकर सभी वानरों के मन में फल खाने की इच्छा भी जागृत हो गयी। वे भ्रमित होकर फलों को देख रहे थे। इतनी बड़ी संख्या में फलों को देखकर फल खाने का आकर्षण भी हो रहा था। वे फलों को खाकर आनंदमग्न हो रहे थे और पूर्ण तृप्ति का अनुभव कर रहे थे।

99

बड़े ही सुन्दर–सुन्दर वृक्ष जैसे अशोक तानजुंग आदि, सौंदर्य के प्रतीक बन कर उद्यानों की शोभा बढ़ा रहे थे। उनकी शोभा और सुन्दरता अत्यन्त आकर्षक थी। भ्रमर समूह गुनगुन गुंजार करते हुए सभी सुगन्धित पुष्पों का रस ले ले कर चारों ओर घूम रहे थे। उस सुन्दर वातावरण में भौरे आनंदमग्न होकर मदमत्त हो रहे थे। वे भाँति–भाँति से अपनी प्रसन्नता व्यक्त कर रहे थे। उस समय कुछ कोमल पुष्प मुरझा – मुरझा कर पृथ्वी पर गिर रहे थे। यह बड़ी ही करुणा का विषय था। ऐसा लगता था जैसे किसी प्रेमिका का अपने प्रेमी से विछोह हो गया हो और वह प्रेमिका विरह –व्याकुल होकर गहरी व्यथा का अनुभव कर रही हो। यही कारण है कि पुष्प उसी प्रेमिका की भाँति पृथ्वी पर गिर–गिर कर इधर–उधर बिखर रहे थे। वे अत्यन्त सुन्दर थे तथा अपनी बाहों को बढ़ा–बढ़ा कर सहायता के लिए प्रार्थना करते प्रतीत हो रहे थे।

100

सुगन्धित एवं सुन्दर सरोज पुष्प तालाबों में भरे हुए थे। वास्तव में उनका संकेत प्रेमियों की ओर था। उस सुन्दर वातावरण में प्रेमियों के ह्रदय चंचल होकर विरह–व्यथा का अनुभव कर रहे थे। पुष्पों के पत्र जैसे मुरझाकर पतले हो गये थे और चमक रहे थे। ऐसा लग रहा था कि मणियों से जैसे उनका निर्माण किया गया हो। लगता था जैसे उसके प्रधान तत्व के रुप में स्वर्ण–धूलि को चारों ओर बिखेर–बिखेर कर उड़ा दिया गया हो। इस स्वर्ण–धूलि के उड़ने से चारों ओर पीतवर्ण–सा ही बिखरा हुआ दिखायी देने लगा। स्वर्ण धूलि के बिखर जाने से उसके तत्व ने जैसे सम्पूर्ण वातावरण को पीतवर्णमय कर दिया हो। चारों ओर सुन्दर सुगन्धि के बिखर जाने के कारण भौरों का आकर्मण और अधिक बढ़ गया। उनके लिए तो जैसे मधुर भोजन की सामग्री ही प्रस्तुत हो गयी।

101–123

यह अंश निश्चय ही क्षेपक है।

124

लंका के सभी जीव–जन्तु एवं पालतू पशु भी अपने स्वामियों के प्रति बहुत स्वामिभक्तिपूर्ण व्यवहार कर रहे थे। वे अपने स्वामियों का सदैव ही अनुसरण करते थे। उनका व्यवहार यह बता रहा था जैसे उन्होंने स्वामिभक्ति के निभाने की उनसे प्रतिज्ञा की हो। उन जन्तुओं अथवा जानवरों में जंगली श्वान, बाघ, रीछ तथा अन्य सभी मांसाहारी भीषण जन्तु भी थे। वे अपनी स्वाभाविक भयानकता एवं भीषणता को सर्वथा त्याग कर पालतू पशुओं की भाँति व्यवहार करने लगे थे। ऐसा लग रहा था कि जैसे अन्त में उन्होंने सुन्दर वातावरण के प्रभाव को ग्रहण कर लिया हो तथा राजा का हार्दिक आशीर्वाद और कृपा मानो उन्हें प्राप्त हो गयी हो। यहां तक कि पूर्ण शान्ति की प्रतिष्ठा का प्रयास संभव हो गया। हिंसक पशुओं ने अपनी हिंसा वृत्ति का सदैव के लिए परित्याग

कर दिया, यद्यपि हिंसा उनके स्वभाव का ही एक अंग है। प्रजाजनों का तो उस राज्य में कहना ही क्या था। वे पूर्णरुपेण अनुशासन का पालन कर रहे थे। अपने शान्तिप्रिय राजा के प्रति उनके ह्रदय में अपार प्रेम था। उनमें स्वामिभक्ति का भाव भरा हुआ था।

125

सभी प्रकार के दुष्ट एवं अधम प्रवृत्तियों वाले नीच जो दूसरों को कष्ट देते रहते थे, अब जनसाधारण को किसी प्रकार की भी कोई कठिनाई नहीं पहुंचा रहे थे। उनकी भी वृत्तियाँ इस सुन्दर शान्तिपूर्ण वातावरण में पूर्णरुपेण परिवर्तित हो चुकी थीं। वे प्रसन्नतापूर्वक सज्ज़न पुरुषों के सम्पर्क में आकर उनसे भली भाँति घुल–मिल गये थे। उनको शालीनता एवं सदगुणों का पूर्ण परिचय प्राप्त हो चुका था तथा अब उनका व्यवहार भी बहुत ही मृदु हो गया था। उनका प्रत्येक कार्य अब बहुत व्यवस्थित एवं प्रजाजनों के हित में होता था। वे सभी निरन्तर यह प्रयास कर रहे थे कि शान्तिमय जीवन के प्रति उनकी आस्था हो एवं वे उसके लिए अभ्यास कर सकें। राज्य के अन्तर्गत न तो कोई द्यूत का खिलाड़ी था, न जुआ खेलने का कोई अड्डा था। जो भी खेल खेले जाते थे, उनको उंगलियों पर गिना जा सकता था। विभीषण के राज्य में कुक्कुटों की लड़ाई का खेल अब समाप्त हो चुका था। अब कोई भी दुःखी या कष्टमय परिस्थति में दिखायी नहीं देता था। सम्पूर्ण अन्धकारमय परिस्थितियों का सर्वनाश हो चुका था। प्रजावर्ग में उत्तम ग्रन्थों के अध्ययन की रुचि जागृत हो गयी थी। सभी लोग उत्तम विषयों के अध्ययन में संलग्न दिखायी देते थे। वे विधिवत् उनका अनुशीलन करते थे।

126

यह बात अब जगत प्रसिद्ध हो चुकी थी कि महाराजा विभीषण जैसे शान्तिप्रिय व्यक्ति को राज़ा के रुप में पाकर प्रजाजन स्वयं को परम सौभाग्यशाली मान रहे हैं। वे सदैव ही जनहित के लिए प्रस्तुत रहते हैं। कहीं भी भय का लेशमात्र भी नहीं दिखायी देता। सभी लोग मृदु व्यवहार के अभ्यासी हैं। इसका कारण यह है कि राजा तथा प्रजा दोनों की बुद्धि में कोमलता एवं सरलता का भाव है। इस परिस्थिति में किसी के लिए भय का कोई प्रश्न ही नहीं उठता है। यही कारण है कि राजा विभीषण का नाम एक महान राजा के रुप में प्रजाजनों में प्रतिष्ठित हो गया था। विभीषण के नाम का यश सुगन्धि के रुप में सम्पूर्ण वातावरण को सुवासित कर रहा था। वे लंका नगरी में स्वर्ण वृक्ष अथवा नन्दन – कानन के कल्पवृक्ष की भाँति थे और सभी को मनोवांक्षित फल प्रदान कर रहे थे। उनकी गहरी सघन छाया सभी को शीतलता प्रदान कर रही थी। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि विभीषण की छत्रछाया में प्रजाजन पर जैसे जीवनदान देने वाले अमृत की वर्षा हो रही हो। उनकी प्रजा आनंदमग्न होकर उनकी छत्र–छाया में सुखी जीवन बिता रही थी।

127

इस प्रकार राजा विभीषण के राज्य में प्रजा का जीवन सुख एवं समृद्धि का रसास्वाद करते हुए व्यतीत होने लगा। जब हनुमान जी से कहा गया कि वे सीता जी के पास जायं, तो बड़े ही आदर से हनुमान जी सीता जी को लाने के लिए अशोक वाटिका में उपस्थित हुए। वहाँ पर उन्होंने देवी सीता से भेंट की।

128

बड़े ही भक्ति–भाव से नतमस्तक होकर उन्होंने सीता जी की वन्दना की। उनसे प्रार्थना करते हुए उन्होंने उनकी मंगल–कामना भी की। उनका जय–जय कार करते हुए उन्होंने सीता जी का पूरा सम्मान किया तथा यह आशा व्यक्त की– "ईश्वर सदैव ही उनका कल्याण करे। हे देवी ! अब राजा राम राक्षसों को परास्त कर विजय–श्री प्राप्त कर चुके हैं। अब आप अपने विचारों को निर्मल करें तथा सम्पूर्ण परिस्थिति से अवगत हो जायें। अब सुख एवं आनंद की बेला आ गयी है।

129

अब मैं सोच रहा हूं कि आपके अनुग्रह एवं आपकी भेंट के रुप में मुझे आपसे कुछ माँगना चाहिए। विजय श्री का सम्पूर्ण वैभव आपके समक्ष है। जितने दुष्ट राक्षस थे, उन सबका वध कर दिया गया है। वास्तव में नीच एवं दुर्बुद्धि राक्षसियों का भी वध करना उचित होगा। अब मेरा उद्देश्य यही है।

130

उन्होंने पहले आपको भाँति–भाँति के कष्ट दिये। जब विरह दशा में आप अत्यन्त व्याकुल थीं, उस समय उन्होंने तरह–तरह की भीषण परिस्थितियाँ उत्पन्न कर आपको अनेक दुःख दिये। वे आपको बार–बार यही धमकी देती थीं कि वे आपका शीघ्र ही वध कर देंगी। इस प्रकार आपको डरा कर दुःखी कर रहीं थीं। उन सब को शीघ्र ही मेरे अपार क्रोध का भाजन बनना पड़ेगा। इससे मुझे पूर्ण सन्तोष प्राप्त हो सकेगा।

131

सीता देवी का हृदय बहुत कोमल एवं अत्यन्त पवित्र था। उनको कभी क्रोध ही नहीं आता था। यद्यपि दुष्टा राक्षसियों ने देवी सीता का घोर अपमान किया था , फिर भी सीता जी के हृदय में राक्षसियों के प्रति कटुता का कोई भाव नहीं था। उनके प्रति उनके मन में सहानुभूति एवं प्रेम था। जिन दुष्टाओं ने उनको आतंकित किया था, उनके प्रति भी सीतां जी के मन में प्रेमभाव ही था। यही उनकी गरिमा थी।

132

हे हनुमान ! आप अपने क्रोध को शान्त कीजिए। ुरु आशा है कि आप धैर्य से काम लेंगे। ईश्वर आराधना में अपना मन लगाते हुए आप अब प्रेम के मार्ग पर चलेंगे। यद्यपि उन राक्षसियों के शब्द बड़े ही कटु एवं नीचतापूर्ण थे; फिर भी मेरा आपसे यह आग्रह है कि अब आप उन पर कृपा एवं करुणा कीजिए। वे सभी आपकी दया की पात्र हैं।

133

उनका वध करके अब क्या लाभ होगा। अब आप यहाँ से सीधे श्री राम के पास ही जाने की कृपा कीजिए। मेरी ओर से उनसे निवेदन कीजिए कि मैं उनकी सेवा में उपस्थित होने की प्रार्थना करती हूं तथा शीघ्र उनसे मिलने की अभिलाषी हूं। वे अब एक वीर विजयी योद्धा के रुप में मेरे सामने होंगे, अतएव मैं उनसे शीघ्रातिशीघ्र भेंट करने की कामना करती हूं।

134

अब आपके लिए मेरी यही आज्ञा है। हे हनुमान ! आप तनिक भी संकोच न करें। इस प्रकार देवी सीता ने हनुमान से अनुरोध किया। उसी समय हनुमान जी चल पड़े। राम के पास जाकर सीता जी के शब्दों को उन्होंने कह सुनाया। हे राजा राम ! देवी सीता आपसे भेंट करने के लिए यहां आना चाहती हैं। आप उनसे भेंट करने की कृपा कीजिए। सीता जी आपके समक्ष उपस्थित होकर आपका अभिनंदन करना चाहती हैं।

136

राजा राम ने हनुमान को उत्तर दिया, हे हनुमान ! आप शीघ्र ही लौट जाइए। देवी सीता के पास जाकर उनसे यह निवेदन कीजिए कि मैं उनसे यह अपेक्षा रखता हूं कि वे सर्वप्रथम अपने को पवित्र सिद्ध करें। पहले उनका व्यक्तित्व पवित्रता का पूरा प्रमाण प्रस्तुत करें ताकि लोगों के मन में उनके प्रति जो अपवित्रता की धारणा बन चुकी है, उससे वे पूर्ण रुप से मुक्त हो सकें।

137

देवी सीता वास्तव में पवित्रता एवं निर्मलता की प्रतीक थीं। उनका चरित्र आदर्श था। उनका व्यक्तित्व भी बहुत ही सुन्दर था। उन्होंने राजा राम के सभी शब्दों पर पूरा ध्यान देकर उनका अनुसरण किया। उन्होंने शरीर को पूरी तरह स्वच्छ किया। किसी प्रकार की मलिनता का कोई संकेत न मिल सके, यह उनका प्रयास था। स्वच्छ होकर उनका शरीर सौंदर्य की किरणें बिखेरने लगा। उन्होंने अपने शरीर को मलमल कर धोया। इससे उनके शरीर का रंग और भी अधिक निखर गया। वे सौंदर्य की साक्षात प्रतिमा–सी प्रतीत होने लगीं।

138

देवी सीता ने अपनी सुन्दर केश–राशि को सुगन्धित वस्तुओं से सन्तुलित किया और संवारा। भाँति–भाँति के पुष्पों को केशों पर लगा कर उन्होंने उन्हें सजाया। सुगन्धित इत्र आदि से उन्होंने श्रृंगार किया। अपने शरीर को स्वच्छ करने के पश्चात उन्होंने सुन्दर वस्त्राभूषणों को धारण किया। अब वे उठकर खड़ी हो गयीं। वे राम के पास आने के लिए प्रस्तुत हो गयीं। एक बहुत बड़ी सभा में राम का अभिनंदन करने के लिए देवी सीता राम के समक्ष उपस्थित हो गयीं।

139

राम के पास आकर वे शीघ्र उनसे मिलीं। वे शान्त मौन ही रहीं। उनके मुख से एक शब्द भी नहीं निकला। उनका हृदय कुछ विचित्र सी परिस्थिति का अनुभव कर रहा था। वे कष्ट की अनुभूति से जैसे अभी तक मुक्त नहीं हो सकी थीं। वहाँ पर सम्पूर्ण वातावरण स्तब्ध–सा था। देवी सीता को दुःख का गहरा अनुभव हो रहा था। उनका रंग पीला पड़ गया। उनके ओठों से जैसे शब्द ही नहीं निकल रहे थे। उन्होंने अपना मस्तक नीचे झुका लिया तथा पृथ्वी पर निरन्तर नखों से कुछ लिखना–सा प्रारम्भ कर दिया।

140

वास्तव में सीता जी राम का अभिनंदन करने आयी थीं। वे मौन होकर नीचे पृथ्वी पर बैठ गयीं। बड़े दुःख का विषय था कि वे दुर्बलता की प्रतीक–सी बनी हुई थीं। वे मानो भ्रमित हो उठी हों। वे अब तक मौन ही थीं। ऐसा लग रहा था मानों उनके अंग–प्रत्यंग को किसी ने मसल डाला हो। वे थकी हुई–सी लग रहीं थीं। वहां की परिस्थिति को देखकर उन्हें बहुत कष्ट हो रहा था। उन्हें लगा जैसे उनका घोर अपमान हो रहा था। वे राम के पास तक स्वयं आयीं थीं, परन्तु उनका कोई स्वागत नहीं किया गया था। राम ने उनको सम्मान भी नहीं दिया था।

141

उनके आगमन का प्रयोजन प्रसन्नता की प्राप्ति करना था, परन्तु उनकी सभी आशाएँ जैसे निराशा में परिवर्तित हो गयीं थीं। उनकी प्रसन्नता दुःख में परिणत हो गयी थी। उनकी प्रसन्नता ने निराशा तथा लज्जा का रुप धारण कर लिया था। उन्होंने एक मानवी की भांति उस दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति को स्वीकार कर लिया। वे मौन और शान्त बनी रहीं।

142

हा ! मुझे अपार कष्ट है। इस दुःख की कोई सीमा नहीं है। ये विचार देवी सीता के मन में आये। क्या वास्तव में इन परिस्थितिंयों में कोई बिना कष्ट अनुभव किये रह सकता है? क्या विरहियों को अपार दुःख नहीं सहने पड़ते हैं ? अन्त में लज्जा का गहरा अनुभव भी देवी सीता को करना पड़ा।

143

उँनकी ऑखों से अश्रु की धारा बह निकली। उन्हें इतनी घबराहट हुई जैसे किसी ने उनकी गरदन मरोड़ दी हो। दशों दिशाओं में अब ऐसा कोई स्थान नहीं था, जहाँ जाने से उनका कष्ट कम हो पाता या वे अपना मुख छिपा सकतीं। इस जगत में ऐसा कोई भी दिखायी नहीं दे रहा था, जिसकी वे पूजा करतीं तथा वह उनकी सहायता करता। इस प्रकार ऐसा लगा जैसे इस जगत में उनकी सुरक्षा एवं सहानुभूति के लिए अब कोई शेष नहीं रह गया है।

144

राजा विभीषण, सुग्रीव, हनुमान, नील, जाम्बवान तथा अंगद भी इस भीषण दृश्य को देखकर आश्चर्यचकित रह गये। वे सभी मौन एवं स्तब्ध खड़े थे। वे सभी राम की ओर देख रहे थे।

145

वानर सेना भी इस दुःखमय परिस्थिति को देखकर अश्रुधारा प्रवाहित करने लगी। उन सबने सीता को रुदन करते देखा। सभी वानर यह सोचने लगे कि क्या वास्तव में राम का इस अवसर पर सीता के प्रति क्रोध उचित है ? क्या वास्तव में सीता को राक्षसों से मुक्त करने के लिए राम ने हम सबको प्रेरित नहीं किया था ? यदि सीता का उद्धार उनको नहीं करना था,तो इतने भीषण संघर्ष की क्या आवश्यकता थी ? वह कौन सा कारण है जिसके परिणामस्वरुम सीता को इतना लज्जित होना पड़ रहा है ?

146

बहुत समय तक राम बिना एक शब्द बोले मौन खड़े रहे। ऐसा प्रतीत होता था जैसे वे स्वयं भी बहुत दुःखी एवं दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थिति में पड़ गये हैं। उनके मुख की कान्ति भी मलिन हो गयी थी। वे गहरी निराशा का अनुभव कर रहे थे। सीता को इस भाँति रुदन करते देखकर उनको सीता पर दया आ गयी। उसके बाद उन्होंने अपने सन्देह के विषय में सीता से कहा और पूरी परिस्थिति स्पष्ट कर दी।

147

हे देवी सीते ! अब बहुत दुःखी होने की आवश्यकता नहीं हैं, अतएव शान्त हो जाइए। अपने विचारों को दृढ़ करके सभी परिस्थितियों को भली प्रकार समझने का प्रयत्न कीजिए। अब कष्ट का अनुभव करके दुःखी होने से कोई लाभ नहीं है। समझ लीजिए कि मुझ से अब मिलन संभव नहीं है।

148

हे प्रिये, जो बात मेरे मन में घोर चिन्ता का विषय बनी हुई हैं, वह यह है कि तुम बहुत अधिक समय तक शत्रु के पास रही हो। आज जब तुम फिर लौट कर मेरे पास आयी हो, तो मेरी स्थिति बहुत परिवर्तित-सी हो गयी है, अतएव अब जब सभी लोग तुम्हें मेरे पास आते देखेंगे, तो निश्चय ही उनको इस नयी परिस्थिति पर विश्वास नहीं होगा।

149

यद्यपि तुम्हारी पवित्रता में कभी भी किसी प्रकार का कोई सन्देह नहीं किया जा सकता, परन्तु मैं भी इस जगत में रहकर किसी प्रकार का कोई आक्षेप नहीं सहना चाहता हूं। आक्षेप भी मेरे सम्मान के विरुद्ध हो, यह उचित नहीं है। यदि मैं इन परिस्थितियों में तुम्हें स्वीकार कर लेता हूं तो इससे मेरे उच्च वंश पर भी एक प्रकार का कलंक ही लगेगा, अतएव मैं तुम्हें स्वीकार करने में असमर्थ हूं।

150

इस समय जो परिस्थिति है, उसका यही कारण है। अतएव इस संबंध में निराश होने की कोई आवश्यकता नहीं है। हे देवी ! वास्तव में तुम्हारा विरही जीवन महान तपस्या का प्रतीक है अतएव अपने विचारों को स्थिर एवं सुव्यवस्थित करो। मुझे आशा है कि निश्चय ही पूरी परिस्थिति स्पष्ट हो जायेगी। यदि तुमने अपने भोजन आदि पर विशेष ध्यान न दिया अथवा भोजन आदि की उचित व्यवस्था न की,तो इसका परिणाम यह होगा कि तुम्हारा शरीर कृशकाय हो जायेगा। अतएव भोजन और शयन पर तुम्हें पूरा ध्यान देना चाहिए और कभी भी उनका परित्याग नहीं करना चाहिए।

151

तुम अपनी इच्छानुसार जो भी मार्ग उचित समझो, उसे चुन लो। तुम पूर्ण स्वतंत्र हो। जो बातें तुम्हारे हित में हों और तुम्हें रुचिकर लगती हों, उन्हीं को ग्रहण कर लो। यदि तुम मिथिलापुरी लौटना चाहो तो वह भी ठीक ही रहेगा। यदि लंका में विभीषण के आश्रय में उनके साथ तुम रहना चाहो, तो भी तुम्हारी इच्छा पूरी की जायेगी। यह निर्णय तुम्हारे ऊपर ही निर्भर करता है।

152

यदि तुम उचित समझो और लक्ष्मण अथवा भरत तुम्हारी इच्छा का अनुसरण करते हुए अपने पास तुम को आश्रय दें, तो वह भी उचित होगा। तुम सुग्रीव के आश्रय में भी रह सकती हो। इस विषय में तुमको कभी भी किसी प्रकार की लज्जा का अनुभव नहीं होना चाहिए। यह सभी अपनी इच्छा के अनुसार तुम स्वतंत्रतापूर्वक कर सकती हो। तुम जहाँ चाहो, अपना आश्रय लेने के लिए निर्णय ले सकती हो।

153

मैंने उच्च आदर्शों से संबंधित सभी बातें स्पष्ट रुप में कह दी हैं। मैंने ऐसी कोई भी बात नहीं कही, जिसको अन्य लोगों ने मुझे कहने के लिए प्रेरित किया हो। इससे निश्चय ही मेरे यश पर कलंक लगेगा और मेरी सम्पूर्ण गरिमा समाप्त हो जायेगी। यदि मैं तुम्हें अपने से अलग कर देता हूं तो तुम मुझसे विलग तो हो जाओगी पर मेरा सम्मान बना रहेगा। मेरा यश एवं सम्मान जन–साधारण के द्वारा ही बना रह सकता है। यदि प्रजाजन मुझसे प्रेम करते रहेंगे, तभी मेरी प्रतिष्ठा इस विश्व में रह सकेगी। इस परिस्थिति में जनसाधारण मेरा तुमसे अलग रहना ही श्रेयस्कर मानेंगे। उनकी यही अभिलाषा है, ऐसा मेरा विचार है।

154

राजा राम ने इस प्रकार देवी सीता के समक्ष अपनी पूरी स्थिति स्पष्ट कर दी। उसके पश्चात उनकी प्रेमिका देवी सीता ने उनको इस प्रकार उत्तर दिया "हे राजा राम ! आप रघुवंशी हैं। आप राजनीति कुशल हैं। आप स्वयं प्रेम–सूत्र को छित्र–भित्र करके तोड़ रहे हैं। मुझे आशा है कि आप मुझ पर निश्चय ही दया करेंगे और इस प्रकार का व्यवहार मुझसे कभी नहीं करेंगे।

155

मैं यह भी भली भाँति जानती हूं कि देवताओं से आपको लेशमात्र भी भय नहीं है। वे सभी साक्षी हैं और उन्होंने सम्पूर्ण गतिविधियों को स्वयं ही देखा है। क्या यह एक वास्तविकता नहीं है ! पाँचों तत्व भी सदैव ही साक्षी बने साथ–साथ रहते हैं। कौन व्यक्ति इस जगत में उचित कार्य करता है और कौन अनुचित कार्य करता है,इसे वे जानते है। वे सभी देवता इन बातों को भी देखते रहते हैं कि किसके विचारों में उचित एवं अनुचित का भाव आया और किस परिस्थिति में आया है।

156

स्पष्ट ही है कि मैं इससे पहले आपके शत्रु रावण के पास थी। जैसा कि सभी जानते हैं कि पहले वह स्वयं ही मेरा हरण करके मुझे लंका में पकड़ कर लाया था। उसके लिए कभी यह संभव नहीं था कि वह मेरे पतिव्रत धर्म से मुझे च्युत कर सकता। देवताओं ने स्वयं इन सभी परिस्थितियों का अवलोकन किया है। सभी देवता इस सत्य के साक्षी हैं कि मैंने सदैव ही एक पतिव्रता एवं पतिपरायण पत्नी के रुप में अपने धर्म का पालन किया है।

157

देवी पृथ्वी मेरी माता की भाँति हैं। वे इस सम्पूर्ण विश्व को अपनी गोद में धारण किये हुए हैं। उन्होंने भी मेरी परिस्थितियों को आदि से अन्त तक देखा है। यदि मुझसे कभी भी कोई भूल हुई हो तो निश्चय ही उनको, जिन्हें सभी बातों का भली भाँति ज्ञान है, साक्षी के रुप में आमंत्रित किया जा सकता है। मेरा हृदय पवित्र है। मेरे विचार भी निर्मल एवं अकलुष हैं। इस प्रकार मैं हृदय एवं विचारों से पूर्ण स्वच्छ हूं।

158

इसके पश्चात् देवी सीता ने देवता जल को भी सम्बोधित करते हुए कहा, हे जल देवता ! आपने स्वयं सब कुछ देखा है। मैंने इस जगत में यदि कोई भी बुरा कार्य किया हो, तो आप भी उसके साक्षी होंगे। आप उस जल को अपने आप में आत्मसात किये हुए हैं, जिसको जीवन कहते हैं तथा जिसे पीकर प्राणी सचमुच ही जीवन पाते हैं। आप इस जगत में अमृत की भाँति हैं। चाहे देवता हो अथवा मानव, सभी आपको पीकर ही जीवित रहते हैं।

159

पावक देवता ! आप इस पूर्ण विश्व को ज्योतिर्मय करते हैं। आपकी प्रकाश-किरणों से ही विश्व की सभी गतिविधियाँ परिचालित होती हैं। निश्चय ही पहले से आप सब मुझे पूरी तरह सचेत कर सकते थे। यदि कुमार्ग की ओर अग्रसर होने की मेरी कभी भी कोई अभिलाषा रही हो तो आप उसे जानते होंगे। सम्पूर्ण प्रकाश-किरणों से आप मंडित हैं। आप ऐसी मशाल एवं प्रकाशपुंज हैं, जो दूर से ही सभी चीजों को सरलतापूर्वक दिखला देने की सामर्थ्य रखता है। आप भी मेरे कार्यों के साक्षी हैं।

160

हे वायु देवता ! आप तो प्राणी मात्र के प्राणों के स्वरुप में ही इस सम्पूर्ण विश्व में निवास करते हैं। आपकी गति मन्थर है और आपका मार्ग प्रशस्त है। आपने सदैव ही मेरे प्रत्येक व्यवहार एवं गतिविधि को भली भाँति

देखा है। आप निश्चय ही मेरे बुरे कार्यों को भी देख सके होंगे। यदि कभी भी मैंने इस जगत में कोई बुरा आचरण किया है तो वह आपसे छिपा नहीं रह सकता है।

161

हे आकाश ! आपने भी सब कुछ देखा है। आप भले–बुरे तथा उचित–अनुचित के अन्तर को भली भाँति जानते हैं। आप सभी को सचेत कर सकते हैं तथा संकेत दे सकते हैं। आपने सब को ही पूरी तरह आच्छादित कर रखा है। सभी के ऊपर आप स्थित हैं। आपका अस्तित्व नीचे, बाहर, शरीर के भीतर आदि सभी स्थानों पर ज्ञात अथवा अज्ञात रुप से छाया हुआ है। मुझे आपसे पूरी आशा है कि इस भीषण परिस्थिति में निश्चय ही आप मुझ पर दया कर मेरी सहायता करने की कृपा करेंगे।

162

हे भाई लक्ष्मण ! आप स्वयं ही मेरी दीनहीन दशा देख रहे हैं। कृपया आप भी मेरे ऊपर दया कीजिए। इस जगत में अब मेरा कोई सहायक नहीं है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि मेरा जीवन व्यर्थ हो गया है। मेरे अस्तित्व का इस संसार में कोई मूल्य नहीं है। कोई भी मुझ पर विश्वास नहीं करता है। ऐसा लग रहा है कि इस संसार के सभी लोग मुझे अधम समझ रहे हैं। सभी के हृदय में मेरे प्रति घृणा का भाव है और किसी के भी मन में मेरे लिए कोई स्थान शेष नहीं है।

163

अब इस भीषण परिस्थिति में मृत्यु का वरण करना ही मेरे लिए श्रेयस्कर है। मैं सोचती हूं कि इतनी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति की अपेक्षा मृत्यु ही अधिक सुखदायी है। जब मेरा अस्तित्व इस संसार से समाप्त हो जायेगा, तभी मुझे शान्ति मिल सकेगी। मेरे लिए यही उचित भी होगा। यदि मेरी मृत्यु हो जाती है तो मुझे दो फल एक साथ ही प्राप्त हो सकते हैं। प्रथम तो मेरे पति श्री राम को इससे प्रसन्नता होगी और द्वितीय यह कि मुझे इस जीवन में अब और अधिक अपमानित एवं लज्जित नहीं होना पड़ेगा।

164

इसीलिए हे भाई लक्ष्मण ! आप मुझ पर दया कीजिए तथा अग्नि प्रज्ज्वलित करने की कृपा कीजिए। मेरे लिए लकड़ी तथा अन्य सामग्री एकत्रित कीजिए। उसी अग्नि में मैं अग्निदाह करने को प्रस्तुत हूं। मैंने निश्चय किया है कि मैं उसी अग्नि में कूद पड़ूंगी और अग्नि में ही जल कर भस्म हो जाऊंगी, जिससे कि पतिव्रता होने का पूरा फल मुझे प्राप्त हो सके।

165

जब त्रिजटा ने सीता की यह दशा देखी,तो वे शीघ्र ही आगे बढ़कर उनके समक्ष उपस्थित हो गयीं। सीता की इस दयनीय दशा पर उन्हें अत्यन्त दुःख हो रहा था। वे सदैव ही सीता जी के प्रति अपार श्रद्धा रखती थीं। उनकी सेवा में वे सदा रत रहती थीं। अब भी देवी सीता के प्रति उनके मन में अपार सम्मान था। उनके विचारों में किसी प्रकार का कोई परिवर्तन नहीं आया था।

166

सीता ने कहा हे बहिन त्रिजटा ! मुझे इस समय अपार दुःख हो रहा है। आप स्वयं देख रही हैं कि मैं कितनी अधिक अभागिन हूं। आज मैं कितनी अपवित्र हो गयी हूं। मुझे अपनी इस दशा पर अपार कष्ट है। इन सब परिस्थितियों का क्या अर्थ है ! आपको सब कुछ भली भाँति विदित है। हे बहिन ! मेरा चरित्र एवं आचरण सदैव ही पवित्र रहा है। इस वास्तविकता से आप पूर्णतः परिचित हैं।

167

हे बहिन ! आप शीघ्र ही स्पष्ट शब्दों में अपने पिता महाराज विभीषण से पूरी परिस्थिति बताइए। मेरी दुर्भाग्यपूर्ण स्थिति का पूरा परिचय उन्हें आप दीजिए। वे एक कुशल एवं विचारवान व्यक्ति हैं। यह उचित ही होगा कि उनके समक्ष सभी बातें प्रस्तुत की जायें, जिससे वे स्वयं वास्तविकता से परिचित हो सकें। उनको "कुचार मानव" (कुचारा मानावा) ग्रन्थ का भी पूरा ज्ञान है।

168

इस प्रकार देवी सीता ने त्रिजटा से निवेदन किया। उनके शब्दों को सुनकर त्रिजटा ने उत्तर दिया। त्रिजटा का ह्रदय भी वास्तव में बहुत दुःखी था। अत्यन्त दुःख एवं कष्ट के कारण वे भीषण रुप से रुदन करने लगीं। वे अत्यन्त् दृढ़ विचारों वाली थीं,अतएव भरी सभा में उनको इस सत्य का उद्घाटन करने में किसी प्रकार का कोई भय नहीं था कि देवी सीता का चरित्र आदर्श है और वे निर्दोष है तथा पवित्रता की प्रतीक हैं। देवी सीता के निरन्तर साहचर्य के कारण त्रिजटा को उनके बारे में पूरा ज्ञान प्राप्त था।

169

त्रिजटा ने यह भी कहा कि राजा राम का देवी सीता के प्रति यह घोर अन्याय है। इस समय वे अन्ध एवं बधिर व्यक्ति की भाँति व्यवहार कर रहे हैं। उनको क्या कुछ भी दिखायी नहीं देता ? देव ! क्या आप धर्म–शास्त्रों

एवं उनकी शिक्षाओं से पूरी तरह परिचित नहीं हैं ? मुझे भली भाँति ज्ञात है कि आप धर्म की शिक्षाओं में पारंगत हैं। मैं विश्वास पूर्वक कह सकती हूं कि देवी सीता के सदृश पतिव्रता स्त्री इस जगत् में अन्य दूसरी नहीं हो सकती, इसीलिए उनके समकक्ष किसी को भी नहीं रक्खा जा सकता। वे सदैव ही पूर्ण समर्पित भावना से अपने पति श्री राम के प्रति स्वामिभक्तिपूर्ण रही हैं।

170

उन्होंने भाँति-भाँति के दुःख झेलते हुए भी कभी सुखद एवं अच्छे भोजन करने का विचार नहीं किया। कभी भी पूरी नींद वे सो नहीं सकीं। वे पृथ्वी पर लेटते हुए सदैव ही राम के विरह में रुदन करती रहीं। उनके दुःखों एवं कष्टों की कभी कोई सीमा नहीं थी। उनकी दशा अत्यन्त दयनीय थी। जो भी उन्हें देखता था, उसका हृदय करुणा से भर आता था। विरह व्यथा ने उनको इतना कष्ट पहुंचाया था कि जैसे किसी ने विष देकर पीड़ित किया हो।

171

हे देवी ! केवल आपके हृदय में राजा श्री राम की ही मूर्ति सदैव विराजमान रहती थी। जब भी कभी आप ईश्वर की आराधना में लीन होती थीं, राम को ही अपने हृदय-मन्दिर में आप धारण किये रहती थीं। आपके हृदय में अन्य किसी को कोई स्थान प्राप्त नहीं था। हे राजा राम ! उनकी सदैव ही यह उत्कट अभिलाषा रहती थी कि राजा राम युद्ध में विजय श्री प्राप्त करें, जिससे कि उनका पुनः मिलन संभव हो सके। जब भी वे किसी ईश्वर से प्रार्थना करती थीं, तो उनकी एक मात्र यही आशा रहती थी कि राम विजयी हों।

172

इन सभी इच्छाओं एवं आराधनाओं में वे सदैव ही तल्लीन रहीं और विधिवत् उन्होंने सभी उचित कार्य किये। आज मुझे उनके प्रति सहानुभूति हो रही है। साथ ही गहरा दुःख भी हो रहा है कि जब आप युद्ध विजय करके यहाँ पर आये तो आप देवी सीता के विषय में अत्यन्त भ्रान्त धारणा बना कर आये और आपने उनके चरित्र में दोष देखना प्रारम्भ कर दिया। क्या वास्तव में मनुष्यों में भावना की गहराई का सर्वथा अभाव है, जैसा कि इस परिस्थिति में स्पष्ट दृष्टिगोचार हो रहा है ?

173

हे राजा राम ! आपके विषय में तो सदैव ही मेरी यह धारणा रही है कि आप ही इस सम्पूर्ण जगत के स्वामी एवं आश्रयदाता हैं। वास्तव में आपको इस संसार में अनुचित एवं उचित का अन्तर पूरी तरह स्पष्ट है। आपका

ज्ञान असीम है। वास्तव में यह सभी बातें आपको जाननी भी चाहिए। आपकी अपेक्षा इस जगत में ऐसा दूसरा कौन है, जिससे विपत्ति के समय सहायता की प्रार्थना की जाय ? जो इस संसार में भाँति-भाँति के कष्ट उठा रहे हैं, दुर्भाग्यपूर्ण परिस्थितियों में जी रहे हैं और जिनकी सहायता अवश्व ही की जानी चाहिए, उन लोगों के सहायक तो एकमात्र आप ही हैं न। आप इस जगत में अमृत-कणों की भाँति हैं। इस संसार में प्रत्येक कष्ट एवं दुःख को हरने के लिए आप औषधि स्वरुप हैं।

174

यदि आपका ही ह्रदय आज क्रूरतापूर्ण व्यवहार करता है तो इसे दुर्भाग्य ही कहा जायेगा। आपमें दया का लेशमात्र भी भाव न हो तथा आपका ह्रदय कलुषित हो गया हो, यह कुछ अजीब-सा लग रहा है। इस समय तो लगता है कि किसी के प्रति भी आपके मन में कोई दया नहीं है। परिस्थितिवश कठोर-भावना के कलुष ने निश्चय ही आपके ह्रदय को घेर लिया है। आप अपने प्रजाजनों एवं प्रेमियों के प्रति भी उदार नहीं हैं। उनके मार्ग में आप अनेक बाधाएँ उत्पन्न कर रहे हैं। इससे तो यही अनुमान किया जा सकता है कि आपका ह्रदय निर्मल नहीं है।

175

इस प्रकार हे राजा राम ! मुझे तो ऐसा प्रतीत होता है कि आपके ह्रदय में कलुष को स्थान मिल गया है। अब आपके व्यक्तित्व में देवताओं के चरित्र की भाँति उदारता का भाव नहीं है। आपकी जितनी भी तपस्या एवं गरिमा थी,वह सभी जैसे इस जगत में समाप्त हो गयी है। आप भी अब उचित मार्ग का अनुसरण नहीं कर रहे हैं। आप ऐसे महान व्यक्ति ने भी औचित्य एवं भली बातों का जैसे सदैव के लिए परित्याग कर दिया है।

176

निश्चय ही मानव की पवित्रता और सुन्दर चरित्र की निरन्तरता में स्थायित्व नहीं होता। अच्छा-बुरा, सुख-दुःख आदि निश्चय ही जीवन में आते-जाते रहते हैं। मनुष्य का ह्रदय भी कभी सदैव ही स्थिर नहीं रहता। वास्तव में कर्म सदैव ही नियमों की अपेक्षा अधिक महत्वपूर्ण होता है।

177

मेरा ह्रदय इस परिस्थिति से दुःखी है। हे देवी सीता ! मैं सदैव से ही आपको कष्टमय जीवन व्यतीत क़रते देखती रही हूं, इसीलिए आज आपसे दुर्व्यवहार करने के कारण राम के प्रति मेरे मन में कोई सम्मान शेष नहीं रह गया है। इस स्थिति में मेरे लिए भी यही उचित होगा कि मैं अपने प्राण का त्याग कर दूं। यदि देवी

सीता इस संसार में नहीं रहेंगी, तो मेरे लिए भी जीवित रहने का कोई विशेष अर्थ नहीं होगा।

178

विजय–श्री प्राप्त करने के पश्चात् आज कितनी प्रसन्नता का शुभ अवसर आया था। राम सदैव ही गरिमापूर्ण व्यक्तित्व के राजा रहे हैं। उनको कभी न तो किसी प्रकार की कठिनाई थी और न वे कभी सन्मार्ग से विचलित ही हुए। राम एक महान राजा हैं। मेरा अनुमान था कि वे अत्यन्त उत्तम प्रकृति के व्यक्ति हैं। निश्चय ही उनको भी अनेक कष्टों का सामना करना पड़ा। उनको सीता के वियोग का अपार कष्ट भी झेलना पड़ा है, इसीलिए उनका मन अब अस्थिर हो गया है।

179

यह नहीं कहा जा सकता कि नीच वृत्तियों के कारण साधारण मनुष्य संसार में क्या कुछ नहीं कर सकते हैं ? अब यह बात पूरी तरह सभी को स्पष्ट हो चुकी है कि संसार में दुःखों और कठिनाइयों का आवास है। इसी संसार में पवित्र विचारों वाले उत्तम बुद्धि के विद्वान भी हैं। वे कभी भी जीवन एवं जगत की गरिमाओं से अपने को पूरी तरह सम्बद्ध नहीं करते तथा सभी वस्तुओं का परित्याग कर तपश्चर्या में लग जाते हैं और तप में जीवन का चरम लक्ष्य प्राप्त करते हैं।

180

ये विद्वान कभी भी विषय, भोग आदि को सर्वाधिक महत्व नहीं देते हैं। वे अपने हृदय में कामवासना तथा कुवृत्तियों को कभी भी स्थान नहीं देते हैं। उनकी बुद्धि स्थिर एवं निर्मल होती है। उनके लिए सबसे महत्वपूर्ण कार्य अपने हृदय को साधना एवं तपस्या में तल्लीन करना होता है। इस प्रकार समाधि एवं सन्तोष ही उनके जीवन का लक्ष्य है। वे सदैव ही निर्जन स्थानों पर तथा सूने वातावरण में मौन साधना करते हैं। उनका हृदय तप एवं साधना की दृढ़ता से स्थिर रहता है।

181

इसका स्पष्ट कारण यही है कि वे जीवन की सम्पूर्ण गतिविधियों से भली भाँति परिचित होते हैं। जीवन को सुव्यवस्थित करने की चेतना धारण कर ये विद्वान अपने व्यवहारों को सन्तुलित करते हैं। वे प्रतिक्षण तपश्चर्या के विषय में सोचते रहते हैं। वे कभी भी मोह अथवा प्रेम के आकर्षण में नहीं बंधते। उनके हृदय में सभी के प्रति करुणा एवं दया का भाव होता है। वे सदैव ही जीवन की पवित्रता के प्रति पूर्ण रुप से गंभीर रहते हैं। उनका हृदय निर्मल होता है। वे अपने पथ पर दृढ़ रहते हैं। कभी भी अपने व्रत से हटकर वे इधर–उधर नहीं

देखते हैं अर्थात अपने लक्ष्य की ओर बढ़ते जाते हैं।

182

वास्तव में वह लोग कितने चरित्रवान एवं महान होते हैं,जो दृढ़तापूर्वक जीवन व्यतीत करने के लिए प्रस्तुत रहते हैं। वे इन्द्रियों के प्रभाव एवं आकर्षणों से पूर्ण रुपेण मुक्त होते हैं। उनके हृदय में किसी प्रकार का लोभ एवं मोह नहीं होता। वे जीवन की पूर्णता को पहचानते हैं तथा उसके अस्थायी स्वरुप को भी भली भाँति समझते हैं, अतएव अन्त में उनका निर्णय यही होता है कि हृदय को सम्पूर्ण कुप्रवृत्तियों से मुक्त रख कर तपश्चर्या में लीन होना ही उचित है।

183

वास्तव में देवी सीता से मेरा निकटतम एवं गहन संबंध है,अतएव उन्हीं के विषय में मैं सभी बातें इस सभा के समक्ष स्पष्ट करना चाहती हूं। यही मेरा उद्देश्य भी है। मैंने अपने जीवन में कभी यह कल्पना भी नहीं की थी कि अब फिर देवी सीता पर इस प्रकार के अपार कष्ट आयेंगे। वे सदैव ही पतिव्रत धर्म का दृढ़ता से पालन करती रही हैं। एक पवित्र भिक्षु की समानता भी मैं देवी सीता के व्रत से कर सकती हूं। देवी सीता ने भी तपश्चर्या में ही अपना सम्पूर्ण जीवन व्यतीत किया है।

184

इसीलिए मैं स्वयं भिक्षुणी की भाँति व्रत लेकर अपना जीवन व्यतीत करना चाहती हूं। हे देवताओं ! मुझे शक्ति दो। वास्तव में मानव जीवन में मनुष्यों की करुणाजनक स्थिति देखकर मेरे हृदय पर इसका बहुत गहरा प्रभाव पड़ा है। दुर्घटनाएँ, कष्ट, दुःख एवं अनेक प्रकार की कठिनाइयाँ देखकर मुझे मानव जीवन के प्रति निराशा सी हो गयी है। मुझे तो सभी पर दया भी आती है। मानव जीवन क्षणभंगुर है। वास्तव में यहाँ की प्रसन्नता अपूर्ण एवं क्षणिक ही है।

185

जब मैं अपने विवाह के विषय में सोचती हूं,तो मुझे लगता है कि उसका आनंद भी चिर-स्थायी नहीं है। वह केवल अनेक कष्टों एवं दुःखों का ही आगार है। यही कारण है कि मैंने अब विवाह न करने का निश्चय कर लिया है। मुझे पूरी आशा है कि देवतागण निश्चय ही मेरी इस दृढ़ता एवं साधना से प्रसन्न हो जायेंगे। वास्तव में इस परिस्थिति में मैं विवाह के प्रति पूर्ण रुप से उदासीन हूं। जब से मैंने देवी सीता की यह दयनीय दशा देखी है, विवाह के प्रति मेरे मन में घोर उदासीनता आ गयी है।

186

त्रिजटा ने उस विशाल सभा के समक्ष अपना विचार स्पष्ट रुप से प्रकट किया। उन्होंने देवी सीता के चरित्र एवं स्वामिभक्ति की भूरि–भूरि प्रशंसा करते हुए सिद्व किया कि वे महान पतिव्रता हैं। यह सब कहने के पश्चात वे विलाप करती हुई रुदन करने लगी। उनके नेत्रों से अश्रुओं की धाराएँ प्रवाहित हो रही थीं। जिसने भी त्रिजटा की यह दशा देखी, उसको अपार दुःख हुआ।

187

उसी समय सीताजी ने भी तीव्र स्वर में कहा"हे त्रिजटा ! तुम शान्त होकर मौन हो जाओ। तुम्हारा यह सब कथन यहाँ किसी को भी प्रभावित नहीं कर सकेगा, अतएव यह सब व्यर्थ है। इसे कहकर तुम्हें दुःख ही प्राप्त होगा। अब हे भाई लक्ष्मण ! आप मुझ पर कृपा करें तथा अग्नि जलाने की व्यवस्था करें। हे भाई ! मुझ पर दया करके इतनी कृपा अवश्य कीजिए।"

188

इस प्रकार कहते हुए सीता ने अपनी मृत्यु की इच्छा प्रकट की। उन्हें अब घोर अपमान सहना पड़ रहा था,जो उनके लिए असह्य था। उनकी पवित्रता एवं पतिव्रत–धर्म की तुलना इस विश्व में किसी से नहीं की जा सकती थी। उस अवसर पर राम ने उनको आज्ञा भी प्रदान कर दी। उन्होंने सीता के इस प्रस्ताव के प्रति अपनी स्वीकृति भी दे दी। उन्होंने लक्ष्मण से कहा कि चिता तैयार करने के लिए शीघ्र ही लकड़ी आदि आवश्यक सामग्री की व्यवस्था करें।

189

लक्ष्मण जी ने दुःखी होकर राम के आदेश को सुना। राम ने उन्हें चिता बनाने का आदेश दिया था। वास्तव में वे राम के प्रति पूर्ण श्रद्वावान थे, इसीलिए वे शीघ्र ही वहाँ से उठकर चले गये। उन्होंने लकड़ियाँ एकत्रित कीं। लकड़ियों का एक बड़ा –सा ढेर लगा दिया। उनके नेत्रों से भी अश्रुधारा बह निकली। उस स्थान पर ऐसे बहुत से व्यक्ति उपस्थित थे, जो सीता के साथ ही अपने प्राण देने के लिए प्रस्तुत थे। स्वयं लक्ष्मण जी एक विचित्र भ्रम की परिस्थिति में पड़े हुए थे। वे स्वयं यह नहीं जानते थे कि उन्हें क्या करना चाहिए। सीता को अग्नि–परीक्षा देनी चाहिए। यही विचार राम ने प्रकट किया।

190

उसके पश्चात् लक्ष्मण ने अग्नि प्रज्वलित कर दी। उसकी ज्वालाएं शनैः शनैः चारों ओर बिखरने लगीं। उन्होंने प्रचण्ड रुप धारण कर लिया। उसी समय शान्त चित्त होकर देवी सीताजी ने अग्नि में.प्रवेश करने की आज्ञा श्री राम से ली। देवी सीता को किसी प्रकार की तृष्णा नहीं थी। उनको अब किसी का भी भय नहीं था। उन्होंने आगे बढ़कर प्रार्थना की। देवी सीता ने अग्नि की प्रदिक्षणा की। इस प्रकार चारों ओर परिक्रमा करके अग्नि देवंता की उन्होंने अर्चना की।

191

हे अग्नि देव ! आप इस सम्पूर्ण जगत के साक्षी हैं। यदि मैं अनृतवादिनी हूं, मैंने अच्छे आचरण का परिचय नहीं दिया है, तो आप निश्चय ही मुझे जला कर भस्म कर दीजिए। इस परिस्थिति में मेरा विनाश हो जाय, यही मुझे स्वीकार है। यदि मैं अपने व्रत में दृढ़ होकर सफल हो जाऊं तो भी मैं आप पर ही विश्वास करके पूर्ण रुपेण समर्पित हूं। अग्नि को इस प्रकार सम्बोधित करती हुई देवी सीता अग्नि में प्रविष्ट हो गयीं।

192

जब महान पतिव्रता देवी सीता अग्नि में प्रवेश कर गयीं तो उन पर अग्नि की लपटों का कोई भी प्रभाव नहीं दिखायी दिया। जिन लोगों ने वहाँ उपस्थित होकर यह दृश्य देखा, उनकी यही धारणा थी कि सीता के भस्म होने की यह परिस्थिति सीता के प्रति राम के सन्देह के कारण ही उत्पन्न हुई है। उन्होंने इस विषय पर अनुचित निर्णय लिया है, इसीलिए इस दृश्य को देखकर सभी निराश हो उठे। राम के प्रति भी उन्हें निराशा ही हुई। उस समय सभी के हृदय भय से काँप रहे थे। अश्रुजल उनकी आँखों पर छा गया था और आँखों से अश्रुधारा बह–बह कर नीचे गिर रही थी।

193

सभी ने एक ही साथ अग्नि की ज्वालाओं की ओर देखा। अग्नि की लपटें तीव्रतर होकर ऊपर की ओर उठ रही थीं, परन्तु अग्नि चाहे जितनी भी भयानक रुप से क्यों न जल रही हो, वह अकस्मात ही शान्त होकर बुझ गयी। वास्तव में देवी सीता एक महान पतिव्रता राजपुत्री थीं। इसका ज्वलंत प्रमाण अग्नि परीक्षा में उनकी महान सफलता थी। अंत में वह अग्नि "कनक पंकज" के स्वरुप में अवस्थित हो गयी अर्थात स्वर्ण कमल के स्वरुप में वह खिल उठी। अग्नि की लपटें कमल–दल के समान थीं तथा सुगन्धियुक्त धूम्र कमल–पराग की भांति वातावरण को सुवासित कर रहा था।

194

उसी समय सुन्दर व्यक्तित्व वाले मानव के रुप में स्वयं अग्नि देवता वहाँ पर प्रकट हो गये। अग्नि से वे साकार रुप में उद्‌भूत हुए थे। वे उसी स्वर्ण–कमल के मध्य में खड़े हो गये। उस अवसर पर वे अपनी उंगलियों को हिला–हिलाकर स्पष्ट संकेत दे रहे थे कि देवी सीता सर्वथा पवित्र हैं। देवी सीता भी उन्हीं के पास स्थित थीं। यह दृश्य सभी को आश्चर्यचकित कर रहा था। वास्तव में यह एक अलौकिक दृश्य था। सीता का महान व्रत बड़े ही गौरव की वस्तु थी और उस गौरव गरिमा की प्रतिष्ठा अग्नि–परीक्षा ने स्थापित कर दी थी। यह घड़ी उनके महान पतिव्रता होने का भी प्रमाण बनकर उपस्थित हुई थी। उस पतिव्रत धर्म ने उनकी प्रतिष्ठा बढ़ाकर उन्हें सुन्दरतम फ़ल प्रदान किया था।

195

उसके पश्चात् अग्नि देवता ने राजा राम से निवेदन किया,हे राजपुत्र श्री राम ! आप भ्रम में पड़कर सीता जी के विषय में भ्रान्त धारणाएँ न बनाएँ। आप अपनी इस पतिव्रता पत्नी की पवित्रता के संबंध में इतने अधिक भ्रम में क्यों पड़े हुए हैं ? मेरा तो यह अनुमान है कि छोटे बालक की भाँति आपका हृदय सन्देह एवं भ्रम से युक्त हो गया है। मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि आप अकारण ही इस पतिव्रता स्त्री पर सन्देह कर रहे हैं।

196

इसके पहले भी आप लोग पति–पत्नी के रुप में एक वर्ष तक साथ–साथ रह चुके हैं। आप परस्पर सभी कठिनाइयों को भी भली–भाँति समझते हैं। आप लोगों के मध्य पारस्परिक गहरा परिचय भी है। परस्पर सद् एवं असद् व्यवहार का पता तो केवल एक मास में ही लगाया जा सकता है। जहाँ तक आप दोनों का संबंध है, आप तो दो–तीन अथवा चार वर्ष तक इकट्ठे रहकर साथ ही साथ अपना समय व्यतीत कर चुके हैं। क्या सीता के महान चरित्र एवं धर्म परायणता के विषय में अब तक आपको पूरी तरह ज्ञात नहीं हो सका था ?

197

सीता की पवित्रता के विषय में जानने के लिए अथवा उनकी गरिमाओं को समझने के लिए इतना समय यथेष्ट था। आप अब स्वयं देखिए कि इस समय भगवान शंकर यहाँ पर उपस्थित हैं। वे आकाश में खड़े हुए दिखायी दे रहे हैं। वे आपके शरीर एवं अस्तित्व से आपको परिचित कराना चाहते हैं। स्वयं भगवान शंकर देवलोक से यहाँ पधारे हैं, जिससे कि सब कुछ आपको स्मरण हो सके; अतएव अब आपको किसी भी भ्रम में पड़ने की कोई आवश्यकता नहीं है। स्पष्ट ही देवी सीता सदैव ही पवित्रता की प्रतीत हैं।

198

आपके पिता महाराज दशरथ भी इस समय आकाश में उपस्थित हैं। उन्हें भी आप विधिवत् देख सकते हैं। वे भी शंकर जी के साथ स्वर्ग से उतर का यहाँ आ गये हैं। महाराज दशरथ वास्तव में सभी राजाओं में श्रेष्ठ महाराजा रहे हैं। वे विमान पर आसीन हैं तथा महादेव शिव के पास ही अवस्थित हैं। इन सबके अध्यक्ष के रुप में देवराज इन्द्र सुशोभित हो रहे हैं। वे मित्रतावश इन सबके साथ आकाश से आपकी ओर निहार रहे हैं।

199

अग्नि देवता ने सभी के समक्ष अपने भावों को व्यक्त किया। उसके पश्चात् स्वयं भगवान शिव आकाश से पृथ्वी पर उतर कर उपस्थित हो गये। उनके साथ देवताओं का समुदाय था, जिनकी गणना भी कठिन थी। वे सभी देवतागण आकाश पर सुशोभित थे। पूरा आकाश उनकी भीड़ से आच्छादित-सा हो गया था। सम्पूर्ण वातावरण में देवताओं की भीड़ लगी हुई थी। भगवान शंकर स्वर्ण-सिंहासन पर सुशोभित थे। वे शनैः शनैः उस विराट सभा के बहुत निकट आ पहुंचे थे। वे लगभग उस सभा के ऊपर ही अवस्थित थे। सभी अत्यन्त प्रसन्न चित्त दिखायी देते थे। आश्चर्यचकित होकर उनको रोमांच हो आया। वे सभी मौन और शान्त थे।

200

सभी देवताओं ने श्रीराम का विधिवत् स्वागत करते हुए अभिनंदन किया। उन्होंने कहा, हे राम ! आप देवता हैं। हे नारायण ! हे राम ! आपका शरीर कभी भी आपके दैवी अस्तित्व से अलग नहीं हो सकता। आप इस सत्य को भली भाँति जान लीजिए। आप विष्णु देवता हैं। क्या यह एक वास्तविकता नहीं है ? आप सदैव ही देवी सीता से अपार प्रेम करते रहे हैं। वे भी देवी श्री का ही साकार रुप हैं। वे कभी भी आपसे विलग नहीं रह सकतीं। दोनों के शरीर में एक ही आत्मा का निवास है। वे अत्यन्त पवित्र एवं महान पतिव्रता हैं। इस प्रकार वे सदैव आपके शरीर का एक अंश है तथा आप दोनों सदैव से ही पति-पत्नी हैं।

201

आप देवी सीता की पवित्रता के विषय में लेशमात्र भी सन्देह करके भ्रम में न पड़ें। सीता ने स्वतः अपने को पवित्र प्रमाणित कर दिया है। वे पवित्रता की प्रतीक हैं। आपको मानव रुप में पृथ्वी पर अवतार धारण करना था और इस प्रकार पति-पत्नी के रुप में आपने तथा सीता जी ने अवतार धारण किया है। अपने चरित्र एवं कार्यो की महानता तथा पवित्रता के कारण आपकी प्रतिष्ठा एवं प्रसिद्धि सम्पूर्ण विश्व में हो चुकी है। आप तीनों लोकों के स्वामी हैं और उसकी सुरक्षा का भार आप पर ही है। यह एक महत्वपूर्ण कार्य है,जिस पर आप पूरी तरह ध्यान देने की कृपा कीजिए। यही कारण है कि युद्ध में आपको अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई। आपका जीवन सदैव ही पवित्रता का प्रतीक है। केवल इस बात का स्पष्ट संकेत देने के लिए कि आप देवता विष्णु हैं, ईश्वर ने आपको पृथ्वी पर अवतीर्ण किया। ऐसा उन्होंने इसीलिए किया कि

आप अवतार लेकर सम्पूर्ण विश्व का कल्याण कर सकें।

202

इस प्रकार के शब्द भगवान शंकर ने श्री राम से स्पष्ट रुप में कहे। इसके पश्चात् शीघ्र ही राम ने उनकी वन्दना की। बाद में शंकर जी अंतर्ध्यान हो गये। राम तथा उनके साथ बैठे हुए सभी लोग अत्यन्त प्रसन्न हुए। सबको पूर्ण विश्वास हो गया कि देवी सीता पवित्र, निर्मल एवं पतिव्रता हैं। आगे आने वाली पीढ़ियों को उनके महान आदर्शों से प्रेरणा लेकर उनका सदैव ही अनुकरण करना चाहिए, जिससे हम सबके पौत्र एवं प्रपौत्र अपने जीवन को पवित्र बना सकें और उनकी भी प्रसिद्धि सभी ओर फैल सके। उस प्रसिद्धि का स्वरुप इतना व्यापक एवं विशाल होना चाहिए कि उससे सभी को देवी सीता की गौरव–गरिमा का पूर्ण ज्ञान हो सके। उनकी स्थान–स्थान पर भूरि–भूरि प्रशंसा हो। यही नहीं, सम्पूर्ण जगत के यशस्वी कवि और लेखक उनके महान चरित्र की आदर्श गाथा अपने काव्यों में प्रस्तुत करें। इन सबसे विश्व भर में प्रतिष्ठा प्राप्त कर उनका चरित्र अमर हो जाय।

203

इसके पश्चात् जब सभी को भली भाँति यह स्पष्ट हो गया कि सीता जी परम पवित्र, पतिपरायण एवं महान गरिमाओं की प्रतीक हैं, तो फिर सीता के पवित्र स्वरुप को राम ने भी स्वीकार कर लिया। राम अब पूरी तरह सन्तुष्ट एवं आश्वस्त थे। इस प्रकार बहुत समय तक राम ने सीता को पास बैठा कर उनसे अपना गहरा प्रेम प्रकट किया। सीता ने भी प्रेम का सुन्दर प्रमाण प्रस्तुत किया। उन दोनों प्रेमियों का प्रेम स्वच्छता एवं पवित्रता का प्रतीक था। उसमें लेशमात्र भी बनावट नहीं थी।

204

जब सभी लोगों ने वहाँ से प्रस्थान किया, उस समय सन्ध्या काल हो गया था। सभी सभा में उपस्थित लोग राम और सीता के साथ लौटने लगे। वे सभी उस विराट सभा की सारी गतिविधियों के पूर्ण रुप से साक्षी थे। श्रीराम राजा विभीषण के साथ नगरी में वापस लौट आये। सभी ने प्रसन्नतापूर्वक एक साथ ही भोजन किया।

205

वानर राज सुग्रीव भी उनके साथ थे। अन्य योद्धागण – हनुमान, नल, नील, अंगद तथा जाम्बवान भी सबके साथ थे। सभी ने एकत्रित होकर सम्पूर्ण रुप से एक महान आनंदोत्सव का आयोजन किया। अंत में राजा राम ने सभी को सम्बोधित करते हुए कहा––

206

हे हनुमान ! आप कृपया शीघ्र ही मेरे पास आने का कष्ट करें। जैसा मैं निर्देश दूं, उसी के अनुसार मार्ग का अनुसरण करते हुए एक स्थान से दूसरे स्थान पर क्रमपूर्वक आप प्रस्थान करें। आपके लिए सर्वप्रथम मेरा यह निर्देश है कि आप अयोध्या नगरी जाइए। वहाँ पर सभी को यह सूचना दीजिए कि अब हमारे शत्रुओं का सर्वनाश हो चुका है। वे युद्ध में पराजित हो चुके हैं।

207

उसी मार्ग से फिर वापस लौटिये अथवा उसी मार्ग पर आप शीघ्रता से आकाश–मार्ग से उड़ जाइए। आकाश के काले–काले बादलों को भेद कर उन पर आक्रमण–सा करते हुए अपना पथ् प्रशस्त कीजिए। आकाश में वर्षा के घने काले बादल भी छाये हुए मार्ग में आपको मिलेंगे। जब आप सागर को पार कर लेंगे तो आपको सुन्दर पर्वतमाला के रुप में महेन्द्र पर्वत के भी दर्शन प्राप्त होंगे।

208

इसके पश्चात् जब आप उत्तर दिशा की ओर जाएँ गे तब आपको प्रसिद्ध पर्वतमाला–मलय गिरि के दर्शन होंगे। उसका सौंदर्य मनोहर एवं चित्ताकर्षक है। उसके उत्तरी भाग की ओर विन्ध्याचल पर्वत स्थित है, जो बहुत ही निकट है। इसकी किष्किंधा पर्वत माला का अपार सौंदर्य भी मन मोह लेता है। यह सभी मनोहर पर्वत मालाएँ आपके मार्ग में आयेंगी।

209

इन पर्वत मालाओं के अतिरिक्त मलयवन पर्वत माला भी आपको मार्ग में ही मिलेगी। आप मार्ग में घने एवं भीषण दण्डक वन को भी देखेंगे। मुझे उस स्थान का बार–बार स्मरण हो आता है। सर्वप्रथम लक्ष्मण के साथ मैंने दण्डकारण्य में ही प्रवेश किया था, इसीलिए उसका स्मरण स्वाभाविक ही है।

210

दण्डक वन एक भीषण सघन वन है। उसकी सघनता को देखकर आश्चर्य होता है। यद्यपि दण्डक वन घोर सघन वन था, फिर भी लक्ष्मण ने इसमें निश्शंक होकर प्रवेश किया और अपनी अपार दृढ़ता का पूर्ण परिचय दिया। उन्होंने स्पष्ट ही अपने पराक्रम और शक्ति का प्रमाण प्रस्तुत किया था। घने वृक्षों की शाखाओं के पत्तों में उनकी गरदन बार–बार उलझ कर रह जाती थी। लगता था, जैसे पत्तियों ने उनकी गरदन को बाँध लिया हो ।

उनके पैर भी अपने अस्तित्व को जैसे खो बैठे थे। कंटकाकीर्ण मार्ग के कारण उनमे निरन्तर रक्त प्रवाह होता रहता था।

211

इस प्रकार हम दोनों ने उस भीषण वन के अपार कष्टों एवं कठिनाइयों को झेला था और उसे पार किया था। भूखे, शक्तिहीन तथा शरीर से अत्यन्त दुर्बल होकर हम लोगों की वहाँ विचित्र दशा हो गयी थी। हम दोनों अपनी सम्पूर्ण शक्तियाँ ही खो बैठे थे। मैं तो यह सोच रहा था कि अब इस स्थान से जीवित वापस लौट पाना सम्भव ही नहीं हो पायेगा। जब मैं उस भीषण दण्डक वन में था, मुझे बार–बार ऐसा ही अनुभव हो रहा था।

212

जब आप उत्तर दिशा की ओर बढ़ेंगे तो आपको ऋषियों के उत्तम आश्रम दृष्टिगोचर होंगे। यह तपस्या स्थली ऋषि सुतीक्ष्ण की तपोभूमि भी है। इसके अतिरिक्त आपको अनेक सुन्दर एवं चित्ताकर्षक स्थानों के दर्शन भी होंगे। इन पवित्र स्थानों में ऋषि सरभंग की भी तपस्यास्थली है, जो महानता एवं पवित्रता की प्रतीक है।

213

यह आपका कर्त्तव्य होगा कि महर्षि आर्य के आश्रम में जाकर आप उनकी वन्दना करें। वे मनुष्य के सभी दोषों का हरण करने वाले हैं। आप उनके उस आश्रम के निकट अवश्य जाइएगा। उत्तरी क्षेत्र में ही आपको चित्रकूट पर्वत के भी दर्शन होंगे। यह पर्वत बहुत प्रसिद्ध एवं सुन्दर है। यहाँ पर ऋषि भरद्वाज का आश्रम स्थित है।

214

पवित्र यमुना नदी को अपार दैवी शक्तियाँ प्राप्त हैं। वे सभी को प्रसन्न कर सबका कल्याण करने की पूर्ण क्षमता रखती हैं। आप अवश्य ही यमुना नदी में स्नान कीजिएगा। उस नदी के जल में स्नान करने से मनुष्य की बुद्धि निर्मल होती है। उसके पश्चात् आपको एक महान एवं पवित्र नदी–देवनदी गंगा के दर्शन होंगे। वे सभी धर्म स्थानों में श्रेष्ठ स्थान की भाँति पवित्र हैं। सरिता जान्हवी (गंगा) सभी दोषों को धोकर पवित्र करने वाली एक पवित्रतम नदी है।

215

इस प्रकार उत्तरी क्षेत्र की नदियों का अवगाहन करते हुए आप आगे बढ़िए। ये नदियाँ अत्यन्त महान,

बड़ी–बड़ी, पवित्र एवं अथाह गहरी हैं। कभी–कभी तो उनके जल की गहराई को देखकर भय–सा उत्पन्न हो जाता है। उनका जल नील की भाँति नीला है तथा नीलम पत्थर की भाँति आकर्षक है। इसके पश्चात् आपको तमसा नदी के दर्शन होंगे, जो अज्ञान के अन्धकार में भटके हुए मानवों को ज्ञान का प्रकाश प्रदान करती है।

216

अन्त में अयोध्या के निकट बहने वाली नदी सरयू के पास तो आपको शीघ्रातिशीघ्र जाना ही चाहिए। उसका जल अत्यन्त शीतल है। वह जल अत्यन्त सुगन्धियुक्त है। अयोध्या की युवतियाँ उस जल को हिलाती हुई भाँति–भाँति से जल–क्रीड़ा करती हैं। जब वे स्नान करती हैं तो उनके मुख पर लगे हुए लेप एवं सुगन्धित वस्तुएँ जल के स्पर्श से धुल जाती हैं। उनके विस्तृत उन्नत वक्षस्थलों पर लगा हुआ केसर भी जल में घुल जाता है। इस प्रकार सरयू का शीतल जल पीतवर्ण का हो जाता है और अधिक शोभा पाने लगता है।

217

वहाँ पहुंचने पर आप अयोध्या के राजमहज में प्रवेश कीजिएगा। सर्वप्रथम आप मेरी माता से मिलिएगा। मुझे आशा है कि मेरा कुशल–क्षेम जानकर उनको अपार प्रसन्नता होगी। यह जानकर कि आप मेरे पास से मेरा सन्देश लेकर अयोध्या आये हैं, वे अत्यधिक प्रसन्न होंगी। आप उनको यह भी सूचना दे दीजिए कि हमारा शत्रु रावण युद्ध में पराजित हो चुका है। जब भरत को यह समाचार मिलेगा, तो निश्चय ही यह सूचना सुनकर उनको अपार हर्ष होगा।

218

आप अयोध्या में यह भी समाचार दीजिएगा कि लंका में रावण के स्थान पर अब विभीषण राजा बनकर सिंहासनारुढ़ हो चुके हैं। यह सूचना देते हुए वानरराज सुग्रीव के विषय में भी सभी समाचार सुना दीजिएगा। सुग्रीव मेरे निकटतम प्रिय मित्र हैं, जिनके प्रति मेरे ह्रदय में अपार प्रेम है। उनकी ही सहायता से हम सब युद्धक्षेत्र में शत्रु पर विजय प्राप्त कर सके हैं।

219

आपके जाने के पश्चात् तत्काल हम सब भी लंका से अयोध्या के लिए प्रस्थान कर देंगे। जब हम सब आपके पीछे–पीछे अयोध्या के लिए प्रस्थान करेंगे तो हमे हार्दिक प्रसन्नता होगी। आपके द्वारा हमारे अयोध्या आने का समाचार भी सबको प्राप्त हो जायेगा। जब अयोध्या में समाचार देकर आप दक्षिण दिशा की ओर लौटेंगे, तो निश्चय ही मार्ग में आपसे हमारी भेंट फिर होगी और वहाँ पर हम सब आपका स्वागत

करने के लिए आपसे मिलेंगे।

220

राम ने जब हनुमान जी को इस प्रकार आदेश दिया, तो वे निस्संकोच प्रस्थान के लिए प्रस्तुत हो गये। राम की आज्ञा का पालन करने के लिए वे शीघ्र ही उड़ कर आकाश में चले गये। आकाशमार्ग से उड़ते हुए उन्होंने अयोध्या की ओर प्रस्थान किया। इस प्रकार तीनों राजा -- राजा राम, विभीषण तथा सुग्रीव- वहीं पर ठहरे रहे। उसके पश्चात् तीनों राजाओं ने साथ ही साथ पेय-पान किया। वे पेय वस्तुओं का रस ले रहे थे।

221

जब राम ने प्रेमाभिभूत होकर राजा विभीषण तथा राजा सुग्रीव से प्रस्ताव किया कि वे भी उनके साथ अयोध्या के लिए प्रस्थान करें, तो उन दोनों राजाओं ने श्रद्धा से अपना मस्तक झुका दिया। उन्होंने राम का प्रस्ताव विधिवत् सुना। राम ने कहा आप दोनों मुझसे अपार प्रेम करते रहे हैं। आशा है यह प्रेमसूत्र हमारे मध्य सदैव ही बना रहेगा, अतएव आप दोनों भी मेरे साथ अयोध्या नगरी के लिए प्रस्थान कीजिए।

222

मनुष्य होने के नाते यह मानवीय प्रवृत्ति है कि जब वंह अपने प्रिय एवं निकटतम मित्रों से बिदा लेता है अथवा उनसे ज़ब भी बिछोह होता है तो उसके ह्रदय में प्रेम का प्रभाव अधिक तीव्र हो जाता है। उसके ह्रदय में आकर्षण और भी अधिक बढ़ जाता है। निश्चय ही जब आप मेरे साथ नहीं होंगे तो आपका वियोग मुझे और अधिक व्याकुल करेगा। आपका स्मरण बार-बार आता रहेगा। मेरा मन आपके विषय में सोचकर दुःखी होगा, इसलिए यही अधिक उपयुक्त होगा कि आप दोनों ही मित्र मेरे साथ चलें और अयोध्या तक मेरा साथ देकर मुझे वहाँ तक पहुंचा दें।

223

तीन, चार, पाँच, छः अथवा सात रातों तक अपनी इच्छानुसार आप मेरे साथ अयोध्या में निवास करें। इतना समय तो लगभग लग ही सकता है। इसके पश्चात् जब आप चाहें अपने-अपने स्थानों को लौट आ सकते हैं। मैं उस परिस्थिति में पूरी तरह धैर्य धारण कर लूंगा तथा आपको बिदा करने की सामर्थ्य जुटा लूंगा। उस समय आप प्रसन्नता से अपने - अपने स्थानों पर लौट सकेंगे।

224

हो सकता है कि आपको इससे कोई विशेष लाभ न हो परन्तु इतना लाभ तो निश्चय ही होगा कि आप को उस सुन्दर नगरी के विषय में पूरा ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। आप अयोध्या नगरी की गरिमा को स्वयं अपनी आँखों से देख सकेंगे। इसी उद्देश्य एवं अभिलाषा के कारण आप दोनों से मेरा यह अनुरोध है कि आप मेरे साथ ही अयोध्या के लिए प्रस्थान कर दें। आपका मन पवित्र एवं चरित्र आदर्श है, इसीलिए आपसे मुझे अपार प्रेम है। जब आप अयोध्या चलेंगे तो आपकी उपस्थिति से वह नगरी भी धन्य हो उठेगी। आपके शुभागमन से वह स्थान पवित्रता, सुख समृद्धि एवं अपार गौरव – गरिमां को प्राप्त कर सकेगा, अतएव आपका अयोध्या–आगमन अयोध्या के लिए अत्यन्त सौभाग्य का विषय होगा।

225

आप के अयोध्या – निवास से वह स्थान पवित्र हो जायगा। वह एक तीर्थस्थान एवं धर्मस्थान की भाँति महत्वपूर्ण हो जायगा। उसका गौरव तब किसी तपस्या–स्थली से कम नहीं होगा। सभी लोग बाद में यह कहेंगे कि यह स्थान वह पवित्र तीर्थ है, जहाँ पर महान चरित्रवान् एवं पूर्ण गरिमामय व्यक्तित्व वाले महापुरुष आये थे और उन्होंने इसे अपनी उपस्थिति से गौरवान्वित किया था। वे इस स्थान पर आकर ठहरे थे। उस स्थान की प्रसिद्धि का विशेष कारण भी यही होगा। इस प्रकार अयोध्या में आपका शुभागमन उसकी सुख–समृद्धि और प्रसिद्धि का विशेष कारण होगा। अयोध्या के राजमहल के लिए भी आपकी उपस्थिति गौरव स्वरुप होगी, जिसको सदैव ही स्मरण किया जायेगा।

226

वास्तव में यह एक बहुत बड़े सौभाग्य की बात होगी कि आपने अयोध्या नगरी में जाकर वहाँ की शोभा बढ़ायी। आपकी इस उपस्थिति से प्रसन्न होकर भरत आपसे दृढ़ मैत्री–संबंध जोड़ना चाहेंगे। इस प्रकार वह भी आपके निकटतम प्रेमी और मित्र बन सकेंगे। यह भी एक बड़ा ही महत्वपूर्ण कार्य होगा। मित्रता वास्तव में सभी राजाओं के लिए एक उत्तम प्रेम–सूत्र का काम करती है। इस प्रकार की भेंट एक राजा से दूसरे राजा को मिलने का सुन्दरतम अवसर प्रदान करती है। इस प्रकार की भेंट से पारस्परिक प्रेम–संबंधों का सूत्र और भी दृढ़ होता है। यह सूत्र निरन्तर दृढ़तर होता चला जाता है, जो राजाओं और राज्यवासियों के लिए सौभाग्यप्रद होता है।

227

जब किसी मनुष्य को मणि, माणिक, रत्न आदि अमूल्य वस्तुएँ प्राप्त हो जाती हैं तो उनकी सुरक्षा करना एक बड़ा दायित्व भी बन जाता है। वह संपत्ति सुरक्षा की चिन्ता के कारण भार–स्वरुप भी हो जाती है। इससे भिन्न स्थिति मित्र – प्रेम की होती है। निकटतम मित्रों का प्रेम कुशल रक्षक की भाँति सदैव ही एक दूसरे की

सुरक्षा करता है। उसमें किसी प्रकार के भार अथवा कठिनाई का कोई प्रश्न नहीं आ पाता है। इस प्रकार की मित्रता से सुख प्राप्त होता है, आश्रय मिलता है तथा सभी प्रकार की शान्ति एवं सुरक्षा प्राप्त होने की संभावनाएँ होती हैं। मित्रता से प्रेम का पथ प्रशस्त होता है।

228

राजा राम ने सुग्रीव एवं विभीषण को अयोध्या आने का निमंत्रण दिया। स्वयं अयोध्या के लिए प्रस्थान करने का उन्होंने पूरा आयोजन कर लिया। राम के निमंत्रण को स्वीकार करते हुए दोनों राजाओं ने भी एक साथ ही उत्तर दिया और कहा, हे राजा राम ! इस निमंत्रण के लिए हम बहुत आभारी हैं। वानर राज सुग्रीव तथा राजा विभीषण को राम के इस प्रेमपूर्ण निमंत्रण से अपार हर्ष हुआ।

229

वे बोले, हे राजा राम ! आपने हम दोनों को जो भी आदेश दिया, वह हमें शिरोधार्य है। वास्तव में आपने बार-बार अयोध्या चलने का जो अनुरोध किया है, वह हम दोनों के प्रति आपके अपार प्रेम का ही परिचायक है। प्रेम-सूत्रों के संबंध में आपका यह आग्रह उचित ही है। वास्तव में अयोध्या में हम दोनों को भी पूर्ण आनंद की प्राप्ति होगी। अयोध्या के दर्शन से हम दोनों को जो उपलब्धियाँ होंगी वे अतुलनीय रहेगी। अयोध्या नगरी से बढ़कर अन्य कौन ऐसा स्थान इस जगत में है जिससे उसकी तुलना की जा सकती है ? वहाँ जाना तो हम दोनों का परम सौभाग्य ही माना जायगा।

230

हे राजा राम ! यद्यपि अयोध्या जाकर कुछ भी प्राप्त करने की अभिलाषा हमें नहीं है, फिर भी, हम दोनों ही उस स्थान पर जाना अत्यन्त आवश्यक समझते है। हमें आपके प्रति अपार आकर्षण है। आपका मित्र-भाव हमारे जीवन का अभिन्न अंग बन गया है। आपके प्रेम को हम दोनों अमूल्य निधि के रुप में ग्रहण करते हैं। यह प्रेम अन्धकारमयी रात्रि का शशांक है, जिसकी प्रकाश किरणों के माधुर्य में हम दोनों डूब जाते हैं। यदि हम दोनों आपसे बिछुड़ जायेंगे तो हमारी भी वही दशा होगी जैसी कि विरह पीड़ित उपेक्षित प्रेमियों की होती है। वे अहर्निश रोते-कलपते ही तो रहते हैं, अतएव प्रेमातिरेक के कारण भी कुछ समय तक आपके साथ-साथ रहना हम सबके लिए अत्यन्त आवश्यक है।

231

जो लोग प्रेम की विरह-वेदना से पीड़ित हैं, क्या उनको चन्द्रमा की शीतल-किरणें भी कभी अच्छी

लगती हैं ? अर्थात वे कभी भी रुचिकर प्रतीत नहीं होती हैं। यदि वे शरीर पर चन्दन का लेप भी लगा लें, तो भी विरह की उष्णता के कारण उनको कभी शीतलता प्राप्त नहीं हो सकती। प्रेमियों के हृदय में निरन्तर प्रेमाग्नि जलती रहती है। सूनापन, अकेलापन अथवा शीतल जल भी उनके लिए किसी प्रकार की औषधि का कार्य नहीं कर सकता है तथा जो विरह–विदग्ध हैं, उनको किसी प्रकार की शान्ति नहीं दे सकता है।

232

प्राचीन काल से ही महाकवि गण अपने महाकाव्यों में इन बातों का वर्णन निरन्तर करते चले आ रहे हैं। प्राचीन कथाओं में भी यही संकेत मिलते हैं। जो व्यक्ति अथवा प्रेमी अपनी प्रेमिका से बिछुड़ जाता है, वह प्रेम के कारण दुःखी रहता है। उसकी दशा व्याकुलता के रुप में परिणत हो जाती है। शक्तिशाली एवं वीरों से संबंध स्थापित करना इस दृष्टि से अमृतोपम कहा जा सकता है। उनका साथ अत्यन्त मूल्यवान होता है। इससे उस व्यक्ति को अपार सन्तोष एवं आनंद प्राप्त होता है, जो आपकी भांति किसी शक्तिशाली वीर योद्धा के निकट रह कर आश्रय प्राप्त करता है। हे राम ! आपने अपने आश्रय में शरण देकर हम दोनों को महान गौरव प्रदान किया है। हम दोनों इसे अपने जीवन की अमूल्य निधि मानते हैं।

233

उदाहरण के लिए चकोर पक्षी को लिया जा सकता है। वह रात्रि के समय अपनी चकोरी से बिछुड़ जाता है और चन्द्रमा को बुरा–भला कहता रहता है। वह चन्द्रमा को बहुत ही दुष्ट एवं क्रूर मानता है। दिन के समय वे उष्ण स्थान पर मिल कर आनंद और उल्लास का अनुभव करते हैं। विछोह की रात्रि के समाप्त होते ही उनका परस्पर मिलन हो जाता है। चन्द्र किरणों की शीतलता तो वियोग में उन्हें उष्णता प्रदान करती रहती है पर मिलन के कारण दिन की उष्णता भी सुख एवं शीतलता प्रदान करने लगती है।

234

हे राजा राम ! हम दोनों ने भावावेश एवं प्रेमावेश में अत्यन्त विस्तार से आपके प्रति अपने अपार प्रेम का परिचय दे दिया है। वास्तव में हम दोनों ने विरह व्यथित प्रेमियों की दशा के संबंध में भली भाँति अपने विचार व्यक्त किये हैं और यही हमारे लिए प्रासंगिक भी है। इसी दृष्टिकोण से हम दोनों ने सहर्ष आपका निमंत्रण स्वीकार किया है। ऐसा कौन व्यक्ति होगा जो आप जैसे महान राजा के आदेश को स्वीकार नहीं करेगा, अतएव हम दोनों ही आपका निमंत्रण स्वीकार कर आपके साथ अयोध्या चलेंगे।

235

आपने प्रेम के विषय में स्वयं ही कहा था कि प्रेम और वियोग का दुःख असाधरण एवं असह्य होता है। इसकी व्यथा की सीमा नहीं है। यह बात सत्य एवं विचारणीय है। प्रेमी का प्रेमिका से मिलन एक महान अवसर बन जाता है। इससे दोनों को ही अपूर्व प्रसन्नता होती है। न तो मधुर पेय में इतना रसास्वाद होता है और न सुस्वाद भोजनों में ही इतना आनंद प्राप्त होता है, जितना प्रेमियों को मिलन सुख में होता है। इस प्रकार प्रेम–मिलन अपार आनंद का विषय है।

236

हे राजा राम ! आपके चरण कमलों की रज प्राप्त कर हम दोनों को अपार सन्तोष प्राप्त हो रहा है। हम सब आपके सान्निध्य में सदैव ही अत्यन्त आनन्दित रहते हैं। हे राम, हमारे हृदय में सदैव ही आपकी माणिक–प्रतिमा प्रतिष्ठित रहती है, जिसको हम अपनें हृदय में अपने देवता की भाँति धारण किये रहते हैं। वह हमारे लिए सबसे अधिक महत्वपूर्ण एवं मूल्यवान है।

237

इस प्रकार राम का सम्मान करते हुए उनके प्रति उन्होंने अपार आदर व्यक्त किया। उन दोनो राजाओं ने अपनी हार्दिक भावना को भी प्रकट किया। वानर राज सुग्रीव तथा राजा विभीषण श्री राम के साथ ही साथ अयोध्या नगरी जाने को प्रस्तुत हो गये। इसका कारण यह था कि उनका हृदय भी राम के साथ अनुसरण करने को आकुल था।

238

दूसरे दिन प्रातः काल सभी ने अयोध्या के लिए प्रस्थान किया। केवल एक रात की ही उन्हें प्रतीक्षा थी। अत्यन्त उत्सुकता के कारण सम्पूर्ण रात उन्होंने जागरण में ही व्यतीत की। रात भर हास–परिहास का क्रम चलता रहा, इसीलिए वे रात भर सो नहीं सके। सूर्योदय का समय आ गया और सूर्य की किरणें पृथ्वी पर प्रकाश बिखेरने लगीं।

239

रात का समय व्यतीत हो गया। उन्होंने अपने आपको शीतल जल से स्वच्छ किया और प्रातः काल की प्रार्थना की। उन्होंने बार–बार ईश्वर का स्मरण किया, आराधना की तथा ध्यान में मग्न हो गये। वे पूजा एवं अर्चना पर पूर्ण विश्वास रखते थे। यह कार्य वे बड़े ही भक्ति – भाव से करते थे। धार्मिक कृत्यों को करने में वे बड़े ही श्रद्धावान थे। वास्तव में यदि महापुरुषों की वन्दना की जाय, तो जीवन में निश्चय ही अपार शक्ति प्राप्त होती

है। जहाँ कहीं भी धार्मिक कृत्य करने का अवसर प्राप्त हो, उसको सदैव ही महत्व देना चाहिए। जीवन में यह कार्य ही सबसे अधिक मूल्यवान सिद्ध होता है।

240

राजा राम तथा देवी सीता (पति–पत्नी) दोनों ही अयोध्या नगरी को प्रस्थान करने के लिए उद्यत थे। हर्ष और उल्लास से उनके हृदय की धड़कनें तीव्रतर होती जा रही थीं। इसका एकमात्र कारण उत्सुकता एवं आनंद ही था। उस अवसर पर राम और सीता विष्णु एवं देवी श्री के रुप में सुशोभित हो रहे थे। उनकी शोभा एवं स्वरुप काम देवता तथा रति की भाँति था। वे विश्व में अपूर्व रत्नों की भाँति शोभा पा रहे थे।

241

अयोध्या की यात्रा के लिए प्रसिद्ध पुष्पक विमान सजाया गया था। यह एक बहुत ही आकर्षक एवं सुंदर वायुयान था। इसका निर्माण सुवर्ण, मणियों, रत्नों, हीरों आदि बहुमूल्य वस्तुओं से किया गया था। उसकी सुन्दरता को देखकर ऐसा प्रतीत होता था जैसे उस अलौकिक वायुयान का निर्माण जादू विद्या की कला का अनुपम प्रदर्शन हो। उसी पुष्पक विमान पर राम तथा सीता आसीन हुए। लगता था, जैसे वे मणियों की डोली में बैठे हों। वास्तव में वह यान अत्यन्त आकर्षक एवं मनोहर था।

242

राजा विभीषण एवं वानरराज सुग्रीव पीछे की ओर आसीन हुए। वे राम के बहुत निकट थे। वे दोनों ही राम के महान उच्चाधिकारी थे तथा दो भाइयों की भाँति शोभा पा रहे थे। लक्ष्मण जी अपने हाथों में सुन्दर चमर लिये हुए राम की परिचर्या कर रहे थे। अंगद उनके चरणों के नीचे बैठकर पैरों को दबा रहे थे तथा उनकी सेवा कर रहे थे, इसीलिए वे सबसे नीचे बैठे हुए थे।

243

राम के चरणों में आसीन होकर वानर अंगद अपने हाथ में कुछ आवश्यक वस्तुएँ लिये हुए थे। नल बड़ी कुशलता से राम के ऊपर छत्र से छाया कर रहे थे और एक क्षण को भी उस स्थान से हट नहीं रहे थे। वीर योद्धा नील गले की माला अपने हाथों में धारण किये हुए थे तथा ताम्बूल पेटिका भी अपने हाथ में लिये हुए थे। जाम्बवान अपने हाथों में तलवार लिये हुए तथा झुके से खड़े थे। इस प्रकार राम दल के सभी वीर योद्धा उनके साथ ही साथ पुष्पक विमान में आसीन हो कर अयोध्या जा रहे थे।

244

उनके साथ कुशल वैद्य सुषेण भी थे। उन्होंने पान थूकने के लिए एक सुन्दर पात्र तैयार किया था। वानर गावा को अस्त्र–शस्त्र ले चलने की आज्ञा दी गयी थी। वीर पराक्रमी वानर क्रन्दन ने आदेशानुसार एक भीषण एवं भारी खड्ग धारण किया था। इस प्रकार यह यान वीरों की सुरक्षा में यात्रा कर रहा था।

245

एक विशेष प्रकार की लुंगी का वस्त्र पहन कर स्वर्ण की तलवार लेकर गवायु बड़े ही उत्साह से उपस्थित हो गया था। श्री गवाक्ष अपने हाथों में एक विशाल छत्र धारण किये हुए थे। यह बहुत ही विशाल था। उष्णता की अधिकता होने पर उसका विशेष लाभ मिल पाता था। जब भी सूर्य की तीव्र किरणें उष्णता उत्पन्न करती थीं, उनसे बचने के लिए काले छत्र को धारण कर उसके नीचे आश्रय लिया जा सकता था। वे उसको अपने हाथों में धारण किये हुए बैठे थे।

246

वृषभ नामक वीर वानर अपनी उंगलियों की गतिवधियों का बड़ी ही सरलता एवं सौंदर्यपूर्ण ढंग से प्रदर्शन कर रहा था। उसका यह कार्य बड़ा ही आकर्षक था। वास्तव में वह अपने हाथों में सुवर्ण का पंखा धारण किये हुए था। वह पंखा अत्यन्त आकर्षक एवं चमकदार था। चौड़े एवं विशाल वक्षस्थल वाले वीर द्विविध बड़ी ही सतर्कता से बैठे हुए थे। उनके वक्षस्थल पर स्वर्ण गदा झुकी हुई शोभा पा रही थी।

247

वीर सरभ को कई महत्वपूर्ण अस्त्र–शस्त्र दिये गये थे। उनको उन सभी शस्त्रों की सुरक्षा का पूरा भार सौंपा गया था। उनके हाथ में धनुष था। वह धनुष इतना अधिक भारी था कि यद्यपि उसको सन्तुलित करके झुकाना कठिन था, परन्तु वे उसके भार को भी बड़ी सरलता से झेल रहे थे। वीर धूम्र के हाथ में बाण दिये गये थे। उसके मस्तक पर सुवर्ण का बना हुआ शिरस्त्राण था, जो वास्तव में बाणों की चमक की तुलना में ही रखा जा सकता था।

248

प्रवीर तारा के शरीर पर कवच सुशोभित था। उससे प्रकाश की किरणें फूट रही थीं। जब उसकी किरणें बिखरती थीं तो वे सूर्य की किरणों की भाँति चमकती थीं। जो भी उनकी ओर देखता था, वह चकाचौंध के कारण

अपनी आँखों को बन्द करने के लिए विवश हो जाता था। वीर केशर तीव्रगति से किसी का भी पीछा करने में समर्थ थे । वे राम के भारी कवच को अपने हाथों में धारण नहीं कर पा रहे थे, इसीलिए यह कार्य उन्हें बहुत रुचिकर नहीं लग रहा था।

249

श्री भीमवक्र ने सभी के लिए सुन्दर एवं सुगन्धियुक्त भोजनों की व्यवस्था की थी। मिष्ठान्न आदि सभी मधुर वस्तुएं वहाँ प्रस्तुत की गयी थीं। उनके पास जल के लिए कंडी की व्यवस्था भी थी। वे कंडी को अपने हाथ में पकड़े हुए थे। वीर धनुर्धर नामक योद्धा उनके साथ ही खड़े थे। उनको किसी प्रकार की कठिनाई नहीं हो रही थी। वे अपने हाथों में सुवर्ण की माला पकड़े हुए थे, जिससे उनको अपार प्रसन्नता हो रही थी।

250–252

(यह अंश स्पष्ट ही क्षेपक है।)

253

इसके पश्चात् जब सभी वानर पुष्पक वायुयान पर आसीन हो गये, तो साथ ही साथ बैठने के कारण एक भीड़ का सा वातावरण उपस्थित हो गया। इस स्थिति में भी सभी वानर व्यवस्थित रुप से पुष्पक विमान में बैठे हुए थे। पुष्पक विमान तीव्रगति से आकाश में उड़ता हुआ आगे बढ़ रहा था। ऐसा लग रहा था जैसे पृथ्वी स्वयं अथवा कोई पर्वतमाला ही आकाश में उड़ रही हो।

254

न तो अधिक नीचे की ओर वह यान उड़ता था और न आकाश में बहुत ऊपर ही वह उड़ रहा था। स्पष्ट ही सबको वायुयान से नीचे पृथ्वी दृष्टिगोचर हो रही थी। जब राम ने पुष्पक विमान से पृथ्वी की ओर देखा तो उनको अपार प्रसन्नता हूई। यान से दिखायी देने वाली सभी वस्तुओं का वे क्रमपूर्वक सविस्तार वर्णन करते चले जा रहे थे।

255

हे सीता ! नीचे दृष्टि डाल कर इस विशाल नीले सागर को देखो। उसका अस्तित्व भी निर्मल आकाश से किसी भाँति कम नहीं है। इसके मध्य में कुछ विचित्रता सी प्रतीत होती है। ऐसा लगता है जैसे वर्षा के बादल

बिखर कर फैल रहे हों।

256

नीचे ही महेन्द्र पर्वतमाला दिखायी देती है। इसका अपार सौंदर्य मन–मोहक है। जो भी इस सुन्दर पर्वत को देखता है, इस पर मुग्ध हो जाता है। जब हमारी वानर सेना ने यहाँ से लंका की ओर अभियान किया तो इसका सौंदर्य नष्ट भ्रष्ट हो गया था। इसके सुन्दर–सुन्दर वृक्ष धराशायी हो गये थे। सेतुबन्ध के लिए भी यहाँ से ही शिलाखण्ड ले जाये गये थे। इस प्रकार वानरों ने यहाँ से बहुत सी शिलाएँ उखाड़ी थीं।

257

वास्तव में देवराज इन्द्र बड़े महान एवं कृपालु देवता हैं। वे सभी से प्रेम करते हैं। हे सीता ! इन्द्र ने इस उजड़े हुए पर्वत पर घोर वर्षा की। मैं समझता हूं कि वर्षा को भी संभवतः इस बात का ज्ञान नहीं होगा कि उसी के माध्यम से फिर पृथ्वी इतनी हरी–भरी होकर वृक्षों से लहलहाने लगी है और उसका आकर्षण इतना अधिक बढ़ गया है। मेरा अनुमान है कि वर्षा भी अपने अस्तित्व को पूरी तरह नहीं पहचानती है। वास्तव में वही इस पृथ्वी के प्राणियों का ज़ीवन है। इसके साथ ही विश्वकर्मा ने भी इस जगत को अपनी गरिमा से अनुपम सौंदर्य प्रदान किया है।

258

यहाँ की भूमि अब निचली भूमि भाग की संज्ञा नहीं पा सकती। ऊंची भूमि का बहुत बड़ा भाग, वर्षा के कारण ऊपर से मिट्टी को बहाकर यहाँ आ गया है। मिट्टी के जो ढेर ऊपर को उठे हुए थे, वे नीचे आकर समतल हो गये हैं। जो वृक्ष पहले पृथ्वी पर गिर गये थे, वे फिर उग गये हैं। अब वे फलों एवं फूलों से लदे हुए हैं। वास्तव में वर्षाऋतु उस राजा की भाँति है, जो अपने आगमन से इस पृथ्वी को नयी गरिमा प्रदान करता है।

259

जहाँ तक देवराज इन्द्र का संबंध है, हम दोनों उनकी विधिवत् वन्दना करते हैं। हम दोनों की यह गहरी अभिलाषा है कि उनका निर्मल यश सम्पूर्ण विश्व में बिखर जाय। उनका यश बहुत ही पवित्र है। जब हम लोग अयोध्या में पहुंच जायेंगे, तो हम देवराज इन्द्र का स्वागत करने की व्यवस्था करेंगे और श्रद्धा एवं भक्ति सहित उनका सम्मान करेंगे।

260

वास्तव में मलय पर्वतमाला आज मुझे अपनी पहले की विरह व्यथा का स्मरण दिलाती है। जब इस पर्वत पर मैं दृष्टिपात करता हूं तो पक्षियों का कलरव मेरे कर्ण-कुहरों में गूंजने लगता है। इसकी सबसे बड़ी विशेषता यह है कि इस पर्वतमाला पर चन्दन के विशाल़ वन हैं। सुगन्धियुक्त चन्दन की लकड़ी जितनी यहाँ मिलती है, उतनी कहीं और उपलब्ध नहीं होती है। इसकी सुगन्धि सदैव ही वातावरण में बिखरती रहती है। उसी सुगन्धि से इस स्थान के प्रति मेरे मन में सदैव ही आकर्षण बना रहता है । जो प्रेमी अपनी प्रेमिकाओं के वियोग में व्ययित हैं, उनको यह सुन्दर वातावरण और भी अधिक दुःखी करता है। कैकेयी भी अपने मधुर शब्द से इस वातावरण में माधुर्य बिखेरता रहता है।

अध्याय – 25

1

हे सीता ! यह सामने विन्ध्याचल पर्वत दिखायी दे रहा है। उसके शिखर अत्यन्त आकर्षक हैं। इस पर्वत की बड़ी–बड़ी अभिलाषाएँ थीं। इस पर्वत ने देवराज इन्द्र के स्थांन स्वर्ग को भी अपने आगे झुका दिया है। इसके शिखर ऊंचे–ऊंचे एवं विशाल हैं। यह सदैव ही ऊपर की ओर बढ़ता गया है। इस प्रकार यह पर्वत माला आकाश चुम्बी दिखायी देती है। इसकी गतिविधियों को देख कर स्वर्ग भी भयभीत हो गया है। उसे भय है, कहीं विन्ध्या के शिखर उससे टक्कर न लेने लगें।

2

एक बार ऐसा हो गया था कि विन्ध्याचल पर्वत के शिखर स्वर्ग से भी ऊपर उठ रहे थे। इसी समय उन्होंने उससे टक्कर ले ली थी। इस दृश्य को देखकर देवराज इन्द्र चौंक कर स्तम्भित हो गये थे। उन्होंने शीघ्र ही भगवान शंकर के पास जाकर इस परिस्थिति का परिचय देते हुए प्रार्थना की। शिव को संसार के प्राणियों एवं जगत पर दया आ गयी। उसके पश्चात उन्होंने विवेक से उपाय खोज निकाला। उन्होंने अगस्त्य को इस कार्य के लिए आज्ञा दी। ऋषि ने जल लेकर प्रार्थना की। इस प्रकार उन्होंने अपने दोनों ही लक्ष्यों को पूरा किया ताकि स्वर्ग भी प्रसन्न हो सके और जल भी पवित्र जल की संज्ञा पा सके। शंकर जी ने ऋषि अगस्त्य को यह आदेश दिया।

3

हे अगस्त्य ऋषि ! आप कैलाश पर्वत से दक्षिण दिशा की ओर प्रस्थान कीजिए। आप विन्ध्याचल पर्वत के पास जाकर यात्रा के लिए मार्ग देने की प्रार्थना कीजिए और उनसे निवेदन कीजिए। वे बहुत विशाल रुप धारण न करें। वास्तव में विन्ध्याचल पर्वत ने ऋषि के प्रति अपना सम्मान प्रकट करते हुए उनके निर्देशों को स्वीकार कर लिया। ऋषि अगस्त्य का व्यक्तित्व महान था। इस प्रकार ऋषि अगस्त्य ने विन्ध्याचल की ऊंचाई को कम किया तथा विन्ध्याचल ने स्वयं अपना स्वरुप छोटा करते हुए अपने अस्तित्व को चारों ओर से समेट लिया। अपने शिखरों की ऊंचाई को भी उन्होंने कम कर दिया, जिससे वे स्वर्ग से न टकरा सकें। ऋषि के इस महान कार्य से इस संसार में लोगों को अपार प्रसन्नता हुई।

4

मलय वन पर्वतमाला अपार सौंदर्यमयी है। हे सीता ! इसे ध्यान से देखो। यह सामने ऋष्यमूक पर्वत है। जब मैं इसका स्मरण करता हूं मेरे हृदय में विरह–व्यथा की टीस उत्पन्न हो जाती है। यह सामने दंडकवन हैं। यह स्थांन वास्तव में निरीक्षण करने योग्य है। यहीं मेरी विरह व्यथा सर्वप्रथम शुरु हुई थी। यहीं से तुम्हारा दुःख भी

प्रारंभ हुआ था। इसी वन में तुम्हारा अपहरण किया गया था और हमें वियोग की व्यथा सहनी पड़ी थी।

5

यह पम्पा झील है। आओ, हम दोनों इस स्थान पर जाने का सुअवसर प्राप्त करें और यहाँ का सौंदर्य देखें। इसकी पवित्रता की कोई सीमा नहीं है। पम्पासर के समकक्ष सुन्दर कोई दूसरी झील नहीं है।। सर्वप्रथम हम दोनों इसमें स्नान करें और अपने पापों से मुक्त हो जायें। चारों ओर घूमते हुए हमें यात्रा में जो भी कष्ट हुए हैं, उनसे हम मुक्त हों। यदि हम लोगों से कोई पाप हुआ है तो भी इसमें स्नान कर हमें पापों से मुक्ति मिलेगी और आनंद प्राप्त होगा। इस प्रकार यात्रा के सभी कष्ट दूर हो जायेंगे। ऐसा प्रतीत होता है कि यह झील, सभी पर दया करके सबको निर्मल करती रहती है। इसमें स्नान से सभी कलुष दूर हो जाते हैं। यहीं पर सर्वप्रथम हमारे अथाह दुःख का प्रारंभ हुआ था। वास्तव में मुझे तो आज ऐसा प्रतीत होता है कि हमारे दुःख का अन्त भी यहीं होगा। यहीं पर हमारी अब तक की व्यथा, आनंद एवं उल्लास में परिवर्तित हो रही है। लगता है यह आनन्द एक प्रकार की सुन्दर भेंट के रुप में हमें पम्पासर से प्राप्त हो रहा है। आज यहीं से होकर संसार का कल्याण करने के लिए हम अयोध्या जा रहे हैं।

6

राम ने सीता सहित पम्पासर के तट पर जाकर स्नान किया। अपने सभी मलों को धोकर वे निर्मल हो गये और अधिक सुन्दर स्वरुप में अवस्थित हो गये। मानव के रुप में वे पूर्णरुपेण सुशोभित हुए। बाद में प्रस्थान के लिए प्रस्तुत होकर उन्होंने यान द्वारा आकाश में उड़ने की व्यवस्था की और आकाश–मार्ग से अपनी यात्रा प्रारम्भ कर दी। सम्पूर्ण मार्ग में वे सीता जी से अनेक विषयों एवं स्थानों के संबंध में वार्तालाप करते रहे। सभी लोग अयोध्या की ओर बढ़े चले जा रहे थे।

(7–34)

यह अंश क्षेपक है।

35

हे सीता ! यमुना नदी के दर्शन करो। यह सरिता अत्यन्त आकर्षक एवं गरिमामयी है। इसका जल हरीतिमा का संकेत देता है। वास्तव में यह जल अत्यन्त निर्मल है। इसकी उपमा हे सीता ! उन्मुक्त हरी घास की हरीतिमा से दी जा सकती है। जो व्यक्ति इसके तट पर इसके व्रतों का पालन करता है तथा पूर्ण भाव से इसकी आराधना करता है, उसको निश्चय ही जीवन में सम्पूर्णता प्राप्त होती है। गंगा नदी सभी गहराइयों एवं महानताओं की प्रतीक देव

नदी है। इसका जल अथाह गहरा है। इसकी लहरें गुरु गंभीर गर्जना करती हुई आगे बढ़ती चली जाती हैं। इसका जल निर्मल एवं श्वेत वर्ण है। सुन्दर मोतियों से इसकी तुलना की जा सकती है। इसके दर्शन मात्र से मानव की आत्मा पवित्र एवं महान हो जाती है। यदि भक्ति भावना से कोई व्यक्ति इस देवन दी के प्रति अपनी श्रद्धा के पुष्प बिखेरता है, तो उसको जीवन के सभी फल प्राप्त होते हैं और उसका मानव जीवन सफल हो जाता है।

36

यह तमसा नदी है। यहां से यह दिखाई दे रही है। इसके तट पर गुजार करते हुए भ्रमर मण्डूकों के साथ–साथ स्वर मिला रहे हैं। वे भाँति–भाँति के पुष्पों की सुगन्धि का रस ले रहे हैं। वे अपनी सुगन्धि एवं पराग को वातावरण में चारों और बिखेर रहे हैं। वही पुष्प पराग इस सरिता के तटों पर बिखरा पड़ा है। पर्वतमालाओं के ढालों एवं घाटियों पर पुष्प राजियाँ बिखरी पड़ी हैं। वास्तव में यह वह सरिता है, तो सदैव ही दोषों का नाश करती हुई आगे बढ़ती चली जा रही है। हे सीता ! इस सरिता के सौंदर्य को ऊपर से पुष्पक विमान से ही देखो।

(37–49)

यह अंश क्षेपक है।

50

हे सीता ! आकाश से सरयू नदी का सौंदर्य देखो। यह नदी आश्चर्यचकित करने वाली है, अतएव इस पर दृष्टिपात करो। मैं झूठ नहीं बोलना चाहता। मैं स्वयं नहीं कह सकता कि इसका जल लाल अथवा पीला है। अयोध्या की सुन्दरियों तथा युवतियों ने जलविहार करते हुए इसको स्पन्दित कर दिया है। वे एक दूसरे पर जल फेंक–फेंक कर क्रीड़ा कर रही हैं तथा जल के अन्दर दो–दो की टोली में डुबकियाँ लेती हुई, आनंद विहार कर रही हैं।

51

उनके विशाल वक्षस्थलों पर चन्दन एवं कुमकुम का लेप लगा हुआ है। उन्हें देखकर उनके प्रति अपार आकर्षण उत्पन्न होता है। यह भी आश्चर्य की बात है कि यहां उनके प्रति कोई अपना प्रेम प्रकट नहीं कर रहा है। वे भली भाँति श्रृंगार करके सजी हुई हैं। रास्ता चलते–चलते वे थकी सी प्रतीत होती हैं। थककर वे पसीने में डूबी–सी लगती हैं। स्वेदकण उनके मस्तक पर झलक रहे हैं। सरिता के गहरे स्थलों में भी वे स्नान कर रही हैं। जल में ये युवतियाँ तैर रहीं है और क्रीड़ा कर रही हैं। इस प्रकार वे अपने शरीर की श्रान्ति को दूर कर रही हैं।

52

ये युवतियाँ सरयू की गहराई से बिल्कुल भयभीत नहीं होतीं। इनको इस सरिता में स्नान का अभ्यास है। इसका कारण यह है कि बाल्यकाल से युवावस्था तक वे सदा ही इस सरिता के जल में क्रीडा करती रही हैं। उनके साथ वाले लोग बार–बार समझाते हुए उनसे बाहर आने का आग्रह क़रते हैं। इस प्रकार दिवस भर परस्पर हास–परिहास में ही इनका समय व्यतीत होता रहता है।

(53–117)

(यह अंश क्षेपक है।)

अध्याय – 26

1

देख लो यही साकेत नगरी है। यही यहाँ की राजधानी है। अब इसकी शोभा आधी रह गयी है। इसका रंग भूरा तथा कान्तिहीन-सा प्रतीत हो रहा है। वास्तव में इस नगरी को इस अवस्था में देखकर हर कोई आश्चर्यान्वित हो सकता है। यहाँ पर सदैव ही पूजा-उपासना के साथ ही धार्मिक कृत्यों की गतिविधियाँ चलती रहती हैं। इन पवित्र कार्यों का एकमात्र उद्देश्य जन-कल्याण एवं सम्पूर्ण विश्व की मंगल कामना है, जिससे जगत में सुख एवं समृद्धि बढ़ सके। आप ध्यान से देखिए कि आकाश में धूम्र (धूआं) सा छाया हुआ है। ऐसा प्रतीत होता है जैसे वायु के झकोरों ने ओस-कणों को सुखा कर भाप में परिवर्तित कर दिया हो। सम्पूर्ण अयोध्या की इन पवित्र कार्यशाला को देखकर अत्यन्त प्रभावित हो सकना स्वाभाविक है। आजकल इस नगरी का स्वरुप उस तपस्वी की भाँति है, जो गहरी साधना के कारण कृशकाय होकर कान्तिहीन हो गया है। निरन्तर साधना में रत रहने के कारण वह स्नान भी नहीं कर सका। इससे उसका शरीर स्वच्छ नहीं हो सका है।

2

यह देखो अयोध्यावासी चारों ओर इधर-उधर दौड़ते हुए दिखायी दे रहे हैं। वे कुछ-कुछ भयभीत से भी हो रहे हैं। वे सभी हम लोगों को वायुयान से आते हुए आकाश में देखकर भ्रम में पड़ गये हैं। जब तक वे सभी स्नान आदि कार्यों में लगे हुए थे, उन्होंने न तो किसी ओर ध्यान दिया था और न किसी बात पर विचार ही किया था। सदैव ही वे चारों ओर की गतिविधियों पर पूरी तरह दृष्टिपात नहीं करते। अब जब दिवस का प्रकाश चारों ओर फैल गया है, अकस्मात ही उनकी दृष्टि हम सब पर पड़ गयी है। इस विशाल पुष्पकयान को देखकर उन्हें अद्भुत कौतूहल सा हो रहा है। यह वायुयांन आकाश में उड़ रहा है। वे सोचते हैं कि यह प्राणों का हरण करने वाला राक्षस आकाश में कहाँ से आ गया है। यह हम सब पर शीघ्र ही आक्रमण् करना चाहता है। आश्चर्यचकित होकर वे सभी इस विषय पर परस्पर चर्चा कर रहे हैं।

3

अयोध्या की स्त्रियां शीघ्रातिशीघ्र अपने अधोवस्त्र धारण कर रही हैं। वस्त्रों का कोई स्थान कहीं फटा तो नहीं है, यह देखने का अवसर भी उनके पास नहीं है। वे वस्त्र पहनने की अभिलाषा के कारण बिना देखे ही उन्हें धारण कर रही हैं तथा भाँति-भाँति के सुन्दर कढ़ाई वाले वस्त्रों से सुसज्जित हो रही हैं। वे बड़ी ही कुशलता से अपने आभूषण एवं अपनी अंगूठियाँ पहन रही हैं। शनैः शनैः वे दौड़ भी रही हैं। उनके सुन्दर कपोलों पर उभरते हुए हल्के-हल्के भाव उनकी सौंदर्य-गरिमा को द्विगुणित कर रहे हैं। गालों के यह चिह्न सचुमुच बड़े ही मनोहर हैं। अपने छोटे-छोटे बच्चों को तीव्र गति से आगे बढ़ने को वे प्रेरित कर रही हैं। वे तरुणियाँ तीव्रगति

से स्वयं भी आगे बढ़ रही हैं। वे उनके गालों पर तमाचे लगाते हुए उनको खींच-खींच कर अपने साथ ले जा रही हैं। वे युवतियाँ तीव्र गति से लौट रही हैं। उन्हें अपने घड़ों में जल भर कर भी लाना है। अब तक उनके जल के घड़े खाली पड़े थे। इस प्रकार खाली घड़े उनके हाथ में लटके हुए हैं।

4–6

(यह अंश क्षेपक है।)

7

सामने की ओर देखने से ज्ञात होता है कि भरत स्वागत करने के लिए पहले से ही खड़े हैं। इसी स्थान पर हम सब कुछ ही क्षणों में यान से नीचे उतरेंगे, अतएव इसी स्थान पर यान का ठहरना उचित होगा। गज, रथ तथा भाँति-भाँति के अनेक वर्णों के अन्य वाहन उनके साथ चल रहे हैं। गामलान आदि वाद्य यन्त्रों की मधुर ध्वनियाँ भी सुनायी दे रही हैं। उसके साथ ही जावा द्वीप का मधुर संगीत सुनायी पड़ रहा है। ढोलों के साथ भाँति-भाँति के अन्य वाद्य यंत्र भी बज रहे हैं। वे एक-दूसरे के काफी निकट प्रतीत होते हैं। प्रथा के अनुसार गामलान वाद्ययंत्रों की स्वर-लहरी उस अवसर पर की जाती है, जब कोई धनाढ्य पुरुष अथवा कोई राज्य का उच्चाधिकारी माघ के महीने में धार्मिक कृत्य आदि का आयोजन करता है।

8

सामने हनुमान जी दृष्टिगोचर हो रहे हैं। वे अत्यन्त श्रद्धा एवं भक्ति भाव के साथ मेरी माता कौशल्या की सेवा कर रहे हैं। मेरी माता भी बालकों के प्रति अपार स्नेह रखती हैं। वे भी सभी के साथ स्वागत सत्कार में सम्मिलित होकर हम सबके शुभागमन की प्रतीक्षा कर रही हैं, वे अत्यन्त प्रसन्नचित्त दिखायी दे रही हैं। हम सबका स्वागत करने के लिए सभी लोग एक साथ चल रहे हैं। हम सबसे मिलने की उनकी उत्कट अभिलाषा है। हे हनुमान ! तुम शीघ्र ही मेरे पास आ जाओ। शीघ्र ही मेरी माता के पास जाकर मेरे सकुशल अयोध्या वापस लौट आने का समाचार दो। उनसे प्रार्थना करके निवेदन करो कि अब उनको रुदन नहीं करना चाहिए। वे अपने दुःख का पूर्ण परित्याग करने की कृपा करें। पहले जब वे अकेली अयोध्या में रह गयी थीं, तो उनको हम सबके वियोग की गहरी व्यथा थी। वे हम सबके साथ वन में नहीं जा सकी थीं।

9

तत्पश्चात सभी राजाओं के राजा श्री राम अपनी राज पत्नी सीता सहित (स्वामी पत्नी) आगे बढ़कर

शीघ्रता से अपनी माता के पास गये। उन्हें नतमस्तक होकर उन्होंने प्रणाम किया। अपनी माता के प्रति उन दोनों ने अपार श्रद्धा एवं भक्ति का पूर्ण परिचय दिया। उनके नेत्रों से अविरल अश्रुधारा प्रवाहित हो रही थी। उनको अपनी माता के विरहजन्य दुःख का पूरा स्मरण हो आया। उनकी माता को उनके विछोह से अपार वेदना हुई थी। राम की माता ने अपने पुत्र राम का आलिंगन कर लिया। उनके प्रेम के प्रतीक स्वरुप उनकी आंखों से भी अश्रु निरन्तर बह रहे थे।

10

श्री भरत की माता कैकेयी अत्यन्त उत्तम प्रकृति की थीं। वे भी सभी के साथ प्रेमावेश में आकर रुदन करने लगीं। बाद में उन्होंने धैर्य धारण कर अपने अश्रु पोंछ लिये। अब वे अधिक दुःखी नहीं थीं। उन्हे राम की विरह व्यथा का अनुभव अब नहीं हो रहा था। उन्होंने स्वयं को सन्तुलित कर लिया था। अब प्रसन्नता का अपार अवसर आ गया था। भगवान की कृपा से उनके पुत्र राम अब प्रवास से वापस लौट आये थे।

11–16

(यह अंश क्षेपक है।)

17

तत्पश्चात श्री राम ने राजा विभीषण तथा वानरराज सुग्रीव का परिचय सभी उपस्थित स्वजनों से भी करवाया। वे दोनों अतिथि भी राजा राम के साथ ही साथ आगे बढ़े। उन्होंने राम की माता को श्रद्धा सहित प्रणाम करते हुए उनकी वन्दना की। उस समय तक सभी को यह भली भाँति ज्ञात हो चुका था कि यह दोनों अतिथि राम के साथ अयोध्या में ठहरने के लिए ही आये हुए हैं और वे यहाँ विश्राम करना चाहते हैं।

18

भरत शीघ्र ही राम से मिलने के लिए आगे बढ़े। उन्होने राम को प्रणाम करते हुए अपना मस्तक झुकाया तथा इस प्रकार राम के प्रति अपनी अपार श्रद्धा एवं भक्ति का परिचय दिया। श्रीराम भरत के इस श्रद्धा–भक्ति मय प्रेम से अत्यधिक प्रभावित हुए। उनके हाथों को पकड़कर राम ने उनका आलिंगन कर लिया। अपने अपार प्रेम का उन्होंने उनके प्रति परिचय दिया।

19

उसके पश्चात राम के कुलवर्ग के अन्य व्यक्ति भी वहाँ पर आ गये। अन्य भाई भी श्रद्धा सहित राम का स्वागत करते हुए परस्पर आलिंगन करने लगे। वे सभी राम से भेंट कर रहे थे। बड़ी उत्सुकता से राम को उन्होंने देखा और प्रणाम किया। इस दृश्य से सबके मन में आनंद की लहरें उठने लगीं। राम ने स्वयं बहुत से संबंधियों का सम्मान किया। कुछ के उन्होंने नाम पूछे तथा उनका पूर्ण परिचय प्राप्त किया।

20

आप कौन हैं ? आपका क्या नाम है ? आप स्वयं ही अपना परिचय देने की कृपा कीजिए ? परिचय प्राप्त कर लेने पर राम शीघ्र ही उन्हें पहचान लेते थे। वे तब कहते–अरे ! आप इतने बड़े हो गये ? बहुत समय के पश्चात भेंट होने के कारण ही मैं आपको भूल गया था। आपके पिता से मेरा घनिष्ट परिचय रहा है।

21

इस प्रकार मुस्कराते हुए राम बहुत सी बातों के साथ यह भी कहते थे कि मुझे आज अपने कुटुम्बी, प्रेमी एवं मित्रों से मिलकर बड़ा आनंद आ रहा है। प्रेमी, मित्रों से मिलना बड़ा ही सुखकर है। वे मधुर शब्दों से अमृत जल की वर्षा–सी कर रहे थे। कुछ लोग ऐसे भी थे जो इस आनंद के अवसर पर भी अपनी प्रसन्नता को सन्तुलित किये हुए थे। जब राम आनंद–विभोर होकर सभी से प्रेमपूर्ण वार्तालाप कर रहे थे, लोग उनकी बातों में ही रस ले रहे थे।

22 (क)

गज तथा रथों को सजा कर स्वागत के लिए तैयार किया गया था। वहाँ पर राज्य के सभी उच्च अधिकारी वर्ग एवं धनाढ्य व्यक्ति राम के स्वागत के लिए खड़े थे। वे राम को प्रणाम कर फिर पीछे की ओर लौट जाते थे। उनके प्रधान व्यक्ति अश्वों पर सवार थे तथा कुछ गजों पर बैठे हुए सुशोभित हो रहे थे। महामंत्री के साथ अन्य प्रमुख मंत्रीगण भी वहाँ उपस्थित थे। सुव्यवस्था करने वाले राज्य अधिकारी भी वहाँ उपस्थित थे। वे प्रधान राजमार्ग पर जनसाधारण को आवश्यक आदेश दे रहे थे। आसपास के ग्रामों के व्यक्ति भी एक दूसरे का हाथ पकड़े हुए आगे बढ़ रहे थे। वे सभी अपने श्री महाराज राम का उच्चततम स्वागत एवं सम्मान करने के लिए अयोध्या नगरी में आये थे। सभी सेवा और श्रद्धा की भावना से वहाँ खड़े थे। वे स्वेच्छया बहुत सी वस्तुएं

भेंट के लिए लाये थे। इसके लिए किसी ने उनसे आग्रह नहीं किया था। उन्हें इस कार्य के लिए तैयार भी नहीं कराया गया था। टोकरों में भाँति-भाँति के फल भरे हुए थे। महिष, बकरी तथा बराह आदि बहुत से पशु भी लोग वहाँ ले आये थे। बहुत से पशुओं को तो मांस प्राप्ति के उद्देश्य से काट भी दिया गया था। उन लोगों के पास विभिन्न प्रकार के मसाले तथा अन्य सुन्दर सामग्री भी थी।

22 (ख)

घोषणा करनेवाले उद्घोषकगण क्रम से एक समानान्तर रेखा की भाँति खड़े थे। वे अनेक प्रकार की भेंट लाने वालों से हास परिहास कर रहे थे। भेंट लाने वाले भाँति-भाँति की मिठाइयाँ भी लेकर प्रस्तुत थे। मिठाइयों के कारण बहुत से कीटाणु भी वहीं पर एकत्रित हो गये थे। भेंट में कुछ देने के लिए सभी लोग कुछ न कुछ लेकर ही वहाँ आये थे। सभी अत्यन्त शील एवं स्नेह के साथ आगे बढ़ रहे थे। वे महाराज श्रीराम के दर्शन के अभिलाषी थे। राज्य के उच्च अधिकारी वर्ग के लोग बड़े ही सुव्यवस्थित ढंग से खड़े थे। उन्हीं के साथ राज्य के पाँचों मंत्री भी अपनी-अपनी शालीनता का पूर्ण प्रदर्शन करते हुए उपस्थित थे। वे एक ही पंक्ति में क्रम से बैठे हुए थे। उनमें किसी प्रकार का भी अन्तर दिखायी नहीं देता था। उनके हृदय में नाम-मात्र को भी कलुष की कोई भावना नहीं थी। राज्य के अन्य सम्माननीय व्यक्ति भी उपस्थित थे। कभी-कभी वे लोग कुछ अव्यवस्थित से भी दृष्टिगोचर होते थे। उनके विचार अत्यन्त सन्तुलित थे एवं वे तीव्र मति के थे। सभी राज्य कर्मचारी भी अपने कर्तव्यों का विधिवत पालन कर रहे थे। ग्रामीण क्षेत्रों से आये हुए राज्य कर्मचारी भी अत्यन्त कुशलता से अपना कार्य कर रहे थे। वे सभी पूर्णरुपेण अनुशासित थे।

22(ग)

श्री राम वहाँ आकर सभी लोगों से मिल रहे थे। उनके साथ अनेक लोग तथा सेवक थे। वे साथ-साथ चल रहे थे। बाद में वे अपने स्थानों पर लौट जाते थे तथा अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक आनंद एवं उल्लास में निमग्न दिखायी देते थे। वे सभी अपने रुमालों को लम्बा करके और ऊपर उठा-उठा कर अपनी प्रसन्नता प्रकट कर रहे थे। ऐसे भी व्यक्ति थे जो दो-दो की टोली में मिलकर एक-एक छत्र उठाये हुए थे। वे परस्पर हास-परिहास करते हुए आगे बढ़ रहे थे। वे हार्दिक हर्ष का भी अनुभव कर रहे थे तथा आशीर्वाद दे रहे थे। प्रेम प्रकट करते हुए वे अपने प्रिय श्री राम के प्रति बार-बार सम्मान प्रकट करते थे। जानबूझ कर दूसरों के पैरों से टक्कर लगाते हुए वे पास-पास ही चल रहे थे। इससे कष्ट हो रहा था, पर हास का अंग मान कर वे हंसते हुए जा रहे थे। उन सबके हृदय में अपार प्रेम था। कुछ नागरिक अपने हाथों में पुष्पों की मालाएँ लटकाये हुए खड़े थे। वे मालाएँ भेंट कर रहे थे। कुछ लोग उनकी उस भेंट को स्वीकार नहीं कर रहे थे तथा अपनी अप्रसन्नता प्रकट करते हुए

बड़बड़ा रहे थे। वे उन लोगों को पसन्द भी नहीं करते थे जो एक दूसरे को धक्का दे रहे थे। वे एक दूसरे से अलग रहना चाहते थे और पास-पास नहीं आना चाहते थे। वे एक दूसरे को रोकने का भी प्रयास कर रहे थे। तिरछी दृष्टि से वे इधर-उधर देख रहे थे। कुछ लोग बहुत शक्ति और साहस के साथ अपने को अनुशासित किये हुए थे। धक्का-धुक्की होने के कारण उनके वक्षस्थल परस्पर टकरा जाते थे।

22(घ)

श्री भरत बहुत पीछे खड़े थे। वे इस परिस्थिति से कुछ लज्जा का भी अनुभव कर रहे थे। इसके बाद वे लौट गये। उन्होंने देखा कि उनके बड़े भाई राम अपनी पत्नी देवी सीता से वार्ता कर रहे थे। उनका हाथ पकड़कर उन्हें अपने साथ ले जा रहे थे। वे सीता के प्रति गहरे आकर्षण का परिचय दे रहे थे। अवसर से लाभ उठाते हुए वे सीता जी को प्रसन्न कर रहे थे तथा उनसे हास-परिहास भी कर रहे थे। जैसे स्याही कागज से प्रेम करती है, उसी प्रकार जो लोग एक दूसरे से प्रेम करते हैं, वे एक दूसरे के निकट हो जाते हैं, यह सत्य ही है। कुछ समय पश्चात राम ने मुड़कर पीछे देखा। उनको पता लगा कि उनके छोटे भाई भरत अपनी पालकी पर नहीं थे। राम ने यह सोचा कि शायद भरत बहुत अधिक भेंट लेकर उपस्थित हुए थे, इसीलिए भरत अपनी पालकी से नीचे उतर गये होंगे। वानरों को भेंट में देने के लिए वे बहुत से वस्त्र तथा वस्तुएँ लाये थे।

23 (क)

अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक, भाँति-भाँति से अपना हर्ष प्रकट करते हुए तथा कोलाहल करते हुए वानर-समूह एक दूसरे को अपनी ओर खींचते हुए आगे बढ़े चले जा रहे थे। उन्होंने गन्ने के पेड़ों को तोड़कर हाथों में पकड़ लिया था। वे बहुत धीरे-धीरे गन्ने का रस चूसते हुए राजमार्ग से होकर चले जा रहे थे। इस प्रकार गन्ने का मीठा रस पी-पी कर वे पूर्ण तृप्ति भी प्राप्त कर रहे थे। वे नारिकेल फलों को तोड़-तोड़ कर उनका पानी आनंदपूर्वक पी रहे थे। उस रस के पीने से कुछ बूंदे टपक पड़ी थीं, जिनसे उनके वक्षस्थल कुछ भीग से गये थे। आगे बढ़कर ताड़वृक्ष के फलों को भी उन्होंने छीलना प्रारम्भ कर दिया। राम और सीता को भेंट के रुप में वे भाँति-भाँति के फल समर्पित करना चाहते थे। उनके ह्रदय में कुछ डर भी था। श्री महाराज राम को इतनी तुच्छ भेंट देने में उन्हें संकोच का अनुभव हो रहा था। वास्तव में यह सभी वानर बड़े बुद्धिमान प्रतीत हो रहे थे। उन्होंने मार्ग भर लोगों को देखा। उन लोगों के पास भेंट में देने के लिए अमूल्य वस्तुएं थीं। पूरे मार्ग में एक दूसरे से खिलवाड़ एवं हास परिहास करती हुई वानर सेना राजमार्ग का अतुल वैभव देखती हुई आगे बढ़ती चली जा रही थी।

23(ख)

वे सभी राजधानी के एक कोने में जाकर एकत्रित हो गये। सभी वानरों को आज्ञा दी गयी कि वे पूर्ण अनुशासन से और व्यवस्थित ढंग से एक ही स्थान पर खड़े हो जायें और अगले निर्देश तक वहीं पर खड़े रहें। यह सब व्यवस्था इसलिए की गयी थी कि वानरों की गतिविधियाँ अन्य दर्शक भी देख सकें और आनंद ले सकें। अपने आप सभी परिस्थितियों की व्याख्या भी वे तभी कर सकते थे। जितने भी लोग कुल वर्ग सहित वहाँ पर उपस्थित हुए थे, वे वानर-समूह का निरीक्षण कर रहे थे। उस समय वानर-समूह अच्छे-अच्छे तथा भाँति-भाँति के रंग-बिरंगे वस्त्र धारण किये हुए थे। ये वस्त्र नवीन थे तथा बहुत आकर्षक प्रतीत हो रहे थे। श्री राम ने निर्वासित होने पर जीवन के सभी सुखों और आनंद का पूर्ण परित्याग कर दिया था। उन्होंने प्रतिज्ञा भी की थी कि ठनका जीवन आनंदमय इच्छाओं से दूर रहेगा। राम का यह भी व्रत था कि वे अन्य लोगों की अभिलाषाओं की पूर्ति सदैव ही करते रहेंगे, जिससे सम्पूर्ण जगत के लोग अपने लक्ष्यों को प्राप्त कर मनोकामनाओं की पूर्ति कर सकें। आज वह परिस्थिति अथवा आनंद का अवसर आ गया था जिसकी उन्होंने कल्पना की थी, इसीलिए राम इस सुन्दर अवसर पर वहाँ उपस्थित थे।

23 (ग)

शनैः शनैः आगे बढ़कर श्री भरत लक्ष्मण के पास गये। वहाँ उन्होंने स्थान ग्रहण किया। वीरवानर मयंद के हाथ में अब कोई शस्त्र अथवा खड्ग नहीं था। लक्ष्मण ने अब उनका स्थान ग्रहण कर लिया था। लक्ष्मण जी अस्त्र-शस्त्रों से सुसज्जित थे। उन्हीं के समानान्तर प्रवीर शत्रुघ्न भी खड़े थे, जिनके हाथ में एक छत्र सुशोभित था। वानर नल ने भी अपने हाथ में एक दूसरा छत्र धारण कर लिया था। यह छत्र स्वर्ण का था। वे बड़ी ही कुशलता से उसको धारण किये हुए थे। उस स्वर्ण-छत्र से श्री महाराज राम के मस्तक पर वे छाया किये हुए थे। अपने सम्पूर्ण सौंदर्यमय स्वरुप में वस्त्राभूषणों से सुसज्जित श्रीराम निकट ही बैठे हुए थे। वे एक सुन्दर चित्र की भाँति शांत बैठे हुए थे। वे सम्पूर्ण विश्व की छाया के लिए छत्र की भाँति थे अर्थात उनकी ही छत्रछाया में सम्पूर्ण विश्व की शान्ति एवं सुरक्षा बसी हुई थी। वह दृश्य ऐसा लगता था जैसे सिद्धि के लिए सफलता के चार साधनों-साम,दाम,दण्ड और भेद को मिलाकर एकाकार कर दिया गया हो।

23(घ)

राजधानी अयोध्या में सभी वस्तुऐं सुव्यवस्थित रुप में थीं। प्रसन्न होकर सभी महान तपस्वियों और पवित्र व्यक्तियों का स्वागत करने के लिए वे तत्पर थे। इस अवसर पर पवित्र जन एवं विद्वान सभी अपना हर्ष प्रकट कर रहे थे। उस अवसर पर अपने-अपने ढंग से विभिन्न उत्सवों एवं कार्यो के माध्यम से प्रसन्न चित्त होकर राम के सम्मानार्थ गुरुजनों ने भी पवित्र जल छिड़का। नर्तकों ने अपने नृत्य के माध्यम से हर्षोल्लास का परिचय

दिया। संगीतज्ञ मधुर स्वरों में गीत गा रहे थे तथा अन्य कलाकार भाँति-भाँति से अपनी कलाओं का प्रदर्शन करते हुए राम का अभिनंदन कर रहे थे। गामलान वाद्ययंत्रों के साथ मधुर गायन के स्वर भी वातावरण में गूंज रहे थे। इस प्रकार परस्पर होड़ लगाते हुए कलाकार उठ-उठ कर खड़े हो रहे थे और अपनी गरिमा का प्रदर्शन कर रहे थे। वे भाँति-भाँति से घूम-घूम कर अंग-भंगिमाओं से अपनी कला का परिचय दे रहे थे। वे कभी अपने कंधे हिलाते थे तो कभी झुक कर अपनी भाव-भंगिमा का प्रदर्शन करते थे। तीव्र गति से वे आगे बढ़ जाते थे। ढोल के स्वर परस्पर टकरा रहे थे। कुछ अन्य लोग भाँति-भाँति के मृदंग आदि वाद्य यंत्रों को भी बजा रहे थे। अनेक लोग उनके पास आकर उनकी कला का रसास्वादन कर रहे थे। आनंदमग्न नर्तकों एवं नर्तकियों के काफी निकट जाकर वे खड़े हो जाते थे। इस प्रकार वे नृत्य का पूर्ण आनंद लेते थे।

24

अयोध्या का सभागार भी अत्यन्त सुन्दर एवं विशाल था। उसके धरातल के ऊपर स्वर्ण धूलि एवं मणि माणिक बिछे हुए थे। इस प्रकार अनेक वर्णों के बहुमूल्य हीरों से उसको समतल किया गया था। इस सभागार का धरातल बहुत ही आकर्षक था। उसका विशाल मंडप भी अत्यधिक सुन्दर था तथा सुवर्ण की छत से ढका गया था। उस पर चाँदी एवं सोने का ही काम था। यही नहीं वरन् बहुमूल्य मोतियों तथा मणियों से उसे सजाया गया था। उसकी छत के कुछ भागों को लाल रंग से रंगा गया था। यह रक्त वर्ण एक पौधे द्वारा प्राप्त किया गया था। उसका रस ही रक्त वर्ण का प्रतीक था। वायु के झकोरों से लम्बी-लम्बी मूंछों की भाँति चमर वृक्ष लहरा रहे थे। वे काली-काली छाया-सी डाल रहे थे। इस प्रकार विभित्र प्रकार से अनुपम साज-सज्जा प्रस्तुत की गयी थी।वहाँ पर सभी कार्यक्रम निश्चित एवं सुव्यवस्थित थे। लटके हुए नारियल के फल भी अपार आकर्षण के केन्द्र बने हुए थे। वे देखने में सुन्दर थे। इन फलों की शोभा देखकर सभी को आश्चर्य होता था। इन फलों को शुभ भी माना जाता था। अब अयोध्या के राज्य-सिंहासन पर भी महाराज राम सुशोभित थे। उनका राज-सिंहासन स्वर्ण निर्मित सिंहासन था। उसकी किरणें एवं चमक सम्पूर्ण वातावरण को जगमगाती हुई चारों ओर सौंदर्य विखेर रही थीं।

24 (ख)

महाराजा राम तथा उनके साथ उनकी राजपत्नी देवी सीता (पति-पत्नी) राज दरबार में सिंहासन पर सुशोभित हो रहे थे। उनके साथ उनके माननीय अतिथि भी अपनी पूरी शालीनता का परिचय देते हुए उपस्थित थे। लंका के प्रसिद्ध महाराजा विभीषण तथा वानरराज सुग्रीव भी स्वर्ण एवं हीरों के सिंहासनों पर विराजमान थे। उनके साथ भरत, लक्ष्मण तथा शत्रुघ्न भी आसीन थे। वे पुष्पहार धारण किये हुए थे। वे पुष्पों को अपने हाथों में भी लिए हुए थे। उसके बाद उन्होंने उन पुष्पों को अपने मस्तक पर भी धारण कर लिया। सभी लोग परस्पर सभी विषयों पर एकमत थे। अनेक बातों पर सहमति के कारण चारों ओर उल्लास ही उल्लास छाया हुआ था।

इस अवसर पर विभिन्न भाँति के आयोजन तथा उत्सव मनाये गये थे। भाँति-भाँति के सुन्दर भोजनों और पकवानों की पूरी व्यवस्था की गयी थी। अच्छे मसालों का प्रयोग करके उनको स्वादिष्ट बनाया गया था। सुगंधित मसाले भोजनों में मिलाये गये थे। मांसाहार का भी सुन्दर आयोजन किया गया था। समुद्र में पायी जाने वाली मछलियाँ और नदियों तथा वनों में जाने वाले जीव जन्तुओं का मांस पकाया गया। उस स्वादिष्ट भोजन को इच्छानुसार प्राप्त कर लोग पूर्ण तृप्ति कर सकते थे। ये स्वर्ण के पिरामिड में रक्खी हुई वस्तुओं सी थीं।

24 (ग)

जाम्बवान की अध्यक्षता में वानरों की विशाल सेना को राजधानी के उत्तरी क्षेत्र में एक बड़े मैदान में सुव्यवस्थित रुप में ठहराया गया था। सम्पूर्ण वानर-समूह का नायकत्व उस समय जाम्बवान ही कर रहे थे। इस सम्पूर्ण व्यवस्था एवं अनुशासन का कार्यभार भी वही संभाले हुए थे। उनके साथ सुषेण तथा अन्य माननीय व्यक्ति भी थे। श्री महाराज राम ने सभी के साथ भोजन किया। सब के साथ ही उन्होंने सोम रस का पान किया। इस प्रकार भाँति-भाँति के पेय तथा मदिरा प्रस्तुत की गयी। इनमें अंगूर की मदिरा, ताड़ी, अन्य सोम रसादि पीने के लिए दिये गये थे जो ताजे,अत्यधिक स्वच्छ एवं सुगंधित थे। उस सुरा का आकर्षक रुप ही मन को मोह लेता था। मदिरा पान करने के लिए स्वर्ण-चषकों की व्यवस्था की गयी थी।जो भी सुरा पीने का अभिलाषी होता था, उसी के स्वर्ण पात्रों में मदिरा ढाल दी जाती थी। निम्न वर्ग के जनसाधारण ने पूर्ण तृप्ति से अनेक मटकों की मदिरा का पान किया। जिन्होंने मदिरापान किया था वे बड़े ही शक्तिहीन एवं दुर्बल-से लग रहे थे। उनके मुखों का रंग,मदिरा पान के कारण लाल-लाल हो गया था। उनके वक्षस्थल फूल-फूल का चौड़े हो गये थे। उनकी गति में भी तीव्रता आ गयी थी। अधिकता से पीने के कारण मदिरा उनके होठों से टपक-टपक कर नीचे गिरती जाती थी।

24(घ)

सुग्रीव वृक्ष के पत्रों की भाँति काँपते हुए तालियाँ बजाने लगे। उन्होंने अपनी बाहुओं को फैलाते हुए उठने की चेष्टा की। उनकी भुजाएँ जैसे अत्यधिक बंध सी गयी हों। वे तुरन्त ही तैयार होकर खड़े हो गये, परन्तु उस समय पेय-वस्तुओं का अधिकता से सेवन कर लेने के कारण वे अर्द्धविक्षिप्त से लग रहे थे। उन्होंने झुककर राम का अभिवादन किया। अपने हाथ में वे वाद्ययंत्र पकड़े हुए थे। यह वाद्ययंत्र उन्हें बहुत ही प्रिय थे। थोड़ा सा झुककर वे गामलान वाद्य यंत्रों के पास जा पहुंचे। वहाँ पर गामलान का वादन सुमधुर स्वरों में हो रहा था। उसके संगीत के साथ (कीडूंग) जावाद्वीप के गीतों की स्वर-लहरी तथा अन्य मधुर राग गाये जा रहे थे। गामलान के साथ सितार (गितार) आदि सभी मधुर स्वरों वाले वाद्य यंत्र बज रहे थे। इनको एक ही वर्ग में रक्खा जा सकता था। कीडूंग गीतों की भांति होते हुए भी ये उससे अधिक प्रभावोत्पादक थे। इसके साथ ही साथ वंशी-वादन भी हो रहा था। वंशी का स्वर भी मन मोह लेता था। स्थान-स्थान पर गामलान वाद्ययंत्र लटके हुए थे। इनके स्वर वातावरण

में एक अनुपम माधुर्य घोल रहे थे। वे ह्रदय को प्रभावित कर रहे थे। वानरों का एक समूह वहाँ व्यर्थ ही बैठा हुआ अपना समय नष्ट कर रहा था। वे भी संगीत से पूर्णतः प्रभावित हो उठे थे। वे सभी ईश्वर से प्रार्थना कर रहे थे तथा गामलान के संगीत का रसास्वादन कर रहे थे।

25(क)

इस प्रकार श्री महाराज राम तथा उनकी परमेश्वरी राजपत्नी देवी सीता भाँति – भाँति से जीवन के आनंद ले रहे थे। सम्पूर्ण सुख–समृद्धियाँ एवं गरिमाएँ उन्हें उपलब्ध थीं। उन्हें अपने जीवन के सम्पूर्ण सुखों का अनुभव हुआ। राम तथा सीता के लिए उनका रसोइया प्रतिदिन नये–नये सुस्वादु व्यंजन प्रस्तुत करता था। ताम्बूल तथा अन्य वस्तुएँ बहुत स्वच्छ एवं नवीन रहती थीं। उन्हीं को वह श्री राम के समक्ष श्रद्धापूर्वक प्रस्तुत किया करता था। सभी व्यवस्थाएँ पूर्ण रुप से संपन्न की जाती थीं। यद्यपि भोज्य–पदार्थों के विषय में पहले से कोई निर्णय नहीं लिया जाता था, पर उनके भोजन की व्यवस्था करने वाला व्यक्ति स्वयं ही कई प्रकार के भोजन नये–नये रुपों में परोसा करता था। पेय वस्तुओं का भी यही क्रम था। जिस वस्तु या पेय की उनको इच्छा होती थी, उसी को शीघ्र ही उनके समक्ष प्रस्तुत किया जाता था। यदि उन्हें किसी अन्य पेय की अभिलाषा होती तो उसको भी उनकी सेवा में शीघ्र ही प्रस्तुत किया जाता था। राम तथा सीता साथ – साथ बैठ कर इनका सेवन करते थे। इस प्रकार राम और सीता कई भोजन एवं पेय पदार्थों का अपनी इच्छानुसार प्रयोग करते थे। वे अनेक रसों का रसास्वाद ले रहे थे।

25 (ख)

सुन्दर सुगन्धित षट् रस भोजन को, जो पवित्र ढंग से बनाया जाता था, गर्म–गर्म ही परोस दिया जाता था। उस उष्ण भोजन का प्रभाव भी उसी रुप में उन पर पड़ता था। वे भी उसे प्राप्त कर उष्णता का ही अनुभव करते थे। जब वे साथ–साथ पेय पान करते थे, तो उष्णता का अनुभव उन्हें कुछ अधिक ही होता था। तब भाँति–भाँति के शीतल लेप उनको लगाये जाते थे। इनमें केशर, चन्दन आदि शीतल एवं सुगन्धित लेप भी होते थे, जिनके शरीर पर लगाने से पूर्ण शीतलता पहुंच जाती थी। इन लेपों से वक्षस्थल, भुजाओं तथा गरदन को पूर्ण शीतलता प्राप्त होती थी। यहां तक कि ह्रदय तक भी यह शीतलता पहुंच जाती थी। इससे पूरा शरीर ही अनुपम शीतलता का अनुभव करने लगता था।

25 (ग)

पवित्र एवं सुन्दर चमर वृक्ष वायु के मन्द–मन्द झोकों से प्रकम्पित होकर अपनी स्वर्णिम मधुरता से वातावरण को आच्छादित कर लेता था। इस वातावरण में राम तथा सीता को अपार प्रसन्नता एवं सुख का अनुभव

होता था। वे भाँति-भाँति के सुन्दर पुष्प धारण करते थे। आनंदमग्न होकर वे कमल, चम्पक तथा मादकता प्रदान करने वाले कई सुगन्धित पुष्पों को धारण करते थे। उन पुष्पों के पराग में बहुत अधिक सुगन्धि रहती थी। चारों ओर बिखर-बिखर कर वे वातावरण को सुरभित कर देते थे। प्रेम पूर्वक राम सीता को अपने साथ लिये हुए राजमहल के आगे की ओर ले जाते थे। उस अवसर पर उत्तम प्रकृति के व्यक्ति श्री भरत अपने महान चरित्र एवं उदारता का पूरा परिचय देते थे। वे आतिथ्य-सत्कार की व्यवस्था के लिए स्वयं अतिथियों के पास जाते थे। सभी व्यवस्थाओं को वे स्वयं ही देखते थे कि वानर समूह के भोजन-पान की व्यवस्था ठीक है, अतिथि रुप में आये हुए वानरगण पूर्णरुपेण संतुष्ट हैं, आदि बातों पर उनका पूरा ध्यान था।

26(क)

व्यवस्था का कार्य भार श्री माण्डीर नामक व्यक्ति को सौंपा गया था। वह भरत के बहुत ही निकट था। वह सदैव ही अतिथियों की देखभाल कर उनके भोजन आदि की उचित व्यवस्था करता रहता था। वह व्यक्ति उत्तम आतिथ्य की व्यवस्था से सबको सन्तुष्ट रखता था। वह व्यक्ति सबकी देखभाल करते हुए अतिथियों से सदैव ही पूछता रहता था कि किसी वस्तु की आवश्यकता तो नहीं है। ताम्बूल अथवा अन्य किसी वस्तु की भी आवश्यकता जब किसी को होती तो वह शीघ्र ही उसकी पूर्ति कर देता था। भाँति-भाँति के सुन्दर लेप, सुगन्धित वस्तुएं, मिठाइयाँ, विशेष प्रकार से तैयार किये गये मिष्ठान्न एवं पकवान आदि सभी को दिये जाते थे। यह सभी सामग्री सुवर्ण टोकरियों में प्रदान की जाती थी। इस प्रकार वानरों को पूर्ण आतिथ्य प्राप्त हो रहा था।

26 (ख)

भली भाँति पकाई गयी मछलियों, नमकीन मछलियाँ एवं मांस आदि की भी समुचित व्यवस्था की गयी थी। अतिथियों के भोजन में खट्टी अथवा तिक्त वस्तुओं का अधिक समावेश न हो जाय अथवा बासी सड़ा-गला कोई भी पदार्थ किसी को प्राप्त न हो जाय, इस ओर विशेष सतर्कता बरती जा रही थी। अतिथियों से मधुर शब्दों में निवेदन किया जाता था कि आप कुछ समय तक प्रतीक्षा करें और आनंद-उल्लास में ही समय व्यतीत करें। उनको शीघ्र ही इच्छित भोजन तथा पेय दिया जाता था, जिससे वे पूर्णरुपेण तृप्त हो जाते थे। जहां तक सुरापान का प्रश्न था, उसकी व्यवस्था जानबूझ कर बड़े कौशल के साथ की जाती थी। कुछ लोग तो मदिरापान करके उन्मत्त भी हो जाते थे, पर उनकी इच्छा की पूर्ति के लिए उन्हें फिर सुरापान कराया जाता था। वानर सेना सुरापान के रस का आनंद ले रही थी। वास्तव में अतिथि सत्कार एवं आनंद-उल्लास का यह क्रम युद्ध क्षेत्र में महान विजय को ही प्रमाणित कर रहा था। यह सब उसी सफलता का परिणाम था। इस अनुपम विजय के कारण वे सभी पूर्ण सुख, समृद्धि एवं प्रसन्नता का आनंद ले रहे थे। इस अपार हर्षातिरेक में सभी के मन सन्तोष की चरम सीमा पर थे। सभी के मन में ईश्वर के प्रति अपार भक्ति एवं श्रद्धा थी। ईश्वर कृपा से उन्हें अभूतपूर्व सफलता प्राप्त हुई थी तथा यह विश्व निरन्तर सुरक्षा, सुख, समृद्धि एवं प्रसन्नता की ओर अग्रसर हो रहा था।

26 (ग)

माण्डीर ने इस प्रकार अपने भावों को व्यक्त किया। वास्तव में उनके पास असीम खाद्य-सामग्री का भंडार था। उन्होंने परिस्थिति के आधार पर अतिथि-सत्कार संबन्धी सभी बातें स्पष्ट कीं। भरत के आदेशानुसार उन्होंने अतिथेयों का पूरा सत्कार किया था। किसी प्रकार के अभाव का अनुभव किसी को कभी भी नहीं होने दिया गया। बाद में श्री माण्डीर ने बड़े ही हर्षपूर्वक भरत का स्वागत किया। भरत ने भी बड़े ही आनंद एवं उल्लास से माण्डीर के कार्य की सराहना की और उनसे वार्तालाप किया। उनको स्वयं ऐसे व्यक्तियों से अपार प्रेम था, जिनका चरित्र उत्तम हो तथा जो अपनी प्रजा से प्रेम करते हुए सदैव ही जनसाधारण के हित-चिंतन एवं कल्याण में लगे रहते थे।

27

जब सभी कार्य विधिवत सम्पन्न हो गये तो सभी अतिथियों का यथोचित सम्मान किया गया और अभिनंदन किया गया। राजा विभीषण तथा वानरराज सुग्रीव इन सभी गतिविधियों में भाग ले रहे थे। वे इस सम्मान से बहुत ही प्रभावित और सन्तुष्ट हुए। वे अनुगृहीत भी हुए। सन्ध्याकाल के पश्चात रात्रि का आगमन हो रहा था। चतुर्थी के शुक्ल पक्ष का चन्द्रमा आकाश में दिखाई दे रहा था। उसकी किरणें उज्जवल एवं सुखदायी थीं। उसका सौंदर्य हृदय को प्रभावित कर प्रेम-भावना जगाता था। चन्द्र-किरणों की शीतलता मन में प्रेम का ज्वार उठा रही थी।

28

अब राजा राम ने राजमहल में प्रवेश किया। उनके साथ उनके विशिष्ट अतिथि राजा विभीषण एवं वानरराज सुग्रीव भी थे। उनके समक्ष ही स्वर्ण मंडप सुशोभित था। वहाँ पर कोमल गलीचे बिछे हुए थे। वहीं पर अतिथियों को शयन करने के लिए बैठाया गया था तथा उनसे कहा गया था कि वे अपनी इच्छा के अनुसार जो कार्य करना चाहें, करें।

29

महाराज श्री राम देवी सीता को साथ लेकर सुन्दर स्वर्ण महल में चले गये। उस महल में आनंद-रस के सभी साधन उपलब्ध थे। राजपत्नी सीता तो सभी स्थानों पर सदा ही उनके साथ रहती थीं। पति-पत्नी स्वर्ण-महल के ऊपर चले गये। वहाँ पर उनके लिए सुगन्धित एवं सुन्दर शैय्या प्रस्तुत की गयी थी। वहाँ पर भाँति-भाँति के दीपक सजाये गये थे। सुन्दर परदों के साथ मच्छरदानी भी विधिवत पलंग पर लगा दी गयी थी। इस प्रकार

साज सज्जा से शैय्या जगमगा रही थी।

30

कई वर्षों तक राम तथा सीता विरह दशा में व्याकुल रह चुके थे। उनका मिलन कई वर्षों बाद संभव हो पाया था। अब जैसे मिलन–भावना ने अपने पूर्ण सौंदर्य जाल में उनको आबद्ध कर लिया हो। पति–पत्नी के रुप में राम तथा सीता को फिर मिलन सुख भोगने का अवसर मिला था। इस अवसर पर वे सहवास सुख ले रहे थे। उनके लिए यह समय एक औषधि की भाँति था। विरह–व्यथा में वे एक रोगी की भाँति हो गये थे,इसीलिए यह सुख उनके लिए अब एक औषधि का कार्य कर रहा था। इससे कुलवर्ग की वृद्वि संभव हो सकी थी। कुल वर्ग की वृद्वि के लिए सन्तानोत्पत्ति की आवश्यकता थी।

31

जब राम और सीता शैया पर लेट गये तो लगा जैसे वे किसी व्रत का पालन कर रहे हों। सीता तथा राम शैयाशायी हो गये। प्रेमातिरेक से वे हर्षोन्मत्त हो उठे। ऐसा लगता था कि दोनों साधना में लीन हो गये हों। उन्हें मधुर रस का ही आभास हो रहा था। दोनों ही प्राणी आनन्द–मग्न थे। ऐसा प्रतीत हो रहा था कि वे शंकर की मूर्ति कें प्रतीक शिवलिंग की आराधना में ध्यानस्थ हों। उन्होंने पूजा अर्चना का एक नया माध्यम ग्रहण किया था।

32

वे मधुर कल्पनाओं को साकार करने का प्रयास कर रहे थे। प्रेम के माध्यम से ईश्वर रुपी लक्ष्य तक पहुंचने में उन्हें पूर्ण सफलता प्राप्त हुई। वे आनंद की चरम सीमा पर पहुंच कर उसे प्राप्त कर सके। यह आनंद इस सीमा तक पहुंचा कि मधुरता की चरम सीमा को राम तथा सीता ने प्रांप्त कर लिया। प्रेम और आनंद का रस राम तथा सीता निरन्तर लेते रहे। उनकी इच्छाएँ पूर्णतः तृप्त हो गयीं। जीवन के रस की चरम अनुभूति उन्हें प्राप्त हुई।

33

प्रियजन विछोह के बाद पुनः जब मिलते हैं तो उनका प्रेमभाव द्विगुणित हो उठता है। इसकी तुलना उन प्रेमियों के मिलन से कभी भी नहीं की जा सकती,जो प्रणयबंधन में पहली ही बार बंधे हों और उसका रसास्वाद ले रहे हों। प्रथम प्रेमबंधन की स्थिति पुनर्मिलन से भिन्न होती है। प्रथम मिलन में मिलन का उत्साह रहता है, विरहावस्था के बाद के मिलन में प्रेम–प्रसंगों, अभिलाषाओं, मिलन–परिस्थितियों तथा विविध क्रीड़ाओं की सभी गतिविधियों का स्मरण उनको कचोटने लगता है। उसका स्मरण आते ही प्रेम की तीव्रता और भी तीक्ष्ण

हो जाती है, इसीलिए विछोह के बाद मिलन होने पर उसे मिलन–सुख में विशेष रस की प्राप्ति होती है। राम तथा सीता की परिस्थिति भी इसी प्रकार की थी, इसीलिए प्रेम की तीव्रता का वे अनुभव कर रहे थे। उन्हें अपार एंव अलौकिक आनंद–रस का अनुभव हो रहा था।

34

भाँति–भाँति की सुगन्धियुक्त केशर आदि के लेपों की सुरभि कामोत्तेजक होती है। उसकी मधुर सुगन्धं काम की अग्नि को और भी अधिक प्रज्वलित कर रही थी। उसमें भी सुरापान का सघन अंधकार धूम्र की भाँति छाया हुआ था। मदिरापान ने कामेच्छा को और भी अधिक तीव्रतर कर दिया था। प्रेमालाप संबंधी गतिविधियाँ निरन्तर गतिशील हो रही थीं। ह्रदय में मीठा–मीठा दर्द अनुभूत हो रहा था। रसास्वाद की प्रवृत्ति आकंठ निमग्न किये हुए थी। यही इच्छा थी यह सुख सदैव ही अबाध गति से मिलता रहे।

35

इस प्रकार महाराज राम ने प्रेम का पूर्ण आनंद लिया। अपनी इच्छा की पूर्ण तृप्ति उन्होंने की। उसका रस उन्होंने भली भाँति प्राप्त कर लिया था। राम ने सीता से कहा, देवि मैं इस विषय में बहुत अच्छा ज्ञान नहीं रखता हूं। इस संबंध में मेरा ज्ञान तथा अनुभव अत्यन्त सीमित है। अतएव हे सीते ! तुम मुझे क्षमा करो। इस विषय में श्री वात्स्यायन का ज्ञान अपार है।उनके ग्रन्थ का अध्ययन उचित है। हे सीते ! तुम उसका गंभीर अध्ययन करो। तभी सभी प्रक्रियाओं का पूर्ण ज्ञान प्राप्त हो सकेगा।

36

इसके पश्चात् उत्तम आनंद और अत्यधिक उल्लास का निरन्तर अनुभव करते हुए राम और सीता ने सुख और समृद्धि का पूरा रस लिया, अतएव इस विषय के विस्तार को सीमित करने के उद्देश्य से इस वर्णन को यहीं समाप्त करना उचित होगा। दूसरे दिन प्रातःकाल अतिथिगणों को आतिथ्य प्रदान किया गया। उन्हें भोजन आदि कराया गया। इस प्रकार तिथियां पंचमी, छठी, सप्तमी को पार करती हुई अष्टमी, नवमी तथा दशमी तक जा पहुंचीं। भोजन, विश्राम, उत्सव आदि गतिविधियाँ चलती रहीं। उनके समाप्त होने का प्रश्न ही नहीं उठ रहा था।

37

इस प्रकार अपार आनंद का अनुभव करते हुए महाराज विभीषण तथा वानरराज सुग्रीव बहुत दिनों तक महाराज राम के अतिथि के रुप में अयोध्या नगरी में ठहरे रहे। उसके पश्चात् उन दोनों अतिथियों ने

साथ ही साथ लौटने की आज्ञा मांगी। राम ने उन दोनों अतिथियों का सम्मान कर उनके लिए एक महान भेंट प्रस्तुत की। उनकी महान सहायता के प्रति गहरा सन्तोष प्रकट करते हुए राम ने उन्हें सुख-समृद्धि से मालामाल कर दिया। राम ने स्वयं उनको गज, रथ, अश्व, सुन्दर स्त्रियाँ, परिचारिकाएँ, सेवक आदि आदरपूर्वक भेंट में दिये। उन दोनों अतिथियों ने श्री महाराजा राम की भेंट के रुप में अमूल्य उपहार स्वरुप उन वस्तुओं को सहर्ष स्वीकार किया।

38

इस अवसर पर त्रिजटा भी आगे आयी। उसने भी वापस लौटने की आज्ञा ली और निवेदन किया। राम तथा सीता दोनों के ही समक्ष त्रिजटा ने प्रार्थना के रुप में यह प्रस्ताव प्रस्तुत किया। वास्तव में सदैव ही त्रिजटा देवी सीता के निकट रही थीं। देवी सीता ने त्रिजटा के प्रति अपना अगाध प्रेम प्रकट करते हुए उन्हें उपहार स्वरुप अमूल्य वस्त्र आदि वस्तुएँ प्रदान कीं। भाँति-भाँति के साज श्रृंगार एवं आभूषण दिये गये। इस प्रकार अनेक प्रकार की भेटों से त्रिजटा को उन्होंने सम्मानित किया। सेवक एवं सेविकाएं भी उनको दी गयी थीं। सुवर्ण मणियाँ एवं माणिक भी त्रिजटा को उपहार के रुप में प्रदान किये गये।

39

त्रिजटा के हृदय में इस उपहारों को प्राप्त कर बड़ा सन्तोष हुआ। वे सदैव ही सीता से अपार प्रेम करती थीं। उन्होंने अमूल्य भेंटों के लिए श्रीराम को बहुत-बहुत धन्यवाद दिया। देवी सीता ने अत्यन्त प्रसन्नतापूर्वक त्रिजटा की ओर देखा तथा उनको आवश्यक उपदेश भी दिये। इस प्रकार भूतकाल की परिस्थिति का स्मरण दिलाते हुए त्रिजटा से कहा, हे त्रिजटा ! वास्तव में लंका की परिस्थिति और कष्टों का मुझे भली भाँति स्मरण है। उस समय आपने मेरी जो सहायता की थी, वह अविस्मरणीय है।

40

अब हे त्रिजटा बहिन ! मैं आपसे यह निवेदन करना चाहती हूं कि आप भी अपने कष्टों की ओर कोई ध्यान न दें। आपने प्रत्येक दुःखमय परिस्थिति में मेरा सदैव ही साथ दिया है। जब कभी आप अशोक-वाटिका के उस सुन्दर सरोवर के निकट जायें तो उस पत्थरों के निकट जाकर उन्हें अवश्य देखें तथा जल के फव्वारे के निकट जाकर आप ईश्वर के प्रति प्रार्थना किया करें। वह स्थान मुझे सदैव ही प्रिय रहा है, इसीलिए उसका स्मरण मुझे बार-बार आता है।

41

अब आप बड़े–बड़े वृक्षों के नीचे जब अशोक वन में जायेंगी,तो मेरी अनुपस्थिति में आपको गहरे सूनेपन का अनुभव होगा। वहां पर अनेक मूर्तियां भी हैं,जैसे– देवी दुर्गा,गणेश आदि। वृक्ष पर रहने वाले प्रेत भी वहाँ हैं। उस स्थान पर पर्वत के दुस्तर ढाल भी हैं। उन पर चलना बहुत ही कठिन है। पर्वतों के वे ढलान भी देखने योग्य हैं। उन पर चलकर आगे जाना सरल नहीं है। उनकी कठिनाइयों की कल्पना करना भी आज मेरे लिए संभव नहीं है। मुझे स्मरण है कि प्रार्थना के लिए आप इतने कष्ट सहकर भी सदैव ही पर्वतीय देशों में जाती रही हैं।

42

मेरी प्रतिज्ञा तथा कामना थी कि श्री राम युद्व में विजयी हों,जिससे मैं फिर अयोध्या नगरी में सकुशल लौट कर वापस आ सकूं। वे सभी बातें आज आपके आशीर्वाद एवं शुभकामनाओं से पूरी हुई हैं। यही नहीं, पूर्ण सफलता के साथ उन इच्छाओं को मैनें साकार भी किया है। यह सब आपकी पवित्र भावना, शुभ कामना एवं प्रेम के ही कारण संभव हुआ है।

43

एक शत हंसों को सरोवर में छोड़कर आप उन्हें आनंद मनाने दीजिए। विशाल वन में एक सहस्त्र महिषों को विचरण करने दीजिए और वहाँ पर जाकर उन्हें मुक्त कर दीजिए। एक अर्बुद अर्थात् सहस्त्रों बकरियाँ पर्वतमाला पर चरने के लिए छोड़ दीजिए। अब मेरी यही अभिलाषा है। वास्तव में जब मैं लंका में घोर कष्ट उठा रही थी और उनसे घिरी हुई थी, उस समय इन पशु–पक्षियों को इन्हीं स्थानों पर छोड़ने की मैने प्रतिज्ञा की थी,अतएव आप लंका में जाकर यह कार्य करके मेरे वचनों को पूरा करने की कृपा कीजिए।

44

मैंने देवताओं को भी वचन दिया था,इसीलिए आप उसे भी पूरा कीजिए। आप मन्दिर में सुवर्ण तथा मणियों की भेंट चढ़ाकर देवों की अर्चना कीजिए। ब्राह्मणों को दान आदि देकर अन्य धार्मिक कृत्य कीजिए। विद्वान पंडितों, सज्जनों और कलाओं में पारंगत व्यक्तियों को उनकी योग्यतानुसार उन्हें दक्षिणा दीजिए तथा सभी को भोजन–पान आदि से सन्तुष्ट कीजिए।

45

हे त्रिजटा ! आपकी यात्रा मंगलमय हो। मैं शुभ कामना करती हूं। आपको आनंदपूर्वक अपने स्थान पर पहुंच कर सुख प्राप्त हो। आप मेरी छोटी बहिन की भाँति हैं। मेरे सभी सुखों का सार जैसे आपके अपने सुखों

का सार हो। इस प्रकार सदैव ही आपने मेरी प्रसन्नता और सुख के लिए अनुपम योगदान दिया है। मेरी प्रसन्नता एवं कुशलता को आपने सदैव अपनी प्रसन्नता एवं कुशलता माना है। यह आपकी सह्रदयता एवं मृदुल भावना है। आपने कभी भी अपने सुख को अपना नहीं माना। मेरे लिए आपने उसका बलिदान कर दिया। इस प्रकार आपने त्याग एवं तपस्या का परिचय दिया है। अतएव हे बहन ! अब मेरा यही आशीर्वाद है कि आपकी यात्रा सुखकारी एवं मंगलमय हो। मार्ग का कष्ट आपको न हो। मैं यही मंगल–कामना एवं आशा करती हूं।

46

जब आपको कभी भी मेरा स्मरण हो आये अथवा मेरे वियोग की व्यथा सताये,तो अशोकवन में जाकर अशोक वृक्ष के नीचे ही अपने मन को सान्त्वना देने का प्रयास कीजिएगा। उस अवसर पर यह कल्पना कीजिएगा कि जैसे मैं वहाँ पर आपके पास ही हूं। मुझे पूरी आशा है कि आपके विचार सदैव ही उत्तम रहेंगे। इसी प्रेम भावना से आप मेरा स्मरण भी करेंगी।

47

इस प्रकार मधुर शब्दों में देवी सीता ने त्रिजटा का अभिनंदन किया। इस शब्दों को सुनकर त्रिजटा को अपार सन्तोष हुआ। वे देवी सीता से विदा लेकर अयोध्या नगरी से लंका की ओर प्रस्थान करने को प्रस्तुत हो गयीं। उनके साथ ही महाराज विभीषण तथा वानरराज सुग्रीव ने भी अपने–अपने गन्तव्य स्थानों के लिए प्रस्थान कर दिया।

48

वे दोनों राजा साथ ही साथ अयोध्या से वापस लौटे। जिससे अपने कर्तव्यों का विधिवत् पालन करते हुए वे विश्व में सुख एवं समृद्धि उत्पन्न कर सकें। यही उनकी कामना थी। राम अयोध्या में ही रहकर विश्व की सुरक्षा एवं कल्याण की भावना से अभिभूत थे। वे वटवृक्ष अथवा बोधिवृक्ष की भाँति थे। वे सम्पूर्ण जगत को अपनी छत्रछाया में रखकर आश्रय प्रदान कर रहे थे। राम सुन्दर विशाल वृक्ष की भाँति थे। वे अमृत की भाँति सम्पूर्ण विश्व को जीवन दान कर रहे थे।

49

हे देवों के देव राम ! आप जीवन में महानता एवं श्रेष्ठतम मूल्यों के प्रतीक हैं। आप सर्वशक्तिमान हैं। आप इन तीनों लोकों के स्वामी हैं। मेरा ह्रदय सदैव ही आपके चरण कमलों की वन्दना एवं आ
रत रहता है। आप कृपा करके सदैव ही मेरा स्मरण रखें। मुझे कभी भी न भुलाने की कृपा मुझ

करते रहें। मुझे पूरी आशा एवं विश्वास है कि आप मुझे सदैव ही याद रखेंगे। मेरी श्रद्धा एवं भक्ति–भावना के इन पुष्पों एवं फलों की भेंट को आप सहर्ष स्वीकार करने की कृपा करें। मुझे दृढ़ विश्वास है कि सम्पूर्ण जगत मेरे साथ ही आपके चरणों में अपनी श्रद्धा एवं भक्ति के पुष्प बिखेरता रहेगा। जनसाधारण की सुन्दर भाषा में लिखी गयी यह राम–कथा अत्यन्त लोकप्रिय होगी। इसे सुनकर सभी को आनंद प्राप्त होगा। जो इसे ध्यानपूर्वक सुनेगें,उन्हें निश्चय ही लाभ होगा।

50

राम का महानचरित्र प्रेम के देवता कामदेव की भाँति है। सम्पूर्ण कामनाओं की पूर्ति करने के लिए ही कामदेव की कृपा विश्व पर होती है। श्री राम भी अपने कर्तव्यों का पालन करते हुए सम्पूर्ण विश्व के प्राणियों की अभिलाषाओं एवं आकांक्षाओं को ही पूरा करते हैं, इसीलिए इस महाकाव्य रामायण की रचना प्राचीन जावा भाषा में प्रस्तुत की गयी। इससे विश्व का कल्याण हो, यही इसकी रचना का उद्देश्य था। यह कथा अपने आपमें सुरभि–युक्त एवं मनोहर है, इसीलिए हृदय की गहराइयों में बड़ी ही सरलता से यह उतर जाती है। इसके अध्ययन से महान योगियों के विचार और भी अधिक पवित्र एवं उत्तम हो गये। इसी प्रकार जब सुजनों ने श्रद्धा–भक्ति सहित इसका पाठ किया,तो उनके हृदय इसे पढ़कर निर्मल हो गये। मुझे भली भाँति स्पष्ट है कि राम के वचन कल्याणप्रद एवं स्पष्ट है। इनमें सदैव ही जनहित की भावना है। राम का चरित्र जीवन की सम्पूर्णता का प्रतीक है।

51

इस कथा के माध्यम से जीवन के इन्हीं महान लक्ष्यों एवं उद्देश्यों की विधिवत् व्याख्या की गयी है। मुझे भली भाँति विदित है कि जन साधारण के लिए श्रीराम का महान चरित्र सदैव ही अपार आकर्षण का केन्द्र रहा है। इस पवित्र चरित्र की गरिमाओं में अवगाहन कर मैं भी लाभान्वित होने का अभिलाषी हूं। राम के महान आदशों का अनुकरण जनजीवन में हो सके और जनसाधारण तथा विद्वानों को एक महान आदर्श की प्राप्ति हो सके, यही भाव लेकर यह महाकाव्य लिखा गया है। राम के जन अनुराग की स्वर्णधूलि के प्रतीक के रुप में यह कथा संसार की महानतम पवित्र–कथाओं में से एक है। राम के इस महान आदर्श का सभी को अनुकरण करना चाहिए। उन लोगों को जो साधारण बुद्धि के मनुष्य हैं अथवा मेरी भाँति जिनका ज्ञान अत्यधिक कम एवं सीमित है, इसका अनुकरण अवश्य करना चाहिए। वे अपने जीवन के पवित्र मूल्यों को तभी प्राप्त कर सकेंगे। इससे उनका अज्ञान उत्तम एवं स्वस्थ विचारों के रुप में परिणत हो सकेगा।

52

अतएव मैं प्रार्थना करता हूं कि उत्तम विचारों वाले सभी विद्वान मुझे क्षमा करेंगे। विद्वानों की प्रशंसा भी कभी व्यर्थ सिद्ध नहीं होती। मैं उन सभी विद्वानों की वन्दना करता हूं, जिनको अपने विषय में पारंगत माना जाता

है तथा उनकी बातों का बार–बार उल्लेख भी किया जाता है। वास्तव में ऐसे ही व्यक्ति चतुर विद्वान एवं सज्जन की संज्ञा पाते हैं। मैं ऐसे विद्वानों का सेवक बनने का अभिलाषी हूं,जिनसे मुझे ज्ञान–गरिमा प्राप्त हो सके' मुझे आशा है कि सज्जनों की कृपा से मुझे ज्ञान प्राप्त हो सकेगा। जिनं व्यक्तियों का ज्ञान उच्चतम श्रेणी का है,वे उस ज्ञान के आधार पर गुरु बनने की पूर्ण क्षमता रखते हैं। जीवन की पूर्णता प्राप्त करने के लिए जन–साधारण का मार्गदर्शन करने में वे ही समर्थ हैं। वे उस सुरभियुक्त पुष्प के सदृश हैं जो वातावरण रुप में अपनी सुरभि तो बिखेरता ही है,उत्तम यश प्राप्त कर सभी को प्रसन्न भी करता है। वह सदैव ही पवित्र एवं सुगन्धियुक्त रहता है।

– इतिश्री –